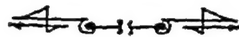
श्रीमद्भट्टाकलंकदेव विरचित।

तत्वार्थ राजवार्तिक



(भाषा टीका समेत।)



टीकाकार—

स्वर्गीय पं० पन्नालालजी दूनीवाले।



प्रकाशक—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, ६३, लोवर चितपुर रोड, कलकत्ता।

सहृदय सज्जन महानुभाव !

आज हम आपके समक्ष यह राजवार्त्तिक नामक ग्रन्थराज उपस्थित करते हैं। इसके मूल सूत्र भगवान् उमास्वामीने तत्वार्थसूत्र या मोक्षशास्त्र नामसे निर्माण किये हैं। जिनको आबाल वृद्ध सभी उच्चतम दृष्टिसे देखते हैं तथा पढ सुनकर पुण्य संचय करते हैं। जिसके पढ़ने मात्रसे हमारे पाप विलीन हो जाते हैं, उन्हीं मोक्षशास्त्रकी तत्वार्थ वार्त्तिक नामकी बृहती टीका श्रीमद्भट्टाकलंक देवने प्रणयन की है।

यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि प्रत्येक प्राणीगण सुखकी वांच्छा किया करते हैं, तथा सुख प्राप्त होनेके हेतुओंका भी अन्वेषण यथा शक्ति करते रहते हैं। पर मिथ्या विकल्प जालोंमें पड़े हुये भोळे प्राणी सांख्य, कपिल, मीमांसक आदि मतानुयायियोंके बतलाये हुये मार्गपर चलते हैं, तो कभी बौद्ध मतावलम्बी होते हैं, कभी अन्य मार्गमें ही पग स्थापन करते हैं, परन्तु शांति कहाँ ? सुख कहां ? उनको सच्चा मार्ग नहीं मिलता। जिस प्रकार एक पथिक चार मार्गोंको देखकर भ्रम जालमें फंस जाता है, बस उसी प्रकार संसारसे तरनेवाले प्राणीकी दशा हो जाती है। इसी भ्रमके दूर करनेके लिये हमारे पूज्य श्रीमदुमास्वामी महाराजने सच्चे सुख प्राप्तिका मार्ग बहुत संक्षेपमें गंभीरता पूर्वक बतलाया है कि—

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनोंका समुदाय ही मोक्ष मार्ग है। यद्यपि अन्य अन्य मतावलम्बियोंने मोक्षका स्वरूप भिन्न भिन्न माना है जैसे प्रकृति पुरुषाविवेको मोक्ष· इति कापिलः आनन्दरूपो मोक्षः इति वेदान्तिनः इत्यादि मोक्ष स्वरूप माननेवाले वादियोंका खंडन भली भांति इसी ग्रन्थमें किया है तथा जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, संवर निर्जरा, मोक्ष इन सात तत्वोंका स्वरूप खूब विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। जिससे प्राणी जीवादि तत्वोंका स्वरूप समझकर श्रेय मार्गकी उपलब्धिकर सच्चा सुख प्राप्त कर सकता है।

श्रीमद्भट्टाकलङ्क स्वामीको कौन नहीं जानता है। जिन्होंने जैन धर्मकी रक्षाके लिये कितनी विपत्तियोंको सहन कर सार्व धर्मका प्रचार किया, जिन्होंने राजवार्त्तिक सरीखे ग्रन्थ लिखकर हजारों प्राणियोंका कल्याण किया। यदि आज राजवार्त्तिक सरीखा ग्रन्थ राज न होता तो आज जैन दर्शनमें मानो हीराका अभाव: हो जाता। जैन धर्मके तत्वोंको कितनी सरलतासे समझाया है। इसलिये हम उनके चिर कृतज्ञ हैं कि जिन्होंने ऐसे ग्रन्थराजको बनाकर हम लोगोंका असीम कल्याण किया

है। इसी ग्रन्थराजकी भाषा वचनिका परोपकारी पंडित प्रवर श्रीयुत पन्नालालजी दूनीवालोंने सरल, सुमधुर प्राचीन शास्त्रीय भाषामें गहन गहन विषयोंको सरल रीतिसे समझाकर लिखा है जिससे हमारे भाई प्रेमी पाठक पढ़कर पुण्य संचय करेंगे।

हम इस ग्रन्थ राजकी भाषा वचनिका लिये जोर देकर कहेंगे कि यह भाषा प्राचीन भाषा है। आप जानते ही हैं कि प्राचीन कृति कितनी महत्वकी होती है। प्राचीन शास्त्रीय भाषामें जो भाव संगठित सरल रीतिसे हो सकता है वह आज कलकी भाषामें कभी नहीं आ सकता, इसलिये प्राचीन कृति ही श्रेष्ठ मानी जाती है। प्राचीनताके लिये लोग कितना परिश्रम करते हैं, यह आप जानते ही हैं कि जितनी प्राचीन बात प्रामाणिक मानी जाती है वह अर्वाचीन नहीं। इसलिये हमें और हर्ष है कि यह प्राचीन कृति जैन संसारके समक्ष की है।

इस ग्रन्थराजके प्रकाशनमें प्रकाशकजीको इतनी कठिन कठिन विपत्तियोंका सामना करना पडा है जिससे हम समझते थे कि इसका प्रकाशन होना असम्भवसा ही है किन्तु विचारशील प्रकाशकजीने उन सब कठिनाइयोंका सामना करते हुये बड़े उत्साहके साथ इस खंडका प्रकाशन किया है। प्रकाशकजी प्राचीनतान्वेषी हैं। इन्होंने अपने जिनवाणी प्रचारक कार्यालयसे प्राचीनता बतलानेवाले, धर्मकी मान मर्यादा रखनेवाले पद्मपुराण, मल्लिनाथपुराण, शान्तिनाथ पुराण आदि महान् २ ग्रन्थोंका प्रकाशन किया है। जिन ग्रन्थोंका प्राप्त होना तो दूर रहा किन्तु दर्शन होना भी हमारी समाजको दुर्लभ था, उन्हीं अलभ्य ग्रन्थोंको सरकारी लायब्रेरीसे बाबू छोटेलालजी जैन एम० आर० ए० एस० के द्वारा प्राप्त कर प्रकाशन किये हैं, जिनको जैन जनता बढ़े शौकसे खरीदकर अपनी ज्ञान वृद्धि व पुण्य वृद्धिका लाभ उठा रही है। अतः हम उक्त बाबू साहबको कोटिशः धन्यवाद देते हैं कि वे इसी तरह आगामी भी उन अलभ्य ग्रन्थोंके प्रकाशनमें सहायता देते रहेंगे। प्रकाशकजीके विचार हमेशासे ही प्राचीन कृतिकी तरफ रहे आये हैं, तथा समाजका कल्याण हो इसीमें वे दत्तचित्त रहते हैं। इसीलिये किसी तरह भी हो सर्व संकटोंको सहनकर यह ग्रन्थराज प्रकाशित किया गया है।

इस ग्रन्थ-राजके छपानेमें इतनी शीघ्रता की गई है कि अशुद्धियोंका रह जाना अनिवार्य है। हम अगले खण्डमें शुद्धाशुद्धि पत्र लगाकर भेज देंगे। अन्तमें हम जैन समाजसे प्रार्थना करते हैं कि इस प्रथम संस्करणमें जो कुछ त्रुटियां रह गई हों उनके लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं क्योंकि—

गच्छतस्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।

विनीत—

सतीशचन्द्र गुप्त।

कस्तूरचन्द्र जैन।

प्रकाशकीय वक्तव्य



आज मुझे यह लिखते हुए अत्यंत आनन्द हो रहा है कि मैं जैन सिद्धान्तका प्रसिद्ध ग्रन्थ श्रीतत्वार्थराज वार्तिक आज समाजके समान रख रहा हूं। ग्रंथकी विशेषताके संबंधमें संपादक महाशयोंने भूमिका द्वारा अपने विचार जाहिर किये ही हैं अतएव उसका पुनः पिष्ट पेषण करना व्यर्थ है।

यह ग्रंथ हमारे यहां पहिलेसे ही छप रहा था इसकी ग्राहक संख्या भी काफी हो चुकी थी परन्तु एक स्वार्थी पंडितके मुंहमें हमारी बढती हुई ग्राहक संख्याको देखकर पानी आ गया और अपना घरू प्रेस है इससे ग्रंथ हमसे पहिले निकालनेके अभिमानमें आकर ग्रंथराजका :आजकलकी नीरस उपन्यासी भाषामें छपवाना प्रारम्भ कर दिया। हमने लाचार होकर दो प्रेसों द्वारा बडे भारी परिश्रमके साथ यह प्रथम खंड तैयार कराया है।

यद्यपि इसकी भाषा प्राचीन, सर्वमान्य होते हुए भी कुछ स्वार्थी निरनुभवी पंडितोंको खटकती है परन्तु हम इनकी गीदड भवकियोंसे डरनेवाले नहीं है। प्राचीन साहित्यको प्रकाशमें लानेकी प्रतिज्ञा जब कर ही चुके हैं तब बराबर भविष्यमें भी शीघ्रातिशीघ्र ग्रंथराजको समाप्त करके स्व० प्राचीन प्रवर पंडित पन्नालालजी दूनी वालोंकी कृतिकी रक्षा अवश्य करेंगे।

यद्यपि स्वार्थी पंडितोंने अपना माया जाल फैलाया था कि यह ग्रंथ अधूरा ही रह जाय। पर, जैसा जिसका उदय होता है वह विरोधियोंके लाख विघ्न बाधाओंके उपस्थित होते रहनेपर भी होकर ही रहता है। यही कारण है कि आज हम ग्रन्थराजका प्रथम खंड तैयार कर सके हैं।

ग्रंथराजका कागज खास ऑडर देकर तैयार कराया है। छपाई उत्तम हुई है, संस्थाकी छपाई और कागजका मिलान ग्राहक गण स्वयं करके देख लें कि कौन सरस है?

इस ग्रंथके प्रकाशनमें हमें सारी शक्ति लगानी पडी है तिसपर भी मूल्य लागत मात्र इस लिये रक्खा है कि स्वार्थी पंडितों द्वारा जो नया अनुवाद छपाकर प्राचीन कृतिका लोप किया जा रहा है उसकी रक्षा हो। संस्थाका वह नया अनुवाद अभी आधा ही हुआ है और भविष्यमें होनेकी हमें तो आशा नजर नहीं आती, अतएव खंडित ग्रन्थ अगर रखना हो तो वह नया अनुवाद खरीदें।

अंतमें मैं समाजसे प्रार्थना करूंगा कि वह जिनवाणी प्रचारक कार्यालय और प्रकाशित ग्रंथोंको लागत मात्रके मूल्यमें खरीद कर पुण्य बंध करते हुए प्राचीन पुरुषोंकी कृतिकी रक्षा करें।

ग

इस ग्रंथके पश्चात्में शीघ्र ही श्री विमल पुराणजीको समाजके समक्ष रक्खूंगा । उस महान ग्रंथके संबंधमें मैं इतना ही कहना उचित समझता हूं कि इसकी १ भी प्रति हमारे भंडारोंमें नहीं रही थी, हमारे मित्र बा० छोटेलालजीकी कृपासे हमें यह महान ग्रंथ संस्कृत भाषामें प्राप्त हुवा था। इसके श्लोकोंका अर्थ लगाते समय अच्छे २ विद्वानोंकी विद्वत्ता विदा हो जाती है। इसीलिये ऊपर संस्कृत और नीचे मोटे अक्षरोंमें हिन्दी अनुवाद देकर तैयार कराया है। अनुवाद कर्त्ता वही पं० गजाधरलालजी शास्त्री हैं जिन्होंने मल्लिनाथपुराणका अनुवाद किया था। पृष्ठ संख्या ४०१ से ऊपर हो जायगी पर मूल्य मात्र ग्राहकोंको लिया जायगा—

इसके बाद रामपुराण, चन्द्रप्रभु पुराण शीतलानाथ पुराण हरिवंश पुराण आदि ग्रंथ तैयार कराये जा रहे हैं। हमें पूर्ण उम्मेद है कि जैन समाज लागत मात्रमें इन ग्रंथोंको खरीदकर उत्साहको बढ़ावेगी।

निवेदक—

दुलीचंद परवार "दिवाकर"

देवरी (सागर) निवासी।



मुद्रक—

किशोरीलाल केडिया

"वणिक् प्रेस"

१, सरकार लेन, कलकत्ता।

घ

ॐ

नमः सिद्धेभ्यः ।

श्रीमद्भट्टाकलंकदेव विरचित ।

श्री तत्वार्थ राजवार्तिक ।

भाषा वचनिका समेत ॥

ओं नम सिद्धेभ्यः । अथ शास्त्रके अवसरमें प्रथम पढ़नेकी पद्धति सार्थक लिखिये है ।

श्लोक—

ओं कारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः । कामदं मोक्षदं चैव ओं काराय नमो नमः ॥१॥

अर्थ—मनोवांछित कामको देनेवारो अर मोक्षको देनेवारो विन्दु संयुक्त ओंकार जो है ताहि योगीश्वर नित्य ध्यावैं है। ऐसो पञ्च परमेष्ठी रूप ओंकार जो है ताके अर्थ नमस्कार होऊ। इहां दोय वार नमस्कारके कहनेतैं वारम्वार नमस्कार होऊ ऐसे जनायो है ॥१॥

छन्द आर्य्या—अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलकलङ्का ।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितम् ॥२॥

अर्थ—अविरल सम्बन्ध रूप जे शब्द ते ही भये जे मेघ तिनको जो समूह ता करि प्रक्षालित कियो है सकल पृथिवी तलको कलङ्क जानैं। अर मुनीश्वरनिकरि उपासना कियो है तीर्थ जाको ऐसी सरस्वती जो है सो हमारा दुरितनैं हरो ॥२॥

श्लोक—अज्ञान तिमिरान्धानां ज्ञानांजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥३॥

अर्थ-जानें अज्ञान रूप तिमिर कर अन्ध जे हैं तिनके नेत्र ज्ञान रूप अंजनमयी शलाका करि उद्घाटित किये ते गुरु जे हैं तिनके अर्थ हमारो नमस्कार होऊ ॥२॥

परम गुरुभ्यो नमः परम्पराचार्य श्री गुरुभ्यो नमः ।

अर्थ परम गुरु जे अर्हन्त भगवान तिनके अर्थ हमारो नमस्कार होऊ अर परम्परा चार्य गुरु जे गणधरादिक निर्ग्रन्थाचार्य तिनके अर्थ नमस्कार होऊ ।

सकलकलुषविध्वंसकं श्रेयसां परिवर्द्धकं धर्मसम्बन्धकं भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकं पुण्यप्रकाशकं पापप्रणाशकमिदं श्रुतं श्री तत्वकौस्तुभ नामधेयम् ।

अर्थ—समस्त पापको विध्वंस करनेवारो, अर कल्याणको समस्त पणैं वृद्धि करनेवारो, और धर्मको सम्बन्धी और भव्य जीवनिनें प्रतिबोध करनेवारो, अर पुण्यको प्रकाश करनेवारो, अर पापको प्रणाश करनेवारो यो तत्व कौस्तुभ नाम श्रुत है ।

अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थ कर्तारः श्री गणधरदेवाः प्रति गणधर-देवास्तेषां वचोनुसारमासाद्य कर्त्रा श्री उमास्वामिना विरचितम् । तत्रोत्तरोत्तरमाङ्गल्यमानया-यत्पुण्यमुत्पद्यते तत्पुण्यं वक्तृश्रोतृणां मङ्गलं भूयात् ।

अर्थ—या ग्रन्थके मूल कर्त्ता तो श्री सर्वज्ञ देव हैं अर ताके उत्तर कर्त्ता श्री गणधर देव प्रतिगणधरदेव हैं बहुरि तिनके वचनका अनुसारनें ग्रहण करि श्री उमास्वामि जे हैं तिन करि विरचित है तहां उत्तरोत्तर मगलमयी माला जो है ताकरि जो पुण्य उत्पन्न होय सो वक्तानिके तथा श्रोतानिके मङ्गल निमित्त होऊ ।

श्लोक—मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गोतमः प्रभुः ।
मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो जैनधर्मोस्तु मङ्गलम् ॥४॥

अर्थ—महावीर अंतिम तीर्थङ्कर भगवान् जो हैं सो मङ्गलरूप होऊ अर अतिम गणधर गौतम प्रभु जो हैं सो मङ्गल रूप होऊ अर कुन्द कुन्द आदि आचार्य जे हैं ते मङ्गल रूप होऊ, और जैन धर्म जो है सो मङ्गल रूप होऊ ॥४॥ ऐसे ओंकार पद्धतिनें पढ़ि जो ग्रंथ बाचें ता ग्रंथको प्रथम श्लोक पढ़ि व्याख्यान करै । इति ओंकार पद्धति सम्पूर्णम् ।

ॐ

नमः सिद्धेभ्यः।

तत्वार्थ राजवार्तिक

भाषा वचनिका समेत ॥

प्रथम अध्याय।

श्लोक।

प्रणम्य सर्वविज्ञानमहास्पदमुरुश्रियम्।
निर्धौतकल्मषं वीरं वक्ष्ये तत्वार्थवार्तिकम् ॥१॥

अर्थ—सर्व भेद विज्ञानको महान स्थान अर प्रचुर लक्ष्मीवान् अर दूर भयो है कर्म रूप पाप जातैं ऐसौ परम भट्टारक अंतिम तीर्थङ्कर महावीर जो है, ताहि नमस्कार करि तत्वार्थके जनावने वारे सूत्र उमास्वामि जे हैं तिनके वार्तिकरूप तत्वार्थ वार्तिक कहूंगो॥१॥ऐसे मङ्गल निमित्त इष्टदेवनैं नमस्कार करि तत्वार्थ वार्तिक नाम ग्रंथ कहनेकी प्रतिज्ञा अकलंक देव नामा आचार्य्य करी है।

वार्तिक—श्रेयोमार्गप्रतिपित्सात्मद्रव्यप्रसिद्धेः ॥१॥ अर्थ--आत्म द्रव्यकी प्रसिद्धितातैं मोक्ष-मार्गके प्राप्त होनेकी इच्छा होय है। टीकार्थ--मोक्षकरि उपयुक्त भयो ऐसो उपयोग स्वभाव आत्मा जो है ताकी प्रसिद्धता होत संतैं मोक्षमार्ग कूं प्राप्त होनेकी इच्छा उत्पन्न होय है ॥१॥

प्रश्न, या कैसैं ? उत्तर रूपवार्तिक--चिकित्साविशेषप्रवृत्तिवत् ॥२॥ अर्थ--चिकित्सा विशेषकी प्रवृत्तिके समान। जैसैं व्याधिकी निवृतितैं उत्पन्न भया फलरूप कल्याण करि उपयुक्त भया रोगीकी प्रसिद्धितानैं होतां संतां चिकित्सा मार्ग विशेष जो ह ताके प्राप्त होनेकी इच्छा उत्पन्न होय है तैसैं मोक्ष करि उपयुक्त भया आत्म द्रव्यकी प्रसिद्धतानैं होतां संतां मोक्षमार्ग कूं प्राप्त होनेकी इच्छा उत्पन्न होय है तातैं स्वयम्भू सम्बन्धी मोक्ष मार्गकी व्याख्या ही भली है यातैं सिद्ध करने योग्य है ॥२। किञ्च, वार्तिक-सर्वार्थप्रधानत्वात् ॥३॥ अर्थ-और सुनूँ कि सर्व अर्थनैं प्रधानपणो है यातैं। टीकार्थ-संसारी पुरुषके सर्व पुरुषार्थनिके विषें मोक्ष प्रधान है। अर प्रधानके विषैं कियो यत्न फलवान होय है तातैं वा मोक्ष मार्गको उपदेश करनौं योग्य है। क्योंकि मार्गका उपदेशके फलवानपणौं है यातैं ॥३॥ वार्तिक--मोक्षोपदेशः पुरुषार्थप्रधानत्वादिति चेन्न जिज्ञासमानार्थिप्रश्नापेक्षिप्रतिवचनसद्भावात् ॥४॥ अर्थ-प्रश्न, पुरुषार्थनिमैं प्रधानपणांतैं-मोक्षको उपदेश योग्य है ? उत्तर, ऐसैं कहौ सो नहीं है क्योंकि जाननेका अर्थी जो है ताका प्रश्नकी अपेक्षा प्रत्युत्तरको सद्भाव है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, प्रथम मोक्षको उपदेश ही करनौं योग्य है मार्गको उपदेश करनौ योग्य नहीं है क्योंकि मोक्षहीके पुरुषार्थनिमैं प्रधान पणौं है यातैं क्योंकि सर्व कल्याणनितैं पुरुषके अत्यन्त अनुपम कल्याण पणांतैं मोक्षही परम कल्याण है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि जाननेंको इच्छुक अर्थी जो है ताका प्रश्नकी अपेक्षा प्रतिवचनको सद्भाव है यातैं क्योंकि जो यो मोक्षको अर्थी जाननेंको इच्छुक है सो मार्ग ही पूछत भयो मोक्ष नहीं पूछत भयो। यातैं प्रथम मोक्ष कार्गको उपदेश ही करनौं न्याय्य है ॥ ४ ॥ वार्तिक-मोक्षमेवकस्मान्नाप्राक्षीदितिचेन्न कार्य्यविशेषसम्प्रतिपत्तेः ॥ ५॥ अर्थ-प्रश्न, मोक्ष ही काहेतैं नहींप्रश्न कियो ? उत्तर, ऐसे कहौ सो नहीं है, क्योंकि कार्य्य विशेषकी भले प्रकार प्रतीति है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, यो प्रश्नको कर्ता-मोक्षनैं ही काहेतैं नहीं पूछयो और कहा प्रयोजन तैं मार्गनैं पूछयो ? उत्तर, ऐसैं नहीं है

क्योंकि कार्य्य विशेष रूप मोक्षकी भले प्रकार प्रतीति है यातैं। सो ऐसे है कि सर्वभाववादीनिकै मोक्षरूप कार्य्य प्रति भलै प्रकार प्रतीति है अर कारण प्रति प्रतीति नहीं है यातैं॥५॥ वार्तिक-कारणन्तु प्रति विप्रतिपत्तिः पाटलिपुत्रमार्गविप्रतिपत्तिवत् ॥६॥ अथ-पाटलि पुत्र पटना ताका मार्गमें विवादके समान कारण प्रति विवाद है। टीकार्थ—जैसैं कितनेक पुरुष नाना दिशाका भागकी अपेक्षावान मार्ग के विषैं विवाद करैं हैं परन्तु प्राप्त होने योग्य पाटलिपुत्र नगरके विषैं विवाद नहीं करैं हैं तैसैं मोक्ष रूप कार्य्यनैं अंगीकार करि वा प्रयोजन प्रति आदररूप भया सर्वभाववादी वाके कारणनिकै विषैं विवाद करैं हैं।सो ऐसैं प्रथम ही किननेक तो ज्ञानतैं ही मोक्ष कहै हैं, अर ज्ञान वैराग्य तैं मोक्ष कहै हैं। सो ःहां पदार्थनिको जानन भाव तो ज्ञान है, और विषय सुखकी निर्वांछा लक्षण वैराग्य है। अर और वादी क्रियातैं ही मोक्ष कहै है, क्योंकि नित्य कर्म ही है कारण जाको ऐसो निर्वाण है या वचनतैं॥६॥ किंच वार्तिक-पराभिप्रायनिवृत्यशक्यत्वात् ॥७॥ अर्थ- और सुनौं कि परका अभिप्राय की निवृत्ति करनेमें असमर्थ पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न करनवारो जो पर ताको अभिप्राय हम जे है ते निर्वाण करने कूं असमर्थ है कि मार्गनैं मति पूंछि मोक्षनैं पूछि क्योंकि लोकके भिन्न रुचिपणूं है यातैं॥७॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक-कल्पनाभेदात्तद्विप्रतिपत्तिरिति चेन्न कर्मविप्रमोक्षसामान्यात् ॥८॥ अर्थ-प्रश्न, कल्पनाका भेदतैं विवाद है? उत्तर, ऐसैं विप्रतिपत्ति नहीं है। क्योंकि कर्मनिका विशेष पणैं छूटनैंका सामान्य उपदेश है यातैं। टीकार्थ— प्रश्न, मोक्षप्रति सर्वकै भले प्रकार प्रतीति नहीं है, तो कहा है कि विसंवाद ही है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, कल्पनाका भेदतैं क्योंकि और वादी और तरैं मोक्षका लक्षणनैं कल्पना करै है, सो ऐसै है कि कितनेक कहै हैं कि रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार, विज्ञान ये ही भये जे पंच स्कंध तिनका निरोधतैं अभाव जो है सो मोक्ष है, अर केई कहै है कि गुण अर पुरुष इनका भेदकी प्राप्तिनैं होतां संतां स्वप्न स्वप्न प्रति लुप्त विवेक ज्ञान के समान नहीं प्रकट चैतन्य स्वरूपकी अवस्था जो है सो

मोक्ष है, अर और कहै हैं कि बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, संस्कार ये नव आत्म गुण जे हैं तिनका अत्यन्त उच्छेद जो है सो मोक्ष है। तातैं कल्पनाका भेदतैं मोक्ष रूप प्रति विसंवाद है ? उत्तर—सो नहीं है, क्योंकि कर्म विप्रमोक्षको समान पणौं हैं यातैं क्योंकि सर्व प्रवादीनि कैं जो तीं अवस्थानैं प्राप्त होय समस्त कर्मको विप्रमोक्ष ही मोक्ष अभिप्रेत है, यातैं हमारा सिद्धान्ततैं अविरोध है। अर मोक्ष रूप कार्य्य प्रति भल - प्रकार प्रतीति है ॥८॥

वार्तिक—कार्य्यविशेषोपलम्भात् कारणान्वेषणप्रवृत्तिरितिचेन्न अनुमानतस्तत्सिद्धे र्घटीयंत्रभ्रान्ति-निवृत्तिवत् ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न, कार्य्य विशेषका उपलम्भतैं कारणका हेरना की (ढूंढ़नेकी) प्रवृत्ति है ? उत्तर, सो नहीं है। क्योंकि अनुमानतैं मोक्षकी सिद्धि है सो घटी यंत्रका भ्रमणकी निवृत्तिके समान है—टीकार्थ-लौकिक जन जे हैं ते कार्य्य विशेषनैं अङ्गीकार करि कारणके हेरने प्रति आदर युक्त होय हैं कि जैसै ज्वर आदि रोगका दर्शनतैं वैद्य जो है सो वा रोगके मिटनेको कारण जो हैं ताके हेरनेके विषैं इलाजको प्रसिद्धिके अर्थ प्रवर्त्तन करै हैं, तैसैं मोक्षका दर्शनतैं वा मोक्षको कारण जो है ताको हेरनो न्याय है। बहुरि अभाववादी कहैं हैं कि मोक्ष ही नहीं दीखै है। तातैं मोक्षको कारण हेरनेको अभाव है। उत्तर, ऐसैं कह्यो सो नहीं है क्योंकि अनुमानतैं मोक्षकी सिद्धि है यातैं। भावार्थ-प्रत्यक्षतैं नहीं प्राप्त होता भी मोक्षरूप कार्य्यकी अनुमानतैं प्राप्ति होतां संतां मोक्षका कारणको हेरनो युक्त है। ताको दृष्टान्त कहै हैं कि घटी यंत्रका भ्रमणकी निवृत्तिके समान युक्त है सो जैसै घटी यंत्रके भ्रमण उत्पन्न करनवारा बलदनिका परिभ्रमणतैं ग्रहण करी चाकलाकी भ्रमणनैं प्रत्यक्षतैं देखि तथा बलदनिका परिभ्रमणका अभावनैं होतां संतां चाकलाकी भ्रमणिका अभावतैं घटी यंत्रका भ्रमणकी निवृत्तिनैं प्रत्यक्षतैं देखि सामान्यतैं देख्या अनुमानतैं शरीर सम्बन्धी तथा मन सम्बन्धी नाना प्रकारकी वेदना रूप घटी यंत्र कै भ्रमण उत्पन्न करनवारा बलदनिके समान कर्मनिका उदय

करि ग्रहण करी चतुर्गति रूप चाकलाकी भ्रमणनैं प्रत्यक्षतैं देखि ज्ञान, दर्शन, चारित्रतैं भस्म-भये कर्मनिका उदयका अभावनैं होतां संता चतुर्गतिरूप चाकलाकी भ्रमणिका अभावतैं संसाररूप घटीयंत्रकी भ्रमण जो है ताकी निवृत्ति होने योग्य है, ऐसैं अनुमान करिये हैं। अर जो या संसाररूप घटीयंत्रकी भ्रान्तिकी निवृत्ति है सो ही मोक्ष है, तातैं अनुमानतैं मोक्षरूप कार्य्यकी सिद्धि है, यातैं मोक्षका कारण को निश्चय करनौं न्याय है, हम ऐसैं अंगीकार करै हैं ॥१०॥ किञ्च वार्तिक—सर्वशिष्टसम्प्रतिपत्तेः ॥११॥ अर्थ—सर्व उत्तम पुरुषनिकै मोक्षकी भलेप्रकार प्रतीति है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि सर्व उत्तम पुरुष जे हैं ते प्रत्यक्षतैं नहीं प्राप्त होने वारा भी मोक्षरूप कार्य्यके अनुमानतैं अस्तिपणां नैं अंगीकार करि अपने अपने नियमरूप मोक्षका कारणनिकै विषैं प्रयत्न करै हैं ॥१०॥ किंच वार्तिक—आगमात्तत्प्रतिपत्तेः ॥ ११ ॥ अर्थ—आगमतैं मोक्षको प्रतीति है यातैं। टीकार्थ—प्रत्यक्षतैं नहीं प्राप्त होने योग्य भी मोक्ष जो है सो आगमतैं है ऐसैं निश्चय करिये हैं ॥ ११ ॥ कथं, वार्तिक—सूर्याचन्द्रमसोर्ग्रहणवत् ॥ १२ ॥ अर्थ—प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, सूर्य्य चन्द्रका ग्रहण के समान प्रतीति होय है। टीकार्थ—जैसैं सूर्य चन्द्रको ग्रहण या समयमैं या वर्ण करि या दिशाका भाग करि सर्व ग्रासी अथवा किञ्चित् ग्रासी इत्यादि प्रत्यक्ष नहीं है तौ भी ज्योतिषीनिनैं आगमतैं जानिये हैं, तैसैं मोक्ष भी आगमतैं जानिये है ॥ १२ ॥ किञ्च, वार्तिक--स्वसमयविरोधात् ॥१३॥ अर्थ--और सुनूं कि अपने सिद्धांतमैं विरोध आवैगा यातैं। टीकार्थ—जाकै अप्रत्यक्षपणांतैं मोक्ष नहीं है ऐसो मत है ताके स्वसमय में विरोध होय है क्योंकि सर्व ही समयवादी मोक्ष आदि अप्रत्यक्षपदार्थनिनैं अङ्गीकार करै है यातैं ॥ १३ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—बंधकारणनिर्देशादयुक्तमितिचेन्न मिथ्यादर्शनादिवचनात् ॥ १४ ॥ अर्थ—प्रश्न, बंध

कारणका नहीं कहनेतैं मोक्षका कहना अयुक्त है? उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि मिथ्यादर्शनादिक वचन है यातैं। टीकार्थ—ऐसैं हैं तो अन्य ग्रन्थनिमें बंधका कारणनिको उपदेश कियो है कि विपर्ययतैं बन्ध है इत्यादि इहां नहीं कियो तातैं मोक्ष कारणका निर्देशकी अयुक्ति है, उत्तर, ऐसैं नहीं हैं क्योंकि मिथ्यादर्शनादि वचनतैं कहैंगे सो यो सूत्र है "मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगाबंधहेतव" इति ॥१४॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—बन्धपूर्वकत्वान्मोक्षस्य प्राक् तत्कारण निर्देश इति चेन्न आश्वासनार्थत्वात् ॥१५॥ अर्थ--प्रश्न, बंधपूर्वकपणां तैं मोक्षकै पहली बंधके कारणनिको कहनौं योग्य है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि विश्वासदेनेरूप प्रयोजनपणौं है यातैं। टीकार्थ--मोक्ष कारणकाउपदेशतैं प्रथम बंधकारणको उपदेश करनौं न्याय है, क्योंकि बंधपूर्वक मोक्ष है यातैं उत्तर, सो नहीं है क्योंकि विश्वासनार्थपणातैं। भावार्थ—उपदेश करनेको प्रयोजन शिष्यनैं विश्वास उपजावनेको है यातैं ॥१५॥ कथम्, वार्तिक—बंधनबद्धवत् ॥१६॥ अर्थ—प्रश्न, कैसै? उत्तर, बंधनकरि बद्धके समान। टीकार्थ—जैसैं बन्दीगृहमें बंधनकरि बद्ध प्राणी बंधकारणका श्रावणतैं डरै है अर मोक्ष कारणका श्रवणतैं विश्वासनैं प्राप्त होय है, तैसैं अनादि संसाररूप बन्दीगृह में रुक्यो आत्मा प्रथम ही बंधकारणका श्रवण तैं मति भयनैं प्राप्त हो अर मोक्ष कारणका श्रवणतैं कोई प्रकार विश्वासनैं प्राप्त हो यातैं प्रथम बंधकारणनैं नहीं कह करि मोक्ष कारणको उपदेश कियो है ॥१६॥ किञ्च, वार्तिक—मिथ्यावादिप्रणीतमोक्षकारणनिराकरणार्थं वा ॥ १७ ॥ अर्थ—और सुनूं कि मिथ्यावादीनि करि कहे मोक्षके कारण जे हैं तिनका निराकरण करनेंको प्रयोजन है यातैं। टीकार्थ—मिथ्यावादीनि करि कहे एक तथा दोय मोक्षके कारण जे हैं तिनका निराकरणके अर्थि यो अर्हंत भाषितमोक्ष का कारण को उपदेश प्रथम कियो है कि ये तीनों एकत्र हुवा संता

मोक्ष मार्ग है, नहीं एक है, नहीं दोय हैं अर यातैं विपरीत मात्रतैं उत्पन्न भई संसारकी परिपाटी नैं कल्पना करि ज्ञान विशेषतैं वा संसार प्रक्रियाकी निवृत्ति है॥१७॥ इत्यादि अनेक मिथ्या-वादीनिकरि प्रणीत मतकी निवृत्ति के अर्थि तीन प्रकार करि फैलाव नें प्राप्त भयो मोक्षको कारण जो है ताके दिखावनैं के अर्थि सूत्रकार उमास्वामि कहै हैं। सूत्रम्—

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र जे हैं तिनकी एकता जो है सो मोक्ष मार्ग है।

टीकार्थ—आप तैं अन्य आधुनिक पुरुषनिकी शक्तिकी अपेक्षापणातैं सिद्धांतकी प्रक्रियानें प्रकट करने निमित्त मोक्ष कारणका उपदेशका संवन्ध करि शास्त्रकी आनुपूर्वीनें रचनैंकी इच्छा करतो संतो आचार्य यो सूत्र कह्यो है ऐसैं कहिये है। अर इहां एक शिष्यको अर एक आचार्य को संवन्ध नहीं कहिये है तो कहा है, उत्तर—संसार सागरमें डूब्या अनेक प्राणी गण जे हैं तिनका उद्धारकी वांछा प्रति उद्यमी आचार्य्य जो हैं सो मोक्षमार्गका उपदेश विना हितको उपदेश दुर्लभ है, ऐसो निश्चय करि मोक्ष मार्गनें व्याख्यान करनैंकी इच्छा करतो संतो यो सूत्र कह्यो है। ऐसैं सूत्रके कहनेको सम्वंध जनाय करि अकलङ्कदेव सूत्र पठित शब्दनिका अर्थनैं तथा शब्दनि-की आनुपूर्वीनैं तथा फलितार्थनैं तथा अन्य वादीनिका प्रश्नोत्तरनैं स्पष्ट करतो संतो सूत्रार्थ के अनुकूल वार्तिक रचि करि शिष्यनि के स्पष्ट अर्थकी प्राप्ति होनें निमित्त आप ही टीका करि अर्थ नैं विशद करे है। वार्त्तिक—प्रणिधानविशेषाहितद्वैविध्यजनितव्यापारं तत्वार्थश्रद्धानं सम्य-ग्दर्शनम् ॥ १ ॥ अर्थ—उपयोग विशेष करि ग्रहण किया द्विविधपणातैं उत्पन्न भयो व्यापार.जो है सो तत्वार्थ श्रद्धान रूप सम्यग्दर्शन है। टीकार्थ—प्रणिधान, उपयोग, परिणाम ये तीनूं शब्द अनर्था-

न्तर है कि एक अर्थकूं कहनें वारे हैं अर जा करि पदार्थ पदार्थान्तरतें भेद नें प्राप्त करिये अथवा पदार्थान्तरमें प्राप्त हुवो जो पर्याय तातें जो भेदनें प्राप्त होय सो विशेष है। अथवा भेद करने रूप जो क्रिया सो विशेष है अर प्रणिधान रूप ही जो विशेष सो प्रणिधान विशेष है अथवा प्रणिधानको विशेष है सो प्रणिधानविशेष है अर आहित, आत्मसात्कृत, परिगृहीत ये तीनूं शब्द अनर्थान्तर हैं, अर विध, युक्त, गत, प्रकार ये चार शब्द समान अर्थ नें देने वारे हैं अर निसर्ग तथा अधिगम भेदतें दोय है प्रकार जाके सो द्विविध है अर द्वि प्रकारको जो भाव अथवा कर्म सो द्वैविध्य है। अर प्रणिधान विशेष करि जो गृहीत सो प्रणिधानविशेषाहित कहिये अर प्रणिधानविशेषाहित है द्विविध पणों जाके सो प्रणिधानविशेषाहितद्वैविध्य कहिये, अर जनित कहिये उत्पन्न भयो अर व्यापार कहिये व्यापृति अर्थात् अर्थका प्राप्त करवा में समर्थ ऐसो जो क्रियाको प्रयोग सो व्यापार है अर जनित है व्यापार जाके सो जनित व्यापार कहिये। प्रश्न, यो व्यापार कौनके है? उत्तर, या प्रकरणमें अंतर्गत दर्शनमोहका उपशम क्षय, क्षयोपशम पर्याय रूप परिणामतें अर बाह्यपरिणामका कारण जे हैं तिननें ग्रहण कियो ऐसो आत्मा जो है ताके जीवादिक पदार्थनिको विचार है विषय जाको ऐसो अधिगम तथा निसर्गरूप व्यापार है अर, प्रणिधान विशेष करि ग्रहण कियो द्विविध पणों जो है सो ही उत्पन्न भयो जो व्यापार सो प्रणिधानविशेषाहित द्वैविध्य जनित व्यापार है। भावार्थ—उपयोग विशेषकरि ग्रहण कियो अर निसर्गज तथा अधिगमजरूप उत्पन्न भयो अर ज्ञेयरूप अर्थका प्राप्त करवामें समर्थ भयो ऐसो जो क्रियाको प्रयोग सो रूप है व्यापार जामें ऐसो तत्वार्थ श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शन है अर "तत्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं" याको अर्थ आगानें कहेंगे ॥१॥ वार्तिक-नयप्रमाणविकल्पपूर्वको जीवाद्यर्थयाथात्म्यावगमः सम्यग्ज्ञानम् ॥२॥ अर्थ--नय और प्रमाणका विकल्पपूर्वक जीवादिक पदार्थनिको यथावत् जाननूं जो है सो सम्यग्ज्ञान है।

टीकार्थ—नय और प्रमाण जे हैं ते नय प्रमाण कहिये अर नयप्रमाण जे हैं तिनके जे विकल्प ते नयप्रमाणविकल्प कहिये अर ते नय दोय प्रकार हैं तहां एक द्रव्यार्थिक है दूसरो पर्य्यायार्थिक है अर प्रमाण भी दोय प्रकार है, तहां एक प्रत्यक्ष है दूसरो परोक्ष है, अर तिन नयनि के तौ नैगमादिक विकल्प कहैंगे, अर तिन प्रमाणनिके मत्यादिक विकल्प कहेंगे, अर इहां पूर्व शब्द ज्ञानकारणवाची है तातैं नयप्रमाणविकल्प पूर्वक ऐसा कह्या है अर्थात् ज्ञान जो है सो नय प्रमाण विकल्प रूप हेतु जनित है अर जीं जीं प्रकार करि जीवादिक पदार्थ अवस्थित है तीं तीं प्रकार करि जाननौं कि जीवादिक पदार्थनिको यथावत् जाननों जो है सो सम्यग्ज्ञान है। इहां मोह संशय विपर्ययकी निवृत्तिके अर्थि सम्यग्विशेषण है ॥२॥ वार्तिक—संसारकारणविनिवृत्तिंप्रत्यागूर्णस्य ज्ञानवतो बाह्याभ्यन्तरक्रियाविशेषोपरमः सम्यक्चारित्रम् ॥ ३ ॥ अर्थ—संसारका कारण जे हैं तिनकी निवृत्ति प्रति उद्यमी ज्ञानवान जे हैं तिनके बाह्य अभ्यन्तर क्रिया विशेषको त्याग जो है सो सम्यक्चारित्र है। टीकार्थ—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव रूप परिवर्तनका भेदतैं संसार पञ्च प्रकार है ताके कारण अष्ट विध कर्म हैं ताकी विशेष करि अत्यन्त निवृत्ति जो है सो संसार कारण विनिवृत्ति है अर ताप्रति उद्यमी भयो ज्ञानवान है। इहां ज्ञान शब्दके प्रशंसा अर्थके विषैं मतु प्रत्यय होय है तातैं जैसैं रूपवान् शब्द प्रशंसा युक्तकी सत्तानैं कहै है क्योंकि कोउहीके रूप नहीं है ऐसो नहीं है तथापि रूपवान् शब्द प्रशस्त रूपवाननैं कहै है तैसै याकै ज्ञान है सो ज्ञानवान् है ऐसैं प्रशंसायुक्त ज्ञानकी सत्तानैं कहै है, क्योंकि कोऊ के है ज्ञान नहीं है सो नहीं हैं क्योंकि सर्वही आत्मा ज्ञानवान है चैतन्यपणातैं, अर मिथ्यादर्शनके उदयनैं होता संता विपरीत अर्थका ग्राहीपणातैं मिथ्यादृष्टि अज्ञानी है अर मिथ्यादर्शनके अभावनैं होतां संता यथावत् पणांकरि अर्थका जाननापणातैं सम्यग्दृष्टि प्रशस्त ज्ञानवान है

ताज्ञानवान की क्रिया जाकरि क्रियान्तर तैं भेदनैं प्राप्त होय सो विशेष है। अथवा विशेष रूप जो है सो विशेष है, अर वो क्रियाविशेष दोय प्रकार है। तहां एक वाह्य रूप है दूसरो आभ्यन्तर रूप है तिनमें वाचिक कायिक क्रियाविशेष तो वाह्य इन्द्रियनि कै प्रत्यक्ष पणातैं वाह्य रूप है अर मानसक्रिया विशेष छद्मस्थ कै अप्रत्यक्ष पणां तैं आभ्यन्तर रूप है। अर वो दोउ ही भेदरूपक्रिया-विशेषको जो त्याग सो सम्यक्चारित्र कहिये हैं बहुरि सो चारित्र वीतरागीनि के विषैं तो यथा-ख्यातचारित्र संज्ञक परमउत्कृष्ट होय है अर संयतासंयतादिक सूक्ष्म सांपरायिक का अन्त पर्यंत आरातीय जे नीचली दशावाले हैं तिन के विषैं प्रकर्ष अप्रकर्ष का योगरूप होय है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—ज्ञानदर्शनयोः करणसाधनत्वं कर्मसाधनश्चारित्रशब्दः ॥ ४ ॥ अर्थ—ज्ञान और दर्शनकै तो करण-साधनपणों है अर कर्मसाधनरूप चारित्र शब्द है।

टीकार्थ—ज्ञान अर दर्शन ये दोय शब्द तो कर्णसाधन रूप है, क्योंकि करण अर अधिकरण अर्थके विषैं युट प्रत्ययको विधान है यातैं,अर चारित्र शब्द कर्मसाधनरूप है क्योंकि "भूवादिग्हड्भ्यो-णित्र" इनतैं णित्र प्रत्यय होय है अर चरधातुतैं वृत्तअर्थ के विषैं णित्र प्रत्यय होय है ऐसैं कर्ममें विधान है यातैं, अर ज्ञान दर्शन शक्तिविशेषकी शुद्धिताकी निकटतानैं होतां संता आत्मा जीवा-दिक पदार्थ निनें जाकरि जानें हैं अर देखै है सो ज्ञानदर्शन हैं अर चारित्रमोहका उपशम, क्षय, क्षयोपशमका सद्भावनैं होतां संता आचरण करिये सो चारित्र है ॥४॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--कर्तृ-करणयोरन्यत्वादनयत्वनात्मज्ञानादीनां परश्वादिवदिति चेन्न तत्परिणामादग्निवत् ॥५॥ अर्थ—कर्त्ता करणकैअन्यपणांतैं आत्माकै अर ज्ञानकै अन्यपणौं है सो परसी आदिकै समान है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि कर्त्ता को ही परिणाम है यातैं अग्निका उष्ण परिणामके समान है। टीकार्थ—इहां

शंका है कि ज्ञानदर्शनके आत्मद्रव्यतैं अन्यपणौं है, क्योंकि देवदत्तके अर परसीके समान भिन्न देखवापणांतैं उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अग्निके उष्णपरिणाम है तैसे दर्शन ज्ञानरूप आत्माको परिणाम है यातैं सो ऐसैं है कि जैसैं वाह्यद्रव्यक्षेत्र आदि पञ्च हेतुकी निकटतानैं होतां संता आभ्यन्तर परिणामका वशतैं तैजस्कायिक नाम कर्मका उदय करि प्रकट भयो है औष्ण्यपर्य्याय जाकै ऐसो आत्मा औष्ण्यरूप परिणमवातैं अग्निनामको भजने वारो होय है सो एवम्भूत नयकरि कहने योग्यपणां करि उष्ण पर्य्याय तें अनन्य है तैसैं एवंभूत नय करि कहने योग्यपणांका वशतैं ज्ञान दर्शन पर्य्याय रूप परिणत आत्माही ज्ञानदर्शन है क्योंकि इन कैं आत्म स्वभावपणौं है यातैं ॥ ५ ॥ वार्तिक—अतत्स्वाभाव्येऽनवधारणप्रसङ्गोऽग्निवत् ॥ ६ ॥ अर्थ—आत्माको स्वभाव ज्ञान नहीं होतां संता आत्माका नहीं जाननेको प्रसङ्ग आवे है। टीकार्थ—जैसैं अग्नि उष्ण पर्य्याय करि अन्य द्रव्यनितैं असाधारणपणां करि धारण करिये है कि यो अग्नि है ऐसैं प्रतीति करिये है। अर जो अग्नि उष्ण स्वभाव नहीं है तौ अग्निमात्र के विषै असाधारणरूप उष्णपर्य्यायका अभावतैं अग्निका अनवधारणको प्रसङ्ग आवै है। तैसैं आत्मा के भी ज्ञानतैं अन्यपणांनैं होता संता आत्माका अनवधारणको प्रसंग आवे हैं यातैं यो आत्मा अन्यद्रव्यनितैं असाधारण ज्ञानपर्य्याय रूप है। तातैं ज्ञानस्वभावतैं द्रव्यार्थिक नयका उपदेशतैं अनन्य है। अर जो आत्मा ज्ञान स्वभाव नहीं होय तौ आत्मा अज्ञानी होय तातैं आत्माका अनवधारणको प्रसङ्ग आवै है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—अर्थान्तरात्संप्रत्यय इति चेन्नोभयासत्वात् ॥ ७ ॥ अर्थ—प्रश्न, अन्य पदार्थतैं भी भले प्रकार प्रतीति होय है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि ऐसैं मानैं से दोउनि के असत्पणौं प्राप्त होय है। टीकार्थ—अन्यपणां नैं होतां संता भी अनवधारणको प्रसङ्ग नहीं हैं। प्रश्न, काहे तैं ? उत्तर, और पदार्थनितैं भिन्न

पणों है यातें ॥७॥ तथा प्रश्नरूप वार्तिक-नीलीद्रव्यसम्बधाच्छाटीपटकम्बलादिषु नीलीसंप्रत्ययवत् ॥८॥ अर्थ—और सुनूं किन्नीली द्रव्यका सम्बन्धतें साड़ी पट कम्बल आदिके विषे नीली पणांकी प्रतीतिके समान है। टीकार्थ—जैसे अर्थान्तरभूत नीली द्रव्यकरि सम्बन्धपणांतें शाड़ीपट काम्बल आदिके विषे नील गुणकी प्रतीति है, तैसें अर्थान्तरभूत उष्ण गुण का समवायतें उष्ण अग्नि है तैसे ही अर्थान्तरभूत ज्ञानगुणका समवायतें आत्मा ज्ञानी है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर ऐसें भिन्न मानें दोउनिके असत्पणो आवे है यातें ॥ ८ ॥ कथं, उत्तर रूप वार्त्तिक—दण्डदण्डिवत् ॥ १६ ॥ अर्थ—प्रश्न, कैसें? उत्तर, दण्ड दण्डी के समान है। टीकार्थ, जैसे दण्डका सम्बन्धतें पूर्व दण्डी जात्यादिक लक्षणनि करि स्वतें सिद्धपणातें सत् है। अर दण्ड भी दण्डीका संबन्धतें पूर्ववृत्त दीर्घतादि लक्षणनि करि स्वतें सिद्धपणांतें सत् है। तातें पुरुषकूं दण्डका योगतें दण्डी कहिये है यो न्याय है। तथा नीली द्रव्यका योगतें शाड़ी आदि नील है यो न्याय है। तासें उष्ण गुणका योगतें पूर्व अग्नि के सद्भाव को जनावने वारो कोई विशेष लक्षण नहीं है यातें अग्नि असत् है, अर अग्निका योगतें पूर्व उष्ण गुण के भी असत्पणों है निराश्रय गुणका अभावतें अर दोउ असत्को सम्बन्ध नहीं तौ दृष्ट है अर नहीं इष्ट है तैसे ही आत्माके भी ज्ञान गुणका योगतें पूर्व विशेष लक्षण का अभावतें असत्पणों है अर ज्ञान के भी आत्म द्रव्यका सम्बन्धके पूर्व निराश्रय गुणका अभाव तें असत्पणों है अर दोउ असत्को सम्बन्ध नहीं तो दृष्ट है अर नहीं इष्ट है अर्थात् प्रत्यक्ष परोक्षप्रमाण के अगोचर है। तातें दोउनिका असत्पणां तें अर्थान्तर तें भले प्रकार प्रतीति नहीं होय है ॥ ९ ॥ किञ्च वार्तिक-उभयथाप्यसद्भावात् ॥ १० ॥ कथं? सत्वासद्भावादिवत् ॥ ११ ॥ अर्थ—और सुनूं कि दोउ पक्षमें ही सद्भाव है

यातैं ॥ १० ॥ प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, सर्व असत् वादीके समान। टीकार्थ—और सुनूं कि यो अस्तित्व पूछनें योग्य है कि उष्ण गुणका योगतैं पूर्व अग्निकै विषैं उष्ण है ऐसो ज्ञान है कि नहीं है। जो उष्ण गुणका योगतैं पूर्व अग्निविषैं उष्ण गुण है ऐसो ज्ञान है तो किस प्रयोजनतैं उष्ण गुणको योग प्रार्थना करिये है अर जो उष्ण गुणका योगतैं पूर्व अग्निकैविषैं उष्ण गुण नहीं है तो यातैं ही उष्ण ज्ञानका अभावतैं अनुष्ण स्वभाव रूप अग्निकै उष्ण गुणका योगतैं उष्ण है ऐसा नामको अभाव है। अर्थात् दण्डका योगतैं दण्डी कहिये है तैसैं उष्ण गुणका योगतैं उष्ण वा उष्णवान कहना योग्य है। उष्ण कहना नहीं बनै है ॥ ११ ॥ किञ्च, वार्त्तिक—अनवस्था-प्रतिज्ञाहानिदोषप्रसंगात् ॥ १२ ॥ कथम् ? वार्त्तिक—सर्वसत्प्रतिपक्षवादिवत् ॥ १३ ॥ अर्थ—अन-वस्था अर प्रतिज्ञा हानि दोषका प्रसंग आवै है यातैं । प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, सर्व सत्के प्रतीपक्षी वादीनिकै समान है। टीकार्थ—प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, सुनूं कि जैसैं जो उष्ण गुणका योगतैं अग्नि उष्ण है, तैसैं उष्ण गुण कौनकरि योगतैं उष्ण है । जो उष्ण गुण स्वभावतैं उष्ण है तो अग्निके विषैं स्वभावतैं उष्णता होनेमैं कहा असन्तोष है अर जो उष्ण गुणके उष्णपणातैं उष्णपणौं है तो जो ऐसे हैं तो उष्णत्वकै उष्णपणो काहेतैं हैं जो स्वतैं ही है तो अग्निके विषैं कहा असन्तोष है ? अर अग्निकै उष्णपणौं स्वतैं ही मति हौ या कारणतैं उष्णत्वकै भी और उष्णत्व है । अर वाकै भी और है। ऐसैं कहत संतै अनवस्था होय है अर अनवस्था मति होय या कारणतैं स्वतैं ही उष्ण-त्वके उष्णत्व है ऐसैं माननैतैं अर्थान्तरतैं भलेप्रकार प्रतीति होय है कि अर्थान्तर जो ज्ञान ताका संबन्धतैं आत्माकै ज्ञान होय है। ऐसैं प्रतिज्ञा करी हुती ताकी हानि भई। तैसैं ही ज्ञान गुणका योगतैं आत्मा ज्ञानी है तो ज्ञान गुण कौन योगतैं ज्ञानी है ? जो स्वभावतैं है तो आत्मामें स्वभाव-तैं माननैमैं कहा असन्तोष है ? अर जो ज्ञानपणातैं ज्ञान गुणकै ज्ञान नाम है तो ज्ञानपणाकै ज्ञान-

पणौं काहेतैं है ? जो स्वतै ही है तो अत्माकै विषैं कहा असन्तोष है। अर जो आत्माके ज्ञानीपणौं स्वतै ही मति हौ या कारणतैं ज्ञानत्वकै भी अन्य ज्ञानत्व है अर ताकैं भी अन्य है ऐसैं मानैतैं अनवस्था होय है। अर अनवस्था मति हौ या कारणतैं स्वतै ही ज्ञानत्वकै ज्ञानत्व इष्ट है। ऐसैं मानैतैं अर्थान्तरतैं भलेप्रकार प्रतीति होय है ऐसी प्रतिज्ञा करी हुती ताकी हानि होयगी ॥ १३ ॥ किंच, वार्त्तिक—तत्परिणामाभावात् ॥१४॥ अर्थ—और सुनूं कि अन्य पदार्थ रूप परिणावेमनको अभाव है यातैं। टीकार्थ—जैसैं दण्ड सम्बन्धनैं होतां संता भी दण्डीकै दण्डरूप परिणाम नहीं होय है। दण्डी ऐसा नाम मात्रको ग्रहण होय है, तैसैं उष्ण गुणकै उष्णत्व सामान्यका विशेष सम्बन्धकरि उष्णपणौं है। क्योंकि गुण सामान्य विशेष रूप पदार्थनिमैं तिहारै भेद है यातैं। यातैं उष्णत्ववान् उष्णगुण है, आप स्वयमेव उष्ण नहीं है ऐसैं सिद्ध भयो। तथा उष्ण गुणका सम्बन्धनैं होतां संता अग्निकै उष्णपणौं नहीं होय क्योंकि द्रव्यगुण रूप पदार्थनिकै तिहारै भेद है यातैं। या कारणतैं उष्णवान अग्नि है परन्तु स्वयमेव उष्ण नहीं है। ऐसैं सिद्ध भयो। भावार्थ—जैसैं दण्डका योगनैं होतां संता भी दण्डी दण्डरूप नहीं होय है तैसैं ज्ञान गुणका सम्बन्धनैं होतां संता भी आत्म ज्ञानरूप नहीं होय है यातैं तत्स्वभाव ही माननां योग्य है ॥१४॥ प्रश्नोत्तर रूपवार्त्तिक--समवायादितिचेन्न प्रतिनियमाभावात् ॥१५॥ अर्थ-प्रश्न, समवायतैं है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पदार्थ पदार्थप्रति नियमको अभाव है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, दण्ड दण्डीकै तो संयोग संम्बन्ध है सो पृथक् सिद्ध पदार्थनिकै ही बणै है तातैं दण्ड रूप नहीं परिणामै है। अर आत्माकै अर ज्ञानादिकनिकै ऐसैं मान्य है कि समवाय नामा अयुतसिद्धलक्षण सम्बन्ध है सो यो समवाय बुद्धिका अर नामका प्रवृत्तिको हेतु है। ता समवायकरि एकत्वनैं ही प्राप्त भये हैं कहा ऐसो कहनौं होय है। तातैं उष्णपणांका समवायतैं गुण उष्ण है अर उष्णगुणका समवायतैं अग्नि

उष्ण है। उत्तर, ऐसैं कहो हो सो नही है, प्रश्न काहेतैं ? उत्तर, प्रतिनियमका अभावतैं सो ऐसैं है कि उष्णत्वके अर उष्ण गुणके तथा अग्निके अर उष्ण गुणके अन्यपणांनैं होतां संता यो याहीतैं मिलै ऐसो नियम कहा है जो उष्ण गुणको अग्निके विषैं ही समवाय होय अर जलकै विषैं नहीं होय। अर शीत गुणको समवाय जलके विषैं ही है अर अग्निके विषैं नहीं है। अर उष्णत्वको उष्ण गुणकरि ही समवाय है अर शीतादि गुणान्तरकरि नहीं है तातैं जा विशेषण करि यो भिन्न भिन्न नियम इष्ट करिये है सो नहीं देखिये है। यातैं उष्णपणों जो है सो निश्चय करि द्रव्यको परिणाम ही है ऐसैं सिद्ध है। इहां नैयायिक कहै है कि और याको प्रति नियत नियम करन वारो हेतु नहीं है, स्वभाव ही हेतु है। उत्तर, स्वभाव हेतु है तातैं ही द्रव्यका परिणामकी सिद्धि है ॥१५॥ किंच, वार्तिक--समवायाभावो वृत्यन्तराभावात्॥१६॥ अर्थ--और सुनूं कि समवायको अभाव है, क्योंकि समवायनैं प्रवृत्ति करावनें वारा अन्य समवायको अभाव है यातैं। टीकार्थ-नैयायिक करि परिकल्पित समवाय नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, वृत्यन्तरका अभावतैं, सो ऐसैं हैं कि जैसै गुण रूप पदार्थनिको द्रव्यकरि समवाय सम्बन्ध है यातैं प्रवृत्ति इष्ट है। तैसैं समवाय पदार्थान्तर होय कौन सम्बन्धकरि द्रव्यादिकनिमें प्रवर्तैगो। क्योंकि समवायान्तरको अभाव है यातैं भव आचार्य्यनें समवाय तत्वनैं एक ही कह्यो है या वचनतैं। अर संयोगकरि भी प्रवृत्ति नही हैं क्योंकि युल सिद्धिको अभाव है यातैं क्योंकि युतसिद्धनिके अप्राप्ति पूर्वक प्राप्ति है सो संयोग है अर संयोग संबंधतैं तथा समवाय सम्बन्धतैं विलक्षण सम्बन्ध नहीं है। जाकरि समवायको द्रव्यादिकनि कैं विषैं प्रतीति होय यातैं समवायी जे द्रव्य तिनकरि नहीं सम्बन्ध होने तैं समवाय नहीं है कि जैसैं खर विषाणको अभाव है तैसैं अभाव है ॥ १६ ॥ वार्तिक—प्राप्तित्वात् प्राप्त्यन्तराभाव इति चेन्न व्यभिचारात् ॥ १७ ॥ अर्थ—प्रश्न, प्राप्त होने योग्य द्रव्यादिक है तातैं अर

समवाय प्राप्ति रूप है तातैं याके प्राप्त होनेमें अन्य प्राप्त करनेवाराको अभाव है? उत्तर, सो नहीं हैं क्योंकि व्यभिचार है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, द्रव्यादिक प्राप्तिमान है कि प्राप्त होने योग्य है यातैं तिनकै विषैं कोई प्राप्ति होने योग्य हो अर समवाय तो प्राप्ति रूप है कि प्राप्ति होनेवाला है प्राप्त मान नहीं है यातैं प्राप्त्यंतर जो अन्य प्राप्त करनें वारो ताका अभावनें होतां संता भी स्वतै ही प्राप्त होय है। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न काहेतैं? उत्तर, व्यभिचार है यातैं जैसैं संयोग भी प्राप्ति रूप है सो प्राप्त्यन्तर जो समवाय ताकरि प्रवर्तै है, तैसैं ही समवायके भी प्राप्तिपणौं है यातैं व्यभिचार है क्योंकि प्राप्तित्व दोऊनिमें समान है भावार्थ—संयोग नामा गुण है सो भी प्राप्ति रूप है तथापि समवायतैं ही ताका प्रवर्तना पदार्थनिमें मानौं हौ तैसैं ही प्राप्तिरूप समवाय है यातैं व्यभिचार है॥ १७॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—प्रदीपवदिति चेन्न तत्परिणामादन्यत्व सिद्धेः॥ १८॥ अर्थ—प्रश्न, प्रदीपकके समान है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि दीपकका परिणामतैं अनन्यपणांकी सिद्धि है यातैं टीकार्थ—जैसैं दीपक दीपकान्तरकी नहीं अपेक्षा करतो संतो आपनें प्रकाशै है अर घट पटादिकनिनैं भी प्रकाशै है तैसैं समवाय भी संबन्धांतरकी अपेक्षा विना ही आपकै द्रव्यादिकनिकै विषैं प्रवृत्तिको हेतु है। अर द्रव्यादिकनिकै परस्पर प्रवृत्तिको भी हेतु है। अर्थात्, द्रव्यके अर गुणके भी परस्पर प्रवृत्तिको हेतु है। उत्तर, ऐसैं कहौ हा सो नहीं है प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, वा परिणमनतैं ही अनन्यपणांकी सिद्धि है सो ऐसैं हैं कि जैसैं दीपक आपका प्रकाशरूप परिणामतैं प्रकाश स्वरूप है, यातैं अनन्य है सो प्रकाशान्तरनैं नहीं अपेक्षा करे है अर जो दीपक प्रकाश स्वरूप नहीं होय तौ प्रकाश स्वरूपतैं अन्यपणानें होतां दीपक के अदीपकपणां को प्रसङ्ग आवै। याते प्रकाश स्वरूपनें छांड़ि अन्य दीपक नहीं है। तैसैं ही द्रव्यतैं अन्य गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय नहीं है अर्थात् ये सर्व द्रव्यका परिणाम नहीं है। अर

अन्तरंग वाह्यरूप उभय जे परिणामके कारण तिनकी है अपेक्षा जाके ऐसा द्रव्यकै ही गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय इत्यादिक पर्य्यायांतरकरि परिणाम है अर जैसें दीपक अपने लक्षणनिकरि प्रसिद्ध हो तो संतो घटादिकनितैं अन्य है ऐसें समवाय अपने लक्षणनिकरि प्रसिद्ध हो तो संतो द्रव्यतैं अन्य नही है अर द्रव्यकै ही गुणादि पर्य्याय रूप परिणाम है यातैं दीपककै समान समवायकी सिद्धि नहीं है। अर द्रव्यतैं गुणादिकनिकै अन्यपणौं होत संतै द्रव्यकै अद्रव्य पणाकै प्रसंग आवै है। यातैं गुणादि पर्य्यायनिनें छांड़िकरि द्रव्य अन्य नहीं है अर जो गुणादिक पर्य्यायनिनैं छांड़ि और कोऊ अपना विशेष लक्षण करि द्रव्य प्रसिद्ध है, अर गुणादिकनि करि संबन्धनै प्राप्त होय है तौ वो विशेष कहौ यातैं गुणादिकका परित्याग करि और द्रव्यको विशेष स्वयमेव प्रसिद्ध नहीं है। तातैं द्रव्यके परिणाम ही गुणादिक है ऐसैं सिद्ध भयो ॥ १८ ॥ किञ्च वार्तिक—विशेषपरिज्ञानाभावात् ॥ १९ ॥ अर्थ और सुनूं कि विशेष परिज्ञानको अभाव है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि जाकै युत सिद्ध पदार्थको अर अयुतसिद्ध पदार्थको ग्राहक विज्ञान एक है ताकै अयुतसिद्धनिकै विषैं तो समवाय है अर युतसिद्धनिकैं विषैं संयोग है ऐसौ विशेष विज्ञान है। अर तिहारे ज्ञाननिकै एक क्षण वर्ती एक अर्थका विषय पणातैं वा विशेष विज्ञानको अभाव है। अर वा विज्ञानका अभावतैं अयुतसिद्ध युतसिद्धका विवेकको अभाव है ॥१९॥ वार्तिक—संस्कारादिति चेन्न तस्यापि तादात्म्यात् ॥२०॥ अर्थ—प्रश्न, इहां वादी कहै है कि संस्कारतैं विशेष परिज्ञान होय है? उत्तर, वा संस्कारकौं भी ज्ञान स्वरूपपणौं है यातैं। टीकार्थ-ज्ञानतैं उत्पन्न भयो अर उत्तर ज्ञानको कारण ऐसो संस्कार है ताकै यो सामर्थ्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, वा संस्कारकै भी ज्ञान स्वरूप पणौं है यातैं सो ऐसैं कहै है कि एकार्थ ग्राही ज्ञानकै अर संस्कारकै एकार्थ ग्राही ज्ञानका हेतुपणातैं अर अनेकार्थ ग्राही ज्ञान-

का अभावतैं अनेकार्थ ग्राही ज्ञानको अर अनेकार्थ ग्राही संस्कारको अभाव है। तातैं पूर्वोक्त अयुतसिद्ध युतसिद्धका विवेक को अभाव कह्यो हुतो वो ही दोष अवस्थित है। भावार्थ--इहां दोष पक्ष करि प्रश्न करिये है कि वो संस्कार तिहारे मान्यमें ज्ञान स्वरूप है कि अज्ञान स्वरूप है जो अज्ञान स्वरूप है तदि तो वा संस्कारके जाननें को तथा जनावनेंको कहनों ही नहीं बनें, और जो ज्ञान स्वरूप है तो ज्ञान एकार्थ ग्राही क्षणस्थायी है ता रूप ही वो भयो तातैं याकै दोउनि को जनावनें को सामर्थ्य नहीं सम्भवे। ऐसो संस्कारको निराकरण करि प्रथम सूत्रका चौथा वार्तिक का अर्थ अन्यप्रकार करि कहे है कि प्रश्न, कर्ताकैं अर करणकै अन्यपणांतैं आत्माकै अर ज्ञानादिकनि कै परशु आदिके समान अन्यपणा है? उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि वा द्रव्यका परिणामतैं अग्निकै समान अन्यपणां है सो ऐसैं है कि जसैं अग्निको स्वभाव उष्णपणां जो है तातैं अन्र दहन करनो दाहक स्वभाव जो है सो दाह किया को कर्त्ता है। प्रश्न, सो कहा कारण स्वरूप हुवो संतो दहे है? उत्तर, दहन परिणामनैं अग्निस्वरूप ही करण है तैसैं आत्मा स्वज्ञानपणांतैं ज्ञानतैं अनन्य जानन परिणामतैं पदार्थननिनैं जाननो संतो ज्ञान कियाको कर्ता है। प्रश्न, सो कहा कारण स्वरूप हुवो संतो जानैं है उत्तर, ज्ञान परिणामनैं ही जानैं है, सो ही ज्ञान करणपणां करि कहिये है। अर जो ज्ञाननैं ही करण स्वभाव करि नहीं कहिये तो आत्माकै ज्ञानस्वभाव नहीं होतां संता आत्माका अनवधारण को प्रसंग अग्निकै समान आवै। इत्यादि वास्यार्थ विवर्ण दहन स्वभावादिक की अपेक्षा करि जोड़वो योग्य है ॥ २० ॥ किञ्च वार्तिक—अनेकांतात्पर्यायपर्यायिणोरर्थान्तरभावस्य घटादिवत् ॥२१॥ अर्थ—और सुनं कि अनेकांततैं पर्याय पर्यायीकै अर्थांतर भावको स्थापन घटादिकै समान है। टीकार्थ-घट कपाल खंड शर्करादिकनिकै दोऊ नयका अर्पणका अभेदतैं कथञ्चित् एकपणां अर कथंचित् अन्य पणां है। प्रश्न, कैसै है? उत्तर, इहां

पर्य्यायार्थिक नयका गौण भावनैं होतां संता द्रव्यार्थिक नयका प्रधानपणांतैं पर्य्यायार्थिकका अनर्पणातैं मृत्तिकारूप द्रव्य अजीव अनुपयोगादि द्रव्यार्थका अर्पणातैं कथंचित् एकपणों हैं। क्योंकि घट कपालादिक मृत्तिका रूप द्रव्य पदार्थनैं नहीं छाड़ै है यातैं।। बहुरि तिनकै ही द्रव्यार्थिक नयका गौण भावनैं होतां संता पर्य्यायार्थिक नयका प्रधानपणांतैं द्रव्यार्थका अनर्पणातैं कारण विशेष करि ग्रहण किया भेदरूप पर्य्यायार्थका अर्पणातैं कथंचित् अन्यपणों है। कयोंकि अन्य घट पर्य्याय है अन्य कपालादिक पर्य्याय है यातैं अर तथा मृत्तिका के अर घटादिक पर्य्यायनिकै कथंचित् एक पणों है कथञ्चित् अन्यपणों है। प्रश्न, या कैसैं है? उत्तर, तत्परिणामतैं एकपणों है। क्योंकि मृत्तिका रूप द्रव्य ही उभय परिणास कारणका वशतैं घट कपालादि पर्य्याय रूप परिणम्यूं घट कपालादि नामको भजने वारो होय है यातैं, तातैं नहीं तौ अन्य मृत्तिका है अर नहीं अन्य घटादिक है, क्योंकि मृत्तिका रूपतैं भिन्न घटादि पर्य्यायको अभाव है यातैं। अर कथञ्चित् पर्य्यायी पर्य्याय का भेदतैं अन्य पणों है, क्योंकि पर्यायी तो मृत्तिका द्रव्य है अर पर्य्याय घटादिक है यातैं तैसैं ही आत्माकै अर ज्ञानादि पर्यायनिक भी कथञ्चित् एक पणों है कथंचित् अनेक पणों है प्रश्न, कैसैं है? उत्तर—पर्य्यायार्थिक नयका गौणपणांनैं होतां संतां द्रव्यार्थिक नयका प्रधान पणातैं पर्य्यार्थकका अन्यपणा है अनादि पारिणामिक चैतन्यजीव द्रव्य आदि द्रव्यार्थका अर्पणातैं कथञ्चित् एक पणों है क्योंकि ज्ञानादिक अनादि पारिणामिक चेतन्य जीव द्रव्य आदि द्रव्यार्थतैं नहीं छांडै है यातैं। अर तिनकै ही द्रव्यार्थिक नयका गौणपणानै होतां संतां पर्यायार्थिकनयका प्रधानपणांतैं द्रव्यार्थका अन्यपणां तैं कारण विशेष करि ग्रहण किया भेदरूप पर्यायार्थका अर्पणातैं कथञ्चित् अन्यपणों है यातैं अन्यज्ञान पर्याय है अर अन्य दर्शनादि पर्याय है। तैसैं ही आत्माकै अर ज्ञानादिक पर्यायनिकै कथञ्चित् एक पणों है कथञ्चित्

अन्यपणौं। प्रश्न, कैसैं है ? उत्तर, तत्परिणाम का उपदेशतैं कथञ्चित् एकपणौं है। क्योंकि आत्मा ही उभय परिणाम कारणका वशतें ज्ञान आदि पर्य्याय रूप परिणम्यो ज्ञान आदि नामको भजने वारो है। तातैं नहीं तो अन्य आत्मा है अर नहीं अन्य ज्ञानादिक है क्योंकि आत्म द्रव्यतैं भिन्न ज्ञानादि पर्य्यायको अभाव है यातैं। वहुरि कथञ्चित् पर्य्यायीका अर पर्य्यायका भेदतैं अन्यपणौं है, क्योंकि पर्य्यायी तो आत्मा है अर पर्य्याय ज्ञानादिक है यातैं तातैं एकत्व अन्यत्व प्रति अनेकांत की उत्पत्ति है, यातैं तत्परिणामतैं होतां संतां भी करण भाव युक्त है॥ २१ ॥ किञ्च वार्तिक—इतरथा हि एकार्थ पर्य्यायादन्यत्वप्राप्तिर्वृक्षवत् ॥ २२॥ अर्थ—जो ऐसैं नहीं होय तो निश्चय करि एकार्थ पर्य्यायतैं अन्यपणांको प्राप्ति वृक्षके समान होय है॥ टीकार्थ—जाकै एकान्तरूप कर्ता करण के विषैं अन्यपणौं है ताकै एकार्थ पर्य्यायतैं अन्यपणौं प्राप्त होय है। प्रश्न, सो कैसैं है ? उत्तर, वृक्ष के समान है तैसैं पुरुष परशु आदि करि मन्दिर नैं करै हैं। इहां कर्त्ता के अर करणतैं अन्यपणौं है, तैसैं वृक्ष शाखाभार करि भग्न होय है। इहां एक वृक्षतैं शाखाभाररूप अर्थ पर्य्यायतैं अन्यपणौं प्राप्त होय सो यो अन्यपणौं नहीं है क्योंकि शाखाभार शिखाभार विना अन्यवृक्ष नहीं है। यातैं अर शाखाभारतैं अन्यवृक्ष नहीं है सो भी नहीं है क्योंकि शाखा भार करि वृक्ष भग्न होय है ऐसो कहिये है यातैं अर जो ऐसैं नहीं होय तो एकार्थ पर्य्यायात्मक करणको निर्देश है सो नहीं होय यातैं तैसैं ही आत्मद्रव्य विना आत्मज्ञान नहीं है। अर आत्मद्रव्य विना अन्यज्ञान नहीं है सो भी नहीं है क्योंकि आत्मा जाकरि पदार्थनितैं जानै है ऐसैं एकार्थ पर्य्यायात्मक करणको निर्देश है सो नहीं होय यातैं ॥ २२ ॥ किञ्च वार्तिक—करणस्योभयथोपपत्ते द्रव्यस्य मूर्त्तिमदमूर्तिभेदवत्॥ २३॥ अर्थ—करणकी दोऊतरैं उपपत्ति है सो द्रव्यकै मूर्त्तिमान अमूर्तिमान भेदकै समान है। भावार्थ—जैसैं द्रव्यकै मूर्तिमान अमूर्तिमान भेदतैं एकांत

रूप आग्रह नहीं है, क्योंकि पुद्गलद्रव्य मूर्तिक है अर धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य अमूर्त्तिक है अर आत्मा अमूर्त्तिक है सो द्रव्यार्थका आदेशतैं है पर्य्यायार्थका आदेशतैं नहीं है क्योंकि जीवकै अनादि कार्मण शरीरको सम्बन्ध है यातैं मूर्तिक है। तथा करण दोय प्रकार है सो विभक्त कर्तृक अविभक्त कर्तृक भेदतैं है। तिनमैं कर्त्तातैं अन्य है सो विभक्त कर्तृक है। सो जैसैं देवदत्त परशु करि छेदै है इहां कर्त्ता देवदत्त तो अन्य है अर परशु करण अन्य है, अर कर्त्तातैं अनन्य है सो अविभक्त कर्तृक है सो जैसैं अग्नि इंधननैं उष्णपणां करि दहै है तैसैं आत्मा-ज्ञानकरि पदार्थनिनैं जानै है ऐसैं अविभक्त कर्तृक करण है ॥ २३ ॥ किञ्च, वार्तिक—दृष्टान्ताच्च कुशूलस्वातंत्र्यवत् ॥२४॥ अर्थ—और सुनूं कि दृष्टान्ततैं कुशूलका स्वतंत्रपणांके समान है। टीकार्थ—जैसैं देवदत्त कुशूलनैं भेदै है, इहां जा समय कुशूल भेदन क्रियाकी कुशलताकरि स्वतन्त्रताकरि कहनें योग्य है ता समय स्वयमेव आपनैं भेदै है सो ऐसैं कहिये है। प्रश्न, वो कहा करण स्वरूप हुवो संतो आपनैं भेदै है? उत्तर, ऐसैं कहनेकी इच्छाके विषैं कुशूलस्वरूप करि ही करणपणांकरि अङ्गीकार करिये है तैसैं ही आत्मा ही ज्ञाता अर करण होय है ॥२४॥ किञ्च, वार्तिक--एकार्थ पर्य्यायविशेषोपपत्तेरिन्द्रादिव्यपदेशवत् ॥ २५ ॥ अर्थ—और सुनूं कि एकार्थ पर्य्याय विशेषकी उत्पत्तितैं इन्द्र आदि नामके समान है। टीकार्थ--इहां एक पदार्थके अनेक पर्य्याय विशेष-निकी उत्पत्ति तो देखी अर पदार्थके तिन पर्य्यायनितैं अन्यपणौं नहीं देख्यो। प्रश्न, सो कैसैं है? उत्तर, इन्द्र आदि नामका उपदेशके समान है, सो ऐसैं है कि जैसैं एक देवराज रूप पदार्थ-कै इन्द्र, शक्र, पुरन्दर आदि अनेक व्यञ्जन पर्य्याय विशेषकी उत्पत्ति है। अर देवराजके इन्द्र, शक्र, पुरन्दर आदि पर्य्यायनितैं अन्यपणौं नहीं देख्यो है। अर अनन्य पणांतैं जा गुण करि इन्द्र, है ता गुण करि ही शक्र अथवा पुरन्दर नहीं है। अथवा जा गुण करि शक्र है ता गुण करि इन्द्र पुरन्दर नहीं है। अथवा जा गुण करि पुरन्दर है ता गुण करि ही इन्द्र शक्र नहीं है। प्रश्न, सो कैसैं

है ? उत्तर, इहां इन्द्रादिक शब्दनिकै अपने अपने स्वभाव प्रति नियम रूप व्यंजन पर्य्यायकी उत्पत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि ऐश्वर्य्यवानतैं इन्द्र है अर सामर्थ्यतैं शक्र है। पुर नगरका भेद करवातै पुरन्दर है अर नहीं इन्दन शकन पुदारण रूप व्यञ्जन पर्यायका भेदतैं देवराज, इन्द्र, शक्र, पुरन्दर नहीं है सो नहीं है। क्योंकि पर्य्यायको भेद है यातैं। अर कथञ्चित् इन्दन आदि पर्य्यायको धारक है सो ही शक्र, पुरन्दर आदि है ही, क्योंकि द्रव्य एक है यातैं। तैसैं ही एक आत्माके ज्ञानादि पर्य्याय विशेषकी उत्पत्ति है। तातैं एकार्थ पर्य्याय विशेषकी उत्पत्तितैं आत्म द्रव्यतैं एकान्त करि ज्ञानादिकनिकै अन्यपणौं नहीं है ॥२५॥ वार्तिक—कर्तृसाधनत्वाद्वा दोषाभावः ॥२६॥ अर्थ—अथवा कर्तृ साधन पणांतैं दोषको अभाव है। टीकार्थ—अथवा ये ज्ञान, दर्शन शब्द करण साधन नहीं है तो कहा है ? उत्तर, कर्तृ साधन है, अर तैसैं ही चारित्र शब्द भी कर्म साधनरूप नहीं है तो कहा है ? उत्तर, कर्तृ साधन है। प्रश्न—सो कैसैं है ? उत्तर, एवम्भूत नयका वशतैं ज्ञान, दर्शन, चारित्र जे हैं ते आत्मा ही इष्ट है यातैं। तत्परिणामतैं ज्ञानादिरूप परिणम्यूं आत्मा ही जानैं है सो ज्ञान है अर देखै है सो दर्शन है अर आचरै है सो चारित्र है यातैं जो कह्यो हुतो कि कर्त्ताकै अर करणकै अन्यपणांतैं आत्माकै अर ज्ञानादिकनिकै अन्यपणौं है। ऐसौ दोष आवै है सो नहीं होय है ॥२६॥ वार्तिक—लक्षणाभाव इतिचेन्न बाहुलकात् ॥२७॥ अर्थ—प्रश्न, लक्षण जो सूत्र ताको अभाव है ? उत्तर, बाहुलकतैं कर्त्ता अर्थ संभवै है टीकार्थ—प्रश्न, कर्त्ता अर्थके विषैं युट् करने वारो सूत्र नहीं है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, बाहुलकात्, युड्व्याबहुलमिति कर्त्तरि युट्णित्रश्च या सूत्रतैं होय है अर जहां कह्यो है तहातैं अन्यत्र भी देखिये है कि भावमें अर कर्ममें जो प्रत्यय कहे हैं सो करणादिकनिमें भी देखिये है ताके उदाहरण ऐसैं है कि स्नात्यनेन स्नानीयश्चूर्णः, ददात्यस्मै इति दानीयोऽतिथिः, समावर्तन्ते तस्मादिति समावर्तनीयो गुरुः। बहुरि करणाधिकरणयोर्युट् या सूत्रतैं करण में अर

अधिकरण में युट् प्रत्यय होय है सो कर्मादिकनि में भी देखिये है ताके उदाहरण ऐसैं है कि निरदति तदिति निरदनम्, प्रस्कंदति तस्मादिति प्रस्कन्दनम्। इनिका विशेष व्याख्यान वचनिका रूप ग्रन्थमें उपयोगी नहीं जाणि नहीं लिख्यो है ॥२७॥ वार्तिक—अथवा भावसाधना ज्ञानादिशब्दास्तत्वकथनाद्दात्रस्य करणव्यपदेशवत् ॥ २८ ॥ अर्थ—अथवा ज्ञानादि शब्द भाव साधनरूप है। क्योंकि तत्व कथनतैं दातलाके करणव्यपदेशके समान है। टीकार्थ—अथवा उदासीनपणां करि अवस्थित तृणादिकनिनैं नहीं छेदतौ भी दांतलौ करण है ऐसैं कहिये है तेसैं ही उदासीनपणां करि अवस्थित ज्ञान, दर्शन, चारित्र जे हैं ते अपने अपने नियम रूप ज्ञान, दर्शन आचरण रूप क्रिया का व्यापार प्रति निवृत्ति भई है उत्कण्ठा जिनकैं ऐसैं हैं। प्रश्न, सो यो मोक्ष मार्ग कहा है उत्तर, ज्ञान, दर्शन चारित्र है तिनकी निरुक्ति ऐसी है कि ज्ञातिर्ज्ञानं; दृष्टिर्दर्शनं, चरणं चारित्रम् इनका अर्थ ऐसा है कि जानै सो ज्ञान, देखै सो दर्शन, आचरै सो चारित्र ऐसैं एवम्भूत नयकी अपेक्षा करि परम हइनैं प्राप्त भया ज्ञान, दर्शन, चारित्रकूं मोक्ष मार्ग कह्या है। अर क्रियारूप व्यापारनैं प्राप्त भये ज्ञानादिक जे हैं तिनकै कर्ता आदि कारकको व्यवहार है ॥२८॥ वार्तिक—व्यक्तिभेदादयुक्तमिति चेन्नैकार्थे शब्दान्यत्वाद् व्यक्तिभेदगतेः ॥२९॥ अर्थ—प्रश्न, व्यक्तिभेदतैं अयुक्त है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि एकार्थ कैं विषैं शब्दके अन्यपणांतैं व्यक्तिभेदकी प्राप्ति है यातैं टीकार्थ—ज्ञानं आत्मा ऐसैं कहना अयुक्त है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, व्यक्ति जो लिंग ताका भेदतैं क्योंकि अभिधेय जो विशेष्य ताके समान अभिधान जो विशेषण ताके लिंग संख्या होय है। तातैं ज्ञान आत्मा ऐसैं प्राप्त होय है, ऐसैं कहतां संता आचार्य्य उत्तर कहे है कि तुमनैं कहा सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, एक पदार्थके विषैं शब्दका अन्यपणांतैं लिंग भेदको प्राप्ति है यातैं एक ही अर्थके विषैं शब्द भेदतैं लिंग भेद देखिये है सो ऐसैं है कि गेहं कुटी, मठः तथा पुष्यः, तारका, नक्षत्रम् ऐसे ही ज्ञानम्, आत्मा ऐसा भी है ॥ २९ ॥ 'वार्तिक—ज्ञानग्रहण-

मादौ न्याय्यं तत्पूर्वकत्वाद्दर्शनस्य ॥ ३० ॥ अर्थ—ज्ञान को ग्रहण आदिमें न्याय है क्योंकि दर्शनके ता पूर्वकपणौं है यातैं। टीकार्थ—या सूत्रमें ज्ञान शब्दको ग्रहण आदिमें न्याय्य है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, ज्ञानपूर्वकपणौं दर्शनके है यातैं क्योंकि पदार्थका तत्वकी उपलब्धिपूर्वक श्रद्धान होय है यातैं ॥ ३० ॥ वार्तिक—अल्पाच्तरत्वाच्च ॥ ३१ ॥ अर्थ—तथा अल्प अचतर पणांतैं। टीकार्थ—दर्शनतैं ज्ञान अल्प स्वर है यातैं भी प्रथम ही कहनैं योग्य है ॥ ३१ ॥ उत्तररूपवार्तिक—नोभयोर्युगपत्प्रवृत्तेः प्रतापप्रकाशवत् ॥३२॥ अर्थ—प्रताप प्रकाशके समान दोउनिके युगपत् प्रवृत्तितैं दोष नहीं है। टीकार्थ—यो दोष नहीं है। प्रश्न; काहेतैं? उत्तर. दोउनिकी साथ ही प्रवृति है यातैं। प्रश्न, कैसे? उत्तर, प्रकाश अर प्रताप कै समान सो ऐसैं है कि जैसैं सूर्य्यके मेघपटलरूप आवरणका अभावनै होतां संतां प्रताप अर प्रकाशकी प्रवृत्ति एकै काल है तैसैं ज्ञान अर दर्शनका स्वरूपको लाभ एकै काल है सो ऐसैं है कि जा समय दर्शन मोहका उपशमतैं तथा क्षयोपशमतैं तथा क्षयतैं आत्मा सम्यग्दर्शन पर्य्याय करि प्रकट होय है वा ही समय वाकै मति अज्ञान श्रुत अज्ञानकी निवृत्ति पूर्वक मतिज्ञान श्रुतज्ञान प्रकट होय है ॥ ३२ ॥ वार्तिक—दर्शनस्यैवाभ्यर्हितत्वात् ॥ ३३ ॥ अर्थ—दर्शन के ही पूज्यपणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, जो दोऊ साथ ही प्रगट होय है तौहू अल्प स्वरपणांतैं ज्ञानकौ पूर्वनिपात होनौं योग्य है? उत्तर, सो असत्य है, प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, दर्शनकै पूजन योग्य पणांतैं सो ऐसैं है कि ज्ञानतैं दर्शन ही पूजनीक है, क्योंकि श्रद्धानकी निकटतानैं होतां संतां अज्ञानकै ही ज्ञानभाव होय है यातैं अर जानिकरि भी नहीं श्रद्धान कर्त्ताकै जाननपणांको अभाव है यातैं ॥ ३३ ॥ वार्त्तिक—मध्ये ज्ञानवचनं ज्ञानपूर्वकत्वाच्चारित्रस्य ॥३४॥ अर्थ—चारित्रकै ज्ञानपूर्वकपणांतैं मध्यमैं ज्ञानको वचन है टीकार्थ—जीवादिक पदार्थनिका तत्त्वज्ञानकी निकटतानैं होतां संतां चारित्र मोहका उपशमतैं तथा क्षयोपशमतै तथा क्षयतैं कर्म ग्रहणका कारण रूप क्रिया विशेषका त्यागरूप चारित्र परि

णाम होय है। तातैं चरित्रकै ज्ञानपूर्वक पणौं है यातैं ज्ञान पूर्वक चारित्र शब्द प्रयुक्त है ॥ ३४॥ वार्त्तिक—इतरेतरयोगे द्वन्द्वो मार्गंप्रति परस्परापेक्षाणां-प्राधान्यात् ॥ ३५ ॥ अर्थ—इतरेतर योगमें द्वन्द्व समास है क्योंकि परस्पर अपेक्षा सहित जे हैं तिनकै मोक्षमार्ग प्रति प्रधानपणौं है यातैं। टीकार्थ—यो इतरेतर योगमें द्वन्द्व समास है सो ऐसैं है कि दर्शनं च, ज्ञानं च, चारित्रं च, दर्शनज्ञानचारित्राणि इति। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, परस्पर अपेक्षावान् दर्शन, ज्ञान, चारित्र जे है तिनकैं मार्ग प्रति प्रधानपणा है यातैं ॥ ३५ ॥ वार्त्तिक—यथा प्लक्षन्यग्रोधपलाशा इति ॥ ३६ ॥ अर्थ—जैसैं प्लक्ष, न्यग्रोध, पलाश पदको समास द्वन्द्व होय है तैसैं होय है। टीकार्थ—अस्ति आदि समान है काल अर क्रिया जिनकै ऐसैं परस्पर अपेक्षावान प्लक्षादिकनिकै इतरेतर योगमें द्वन्द्व समास होय है क्योंकि सर्व पदार्थनिकै प्रधानपणौं है यातैं तथा बहुवचनान्त है यातैं। तैसैं ही अस्ति आदि समान काल अर क्रिया है जिनकै ऐसैं परस्पर अपेक्षावान दर्शन, ज्ञान, चारित्र जे हैं तिनकै इतरेतर योगमें द्वन्द्व समास होय है, क्योंकि सर्वपदार्थनिकै प्रधानपणौं है यातैं, तथा बहुवचनान्त है यातैं। अर परस्पर अपेक्षावान् मिल्या हुआ दर्शनादिक तीन जे हैं तिनकै ही मोक्षमार्गपणां प्रति प्रधानता है, अर एककै तथा दोयकै नहीं है ॥३६॥ वार्त्तिक—प्रत्येकं सम्यग्विशेषणपरिसमाप्तिर्भुजिवत् ॥ ३७ ॥ अर्थ—भुजि क्रियाकै समान एक एक प्रति सम्यग् विशेषणनैं मिलायबो योग्य है। टीकार्थ—जैसैं देवदत्त, जिनदत्त, गुरुदत्त जे हैं ते भोज्यंतां कहिये भोजन करो, ऐसैं भुजि क्रिया एक एक प्रति परिपूर्ण होय है तैसे ही प्रशंसा वाची एक सम्यक् शब्दको दर्शनादिकनिकरि सम्बन्ध करनेंतैं सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र ऐसैं होय है ॥ ३७ ॥ वार्त्तिक—पूर्वपदसमानाधिकरण्यात्तद्व्यक्तिवचनप्रसङ्ग इति चेन्न मोक्षोपायस्यात्मप्रधानत्वात् ॥३८॥ अर्थ—प्रश्न, पूर्वपद जे सम्यग्दर्शनादिक तिनतैं समान अधिकरणतैं वाही लिङ्गको अर वचनको प्रसङ्ग आवै है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि मोक्षका उपायकै आत्म प्रधानपणौं है यातैं। टीकार्थ—दर्श-

नादिकनिकरि समान अधिकरण पणांतैं मोक्षमार्ग शब्दके उनको लिङ्ग और वचन जे हैं ते प्राप्त होय है कि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गाणि ऐसा होय है, उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, मोक्ष मार्गके आत्म प्रधान पणौं है यातैं जो मोक्षको मार्ग है सो मोक्षको उपाय है अर मोक्षका उपायको स्वभाव है सो आत्मा है। यातैं सो आत्मा जा निज स्वभावकरि मोक्ष-मार्ग कहिये है सो मोक्षमार्ग समस्त दर्शन, ज्ञान, चारित्रके विषैं मिल्यो हुवो एक पुरुष लिङ्ग है ताका प्रधानपणांतैं मोक्षमार्गः ऐसा ही योग्य है अर समान पणांका अधिकरण पणांनैं होतां संतां भी वा लिंगकी अर वचनकी प्राप्ति नहीं है। जैसैं साधवः प्रमाणम् ऐसा प्रयोग है ॥ ३८ ॥ वार्त्तिक--आत्यन्तिकः सर्वकर्मनिक्षेपो मोक्षः ॥ ३९ ॥ अर्थ—अर अत्यन्तपणौं सर्व कर्मनिको क्षय जो है सो मोक्ष है। टीकार्थ---इहां मोक्ष असनेधातु कूं घञ् प्रत्यय होय है तातैं मोक्षणं मोक्ष ऐसो निरुक्ति भाव साधन रूप है। इहां असन शब्द क्षेपण अर्थ में है सो अत्यन्तपणौं सर्वकर्मनिको निर्मूल नष्ट होनौं जो है सो मोक्ष है ऐसैं कहिये है ॥ ३९ ॥ वार्तिक—मृजेश्शुद्धिकर्मणो मार्ग इवार्थाभ्यन्तरीकरणात् ॥ ४० ॥ अर्थ—मृजु धातु शुद्धिकर्म अर्थ में है। ताको मार्ग शब्द बन्यो है अर इव पदनैं अभ्यन्तर करवांतैं मार्गके समान जो है सो मार्ग है। टीकार्थ--जो मृष्ट कहिये शुद्ध है सो यो मार्ग है और मार्गके समान होय सो मार्ग है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है ? उत्तर, जैसैं स्थाणु, कण्टक, पाषाण, शर्करा आदि दोष रहित मार्ग करि पथिकजन सुख पूर्वक बांछित स्थाननैं प्राप्त होय है, तैसैं मिथ्यादर्शन असंयम आदि दोष रहित रत्नत्रयरूप मोक्षमार्गकरि सुखपूर्वक मोक्षनैं प्राप्त होय है यो ही उपमा अर्थ है। भावार्थ----इहां मार्ग शब्द है सो मृजुष् शुद्धौ धातुको रूप है। तातैं शुद्ध क्रिया है सो मार्ग है। इहां मार्ग शब्द-के निकट इव शब्द सूत्र में नहीं है तौहू अर्थकी सामर्थ्यतैं ग्रहणकरि टीकाकारनै ऐसो अर्थ कियो है कि मार्गके समान है ॥ ४० ॥ वार्त्तिक—अन्वेषणक्रियस्य वा करणत्वोपपत्तेः ॥ ४१ ॥

अर्थ—अथवा अन्वेषण क्रियाकै करणपणांकी उपपत्ति है यातैं टीकार्थ—अथवा मार्ग अन्वेषणे या धातुको मार्ग सिद्ध होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, सम्यग्दर्शनादिकनिकै करणपणांकी उत्पत्ति है यातैं। इहां मोक्षमार्गकी निरुक्ति ऐसी है कि मोक्षो येन मार्ग्यते स मोक्षमार्गः, याकौ अर्थ ऐसौ है कि जाकरि मोक्ष हेरिये कि प्राप्त हूजिये सो मोक्षमार्ग है ॥४१॥ वार्तिक—युक्त्यनभिधानादमार्ग इति चेन्न मिथ्यादर्शनाज्ञानासंयमानां प्रत्यनीकत्वादौषधवत् ॥४२॥ अर्थ—प्रश्न, युक्तिका नहीं कहवातैं अमार्ग है। उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि मिथ्यादर्शन अज्ञान असंयमके प्रतिपक्षीपणौं है यातैं औषधिके समान है। टीकार्थ--प्रश्न इहां कुछ युक्ति नहीं कही कि या हेतुतैं सम्यग्दर्शनादित्रय या प्रकार मोक्ष मार्ग है यातैं याकै मोक्षमार्गपणौं नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, तुमने कह्या सो नहीं है। प्रश्न—मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयम जे हैं तिनका प्रत्यनीक पणांतैं। प्रश्न, कैसैं है उत्तर, औषधिके समान है कि जैसैं वात आदि विकारतैं उत्पन्न भये रोगनिका उच्छेदको कारण निदान पूर्वक प्रतिपक्षी स्निग्ध रूक्ष आदि औषधि है तैसैं मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयमादिकनिका उच्छेदका कारण निश्चयरूप प्रतिपक्षी सम्यग्दर्शनादिक औषधि है ॥ ४२ ॥

इतिश्रीमद्भगवदकलंकदेवप्रणीते तत्वार्थवार्तिके व्याख्यानालंकारे प्रथमे ध्याये पदपरनाम राजवार्तिक

सागरोद्धृततत्त्वकौस्तुभे प्रथममाह्निक परिसमाप्तम् ॥ १ ॥

मूल ग्रन्थ संख्या श्लोकमध्ये सूत्र एक और वार्तिक गुणसठि हैं। तिनमें एक तौ मंगलाचरण रूप श्लोक है, अर सत्तरा सूत्रनिकी उत्थानिका रूप है। तिनमें भी तीनतौ मोक्ष मार्गका स्थापनमें शंका समाधान रूप है अर चार मोक्षरूप कार्य्यमें तौ सर्वके समानता अर मार्गमें विवादका कथन रूप है अर छै मोक्षका स्वरूप में तौ विवादका निराकरण और मार्गमें विवादका कथन रूप है अर च्यारमें मोक्षके बन्ध पूर्वक पणांमें शंका समा-

धानको कथन है अर ब्याबीस प्रथम सूत्रका व्याख्यान रूप है तिनमैं तीन तौ रत्नत्रयका लक्षण रूप है। अर ग्यारा ज्ञानदर्शनकै करण साधन पणौं अर चारित्रकै कर्म साधन पणौं अर कर्ता करणके अन्यत्व अनन्यत्वमैं शङ्का समाधान रूप है अर १४ समवाय का अर संस्कारका निषेध रूप है; अर पांच पर्य्याय पर्य्यायीकै अन्यत्व अनन्यत्व मैं अनेकान्तका स्थापन रूप है अर चार ज्ञानादिकनिकै कर्ता आदिका साधन रूप है अर सात ज्ञानादर्शनकै पूर्व निपातमैं शङ्का समाधानरूप तथा द्वन्द्व समासादिका कथन रूप है अर पांच सम्यक् शब्दका तीनकै सम्बन्ध करनैसैं तथा मार्ग शब्दका अर्थ कथनमें है अर एक मार्गकै अमार्गपणांकी शङ्काका समाधान रूप है॥ ५८ ॥ ऐसैं प्रथम आह्निक में वार्तिक गुणसठि है. तिनकी देशभाषामें बचनिका रूप अर्थ पण्डित फतैलालजीकै सम्मति तैं श्रीमज्जिनवचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवाल ज्ञानावरण कर्मकाक्षयोपशम निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है, तामैं ग्रन्थ प्रमाण श्लोक च्यार सौ पचास है ॥ ४५० ॥

अथ द्वितीयमाह्निकं लिख्यते।

तहां आदिमें प्रश्नरूप वार्तिक विपर्य्ययाद्बन्धस्यात्मलाभे सति ज्ञानादेव तद्विनिवृत्तेः त्रित्वानुपपत्तिः ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, विपरीततैं बंधका आत्मलाभनैं होतां संतां भी ज्ञानतै ही तिन मिथ्यादर्शनादिकनिकी विनिवृत्ति है यातैं तीन पणांकी अनुपपत्ति है। टीकार्थ—इहां कोऊ कहै है कि विपरीत ज्ञानतैं बंधकौ आत्मलाभ है अर विपरीत ज्ञानका अभावतैं तत्वज्ञानन होतां संतां बंधकी विनिवृत्ति है। क्योंकि कारणका अभावतैं निश्चय कार्य्यको अभाव होय है। अर बंधक विनिवृत्ति जो है सो ही मोक्ष है। तातैं मोक्षमार्गकै तीन पणौं नहीं उत्पन्न होय है। वार्तिक—प्रतिज्ञामात्रमिति चेन्न सर्वेषामविसंवादात् ॥२॥ अर्थ--प्रश्न, प्रतिज्ञा मात्र है? उत्तर, सो नहीं

है क्योंकि या विषयमें सर्वकै त्रिसंवादको अभाव है यातैं। टीकार्थ--विपरीत ज्ञानतैं बंध है यो वचन प्रतिज्ञा मात्र ही है। उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, सर्व वादी प्रतिवादीनिकै या वचनकै विषै विसंवाद है यातैं। अर्थात् सर्व प्रतिवादी यामैं विसंवाद नहीं करै है सो ऐसें है कि वार्तिक—धर्मेण गमनमूर्ध्वमित्यादिवचनमेकेषाम् ॥३॥ अर्थ--धर्म करि ऊर्ध्वगमन होय है इत्यादि एक को वचन है। टीकार्थ—धर्म करि ऊर्ध्व गमन होय है कि ब्राह्म्य १ सौम्य २ प्राजापत्य ३ इन्द्र ४ गान्धर्व ५ यक्ष ६ राक्षस ७ पिशाच ८ इन अष्ट जातिमें उत्पन्न होय है। अर अधर्म करि अधोलोक प्रति गमन होय है कि निश्चय करि मानुष १ पशु २ मृग ३ मत्स्य ४ सरीसृप ५ स्थावर ६ इन षट् स्थाननिकै विषैं अधर्म करि गमन होय है। अर ज्ञानकरि अपवर्ग होय है अर जा समय या आत्माकै रजोगुण, तमोगुण का गौण भावतैं सतो गुणका प्रधान पणांतै प्रकृतिका अर पुरुषका अन्तरको परिज्ञान प्रकट होय ता करि अपवर्ग होय है। अर विपरीत ज्ञानतैं वन्ध इष्ट करिये है। अर जो या आत्माकै अव्यक्त महत् अहङ्कार अर शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णरूप तन्मात्रा पांच ऐसें आत्मस्वरूपतें अन्यरूप अष्ट प्रकृति जे हैं तिनकै विषै अर अहंकारतें उत्पन्न भई ऐसी विकाररूप इन्द्रिय जे हैं तिनकै विषैं अपनापणां को अभिमान जो है सो विपरीत ज्ञान है तातैं बंध होय है। ऐसैं कितनेकको वचन है ॥३॥ वार्तिक—तथा ऽनात्मीयेष्वात्माभिमानविपर्ययात्तस्य-शब्दाद्युपलब्धिरादिगुणपुरुषान्तरोपलब्धिरन्तः ॥ ४ ॥ अर्थ—अथवा अनात्मीय पदार्थनिकै विषैं आत्मपणांका अभिमान रूप विपरीत भावनितैं आत्माकै संसार है। अर शब्दादिककी उपलब्धि आदि गुण अर पुरुषका अंतरकी उपलब्धि जो है सो संसारको अन्त है। टीकार्थ—तथा यावत् आत्मा कै श्रोत्र आदि इंद्रियनिकी प्रवृत्तिरूप जे श्रवणादिक तिनकै विषैं मैं श्रोता हूं इत्यादि अभेदरूप प्रतीति है तथा पञ्चभूतमयी मस्तक हस्त आदि का समूहरूप शरीरकै विषैं मैं पुरुष हूं

ऐसी प्रतीति है तावत् अप्रति बुद्धपणांतें संसार है । बहुरि जा समय गुणाके अर पुरुषके अन्तरताकी उपलब्धि जो है सो ही संसारको अभाव है सो ऐसैं है कि जा समय पुरुष विना और सर्व प्रकृतिकृत राजस तामस सात्विक गुण रूप है अर अचेतन है, भोग्य है ऐसैं जानैं है अर प्रधानतैं अन्य भोक्ता अकर्ता चेतन पुरुषनैं जानैं हैं अर गुणनिनैं अचेतन जानै है, ता समय ताकै गुणका अर पुरुषका अन्तरकी उपलब्धि जो है सो संसारको अन्त है या प्रकार ज्ञानतैं मोक्ष है। अर विपरीत ज्ञानतैं बन्ध है। ऐसैं कितनेकनिको मत है ॥४॥ वार्तिक—इच्छाद्वेषाभ्यामपरेषाम् ॥५॥ अर्थ—इच्छा द्वेषतैं संसार है ऐसैं औरनिको मत है। टीकार्थ—इच्छा, द्वेष पूर्वक धर्म अधर्मकी प्रवृत्ति है अर धर्म, अधर्मकी प्रवृत्ति करि सुख दुःख होय है। अर सुख दुःखतैं इच्छा द्वेष होय है ऐसैं संसार चक्र है अर विगत मोहकै इच्छा द्वेषनहीं है। क्योंकि मिथ्यादर्शनको अभाव है यातैं। अर मोह है सो अज्ञान है। अर विगत मोह यती षट् पदार्थनिको ज्ञाता वैराग्यवान् जो है ताकै सुख, दुःख, इच्छा द्वेषको अभाव है। अर इच्छा द्वेषका अभावतैं धर्म अधर्मको अभाव है अर धर्म अधर्मनैं होतां संता नवीन कर्मका संयोगको अभाव है। अर पुनर्जन्मको अभाव है सो मोक्ष है। प्रश्न, तिन धर्माधर्मका अभावनैं होतां संता अपवर्ग कैसैं है ? उत्तर, प्रदीपकका अभावनैं होतां संता प्रकाशका अभावकै समान है क्योंकि निश्चय करि जो जीं भावनैं ग्रहण करि अपना स्वरूपनैं प्राप्त होय सो वा कारण रूप पदार्थका अभावतैं आप भी अभावनैं प्राप्त होय है सो ऐसैं है कि प्रदीपकका अभावतैं प्रकाशको अभाव होय है तैसैं होय है अर बंध अदृष्टतैं होय है, प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अधर्म संज्ञक अदृष्टतैं अज्ञान होय है अर अज्ञानतैं मोह होय है अर मोहवानूकै इच्छा द्वेष·उत्पन्न होय है अर इच्छा द्वेषतैं धर्म, अधर्म होय है सो यो बन्ध है। अर या बंधतैं संसारकी उत्पत्ति है। तातैं अदृष्टका अभावनैं होतां संता संयोग को अभाव होय।

प्रश्न, कौनका संयोगको अभाव होय है ? उत्तर, जीवन नामा संयोगको अभाव होय है प्रश्न, जीवन किस कूं कहौ हो ? उत्तर, देह धारी आत्मा जो है ताकै धर्माधर्मकी है अपेक्षा जाकै ऐसा मन करि संयोग जो है सो जीवन है अर वा जीवनको धर्माधर्मका अभावतैं अभाव है अर पुनर्जन्मको भी अभाव है। अर प्रत्यग्र शरीर जो नवीन शरीर ताका अत्यन्त अभाव है सो मोक्ष है। प्रश्न, अभाव कैसैं है ? उत्तर, धर्माधर्मकी अनागत अनुत्पत्ति अर संचित निरोध जे हैं तिनकरि अनागत अनुत्पत्ति अर संचित निरोध रूप दोय प्रकार अभाव है तिनमैं प्रथम धर्माधर्म की अनागल अनुत्पत्ति होय है। तिनमैं भी शरीर इंद्रिय मनतैं भिन्न आत्माका दर्शनतैं अकुशल रूप अधर्म जो है ताकी अनुत्पत्ति है। क्योंकि अधर्मका साधन शरीरादिक जे हैं तिनका परिवर्ज-नतैं अर धर्मकी भी अनागतानुत्पत्ति है। क्योंकि धर्मका साधन भी शरीरादिक जे हैं तिनका नहीं सम्बन्ध होवातैं आत्मा नहीं सम्बन्धनै प्राप्त भया कर्मनैं नही बान्धैं है। अर संचित निरोध भी है। क्योंकि संसारतैं उद्वेगरूप तथा परिखेदरूप फलतैं अधर्मको नाश है सो ऐसैं है कि शरीर तत्त्वका अवलोकनतैं संसारतैं उदासीनता रूप उद्वेग होय है। अर शीत उष्ण शोक आदि है निमित्त जानैं ऐसा शरीरके परिखेदनैं देय अधर्म रूप अदृष्ट दूरि होय है। अर भोगनिमैं दोषका दर्शनतैं तथा छहूं पदार्थनिका तत्वके निर्णयतैं आनन्दनैं प्राप्तकरि धर्म अदृष्ट विनाशनैं प्राप्त होय है यातैं मोक्ष है ऐसैं औरनिको मत है ॥ ५ ॥ वार्तिक—दुःखादि-निवृत्तिरित्यन्येषाम् ॥ ६ ॥ अर्थ—दुःखादिकनिको निवृत्ति जो है सो मोक्ष है ऐसो अन्यका मत है टीकार्थ—दुःख जन्मप्रवृतिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरायाये तदनन्तराभावान्निश्रेयसा-धिगमः, यो सांख्य मतको सूत्र है याको अर्थ ऐसो है कि दुःख, जन्म, प्रवृत्ति, दोष, मिथ्याज्ञान, ये पांच जे हैं तिनका उत्तरोत्तर नाशनैं होतां संता इनिकै अनंतर नवीन

बंधका अभावतैं मोक्ष की प्राप्ति है। ऐसैं सांख्यको मत है सो ऐसैं है कि या सांख्य सूत्रमें मिथ्याज्ञान उत्तर है कि अंतमैं पठित है सो सर्वमैं उत्तर मिथ्याज्ञान जो है ताकी तत्वज्ञानतैं निवृत्ति होतां संतां जो याकैं अनन्तर अर्थ हैं ताकी निवृत्ति है। प्रश्न, यो अर्थ कहा है? उत्तर, दोष हैं सो दोष निश्चयकरि मिथ्याज्ञानतैं अनन्तर हैं क्योंकि याकैं मिथ्याज्ञानको कार्य्यपणौं हैं। अर सो दोष प्रवृत्तितैं उत्तर है और प्रवृत्ति अनन्तर है। क्योंकि याकै दोषको कार्यपणौं है यातैं। ता पीछे दोषका अभावनैं होतां संतां प्रवृत्तिको अभाव होय है अर प्रवृत्ति भी जन्मतैं उत्तर है तातैं जन्म अभाव होय है। क्योंकि प्रवृत्तिको कार्य है यातैं और दुःखतैं जन्म उत्तर है यातैं जन्मका अभावतैं दुःखकी निवृत्ति होय है अर दुःखकी निवृत्तिनैं होतां संतां जो अत्यंत सुख दुःखको अनुपमभोग है सो मोक्ष है ॥ ६ ॥ वार्तिक—अविद्याप्रत्ययाः संस्कारा इत्यादिवचनंकेषाञ्चित् ॥ ७ ॥ अर्थ—अविद्या है कारण जिननै ऐसैं संस्कार है इत्यादि वचन कितनेकनिको है। टीकार्थ—अविद्या जो है सो सर्व भावनिके विषैं नित्य सात्मक शुचि सुखका अभिमान रूपा है। अर सो ह कारण जिनका ऐसो संस्कार है। इत्यादि वचन केइकनिके है। प्रश्न, वे संस्कार कौनसे हैं? उत्तर, रागादिक हैं ते भी तीन प्रकार है कि पुण्य संस्कार अपुण्य संस्कार है आनेज्य संस्कार है तिनमें पुण्यके कारण संस्कार जे हैं तिनको पुण्यका उदयनैं होतां संतां विज्ञान होय है यातैं। या कहिये कि अविद्या है कारण जिननैं ऐसे संस्कार हैं अर वस्तु वस्तु प्रति नियम रूप जानना भाव जो है सो विज्ञान है, अर अपुण्यके कारण संस्कार जे हैं तिनको अपुण्यका उदयनैं होतां संता ज्ञान होय है यातैं या कहिये है कि संस्कार है कारण जानैं ऐसो विज्ञान है अर विज्ञानतैं उत्पन्न भये च्यार स्कंध हैं ते ही च्यार महाभूत हैं तिनकै नाम रूपंनाम १ रूप नाम २ रूपं ३ नाम रूपं ४ अर आनेज्य के कारण संस्कार जे हैं तिनको आनेज्य का उदयनैं होतां संता विज्ञान होय है।

यातैं या कहिये है कि विज्ञान है कारण जानैं ऐसो नाम रूप है। अर नामरूप करि मिली हुई इन्द्रियां हैं ते षडायतन कहिये हैं यातैं नामरूपकी वृद्धि करि षडायतन द्वार करि कर्म तथा क्रिया उत्पन्न होय है। तातैं नाम रूप है कारण जानैं ऐसो षड़ायतन है या कहिये है। अर तीनूं धर्मनिको संन्निपात जो है सो स्पर्श है। प्रश्न, वे तीन कौन हैं? तिनको संन्निपात कहिये है, विषय इन्द्रिय, विज्ञान इनिको मिलाप जो है सो स्पर्श है। अर षड़ायतन करि षट् स्पर्शकाय प्रवर्तै है। यातैं षड़ायतन है कारण जानैं ऐसो स्पर्श है। अर स्पर्शको अनुभवन जो है सो वेदना है अर जी जातिको स्पर्श होय तीं जाति ही की वेदना प्रवर्तै है। यातैं या कहिये है कि स्पर्श है कारण जानैं ऐसी वेदना है, अर वेदनाको अध्यवसान जो है सो तृष्णा है यातैं तीं वेदना विशेषनिनैं आस्वादन करै है कि अभिनन्दन करै है कि अध्यवसायरूप करै है कि तृष्णा रूप करै है। यातैं वेदना है कारण जानैं ऐसी वा तृष्णा है ऐसैं कहिये है। अर तृष्णाकी विपुलता जो है सो उपादान है अर वा मेरी प्रिया अनुराग सहित है ऐसैं नित्य अपरित्याग रूप वारंवार प्रार्थना होय है तातैं तृष्णा है कारण जानैं सो उपादान है ऐसैं कहिये है। अर उपादान है कारण जानैं ऐसो अन्य जन्मको उत्पन्न करन वारो कर्म होय है सो भव कहिये है। ऐसैं प्रार्थना करतो संतो अन्य जन्मका कारणभूत कर्मनैं पाय करि तथा मनकरि तथा वचन करि उत्पन्न करै है। अर कर्म है हेतु जानैं ऐसो स्कंध उत्पन्न होय है सो जाति है जाहि जन्म कहै हैं। अर जाति करि रचे स्कंध जे हैं तिनको जो अपचय सो परिपाक है। अर जाति स्कंधको परिपाक है सो जरा है। अर परिपाकतैं विनाश होय है सो मरण है तातैं ऐसैं जाति है कारण जिननैं ऐसैं जरा अर मरण कहिये है या प्रकार यो द्वादशांग जामण मरणकी प्रतीतिको उपजावन वारो है अर अन्योन्य हेतुक है, तहां सर्व भावनिके विषैं अविपरीत श्रद्धान जो है सो विद्या है। क्योंकि अनित्य अनात्मक, अशुचि, दुःखरूप सर्व

भाव जे है तिनकै विषैं अनित्य, अनात्मक, अशुचि, दुःख रूप श्रद्धान जो है सो विद्या है तातैं मोक्ष है। प्रश्न, कैसैं है ? उत्तर, विद्यातैं अविद्याकी निवृत्ति होय अर अविद्याकी निवृत्तितैं संस्कारको निरोध होय है। अर संस्कारका निरोधतैं विज्ञानका निरोध होय अर विज्ञानका निरोधतैं नामरूप को निरोध होय अर नाम रूपका निरोध तैं षडायतन का निरोध होय। अर षडायतन का निरोध तैं स्पर्शको निरोध होय अर स्पर्शका निरोधतैं वेदनाको निरोध होय अर वेदनाका निरोधतैं तृष्णाका निरोध होय, अर तृष्णाका निरोधतैं उपादानको निरोध होय अर उपादानका निरोधतैं जन्मको निरोध होय अर जन्मका निरोतैं जराको निरोध होय है। अर जराका निरोधतैं मरणको निरोध होय है। तातैं अविद्यातैं बंध होय है अर विद्यातैं मोक्ष होय है ॥७॥ वार्तिक—मिथ्यादर्शनादेरिति मतं भवतां ॥ ८ ॥ अर्थ—मिथ्यादर्शन आदि बंधको कारण है ए सो तुम जैनीनिको मत है ॥ ८ ॥ टीकार्थ—मिथ्यादर्शनअविरतिप्रमादकषाययोगाबन्धहेतवः । यो तुम अर्हंतके सेवक जो हैं तिनको भी मत है । अर पदार्थनिको विपरीताभिनिवेश रूप श्रद्धान जो है सो मिथ्यादर्शन है । अर विपरीताभिनिवेश मोहतैं होय है। अर मोह है सो अज्ञान है। अर अज्ञानतैं बंध है यो मिथ्यादर्शन बन्धको आदि कारण है । अर सामायिक मात्रकी प्रतिपत्तितैं अनन्ता जीवनिकी मोक्ष भई है क्योंकि अनन्ता सामायिकमात्रसिद्धाः, यो वचन है यातैं अर सामायिक है सो ज्ञान है यातैं अर्हंतके जे है तिनकै भी ज्ञानतैं मोक्ष है, या प्रकार अविसंवादतैं त्रितयात्मक मोक्ष मार्गकी कल्पना युक्त नहीं है॥८॥ किञ्च, वार्तिक--दृष्टांतसामर्थ्यात् वणिक्स्वप्रिषेक पुत्रवत् ॥९॥ अर्थ--दृष्टांतकी सामर्थ्यतैं वणिककैं एक अपना प्यारा पुत्रकै समान है॥९॥ टीकार्थ—जैसैं कोऊ वणिक अपना प्यारा एक पुत्रके समान शरीरवान बालकनै गजकरि मर्दित देखि अति दुःख जनित तिरस्कार करि प्राप्त भई मूर्छा करि गत प्राणके समान होत भयो, अर

विशेषपणैं निवृत्ति भई है कायादिककी क्रिया जाके ऐसा वा वणिकके कुशल मित्रनिकरि उपाय पूर्वक बहुरि प्राप्त भई प्राणनिकी प्रवृत्तितैं अपना पुत्रनै ही दर्शनका विपर्यनैं प्राप्त होतां संता यो मेरो पुत्र है इत्यादि प्रकट भयो है तत्व ज्ञान जाकै ताकै अपना पुत्रकी सादृश्यतातैं प्रकट भया मिथ्याज्ञान जनित दुःख जो हुतो सो अभूतपूर्वके समान होत भयो तैसैं ही अज्ञानतैं बन्ध है अर केवल ज्ञानतैं मोक्ष है ॥९॥ वार्तिक—नवानान्तरीयकत्वाद्रसायनवत्॥१०॥अर्थ-नान्तरीयकपणांतैं कि तीननिके अभिन्नपणातैं रसायनके समान एक ज्ञानतैं ही मोक्ष नहीं है॥१०॥ इहां जैनी कहै है कि केवल ज्ञानतैं ही मोक्ष कहो हो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, नान्तरीय कपणांतैं सो ऐसैं है कि तीनों विना मोक्षको प्राप्ति नहीं है, प्रश्न, कैसैं है? उत्तर, रसायनके समान है सो जैसैं रसायनका ज्ञानतैं ही रसायनका फलकरि सम्बन्ध नहीं होय है क्योंकि रसायनका श्रद्धानको और क्रियाको अभाव है यातैं। अर जो रसायन ज्ञानमात्रतै ही रसायनका फलको संबंध कोईकै देख्यो है तो कहो सो है नहीं। तथा रसायनकी क्रिया मात्रतैं ही रसायनका फलकरि संबंध नहीं होय है क्योंकि रसायनका ज्ञान श्रद्धानको अभाव है यातैं तथा रसायनका श्रद्धान मात्रतैं ही रसायनका फलकरि संबंध नहीं है क्योंकि रसायनका ज्ञान पूर्वक क्रियाका सेवनको अभाव है यातैं तातैं रसायनका ज्ञान श्रद्धान क्रियाका सेवन करि संयुक्त पुरुषकै रसायनका फलकरि संबंध होय है या प्रकार यो उपदेश निर्विवाद है तैसैं ही केवल मोक्षमार्गका ज्ञानतैं ही मोक्षकरि संबंध नहीं होय है क्योंकि दर्शन चारित्रको अभाव है यातैं अर केवल श्रद्धानतैं ही मोक्षकरि संबंध नहीं होय है क्योंकि मोक्षमार्गका ज्ञान पूर्वक क्रियाका अनुष्ठानको अभाव है यातैं अर केवल क्रिया मात्रतैं ही मोक्षकरि संबंध नहीं होय है क्योंकि क्रिया, ज्ञान श्रद्धान रहित निष्फल है यातैं अर जो ज्ञानमात्रतैं ही कहूं कार्यकी सिद्धि देखी है तो वा कहो सो या है नाहीं यातैं मोक्षमार्ग-

के त्रितयात्मकपणांकी कल्पना सर्वोत्तम है। अर अनंताः सामायिकसिद्धाः यो आगम कह्यो सो त्रितयात्मकपणांनै ही साधै है। प्रश्न, कैसैं है? उत्तर, ज्ञान स्वभाव आत्मतत्वनैं श्रद्धान करतौ जो है ताके समायिक रूप चारित्रकी उत्पत्ति है यातैं अर समय, एकत्व, अभेद ये तीन शब्द अर्थान्तर नहीं हैं, अर समये भवं समायिकं ऐसी निरुक्ति है ताको अर्थ ऐसो है कि समय जो एकत्व ताके विषैं होय सो सामायिक कहिये सो चारित्र है अर सो ही सर्व सावद्यकी निवृत्ति है ऐसे अभेद-करि संग्रह कियो है यातैं ॥ उक्तं च—

हतं ज्ञानं क्रिया हीनं हता चाज्ञानिनां क्रिया।
धावन् किलांधको दग्धः पश्यन्नपि च पंगुलः ॥ १ ॥
संयोगमेवेह वदंति तज्ज्ञा न ह्येक चक्रेणरथः प्रयाति।
अंधश्च पंगुश्च वने प्रविष्टौ तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टौ॥ २ ॥

अर्थ—क्रियाकरि हीन ज्ञान जो सो नष्ट है। अर अज्ञानोनकी क्रिया जो है सो भी नष्ट है ताको दृष्टान्त ऐसो है कि निश्चयकरि अंध पुरुष जो है सो दौड़तो संतो भी दग्ध भयो। भावार्थ-ज्ञानकरि रहित पुरुष अंधके समान हुवो संतो आचरण करतो भी नष्ट होय है। अर पांगलो पुरुष देखतो संतो भी नष्ट भयो।.भावार्थ-आचरण रहित पुरुषदेखतो संतो भी नष्ट होय है ॥१॥ अर इहां उनकूं जान-नेवारे पुरुष संयोगनैं ही सुखको कारण कहै हैं, क्योंकि एक चक्रकरि रथ नहीं गमन करै है। ताको दृष्टान्त ऐसो है कि अंध अर पंगुल दोऊ वनमें प्रवेश कियो ते पिले संते पीछे नगरमें प्रवेश कियो भावार्थ- पांगुलो पुरुष आंधाका कांधापरि चढ़ि गमन करतो संतो कुशलपूर्वक अपने स्थानतक पहुंचे है अर्थात् केवल दर्शनतैं तथा ज्ञानतैं तथा केवल चारित्रतैं मोक्षनैं नाही प्राप्त होय है अर श्रद्धान युक्त आचरण करतो संतो ही पुरुष मोक्षनै प्राप्त होय है ॥२। १०॥ वार्त्तिक—ज्ञानादेव मोक्ष इति

चेदनवस्थानादुपदेशाभावः ॥ ११ ॥ अर्थ--प्रश्न, ज्ञानतैं ही मोक्ष होय है ? उत्तर, ऐसैं है तो अनवस्थानतैं उपदेशको अभाव होय है। टीकार्थ—जाकै मतमैं ज्ञानतैं ही मोक्ष है ताकै अनवस्थानतैं उपदेशको अभाव है सो ऐसैं है कि जैसैं दीपककै अंधकारकी निवृत्तिका हेतुपणांतैं दीपकनै विद्यमान होतां संता मुहूर्तमात्र भी अंधकार नहीं तिष्ठै है अर या नहीं है कि दीपक नाम पदार्थ तो प्रज्वलित रहे अर अंधकार तिष्ठवो करे तैसैं ही आत्म स्वरूप ज्ञाननैं प्रगट होनेके अनंतर ही आप्तके मोक्ष होय है। ऐसो मत युक्तिमान नहीं है क्योंकि ज्ञानके अनन्तर ही आप्तके शरीरकी तथा इन्द्रियनिकी प्रवृत्ति आदिकी निवृतितैं प्रवचनका उपदेशको अभाव होय ॥ ११ ॥ वार्तिक—संस्कारात्त्वयादवस्थानादुपदेश इति चेन्न प्रतिज्ञातविरोधात् ॥१२॥ प्रश्न, संस्कारका अविनाशतैं अवस्थान रहे है यातैं उपदेश है ? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि प्रतिज्ञाको विरोध है यातैं॥१२॥ टीकार्थ—यावत् जा आत्माके संस्कार नहीं क्षय होय तावत् आप्तका अवस्थानतैं उपदेश उत्पन्न होय है। उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, प्रतिज्ञातैं विरोध है यातैं क्योंकि जो उत्पन्न भयो है ज्ञान जाके ऐसो आत्मा भी संस्कारका क्षयकी अपेक्षा पणांतैं तिष्ठै है अर मोक्ष नहीं होय है तो ज्ञान तैं ही मोक्ष नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, संस्कारका क्षयतैं मोक्ष है यातैं जो प्रतिज्ञा करी हुती कि ज्ञानकरि ही मोक्ष है तातैं विरोध है ॥१२॥ किंच, वार्तिक—उभयथादोषोपपत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—और सुनूं कि दोऊ प्रकार करि ही दोषकी उत्पत्ति है यातैं टीकार्थ—और सुनूं कि इहां यो विचारने योग्य है कि संस्कारका क्षयको कारण ज्ञान है कि कोऊ और है। जो ज्ञानतैं ही संस्कारको निरोध है तो भी प्रवचनका उपदेशको अभाव है। क्योंकि ज्ञानके होतैं ही संस्कारको निरोध होय। अर संस्कारको निरोध होतैं ही मोक्ष होय तब उपदेश कैसैं प्रवर्तैं। अर जो संस्कारका क्षयको कारण और है तो सो ज्ञाननैं अन्य चारित्र ज

हे तातें अन्य कौन होनेकूं योग्य है। अर्थात् चारित्र ही है। ऐसें होतें भी प्रतिज्ञामें विरोध है ॥१३॥ किञ्च, वार्तिक—प्रव्रज्याद्यनुष्ठानाभावप्रसंगश्च ॥१४॥ अर्थ—और सुनूं कि दीक्षा आदि अनुष्ठानका अभावको प्रसंग होय है। टीकार्थ—और सुनूं कि जो ज्ञानतें ही मोक्ष है तो ज्ञानकें होनेमें ही यत्न करने योग्य है अर्थात्—पठन पाठन ही करनो योग्य है अर मस्तक डाढ़ीको मुण्डन तथा काथिया वस्त्रका धारण आदि है लक्षण जाको ऐसी दीक्षा अर यम नियम भावना आदिका अभावको प्रसंग होय है ॥ १४ ॥ वार्तिक—ज्ञानवैराग्यकल्पनायामपि ॥ १५ ॥ अर्थ—ज्ञान वैराग्यकी कल्पनाके विषें भी उपदेशको अभाव होय है। टीकार्थ—अवस्थान का अभावतें उपदेशको अभाव है इत्यादि पदार्थनिका परिज्ञाननें होतां संतां अर विषयनिमें अनाशक्ति लक्षण वैराग्यनें होतां संतां आसक्ते वा ही लक्षणमें मोक्षकी उत्पत्ति है यातें भी उपदेशको अभाव है क्योंकि अवस्थानको अभाव है यातें ॥ १५ ॥ किञ्च, वार्तिक—नित्यानित्यैकांतावधारणे तत्कारणासम्भवः ॥ १६ ॥ अर्थ—नित्य अनित्यको जो एकांत ताका अवधारणनें होतां संतां मोक्षका कारणको असम्भव है। टीकार्थ—पदार्थ नित्य है ही तथा अनित्य ही है ऐसा एकांतका अवधारणनें होतां संतां मोक्षका कारणको असम्भव है कि मोक्षका कारण ज्ञान वैराग्य जे हैं तिनको असम्भव है ॥ १६ ॥ सो ऐसें है कि वार्तिक—नित्यत्वैकांतेपि विक्रियाभावाद् ज्ञान-वैराग्याभावः ॥ १७ ॥ अर्थ—नित्य पणांका एकांतके विषें भी विक्रियाका अभावतें ज्ञान वैराग्य को अभाव होय है। टीकार्थ—विक्रिया दोय प्रकार है तिनमें एक तौ ज्ञानादि विपरिणमन लक्षण है अर दूसरी देशांतरमें प्राप्त होने रूप है अर जिनका मतमें आत्मा नित्य ही है तथा सर्व गत ही है तिनके दोऊ ही विक्रिया नहीं है कि ज्ञानादि विपरिणाम लक्षण भी नहीं है अर देशांतर संक्रमण लक्षण भी नहीं है तातें प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्दका संनिकर्षतें तथा

प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्दका संनिकर्षतैं तथा प्रत्यक्ष अनुमानकी सन्निकर्षतैं तथा प्रत्यक्ष रूप सन्निकर्षतैं उत्पन्न भया विज्ञानको अभाव है अर वैराग्यरूप परिणामको भी अभाव है तातैं ही पूर्वापरकालतैं तुल्य प्रवर्त्तबातैं आत्मा आकाशकै समान मोक्षको अभाव है। प्रश्न, समवायतैं है। उत्तर, समवायकै तिरस्काररूप व्याख्यान पणौं है यातैं नहीं है अर्थात् समवायको तो खण्डन पूर्वें कियो है ॥१७॥ वार्तिक—क्षणिकैकांतेप्यवस्थानाभावाज्ज्ञानवैराग्यभावनाभावः ॥ १८ ॥ अर्थ—बहुरि क्षणिक एकांतनै होतां संतां भी अवस्थानका अभावतैं ज्ञान वैराग्य भावनाको अभाव होय है टीकार्थ—बहुरि जिनके मतमें सर्व संस्कार क्षणिक मान्य है तिनके भी उत्पत्तिके अनन्तर ही विनाशनैं होतां संतां ज्ञानादिकनिको अवस्थान नहीं है अर तीन ज्ञानादिकनितैं अन्य तिष्ठनै वारे वस्तु नहीं विद्यमान है यातैं तिष्ठने वारा वस्तुका अभावतैं ज्ञान वैराग्य भावनाको अभाव है तातैं ही उत्पत्तिके अनंतर निरन्वय विनाशका अंगीकार करवातैं परस्पर मिलापका अभावनैं होतां सन्ता निमित्त नैमित्तिक व्यवहारका लोपतैं अविद्या है कारण जिनकूं ऐसैं संस्कार हैं इत्यादिक कह्यो हुतो सो विरोधनैं प्राप्त होय है अर सन्तानकी कल्पनानैं होतां संतां अन्यत्व अनन्यत्वकै विषैं अनेक दोषनिको संबंध होय है सो ही उत्तर पुराण सम्बन्धी श्लोकनिमैं भी कह्यो है ॥१८॥ वार्तिक-विपर्ययाभावः प्रागनुपलब्धेरुपलब्धौ वा बन्धभावः ॥ १९ ॥ अर्थ—विपर्ययको अभाव है क्योंकि प्राक् अनुपलब्धि तथा उपलब्धितैं होतां संतां बन्धको अभाव है ॥१९॥ टीकर्थ—या लोककै विषैं पूर्व कालमैं अनुपलब्धि किया है स्थाणका तथा पुरुषका विशेष जातैं ताके प्रकाशका अभावतैं संदेह होवातैं तथा इन्द्रियनिका विकलपणातैं भेदकी अप्राप्तिनैं होतां संतां विपर्य्यय ज्ञान देखिये हैं अर पृथ्वी तलके मध्यवर्ती भवनमैं उत्पन्न भयाकै तथा पूर्वें नहीं प्रतीतमैं आयो है भेद जाकै ताकै विपर्य्यय प्रतीत नहीं होय है तैसैं अनादि संसार में नहीं प्रगट भई है शक्ति जाकी

ऐसा पुरुषकै गुण पुरुषान्तरकी उपलब्धि नहीं है। यातें पूर्वं नहीं भई है अनुलब्धि जाकै ताकैं विपर्यय ज्ञान नहीं होय है तैसें ही अनित्य, अनात्मक, अशुचि, दुःखरूप सर्व भावनिके विषें नित्य, सात्मक, शुचि सुखरूप करि विपर्य्यय ज्ञान नहीं होय है क्योंकि तिनको पूर्वं नहीं अनुभूत विशेष पणौं है यातें अथवा यो अप्रसिद्ध सामान्य विशेषको कोइकें विपर्यय ज्ञान उत्पन्न भयौ देख्यो होय सो कहो। अर नहीं कहिये है यातें विपर्यका अभाव तें बन्धको अभाव है। तातें वहां कह्यो हुतो कि विपर्य्ययतें बन्ध होय है सो विशेषपणें हत्यो जाय है। अथवा अनादि संसारीकै पूर्वं सामान्य विशेषकी उपलब्धि अंगीकार करिये तौ वाही समय गुण पुरुषान्तरकी उपलब्धि है हेतु जानें ऐसो मोक्ष होवो योग्य है। ऐसें भी बन्धका अभाव है॥ १९॥ किञ्च, वार्तिक--प्रत्यर्थवशवर्तित्वाच्च। अर्थ--और सुनूं कि अर्थ अर्थ प्रतिवशवर्ती पणांतें बन्धको तथा मोक्षको अभाव है। टीकार्थ—जिनके यो मत है कि अर्थके वशवर्ती विज्ञान है तिनके पुरुष है विषय जाको ऐसो विज्ञान जो है सो तो स्थाणुतें नहीं ग्रहण करे है अर स्थाणु है विषय जाको ऐसौ विज्ञान जो है सो पुरुषनें नहीं ग्रहण करे है यातें परस्पर विषयको जो मिलाप ताका अभावतें संशय भी नहीं होय है अर विपर्य्यय भी नहीं होय है। तैसें ही सर्व पदार्थनिकै विषें अनेक अर्थनिकूं ग्रहण करने वारा एक विज्ञानका अभावतें विपर्य्ययनें नहीं होनां संतां बन्धको अभाव है अर तातें ही पदार्थ विशेषकी अनुपलब्धितें मोक्षको अभाव है क्योंकि एकार्थ ग्राही विज्ञान स्थाणु पुरुषका अन्तरनें नहीं जाने है यातें ॥ २०॥ वार्तिक—ज्ञानदर्शनयोर्युगपत्प्रवृत्तेरेकत्वमिति चेन्न तत्त्वावायश्रद्धानभेदात्तापप्रकाशवत् ॥ २१॥ अर्थ—प्रश्न, ज्ञानदर्शनके युगपत्प्रवृत्तितैं एक पणौं है? उत्तर, सो नहीं क्योंकि तत्वका ज्ञान अवाय श्रद्धानमें भेद है यातें ताप प्रकाशके समान है। अर्थ—प्रश्न, ज्ञान दर्शनके एक पणौं है क्योंकि दोऊनिकी एकै काल प्रवृत्ति है यातें उत्तर,

सो नहीं है। प्रश्न, कहां कारण? उत्तर, तत्वका ज्ञान अर श्रद्धानाका भेदतैं भेद है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, तापका काशका भेदकै समान भेद है। सो जैसैं तापका अर प्रकाशका स्वरूप कौ लाभ एकैं काल है तथापि दाहक अर प्रकाशक सामर्थ्यका भेदतें एकपणों नहीं है तैसैं ही ज्ञान दर्शनका तत्वका जानना श्रद्धान रूप भेदतैं एक पणों नहीं है। क्योंकि तत्वको जानना भाव जो है सो ज्ञान है अर श्रद्धान भाव जो है सो दर्शन है तथा वार्तिक—दृष्टिविरोधात् ॥ २२ ॥ अर्थ—तथा प्रत्यक्षमें विरोध है यातैं। टीकार्थ—जाकै एकै काल स्वरूप लाभ होनौ एकपणांमें हेतु मान्य है ताकै प्रत्यक्ष विरोध आवे है कि गौका दोउ सींग एकै काल उत्पद्यमान हैं तौ हू तिनकै नाना पणौं देखिये है यातैं ॥ २२ ॥ वार्तिक—उभयनयसद्भावेन्यतरस्याश्रितत्वाद्रूपादि-परिणामवत् अर्थ—अथवा दोउ नयका सद्भावनैं होतां संतां एक नयका आश्रित पणातैं रूपादि परिणामकै समान दोष नहीं है। टीकार्थ— अथवा दोउ नयका सद्भावतैं होतां संतां रूपादिक एक नयका आश्रितपणातैं दोष नहीं है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, रूपादि परिणामकै समान दोष नहीं है। सो जैसैं परमाणु आदि पुद्गल द्रव्यनिकै बाह्य अभ्यन्तर परिणामको कारण निकट होत संतै एकैं काल रूप,रस, गंध, वर्णादि परिणामनैं होतां संता भी रूपादिकनिकै एक पणौं नहीं है। तैसै ही ज्ञान दर्शनिकै भी एकपणौं नहीं है। अथवा दोऊ नयका सद्भावनैं होतां संतां एक नयका आश्रित पणातैं जैसैं रूपादि परिणामनिकै द्रव्यार्थिक पर्य्यायार्थिकमें एकका गौण प्रधान भावका अर्पणातैं कथंचित् एक पणौं है कथंचित् नाना पणौं है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, इहां पर्य्याया-र्थिक नयका गौणपणांनैं होतां संतां द्रव्यार्थिक नयका प्रधान पणातैं पर्य्यायार्थका अनर्पणातैं अनादि पारिणामिक पुद्गल द्रव्यरूप पदार्थका उपदेशतैं एक पणौं है सो जैसैं रूप पर्य्याय पुद्गल द्रव्य है तैसैं ही रसादिक भी द्रव्यार्थिकका उपदेशतैं पुद्गल द्रव्य है। वहुरि तिन रूपादिकनिकै ही

द्रव्यार्थिक नयका गौण पणांते होतां संतां पर्य्यायार्थिक नयका प्रधान पणातें द्रव्यार्थका अनर्पणतें भिन्न भिन्न नियम रूप रूपादिक पर्य्यायार्थ करि आर्पित जे हैं तिनकै कथंचित् अन्य पणों है यातैं रूप पर्य्याय अन्य है अर रसादिक अन्य है तैसें ही ज्ञान दर्शनके भी याही विधि कार अनादि पारिणामिक चैतन्य जीव द्रव्यर्थिकका उपदेशतैं कथंचित् एक पणों है। यातैं द्रव्यार्थका उपदेशतैं जैसें ज्ञान पर्य्याय आत्म द्रव्य है तैसें ही दर्शन भी आत्म द्रव्य है। अर इन दोउनिकै ही अपने अपने नियम रूप ज्ञान दर्शन पर्य्यायरूप अर्थका अनर्पणतैं कथंचित् अन्यपणों है। यातै अन्य ज्ञान पर्य्याय है। अर अन्य दर्शन पर्य्याय है ॥ २२ ॥ वार्तिक—ज्ञानचारित्रयोरकालभेदा-देकत्वमगम्यावबोधवदिति चेन्नाशूत्पत्तौसूक्ष्मकालाप्रतिपत्तेरुत्पलपत्रशतव्यधनवत् ॥ २३ ॥ अर्थ—प्रश्न, ज्ञान चारित्रके काल भेदका अभावतें एक पणों है सो अगम्यका अवबोधके समान है सो नहीं है। क्योंकि शीघ्र उत्पत्तिके विषें सूक्ष्मकालकी अप्रतीतितैं कमल पत्रका सैकड़ाका वेधनके समान है। टीकार्थ—प्रश्न, ज्ञानके अर चारित्रके एक पणों है क्योंकि काल भेद नहीं है यातें। प्रश्न, कैसें ? उत्तर, अगम्याका ज्ञानके समान है सो जैसें कोऊ मोहका उदय करि ग्रहण करी है अन्य अंगनां प्रति गमन करनेकी उत्कंठा रूप बुद्धि जानें ऐसा पुरुषनें मेघका उदयकरि उत्पन्न भया अधिक अंधकार रूप रात्रिकें विषें मार्गका अन्तरालमें व्यिभचारिणी माता आपनें अभिलाप रूप करी याहीतें स्पर्श करी वाही समय बीजलीनें प्रकाश कीयो ता प्रकाश करि जानी कि या माता है ऐसो ज्ञान जा समयकें उत्पन्न भयो वाही समय अगम्य पणांका ज्ञानतें अगम्यागमनकी निवत्ति भई तातें अगम्याका अवबोध अर अगम्या गमनकी निवृत्तिके काल भेद नहीं है तैसें ही जा समय ज्ञानावरणका क्षयोपशमतें जीनकें विषें जीजी पणां कौ ज्ञान प्रगट होय है ताही समय जीव नहीं हिंसा करने योग्य है। या प्रकार जीव हिंसाका कारणकी

निवृत्ति है अर निवृत्ति है सो चारित्र है। यातैं जीवका ज्ञानकै अर हिंसाकी निवृत्तिकै काल भेद नहीं है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, शीघ्र उत्पत्तिके विषैं सूक्ष्मकालका नहीं ज्ञान होय है यातैं, क्योंकि तहां भी काल भेद है परंतु सूक्ष्मपणां करि प्रतीतिमैं नहीं आवै है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, कमलके सौ पत्र जे हैं तिनका भेदनके समान है सो जैसैं कमल पत्र सौका भेदनका अनुक्रम असंख्यात समय प्रमाण है सो सर्वज्ञक प्रत्यक्ष अति सूक्ष्म है। परन्तु छद्मस्थनिकरि नहीं कहिये है यातैं। यावत् खड्ग एक कमल पत्रनैं भेदनकरि दूसरानै भेदै है तावत् असंख्यात समय व्यतीत होय है यातैं कालको सूक्ष्म उपदेश है तैसैं ही अगम्याका अवबोधको काल अन्य है अर निवृत्तिको काल अन्य है ॥२३॥ वार्तिक—अर्थ भेदाच्च ॥२४॥ अर्थ--किंच पुनः अर्थ भेदतैं दोउनिमैं भेद है, प्रश्न, कहा कारण ? टीकार्थ—अथवा ज्ञानको तो तत्वावबोध अर्थ है. अर चारित्रको कर्म ग्रहणका कारण रूप क्रिया विशेषको त्याग अर्थ है या प्रकार अर्थ भेद है तातैं नानां पणौं है ॥ २४ ॥ वार्तिक—कालभेदाभावो नार्थाभेदहेतुर्गतिजात्यादिवत् ॥ २५ ॥ अर्थ—काल भेदको अभाव अर्थकै आदिकी हेतु नहीं है सो गति जाति आदिकै समान है। टीकार्थ—काल भेदको अभाव जो है सो अर्थका अभेदको कारण नहीं है यो न्याय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, गति जाति आदिकै समान है सो जैसैं जा समय देवदत्तको जन्म है ताही समय मनुष्यगति पंचेन्द्रिय जाति शरीर वर्ण गंधादिकनिको भी जन्म है। अर देवदत्तका जन्मको काल अन्य नहीं है। अर मनुष्य गत्यादि पर्यायको भी जन्म काल अन्य नहीं है अर एकका काल पणांतैं मनुष्य गत्यादिकनिकै एक पणौं नहीं है अर जाकै काल भेदको अभाव एक पणांको हेतु इष्ट है ताकै मनुष्यगत्यादि पर्य्यायनिकै एक एक पणांको प्रसंग आवै, अर उनकै एक पणौं इष्ट नहीं है यातैं काल भेदका अभावतैं ज्ञान चारित्रकै एक पणौं नहीं है ॥२५॥ वार्तिक—

उक्तं च ॥ २६ ॥ अर्थ—पूर्वैं कह्यौ ही है। टीकार्थ—पूर्वैं कह्यौ है। प्रश्न, कहा कह्यौ है। उत्तर, उभय नयका सद्भावतैं कथंचित् एक पणौं है कथंचित् नाना पणौं है ॥ २६ ॥ वार्तिक—लक्षण भेदानेकामेकमार्गत्वानुपपत्तिरिति चेन्न परस्परसंसर्गे सत्येकत्वं प्रदीपवत् ॥२७॥ अर्थ—प्रश्न, लक्षण भेदतैं तिनकै एक मार्ग पणांकी अनुपपत्ति है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि परस्पर संसर्गनैं होतां संतां एक पणौं दीपकके समान है। टीकार्थ—तिन सम्यग्दर्शनादिकनिकै एकमार्ग पणौं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि लक्षण भेद हैं यातैं भिन्न लक्षण वाननिकै एक पणौं नहीं योग्य होय है तातैं ए तीन मोक्षके मार्ग होय हैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, परस्पर मिलापनैं होतां संतां एक पणौं है। प्रश्न, कैसै है ? उत्तर, प्रदीपकके समान है कि जैसैं परस्पर विलक्षण भावी तेल अग्निरूप पदार्थनिकै बाह्य अभ्यन्तर परिणामका कारणनिकरि ग्रहण किया संयोग रूप पर्य्याय जे हैं तिनका उदयनैं होतां संतां एक दीपक है। परंतु तीन दीपक नही हैं। तसैं ही परस्पर विलक्षण सम्यग्दर्शनादिक तीन जे हैं तीनका उदयनैं होतां संतां एक मोक्ष मार्ग है परंतु तीन मार्ग नहीं है ॥ २७ ॥ किञ्च, वार्तिक—सर्वेपामविसंवादात् ॥ २८ ॥ अर्थ—सर्व मत वारेनिकै अविसंवाद है यातैं भावार्थ-विलक्षण जे हैं तिनकै एक पणांकी प्राप्ति आदिके विषैं प्रतिवादी विसंवाद नहीं करै है तिनमैं कितनेक कहै हैं कि प्राशाद लाघव शोष ताप आवरण सादनां आदि भिन्न २ लक्षणवान् सत्व रसस् तम जे हैं तिनको एकत्व होत संतैं प्रधान एक है परन्तु तिनका तीन पणांतैं प्रधानकै तीन पणां नहीं है। भावार्थ—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुणकी एकता रूप प्रधान ऐक है, अर प्रसन्नता रूप तथा लाघव रूप तौ सतोगुण है, अर शोषरूप तथा ताप रूप रजोगुण है, आवरण रूप तथा विराधनारूप तमोगुण है, तथापि तीननिकी एकता रूप एक प्रधान है तीन प्रधान नहीं है। वहुरि और कहै है कि काकवड़तादिक च्यार भूत जे हैं तिनकै भौतिक

वर्णादिक च्यार विलक्षण जे हैं तिनको समुदाय रूप ऐक रूप परमाणु है परन्तु भूतनिकै भेदतैं परमाणुके अनेक पणौं नहीं है, तथा प्रमाण प्रमेयका अधिगमरूप विलक्षण रागादिक धर्म्म जे हैं तिनका समुदाय रूप एक विज्ञान है, परन्तु रागादिकनिका भेदतैं विज्ञानमैं भेद नहीं है बहुरि और कहे है नाना रङ्गयुक्त तन्तु जे हैं तिनका समुदायरूप चित्रपट ऐक है परन्तु तन्तु भेदतैं पटकै भेद नहीं है तैसैं ही इहां भी भिन्न लक्षणवान सम्यग्दर्शनादिकनिका समुदाय रूप ऐक मोक्षमार्ग है। यामैं कहा विरोध है ॥ २८ ॥ वार्तिक—एषां पूर्वस्य लाभे भजनीयमुत्तरम्। ॥ २९ ॥ अर्थ—इन तीननिकैं पूर्वका लाभनैं होतां संता उत्तर, भजनीय है। टीकार्थ—तिन ? सम्यग्दर्शनादिकनिमैं पूर्वका लाभ होतां संतां उत्तर के भजनीय जानने योग्य है। भावार्थ-सम्यग्दर्शनके हुये पीछें ज्ञान चारित्र वा जन्ममैं होय तथा नहीं होय ॥ २६ ॥ वार्तिक—उत्तर, लाभे तु नियतः पूर्व लाभः ॥३०॥ अर्थ—उत्तरका लाभ नैं होतां संतां पूर्वको लाभ नियम रूप है। टीकार्थ—बहुरि उत्तरका लाभ नैं होतां संता नियम तैं पूर्वको लाभ देखने योग्य है। इहां सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रनिका पाठ प्रति पूर्व पणौं उत्तर पणौं है सो ऐसैं हैं कि पूर्व सम्यग्दर्शन जो है ताका लाभा नैं होतां संतां उत्तर ज्ञान जो है सो भजनीय है कि वा भवमैं होय अथवा नहीं होय अर दर्शनतैं उत्तर ज्ञान है ताका लाभ नैं होतां संतां नियम तैं पूर्व सम्यग्दर्शन जो है ताको लाभ होय है। तथा चारित्रतैं पूर्वज्ञान जो है ताका लाभ नैं होतां संता उत्तर चारित्र जो है ताको लाभ भजनीय है कि होय अथवा नहीं होय अर ज्ञानतैं उत्तर चारित्र जो है ताका लाभनैं होतां संतां नियमतैं पूर्व सम्यग्दर्शन ज्ञान जे हैं तिनको लाभ होय है ॥ ३० ॥ वार्तिक—तदनुपपत्तिरज्ञानपूर्वकश्रद्धानप्रसंगात् ॥ ३१ ॥ अर्थ—ताकी अनुपपत्ति है क्योंकि अज्ञान पूर्वक श्रद्धानको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ--पूर्वका लाभनैं होतां संतां उत्तर भजनीय है। या वचनकी अनु-

पपत्ति है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अज्ञान पूर्वक श्रद्धानको प्रसंग आवै है यातैं जो पूर्व सम्यग्दर्शन का लाभमैं उत्तर ज्ञानको लाभ भजनीय है तो ज्ञानका अभावतैं अज्ञान पूर्वक श्रद्धानको प्रसंग आवै है ॥ ३१ ॥ किंच, वार्तिक--अनुपलब्धस्वतत्त्वेऽर्थे श्रद्धानानुपपत्तिरविज्ञातफलरसोपयोगवत् ॥ ३२ ॥ अर्थ—नहीं प्राप्त भया निज तत्व रूप अर्थकै विषैं श्रद्धानकी अनुपपत्ति । स अज्ञात फलका रसका उपयोग कै समान है । टीकार्थ--जैसैं अज्ञात फलकै विषैं वाका रसको ज्ञान नहीं होय है कि या फलको यो रस उत्पन्न होय गो ऐसो श्रद्धान नहीं होय है तैसैं ही अज्ञात निज तत्व रूप जीवादिक ज हैं तिनकै विषैं श्रद्धान नहीं होय है यातैं। श्रद्धानको अभाव होय है ॥३२॥ किञ्च, वार्तिक—आत्मस्वरूपाभावप्रसङ्गात् ॥३३॥ अर्थ—आत्मस्वरूपका अभावको प्रसङ्ग होय है यातैं, टीकार्थ—जो सम्यग्दर्शनका लाभनैं होतां संता ज्ञान भजनीयपणांतैं असत् है, क्योंकि विरोध है यातैं सो ऐसैं है कि मिथ्याज्ञानकी निवृत्तिनैं होतां संतां भजनीय जो सम्यग्ज्ञान ताको अभावतैं आत्माकै ज्ञानोपयोगको अभाव प्राप्त होय है तातैं लक्षणका अभावतैं लक्ष्य जो आत्मा ताको भी अभाव होय है अर आत्माका अभावतैं मोक्ष मार्गकी परीक्षा व्यर्थ है ॥३३॥ वार्तिक—न वा यावति ज्ञानमित्येतत्परिसमाप्यते तावतोऽसंभवान्नयापेक्षं वचनम् ॥ ३४ ॥ अर्थ—अथवा यो दोष नहीं है क्योंकि यावत् ज्ञान परिपूर्ण नहीं होय तावत् ज्ञान पणांको असम्भव है यातैं यो नया पेक्ष वचन है। टीकार्थ—इहां आचार्य्य कहै है कि यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, यावत् काल ज्ञान परिपूर्ण होय तावत् काल ज्ञानको असम्भव है ऐसो नयापेक्ष यो वचन है कि उत्तरके भजनीय है। प्रश्न, वो ज्ञान कहां परिपूर्ण होय है ? उत्तर, श्रुत केवलीकेविषैं परिपूर्ण होय है क्योंकि श्रुत केवली ग्राह्य शब्द नय है सो श्रुत केवलीनैं अर केवलीनैं ही प्राप्त होय है और न नहीं इच्छा करै है क्योकि और ज्ञानकै अपरिपूर्ण पणौं है यातैं वाकी अपेक्षा सहित

संपूर्ण द्वादशांग चतुर्दश पूर्व लक्षण श्रुत केवल अर केवलज्ञान जो है सो भजनीय कह्यो है तैसैं पूर्व सम्यग्दर्शनको लाभनैं होतां संतां देश चारित्र संयतासंयतको अर सर्व चारित्र प्रमत्त गुणस्थान तैं आरम्भ करि सूक्ष्म सांपरायका अन्त पर्यन्तनिको जो जितनो कहै सो नियमतैं है परन्तु संपूर्ण यथाख्यात चारित्र भजनीय कह्यो है ॥३४॥ वार्तिक—पूर्वसम्यग्दर्शनज्ञानलाभे भजनीयमुत्तरमिति चेन्न निर्देशस्यागमकत्वात् ॥३५॥ अर्थ—प्रश्न, पूर्वं सम्यग्दर्शन ज्ञानका लाभनैं होतां संतां उत्तर चारित्र जो है सो भजनीय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि निर्देश के अगमक पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, अज्ञान पूर्वक श्रद्धानको प्रसङ्ग नहीं आवै है क्योंकि पूर्व जे सम्यग्दर्शन ज्ञान तिनका लाभनैं होतां संता उत्तर जो चारित्र सो भजनीय है ऐसा अर्थका संबंधतैं ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वार्तिक मैं कह्यो जो निर्देश ताकै तिहारा कह्या अर्थको गमक पणौं नहीं है यातैं सो ऐसैं हैं कि यो तिहारो कह्यो अर्थ युक्त है परन्तु अर्थ अर्थको पूर्वस्य लाभ ऐसो यो निर्देश गमक नहीं है क्योंकि यो तिहारो अर्थ वार्तिकछमैं संवन्ध योग्य हो तौ तो पूर्वयो ऐसैं द्विवचन रूप निर्देश कहने योग्य हो तो। प्रश्न, पूर्व शब्दका सामान्य निर्देशतैं उभय गति कल्पना करिये है अर्थात् पूर्व शब्द सामान्य वाची है यातैं सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान दोउ जेहैं तिनकी गति है। उत्तर, ऐसैं करनेकूं समर्थ नहीं हूजिये है। क्योंकि व्यवस्था विशेषको विवक्षित पणौं है यातैं। अर्थात् सूत्र मैं तीनूं शब्द भिन्न भिन्न प्रतिपादित हैं यातैं दोय शब्दनिकूं पूर्व शब्द करि ग्रहण करना विवक्षित नहीं है, यातैं अर जो दोय शब्द ही विवक्षित होय तो उत्तर शब्दमैं भी तैसैं ही दोय शब्द विवक्षित होत संतैं तिन पूर्वोक्त दोषनिको उल्लंघन नहीं होय है। तातैं पूर्वोक्त ही अर्थ है। क्योंकि नयापेक्ष वचन है यातैं अथवा क्षायिक सम्यग्दर्शनका लाभनैं होतां संतां क्षायिक सम्यग्ज्ञान भजनीय है। अथवा एकै काल दोउनिका लाभनैं होतां संतां साहचर्यतैं दोउनिकै ही

पूर्वपणौं है। जैसैं साहचर्य्यतैं पवर्त नारदकै विषैं है कि पर्वतको ग्रहण करि नारदको ग्रहण होय है। अर नारदका ग्रहण करि पर्वतका ग्रहण होय है तैसैं ही सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानकै मध्य एकका आत्म लाभनैं होतां संतां उत्तर चारित्र जो है सो भजनीय है।

इति श्रीमद्भगवदकलङ्कदेव प्रणीत तत्वार्थवार्त्तिके व्यास्यानालङ्कारे प्रथमेऽध्याय तदपर नाम राजवार्त्तिकसागरोद्धृत तत्वकौस्तुभे द्वितीयमान्हिक परिसमाप्तम् ॥२ ॥

यामैं मूल ग्रन्थ संख्या श्लोक दोयसै चौतीस है। मध्यमें वार्तिक पैतीस हैं, तिन मैं तौआठ ज्ञानतैं ही मोक्षको स्थापन वादी कियो है अर एकमें बणिक पुत्रको दृष्टांत कह्यो है अर ग्यारामैं रत्न त्रयकै मोक्षमार्ग पणौं स्थापन कियो है अर सातमैं ज्ञान दर्शनकै युगपत्प्रत्प्रवृत्तितैं एक पणांको स्थापन वादीनैं कियो ताको निषेध कियो है अर सातमैं रत्नत्रयमें उत्तरोत्तर भजनीय पणांको स्थापन कियो है ऐसैं द्वितीय आन्हिकमैं वार्तिक है। तिनकी देश भाषामयी वचनिकारूप अर्थ पण्डित फतै लालजीकी सम्मतितैं श्रीमज्जिन वचन प्रकाशक [श्रावक संघी पन्नालाल ज्ञानावर्ण कर्मका क्षयनिमित निज वुद्धि प्रमाण लिख्यो है तामैं ग्रन्थ संख्या प्रमाण श्लोक ४७५ है।

अथ तृतीयमाह्निकं लिख्यते।

यामैं प्रथम ही सूत्र है ताकी उत्थानिका लिखिये है कि सम्यग्दर्शनादिकनिकै मोक्ष कारण सामान्यपणां होत संतैं सामान्य कह्या जो सम्यग्दर्शनादिक तिनकै विशेष ज्ञानकी प्राप्तिके अर्थ यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

तत्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥

अर्थ—तत्वार्थनिको श्रद्धानं जो है सो सम्यग्दर्शन है। प्रश्न, या सूत्रमें जो सम्यग्दर्शन

है सो कहा कहै है ? उत्तररूप वार्तिक—सम्य-गिति प्रशंसार्थो क्विन्तो क्योंतो वा ॥ १ ॥ अर्थ—सम्यक् ऐसो पद प्रशंसा अर्थ में निपातरूप है अथवा क्विन् प्रत्यय वान है। टीकार्थ—सम्यग् यो शब्द निपातरूप प्रशंसा अर्थ वाची जानवे योग्य है तातैं उदयमैं आये ऐसैं सराहनैं योग्य रूप गति, जाति, कुल, आयु, विज्ञान आदि सर्व जे हैं तिनको अर मोक्षको प्रधान कारण पणांतैं प्रशंसा योग्य जो दर्शन सो सम्यग्दर्शन है। प्रश्न, सम्यक् शब्द इष्ट अर्थमैं तथा तत्व अर्थमैं प्रवर्तै है या वचनतैं प्रशंसा अर्थको अभाव है। उत्तर, सो नहीं है। क्योंकि निपातनिकै अनेकार्थ पणौं है यातैं। अथवा सम्यक् यो शब्द तत्वार्थ रूप निपात है तातैं तत्व दर्शनं सम्यग्दर्शनं ऐसी निरुक्ति है। याको अर्थ ऐसो जाननो कि अविपरीत अर्थरूप जो विषय सो तत्व है ऐसैं कहिये है। अर्थात् यथावस्थित विषय जो है सो तत्व है उत्तर, तत्वरूप श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शन है। अथवा क्विनू प्रत्यय है अन्तविषैं जाकै ऐसौ यो शब्द है। ताकी निरुक्ति ऐसी है कि समञ्चतीति सम्यक् याको अथ ऐसो है कि जैसैं पदाथ तिष्ठै है तैसैं ही प्राप्त होय कि श्रद्धान रूप होय सो सम्यक्। प्रश्न, यो दर्शन शब्द कहा स्वरूप है। उत्तर रूप वार्तिक--कणादिसाधनो दर्शनशब्द उक्तः ॥२॥ अर्थ—करणादि साधन रूप दर्शन शब्द कह्यो है। टीकार्थ—दृशि धातुतैं करणादि साधनकै विषैं युट प्रत्यय होय है ऐसैं दर्शन शब्दको पूर्वै व्याख्यान कियो है ॥ २ ॥ वार्तिक-दृशेरालोकार्थत्वादभिप्रेतार्थासंप्रत्यय इति चेन्नानेकार्थत्वात् ॥३॥ अर्थ-दृशि धातुकै आलोकार्थ पणांतैं अभिप्रायरूप अर्थ अप्रतीति है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि धातुकै अनेकार्थ पणौं है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, यो दृशि धातु आलोक अर्थ में प्रवर्तै है। अर आलोक नाम इन्द्रिय अनिंद्रिय पदार्थकी प्राप्ति रूपको है। अर यो इन्द्रिय अनिंद्रिय पदार्थकी प्राप्तिरूप अर्थ इहां तिहारे अभिप्रेत नहीं है। अर श्रद्धान अर्थ तिहारै इष्ट है। अर श्रद्धान अर्थकी प्रतीति नहीं होय है। उत्तर,

सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अनेकार्थ पणां इहां श्रद्धान इष्ट है। ऐसैं संबन्ध करिये है। प्रश्न, इहां आलोक अर्थ तो नहीं इष्ट अर श्रद्धान अर्थ इष्ट है ऐसैं कैसैं जानिये है। या उपरांति उत्तर कहै है। वार्त्तिक—मोक्षकारणप्रकरणाच्छ्रद्धानगतिः ॥ ४ ॥ अर्थ—मोक्ष कारणका प्रकरणतैं श्रद्धान अर्थकी गति है। टीकार्थ—मोक्ष कारणको प्रकरण है अर तत्वार्थ विषय श्रद्धान मोक्षको कारण है। अर आलोक मोक्षको कारण नहीं है। या प्रकरणतैं श्रद्धान अर्थकी गति है। प्रश्न, तत्वं या शब्द करि कहा कहिये है ? उत्तर रूप वार्तिक---प्रकृत्यपेक्षत्वात् प्रत्ययस्य-भावसामान्यसंप्रत्ययस्तत्वबचनात् ॥५॥ अर्थ—प्रत्ययकी अपेक्षा पणांतैं प्रत्ययकै भाव सामान्य ही भलै प्रकार प्रतीति है। क्योंकि तत्व वचन है यातै टीकार्थ—तथा प्रकृति सामान्यको कहन वारी है, क्योंकि तत् शब्दकै सर्वनाम पणौं है यातैं अर त्व प्रत्यय जो है सो भावकै विषै उत्पन्न होय है। प्रश्न, कौनका भावकै विषैं त्व प्रत्यय उत्पन्न होय है ? तत् या शब्द करि जो अर्थ कहिये है। प्रश्न, यो कौन अर्थ है ? उत्तर, सर्व अर्थ है यातैं ताकी अपेक्षा पणातैं भाव कुभाव सामान्य कहिये है। अर तत्व शब्द करि यो अर्थ जैसैं अवस्थित है तैसो ताका होनो जो है सो है ॥ ५ ॥ वार्तिक—तत्वेनार्यत इति तत्वार्थः ॥ ६ ॥ अर्थ—तत्व करि जानिये सो तत्वार्थ है। टीकार्थ—अर्यते, गम्यते, ज्ञायते इकका जानन अर्थ है। अर तत्व करि जो अर्थ है सो तत्वार्थ है। जो भाव करि जो अर्थ व्यवस्थित है ता भावकरि ता अर्थको ग्रहण जाकी निकटतातैं होय सो सम्यग्दर्शन है ॥ ६ ॥ वार्तिक—श्रद्धानशब्दस्य करणादिसाधनत्वं पूर्ववत् ॥७॥ अर्थ—श्रद्धान शब्दकै करणादि साधनपणौं पूर्ववत् है। टीकार्थ— जैसैं दर्शन शब्दकै करणादिसाधन पणौं व्याख्यान कियौ तैसैं ही श्रद्धान शब्दकै भी जानबो योग्य है ॥७॥ वार्तिक--सत्वात्मपरिणामः ॥८॥ अर्थ—वहुरि सो आत्म परिणाम है। टीकार्थ—श्रद्धान शब्दकै वाच्यकरणादि नामको भजने वारो अर्थ

जो है सो आत्मपरिणाम जानवे योग्य है॥८॥ वार्तिक--वक्ष्यमाणनिर्देशादिसूत्र विवरणा-पुद्गल-द्रव्यसंप्रत्यय इति चेन्नात्म परिणामेपि तदुपपत्तेः ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न, आगैं कहैंगे ऐसा निर्देश स्वामित्वादि सूत्रका विवरणतैं पुद्गल द्रव्यकी भलेप्रकार प्रतीत होय है। उत्तर, सो नहीं है। क्योंकि आत्म परिणामनैं होतां संतां ही मोक्ष मार्गकी उत्पत्ति है यातैं टीकार्थ आगै कहैंगे ऐसा निर्देशादि सूत्रका विवरणतै पुद्गल द्रव्यकी प्रतीति प्राप्त होय है। उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आत्म परिणामकै विषैं ही मोक्ष मार्गकी उत्पत्ति, है। प्रश्न, तत्वार्थ श्रद्धान कहा है ? उत्तर,आत्म परिणाम है। प्रश्न,कौनकै ? उत्तर, आत्माकै इत्यादिक जानना ॥९॥ वार्तिक--कर्मभिधायित्वेप्यदोष इति चेन्न मोक्षकारणत्वेन स्वपरिणामस्य विवक्षितत्वात् ॥१०॥अर्थ---प्रश्न, कर्म्मकै अभिधेय पणानैं होतां भी अदोष है, उत्तर, सो नहीं है क्योंकि मोक्षका कारण पणां करि आत्म परिणामकै ही विवक्षित पणौं है यातैं टीकार्थ—प्रश्न, सम्यक्त्व नाम कर्म पुद्गलका अभिधायी पणांनैं होतां संतां भी दोष नहीं है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, मोक्ष कारणपणा किरि नित परिणामकै विवक्षित पणौं है यातैं औपशमिक आदि सम्यग्दर्शननैं आत्म परिणाम पणातैं मोक्षका कारण पणां करिकहिये है। अर सम्यक्त्व नाम कर्म्म पर्य्याय जो है सो नहीं कहिये है। 'क्योंकि याकै पौगद्‌लिक पणानैं होतां संतां परपर्य्याय पणौं है यातैं ॥ १० ॥ वार्तिक—स्वपरनिमित्त-त्वादुत्पादस्येति चेन्नोपकरणमात्रत्वात् ॥ ११ ॥ अर्थ—प्रश्न, उत्पादकै स्व अर पर निमित्त पणांतैं अदोष है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि उपकरण मात्र पणौं है यातैं। टीकार्थ—स्व पर निमित्त उत्पाद देखिये है कि जैसैं घरको उत्पाद मृत्तिका निमित्त अर दंडादि निमित देखिये है तैसैं सम्यग्दर्शनको उत्पाद आत्म निमित्त अर सम्यक्त्व नाम पुद्गल निमित्त है। तातैं सम्यक् नाम

पुद्गल कर्म्मके भी मोक्ष कारण पणौं उत्पन्न होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, उपकरण मात्रपणांतैं। क्योंकि उपकरण मात्र जो है सो बाह्य साधन है ॥ ११ ॥ किञ्च, वार्त्तिक—आत्मपरिणामादेव तद्रसघातात् ॥ १२ ॥ अर्थ—आत्म परिमाणतैं ही दर्शन मोहका रसकौ घात होय है यातैं। टीकार्थ—यो यो दर्शन मोह नामा कर्म आत्म गुणको घाती है सो ही कोउ आत्म परिणामतैं ही क्षीण शक्तिमान जैसैं होय तैसैं सम्यक्त्व नामनैं प्राप्त होय है। यातैं सम्यक्त्व नामा कर्म पुद्गल जो है सो मोक्षको कारण नहीं है अर आत्म परिणामको प्रधान कारण आत्मा ही है सो ही अपनी शक्ति करि दर्शन पर्य्याय करि उत्पन्न होय है। या कारणतैं आत्म परिणामकै ही मोक्ष कारण पणौं युक्त है ॥ १२ ॥ किञ्च, वार्तिकअहेय-त्वात्स्वधर्मस्य॥१३॥ अर्थ—और सुनूं को निज धर्मकै अहेयपणौं है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि नहीं नाशनैं प्राप्त होय अर नहीं त्यागन कियो जाय सो अहेय कहिये है। अर यो सम्यक्त्व परिणाम आत्माको आभ्यंतरवर्ती गुण है यातैं आत्मकै सम्यक्त्व परिणाम अंतरगमैं होतां संतां नियम करि आत्मा सम्यग्दर्शन पर्य्याय करि प्रगट होय है। अर बाह्य कारण रूप सम्यक्त् नाम कर्म पुद्गल जो है सो त्याज्य है। क्योंकि तीं विना ही क्षायिक समक्त्व परिणामतैं मोक्ष होय है यातैं ॥ १३ ॥ किञ्च, वार्तिक—प्रधानत्वात् ॥ १४ ॥ अर्थ—अर सुनूं कि आत्म परिणाम रूप सम्यग्दर्शनके प्रधान पणौं है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि आभ्यन्तरवर्ती आत्माको सम्यग्दर्शन परिणाम जो है सो प्रधान है। अर सम्यग्दर्शननैं प्रधान होतां संतां बाह्य कारणकै उपग्राहक पणौं है यातैं बाह्य है सो अंतर गतको उपग्राहक है। क्योंकि पर जो है सो पदार्थके विषैं नहीं प्रवर्तै है यातैं ही अप्रधान है ॥ १४ ॥ किंच वार्तिक—प्रत्यासत्तेः ॥१५॥ अर्थ-सम्यग्दर्शन निकट वर्ती है यातैं। टीकार्थ—अर सुनूं कि निश्चय करि सम्यग्दर्शनरूप आत्म परिणाम जो है सो मोक्षका तादात्म्य

करि प्रगट होवातैं निकटवर्ती कारण है। अर सम्यक्त्व नाम कर्म जो है सो विप्रकृष्टांतर पणांतैं कि दूरवर्ती पणांतैं अर तादात्म्य करि अपरिणामवातैं कारण नहीं है। तातैं अहेयपणांतैं तथा प्रधान पणांतैं तथा निकट पणांतैं मोक्षको कारण आत्म परिणाम ही योग्य है। सम्यक्त्व नाम कर्म योग्य नहीं है ॥ १५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—अल्पबहुत्वकल्पनाविरोध इतिचेन्नोपशमाद्यपेक्षस्य सम्यग्दर्शनत्रयस्यैव तदुपपत्तेः ॥१६॥ अर्थ—प्रश्न, अल्प बहुत्वरूपकी कल्पना विरोध रूप है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि उपशम आदिकी है अपेक्षा जाकै ऐसा सम्यग्दर्शनकै ही अल्प बहुत्वकी कल्पना उत्पन्न होय है। टीकार्थ--प्रश्न, सम्यग्दर्शनकै आत्म परिणाम पणांनैं होतां संतां अल्प बहुत्व कल्पनामें विरोध आवैगो? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, उपशमादिककी है अपेक्षा जाकै ऐसा सम्यग्दर्शन त्रयकै ही अल्प बहुत्वपणांकी उत्पत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि सर्व में अल्प तो उपशम सम्यग्दृष्टी है। अर तिनतैं संसारी क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंख्यात गुणां है। अर क्षायिक सम्यग्दृष्टीतैं क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टी असंख्यात गुणां है अर क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टो सिद्ध अनन्त गुणा है। तातैं हम जे हैं ते सम्यग्दर्शन रूप आत्म परिणामनैं ही कल्याणकै सन्मुख निश्चय करै है ॥१६॥ प्रश्न रूप वार्तिक—तत्वाग्रहणमर्थश्रद्धानमित्यस्तु लघुत्वात् ॥ १७ ॥ अर्थ—प्रश्न, तत्व पदको अग्रहण होय अर्थ श्रद्धान ऐसो ही है क्योंकि लघुपणों होय है यातैं। टीकार्थ--कोऊ कहै है कि सूत्रमें तत्व शब्दको ग्रहण जो है सो अनर्थक है अर अर्थ श्रद्धानं इतनौ ही होनौं योग्य है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर लघुपणातैं ॥१७॥ उत्तर रूप वार्तिक—न सर्वार्थप्रसङ्गात् ॥१८॥ अर्थ--उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सर्व अर्थको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ—यो लघुपणों योग्य नहीं है प्रश्न काहेतै? उत्तर, सर्व अर्थका प्रसंगतैं क्योंकि तत्व ग्रहण विना मिथ्यावादी प्रणीत सर्व अर्थकै विषैं श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शन है ऐसा अर्थ-

की प्राप्ति होवै यातैं सूत्रमें तत्व शब्द कहनो योग्य है ॥१८॥ वार्तिक—संदेहाच्चार्थशब्दस्यानेकार्थत्वात् ॥ १६ ॥ अर्थ—तथा संदेह होय है क्योंकि अर्थ शब्दकै अनेकार्थ पणौं है यातैं। टीकार्थ-अर्थ शब्दकै अनेकार्थ पणांतैं अर्थमें संदेह होय है सो ऐसैं है कि कहूं तो अर्थ शब्द द्रव्य गुण कर्म जे हैं तिनके विषैं प्रवर्त्तै है। क्योंकि द्रव्य गुण कर्मसु यो वचन है यातैं अर कहूं प्रयोजनके विषैं प्रवर्तै है कि कहा अर्थ तुम्हारो आगमन भयो है कि कहा प्रयोजन है अर कहूं धनके विषैं प्रवर्तै है कि यो देवदत्त अर्थवान है कि धनवान है। अर कहूं अभिधेयमें प्रवर्तै है कि शब्दको अर अर्थको संबंध है। ऐसैं अभिधेयके विषैं प्रवर्त्तै है ऐसैं अर्थ शब्दकै अनेकार्थ अभिधायी पणांनैं होतां संतां संदेह होय है कि कोनसा अर्थको श्रद्धान सम्यग्दर्शन है यातैं तत्वार्थ शब्द ही योग्य हैं ॥१६॥ वार्तिक--सर्वानुग्रहाददोष इति चेन्नासदर्थविषयत्वात् ॥२०॥ अर्थ-प्रश्न-सर्व मत वारेनि परि अनुग्रहतैं अदोष है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा अर्थके असत् पदार्थ विषय पणौं है यातैं ॥ टीकार्थ—प्रश्न, यो सर्वार्थ प्रसंग जो है सो दोष नहीं है क्योंकि सर्वार्थ विषय श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शन है ऐसैं होतां सतां सर्वमतवारेनि परि अनुग्रह कियो होय है। अर तुम्हारे या समय मत्सरता कहा है जो यातैं दूषण कहो। सर्वलोक उदय करि युक्त हो। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? सत्यार्थ विषय पणांतैं दोष कहिये है अर निश्चय करि हमारे कछु मत्सर भाव नहीं हैं अर सत्यार्थ विषय श्रद्धान जो है सो संसार को कारण है। यातैं सवके अनुग्रहकै अर्थ ही अर्थ शब्दनैं तत्व शब्द करि विशेषरूप करिये है ॥ २० ॥ वार्तिक—अर्थग्रहणादेवतत्सिद्धिरितिचेन्न विपरीतग्रहणदर्शनात् ॥२१॥ अर्थ—प्रश्न, अर्थ पदके ग्रहणतैं ही इष्ट अर्थकी सिद्धि है। उत्तर, सो नहीं है टीकार्थ—अर्थ शब्दकी ऐसी निरुक्ति है कि अर्यते इति अर्थः, याको अर्थ ऐसो है कि

निश्चय करिये सो अर्थ या निरुक्तितैं मिथ्या वादी प्रणीत अर्थ जे हैं ते अर्थ तो अर्थ नहीं है क्योंकि उनके असत्यपणौं है यातैं परन्तु अर्थ शब्दका ग्रहणतैं ही तत्वकी प्रतीति होय है यातैं । तत्व शब्दका ग्रहण करि प्रयोजन नहीं है, उत्तर, सो नहीं है । प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, विपरीत अर्थका ग्रहणको दर्शन है यातैं सो ऐसैं है कि जैसैं पित्तका उदय करि व्याकुल है इन्द्रिय जाकी ऐसो पुरुष मधुर रसनें कटुक मानै हैं। तैसैं ही आत्मा मिथ्याकर्मका उदयरूप दोषतैं अस्तित्व, नास्तित्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, अन्यत्व, अनन्यत्व आदि एकांतरूप कर मिथ्या अंगीकार करै है यातैं तिनका निराकरणके अर्थि तत्व शब्दको ग्रहण है। प्रश्न, ऐसैं है तो अर्थ शब्दको ग्रहण कहा प्रयोजन निमित्त हैं क्योंकि तत्व जे हैं ते ही अर्थ हैं क्योंकि अर्थनिके तत्वनितैं समान अधिकरण पणांतैं तत्व वचन करि ही अर्थकी प्रतीति सिद्ध होय है। उत्तर, कहिये है ॥ २१ ॥ वार्तिक--अर्थग्रहणमव्यभिचारार्थम् ॥२२॥ अर्थ पदको ग्रहण अव्यभिचारके अर्थ है। टीकार्थ--अव्यभिचारके अर्थि अर्थ शब्द ग्रहण करिये है ॥२२॥ वार्तिक—तत्वमिति श्रद्धानमिति चेदेकांतनिश्चितेपि प्रसंगः॥२३॥ अर्थ—तत्व है ऐसो श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है। ऐसैं होतैं एकांत करि निश्चित तत्वके विषैं भी श्रद्धानको प्रसङ्ग आवै है। टीकार्थ--तत्व रूप जो श्रद्धान सो तत्व श्रद्धान है ऐसैं कहिये तो एकान्तकरि निश्चित जो तत्व ताके विषैं भी श्रद्धान प्राप्त होय अर एकांतवादी जे हैं ते निश्चयकरि आत्मा नहीं है इत्यादि तत्वनें श्रद्धान करै है यातैं ॥२३॥ वार्तिक-तत्वस्य श्रद्धानमिति चेत्भावमात्रप्रसंगः॥२४॥अर्थ-तत्वको श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है। ऐसैं है तो भाव मात्रका प्रसंग आवै है। टीकार्थ-तत्वको जो श्रद्धान सो तत्व श्रद्धान ऐसैं कहिये तो भाव मात्रको प्रसंग आवै। क्योंकि तत्व शब्द भाव सामान्यवाची है, इहां केई कहै हैं कि द्रव्यत्व गुणत्व कर्मत्व आदि सामान्य जो है सो द्रव्यादिकनितैं अर्थान्तर है तातैं वाको श्रद्धान सम्यग्दर्शनतैं प्राप्त होय। अर द्रव्यादिकनितैं अन्य

सामान्य युक्तिमान नहीं है यो पूर्वें परीक्षा कियौ है तातैं। अथवा तत्व नाम एक पर्णांको है। तातैं कहै हैं कि यो सर्व दृष्टिगोचर है सो पुरुष ही है। इत्यादि वचनको श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शननैं प्राप्त होय अर यो श्रद्धान युक्त नहीं है, क्योंकि क्रियाका अर कारकका भेदका लोपको प्रसंग आवै है यातैं ॥ २४ ॥ वार्तिक—तत्वेन श्रद्धानमितिचेत्कस्य कस्मिन्वेतिप्रश्नानिवृत्तिः ॥२५॥ अर्थ-तत्वकरि श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है ऐसै है तो कौनको अथवा कौनकेंविषैं ऐसा प्रश्नकी निवृत्ति नहीं होय हैं। टीकार्थ--जी तत्वकरि श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है ऐसैं कहिये तो कौन कौनके विषैं श्रद्धान ऐसो प्रश्न नहीं निमड़े हैं। तातैं अर्थ, शब्दको ग्रहण अव्यभिचारके अर्थि भलेप्रकार कह्यो है ॥२५॥ वार्तिक—इच्छाश्रद्धानमित्यपरे ॥२६॥ अर्थ-इच्छा करि जो श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है ऐसैं और वर्णन करै है। वार्तिक—तदयुक्तं मिथ्यादृष्टेरपि प्रसंगात् ॥२७॥ अर्थ—सो अयुक्त है। क्योंकि मिथ्यादृष्टिकैं भी सम्यग्दर्शनको प्रसंग आवै है। टीकार्थ—मिथ्यदृष्टी जे हैं ते बहु श्रुत पर्णांकी इच्छा करि तथा अर्हंत मतको जीतनेकी इच्छा करि अरहंत मतनैं पढ़ैं हैं। अर इच्छा विना पढ़ना नहीं होय है यातैं तिनकै भी सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होय है। या कारणतैं इच्छा करि श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शन है ऐसैं कह्या सो युक्त नहीं है ॥२७॥ वार्तिक—केवलिनि सम्यक्त्वाभाव प्रसंगाच्च ॥ २८ ॥ अर्थ—अथवा केवलीकै विषै सम्यग्दर्शनका अभावको प्रसंग आवै है टीकार्थ—जो इच्छा करि श्रद्धान है सो सम्यक्त्व है तो विचारनेकी वार्ता है कि इच्छा शब्द लोभ शब्दको पर्याय शब्द है। अर क्षीण मोह केवली जे हैं। तिनके विषैं लोभ नहीं है अर लोभका अभावतैं इच्छाको अभाव है यातैं सम्यक्त्वको अभाव होय तातैं जो औपशमकादि भावतैं आत्मा जैसै हैं तैसैं पदार्थनैं ग्रहण करै है सो सम्यग्दर्शन है। ऐसो श्रद्धान करने योग्य है ॥ २८ ॥ वार्तिक—तद्द्विविधं सरागवीतरागविकल्पात् ॥ २९ ॥ अर्थ--सराग वीतराग भेदतैं सो सम्यग्दर्शन

दोय प्रकार है। प्रश्न, काहेतैं उत्तर, सराग वीतराग विकल्पतैं ॥ २६ ॥ वार्तिक—प्रथमसंवेगानुकंपास्तिक्याभिव्यक्तलक्षणं प्रथमम् ॥३०॥ अर्थ—प्रशम संवेग अनुकम्पा आस्तिक्य आदिको अभिव्यक्त लक्षण जो है सो प्रथम सम्यक्त्व है। टीकार्थ—रागद्वेषादिकनिको नहीं उदय होनो जो है सो प्रशम है। अर संसारतैं भयवानता जो है सो संवेग है। अर सर्व प्रणीतके विषैं मित्रता भाव जो है सो अनुकंपा है। अर जीवादिक पदार्थ यथा योग्य अपने अपने भावनि करि अविस्थित है ऐसी बुद्धि जो है सो आस्तिक्य है। ये चार गुण जे है तिनकरि प्रगट लक्षण जो है सो प्रथम सराग सम्यक्त्व है ऐसैं कहिये है ॥ ३० ॥ वार्तिक—आत्मा विशुद्धमात्रमितरत् ॥ ३१ ॥ अर्थ—आत्माकी विशुद्धिमात्र दूसरो भेद है। टीकार्थ—चार तौ अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ अर मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व ऐसैं सप्त प्रकृति जे हैं तिनका अत्यंतपणौं नाशनैं होतां संतां आत्माकी विशुद्धि मात्र जो है सो दूसरो वीतराग सम्यक्त्व है। ऐसे कहिये हैं। तिनमें प्रथमको जो है सो तौ साधनरूप है। अर दूसरो साधनरूप भी है अर साध्यरूप भी है ॥ ३१ ॥ अबैं तीसरा सूत्रकी उत्थानिकारूप प्रश्न, कि जीवादि पदार्थ है विषय जाको ऐसो यौं सम्यग्दर्शन जो है सो कैसैं उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै हैं। सूत्रम्—

तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥

अर्थ—सो सम्यग्दर्शन निसर्गतैं तथा अधिगमतैं उत्पन्न होय है। टीकार्थ—प्रश्न, यो निसर्ग शब्द कहा वाची है? उत्तर, निपूर्वक सृज धातुतैं भाव साधन घञ् प्रत्यय होय है ताकी निरुक्ति ऐसी है कि निसर्जनं निसर्गः याको अर्थ स्वभाव है। प्रश्न, यो अधिगम शब्द कहा वाची है? उत्तर, अधि पूर्वक गम धातु तैं भाव साधन अच् प्रत्यय होय है। ताकी निरुक्ति ऐसी है कि अधि-

गमनं अधिगम याको अर्थ उपदेश है। अर इनि दोऊ शब्दनिको हेतु है पणां करि निर्देश है तातैं निसर्ग जो स्वभाव अर अधिगम जो उपदेश तातैं। प्रश्न, यहां कौनका अध्याहार करिये है। उत्तर, क्रियाको अध्याहार करिये है। प्रश्न, या क्रिया कौन सी है? उत्तर, उत्पद्यते या क्रियाको अध्याहार करिये है क्योंकि सूत्रनिकै सापस्कार पणां है कि अन्य शब्द करि उपकार सहित पणां है यातैं तातैं ऐसा अर्थ सिद्ध भया कि सो यो सम्यग्दर्शन निसर्गतैं तथा अधिगमतैं उत्पन्न होय है ॥३॥ इहां कोऊ कहै है। वार्तिक--सम्यग्दर्शन-द्वैविध्यकल्पनानुपपत्ति अनुपलब्धतत्वस्य श्रद्धानाभावात् रसायनवत् ॥ १ ॥ अर्थ—सम्यग्दर्शनके दोय विधि पणांकी कल्पनाकी अनुपपत्ति है क्योंकि अनुपलब्ध तत्व पुरुषके रसायनके समान श्रद्धानका अभाव है यातैं नैसर्गिक सम्यग्दर्शन नहीं है ॥ टीकार्थ—दोय प्रकार सम्यग्दर्शन है ऐसी कल्पना नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, नहीं प्राप्त भयो है तत्व जाकै ऐसा पुरुषके श्रद्धानका अभावतैं। प्रश्न, कैसें? उत्तर, रसायनके समान जैसें अत्यंत परोक्ष है रसायन रूप तत्वको फल जाके ताकै रसायनके विषै श्रद्धान नहीं देखिये है तैसें नहीं जान्या है जीवादि तत्व जानैं ऐसा पुरुषके जीवादितत्वके विषै श्रद्धान नहीं देखिये है यातैं नैसर्गिक सम्यग्दर्शनको अभाव है ॥ १ ॥ वार्तिक--शूद्रवद्भक्तिवदिति चेन्न वैषम्यात्॥२॥ अर्थ--बहुरि वादी आशंका उठाय कहै है कि शूद्रके वेदके विषै भक्तिके समान कहो तो सो नहीं है, क्योंकि दृष्टांतकै विषम पणां है यातैं। टीकार्थ-जैसें नहीं प्राप्त भयो है वेदार्थ जाके ऐसा शूद्रकै वेदार्थके विषै आत्यंतिक भक्ति है तैसें नहीं प्राप्त भयो है जीवादिक तत्व जाके ऐसा पुरुषके श्रद्धान है, ऐसें कहोगे सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, दृष्टान्तके विषम पणां है यातैं, क्योंकि शूद्रके भारतादिकका श्रवणतैं तथा वेदार्थके जाननेवारेका वचनकी अंगीकारादिक करि वेदार्थके विषै भक्ति युक्त हूजिये है सो या भक्ति नैसर्गिकी नहीं है अर इहां

तिहारे नैसर्गिकी रुचि इष्ट है। या प्रकार दृष्टान्तके विषमपणौं है अथवा सम्यक्त्वका अधिकारतैं जीवादिक पदार्थनिका तत्वकी उपलब्धि पूर्वक सम्यग्दर्शननैं मोक्षका कारण करि होवो योग्य है। अर शूद्रके ऐसो श्रद्धान नहीं है या प्रकार भी दृष्टान्त के विषम पणो हैं ॥२॥ वार्तिक--मणिग्रहणवदिति चेन्नप्रत्यक्षेणोपलब्धिसद्भावात् ॥३॥ अर्थ-प्रश्न, बहुरि वादो कहै है कि मणि ग्रहणकै समान कहो हो सो नहीं है क्योंकि मणिकै प्रत्यक्ष करि उपलब्धिको सद्भाव है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, जैसैं नहीं जाणयू है मणि विशेष जानै ऐसा पुरुषके भी मणि ग्रहण होय है ताकै फल देखिये है तैसैं नहीं जाणयू है जीवादिक तत्व जानैं ताकै भी तत्व ग्रहण होय हैं ताकै फल देखिये है या प्रकार वो नैसर्गिक सम्यग्दर्शन है। ऐसैं कहोगे सो भी नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा मणिकी प्रत्यक्षतैं प्राप्ति को सद्भाव है यातैं अत्यंत परोक्ष मणिनैं नहीं ग्रहण करे है तो कहा है? उत्तर, मणिनैं प्रत्यक्षतैं प्राप्त होय ग्रहण करै है, अर विपर्यय विशेषनैं नहीं ग्रहण करै है, अर्थात् मणितैं भिन्न पदार्थनैं नहीं ग्रहण करै है यातैं नहीं प्राप्त भयो है मणि विशेष जाकै ताकै प्रत्यक्ष दर्शनतैं ग्रहण होनो न्याय है। अर अत्यन्त परोक्ष जीवादिक तत्व जे हैं तिनके विषैं याकै निसर्गज सम्यग्दर्शनको सिद्धि कैसैं न्याय है। अर सामान्य अधिगमकै विषै तो अधिगम सम्यग्दर्शन ही है ॥ ३ ॥ वार्तिक—तापप्रकाशवद्युगपदुत्पत्तेरभ्युपगमाच्च ॥ ४ ॥ अर्थ—बहुरि वादी कहै है ताप और प्रकाशके समान एकै काल उत्पत्ति होय है यातैं निसर्गज सम्यग्दर्शनका अभावको अंगीकार है यातैं। टीकार्थ—ताप प्रकाशके समान एकैं काल उत्पत्तिका अंगीकारतैं। प्रश्न, कहा? उत्तर, निसर्गज सम्यग्दर्शनको अभाव है ऐसो अर्थ अनुवर्तैं है सो ऐसैं है कि याकै जा समय सम्यग्दर्शन उत्पन्न होय है वा ही समय प्राचीन मति अज्ञान श्रुत अज्ञान सम्यक्त्व रूप परणमै है यातैं अधिगमज ही सम्यग्दर्शन होय है अर जाकै ज्ञानतैं पूर्व दर्शन होय ताकै निसर्गज सम्यग्दर्शन

होय सो तुम जैनी जो हो तिनके अनिष्ट है ऐसैं कहिये है ऐसा प्रश्ननैं होतां संता जैनी कहै है ॥ ४ ॥ वार्तिक—उभयत्रतुल्येऽन्तरङ्गहेतौ वाह्योपदेशापेक्षानपेक्षभेदाद्भेदः ॥ ५ ॥ अर्थ—दोउ भेदिनिमें समान अंतरंग हेतुनैं होतां संतां वाह्य उपदेशकी अपेक्षा अनपेक्षाका भेदतैं भेद है। टीकार्थ—दोउ सम्यग्दर्शनके विषैं अन्तरग हेतु तुल्य है कि दर्शन मोहको उपशम क्षय क्षयोपशम है अर अन्तरङ्ग हेतुनें होतां संतां जो वाह्य उपदेश विना श्रद्धा उत्पन्न होय सो निसर्गज है अर जो पर का उपदेश पूर्वक जीवादिकनिको अधिगम है निमित्त जाकै सो अधिगमज है। या प्रकार इन दोउनिके विषैं यो भेद है ॥ ५ ॥ वार्तिक—अपरोपदेशपूर्वके निसर्गाभिप्रायो लोकवत् ॥ ६ ॥ अर्थ—परोपदेश रहित पूर्वक के विषैं निसर्ग शब्दको अभिप्राय लोकके समान प्रवर्तै है। टीकार्थ—लोकके विषैं हरि शार्दूल स्याल भुजंगादि जे हैं ते क्रूरपणा शूरपणां कायरपणां पवनाहारपणां आदिकी भले प्रकार प्रवृत्तिमें निसर्गतैं प्रवर्तै हैं ऐसे कहिये हैं तथापि या प्रवृत्ति अकस्मात् भई नहीं है क्योंकि याकै कर्म निमित्त पणौं है यातैं। अर नहीं अकस्मात्भई भी जो है सो निसर्गजा है क्योंकि परोपदेशको अभाव है यातैं तैसैं ही इहां भी परोपदेशका अभाव पूवक होतां संता निसर्गज शब्दको अभिप्राय है ॥६॥ इहां और कोऊ कहै है। वार्तिक—भव्यस्य कालेन निःश्रेयसोपपत्तेरधिगमसम्यक्त्वाभावः॥७॥ अर्थ—प्रश्न, भव्यके कालकरि मोक्षकी उपपत्ति है यातैं अधिगम सम्यक्त्वको अभाव है। टीकार्थ—भव्यके काल लब्धिकरि मोक्षकी उत्पत्ति है यातैं अधिगम सम्यक्त्वको अभाव है क्योंकि जो केवलीका ज्ञानमें धारण किया मोक्षका कालतैं पूर्व अधिगम सम्यक्त्वका वलतैं मोक्ष होय तो अधिगम सम्यग्दर्शनकै सफलता है सो यो सफलपणौं है नहीं यातैं जो कालकरि ही याकै मोक्ष है तो यो मोक्ष निसर्गज सम्यक्त्वतैं ही सिद्ध है ॥ ७ ॥ उत्तर रूप वार्तिक— विवक्षितापरिज्ञानात् ॥ ८ ॥ अर्थ—उत्तर सो नहीं है क्योंकि वक्ताका अभि-

प्रायको तिहारै अपरिज्ञान है यातैं। टीकार्थ—उत्तर, यो प्रश्न युक्त नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर सूत्रकारके कहनेका अपरिज्ञानतैं क्योंकि सम्यग्दर्शनादि त्रय जे हैं तिनतैं मोक्ष कह्यो है, तहां जो प्रथम है सो काहेतैं उत्पन्न होय है ऐसा प्रश्ननैं होतां संतां निसर्गतैं तथा अधिगमतैं उत्पन्न होय है यो अर्थ इहां कह्यो है। अर जो ज्ञान चारित्र रहित केवल निसर्गज तथा अधिगमज सम्यग्दर्शनतैं ही मोक्ष इष्ट होय तो भव्यके कालकरि मोक्षकी उत्पत्ति है यो कहनो युक्त होय सो यो अर्थ इहां नही विवक्षित है कि कहनेकी इच्छाका विषय रूप नहीं है अथवा जैसैं कुरुक्षेत्रमें कहूं २ कनक वाह्य पुरुषार्थ रूप प्रयत्नका अभावतैं ही उत्पन्न होय है तैसैं वाह्य पुरुषका उपदेश पूर्वक जीवादिकनिका जानन विना जो उत्पन्न होय है सो निसर्गज है अर जैसैं कनक पाषाण विधि पूर्वक उपायनैं जाननें वारा पुरुषका प्रयोगकी है अपेक्षा जाकै ऐसो कनक भावनैं प्राप्त होय है तैसैं जो सम्यग्दर्शन विधि पूर्वक उपायकूं जानने वारा मनुष्यका मिलापतैं जीवादिक पदार्थनिका तत्वनैं जाननेकी है अपेक्षा जाके ऐसो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होय सो अधिगमज सम्यग्दर्शन है, यो अर्थ विवक्षित है अर इनि दोऊ भेदनिमें एक भेदको अभाव नहीं है यातैं विवक्षितका अपरिज्ञानतैं अधिगमको अभाव है ऐसैं कह्यो हुतो सो सम्यग् नहीं है ॥८॥ वार्तिक—कालानियमाच्चनिर्जरायाः ॥९॥ अर्थ—अथवा निर्जराके कालको नियम नहीं है टीकार्थ—जीवनिके समस्त कर्मकी निर्जरापूर्वक मोक्ष जो है ताके कालको नियम नहीं है यातैं क्योंकि कितनेक भव्य तो संख्यात कालकरि सिद्ध होंहिंगे अर कितनेक भव्य असंख्यात काल करि सिद्ध होंहिगे अर कितनेक भव्य अनन्तकाल करि सिद्ध होंहिगे अर और अनन्तानन्त काल करि भी सिद्ध नहीं होंहिगे तातैं भव्यके कालकरि मोक्षकी उत्पत्ति है ऐसैं कह्यो हुतो सो युक्त नहीं हैं ॥ ९ ॥ वार्तिक—चोदनानुपपत्तेश्च ॥ १० ॥ अर्थ—ऐसी प्रेरणा नहीं उत्पन्न होय है यातैं। टीकार्थ— सर्व ही मतवारेनि कै या प्रेरणा नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि

ज्ञानतैं ही मोक्ष है तथा क्रियातैं ही मोक्ष है तथा ज्ञान क्रियातैं मोक्ष है तथा दर्शन ज्ञान क्रियातैं मोक्ष है ऐसे कहन वारे सर्व जे हैं तिनकै भव्यको काल करि मोक्ष है। यो कहनौं युक्त नहीं है अर जो सर्व मतवारेनिके मोक्षको हेतु काल इष्ट होय तो प्रत्यक्ष अनुमान रूप वाह्य अभ्यन्तर कारण जे हैं तिनका नियमकै विरोध प्राप्त होय ॥१०॥ वार्तिक-तादित्यनन्तरनिर्देशार्थम् ॥११॥ अर्थ-सूत्रमें तत् यो शब्द जो है सो पूर्वं निकटवर्ती सम्यग्दर्शनजो है ताके जनावनैं निमित्त करिये है। प्रश्न,यो प्रकरण तो तत् वचन विना ही सिद्ध है ॥११॥ उत्तर रूप वार्तिक—इतरथा हि मार्गसम्बन्धप्रसंगः ॥ १२ ॥ अर्थ---तत् शब्द विना निश्चय करि मार्ग शब्दतैं सम्बन्ध को प्रसंग आवे। टीकार्थ—तत् वचन नहीं करतां संता मोक्ष मार्गको प्रकरण है ताकरि संबन्ध होय है अर मार्गतैं संबन्ध होवातैं निसर्ग मात्र करि मोक्षमार्ग को लाभ कह्यो होय अथवा बहु श्रुतपणांकी विख्याततत्रकी इच्छा करि मोक्ष मार्गका जानन मात्रतैं ही मिथ्यादृष्टिनिके भी मोक्ष इष्ट होय। प्रश्न, निकटवर्ती जे हैं तिनको ही विधि अथवा निषेध होय है, या वचनतैं निकटवर्ती सम्यग्दर्शन करि ही संबंध होनौं न्याय है। उत्तर, निकटवर्तीतैं प्रधान जो है सो बलवान है या वचनतैं मार्ग करि संबंधनै प्राप्त होय तातैं तत् वचन विशेष पणौं स्पष्ट करने निमित्त करिये है ॥ १२ ॥

इति श्रीमद्भगवदकलङ्कदेव प्रणीते तत्वार्थवार्तिके व्याख्यानालङ्कारे प्रथमेऽध्याय तदपरनाम राजवार्तिकसागरादेधृत तत्वकौस्तुभे तृतीयमान्हिकं परिसमाप्तम् ॥ ३ ॥

यामैंमूल ग्रन्थ संख्या १३७ मध्यमें सूत्र दोय, वार्तिक तियालीस हैं तिनमें भी दूसरा सूत्रका व्याख्यान रूप तो इकतीस हैं तिनके विषैं आठ तो तत्वार्थादि शब्दनिका व्युत्पत्ति साधन रूप हैं अर सात सम्यक्त्व शब्दके आत्म परिणामपणांका साधनमें तथा सम्यक्त्व कर्मका निषेधमें हैं

अर एक आत्मपरिणामके अल्प बहुत्व पणांमें शङ्का समाधान रूप है अर नव तत्वशब्दका तथा अर्थ शब्दका सार्थक पणांका कथन रूप है अर तीन इच्छा श्रद्धानका निषेध रूप है अर तीन सराग वीतराग सम्यग्दर्शन का स्वरूप कथन में है अर तीसरा सूत्रका व्याख्यान रूप द्वादश है तिनके विषैं दश तो सम्यग्दर्शन निसर्गज तथा अधिगमज भेदका शङ्का समाधानमें है अर दोय तत् शब्दका स्थापनमें है ऐसैं तृतीय आह्निकमें वार्तिक तियालीस तिनकी देशभाषामयी वचनिका रूप अथ पण्डित फतेलालजीकी सम्मतितैं श्रीमज्जिन वचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवाल ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है। तामैं ग्रन्थ प्रमाण श्लोक तीनसैं इकवीस हैं।

अथ चतुर्थाह्निकं लिख्यते।

ताकी आदिमें चतुर्थ सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि तत्वार्थ श्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है ऐसैं कह्यौ तातैं प्रश्न करै है कि तत्व कहा है यातैं यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

जीवाजीवाश्रवबंधसंवरनिर्ज्जरामोक्षास्तत्वम् ॥ ४॥

अर्थ—जीव, अजीव, आश्रव, बंध, संबर, निर्जरा, मोक्ष ये सात तत्व है ॥ ४ ॥ प्रश्न, इनि सात नामनिको सूत्रमें अंगीकार काहेतैं कियो? द्रव्यं तत्वं ऐसै ही कहनौं योग्य है। क्योंकि द्रव्यके ही भेद सर्व पदार्थ हैं यातैं उत्तर कहै है। वार्तिक—एकाद्यनंतविकल्पोपपत्तौ विनेयाशयवशान्मध्यमाभिधानम् ॥१॥ अर्थ—एक आदि अनंत विकल्पकी उत्पत्तिनैं होतां संतां विनयवान शिष्यका आशयका वशतैं मध्यम क्रमकरि कथन है। टीकार्थ-एक, दोय, तीन, संख्यात, असंख्यात, अनंत ऐसैं पदार्थ भेदनैं प्राप्त होय है, तहां पदार्थ एक है क्योंकि एकं द्रव्यमनंत-

पर्यायमिति वचनात् कहिये एक द्रव्य है, अर अनंत पर्याय है यो वचन है यातैं अथवा दोय पदार्थ हैं क्योंकि जीव अजीवको भेद है यातैं। ऐसैं और भी वचन विकल्पकी अपेक्षा करि तथा ज्ञानज्ञेय विकल्पकी अपेक्षा करि असंख्यात अनंत विकल्प है। तिनमें शिष्यका आशयका वशतैं पदार्थका निरूपणमें भेद है। यातैं मध्यम क्रमकरि कथन कियौ है। क्योंकि अति संक्षेपरूप कथन करतां संतां सुन्दर वुद्धिवाननिकै ही ज्ञान होय अर अति प्रपंचरूप कथन करि अत्यन्त काल करि भी ज्ञान नहीं होय। इहां कोऊ कहै है कि प्रश्नरूप वार्तिक--जीवाजीवयोरन्यतरत्रैवांतर्भावादाश्रवादीनामनुपदेशः ॥ २ ॥ अर्थ—जीव अर अजीव जे हैं तिनकै विषै कोऊ एकमैं ही अन्तर भाव होवातैं आश्रवादिकनिको उपदेश करने योग्य नही है। टीकार्थ—निश्चय करि आश्रव जीव है कि अजीव है? जो जीव है तौ जीवके विषै अन्तर भाव है। अर जो अजीव है तौ अजीवके विषैं अन्तरभाव है। ऐसैं ही संवरादिक भी जाननां तातैं इनको अनुपदेश है कि अनर्थक उपदेश है ॥ २ ॥ उत्तररूप वार्तिक—न वा परस्परोपश्लेषे संसारप्रवृत्तितदुपरमप्रधानकारणप्रतिपादनार्थत्वात् ॥ ३ ॥ अर्थ—सो नहीं है क्योंकि दोउनिका परस्पर उपश्लेषनै होतां संतां तौ संसारकी प्रवृत्ति अर वा संसार कौ उपरम जो विश्राम अर्थात् अभाव ये ही भये जे मुख्य पदार्थ तिनका प्रधान कारण जनावनरूप प्रयोजन पणौं है यातैं। टीकार्थ—उत्तर, अनर्थक उपदेश नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, जीव अर अजीव जे हैं तिनकौ परस्पर उपश्लेष कहिये मिलाप जो है तानैं होतां संतां तो संसारकी प्रवृत्ति अर संसारतैं भिन्न होनौं जो मोक्ष तिन दोउनिकै प्रधान कारणनिका प्रतिपादनार्थ पणांतै। अर इहां मोक्ष मार्गको प्रकरण है ताकौ फल अवश्य मोक्ष दिखावनें योग्य है सो मोक्ष कौनको होय या हेतुतैं जीवको ग्रहण है। अर सो मोक्ष संसार पूर्वक है। अर सो संसार जीवकै अजीवनैं होतां संतां

होय है। या हेतुतैं अजीवको ग्रहण है। अर तिन दोउनिको परस्पर उपश्लेष जो है संसार है अर वा संसारके प्रधान कारण आश्रव अर बंध है। या हेतुतैं आश्रव बन्धको ग्रहण है। अर संसारका अभावरूप मोक्षका प्रधान हेतु संवर निर्जरा है। या हेतुतैं संवर निर्जराको ग्रहण है। अर संसारका कारण तथा मोक्षका कारण जे हैं तिनका परिपूर्ण ज्ञाननैं होतां संतां प्राप्त होनें योग्य मोक्ष जो है ताको परिपूर्ण ज्ञान होय है अर और सुनूं कि सामान्यमैं अन्तर्भूत विशेष जो है ताको भी पृथक् ग्रहण प्रयोजनके निमित्त होय है जैसैं कहै है कि सर्व क्षत्रिय आगया अर सूरवर्मा भी आ गयौ। इहां सूरवर्मा क्षत्रियनिमें अंतरभूत है। तथापि प्रयोजनका वशतैं भिन्न नाम कह्यो है तैसैं ही जीव अजीवमें आश्रवादिक अंतर्भूत है तथापि संसार मोक्षका कारणभूत जानि भिन्न ग्रहण किया है ॥३॥ किंच, वार्तिक—उभयथापिचोदनानुपपत्तिः ॥ ४ ॥ अर्थ—भिन्न अभिन्न दोऊ ही पक्षनैं ग्रहण करतां संतां ही प्रेरणाकी अनुपपत्ति है। टीकार्थ—जो वादी जीव अजीवकेविषैं आश्रवादिकनिकों अंतर्भाव वतावै है ताकै दोऊ रीतितैं ही कहनौ नहीं उपजै है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, आश्रवादिक जे हैं ते जीव अजीवनितैं पृथक् ग्रहणकरि कहै है कि पृथक् नहीं ग्रहण करके है जो पृथक् ग्रहणकरि कहै है तो पृथक् ग्रहण करवातैं ही उनकै अर्थान्तरपणौं सिद्ध है अर जो पृथक् नहीं ग्रहणकरि कहै है तो पृथक् नहीं ग्रहण करवातैं ही प्रश्न करनेको अभाव है कि कहनौं नहीं वनै है क्योंकि जो पृथक् ग्रहण नहीं होय ताका अंतरभूत करनेकी प्रेरणा ही नहीं उत्पन्न होय है अर और सुनौं कि जीव अजीवतैं पृथक् सिद्ध जे आश्रवादिक तिननैं कहै है कि पृथक् असिद्धनैं कहै है। सिद्धनैं कहै है तो वा सिद्धपणांतैं ही अर्थान्तर भाव है। अथवा असिद्धनैं कहै है तो अन्तरभाव कैसैं कहै है क्योंकि असिद्ध जे खर विषाणादिक तिनिको अन्तरभाव कहनें योग्य नहीं होय है ॥ ५ ॥ वार्तिक—अनेकांताच्च ॥५॥

अथवा यो जीव शब्द रूढि शब्द है, अर रूढि शब्दमें क्रिया जो है सो शब्द सिद्ध करने निमित्त ही है। अक्षरार्थ रूप नहीं है यातैं कोऊ काल संबंधी जीवनि नैं अपेक्षा करि कालमें जीवनवर्तै है। ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं कोउ कालमें गमन करने की अपेक्षा करि सर्व कालमें गमन प्रवर्तै हैं कि गौ शब्द प्रवर्तै है ॥७॥ वार्तिक—तद्विपर्ययोऽजीवः ॥ ८ ॥ अर्थ—जीवका लक्षणतैं विपरीत लक्षणवान् अजीव है। टीकार्थ—जाको जीवन लक्षण कह्यो सो यो नहीं है। तातैं जीवतैं विपर्यय है यातैं अजीव है। ऐसै कहिये है ॥८॥ वार्तिक--आश्रवत्यनेनाश्रवणमात्रं वाश्रवः ॥९॥ अर्थ--जाकरि कर्म आश्रवै अथवा कर्मनिकों आश्रवनों जो है सो आश्रव है ॥९॥ वार्तिक--वध्यतेऽनेन बन्धनमात्रं वा वन्धः ॥१०॥ अर्थ--जाकरि बंधिये अथवा वन्धन मात्र जो है सो बन्ध है। टीकार्थ-जाकरि वन्धनैं प्राप्त हूजिये कि जाकरि पराधीन करिये अथवा पराधीन करण मात्र जो है सो बन्ध है ॥१०॥ वार्तिक संव्रियतेऽनेन संवरणमात्रं वा संवरः ॥ ११ ॥ अर्थ—जा करि रुकिये अथवा रुकना मात्र जो है सो संवर है ॥ टीकार्थ—जाकरि संवर करिये अथवा जाकरि रुकिये अथवा संवर मात्र जो है सो संवर हैं ॥ ११ ॥ वार्तिक—निर्जीर्यते यया निर्जरणमात्रं वा निर्जरा ॥ १२॥ टीकार्थ—जाकरि कर्म नाशनैं प्राप्त होय अथवा कर्मनिका नाश मात्र जो है सो निर्जरा है ॥ १२ ॥ वार्तिक—मोक्ष्यते येन मोक्षणमात्रं वा मोक्षः ॥ १३ ॥ अर्थ—जाकरि छूटिये अथवा छूटना मात्र जो है सो मोक्ष है। टीकार्थ—जाकरि कर्म क्षय होय अथवा कर्मनिको क्षय मात्र जो है सो मोक्ष है। इनि सप्त तत्वनिको इतरेतर योगमें द्वंद्व समास होय है। अर इनको नाम मात्र तो कह्यो अबै लक्षण कहिये है ॥ १३ ॥ वार्तिक--चेतनास्वभावत्वात्तद्विकल्पलक्षणो जीवः ॥ १४ ॥ अर्थ--चेतना स्वभावपणातैं वा चेतनाको विकल्प है लक्षण जाको सो जीव है। टीकार्थ--जीवको स्वभाव चेतना है यातै और द्रव्यनितैं भेद प्राप्त होय है। अर वा चेतनाका विकल्प ज्ञानादिक है। आका निकटतैं आत्मा ज्ञाता,

अर्थ—अथवा अनेकांततैं प्रश्नकी अनुपपत्ति है यातैं। टीकार्थ--अनेकांततैं कहने की अनुपपत्ति है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर द्रव्यार्थिक पर्य्यायार्थिकके गौण प्रधान पणां करि अर्पणा अनर्पणाका भेदतैं जीव अजीवके विषैं आश्रवादिकनिको कथंचित् अन्तरभाव है सो ऐसैं है कि पर्यायार्थिकका गौण भावनैं होतां संता द्रव्यार्थिकका प्रधान पणांतैं आश्रवादिकनिकैं भिन्न भिन्न नियम रूप पर्यायार्थिकका अनर्पणातैं अनादि पारिणामिक चैतन्य अचैतन्य आदि द्रव्याथका अर्पणातै आश्रवादिकको जीव अजीवके विषैं कथंचित् अन्तर्भाव है। अथवा द्रव्यार्थिकका गौण भावनैं होतां संतां पर्यायार्थिकका प्रधान पणातैं आश्रवादिक भिन्न भिन्न नियम रूप पर्यायार्थका अर्पणातैं अनादि पारिणामिक चैतन्य अचैतन्य आदि द्रव्यार्थका अनर्पणातैं आश्रवादिकनिको जीव अजीवके विषैं कथंचित् अन्तर्भाव है। अर इहां पर्यायार्थिककी अपेक्षा करि उपदेश अर्थवान है ॥ ५ ॥ वार्तिक—तेषां निर्वचनलक्षणक्रमहेत्वभिधानम् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, तिनकैं नाम तथा लक्षण तथा अनुक्रमको हेतु कहनैं योग्य है। टीकार्थ—प्रश्न, तिन जीवादिकनिका पृथक् उपदेशमें प्रयोजन तौ दिखायो अर अबै तिनको नाम मात्र कथन लक्षण अनुक्रम हेतुको कथन करने योग्य है ? उत्तर, सो कहिये हैं ॥६॥ वार्तिक—त्रिकाल विषय जीवनानुभवनाज्जीवः ॥ ७ ॥ अर्थ—त्रिकाल विषय जीवनिका अनुभवनतैं जीव है। टीकार्थ—दश प्राण जे हैं तिनके विषैं यथा योग्य ग्रहण किया प्राण पर्याय करि वर्तमान, भूत, भविष्यत् कालके विषैं जीवनका अनुभवनतैं जीवै है जीवत भयो जीवैगो यातैं जीव है। ऐसैं होत संतैं सिद्धनिके भी जीव पणौं सिद्ध होय है, क्योंकि जीवित पूर्व पणौं है यातैं। प्रश्न, ऐसैं है तो वर्तमानमें सिद्ध नहीं जीवै है ? उत्तर, भूत पूर्व गति करि सिद्धनिके जीव पणौं है प्रश्न, या जीव पणांके तौ औपचारिक पणौं है अर उनके मुख्य जीवपणौं इष्ट है ? उत्तर, यो दोष नहीं है। क्योंकि भाव प्राण रूप ज्ञान दर्शनका अनुभवनतैं वर्तमानमें भी जीवपणों है

दृष्टा, कर्ता, भोक्ता है सो चेतना है लक्षण जाको ऐसो जीव है ॥ १४ ॥ वार्तिक--तद्विपरीतत्वादजीवस्तदभावलक्षणः ॥ १५ ॥ अर्थ—जीवतैं विपरीत पणांतैं अजीव जो है सो तिन विकल्पनिका अभाव लक्षण है। टीकार्थ—जीवनैं विपरीत पणांतैं अचेतन स्वभाव पणांतैं ज्ञानादिकनिको अभाव जाको लक्षण है सो अजीव है। प्रश्न, निरूपाख्य कहिये निरूप है नाम जाको ऐसो अभाव जो है सो वस्तुको लक्षण कैसैं होय ? उत्तर, अभाव भी वस्तु धर्म है क्योंकि हेतुका अङ्गपणा आदितैं भावके समान है, यातैं अभाव रूप लक्षण जो है सो युक्त है, अर जो अभाव वस्तु धर्म नहीं होय तो सर्व द्रव्य संकर होय। प्रश्न, जो ऐसैं है तो वनस्पत्यादिकनिके अजीव पणौं प्राप्त होय है। क्योंकि ज्ञान दर्शनरूप चेतना अभाव तैं अर ज्ञानादिकनिकी उपलब्धि प्रवृत्तितैं है अर तिन वनस्पत्यादिकनिकै ज्ञान दर्शन पूर्वक प्रवृत्ति नहीं है क्योंकि हितकी प्राप्ति अर अहितका वर्जन को अभाव है यातैं, इहां उक्तं च श्लोक है।

बुद्धिपूर्वां क्रियां दृष्ट्वा स्वदेहेऽन्यत्र तद्ग्रहात्।
मन्यते बुद्धि सद्भावं सा न येषु न तेषु धीः ॥ १ ॥

अर्थ—अपनी देहके विषैं बुद्धि पूर्वक क्रिया देखि अर वाका ग्रहणतैं अन्यके विषैं बुद्धिको सद्भाव मानिये है अर जिनकेविषैं वा बुद्धि पूर्वक क्रिया नहीं है तिनकै विषैं बुद्धि नहीं ॥ १ ॥ उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि तिन वनस्पत्यादिकनिके विषैं भी ज्ञान दर्शन आदि है ते सर्वज्ञकै प्रत्यक्ष है। अर औरनिके आगमतैं जाननैं योग्य है। तथा आहारका लाभ अलाभनैं होतां संतां पुष्टिका अर म्लानि आदिका दर्शन करि युक्ति गम्य भी है। अथवा अंडामें तिष्टतां तथा गर्भमें तिष्टतां तथा मूर्छादिककेविषैं जीवपणांतैं होतां संता भी ज्ञान दर्शन पूर्वक प्रवृत्तिका अभावतैं हेतुके व्यभिचार है यातैं ॥ १५॥ वार्तिक—पुण्यपापागमनद्वारलक्षण आश्रवः ॥ १६ ॥ अर्थ—पुण्य

पापका आगमन द्वार है लक्षण जाको सो आश्रव है। टीकार्थ—पुण्य पाप लक्षण कर्मका आगमनको द्वार जो है सो आश्रव है ऐसैं कहिये है। आश्रव जो छिद्र ताकैं समान होय सो आश्रव है। प्रश्न, इहां उपमारूप अर्थ कहा है? उत्तर, जैसैं समुद्रके विषैं जल नदीनिका मुखकरि निरंतर परिपूर्ण हूजिये है तैसैं मिथ्यादर्शन आदि द्वार करि अनुप्रविष्ट कर्म जे हैं तिनकरि आत्मा निरंतर परिपूर्ण होय है। यातैं मिथ्यादर्शनादिक द्वार जो है सो आश्रव है ॥ १६ ॥ वार्तिक—आत्मकर्मणोरन्योन्यप्रदेशानुप्रवेशलक्षणो बंधः ॥ १७ ॥ अर्थ—आत्माका अर कर्मका परस्पर प्रदेशाको अनुप्रवेश लक्षण जो है सो बंध है। टीकार्थ—मिथ्यादर्शन आदि कारण करि ग्रहण किये कर्म प्रदेशनिको अर आत्म प्रदेशनिको परस्पर अनुप्रवेश है लक्षण जाको सो बन्ध है अर बन्धके समान है सो बन्ध है। प्रश्न, इहां उपमारूप अर्थ कहा है? उत्तर, बेड़ी आदि द्रव्य बन्धनकरि बद्ध देवदत्त जो है सो पराधीन पणांतैं वांछित स्थाननैं प्राप्त होनेका अभावतैं अति दुःखी होय है। तैसैं ही आत्मा कर्म बन्धन करि बद्ध हुवो संतो पराधीन पणांतैं शरीर सम्बन्धी दुःख करि पीड़ित होय है ॥ १७ ॥ वार्तिक—आश्रवनिरोधलक्षणः संवरः ॥ १८ ॥ अर्थ—आश्रवनिको रुकनौं है लक्षण जाको सो संवर है। टीकार्थ—पूर्वोक्त आश्रव द्वार जे हैं तिनको शुद्ध परिणामका वशतैं रुकनौं जो है सो संवर है। सो संवरके समान होय सो संवर है। प्रश्न, इहां उपमारूप अर्थ कहा है? उत्तर, जैसैं भलेप्रकार छिप्या है तथा ढक्या है द्वारका कपाट जाका ऐसो भलेप्रकार रचित पुर जो है सो शत्रूनिकरि दुःसाध्य होय है। तैसैं भले प्रकार गुप्ति, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषह जय चारित्ररूप आत्माकै तथा संवररूप है इन्द्रिय कषाय योग जाके ताकै नवीन कर्मका आगमन द्वार जे हैं तिनका रुकवातैं संवर है॥१८॥ वार्तिक—एकदेशकर्मसंक्षयलक्षणा निर्जरा ॥ १९॥ अर्थ—एकोदेश कर्मनिका सम्यक् क्षय है लक्षण जाको

ऐसी निर्जरा है। टीकार्थ--ग्रहण किया कर्मको तप विशेषकी निकटतानैं होतां संतां एक देश संक्षय लक्षण जो है सो निर्जरा है। अर निर्जराके समान जो है सो निर्जरा है। प्रश्न, इहां उपमारूप कहा अर्थ है? उत्तर, जैसैं मन्त्र औषधका बलतैं नष्ट भयो है वीर्यको विपाक जाको ऐसो विष जो है सो दोषको देनेवारो नहीं होय है। तैसैं सविपाक तथा अविपाक निर्जराका कारणरूप तप विशेष जो है ताकरि नष्ट भयो है रस जाको ऐसो कर्म संसाररूप फलको देनेवारो नहीं होय है ॥ १९ ॥ वार्तिक—कृत्स्नकर्मवियोगलक्षणो मोक्षः ॥ २० ॥ अर्थ—समस्त कर्मनिको वियोग है लक्षण जाको ऐसो मोक्ष है। टीकार्थ—सम्यग्दर्शन आदि कारण जे हैं तिनका प्रयोगकी प्रकर्षतानैं होतां संतां समस्त कर्मका चतुर्विध बन्धनको वियोग जो है सो मोक्ष है। अर मोक्षके समान जो है सो मोक्ष है। प्रश्न, इहां कौन उपमारूप अर्थ है? उत्तर, जैसैं बेड़ी आदि द्रव्यके छूटनेंतैं स्वतंत्रतानैं होतां संतां वांछित देशका गमनादिकतैं पुरुष सुखी होय हैं तैसैं ही समस्त कर्मनिका वियोगनैं होतां सतां स्वधीन अत्यन्त ज्ञान दर्शनरूप अनुपम सुखनैं आत्मा अनुभव करै है। या प्रकार सातूं तत्वनिका लक्षण तौ कह्या अर अबै सातूं तत्वनिका अनुक्रमको हेतु कहिये है। ॥ २० ॥ वार्तिक—तादर्थ्यात्परिस्पंदस्यादौ जीवग्रहणम् ॥२१॥ अर्थ—परिश्रमके आत्मार्थ पणांतैं जीवको ग्रहण आदिके विषैं है। टीकार्थ—जो यो मोक्षमार्गरूप तत्वका प्रगट करनें निमित्त परिश्रम है सो आत्माके अर्थ है, क्योंकि आत्माके मोक्षरूप पर्य्यायको परिणमन है यातैं अथवा जीवादिकनिका उपदेशरूप परिश्रम जो है सो आत्माके अर्थ है क्योंकि आत्माके ही उपयोग स्वभाव पणांनैं होतां संतां ग्राहक पणों है यातैं या हेतुतैं आदिमें जीवको ग्रहण है ॥ २१ ॥ वार्तिक—तदनुग्रहार्थत्वत्तादनन्तरमजीवाभिधानम् ॥२२॥ अर्थ—आत्माके अनुग्रहार्थ पणांतैं जीवके अनन्तर अजीवको कथन है। टीकार्थ—यातैं अजीव जो है सो शरीर वचन मन प्राण अपान आदि

उपकार करि आत्मानै अनुग्रहरूप करै है तातै जीवके अनन्तर अजीवकौ कथन है ॥२२॥ वार्तिक—तदुभयाधीनत्वात्तत्समीपे आश्रवग्रहणम् ॥ २३ ॥ अर्थ—तिन दोउनिका आधीन पणांतै अजीवका निकटके विषैं आश्रवकौ ग्रहण है । टीकार्थ—यानैं आत्माके अर कर्मके परस्पर आश्लेषनैं होतां संतां आश्रवकी प्रसिद्धि है तातैं अजीवका समीपमें आश्रवको ग्रहण है ॥ २३ ॥ वार्तिक—तत्पूर्वकत्वाद्बन्धस्य ततःपरं वन्ध वच ॥२४॥ अर्थ—वन्धके आश्रवपूर्वक पणातै आश्रवके परे वन्धको वचन है । टीकार्थ—यातै आश्रव पूर्वक वन्ध है तातैं आश्रवके परे बन्धको वचन करिये है ॥२४॥ वार्तिक—संवृतस्य वन्धाभावात्तत्प्रत्यनीकप्रतिपत्त्यर्थं संवरवचनम् ॥ २५ ॥ अर्थ—संवरवानके वन्धका अभावतैं वन्धका प्रतिपत्तीकी प्रतीतके अर्थ वन्धका समीपमें संवरको वचन है । टीकार्थ-यातैं संवररूप आत्माके वन्ध नहीं है तातैं वन्धका प्रतिपत्तीकी प्रतीतके अर्थि वन्धके अनन्तर संरवको वचन है ॥ २५ ॥ वार्तिक—संवरे सति निर्जरोपपत्तेस्तदनंतरं निर्जरावचनम् ॥ २६ ॥ अर्थ—संवरनैं होतां संतां निर्जराकी उपपत्ति है यातैं संवरके अनंतर निर्जराको वचन है। टीकार्थ—यातैं संवर पूर्वक निर्जरा है तातैं संवरका अन्तमैं निर्जराको वचन है ॥ २६ ॥ वार्तिक—अंते प्राप्तत्वान्मोक्षस्यांते वचनम् ॥ २७ ॥ अर्थ—अन्तमें प्राप्त होवातैं मोक्षको वचन अन्तके विषैं है । टीकार्थ--कर्मनिकी निर्जराका अन्तमैं मोक्ष प्राप्त होय है यातैं अन्तमें मोक्षको वचन है ॥२७॥ वार्तिक--पुण्यपापपदार्थोपसंख्यानमितिचेन्नाश्रवे वन्धे वान्तर्भावात्॥२८॥अर्थ--प्रश्न,पुण्य पाप पदार्थको उपसंख्यान करने योग्य है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि आश्रवमें तथा वन्धमें अन्तर भाव होय है यातैं । टीकार्थ--इहां पुण्य पाप रूप पदार्थनिको भी सूत्रमें संग्रह करनों योग्य है क्योंकि अन्य ग्रन्थकारनिनैं भी कहे हैं यातैं ? उत्तर, सो नहीं है । प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आश्रवमें तथा वन्धमें अन्तर भाव है यातैं क्योंकि आश्रव अर वंध पुण्य पापात्मक ही है ॥२८॥ प्रश्न रूप वार्तिक--तत्त्व-

शब्दस्य भाववाचित्वाज्जीवादिभिः सामानाधिकरण्यानुपपत्तिः ॥२९॥ अर्थ—प्रश्न, तत्व शब्दके भाव वाची पणांतैं जीवादिकनि करि समान अधिकरण पणांकी अनुपपत्ति है। टीकार्थ--प्रश्न, तत्व शब्द भाव वाची है या प्रकार व्याख्यान कियौ तातैं तत्व शब्दके जीवादिक द्रव्य वाचो वचननि करि समान अधिकरण पणौं नहीं उत्पन्न होय है ॥ २९ ॥ उत्तर रूप वार्तिक--न वा व्यतिरेकात्तद्भाव-सिद्धेः ॥३०॥ अर्थ--उत्तर, अथवा अभिन्न है यातैं तद्भावकी सिद्धि है तातैं दोष नहीं है। टीकार्थ-यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अभिन्न है यातै ता भाव की सिद्धि है क्योंकि द्रव्यतैं भिन्न भाव नहीं है यातैं तातैं द्रव्यनै भाव करि ही अंगीकार करिये हैं याको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं ज्ञान ही आत्मा है। इहां ज्ञान रूप भाव जो है ताकूं ही आत्मा कह्यो है प्रश्न, जो द्रव्य कूं ही भावकरि अंगीकार करिये है तो द्रव्यनिको जो लिंग है तथा संख्या है ताकी ही अनुवृत्ति प्राप्त होय है ॥ ३० ॥ उत्तर रूप वार्तिक—तल्लिंगसंख्यानुवृत्तौ चोक्तम् ॥ ३१ ॥ अर्थ—वा लिंग तथा संख्याकी अनुवृत्तिमें है उत्तर पूर्वं कह्यो है। टीकार्थ—ताका लिङ्ग तथा संख्याकी अनुवृत्तिके विषैं समाधान सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि या सूत्रकी व्याख्यामें पूर्वं कह्यो है। प्रश्न, कहा कह्यो है ? उत्तर, नही ग्रहण किया व्यक्ति वचन पणातैं अर्थात् इहां वचनकी व्यक्ति करनेंको प्रयोजन नहीं है। इहां तो वस्तु स्वरूपकी व्यक्ति करनेको प्रयोजन है यातैं ॥ ३१ ॥

इति श्रीमद्भगवदकलङ्कदेव प्रणीत तत्वार्थवार्त्तिके व्याख्यानालङ्कारे प्रथमऽध्याय तदपरनाम राजवार्त्तिकसागरोद्धृत तत्वकौस्तुभे चतुर्थमान्हिक परिसमाप्तम् ॥ ४ ॥

यामें मूलग्रंथ संख्या श्लोक एक शत है ताके मध्य सूत्र एक अर वार्तिक ३१ हैं। तिनमें पांच तो तत्वकी संख्याकी नियममें तथा आश्रवादिकनिका अनंतर भावका कथनमें हैं अर आठ

तत्वनिका व्युत्पत्ति कथनमें है अर सात तत्वनिका लक्षण कथनमें है अर सात तत्वनिका अनुक्रम कथनमें है अर चार पुण्य पापका सप्त तत्वनिमें ही अंतरगत करनेके कथनमें तथा तत्व शब्दका समानाधिकरण पणांका कथनमें तथा लिङ्ग संख्याका कथनमें है ऐसैं चतुर्थ आन्हिकमें इकतीस वार्तिक हैं तिनकी देश भाषामय वचनिका रूप अर्थ पंडित फतेलालजी की सम्मतितैं श्रीमज्जिन वचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवाला ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है।

अथ पञ्चमाह्निकं लिख्यते।

ताकी आदिमें पंचम सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है या प्रकार नामकरि तथा स्व लक्षणपणां आदि करि कहे जे जीवादिक तत्व तिनको भला व्यवहार विशेषमें व्यवहारको निवृत्तिकेअर्थि सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥ ५ ॥

अर्थ—नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव जे हैं तिनतैं सम्यग्दर्शनादिकनिको तथा जीवादिकनिको स्थापन होय है। टीकार्थ-जाकरि पदार्थ प्राप्त हजिये कि जानिये अथवा जो पदार्थनें सन्मुख करै सो नाम अर स्थापन करै प्रतिनिधि करिये सो स्थापना है। अर गुणांकरि द्रोष्यते कहिये प्राप्त हूजिये कि जानिये अथवा गुणनिनैं प्राप्त होयगो सो द्रव्य है। अर होनों जो है सो अथवा है सो भाव है अर नामादिकनिके इतरेतर योग है लक्षण जाको ऐसो द्वंद्व समास होय है। तातैं ऐसो अर्थ होय है कि नाम स्थापना द्रव्य भाव जे हैं तिनकरि स्थापन होय है। अथवा नाम स्थापना द्रव्य भावतैं स्थापन होय है। इहां अद्यादित्वात् दृश्यंतेऽन्यतोपीति या वृत्तितैं तसि प्रत्यय होय है अर

स्थापन जो है सो अथवा स्थापन करिये न्यास है अर्थात् निक्षेप जो सो न्यास है तातैं तिनको न्यास है सो तन्न्यास है। प्रश्न, इनि नामादिकनिका लक्षण कहा है? इहां उत्तर कहिये है। वार्तिक—निमित्तांतरानपेक्षं संज्ञा कर्म नाम ॥ १ ॥ अर्थ—निमित्तान्तरकी अपेक्षा विना संज्ञाका करना जो है सो नाम है। टीकार्थ-निमित्ततैं अन्यत् निमित्त जो है सो निमित्तांतर कहिये अर निमित्तांतरकी अपेक्षा रहित करी जो संज्ञा सो नाम है। ऐसैं कहिये है याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं परम ऐश्वर्य लक्षण इंदन क्रिया रूप निमित्तांतरकी अपेक्षा रहित कोऊको इन्द्र ऐसो नाम करिये तैसैं ही जीवन क्रियाकी अपेक्षा रहित तथा श्रद्धान क्रियाकी अपेक्षा रहित कोउको जीव तथा सम्यग्दर्शन नाम करिये ॥१॥ वार्तिक—सोयमित्यभिसंबंधत्वेनान्यस्य व्यवस्थापनामात्रं स्थापना ॥२॥ अर्थ-सो यो है ऐसा संबंधपणां करि अन्यको स्थापन मात्र जो है सो स्थापना है। टीकार्थ-सो यो है ऐसैं अभि संबंधपणांकरि अन्यकी अन्य में व्यवस्थापना मात्र जो है सो स्थापना है। याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं परमऐश्वर्य लक्षण स्वरूप यो है ऐसैं अन्य वस्तुमें प्रतिनिधि करिये सो स्थापना है। ऐसैं ही यो जीव है तथा यो सम्यग्दर्शन है तथा अक्षनिक्षेपादिकनिके विषैं सो यो है ऐसैं व्यवस्थापना मात्र जो है सो स्थापना है ॥ २ ॥ वर्तिक—अनागतपरिणामविशेषं प्रतिगृहीताभिमुख्यं द्रव्यम् ॥ ३ ॥ अर्थ-अनागत परिणाम विशेष प्रति ग्रहण कियो है सन्मुखपणों जानैं सो द्रव्य है। टीकार्थ—जो होण हार परिणामकी प्राप्ति प्रति योग्यतानें धारण करै सो द्रव्य है ऐसें कहिये है ॥ ३ ॥ वार्तिक—अतद्भावं वा ॥ ४ अर्थ-अथवा अनागत परिणामरूप नहीं होनों जो है सो द्रव्य है। टीकार्थ—अथवा अतद्भाव जो है सो द्रव्य है ऐसैं कहिये है याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं इंद्रके अर्थि ल्यायो काष्ट इन्द्र प्रतिमारूप पर्यायकी प्राप्ति प्रति सन्मुख भयो सो इन्द्र कहिये है। तैसे जीव तथा सम्यग्दर्शन पर्यायकी प्राप्ति प्रति ग्रहण कियो है सन्मुखपणो जान सो

द्रव्य जीव है, तथा द्रव्य सम्यग्दर्शन है ऐसैं कहिये हैं। प्रश्न, सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति प्रति ग्रहण कियो है सन्मुख पणौं जानैं ऐसैं एक कह्यो सो तो युक्त है अर नहीं है वो परिणमन जाकै ऐसा जीवके असंभव है यातैं या अयुक्त है कि जीवन पर्यायकी प्राप्ति प्रति ग्रहण कियो है सन्मुखपणौं जानैं ऐसैं कहनो अयुक्त है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, जीव तो सदा ही जीवन परिणामस्वरूप यातैं। अर जो पूर्वैं जीवन स्वरूप नहीं है तो अजीव है ऐसैं प्राप्त होय है। उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि मनुष्य जीव आदि विशेषकी अपेक्षा वो उपदेश जानवे योग्य है ॥ ४ ॥ वार्तिक—तद्द्विवधमागमनोआगमभेदात् ॥ ५ ॥ अर्थ—स [illegible]य आगम नोआगम भेदतैं दोय प्रकार है। टीकार्थ—सो यो द्रव्य दोय प्रकार । प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, आगम नो आगमका भेदतैं एक तो आगम द्रव्य जीव है दूसरो नो आगम द्रव्य जीव है तथा एक आगम द्रव्य सम्यग्दर्शन है दूसरो नो आगम द्रव्य सम्यग्दर्शन है ॥ ५ ॥ वार्तिक—अनुपयुक्तः प्राभृतज्ञाय्यात्मागमः ॥ ६ ॥ अर्थ-आगमके विचारमें नहीं लाग्यो भी प्राभृतकूं जाननें वारो आत्मा जो है सो आगम जीव है। टीकार्थ—नहीं उपयुक्त भयो भी प्राभृतको ज्ञाता आत्मा जो है सो आगम द्रव्य है ऐसैं कहिये है ॥ ६ ॥ वार्तिक—इतरत् त्रिविधं ज्ञायकशरीरभावि तद्व्यतिरिक्तभेदात् ॥ ७॥ अर्थ—नो आगम जीव है सो प्रथम ज्ञायक शरीर दूसरा भावी तीसरा तद्व्यतिरिक्त भेदतैं तीन प्रकार है। टीकार्थ—अर दूसरो नो आगम द्रव्य जो है सो तीन प्रकार पणांनैं प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, ज्ञायक शरीर १ भावि २ तद्व्यतिरिक्त ३ भेद तैं है तनमें ज्ञाताको त्रिकाल गोचर जो शरीर है सो ज्ञायक शरीर है। अर जीवनरूप तथा सम्यग्दर्शनरूप परिणामकी प्राप्ति प्रति सन्मुखद्रव्य जो है सो भावी है ऐसैं कहिये हैं। अर कर्म नो कर्मको विकल्प जो है सो तद्व्यतिरिक्त है। ॥ ७ ॥ वार्तिक—वर्त्तमानतत्पर्यायोपलक्षितं द्रव्यं भावः ॥ ८ ॥ अर्थ—वर्त्तमान वा पर्याय करि उपलक्षित

द्रव्य है सो भाव है। टीकाथ—वर्त्तमान जो जीव अर वर्त्तमान जो सम्यग्दर्शन पर्याय ता करि संयुक्त द्रव्य जो है सो भाव है तथा भाव सम्यग्दर्शन है ऐसैं कहिये है। याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं इन्द्र नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कर्यो जो इंदन क्रियारूप पर्याय ताकरि परिणाम्यूं आत्मा जो है सो भावेंद्र है ॥ ८ ॥ वार्तिक—स द्विविधः पूर्ववत् ॥ ९ ॥ अर्थ—सो भाव पूर्ववत् दोय प्रकार । टीकार्थ—यो भाव दोय प्रकार जानने योग्य है कि पूर्ववत् आगम नो आगम भेदतैं ॥ ९ ॥ वार्तिक—तत्प्राभृतविषयोपयोगाविष्ट आत्मागमः ॥ १० ॥ अर्थ—वो प्राभृत है विषय जाको ऐसा उपयोग करि व्याप्त रूप हैं सो आगम भाव जीव है। टीकार्थ—जीवादि प्राभृत विषय रूप उपयोगकरि व्याप्त आत्मा जो है सो आगमतैं भाव जीव है, तथा भाव सम्यग्दर्शन है ऐसैं कहिये है ॥ १० ॥ वार्तिक—जीवनादिपर्यायाविष्टोऽन्यः ॥११॥ अर्थ-जीवन आदि पर्यायाविष्ट है सो नो आगम भाव जीव है। टीकार्थ—जीवन आदि पर्यायकरि व्याप्त आत्मा जो है सो अन्य है कि नो आगम भाव है ऐसैं कहिये है ॥११॥ वार्तिक—नामस्थापनयोरेकत्वं संज्ञाकर्माविशेषादिति चेन्नादरानुग्रहाकांक्षित्व त् स्थापनायां ॥१२॥ अर्थ—प्रश्न, नामके अर स्थापनाके एक पणौं है क्योंकि संज्ञा करनेमें विशेष नहीं है यातैं। उत्तर, सो नहीं है । क्योंकि स्थापनाके विषैं आदर अनुग्रहको आकांक्षा है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, नामके अर स्थापनाके एक पणौं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, संज्ञाकर्मका अविशेष है यातैं कि नाममें अर स्थापनामें संज्ञाको करनौं समान है। अर नामनैं नहीं करतां संतां स्थापना नहीं करिये हैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, काहेतैं उत्तर, स्थापनाकेविषैं आदरको अर अनुग्रहको वांच्छापणौं है यातैं याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं मनुष्यके अरिहंत इन्द्र स्वामी कार्त्तिकेय ईश्वर आदिकी प्रतिमाकेविषै आदर अनुग्रहको वांछापणौं है तैसैं नामके विषैं नहीं प्रवर्तै है तातैं दोउनिमें भेद है ॥१२॥ वार्तिक—द्रव्यभावयोरेकत्वमव्यतिरेका-

दितिचेन्न कथंचित् संज्ञा स्वालक्षण्यादिभेदात्तद्भेदसिद्धिः ॥ १३॥ अर्थ—प्रश्न, द्रव्यके और भावके एक पणौं है क्योंकि दोउनिके अभेद है यातैं ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि संज्ञा और निज लक्षण आदिका भेदतैं तिनके भेदकी सिद्धि है यातैं । टीकार्थ--द्रव्यकै अर भावकै एक पणौं प्राप्त होय है । प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, दोउनिके अभेद पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि द्रव्यतैं भिन्नभाव नहीं प्राप्त होय है अर भावतैं भिन्न द्रव्य नहीं प्राप्त होय है यातैं दोउनिके एक पणौं है । उत्तर, सो नहीं है । प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर. नामतैं तथा निज लक्षण आदिका भेदतैं दोउनिमें भेदकी सिद्धि है यातैं या लोकमैं जिनके विषैं नाम करि तथा निज लक्षण पणां आदिकरि कियो भेद है तिनकैं विषैं भेद पणौं प्राप्त होय है, तैसैं ही द्रव्य अर भावके विषैं भी नाना पणौं है ॥ १३ ॥ इहां कोऊ कहै है वार्तिक—द्रव्यस्यादौ वचनं न्याय्यं तत्पूर्वकत्वान्नामादीनाम् ॥१४॥ अर्थ--प्रश्न, आदिकेविषैं द्रव्यको वचन न्याय्य है क्योंकि नामादिकनिकै द्रव्य पूर्वक पणौं है यातैं । टीकार्थ—प्रश्न, द्रव्यको वचन आदिमें कहनौ न्याय है प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, नामादिकनिकै द्रव्य पूर्वक पणौं है यातैं क्योंकि विद्यमान संज्ञीकै ही नामादिक होनों योग्य है । उत्तर, यो दोष नहीं है ॥ १४ ॥ उत्तररूप वार्तिक—संव्यवहारहेतुत्वात्संज्ञायाः पूर्ववचनम् ॥१५॥ अर्थ—भलाव्यवहारका हेतु पणांतैं संज्ञाको प्रथम वचन है । टीकार्थ—प्रश्न, भलाव्यवहारका हेतु पणांतैं नामको पूर्ववचन करिये है क्योंकि सर्व ही लोक व्यवहार नाम पूर्वक है अर लोक व्यवहारके नामात्मकपणो है यातैं अर लोक व्यवहार-के नामात्मकपणौं नहीं होतां संतां वस्तु व्यवहारको विच्छेद होय है अर लोक व्यवहारके नामात्मक पणांतैं ही स्तुति निंदाके विषैं राग द्वेषको प्रवृत्ति सिद्धि है ॥ १५ ॥ वार्तिक—ततःस्थापनावचन-माहितनामकस्य स्थापनोपपत्तेः ॥ १६ ॥ अर्थ--नामतैं परैं स्थापनाको वचन है क्योंकि ग्रहण कियो है नाम जानैं ताकै स्थापनाकी उपपत्ति है यातैं । टीकार्थ—नामतैं परैं स्थापना करिये है । प्रश्न,

काहेतैं ? उत्तर, नाम धारक जो है ताकै स्थापनकी उपपत्ति है अर ग्रहण कियो है नाम जाको ताकूं ही सो यो है ऐसैं कोउ प्रतिनिधि करिये है ॥ ६ ॥ वार्तिक— द्रव्यभावयोः पूर्वापरन्यासः पूर्वोत्तरकाल वृत्तित्वात् ॥१७॥ अर्थ--द्रव्यके अर भावके पूर्व उत्तर न्यास है क्योंकि पूर्व उत्तर कालवर्त्ती पणौं है यातैं । टीकार्थ-द्रव्यके अर भावके पूर्वापर न्यास है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, पूर्वोत्तर कालवर्ती पणांते क्योंकि पूर्वकालवर्ती तौ द्रव्य है अर उत्तर कालवर्ती भाव है यातैं ॥१७॥ वार्तिक—तत्वप्रत्यासत्ति प्रकर्षाप्रकर्षभेदाद्वा तत्क्रमः ॥१८॥ अर्थ—अथवा तत्वकी निकटताका प्रकर्ष अप्रकर्ष भेदतै नामादिकनिको अनुक्रम है। टीकार्थ--अथवा तत्वकी निकटतातैं प्रकर्ष अकर्षका भेदतै तिन नामादिकनिका कथनको क्रम जानिवे योग्य है। अर तत्व शब्द जो है सो भाव अर भाव सो प्रधान है क्योंकि और द्रव्यादि जे हैं ते भावके अर्थ है अर तहां निकटतातैं भावका समीपमें द्रव्यप्रयुक्त है क्योंकि द्रव्यके ही भावकी प्राप्ति है यातैं अर द्रव्यके पूर्व स्थापनाको ग्रहण है। क्योंकि अतद्भावके विषै भी तद्भावप्रति स्थापनाके प्रधान हेतुपणौं है यातैं अर ता स्थापनातैं पूर्व नामको ग्रहण है क्योंकि भाव प्रति अत्यंत दूर पणौं है यातैं ॥१८॥ प्रश्न,रूपवार्तिक । नामादिचतुष्टयाभावो विरोधात्॥१६॥अर्थ—प्रश्न,नामादि चतुष्टयको आभाव है क्योंकि चारनिके विरोध है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न,इहां कोउ कहै है कि नामादिक चतुष्टयको अभाव है। काहेतैं ? उत्तर, विरोध है यातैं प्रश्न, काहेतैं विरोध है ? उत्तर,एक शब्दार्थकं नामादि चतुष्टय विरोधनैं प्राप्त होय है सो ऐसे हैं कि जहां नाम तहां एक नाम ही है,स्थापना नहीं है अर नाम ही स्थापना इष्ट करिये है तो यो नाम नहीं है यो स्थापना है अर स्थापना नाम नहीं है यातैं एक नामार्थ जो है सो विरोधतैं स्थापना नहीं है तैसैं ही एक जीवादिक अर्थके तथा सम्यग्दर्शनादिकके विरोधतैं नामादिकको अभाव है ॥ १६ ॥ उत्तर रूपवार्तिक--न वा सर्वेषां संव्यवहारं प्रत्यविरोधात् ॥ २० ॥ अर्थ—उत्तर, सर्व नामादिकनिकै

भला व्यवहार प्रति अविरोध है यातैं। टीकार्थ--उत्तर, अथवा यो दोष नहीं है। प्रश्न,कहा कारण? उत्तर, सर्वनामादिकनिके भला व्यवहार प्रति अविरोध है यातैं क्योंकि लोकके विषैं सर्वनामादिकनि करि भलो व्यवहार देखिये हैं कि देवदत्त इन्द्र है ऐसो नाम है। अर प्रतिमादिकके विषैं इन्द्र है ऐसैं स्थापना है अर इन्द्रके अर्थि काष्टरूप द्रव्य जो है ताके विषैं व्यवहार है कि इन्द्र ल्यायो हूं या बचनतैं अनागत परिणामरूप अर्थकेविषैं द्रव्य शब्दको व्यवहार लोकमें देखिये है कि यो बालकरूप द्रव्य आचार्य तथा श्रेष्ठी तथा वैयाकरणी तथा राजा होणहार है ऐसा व्यवहारका देखिवातैं अर सचीपति भावसैं इन्द्र है ऐसैं विरोध नही है ॥ २० ॥ किञ्च, वार्तिक—अभिहितानवबोधात् ॥ २१ ॥ अर्थ—और सुनूं कि कह्याका नहीं जाननेतै भी विरोध नहीं है। टीकार्थ—और सुनूं कि जैसैं नाम एक नामनं ही इष्ट करै है अर स्थापनानैं नहीं इष्ट करै है ऐसैं कह्यो जो तूं तानैं कह्याकौ नहीं जाननौं प्रकट करै है क्योंकि ऐसैं नहीं कहिये है कि नाम ही स्थापना है। प्रश्न, तो कहा कहिये? उत्तर, एक अर्थको नाम स्थापना द्रव्य भाव करि स्थापन करिये है ऐसैं कहिये हैं ॥ २१ ॥ वार्तिक—अनेकांताच्च ॥ २२ ॥ अथवा अनेकांततैं विरोध नहीं है। टीकार्थ—अथवा एकांत करि या नहीं प्रतिज्ञा करिये है कि नाम ही स्थापना है अथवा नहीं है तथा स्थापना ही नाम है अथवा नहीं है प्रश्न, कैसैं? उत्तररूप वार्तिक—मनुष्यब्राह्मणवत् ॥ २३ ॥ अर्थ---जैसैं कथंचित् ब्राह्मणके मनुष्यपणों है तैसैं कथंचित् स्थापनाके नाम पणौं है। टीकार्थ—जैसैं कथंचित् ब्राह्मण मनुष्य है क्योंकि ब्राह्मणके मनुष्य जात्यात्मकपणौं है यातैं अर मनुष्य कथंचित् ब्राह्मण है अथवा नहीं है क्योंकि मनुष्यके ब्राह्मण जात्यादि पर्यायात्मक पणांका अदर्शनतैं, तैसैं ही स्थापना जो है सो कथंचित् नाम है क्योंकि नहीं कियो है नाम जाको ताकी स्थापना नहीं उत्पन्न होय है यातैं अर नाम

जो है सो कथंचित् स्थापना है कथंचित् नहीं है क्योंकि दोऊ ही प्रकार देखिये है यातैं तैसैं ही द्रव्य कथंचित् भाव है क्योंकि भावरूप द्रव्यार्थका उपदेशतैं अर भाव पर्यायरूप अर्थका उपदेशतैं द्रव्य नहीं है अर भाव जो है सो कथंचित् द्रव्य है कथंचित् द्रव्य नहीं है क्योंकि दोउ प्रकारकौ दर्शन है। यातैं ॥ २२ ॥ किञ्च, वार्तिक—अतस्तत्सिद्धेः ॥२३॥ अर्थ--और सुनूं कि नामादिकनिके विरोध कहो हौ तातैं ही तिनके सद्भावकी सिद्धि है। टीकार्थ-और सुनूं कि जातैं ही नामादि चतुष्टयके विरोध तुम कहौ हौ यातैं ही अभाव नहीं है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, या प्रकरणमें जो यो विरोध कह्यो सो सहानवस्थान लक्षण विरोध है कि वध्यघातक लक्षण विरोध है। इनिका अर्थ ऐसा जानना कि दोऊसाथि नहीं स्थित रहै सो तो सहानवस्थान विरोध है अर एक वध्य होय दूसरौ घातक होय सो वध्यघातक विरोध है सो दोउ ही विरोध सत् स्वरूपनिके होय है असत् स्वरूपनिके नहीं होय है तिनमें सहानवस्थान विरोध तौ काकके अर उलूकके है। बहुरि वध्यघातक विरोध छायाके अर आतापके है अर काकदन्त तथा खरविषाणके विरोध नहीं है क्योंकि दोउनिके असत् पणौं है यातैं ॥ २३ ॥ किंच वार्तिक- नामाद्यात्मकत्वानात्मकत्वे विरोधस्याविरोधकत्वात् ॥२४॥ अर्थ---नामाद्यात्मक पणांके अनात्मक पणांनैं होतां संतां विरोधके अविरोध पणौं है यातैं। टीकार्थ--जो नामादि चतुष्टयके विरोध है सो नामाद्यात्मक है कि नहीं है? इहां दोउ प्रकार विरोधका अभाव है अर जो वरोध नामाद्यात्मक है तो यो विरोध करनेवारो नहीं हैं। क्योंकि नामाद्यात्मकके समान है यातैं अर जो नामाद्यात्मक भी विरोध नासादिकनिको विरोध करने वारो होय तो नामाद्यात्मक भी विरोध होय। तातैं नामादिकनिका अभावतैं विरोध ही नहीं होय। बहुरि विरोध नामाद्यात्मक नहीं है तौ ऐसैं भी नामादिकनिको यो विरोध करने वारो नहीं है क्योंकि अर्थांतरपणौं है यातैं अर अर्थांतर भावनें होतां संतां भी विरोधपणौं इष्ट करिये है तो सर्व पदा-

र्थनिके परस्परतैं नित्य विरोध होय सो है नहीं यातैं विरोधको अभाव है ॥ २४ ॥ वार्तिक--ताद्गुणयाभावस्य प्रामाण्यामिति चेन्नेतरव्यवहारनिवृत्तेः ॥ २५ ॥ अर्थ—द्रव्यका गुणपणातैं भावकै ही प्रमाणता है अर्थात् नामादिकनिके प्रमाणता नहीं है। उत्तर, और व्यवहारकी निवृत्ति होय है। टीकार्थ--तद्गुण पणांनैं भाव ही प्रमाण है अर नामादिक प्रमाण नहीं है सो जीवनादिक है गुण जाको सो तद्गुण कहिये अर ताको जो भाव सो ताद्गुण्य कहिये यातैं भाव ही प्रमाण है नामादिक प्रमाण नहीं है क्योंकि इनमें तद्गुणपणांको अभाव है यातैं। उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, और व्यवहारको निवृत्ति होय यातैं क्योंकि नामादिकनिके अप्रमाणता होत संतै नामादिकनिके आश्रव व्यवहार जो है सो लुप्त होय है अर नामादिकनिके आश्रव व्यवहार है ही यातैं भावके ही प्रमाणता नहीं है अर्थात् नामादिक सर्व जे हैं तिनके भी प्रमाणता है ॥ २५ ॥ वार्तिक--उपचारादिति चेन्न तद्गुणाभावात् ॥ २६ ॥ अर्थ—उपचारतैं प्रमाणता है। उत्तर, सो नहीं है द्रव्यका गुणको अभाव है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न, जो भावके ही प्रमाणता है तथापि नामादिकनिके विषैं व्यहार नहीं निवृत्त होय है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उपचारतैं बालकके विषैं सिंह शब्दका व्यवहारके समान है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, तद्गुणका अभावतै क्योंकि बालकके विषैं सिंह शब्दको व्यवहार है सो तो क्रूरपणां शूरपणां आदिगुणनिका एक देशका योगतैं है। अर इहां नामादिकनिके विषैं जीवन आदि गुणनिको एक देश कछू भी नहीं है यातैं उपचारका अभावतैं व्यवहारकी निवृत्ति होय ही है। यातैं नामादिकनिके उपचारतैं व्यवहार मानना योग्य नाहीं ॥ २६ ॥ वार्तिक--मुख्यसंप्रत्ययप्रसंगाच्च ॥२७॥ अर्थ—अथवा मुख्यमें ही प्रतीतिको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ--अथवा जो उपचारतैं नामादिकनिके विषैं व्यवहार मानिये तो गौण अर मुख्य जे हैं तिनके विषैं मुख्यमें ही व्यवहारकी प्रतीति होय या न्यायतैं

मुख्यकी ही प्रतीति होय नामादिकनिकी नहीं होय यातैं। अथ प्रकरणादि विशेष लिंगका अभावनैं होतां संता भी सर्वत्र नामादिकनिके विषैं कृतसंगति पुरुषके अविशेषरूप प्रतीति होय है तातैं नामादिकनिके विषैं उपचारतैं व्यवहार नहीं है ॥२७॥ प्रश्नरूप वार्तिक--कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे संप्रत्ययो भवतीति लोके ॥२८॥ अर्थ--कृत्रिम और अकृत्रिम जे है तिनके विषैं कृत्रिमसैं ही लोकमें सम्यक् प्रतीति होय है। टीकार्थ--कृत्रिम अकृत्रिम जे है तिनमें कृत्रिमसैं भलेप्रकार प्रतीति होय है या लोकमें प्रसिद्ध है सो ऐसैं है कि गोपालकनैं ल्याओ तथा कटेजकनैं ल्याओ ऐसैं कहतां संता जाको यो नाम है सो ल्याइये है अर जो गौने पालै हैं तथा चटाईमें उत्पन्न भयो है सो नहीं ल्याइये है। ऐसैं ही इहां भी जाको यो जीव आदि नाम कियो है ताकी ही भले प्रकार प्रतीति होय है और की प्रतीति नहीं होय है। भावार्थ--कृत्रिम तो नाम है अर अकृत्रिम भाव है तथापि तिनमें लोक व्यवहारकेविषैं कृत्रिमसैं ही प्रतीति होय है सो ऐसैं है कि जैसैं गोपालनैं ल्यावो ऐसैं कहतां संतां गोपाल नामा पुरुषनैं ही ल्याइये हैं अर गोपालनैं नहीं ल्याइये है। उत्तररूप वार्तिक--तन्न किं कारणमुभयगतिदर्शनात् ॥ २९ ॥ अर्थ—उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, दोउ ही अर्थकी प्राप्तको दर्शन है यातैं। टीकार्थ—उत्तर सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ?। उत्तर, निश्चयकरि लोकके विषैं अर्थतैं तथा प्रकरणतैं कृत्रिमसैं भले प्रकार प्रतीति होय है सो ऐसैं है कि जाकी जा नामकरि प्रसिद्धता है ताकी ता नामकरि व्याख्यान करिये सो तो अर्थ है अर जहां यो व्याख्या ऐसो करने योग्य है ऐसो उपदेश होय तहां प्रकरण होय है तातैं अर्थतैं तथा प्रकरणतैं लोककैं विषैं प्रतीति होय है क्योंकि छोटा ग्राममें रहनेवालो रज करि व्याप्त अंगको धारक खुर पादक नामक प्रकरणकूं नहीं जाननेवारो तत्काल आयो पुरुष जो है ता प्रति गोपालकनैं ल्यावो तथा कटेजकनैं ल्यावो ऐसैं यथेच्छ तुम कहो हो वा पुरुषकैं दोउ ही प्रकार ज्ञान होहिंगे ॥ २९ ॥ किञ्च वार्तिक--

अनेकांतात् ॥ ३० ॥ अर्थ--या विषयमें अनेकांत है तातैं। टीकार्थ--और सुनूं कि यो एकांत नहीं है कि यो नाम कृत्रिम ही है अथवा कृत्रिम नहीं है। प्रश्न, तो कहां है। उत्तर, अनेकांत है सो ऐसैं है कि नाम जो है सो सामान्य अपेक्षाकरि तो कथंचित् अकृत्रिम है अर विशेषकी अपेक्षा-करि कथंचित् कृत्रिम है। ऐसैं ही स्थापनादिक भी अनेकांत स्वरूप ही जानवे योग्य है। प्रश्न, तातैं कहा सिद्ध भयो? उत्तर, कृत्रिम अकृत्रिम जे हैं तिनके कृत्रिममें ही प्रतीति होय है ऐसैं कह्यो हुतो जाको अभाव सिद्ध होय है ॥ ३० ॥ किंच, वार्त्तिक--नयद्वयविषयत्वात् ॥ ३१ ॥ अर्थ--और सुनूं कि नामादिकनिकै दोउ नयको विषय है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि नय दोय हैं एक द्रव्यार्थिक दूसरो पर्यायार्थिक है तिनको विषयरूप नामादिकनिको न्यास है तिनमें नाम स्थापना द्रव्य ये तीन तो द्रव्यार्थिकके विषय हैं क्योंकि इनकै सामान्यात्मक पणौं यातैं अर भाव जो है सो पर्या-यार्थिकको विषय है क्योंकि याकै परिणति प्रधान पणौं है यातें प्रश्न, यातैं कहा सिद्ध भयो उत्तर, गौण अर मुख्य जे तिनमैं मुख्यमें ही प्रतीति होय है। अर कृत्रिम अकृत्रिम जे है तिनमें कृत्रिममें ही प्रतीति होय है या प्रकारको एकांतरूप अग्रह नहीं होय है क्योंकि विषय विषय नयको भेद है यातैं ॥ ३१ ॥ प्रश्नरूप वार्तिक-द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकांतर्भावान्नामादीनां तयोश्च नयशब्दाभिधेयत्वात्पौनरुक्त्यप्रसंगः ॥ ३२ ॥ अर्थ—नामादिकनिक द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिकके विषैं अंतरभाव होवातैं तिन दोउ नयनिकै नयशब्द कर अभिधेयपणांत पुनरुक्त पणांक प्रसंग आवै है। टीकार्थ--प्रश्न, जातैं नाम स्थापना द्रव्य जे हैं ते द्रव्यार्थिकके विषय हैं अर भाव पर्यायार्थिकको विषय ऐसैं कह्यो तातें नामादिक . . य जे है तिनके विषैं अंतरभाव है यातैं अर नयके विकल्प जे हैं तिनके वक्तव्य माण पणौं है यातैं पुनरुक्त पणौं प्राप्त होय है॥३२॥ उत्तररूप वार्तिक-न वा विनेयमतिभेदाधीनत्वाद्द्रव्यादिनयविकल्पनिरूपणस्य ॥३३॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है

क्योंकि प्रधान पणौं है यातें ॥ ३५ ॥ वार्तिक--विशेषातिदिष्टत्वाच्च ॥ ३६ अर्थ—अथवा विशेष रूप दिखावा वा पणांतैं । टीकार्थ-अथवा जीवादिक जे हैं ते सम्यग्दर्शनका विषयपणां करि विशेषण रूप करि दिखाया है ते प्रकरणमें आयो जो सम्यग्दर्शनादिकनिको त्रिक तानें नहीं बांधै है क्योंकि विशेषणकरि दिखाये जे हैं ते प्रकरणमें आयानें नहीं बांधै है ॥ ३६ ॥ उत्तररूप वार्तिक—सर्व-भावाधिगमार्थन्तु ॥ ६७ ॥ अर्थ—उत्तर, अथवा सर्व भावनिका जाननके अर्थ तत् शब्दको ग्रहण है टीकार्थ—उत्तर, जीवाजीवादिक तो अप्रधान अर सम्यग्दर्शनादिक प्रधान ऐसैं सर्व भाव जे हैं। तिनका जाननके अर्थ तत् शब्दको ग्रहण है अर निश्चय करि जो तत् शब्दको ग्रहण नहीं करिये तो प्रधानतैं ही संबन्ध होय ऐसैं ही अजीवादिकनिकै विषैं तथा ज्ञान चारित्र जे हैं तिनके विषैं नामा-दिकनिका न्यासको विकल्प जोड़िवो योग्य है ॥ ३७ ॥ अबैं छठा सूत्रकी उत्थनिका लिखिये है कि अधिकारमैं किये अभिधान अभिधेयका व्यवहारमें व्यभिचारकी निवृत्तिके अर्थि नामादिकनि करि स्थापन किये ऐसैं सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक पदार्थ जे हैं तिनका तत्व जाननेको हेतु कहने योग्य है। ऐसो प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥

अर्थ—प्रमाण और नय जे हैं तिन करि जानपन होय है। टीकार्थ—प्रमाण और नय जे हैं ते प्रमाण नय कहिये अर प्रमाण और नय जे हैं तिन करि सम्यग्दर्शनादिकनिको तथा जीवादिकनि-को जानपन होय है। अर प्रमाण और नय जे हैं ते वक्ष्यमाण लक्षण हैं प्रश्न, नयशब्दके अल्प स्वरवान पणातैं पूर्व निपात होनों योग्य है कि सूत्रमें प्रथम नय शब्द कहनों योग्य है उत्तर-रूप वार्तिक—अभ्यर्हितत्वात्प्रमाणशब्दस्यपूर्वनिपातः ॥ १ ॥ अर्थ—उत्तर, पूज्यपणातैं प्रमाण

शब्दको पूर्वनिपात है। टीकार्थ—उत्तर, जो पूज्य होय सो पूर्व प्राप्त होय है या हेतुतैं प्रमाण शब्द कों पूर्वनिपात जानवे योग्य है। प्रश्न, प्रमाणके पूज्यपणौं कैसैं है? उत्तररूप वार्तिक—प्रमाणप्रकाशितेष्वर्थेषु नयप्रवृत्तेर्व्यवहारहेतुत्वादभ्यर्हः ॥२॥ अर्थ—प्रमाण करि प्रकाशरूप किया अर्थके विषैं नयकी प्रवृत्ति है यातैं व्यवहारका कारणपणातैं पूज्यपणौं है ॥ २ ॥ टीकार्थ—प्रमाण करि प्रकाशित अर्थ जे हैं तिनके विषैं नयकी प्रवृत्तिके व्यवहारको हेतुपणौं है यातैं पूज्य है अर जो प्रमाण करि प्रकाशित अर्थ नहीं है ताके विषय नयकी प्रवृत्ति नहीं है यातैं प्रमाणके पूज्यपणौं है ॥ २ ॥ तथा वार्तिक—समुदायावयव विषयत्वाद्वा ॥ ३ ॥ अर्थ—अथवा समुदाय अर अवयव विषय पणौं है यातैं। टीकार्थ—अथवा समुदाय विषय तो प्रमाण है अर अवयव विषय नय है यातैं भी प्रमाणके पूज्यपणौं है। अर तैसैं हीं प्राचीन आगम कहै है कि सकलादेशः प्रमाणाधीनो विकलादेशः नयाधीनः इति याको अर्थ ऐसो है कि समस्त उपदेश जो है सो प्रमाणके आधीन है अरु विकल उपदेश जो है सो नयके आधीन है ॥ ३ वार्तिक—अधिगमहेतुर्द्विधः स्वाधिगमहेतुः पराधिगमहेतुश्च-॥ ४ ॥ अर्थ—ज्ञान होनेको हेतु दोय प्रकार है कि एक स्वाधिगम्य है दूसरो पराधिगम्य है। टीकार्थ—अधिगमको हेतु दोय प्रकार है। ता कारण करि स्याद्वाद नय करि संस्काररूप कियो जो आगम प्रमाण ताकरि पर्याय पर्यायप्रति सप्तभंगवान जीवादिक पदार्थ जानवे योग्य है। इहां कोऊ कहै है कि—या सप्तभंगी कहा है? उत्तर, इहां कहिये है। वार्तिक—प्रश्नवशादेकस्मिन् वस्तुन्यविरोधेन विधिप्रतिषेधविकल्पना सप्तभंगी ॥ ५ ॥ अर्थ—प्रश्नका वशतैं एक एक वस्तुमें अविरोध करि विधि निषेधकी कल्पना जो है सो सप्तभंगी है। टीकार्थ—एक वस्तुके विषैं अविरोधकरि प्रश्नका वशतैं प्रत्यक्ष अनुमानरूप प्रमाणकरि अविरुद्ध विधि निषेधकी कल्पना जो है सो सप्तभंगी जानवे योग्य है। सो ऐसो है कि कथंचित् घट है१कथंचित् अघट है,२

कथंचित् घट भी है अर अघट भी है३कथंचित् अवक्तव्य है कथंचित् घट है४ अर अवक्तव्य है५कथंचित् अघट है अर अवक्तव्य है६कथचित् घट भी है अर अघट भी है अर बक्तव्य भी है७ऐसैं अर्पित अनर्पित नयको सिद्धितैं निरूपण करने योग्य है। तहां स्वात्मा करि घट है अर परात्माकरि अघट है प्रश्न, घटको स्वात्मा कहा है अर परात्मा कहा है ? उत्तर, घटवुद्धिकी प्रवृत्तिको अर घट नामकी प्रवृत्तिको लिंग जो है सो स्वात्मा है अर जहां तिन दोउनिकी अप्रवृत्ति है सो परात्मा पटादिक है। अर निज स्वभावका उपादान अर पर स्वभावका त्याग स्वरूप व्यवस्थाकरि ग्रहण कियो ही वस्तुके वस्तुपणौं है। अर जो पटतैं आपनें भिन्न करने रूप परणति आपकेविषैं नहीं होय तो सर्व स्वरूपकरि घट है ऐसैं कहिये है। अर जो पर स्वरूप करि आपनें भिन्न करतां संता भी निज स्वरूपका ग्रहणरूप परिणति आपके विषैं नहीं होय तो खर विषाणके समान अवस्तु होय। अथवा नाम स्थापना द्रव्य भाव जे हैं तिनके विषैं जो विवक्षित है सो तो स्वात्मा है अर और जे हैं ते परमात्मा हैं तिनमें विवक्षित स्वरूपकरि घट है अन्य स्वरूपकरि घट नहीं है। अन्य स्वरूपकरि भी घट होय तो विवक्षित स्वरूपकरि अघट होय ऐसैं नामादिक व्यवहारको उच्छेद होय अथवा जहां विवक्षित घटके शब्दके वाच्य सादृश्य सामान्य संबंधी जे हैं तिनके विषैं कोऊ ग्रहण किया घट विशेष में ही नियमरूप जो संस्थान आदि है सो स्वात्मा है अर और परात्मा है। तहां प्रति नियत रूप करि घट है और रूपकरि घट नहीं है अर जे और स्वरूप करि भी घट है तो एक घट मात्रको प्रसंग आवै। अर्थात् जहां सादृश्यमें प्रतिनियत रूप जो है ताकरि घट प्रमानिये है, तहां अन्य घटके जनावनेवारे जे सामान्य संबंधी प्रतिनियमरूप तिनकरि भी उस ही घटकूं घट कहिये तो अन्य घटका अभावतैं एक घट मात्रको ही प्रसंग आवै अर सामान्यके आश्रय व्यवहार जो है सो नाशनैं प्राप्ति होय यातैं जहां जा प्रति नियत रूपकरि घट मानिये तहां ता रूप करि ही घट है। अन्य रूप

करि अघट है अथवा कालांतरमें स्थिर रहनेवाला वाही घट विशेषकेविषैं पूर्वकालवर्त्ती तो कुशूल अर उत्तर काल वर्ती कपाल आदि अवस्थाको समूह जो है सो परात्मा है अर तिनका मध्यमें प्रवर्त्तनेवारो जो है सो स्वात्मा है सो तौ स्वरूपकरि ही घट है क्योंकि वाके विषैं ही घटको कर्म घटका गुण घटको नाम देखिये है। अर कुशूलादि अन्य जे हैं तिनके विषैं नहीं देखिये है। अर जो निश्चयकरि कुशूलादि कपालांतर स्वरूप करि भी घट होय तो घट अवस्थाके विषैं भी कुशूलादिकनिको भी प्राप्ति होय, अर घटकी उत्पत्तिके अर्थि तथा विनाशके अर्थि पुरुषका प्रयत्नको जो फल ताको अभाव प्राप्त होय। अर अंतराल वर्त्ती पर्याय स्वरूप करि भी अघट है तो घटके करनेको फल नहीं प्राप्त होय, अथवा क्षण क्षण प्रति द्रव्यका परिणाम रूप उपचय तो सामिल होनो अर अपचय भिन्न होनो इन भेदनितें अर्थान्तर की उपपत्तितें ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षा करि प्रत्युत्पन्न घट स्वभाव जो है सो स्वात्मा है, अर घट पर्याय ही अतीत अनागत जो है सो परात्मा है. अर वा अविद्यमान प्रत्युत्पन्न स्वभाव करि ही वो घट है। अर और अविद्यमान पर्याय करि घट नहीं है। तथा उपलब्धि अनुपलब्धिका सद्भावतें अर्थात् प्रत्युत्पन्न स्वभाव घट जो है ताकी उपलब्धि होय है, अतीत अनागतकी उपलब्धि नहीं होय है यातें। अर जो ऐसे नहीं है तो निश्चय करि प्रत्युत्पन्न घट स्वभावके समान अतीत अनागत स्वभाव करि भी घटपणानिं होतां संता एक समय मात्र ही सर्व होय। अर अतीत अनागतके स्वभाव प्रत्युत्पन्नका अभावने होतां संता विनष्ट अनुत्पन्न घट व्यवहारका अभावके समान घटके आश्रय व्यवहार जो है ताको अभाव प्राप्त होय। अथवा पर स्परोपकार वर्त्ती रूपादिकका समुदाय रूप प्रत्युत्पन्न घट विषैं पृथुबुध्नाद्याकार जो है सो तो स्वात्मा है। अर और वा घटके अंतरगत अवयव जे हैं ते परात्मा है। अर वा पृथुबुध्नाद्याकार

करि जो है सो घट है अर और आकार करि घट नहीं है। अर घट व्यवहारको पृथुवुध्नाकार पणांनें होतां संतां ही भाव है। अर पृथुवुध्नाकारका अभावनैं होतां संता घट व्यवहारको अभाव है। अर जो निश्चय करि पृथुवुध्नाकार स्वरूपकरि भी घट नहीं है तो वो घट नहीं है अर जो अन्य स्वरूप करि भी घट होय तो पृथुवुध्नाद्याकार विना भी अन्य पदार्थनिके विषैं घट व्यवहार प्राप्त होय। अथवा रूपादि संनिवेश विशेषरूप संस्थान है तहां नेत्रनि करि घट ग्रहण करिये है। या हेतुतैं या व्यवहारके विषैं रूप मुख करि घट ग्रहण करिये हैं यातैं रूप स्वात्मा है अर रसादिक परात्मा है यातैं सो घटरूप करि ही है। अर रसादिक करि नहीं है क्योंकि भिन्न भिन्न नियमरूप इंद्रियनि करि ग्राह्य पणों है यातैं अर नेत्रनि करि ही घट ग्रहण करिये है। अर इहां रसादिक भी घट है ऐसैं ग्रहण करिये तो सर्वके रूप पणांको प्रसंग आवै तातैं अन्य इन्द्रियनिको कल्पना अनर्थक होय अर जो रसादिकके समान रूप भी घट नहीं ग्रहण करिये तो या घटके नेत्रनिके विषय पणां नहीं होय अथवा शब्दभेदनैं होतां संता निश्चय अर्थ भेद होय है यातैं घट कुट आदिशब्दनिके भी अर्थ भेद है क्योंकि घटनें तैं घट है और कुटिल पणातैं कुट है यातैं आ विक्रियारूप परिणतका जणाके विषैं ही वा शब्दकी प्रवृत्तिरूप है। तहां घटन क्रिया है विषय जाको ऐसो कर्तृ भाव है सो स्वात्मा है। अर और भाव है परात्मा है। तहां घटन क्रिया करि घट है कुटिल पणांकरि घट नहीं है तैसैं ही अर्थको समभिरोहण है कि प्रकाशन है यातैं और घटन क्रियाकी परिणति मुखकरि भी अघट होय तो घट व्यवहारकी निवृत्ति होय। अर जो कुटिलादि क्रियाकी अपेक्षा करि भी घट है तो घटन क्रिया रहित पटादिक जे हैं तिनके विषैं भी घट शब्दकी प्रवृत्तिहोय। अर वस्तुके एक शब्द वाच्य पणों होय अथवा घट शब्दका प्रयोगके अनंतर उत्पन्न भयो उपयोगाकार जो है सो स्वात्मा है क्योंकि याकै अहेय पणों है तथा अन्तरंग

पणौं है यातैं । अर बाह्य घटाकार जो है सो परात्मा है क्योंकि बाह्य घटका अभावनैं होतां संता भी घट शब्दका व्यवहारको दर्शन है यातैं सो घट उपयोगाकार करि है अन्य आकार नहीं है। अर जो निश्चय करि उपयोगाकार स्वरूपकरि भी अघट है तो वक्ता श्रोताके हेतु फलरूप उपयोगरूप जो घटाकार ताका अभावतैं उपयोगके आधीन व्यवहार जो है सो विनाशनैं प्राप्त होय, अर जो उपयोगाकारतैं दूरवर्ती भी पदार्थ घट होय तो घट आदिके भी घटपणांको प्रसंग आवै। अथवा चैतन्यशक्तिका ही दोय आकार है तहां एक ज्ञानाकार है दूसरो ज्ञेयाकार है। तिनमें नहीं उपयुक्त भयो है प्रतिबिंबको आकार जो विषैं ऐसो आदर्शका तलके समान तो ज्ञानाकार है, अर प्रतिबिम्ब के आकार परिणम्या आदर्शका तलके समान ज्ञेयाकार है तिनमे ज्ञेयाकार तो स्वात्मा है क्योंकि घट व्यवहारके ज्ञेयाकार मूलपणों है यातैं। अर ज्ञानाकार परात्मा है। क्योंक वाकै सर्व प्राणीमात्रमें साधारण पणौं है यातैं सो घट ज्ञेयाकार करि है ज्ञानाकार करि नहीं है। अर जो ज्ञेयाकार करि भी घट अघट है तो ज्ञेयाकारके आश्रय भी कर्त्तव्यताको निरास होय। अर निश्चयकरि ज्ञानाकार करि भी घट है तो घटादिकनिका ज्ञानसमयमें भी ज्ञानाकारका निःक्रमतैं घट व्यवहारकी प्रावृत्ति प्रसक्त होय। ऐसैं कह्या प्रकार करि अर्पणा कियो घटपणौं अघटपणौं परस्परतैं भिन्न नहीं है। अर घटपटके समान भेदतैं प्राप्त होय तो समान आधारपणांकरि घटबुद्धिकी अर घट नामकी प्रवृत्ति नहीं होय। तातैं परस्पर अविनाभावनैं होतां संता दोउनिका ही अभावतैं वाकै आश्रय व्यवहार जो है ताको छिपाव कियो है। यातैं घट अघट स्वभाव रूप यो अनुक्रम करि तत्शब्दकी वाच्यताने धारण करतो कथंचित् घट है कथंचित् अघट है ऐसैं कहिये है। बहुरि जो घट अघट स्वरूप वस्तु घट ही है। ऐसैं कहिये तो घट स्वरूपका असंग्रहतैं अनृत ही है क्योंकि वस्तु तितनों ही नहीं है अर और शब्द घट अघट स्वरूप अवस्थाका तत्वकूं कहन वारो नहीं

विद्यमान है यातैं यो घट वचन गोचर रहित पणांतैं कथंचित् अवक्तव्य है ऐसैं कहिये है बहुरि घट स्वरूपका अर्पण मुख्य करि कह्यो अर कह्यो जो अवक्तव्य स्वरूप ताकरि उपदेशरूप करि कियो सो ही पदार्थ है। यातैं कथंचित् घट है अर अवक्तव्य है। बहुरि निरूपण किया अघटभंगका संग करि अर दिखाया अवक्तव्य मार्गकरि उपदेस्यो सो ही पदार्थ है यातैं कथंचित् अघट है अर अवक्तव्य है। बहुरि घट अघटका कर्मको जो अर्पण अर क्रमरूप दोउ धर्मको जो अर्प्पण ताका वशतैं प्रकट भयो है उपदेश जाको सो ही पदार्थ तातैं कथंचित् घट है अर अघट है अर अवक्तव्य है या प्रकार या सप्तभंगी जीवादिक तत्वनिके विषैं तथा सम्यग्दर्शनादिकनिके विषैं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयका अर्पणका भेदतैं जोड़िवो योग्य है। तहां द्रव्यार्थिकको एकांत जो है सो भी अनिश्चित तत्व है यातैं सो ही है ऐसैं अवधारणतैं उन्मत्तके समान है। अर पर्यायार्थिकको एकांत जो है सो भी तैसैं ही अनिश्चित तत्व है। क्योंकि अतत् वस्तुनें सो ही है ऐसैं अवधारणतैं उन्मत्तके समान है। अर स्याद्वाद निश्चितार्थ है क्योंकि सापेक्ष पणांकरि यथावत् वस्तुका वादी पणां करि अनुन्मत्तका वचनके समान है। अर अवक्तव्यको एकांत भी असत्य वाहो है क्योंकि स्ववचनविरोध है यातैं याको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं सदा मौन व्रती कहै कि मेरे मौन व्रत है। अर्थात् मौन व्रती है तो या कैसैं कहै है कि मैं मौन व्रती हूं तैसैं ही अवक्तव्य है तो अवक्तव्य है ऐसैं कहै है अर कथंचित् अवक्तव्य कहनों जो है सो असत्यार्थ नहीं है क्योंकि याकै वक्तव्य अवक्तव्य वादी पणौं है यातैं, भावार्थ—कथंचित् अवक्तव्य कहनवारेके अभिप्रायमें वस्तुको स्वरूप सर्वथा अवक्तव्य नहीं है कि दोउ ही धर्मवान वस्तु है ऐसैं मानैं है यातैं सत्य वचन अर असत्य वचनका भेदकूं जानने वाराका वचनके समान है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—अनेकांते तद्भावाद्व्याप्तिरितिचेन्न तत्रापि तदुपपत्तेः ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, अनेकांतकेविषैं सप्तभंगका अभावतैं लक्षणकी

अव्याप्ति है ? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि अनेकांतमें भी सप्तभंगकी उपपत्ति है यातैं। अथ—प्रश्न, अनेकांतके विषैं सो सप्तभंगरूप विधिनिषेधकी कल्पना नहीं है। अर जो है तो यो अनेकांत नहीं है। अर अनेकांत नहीं होय तहां एकांत दोषको मिलाप होय अर अनवस्था होय तातैं जहां अनेकांतपणौं ही है तहां सप्तभंगी प्राप्त होनेवारी नहीं है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अनेकांत पणौं ही है तहां सप्तभंगी होनेवारी नहीं है उत्तर, अनेकांतमें भी सप्तभंगीकी उपपत्ति है सो ऐसैं है कि कथंचित् एकांत है कथंचित् अनेकांत है कथंचित् एकांत अनेकांत दोउ है। कथंचित् अवक्तव्य है कथंचित् एकांत भी है अर अवक्तव्य भी है कथंचित् अनेकांत भी है अर अवक्तव्य है कथंचित् एकांत भी अनेकांत भी है अर अवक्तव्य है ॥६॥ प्रश्न,सो कैसैं ? उत्तर,कहिये हैं वार्तिक-प्रमाणनयार्पणाभेदात् ॥७॥ अर्थ-उत्तर, प्रमाणका और नयका अर्पणका भेदतैं। अर्थ-एकांत दोय प्रकार है कि एक सम्यक् एकांत दूसरो मिथ्या एकांत है। अर अनेकांत भी दोय प्रकार है। कि एक सम्यक् अनेकांत है दूसरो मिथ्या अनेकांत हैं। तिनमें हेतु विशेषकी सामर्थ्यकी अपेक्षा सहित प्रमाण करि प्ररूपित अर्थका एकदेशको उपदेश जो है सो तो सम्यक् एकांत है। अर वस्तुका एक स्वरूपका अवधारण करि और समस्त स्वरूपका निराकरण करवामें प्रवीण उपयोग जो है सो मिथ्या एकांत है। अर एक वस्तुके विषैं सप्रतिपक्षी अनेक धर्म स्वरूप जे हैं तिनको निरूपण युक्ति अर आगम करि अविरुद्ध जो है सो तो सम्यक् अनेकांत है। अर वा स्वाभाव रूप तथा अन्य स्वभावरूप वस्तु करि शून्यकल्पना रूप अनेकात्मक केवल वाक् विज्ञान जो हैं सो मिथ्या अनेकांत है तिनमें सम्यक् एकांत जो है सो तो नय है अर सम्यक् अनेकांत जो है सो प्रमाण है। ऐसैं कहिये है तातैं नयका अर्प्पणतैं तो सम्यक् एकान्त है क्योंकि सम्यक् नयके एक स्वरूपका निश्चय कर वामें प्रवीण पणों है यातैं। अर प्रमाणका अर्पणतैं अनेकांत हैं। क्योंकि

सम्यक् प्रमाणके अनेक स्वरूपका निश्चयको आधारपणों है यातैं अर जो अनेकान्त सर्वथा अनेकान्त स्वरूप ही है तो एकान्त सर्वथा नहीं होय अर सर्वथा एकान्तका अभावतैं एकान्तका समूह स्वरूप प्रमाण जो है ताको भी अभाव होय सो जैसैं शाखादिकका अभावनैं होतां संता वृक्षादिकको अभाव तैसैं प्रमाणको भी अभाव होय क्योंकि प्रमाणतैं अविनाभावी विशेष जे हैं तिनका निराकरणतैं पदार्थका लोपनैं होतां संता सर्वको लोप होय ऐसैं एकान्त अनेकान्तको स्वरूप तो कह्यो अर आगे कहेंगे जे सप्तभंग युक्ति करि जोड़ने योग्य हैं सो ऐसैं है कि अनेक धर्मात्मक जो वस्तु तामें विवक्षित एक धर्मकी अपेक्षा करि कथंचित् एकान्त है। बहुरि तहां ही अविवक्षित अन्य धर्मकी अपेक्षा करि कथंचित् अनेकान्त है। बहुरि तहां ही विवक्षित अविवक्षित धर्मनिका अनुक्रम करि कथनकी अपेक्षा करि कथंचित् उभयात्मक है। बहुरि वहां ही उभय धर्मनिकूं युगपत् कहनें वारा शब्दका अभावतैं कथंचित् अवक्तव्य है। बहुरि वहां ही विवक्षित धर्मका अर्पणतैं अर पूर्वोक्त अवक्तव्य भंगकी अपेक्षा करि करि कथंचित् एकान्त अवक्तव्य है। बहुरि वहां ही विवक्षित अन्य धर्म जे हैं तिनका अर्पणतैं अर पूर्वोक्त अवक्तव्य भंगकी अपेक्षा करि कथंचित् अनेकान्त अवक्तव्य है। बहुरि तहां ही विवक्षित अविवक्षित धर्मनिका अर्पणतैं अर पूर्वोक्त अवक्तव्य भङ्गकी अपेक्षा करि कथंचित् एकान्त अनेकान्त अवक्तव्य है ॥ ७ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—छलमात्रमनेकान्त इति चेन्नछललक्षणाभावात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, छल मात्र अनेकान्त है। उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि अनेकान्तमें छल लक्षणको अभाव है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, सो ही है सो ही नहीं है सो ही नित्य है सो ही अनित्य है ऐसा अनेकान्त प्ररूपणा है सो छल मात्र है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, छल लक्षणका अभावतैं क्योंकि छलको लक्षण ऐसो कह्यो है कि अर्थका विकल्पको उत्पत्ति करि वचनको विघात जो है सो छल है ताको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं कोउनें कहा कि

नवकंवलोयं, ऐसें विशेप रहित कह्या अर्थके विषें वक्ताका अभिप्रायतें अर्थान्तरकी कल्पना कि नव कहिये नो संख्या प्रमाण कंवल है च्यार तीन नहीं है अथवा याकै नवीन कंवल है पुराणों नहीं है सो नव कंवल है तेसें अनेकान्त वाद नहीं है क्योंकि उभय गुणका प्रधान भाव करि ग्रहण किया अर्पित अनर्पित व्यवहार सिद्धि विशेपको जो वल ताका जाभतें प्राप्त भई युक्ति-रूप पुष्कल अर्थ जो है सो अनेकान्तवाद है यातें ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—संशयहेतुरिति चेन्न विशेपलक्षणोपलब्धेः ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न, अनेकान्त संशयको हेतु है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि विशेप लक्षणकी उपलब्धि है यातें। टीकार्थ—प्रश्न, अनेकान्त वाद जो है सो संशयको हेतु है। प्रश्न, कैसें ? उत्तर, एक आधारके विषें विरोधी अनेक धर्मनिको असंभव है यातें अर तिहारो आगम ऐसें प्रवर्त्ते है कि "एकं द्रव्यमनंतपर्यायमिति" याको अर्थ ऐसो है कि एक द्रव्य है अर अनंतपर्याय है। प्रश्न, आगमकी प्रमाणतातैं कहा है ? उत्तर है कि नहीं है ? नित्य है कि अनित्य है ? कहा स्वरूप है ? ऐसा प्रश्न, होत संतें आचार्य कहै है कि तेनें कह्या सो नहीं है ? प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, संशयका लक्षणतैं अनेकान्त वादका लक्षणके भेदकी उपलब्धि है यातें सो ऐसें है कि सामा-न्यका प्रत्यक्ष होवातें अर विशेपकी स्मृतिका होवातें संशय उत्पन्न होय है सो ऐसें है कि स्थाणुके अर पुरुपके योग्य देशके विषें नहीं है अत्यंत प्रकाश जा विषें अर नहीं है अत्यंत अंधकार जा विषें ऐसा कलुपतारूप समयके विषें ऊंचापणा मात्र समान रूप तानें देखतो अर वक्र कोटर अर विशेपरूप उपपत्ति अर नीचा मुडना आदि स्थाणुमें प्राप्त भया विशेपनिनें अर वस्त्रका हलना अर मस्तकका खुजालना चोटीका बांधना आदि पुरुपमें प्राप्त भया विशेपनिनें नहीं प्राप्त होतो अर तिन विशेपनिनें स्मरण करतो पुरुप जो है ताके संशय उत्पन्न होय है अर संशयके समान अने-कान्त वादके विषें विशेपकी अनुपलब्धि नहीं है यातें क्योंकि स्वात्मा परात्माका आदेशके वशीकृत

विशेष कहै है ते वस्तु वस्तु प्रति प्रकट प्राप्त हू जिये हैं तातैं विशेषकी उपलब्धितैं अनेकान्त संशयको हेतु नहीं है ऐसैं जो हम कहत भये सो भलेप्रकार जनावत भये। प्रश्न, ऐसैं भी संशय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, इहां प्रथम यो प्रश्न करने योग्य है कि इनि अस्तित्वादिक धर्मनिका साधनैं वारा भिन्न भिन्न नियमरूप हेतु है कि नहीं है जो नहीं है तो ज्ञानवाननि प्रति कहनों असम्भव है अर है तो एक के विषैं विरुद्धसाधनका हेतुनिकी निकटतानें होतां संता संशयनें होनों योग्य है ॥ ९ ॥ उत्तर कहिये है। वार्तिक—विरोधाभावात्संशयाभावः ॥ १० ॥ अर्थ—विरोधका अभावतैं संशय को अभाव है। टीकार्थ—जो विरोध होय तो संशय उत्पन्न होय अर नयनि करि अंगीकार किये धर्मनिकै विरोध नहीं है ॥ १० ॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूप वार्तिक—अर्पणाभेदाद् विरोधः पितृपुत्रादिसम्बन्धवत् ॥ ११ ॥ अर्थ—उत्तर, अर्पणका भेदतैं पिता पुत्रादिका सम्बन्धनें विरोध नहीं है। टीकार्थ—उत्तर, कह्या अर्पणका भेदतैं एक वस्तुके विषैं अविरोध करि अनेक धर्मनिको अविरोध है कि स्थित रहनों है सो पिता पुत्र आदि सम्बन्धके समान है सो ऐसैं है कि जाति कुलरूप संज्ञा व्यपदेश करि संयुक्त एक देवदत्त जो है ताके पिता पुत्र भ्राता भाणेज ऐसा अनेक प्रकारका सम्बन्ध पुत्र पिता पणौंआदि शक्तिका अर्पणका भेदतैं नहीं विरोधनें प्राप्त होय है सो ऐसें है कि एक अपेक्षा करि पिता है अर शेष अपेक्षा करि भी पिता है तो पुत्रादिक नामको भजने वारो नहीं है या हेतुतैं कही अपेक्षा करि ही पुत्र आदि नामको भजने वारो होय है अर पिता पुत्रादि कृत संबन्धको बहुपणों जो है सो देवदत्तका एकपणां करि नहीं विरोधनें प्राप्त होय है तैसैं ही अस्तित्व आदि अनेक धर्म एक द्रव्यके विषैं विरोधनें नहीं प्राप्त होय है ॥ ११ ॥ वार्तिक—सपक्षासपक्षापेक्षलक्षितसत्वासत्वादिभेदोपचितैकधर्मवद्वा ॥ १२ ॥ अर्थ—अथवा सपक्ष विपक्षकी अपेक्षा युक्त सत्व असत्व आदि भेदनिको आधार एक पक्ष धर्म जो है ताकै समान है।

टीकार्थ—अथवा—सपक्ष तथा विपक्षकी अपेक्षा करि उपलक्षित सत्व आदि भेद जे है तिनको आधार जो एक पक्ष धर्म ताकरि सर्व द्रव्य तुल्य है अर निश्चय करि निरपेक्ष सत्व असत्व जे है तिनको वादी प्रतिवादीका प्रयोगकी अपेक्षा करि पदार्थके विषै होनों सो संशय कह्यो है। अर जो ऐसै नहीं मानिये तो निश्चय करि पक्षधर्ममें भी संशयको कल्पना करिये ॥ १२ ॥ वार्तिक—एकस्य हेतोः साधकदूषकत्वाविसंवादवद्वा ॥ १३ ॥ अर्थ—अथवा एक हेतुके साधक दूषणपणामें अविसम्वादका अभावके समान है। टीकार्थ—अथानंतर ऐसैं उत्पत्ति करि अविरोध रूप कहतां संता भी मिथ्या दर्शनका अभिनिवेशतैं जो तत्वनै नहीं अंगीकार करै है ता प्रति सर्व लोकके मान्य हेतुवाद जो है ताने आश्रय करि कहिये है कि इहां स्वपक्षकी मर्यादानैं नहीं उल्लंघन करि न्यायधर्मनैं अनुपालना करता थका। अर अभिप्रायरूप प्रतिज्ञाको वा अर्थकी सिद्धिनैं वांछा करतो ऐसो वादी जो है तानैं हेतु नही कहतां संतो सर्व वांछितार्थकी सिद्धि प्रतिज्ञा मात्रतैं ही मति प्राप्त हो यातैं अति प्रसंग दोषकी निवृत्तिके अर्थि जो हेतु उपदेश करिये हैं सो साधकरूप अर दूषकरूप है कि निज पक्षनै साधे है अर परपक्षनैं बाधे है अर वै साधनरूप तथा दूषणरूप अथ हेतु-तैं साम्य नहीं है। अर अन्यपणां भी नहीं है क्योंकि जा धर्म करि साधक है ता धर्म करि दूषक नहीं है अर जा धर्म करि दूषक है ता धर्म करि साधक नही है अर तिनके संकर अर विरोध दोष हू नहीं है ऐसैं फलती अनेकान्तकी प्रक्रिया सर्व पदार्थनिके विषैं विरोधरूप दोषनै दूर करै है॥१३॥ वार्तिक—सर्वप्रवाद्यविप्रतिपत्तेश्च ॥ १४ ॥ अर्थ--तथा एकमें अनेकधर्म कहनेमे सर्व प्रतिवा-दीनिके विसंवादको अभाव है यातैं। अर्थ—अथवा या अर्थमें सर्व प्रतिवादो जे है ते विसं-वाद नहीं करै है अर कहै है कि एक अनेकात्मक है तिनमें प्रथम ही कितनेक कहै है कि सत्वगुण रजो गुण तमोगुण जे हैं तिनकी साम्य अवस्था जो है सो प्रधान है। अर तिनके प्रसाद लाघव

शोष ताप आवरण सादनादि भिन्न भिन्न स्वभाववान जे प्रधान स्वरूप तिनके परस्पर विरोध नहीं है। प्रश्न, जो गुणनितैं अर्थांतर भूत प्रधान नामा एक पदार्थ नहीं है तो कहा है ? उत्तर, वै ही गुण साम्य पणानैं प्राप्त भया प्रधान नामनें प्राप्त होय है। उत्तर, ऐसैं है तो प्रधानकें बहुपणों होय है। ऐसैं नहीं है तो कहा है ? उत्तर, तिनको समुदाय जो है सो एकप्रधान है? उत्तर, यातैं ही अवयव स्वरूप गुण जे हैं तिनका समुदायके अविरोध सिद्ध होय है। भावार्थ--एक प्रधानरूप पदार्थमें भिन्न स्वभाव जे प्रसाद लाघवादि गुण तिनके परस्पर विरोध नहीं है। बहुरि और ऐसैं माने है कि अनुवृत्ति कहिये फैलना अर विनिवृत्ति कहिये सिमटनारूप बुद्धि अर नाम है लक्षण जिनके ऐसे जे सामान्य अर विशेष है तिन पुरुषनिके सामान्यरूप ही जो विशेष सो सामान्य विशेष है ऐसी निरुक्ति होय है। यासे एक स्वरूपके उभयात्मक पणों विरोधनें नहीं प्राप्त होय है। बहुरि और कहै है कि वर्णादि परमाणुको समुदाय जो है सो रूप परमाणु है। तिन पुरुषनिके काकपणा अर बटपणा आदिके समान भिन्न लक्षण जे रूपात्मक परमाणू तिनके परस्पर विरोध नहीं है। बहुरि औरनिके ऐसैं मान्य है कि परमाणु नामा कोउ बाह्य द्रव्य ही नहीं है। प्रश्न, तो कहा है ? उत्तर, तदाकार प्ररिणम्यूं परमाणु नामके योग्य विज्ञान नहीं है ऐसैं कहिये है। इहां आचार्य कहै है कि ऐसी मान्यमें भी ग्राहक कहिये ग्रहण करने वारो अर विषयाभास कहिये विषयको प्रकाश करने वारो अर संविति कहिये जानन रूप जो शक्तित्रयको आकार ताको आधार भूत एक विज्ञान जो है ताको अंगीकारतैं विरोध नहीं है। भावार्थ--विज्ञानमें भी तीन शक्ति पाइये है अर विरोध नहीं है अर और सुनूं कि जे सर्व ही मत वारे जे हैं तिनके ही पूर्वोत्तर काल भावी अवस्था विशेषका अर्पणाका भेदतैं एकके कार्यकारण शक्तिको समन्वय है अर विरोधको स्थान नहीं है या प्रकार अनेकांतमें अविरोध सिद्ध है ॥ १४ ॥ अबै सातमा सूत्रकी

उत्थानिका कहै है कि ऐसैं प्रमाण और नय जे हैं तिनकरि जे जीवादिक पदाथ तिनका और भी जाननेका उपायांतर दिखावनेके अर्थि सूत्रकार कहै है। सूत्र—

निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः ॥७॥

अर्थ--निर्देश १ स्वामित्व २ साधन ३ अधिकरण ४ स्थिति ५ विधान ६ इनि षट् अनुयोगनितैं भी जीवादिकनिको जानपन होय है। अर्थ—प्रश्न, यो निर्देशादिक कहा है? उत्तर, पदार्थका स्वरूपको अवधारण जो है सो निर्देश है अर्थात् नाम मात्र कहना जो है सो निर्देश है। अर अधिपति पणों जो है सो स्वामित्व है। अर कारण जो है सो साधन है। अर प्रतिष्ठा कहिये जा विषैं स्थापन करिये अधिकरण है अर कालकरि व्यवस्था जो है सो स्थिति है। अर प्रकार जो है सो विधान है। इहां इनि करि तथा इनतैं अधिगम कहिये जाननों होय है ऐसो संवन्ध अनुवर्तौ है। अर पूर्ववत् सिद्धि प्रत्यय होय है। प्रश्न, कौनको अधिगम होय है? उत्तर, सो अधिगम जीवादिकनिको तथा सम्यग्दर्शनादिकनिको होय है। प्रश्न, ऐसें है तो तैसें ही षष्ठ्यन्त निर्देश करने योग्य है कि जीवादीनां तथा सम्यग्दर्शनादिनां ऐसें सूत्रमें करनौं योग्य है। उत्तर, नहीं करनौ योग्य है। क्योंकि अर्थका वशतैं विभक्तिको विपरिणाम होय है सो ऐसै है कि देवदत्तको ग्रह उच्च है ताहि बुलाव। इहां षष्ठ्यन्त देवदत्त पद जो है ताको आमंत्रण रूप अर्थका वशतैं कर्म संज्ञा करि द्वितीयांतको प्रगोग है। प्रश्न, निर्देशनें आदिमें कहा निमित्त कहिये है? उत्तररूप वार्तिक—अवधृतार्थस्य धर्मविकल्पप्रतिपत्तेरादौ निर्देशवचनम् ॥ १ ॥ अर्थ—अवधारण किया पदार्थका धर्म विकल्पकी प्रतीति होय है यातै आदिके विषैं निर्देश वचन है। अर्थ—स्वरूप करि धारण किया पदार्थकी स्वामित्वादिक धर्मनिका विकल्प रूप प्रतीति होय है। यातैं या निर्देश-

को वचन आदिके विषै करिये है ॥१॥ वार्तिक—इतरेषां प्रश्नवशात् क्रमः ॥२॥ अर्थ—स्वामित्वादि और जे हैं तिनको अनुक्रम प्रश्नका वशतैं है। अर्थ—और स्वामित्वादिकनिको अनुक्रम प्रश्नका वशतैं जानवो योग्य है ॥ २ ॥ जो ऐसैं है तो कौन जीव है ? उत्तर, सो ही कहिये है। वार्तिक-औपशमिकादिभावपर्यायो जीवपर्य्यायादेशात् ॥ ३ ॥ अर्थ—पर्यायका आदेशतैं औपशमिकादि भाव पर्याय जाके है सो जीव है। अर्थ—आगै कहनेमें आवैंगे ऐसैं औपशमिकादिभाव है पर्याय जाके सो जीव है ऐसै पर्यायार्थिक नयका उपदेशतैं कहिये है ॥३॥ वार्तिक—द्रव्यार्थादेशान्नामादिः ॥ ४ ॥ अर्थ—द्रव्यार्थका आदेशतैं नामादिकनिका वचन है। अर्थ—द्रव्यार्थिक नय उपदेशतैं नामादिक जीव हैं ऐसे कहिये है ॥४॥ तदुभयसंग्रहः प्रमाणम् ॥५॥ अर्थ—दोउ नयनिका संग्रहरूप प्रमाण है। अर्थ—पर्यायार्थिक द्रव्यार्थिक दोउनिका अर्थको संग्रह करनवारो प्रमाण रूप निर्देश है ऐसो कहिये है ॥ ५ ॥ प्रश्न, जीव कौनको स्वामी है ? उत्तर रूप वार्तिक—तत्परिणामस्यभेदाग्नेरौष्ण्यवत् ॥ ६ ॥ अर्थ—निश्चयतैं वा परिणामको स्वामी भेदतैं अग्निके उष्णपणाके समान है। अर्थ—सो है परिणाम जाको सो तत्परिणाम है अर तत्परिणामको जो यो स्वामी सो जीव कहिये। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, कथंचित् परिणाम परिणामीका भेदतैं भेद कल्पनाको सद्भाव है यातै। सो अग्निके उष्णपणांके समान है सो ऐसे हैं कि जैसैं उष्णपणां रूप स्वभावात्मक अग्निके दहन पचन स्वेदन आदि क्रियाको सामर्थ्यरूप औधाय जो है तानैं भेदकरि कहिये है ॥६॥ वार्तिक—व्यवहारनयवशात्सर्वेषाम् ॥ ७॥ अर्थ—व्यवहार नयका वशतै सर्वको स्वामी है। अर्थ-जीवादिक सर्व ही पदार्थ जे हैं तिनको व्यवहार नयका वशतैं जीव स्वामी प्रश्न, जीवको साधन कहा है ? उत्तररूप वार्त्तिक—पारिणामिकभावसाधनो निश्चयतः ॥ ८ ॥ अर्थ—निश्चयतैं परिणामिक भाव साधन है। टीकार्थ—जो यो जीवात्मा पारिणामिक है सो ही परिणाम साधन रूप

जीव है यातैं यो निश्चय नय करि परिणाम स्वरूप जीवात्मा करि ही अपना स्वरूपनें सर्वकाल प्राप्त होय है ॥८॥ वार्तिक-औपशमिकादिभावसाधनश्च व्यवहारात् ॥९॥ अर्थ-व्यवहारतै औपशमिकादि भाव साधन है। अर्थ--व्यवहार नयका वशतैं औपशमिकादि भाव है साधन जाकै ऐसो जीव है ऐसे कहिये है अर च शब्द करि शुक्र शोणित आहार आदि है साधन जाके ऐसो है। प्रश्न, कहा अधिकरण जीव है? उत्तररूप वार्तिक—स्वप्रदेशाधिकरणो निश्चयतः ॥ १० ॥ अर्थ--निश्चयतें अपने प्रदेश अधिकरण है। अर्थ--जो यो निज प्रदेशनिकरि असंख्यात स्वरूप है सो कर्म कृत शरीर परिमाणके अनुकूल पणानै होतां सन्ता भी नहीं प्राप्त भयो है हीनाधिक भाव जाके ऐसो है यातैं स्वप्रदेशाधिकरण जीव है याको दृष्टान्त ऐसो है कि जैसैं अपना स्वरूपमें है प्रतिष्ठा जाकी ऐसा आकाशके समान है ॥ १० ॥ वार्तिक—व्यवहारतः शरीराद्यधिष्ठानः ॥ ११ ॥ अर्थ—व्यवहार तै शरीर आदि अधिकरण है। भावार्थ—व्यवहार नयका वशतै आत्मा कर्म करि ग्रहण कियो शरीर है अधिकरण जाको ऐसो तिष्ठै है ऐसैं कहिये है ॥ ११ ॥ प्रश्न, कहा स्थितिमान जीव है? उत्तर, रूप वार्तिक—स्थितिस्तस्य द्रव्यपर्यायापेक्षानाद्यनवशानासमयादिका च ॥ १२ ॥ अर्थ—द्रव्यकी अपेक्षा अनादि अनंती है अर पर्यायकी अपेक्षा समयादिका जीवकी स्थिति है। भावार्थ—या जीवकी स्थिति द्रव्यकी अर पर्यायकी अपेक्षा करि दोय प्रकार कल्पना करिये है सो ऐसैं है कि द्रव्यकी अपेक्षा करि तो अनादि अनंत है क्योंकि जीव द्रव्य निश्चय करि चैतन्य जीव द्रव्य उपयोग असंख्यात प्रदेशतैं सामान्य उपदेशतैं सर्व काल नहीं च्युत होय है। अर पर्याय अन्य अन्य है तिनकी अपेक्षा करि समय आदि परिणामवान स्थिति कल्पना करिये है ॥ १२ ॥ प्रश्न, या जीव को विधान कहा है? उत्तररूप वार्तिक--नारकादिसंख्येयासंख्येयानन्तप्रकारो जीवव्यवहारात्। अर्थ—व्यवहारतैं संख्यात असंख्यात अनंत प्रकार जीव है। अर्थ--व्यवहार नयकी अपेक्षा करि

जीवका नारकादिक संख्यात असंख्यात अनंत प्रकार भेदनें प्राप्त होय है अर निश्चय नयकी अपेक्षा जीवके प्रकार नहीं है ॥ १३ ॥ प्रश्न, अजीवके भी निर्देशादिक कहो ? उत्तररूप वार्तिक--तथा परेषामागमाविरोधान्निर्देशादिवचनम् ॥ १४ ॥ अर्थ—तैसैं ही जीवतैं अन्य अजीवादिक जे हैं तिनके आगमका अविरोधतैं निर्देशादि वचन है । टीकार्थ—या ही प्रकार करि आगमतैं अविरोध करि जीवतैं अन्य अजीवादिक जे हैं तिनका निर्देशादिक कहनैं योग्य है सो ऐसैं है कि प्रथम ही अजीव जो है सो निश्चय नयकरि दश प्राण रूप पर्याय रहित है अर व्यवहार नय करि नामादिक हैं ऐसें निर्देश है अर निश्चय करि अजीवको स्वामी अजीव ही है । अर व्यवहार नयकरि भोक्ता पणां करि जीव है । अर पुद्गल स्कंदनिके अणुत्वादिकनिको साधन भेदादिक है अथवा भेद आदि है निमित्त जानैं ऐसें कालादिक है । अर धर्म अधर्म काल आकाश भेद जे हैं तिनके गति स्थिति वर्त्तना अवगाह रूप हेतुपणों पारिणामिक है सो अगुरु लघु गुण करि अनुग्रहरूप कियो हुवो है अर वो परिणमन स्वात्मभूत सत्ता सम्बन्ध रूप है अर्थात् निज स्वरूप सत्ताकूं नहीं छांडै है अर व्यवहार नयतैं गति आदिका हेतु जीव पुद्गल आदि है क्योंकि जीव पुद्गलकी अपेक्षा पणांतैं गति आदिका हेतु पणांको प्रगटता धर्मादिकनिमें होय है । बहुरि अधिकरण सर्व द्रव्यनिके निज स्वरूप है क्योंकि सर्व द्रव्यनिके निज स्वरूपमें ही अवस्थितपणों है यातैं अथवा अधिकरण दोय प्रकार है तिनमें आकाश तो साधरणरूप है अर जलादिकनिको घटादिक असाधारणरूप है बहुरि स्थिति जो है सो द्रव्यकी अपेक्षा करि अनादि अनिधन है अर पर्यायकी अपेक्षा करि एक समय आदिकी है अर विधान जो है सो धर्म अधर्म आकाश ये तीन जे हैं तिनको प्रतिनियत अनादि परिणामिक द्रव्यरूप अर्थका उपदेशतैं एक एक ही है । अर पर्यायार्थिक नयका उपदेशतैं अनेक है सो संख्यात असंख्यात अनन्त द्रव्यनिकी गति स्थिति अवगाहन आदि उपकाररूप पर्यायको उप-

देशतैं कथंचित् एक है अर कथंचित् संख्यात है अर कथंचित् असंख्यात है कथंचित् अनंत है. बहुरि काल जो है सो पर निमित्तैं संख्यातो असंख्यातो अनन्तो है। बहुरि पुद्गल द्रव्य जो है सो रूप स्पर्श आदि पारिणामिक द्रव्यरूप अर्थका उपदेशतैं एक है अर भिन्न भिन्न नियमरूप एक अनेक संख्यात असंख्यात अनन्त प्रदेशरूप पर्यायका उपदेशतैं कथंचित् अनेक है कथंचित् संख्यात है कथंचित् असंख्यात है कथंचित् अनन्त है ऐसे जीवादिक छह द्रव्यनिका निर्देशादिक कह करि सप्त तत्वनिका भी कहनेंकी इच्छाकरि आश्रवका निर्देशादिक कहै है कि काय वचन मनको क्रियारूप परणाम जो है सो आश्रव है अथवा नामादिक भी आश्रव है ऐसें तो निर्देश है अर याको स्वामी जीव है अथवा कर्म है क्योंकि याकें कर्म निमित्त पणों है यातैं। बहुरि याको साधन आश्रव ही है क्योंकि शुद्धके आश्रवको अभाव है यातैं अथवा कर्म है क्योंकि कर्मनें होतां सता ही आश्रवको प्रवृत्ति है यातें। बहुरि आश्रव करि सहित हो यो जीव अधिकरण है क्योंकि आश्रव सहित आत्माके विषें ही आश्रवको फल देखिये है यातें अर कर्मके विषें तथा कर्म कृत कायादिकके विषैं फल उपचारतैं है। बहुरि स्थिति जो है सो मन कृत तथा वचन कृत आश्रवकी तो जघन्यकरि एक समय है अर उत्कर्षकरि अंतर्मुहूर्त है अर काय कृत आश्रवकी स्थिति जघन्यकरि तो अंतर्मुहूर्त अर उत्कर्षकरि अनंत काल है तामें पुद्गल परिवर्तन असंख्याता होय है। भावार्थ—इहां स्थिति आश्रवके निरंतर होनेको कही जाननो। बहुरि विधान जो है सो वचन कृतका तथा मन कृतका सत्य मृषा उभय अनुभय भेदतें चार चार विकल्प रूप संख्यावान है अर कायाश्रव औदारिक वैक्रियक आहारक औदारिक मिश्र वैक्रियक मिश्र आहारक मिश्र कार्माण भेदतें सप्त प्रकार है तहां औदारिक औदारिक मिश्र तो मनुष्य तिर्यञ्चनिके होय है और वैक्रियक वैक्रियक मिश्र देव नारकीनिके होय है अर आहारक आहारक मिश्र ऋद्धि प्राप्त संयती-

निके होय है अर कार्माण कायाश्रव विग्रह गतिनिं प्राप्त भया प्राणोमात्रकै है अर समुद्घातनें प्राप्त भया केवलिनिके है अथवा आश्रवका प्रकार अशुभ अर शुभ रूप है तिनमें कायिक आश्रव जो हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म आदि जे हैं तिनके विषै प्रवृत्ति निवृत्ति संज्ञक है अर्थात् इनि पंच पापनिमें प्रवृत्ति रूप तो अशुभ है अर निवृत्ति रूप शुभ है अर वाचिक आश्रव कठोर पुकार चुगली परका उपघातक प्रलाप आदिके विषै प्रवृत्ति रूप तो अशुभ संज्ञक है अर निवृत्ति रूप शुभ संज्ञक है अर मानस आश्रव मिथ्या श्रुत ईर्षा ग्लानि आदिके विषैं मनकी प्रवृत्ति रूप तो अशुभ संज्ञक है अर निवृत्ति रूप शुभ संज्ञक है। बहुरि बंधका निर्देशादिक कहै है कि जीवका अर कर्मका प्रदेशांको परस्पर मिलाप जो है सो बंध है अथवा नामादिक बंध है यो तो निर्देश है सो बंध जीवके है क्योंकि जीवके विषें ही बंधका फलको दर्शन है यातैं अथवा कर्मके बंध है क्योंकि बंधके दृष्टिपणों है यातैं अर्थात् बंधको स्वामी जीव है अर मिथ्यादर्शन अविरत प्रमाद कषाय योग जे हैं ते बंधका साधन है अथवा तिनरूप परिणम्यो आत्मा जो है सो साधन है अर स्वामी संबंधके योग्य ही वस्तुको अधिकरण होय है क्योंकि वक्ताकी इच्छातैं कारककी प्रवृत्ति है यातें अर बंधकी स्थिति जघन्य उत्कृष्ट रूप है तिनमें जघन्य स्थिति तो ऐसें है वेदनीय की तो द्वादश मुहूर्त है अर नाम गोत्रकी आठ मुहूर्त है अर अवशेष पांच कर्म जे हैं तिनकी अंतमुहूर्त की है अर उत्कृष्ट ऐसें है कि ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय जे हैं तिनकी तो तीस कोटा कोटि सागरोपम है अर मोहिनीय की सत्तर कोटा कोटि सागरोपम है अर नामकी तथा गोत्रकी बीस कोटा कोटि सागरोपम है अर आयुकी तेतीस सागरोपम है अथवा अभव्यनिकै बंध संतान रूप पर्यायका उपदेशतैं कथंचित् अनादि अनिधन है अर जे अनंतकाल करि भी नहीं सिद्ध होहिंगे तिन किंतनेक भव्यनिकै भी अनादि अनिधन है अर ज्ञानावरणादि कर्मका उत्पाद विनाशतैं कथंचित् सादि सनिधन है अर विधान जो है सो

बंध सामान्यका उपदेशतें तो एक है अर शुभ अशुभका भेदतें दोय प्रकार है अर द्रव्य भाव उभय-
का विकल्पतें तीन प्रकार है अर प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशका भेदतें च्यार प्रकार है अर मिथ्या-
दर्शनादि हेतुका भेदतें पांच प्रकार है अर नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि षट् प्रकार है अर
ते ही षट् भेद भव आदिकरि सात प्रकार है अर ज्ञानावरणादि मूल प्रकृतिका भेदतें आठ
प्रकार है ऐसें हेतु फलका भेदतें संख्यात असंख्यात अनंत विकल्प है। बहुरि संवरका निर्देशादिक
कहै है कि आश्रवका निरोध जो है सो संवर है अथवा नामादिक संवर है यो तो निर्देश है अर
संवरको स्वामी जीव है अथवा कर्म है क्योंकि निरोधको रुकने योग्य वस्तु विषयपणां है यातें अर
संवरका साधन गुप्ति समिति है धर्म आदि है अर स्वामी संबंधके योग्य ही अधिकरण होय है ऐसें
कह्यो है यातें आत्मा ही है। अर संवरकी स्थिति जघन्य करि अंतर्मुहूर्त है अर उत्कृष्ट किंचित् घाटि
कोटि पूर्व है अर संवरको विधान एक आदि अष्टोत्तर शत प्रकार है ता पीछें उत्तर भेद संख्या-
तादिक विकल्प रूप निरोध निरोधकका भेदतें जानवे योग्य है तिनमें अष्टोत्तर शत प्रकार कहिये
है कि तीन गुप्ति पांच समिति दशविध धर्म द्वादश अनुप्रेक्षा द्वाविंशति परीषह द्वादश विधि तप
नव विधि प्रायश्चित चतुर्विध विनय दश विध वैयावृत्य पंच विध स्वाध्याय दोय विध व्युत्सर्ग दश
विधि धर्मध्यान च्यार विधि तथा च्यार प्रकार शुक्ल ध्यान ऐसें एक सौ आठ प्रकार संवरका
जानना। अर निर्जराके निर्देशादिक कहै है कि यथा विपाकतें कहिये स्वयमेव कर्मके पकनेतें तथा
तपतें पकनेतें उपभुक्त वीर्य कहिये शक्ति हीन भयो कर्म जो है सो निर्जरा है अथवा नामादिक
निर्जरा है सो निर्जरा आत्माके है तथा कर्मके है क्योंकि द्रव्य भावको भेद है यातें अर्थात् द्रव्य
निर्जरा तो कर्मको है अर भाव निर्जरा आत्माके है। बहुरि साधन तप है तथा यथा कर्म विपाक है
अर अधिकरण आत्मा है अथवा निर्जरा स्वरूप ही अधिकरण है अर स्थिति जघन्य करि तो एक

समय है अर उत्कृष्ट करि अंतर्मुहूर्त है सो ध्यानकी अपेक्षाकरि है अर्थात् परिपूर्ण ध्यानतैं समस्त
कर्मनिकी निर्जराकालकी अपेक्षा जघन्य करि तो एक समयमें ही होय अर कालकी अपेक्षा उत्कर्ष
करि अंतर्मुहूर्तमें होय सो सादि सपर्यवसान है अर विधान सामान्यतैं एक है अर यथा काल
प्रक्रमिक भेदतैं निर्जरा दोय प्रकार है अर्थात् एक सविपाक है दूसरी अविपाक है अर कर्म
मूल प्रकृतिका भेदतैं अष्ट प्रकार है ऐसे कर्म रसका निर्जरा वाका भेदतैं संख्यात असंख्यात
अनंत विकल्प है अबै मोक्षका निर्देशादिक कहै है कि समस्त कर्मको संक्षय जो है सो मोक्ष
है अथवा नामादिक मोक्ष है अर मोक्षको स्वामी परमात्मा है अथवा मोक्ष स्वरूप ही
स्वामी है अर साधन सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र है अर स्वामी संबंधके योग्य अधिकरण है
अर्थात् परमात्मा अधिकरण है क्योंकि मोक्षके परमात्म विषय पणौं है यातैं अर मोक्षकी स्थिति
सादि अनिधन है अर विधान सामान्य उपदेशतैं एक मोक्ष है अर द्रव्य भाव छोड़नैं लायकके
भेदतैं अनेक है ऐसैं सप्त तत्वनिका निर्देशादिक दिखाय सम्यग्दर्शनादिकनिके निर्देशादिक कहै
है कि तत्वार्थ श्रद्धान जो है सो सम्यग्दर्शनको निर्देश है तथा नामादिक निर्देश है सो आत्माके
है अर्थात् सम्यग्दर्शनको स्वामी आत्मा है । अथवा सम्यग्दर्शनको स्वामी सम्यग्दर्शन ही है अर
दर्शन मोहका उपशमादिक साधन है अथवा वाह्य उपदेशादिक है अथवा अपनो स्वरूप है अर
स्वामि सम्बन्धको भजने वारो आत्मा अधिकरण है अर स्थिति जघन्य करि अन्तर्मुहूर्त है अर उत्कर्ष
करि किञ्चित् अधिक छ्याछठि सागरोपम है अथवा औपशमिक क्षायोपशमिक तो सादि सनि-
धन है अर क्षायिक सादि अनिधन है अर विधान सामान्यतैं एक है तथा निसर्गज अधिगमज
भेदतैं दोय प्रकार है अर औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक विकल्पतैं तीन प्रकार है ऐसैं अध्य- १०
वसानका भेदत संख्यात असंख्यात अनंत विकल्प रूप है। बहुरि ज्ञानका निर्देशादिक कहै है जीवा

दिक तत्वनिको प्रकाशन जो है सो ज्ञान है यो ज्ञानको निर्देश है अथवा नामादिक है सो निर्देश सो ज्ञान आत्माकै है अर्थात् ज्ञानको स्वामी आत्मा है अथवा अपना आकारको स्वामी है अर ज्ञानावरणादिक कर्मनिका क्षयोपशमादिक साधन है अथवा अपना प्रगट होना रूप शक्ति आपमें है सो साधन है अर अधिकरण आत्मा है अथवा अपनौं आकार है सो अधिकरण है क्योंकि अपना आकारमें ही अधिष्ठान है यातैं अर स्थिति दोय प्रकार है कि क्षायोपशमिक ज्ञान च्यार प्रकार है सो तो सादि सनिधन है अर क्षायिक ज्ञान सादि अनिधन है अर विधान सामान्यतैं एक ज्ञान है अर प्रत्यक्ष परोक्ष भेदतैं दोय प्रकार है अर द्रव्य गुण पर्यायरूप विषयभेदतैं तीन प्रकार है अर नामादिक विकल्पतैं च्यार प्रकार है अर मत्यादिक भेदतैं पंच प्रकार है ऐसैं ज्ञेयाकार रूप परिणतिका भेदतैं संख्यात असंख्यात अनंत विकल्प है। बहुरि चारित्रका निर्देशादिक कहै है कि कर्म ग्रहणका कारणकी निवृत्ति जो है सो चारित्र है अथवा नामादिक है सो चारित्र है ऐसैं तो निर्देश है सो चारित्र आत्माकै है अर्थात् चारित्रको स्वामी आत्मा है। अथवा चारित्र निज स्वरूपको स्वामी है अर चारित्र मोहका उपशमादिक है ते साधन है अथवा निज शक्ति जो है सो साधन है अर स्वामी सम्बन्धको भजनें वारो आत्मा जो है सो अधिकरण है अर स्थिति जो है सो जघन्य करि अंतरमुहूर्त है अर उत्कर्ष करि किञ्चित् घाटि कोटि पूर्व है अथवा औपशमिक चारित्र जो है सो तो सादि सपर्यवसान है अर क्षायिक चारित्र जो है सो शुद्धि व्यक्तिकी अपेक्षा करि सादि अनिधन है अर विधान जो है सो सामान्यतैं एक है अर बाह्य अभ्यन्तर त्यागका भेदतैं दोय प्रकार है अर औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक विकल्पतैं तीन प्रकार है अर यमका च्यार भेदतैं च्यार प्रकार है अर सामायिकादि विकल्पतैं पांच प्रकार है ऐसै परिणामका भेदतैं संख्यात असंख्यात अनंत विकल्प रूप है ॥ १४ ॥ अबै आठमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि —प्रश्न, निर्दे-

शादिकनिकरि ही जीवादिकनिको जानपन होय है अथवा और भी जाननेंको उपाय है ऐसें प्रश्न, करतोंसंता आचार्य कहै है। सूत्रम्—

सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालांतरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥

अर्थ—सत्संख्या क्षेत्र स्पर्शन काल अन्तर भाव अल्प बहुत्वरूप आठ अनुयोग जे हैं तिन करि भी जीवादिकनिको जानपन होय है। सूत्रमें यो अधिगम पद नहीं है तथापि अर्थके संबन्धतैं अनुप्रवर्तै है। वार्तिक—प्रशंसादिषु सच्छब्दवृत्तेर्विवक्षातः सद्भावग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रशंसादि अर्थनिके विषैं सत् शब्दकी प्रवृत्ति है यातैं वक्ताकी इच्छातैं सद्भावको ग्रहण है। टीकार्थ—सत् शब्द प्रशंसादिक अर्थनिके विषैं प्रवर्तै है सो ऐसे है कि तिनमें प्रथम तो प्रशंसा अर्थमें है कि सत्पुरुष है, सत् अश्व है। इहां सत् शब्द प्रशंसा वाचक है यातैं प्रशस्त पुरुष तथा प्रशस्त अश्व ऐसा अर्थ होय है अर कहूं अस्तित्वमें है कि सद्भावमें है जैसे सत् घट है सत् पट है इहां विद्यमान घट विद्यमान पट ऐसा अर्थ होय है। अर कहूं प्रतिज्ञारूप किया अर्थमें है कि प्रव्रजितः सन् कथं अनृतं ब्रूयात् याको अर्थ ऐसो है कि दीक्षित भयो सन्तो असत्य कैसें कहो इहां प्रव्रजितः शब्द है सो दीक्षितको वाचक है। इहां सत् शब्दका योगतैं दीक्षाकी प्रतिज्ञा युक्त ऐसो अर्थ होय है अर आदर अर्थमें है कि सत्कृत्य अतिथीन् भोजयति याको अर्थ ऐसो है कि आदर करि अतिथीनिनें भोजन करावै है। इहां सत्कृत्य शब्द है सो आदर करि ऐसा अर्थको वाचक है तिन अर्थनिमें सूत्र इहा वक्ताकी इच्छातैं सद्भाव अर्थ ग्रहण करिये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—अव्यभिचारात्सर्वमूलत्वाच्च तस्यादौ वचनम् ॥२॥ अर्थ—अव्यभिचारतैं सर्वका मूलपणातैं सत्शब्दको आदिके विषैं वचन है। टीकार्थ—यो सत्व कहिये सत् पणौं, जो है सो सब पदार्थका विषय पणातैं अव्यभिचारी है

क्योंकि ऐसो कोऊ भी पदार्थ नहीं है जो सत्पणाने त्यागै है अर जो त्यागे है तो वचनका अर विज्ञानका गोचर पणातैं रहित होय है अर रूपादिक गुण तथा ज्ञानादिक गुण कितनेक द्रव्यनिमे है कितनेक द्रव्यनिमे नहीं है अर्थात् रूपादिक गुण तो पुद्गलमें ही है अन्य पांच द्रव्यनिमे नहीं हैं अर ज्ञानादिक गुण जीवमें ही है अन्य पांच द्रव्यनिमें नहीं है अर परिस्पंदस्वरूप क्रिया जीव पुद्गलमें ही है अन्य चार द्रव्यनिमे नहीं है यातै सर्वमें व्यापने वारी नहीं अर विचार करने योग्य सर्व द्रव्य जे है तिनको मूल अस्तित्व है ता कारण करि निश्चित वस्तुके ही उत्तर सख्यादिक जे हैं ते जुड़े है कि संभवै है यातैं अस्तित्वको वाचक सत् शब्द जो है सो आदिमें करिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—सतः परिणामोपलब्धेः संख्योपदेशः ॥ ३ ॥ अर्थ—परिणामकी उपलब्धि है यातैं सत् शब्दके अनंतर संख्याको उपदेश है। टीकार्थ—विद्यमान वस्तुके ही संख्यात असंख्यात अनन्त परिणामकी उपलब्धि है यातैं सख्यातनें आदि लेय परिणाम जे हैं तिनमें कोई परिणामका अवधारणके अर्थि भेद है लक्षण जाको ऐसी संख्या उपदेश करिये है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—निर्ज्ञातसंख्यस्य निवासविप्रतिपत्तेः क्षेत्रावधानम् ॥४॥ अर्थ—जानी है संख्या जाकी ताका निवासमें विवाद होय है यातें संख्याके अनन्तर क्षेत्रको विधान है। भावार्थ—निश्चय करि जानी है संख्या जाकी ऐसा पदार्थको निवास ऊपर है कि नीचै है कि तिर्यक् है ऐसैं विवाद होय है यातै उपरि आदि कोऊ एक स्थानमें निवासका निश्चयके अर्थ क्षेत्रको नाम है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—अवस्थाविशेषस्य वैचित्र्यात् त्रिकालविषयोपश्लेष निश्चयार्थं स्पर्शनम् ॥ ५ ॥ अर्थ—अवस्था विशेषके विचित्र पणातैं त्रिकाल विषय मिलापका निश्चयके अर्थि क्षेत्रके अनंतर स्पर्शन शब्द है। टीकार्थ—अवस्थाविशेष त्र्यस्त्र चतुरस्त्र आदि जो है सो विचित्र है ताको त्रिकाल विषय मिलाप जो है सो स्पर्शन है कोऊ द्रव्यके तो वो क्षेत्र ही स्पर्शन है अर्थात् धर्म द्रव्य अधर्म द्रव्य आकाश द्रव्य काल द्रव्यकै तो जो

लोकाकाश क्षेत्र है सो ही स्पर्शन है अर कोऊके द्रव्य ही स्पर्शन है अर्थात् द्रव्य द्रव्य प्रति नियत गुण जे हैं तिनके वो वो द्रव्य ही स्पर्शन है अर कोऊके षट् राजू तथा अष्ट राजू स्पर्शन है अर्थात् सोलमा स्वर्ग निवासीदेव अधोगमन करे तो मध्यलोक पर्यन्त षट् राजू होय अथवा तीसरा नरक पर्यन्त गमन करै तो आठ राजू होय तातैं षट् राजू आठ राजू स्पर्शन कह्यो है ॥५॥ वार्त्तिक-स्थितिमतोऽवधिपरिच्छेदार्थं कालोपादानम् ॥ ६॥ अर्थ—स्थिति मानकी अवधिका परिज्ञानके अर्थि काल पदको ग्रहण है। टीकार्थ—स्थितिमान पदार्थकी अवधि जाननें योग्य है यातैं कालको उपादान करिये है ॥ ६ ॥ वार्तिक—अन्तरशब्दस्यानेकार्थवृत्तेश्छिद्रमध्यविरहेष्वन्यतमग्रहणम् ॥ ७ ॥ अर्थ—अन्तर शब्दकी अनेक अर्थमें प्रवृत्ति है यातैं छिद्र मध्य विरह अर्थनिमें कोऊ एक अर्थको ग्रहण है। टीकार्थ—अन्तर शब्दको बहुत अर्थनिके विषैं दृष्ट प्रयोग है कि कहु छिद्र अर्थमें वर्त्तै है कि सांतरं कष्टं याको अर्थ ऐसो है कि सांतर कहिये छिद्र सहित काष्ट है। इहां अन्तर शब्द छिद्र वाची है अर कहू अन्यत्व अर्थमें वर्तै है कि द्रव्याणि द्रव्यांतरमारभन्ते याको अर्थ ऐसो है कि द्रव्य द्रव्यांतरनें रचै है, इहां अन्तर शब्द अन्यात्व वाची है अर कहू मध्य अर्थमें वर्तै है कि हिमवत्सागरान्तरः याको अर्थ ऐसो है कि हिमवान पर्वतके अर सागरके मध्य है, इहां अन्तर शब्द मध्य वाची है अर कहूं सामीप्य अर्थमें वर्तै है कि स्फटिकस्यशुक्लरक्ताद्यन्तरस्य तद्वर्णता याको अर्थ ऐसो है कि शुक्ल रक्त आदिके समीप तिष्ठता स्फटिकके तद्वर्णता होय है इहां अन्तर शब्द समीपवाची है। अर कहू विशेष अर्थमे कि वर्त्तै है कि "वाजिवारणलोहानां काष्टपाषाणवाससां। नारीपुरुषतोयानामन्तरमहदन्तरम्" याको अर्थ ऐसो है कि अश्व गज लोह जे हैं तिनके अर काष्ट पाषाण जे हैं तिनके अर नारी पुरुष नीर जे हैं तिनके अन्तर जो है सो महान् अंतर है, इहां अंतर शब्द महान् विशेष वाची है अर कहू वहिर योग अर्थमें वर्तै है कि ग्रामस्यांतरे कूपा याको अर्थ ऐसो

है कि ग्रामका बाह्य प्रदेशमें कूप है, इहां अन्तर शब्द नगरकी बाह्य भूमि वाची है अर कहूं उपसंख्यान अर्थमें वर्ते है कि अंतरे शाटका परिधानिया याको अर्थ ऐसो है कि या साड़ी धारण करनें योग्य है इहां अंतर शब्द उपसंख्यान अर्थको वाची है कि धारण करनेंको वाची है अर कहूं विरह अर्थमें वर्ते है कि अनभिप्रेतश्रोतृजनांतरे मंत्रं मंत्रयते याको अर्थ ऐसो है कि नहीं अभिप्रायकूं जाननें वारे श्रोता जननिका विरहके विषैं मंत्रने मंत्रै है कि रचै है इहां अन्तर शब्द विरह वाची है इनि अर्थनि विषैं सूं इहां छिद्र अर्थ तथा मध्य अर्थ विरह अर्थमें सूं कोऊ अर्थ जानवे योग्य है ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—अनुपहतवीर्यस्य न्यग्भावे पुनरुद्भूति दर्शनात्तद्वचनम् ॥ ८ ॥ अर्थ—नहीं हण्यो है वीर्य जाको ताकी पर्यायका अभावनें होतां संता बहुरि वाही पर्यायका उपपादका दर्शनतैं अन्तर वचन प्रवर्ते है। टीकार्थ—नहीं क्षीण भयो है वीर्य जाकी ऐसो द्रव्य जो है ताकै निमित्तका वशतैं कोऊ पर्यायका अभावनें होतां संता बहुरि निमित्तांतरतैं वाही पर्यायका प्रगट होनैंका दर्शनतैं उन दोऊ पर्यायनिका विरह जो है सो अंतर है ऐसे कहिये है ॥ ८ ॥ वार्त्तिक—परिणाम प्रकारनिर्णयार्थं भाववचनम् ॥ ९ ॥ अर्थ—परिणामके जे प्रकार तिनके निर्णयके अर्थि भावको वचन है। टीकार्थ—औपशमिकादि परिणामका प्रकार निर्णय करने योग्य है, यातैं भाववचन करिये है॥९॥ वार्तिक—संख्याताद्यन्यतमनिश्चयेष्वन्योन्यविशेषप्रतिपत्यर्थमल्पबहुत्ववचनम् ॥ १० ॥ अर्थ—संख्यातादिकनिमें कोऊ एकका निश्चय होतां संता ही परस्पर विशेषकी प्रतीतिके अर्थि अल्प बहुत्व वचन है। टीकार्थ—संख्यातादिकनिके विषैं कोऊ परिणाम करि निश्चित जे हैं तिनके परस्पर विशेषका ज्ञानके अर्थि अल्प बहुत्व वचन करिये है, याको उदाहरण ऐसो है कि ये इनतैं अल्प है अर ये इनतैं बहुत्व है ॥ १० ॥ प्रश्नरूप वार्तिक—निर्देशवचनात्सत्वप्रसिद्धेरसद्ग्रहणम् ॥ ११ ॥ अर्थ—प्रश्न, निर्देश वचनतैं सत्पणांको सिद्धिनें होतां संता बहुरि सत् वचन अनर्थक है।

टीकार्थ—निर्देशवचनतैं ही सत् पणौं सिद्ध है क्योंकि असत्को निर्देश ही नहीं होय है यातैं इहां सत् वचनको ग्रहण जो है सो असत् ग्रहण है कि अनर्थक है ॥ ११ ॥ उत्तररूप वार्तिक—न वा क्वास्ति क्व नास्तीति चतुर्दशमार्गणास्थानविशेषणार्थत्वात् ॥ १२ ॥ अर्थ—उत्तर अनर्थक नहीं है क्योंकि कहूं है कहूं नहीं है ऐसें चतुर्दश मार्गणा स्थानको विशेषणार्थ पणौं है यातैं टीकार्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, या सत् वचन करि सम्यग्दर्शनादिकको सामान्य करि सत् पणौं नहीं कहिये है। प्रश्न, तो कहा कहिये है ? उत्तर, गति इन्द्रिय काय आदि चतुर्दश मार्गणा स्थान जे हैं तिनके विषैं सम्यग्दर्शनादिक कहां हैं कहां नहीं हैं ऐसा विशेष करनेके अर्थि सत् वचन है ॥ १२ ॥ वार्त्तिक—सर्वभावाधिगमहेतुत्वाच्च ॥ १३ ॥ अर्थ—अथवा सर्व पर्यायरूप भावनिकूं जाननेंका हेतुपणातैं सत् वचनके सार्थक पणौं है। टीकार्थ--अथवा अधिकाररूप किये जे सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक तिनको तो निर्देश वचन करि अस्तित्व प्राप्त भयो परंतु नहीं अधिकाररूप किया जे जीवका पर्याय क्रोधादिक अर अजीवका पर्याय वर्णादिक तथा घटादिक है तिनका अस्तित्वनें जनावनेके अर्थि बहुरि सत् वचन कह्यो है ॥ १३ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अनधिकृतत्वादिति चेन्न सामर्थ्यात् ॥१४॥ अर्थ--प्रश्न पर्यायनिके अधिकृतपणौं नहीं है यातैं पर्यायको ग्रहण नहीं होय है ? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि सत् वचन दूसरे कहनेंरूप समर्थ्यतैं पर्यायको ग्रहण होय है। टीकार्थ--प्रश्न,वे क्रोधादिक तथा वर्णादिक जे हैं ते अधिकार रूप नहीं है तातैं बहुरि तिनको ग्रहण युक्त नहीं अर्थात् अधिकारमें नहीं आयाको ग्रहण पुनरुक्त शब्दतैं भी नहीं होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर,सामर्थ्यतैं तिनको भी ग्रहण होय है। भवार्थ। दूसरा कहनेंकी सामर्थ्यतैं ही ग्रहण होय है ॥ १४ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—विधानग्रहणात्संख्यासिद्धिरिति चेन्न भेदगणनार्थत्वात् ॥ १५ ॥ अर्थ—प्रश्न, विधानका ग्रहणातैं संख्याकी

सिद्धि है? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि विधानकेभी भेदनिकी गणनाको प्रयोजन पणौं है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, विधानका ग्रहणतैं ही संख्याकी सिद्धि है। उत्तर, सो नहीं है? प्रश्न, कहा कारण—उत्तर, भेदनिकी गणनाका प्रयोजन पणातैं अर्थात् प्रकारकी गणनाके विषैं ही ता प्रकारका भेदकी गणनाके अर्थि यो संख्या शब्द कहिये है याको उदाहरण ऐसो है कि उपशम सम्यग्दृष्टि इतने हैं क्षायिक सम्यग्दृष्टि इतनें हैं। भावार्थ सम्यग्दर्शनकैं औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक तो विधान है अर तिन भेदनिकी प्रत्येक गणना जो है सो संख्या है ॥ १५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक--क्षेत्राधिकरणयोरभेद इति चेन्नोक्तत्वात् ॥१६॥ अर्थ—प्रश्न, क्षेत्रके और अधिकरणके अभेद है, उत्तर, सो नहीं है क्योंकि याकैं उक्तपणौं है यातैं कि दोउनिके सामान्य विशेषपणौं दिखायो है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न, जो ही अधिकरण है सो ही क्षेत्र है यातैं दोउनिमें भिन्न ग्रहण अनर्थक है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, या प्रश्नके उक्तार्थ पणौं है यातैं सो यो कह्यो है कि सर्व भावनिको जनावनेंरूप प्रयोजन पणौं अधिकरणके पूर्वं कह्यो है यातैं अर्थात् सामान्यरूप तो अधिकरण है अर विशेषरूप क्षेत्र है इतनौं ही दोउनिमें भेद है ॥ १६ ॥ प्रश्नरूप वार्तिक--क्षेत्रे सति स्पर्शनोपलब्धेरंबुघटवत्पृथग्ग्रहणम् ॥ १७ ॥ अर्थ--प्रश्न, क्षेत्रनें होतां संता स्पर्शकी अनुपलब्धितैं जल घटके समान स्पर्शनको ग्रहण अनर्थक है। टीकार्थ---प्रश्न, जैसै इहां घटरूप क्षेत्रनें होतां संता जलको अवस्थान है यातैं सो नियमतैं घट स्पर्शन है अर या नहीं है कि घटमें जल तो तिष्ठै अर घटनें नहीं स्पर्शै तथा आकाशरूप क्षेत्रमें जीवको अवस्थान है सो नियमतैं आकाश स्पर्शन है यातैं क्षेत्रका कथन करि ही स्पर्शनका अर्थको ग्रहणपणौं है स्पर्शनको ग्रहण अनर्थक है ॥ १७ ॥ उत्तर रूप वार्त्तिक--न वा विषयवाचित्वात् ॥१८॥ अर्थ--अथवा दोउनिके विषय वाची पणौं है यातैं दोष नहीं हैं क्योंकि स्पर्शन तो सामान्य विषय वाची है अर क्षेत्रविशेष विषय वाची है यातैं दोउनिमें

भेद है। टीकार्थ—अथवा यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, एक देश विषय वाची पणातैं क्योंकि एकदेश विषयवाची क्षेत्र शब्द है जैसैं राजा जनपद क्षेत्रमें तिष्ठै हैं परंतु समस्त जनपदका क्षेत्रनें नहीं स्पर्शे है एक देशनें ही स्पर्शे है अर समस्त विषय स्पर्शन है अर्थात् घटरूप क्षेत्रको जलके स्पर्शन है सो तो स्पर्शन है अर जनपदरूप क्षेत्रको राजाके स्पर्शन है सो स्पर्शन नहीं है। भावार्थ--सामान्य विशेषको भेद है कि क्षेत्र तो विशेष है अर स्पर्शन सामान्य है ॥१८॥ तथा वार्तिक--त्रैकाल्य गोचरत्वाच्च ॥१९॥ अर्थ--अथवा स्पर्शन शब्दके त्रिकाल विषय वाची पणौं है यातैं। टीकार्थ--जैसैं वर्त्तमान कालवर्त्ती जल वर्तमान कालवर्ती घट क्षेत्रनें स्पर्शे है परन्तु अतीत अनागत घट क्षेत्रनें नहीं स्पर्शै है तैसैं आत्माके वर्तमान क्षेत्रके स्पर्शनके विषैं स्पर्शन शब्दको अभिप्राय नहीं है क्योंकि स्पर्शनके त्रिकाल गोचरपणों है यातैं ॥१९॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक-स्थिति कालयोरर्थांतरत्वाभाव इति चेन्न मुख्यकालास्तित्वसंप्रत्ययार्थम्॥२०॥अर्थ—प्रश्न,स्थितिके अर कालके भिन्नपणां को अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि मुख्य कालका अस्तित्वकी प्रतीतिके अर्थि इहां बहुरि काल शब्दको ग्रहण है। टीकार्थ—प्रश्न, स्थिति ही काल है अर काल ही स्थिति है यातैं इन दोउनिके अर्थांतर भाव नहीं है ? उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर,मुख्यका अस्तित्वकी प्रतीतिके अर्थि बहुरि काल शब्दको ग्रहण कियो है क्योंकि काल दोय प्रकार है एक मुख्यकाल है एक व्यवहारिक काल है तिनमें मुख्य तो निश्चय काल है अर पर्यायी पर्यायकी अवधिको ज्ञान जो है सो व्यवहारिक काल है अर इन दोउनिको निर्णय आगानें कहेंगे। अर पूर्वै कह्यो है। प्रश्न, कहा कह्यो है ? उत्तर, कालके सर्व भावनिको अधिगमको हेतुपणों है यातैं अर्थात् छहूं द्रव्यनिकूं जनावनें वारो काल है यातैं। भावार्थ—सव भावनिकी] परिणतिनें निमित्त कारण काल है अर भावनिका जाननमें कारण परिणति है यातैं ॥ २० ॥ प्रश्नोत्तररूप

वार्त्तिक—नामादिषुर्भावग्रहणात् पुनर्भावाग्रहणमितिचेन्नौपशमिकाद्यपेक्षत्वात् ॥ २१॥ अर्थ—प्रश्न, नामादिकनिमें भाव पदका ग्रहणतें बहुरि भाव पदको ग्रहण अनर्थक है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इहां औपशमिकादि भावनिकी अपेक्षापणौं है यातें। टीकार्थ—प्रश्न, नामादिकनिके विषैं भाव शब्दको ग्रहण कियो है ताकरि ही सिद्ध पणातैं बहुरि भाव शब्दको ग्रहण अनर्थक है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, औपशमिकादि भावनिकी अपेक्षापणातैं बहुरि भाव शब्द-का कहना योग्य है क्योंकि पूर्वें नामादिकनिमें भाव शब्द है सो तो द्रव्य नहीं है ऐसा अर्थका कहवामें तत्पर है अर यो भाव शब्द औपशमिकादि वक्ष्यमाण भावनिकी अपेक्षा है। प्रश्न, सम्यग्दर्शन कहा है ? उत्तर, औपशमिक अर क्षायिक है इत्यादि भेद रूप है ॥ २१ ॥ वार्तिक—विनेयाशयवशो वा तत्वाधिगमहेतुविकल्पः ॥ २२ ॥ अर्थ—अथवा विनयवान शिष्यका आशयका वशतैं तत्वनिके जाननेके हेतुनिका विकल्प है यातैं पुनरुक्त होते भी दोष नहीं है। टीकार्थ—अथवा यो सर्वको परिहार है कि शिष्यको जो आशय ताका वशतैं तत्वनिका अधिगमका होनेका हेतुनिका विकल्प जानवे योग्य है क्योंकि कितनेक शिष्य तो संक्षेप करि ही जनायवे योग्य है अर कितनेक शिष्य विस्तार रूप करि जनायवे योग्य है अर जो ऐसें नहीं है तो केवल प्रमाणका ग्रहण करि ही सिद्ध होय तदि और अधिगमका उपायनिको ग्रहण अनर्थक है ॥ २ ॥

इति श्रीमदकलंकदेवप्रणीते तत्वार्थवार्तिके व्याख्यानालंकारे प्रथमे ऽध्याये तदपरनाम राजवार्तिक सागरोद्धृततत्वकौस्तुभे पञ्चमाह्निक परिसमाप्तम् ॥ ५ ॥

यामें मूल ग्रंथ संख्या श्लोक च्यारसै पिचेत्तरके मध्य सूत्र चार है अर वार्त्तिक अठ्यासी हैं तिनमें सैतीस तो पांचमां सूत्रकी व्याख्या रूप हैं तिनमें ग्यारा तो नामादिकका लक्षण तथा द्रव्य

भावके आगम नो आगमपणांको कथन तथा तिनका भेदनिको कथन है अर दोय नाम स्थापना का तथा द्रव्य भावका एक पणामें शंका समाधानमें है अर पांचमें नामादिकनिका अनुक्रमको कथन है। अर छै एक वस्तुमें नामादि चतुष्टयका असंभवपणांकी शंकाका समाधानमें है अर सात नामादिकनिके उपचारतें प्रमाणता स्थापन करै है ताका निषेधमें तथा नाम स्थापना द्रव्यके तो द्रव्यार्थिक नयका विषयपणांका कथनमें तथा भावके पर्यायार्थिक नयका विषयपणां कथनमें है अर दोय नामादिकनिका दोउ नयनिमें अंतर भावका शंका समाधानमें है। अर च्यार तत् शब्दका विवेचनमें है और चौदा छठा सत्रकी व्याख्या रूप है तिनमें तीन तो प्रमाण नयका पूर्व निपातमें शंका समाधान रूप है अर दोय अधिगमका हेतुका कथनमें तथा सप्तभंगीका कथनके है। अर नव अनेकांतका निरूपणमें तथा विरोधादि स्पष्ट दूषणका निराकरणमें है अर चौदा ही सातमां सूत्रकी व्याख्या रूप है तिनमें दोय तो निर्देशादिकनिका अनुक्रम कथनमें है अर ग्यारा जीवका निर्देशादि कथनमें है अर एक जीव अजीव आश्रव बंध संवर निर्जरा मोक्ष दर्शन ज्ञान चारित्रका निर्देशादिकनिका कथनमें है अर वाईस आठमां सूत्रकी व्याख्या रूप है तिनमें दश तो सत् आदिका अनुक्रम कथनमें है अर च्यार सत्के अर निर्देशके भिन्न पणांका समाधान रूप है अर एक विधानका ग्रहणतें ही संख्याकी सिद्धि होनेमें शंका समाधान रूप है अर एक क्षेत्रके अर अधिकरणके अभेदमें शंका समाधान रूप है अर तीन स्पर्शके अर क्षेत्रके शंका समाधान रूप है अर तीन स्थिति अर कालके तथा नामादिकमें ताके अर इहां भाव शब्दका ग्रहण है ताके भिन्नपणांका शंका समाधान रूप है ऐसें वार्त्तिक है तिनकी देश भाषामयी वचनिका रूप अर्थ पंडित फतेलालजीको

सम्मतितैं श्रीमज्जिनवचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवालनें ज्ञानावरण कर्मका क्षय निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है तामें ग्रंथ संख्या प्रमाण श्लोक ॥ २३५० ॥

अथ अष्टम आह्निकं लिख्यते॥

यामें प्रथम ही नवमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि पूर्वोक्त प्रकार प्रथम ही उपदेश रूप कियो जो सम्यक् दर्शन ताको लक्षण तथा उत्पत्ति तथा स्वामी तथा विषय तथा न्यास तथा अधिगमका उपाय दिखाया अर सम्यग्दर्शनका संबंध करि जीवादिकनिकी संज्ञा तथा परिणामादिक दिखाया अबैं वाके अनंतर सम्यग्ज्ञान विचार करनें योग्य है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम्॥ ९ ॥

अर्थ-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान,केवल ज्ञान,ऐसैं पांच भेद रूप ज्ञान है। प्रश्न, ये मति आदि शब्दका स्वरूप है। उत्तररूप वार्तिक—मतिशब्दो भावकर्तृकरण साधनः ॥१॥ अर्थ—उत्तर, मति शब्द भाव साधन, कर्तृ साधन, करण साधन रूप है। टीकार्थ—यो मति शब्द भाव साधनमें तथा कर्तृ साधनमें तथा करण साधनमें है तिनमें सूं कोउ एक साधन रूप जानवे योग्य है सो ऐसैं है कि मन धातुतैं भाव साधनके विषैं क्ति प्रत्ययतैं मति शब्द सिद्ध होय है अर मति ज्ञानावरणका क्षयोपशमनें होतां संतां इंद्रिय अर अनिंद्रियकी अपेक्षावान ऐसो जो पदार्थको मनन कहिये जानन जो हैं सो मतिज्ञान है ऐसैं तो भाव साधन रूप है अर उदासीन पणाकरि तत्वका कथनतैं बहुलकी अपेक्षाकरि कर्तृ साधन रूप है। भावार्थ-कर्म अर करण आदिकी अपेक्षा रहित पणातैं उदासीन रूप हुवो संतो जाने सो मतिज्ञान है अर या अर्थमें क्ति प्रत्यय बाहुलतैं

होय करि मति शब्द सिद्ध होय है अर पदार्थनिनैं मनुते कहिये माने सो मति ज्ञान है। ऐसैं तो कर्तृ साधन रूप है अथवा जाकरि मन्यते कहिये मानिये सो मतिज्ञान है ऐसैं करण साधन रूप है क्योंकि आत्माके अर ज्ञानके भेद अभेद वक्ताकी इच्छातैं उत्पन्न होय है यातैं ॥ १ ॥ वार्त्तिक—श्रुतशब्दः कर्मसाधनश्च ॥२॥ अर्थ—श्रुत शब्द कमसाधनरूप हैं तथा पूर्वोक्त भावसाधन कर्तृ साधन करण साधनरूप भी है। टीकार्थ—बहुरि श्रुत शब्द कर्मसाधनरूप है अथवा पूर्वोक्त भाव साधनरूप तथा कर्तृ साधन रूप तथा करण साधन रूप वर्तै है सो ऐसैं कि श्रुतावरणका क्षयोपशमादिक अंतरंग बहिरंग हेतु जे हैं तिनकी निकटतानें होतां संतां सुणिये सो श्रुत है ऐसैं तो कर्म साधन रूप है अर श्रुत स्वरूप परणम्यूं आत्मा ही सुणै है यातैं श्रुत शब्द कर्तृ साधन रूप है अर भेद कहनेकी इच्छा करि जाकरि सुणिये सो श्रुत है ऐसैं करण साधन रूप है अथवा श्रवणमात्र है सो श्रुत है ऐसैं भाव साधन रूप है ॥२॥ वार्तिक -अवपूर्वस्यदधातेः कर्मादिसाधनः किः ॥३॥ अर्थ--अव पूर्वक दधाति धातुतैं कर्मादि साधन रूप किः प्रत्यय भया है। टीकार्थ—अव पूर्वक दधाति धातुतैं कर्मादि साधन किः प्रत्यय होय है। कर्मादि साधनमें सूं कोऊ साधनके विषैं किः यो प्रत्यय जनायवे योग्य है यातैं अवधि शब्द सिद्ध होय है अर अवधि ज्ञानावरणका क्षयोपशमादिक अंतरंग बहिरंग उभय हेतु निकटतानें होतां संतां धारण करिये सो अवधिज्ञान है अथवा अधोगत पदार्थनें धारण करै सो अवधि है ऐसें कर्त्ता साधन है अथवा अधोगत पदार्थका जानना मात्र जो है सो अवधि है ऐसैं भाव साधन रूप है इहां अव शब्द अधोभाग वाची है सो जैसैं अधः क्षेपण जो है सो अव क्षेपण है क्योंकि अवधिको अधोगति बहुत द्रव्य विषय है अथवा अवधि नाम मर्यादाका है तातैं अवधिकरि निश्चयरूप ज्ञान जो है सो अवधिज्ञान है तैसैं ही कहेंगे कि रूपिष्ववधे। प्रश्न, ऐसैं मर्यादा रूप कहनेमें मत्यादिक सर्व जे हैं तिनका प्रसंग आवेगा क्योंकि सब ही

अपनो अपनी मर्यादामें ही प्रवर्तै हैं यातैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, रूढ़िका वशतैं व्यवस्थाको उपपत्ति है यातैं गो शब्दकी प्रवृत्तिके समान है अर्थात् अवधि शब्दकी रूढ़ि अवधिज्ञानमें ही है॥ ३॥ वार्त्तिक—मनः प्रतीत्य प्रतिसंधाय वा ज्ञानं मनःपर्ययः ॥ ४॥ अर्थ-मननैं प्रतीति करि अथवा मननैं अवलंबन करि ज्ञान होय सो मनःपर्यय ज्ञान है। टीकार्थ मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयोपशम आदि बाह्याभ्यंतर रूप उभयनिमित्तका वशतैं परकोय मनसे प्राप्त भया अर्थको ज्ञान जो है सो मनःपर्यय ज्ञान है अर याके भाव आदि साधनपणों पूर्ववत् जानवे योग्य है। प्रश्न, कैसें ? उत्तर, मनकूं प्रतीति करि तथा मनकूं आलंबन करि जो ज्ञान उत्पन्न होय सो मनःपर्यय है। इहां ऐसे कहिये है अर परकोय मनके विषैं प्राप्त भया पदार्थ जो है सो मन है ऐसैं कहिये है क्योंकि तहां तिष्ठनेतैं तत् शब्दको व्यवहार होय है यातैं अर्थात् जैसैं बंगाल देशमें रहने वारे पुरुषनिनैं देखिये है कि या देशमें बंगाल भरि गयो यातैं मनोग। अर्थ भाव घट है ता अर्थनैं सर्व तरफतैं प्राप्त होय तथा वा अर्थनैं ग्रहणकरि अपना क्षयोपशमादि रूप प्रसन्नतातैं आपके ज्ञान होय सो मनःपर्यय है॥ ४॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—मतिज्ञान प्रसंग इति चेन्न अपेक्षामात्रत्वात् ॥ ५॥ अर्थ—प्रश्न, मति ज्ञानको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि मनके अपेक्षामात्रपणों है यातैं। टीकार्थ—मनः पर्यय ज्ञान मति ज्ञाननैं प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, मनका निमित्तपणांतैं अर ऐसी ही आर्ष वचनिको परिपाटो है कि अपना मनकरि पराया मननैं चिन्तवनकरि इत्यादि। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, अपेक्षा मात्र पणांतैं मनःपर्यय ज्ञानके विषैं अपना अर परका मनकी अपेक्षा मात्र करिये है जैसैं कोऊ कहै कि आकाशमें चन्द्रमानैं देखो इहां देखनेंरूप कार्य चन्द्रमा है अर आकाश शब्द अपेक्षामात्र है अर जैसैं मनको कार्य मतिज्ञान है तैसें मनःपर्यय ज्ञानको कार्य नहीं है क्योंकि मनः पर्यय ज्ञानके

आत्मशुद्धि निमित्त मात्र रणों है यातैं ॥५॥ वार्तिक--बाह्याभ्यांतर क्रियाविशेषान्यदर्थं केवन्ते तत्केवलज्ञानम् ॥ ६ ॥ अर्थ—बाह्य अभ्यंतर क्रिया विशेषनें जाके अर्थ सेवन करै है सो केवल है। टीकार्थ--आत्मा के अर्थी वचन काय मनके आश्रय बाह्य अभ्यन्तर तप क्रियाविशेषनें जाके अर्थि केवल कहिये सेवन करै है सो केवल है अर्थात् जो शुद्धरूपनें ध्यावै है सो ही केवलज्ञान है ॥ ६ ॥ वार्तिक--असहायार्थः केवल शब्दः ॥ ७ ॥ अर्थ--असहाय अथवा केवल शब्द है सो अव्युत्पन्न शब्द है कि धातु प्रत्यय रहित संज्ञामात्र है। टीकार्थ--जैसैं देवदत्त केवल अन्नतैं भक्षण करै है इहां ऐसा अर्थ प्रगट होय है कि असहाय व्यंजन रहित केवल अन्न भक्षण करै है तैसैं क्षायोपशमिक ज्ञानतैं नहीं मिल्या असहाय केवल है तातैं यो केवल शब्द अव्युत्पन्न जानवे योग्य है कि धातु प्रत्यय रहित संज्ञामात्र है ॥ ७ ॥ वार्तिक--करणादिसाधनो ज्ञान शब्दो व्याख्यातः ॥ ८ ॥ अर्थ—करणादिसाधनरूप ज्ञान शब्द व्याख्यान कियो है। टीकार्थ—यो ज्ञानशब्द करणादि साधनरूप पूर्वैं व्याख्यान कियो ॥ ८ ॥ वार्तिक—इतरेषां तदभावः ॥ ९ ॥ अर्थ—अन्य मतीनिका ज्ञानके करणादि साधनका अभाव है। टीकार्थ—जैनीनितैं अन्य एकांत वादीनिके वा ज्ञानके करणादि साधन पणों नहीं उत्पन्न होय है ॥ ९ ॥ प्रश्न, सो कैसैं ? ऐसैं कहो हो तो कहिये है वार्तिक--आत्माभावे ज्ञानस्य करणादित्वानुपपत्तिः कर्तुरभावात् ॥ १० ॥ अर्थ—आत्माका अभावनें होतां संता कर्त्ताका अभावतैं ज्ञानके करणादि साधन पणांकी अनुपपत्ति है। टीकार्थ—जिनकै आत्मा नहीं विद्यमान है तिनके ज्ञानके करणादिक पणौं नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, कर्त्ताका अभावतैं क्योंकि छेदने वाला देवदत्तनें विद्यमान होतां संता ही परशाकै करण पणो देखिये है। तैसैं आत्मान नहीं होतां संता ज्ञानके करण पणौं नहीं उत्पन्न होय है तातैं ही जानना सो ज्ञान ऐसैं भाव साधन पणौं भी नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि भाववानतें नहीं होतां संता भाव

नहीं होय है। प्रश्न,जानैं सो ज्ञान ऐसैं कतृसाधन पणौं है ? उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर, निरीहक पणातैं क्यूं कि निरीहक कहिये निरपेक्ष भाव कर्ता पणांनैं नहीं प्राप्त होय है अर तिहारे सर्व भाव निरीहक है अर और सुनूं कि लोकके विषैं पूर्वोत्तरकी अपेक्षा सहित जो है ताके ही कर्तापणौं देखिये है जैसैं कुम्भकार घटको कर्ता है ताके पूर्वकालमें तो मृत्तिकादि वस्तुका सद्भाव की अपेक्षा है अर उत्तर कालमें जल धारण आदिफलकी अपेक्षा है तातैं ताके कर्ता पणौं वर्णे है अर वाका ज्ञानके पूर्वोत्तरकी अपेक्षा नहीं है क्योंकि क्षणिकपणौं है यातैं तातैं निरपेक्षके कर्तापणां- को अभाव है अर और सुनूं कि करणका व्यापारकी अपेक्षावानके ही लोकके विषैं कर्तापणौं देखिये है अर ज्ञानके और करण नहीं है यातैं ज्ञानके कर्तापणौं भी नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, ज्ञानके निज शक्ति ही करण है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर—शक्ति अर शक्तिमानके भेद अङ्गीकार करतां संता आत्माका अस्तित्वकी सिद्धि है यातैं अर अभेदनैं होतां संता करणका अभावतैं पूर्वोक्त दोष वैसैं ही तिष्ठे है। प्रश्न, संतानकी अपेक्षा करि कर्ता करणका भेदको उप- चार है। अर्थात् संतानी जो ज्ञान सो तो कर्ता है अर सन्तान जो है सो करण है ? उत्तर,सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, परमार्थतैं विपरीत पणानैं होतां संता मृषावादकी उपपत्ति है यातैं ऐसैं भेदकी तथा अभेदकी कल्पनाके विषैं पूर्वोक्त दोषको प्रसंग प्राप्त होय है अर्थात् भेद होत संतैं तो आत्मको अस्तित्व सिद्ध होयगो अर अभेद होत संतै करणका अभावतैं कर्ताको अभाव होयगो यातैं प्रश्न, ज्ञानके मन अर इन्द्रिय जे है ते करण है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, मनके जानन शक्तिको अभाव है यातैं प्रथम ही मन तो करण नहीं है क्योंकि याके विनष्ट पणौं है यातैं। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, छहके अनन्तर अतीत विज्ञान है सो निश्चय करि मन है ऐसा वचन- तैं अर विनष्ट पणातैं ही अतीत इन्द्रिय जे हैं ते भी करण नहीं हैं अर उपजायमान जो मन तथा

इन्द्रिय तिनके भी करण पणौं नहीं वणै है। अर्थात् जो कहेगा कि ज्ञानका क्षणमें वर्तनें वारा मन.तथा इन्द्रिय जे हैं ते तौ वा क्षणवर्ती ज्ञानका करण है सो भी नहीं है क्योंकि दक्षिण सींग जो.है सो साथि उत्पन्न हो तो दूसरा सींगको करण नही होय है अर और.सुनूं कि धातुका अर्थतैं अन्य अर्थका अभावतैं ज्ञा ऐसी धातुरूप प्रकृतिको जानन अर्थ है या कारणतैं ता ज्ञानतैं अन्य तिहारे कोऊ पदार्थ नहीं है, अर्थात् आत्मा नहीं है जो कर्तापणानैं अनुभव करै यातैं ज्ञानकै कर्ता पणांको अभाव है और सुनूं कि जो एक क्षण विषय कर्ता पणौं है सो अनेक क्षणगोचर जो उच्चारण ताकरि पायो है जन्म जानै ऐसो कर्तृ शब्द जो है ताकरि कैसैं कहिये सो यो एक क्षणके विषैं वर्त्तमान होतो संतो कैसैं वाचक होय। भावार्थ--जा क्षणवर्ती पदार्थका जाननरूप कार्यको तो कर्ता है यातैं तो कर्त्तापणौं संभवै है ? उत्तर, सो भी नहीं संभवै है क्योंकि अनेक क्षणकरि उच्चारणमें आवै ऐसा कर्त्ता शब्दकरि एक क्षण स्थाई विज्ञानका कहना कैसै संभवै है। प्रश्न, एक समय तथा दो समय तथा तीन समय वर्ती अनाहारक अवस्था जो है तानैं अनेक क्षण करि उच्चारणमें आवे ऐसा अनाहारक शब्द करि तुमारे भी कहना कैसैं संभवै। उत्तर, हमारे शब्द उच्चारण करन वारा आत्माको नित्य अवस्थान मान्य है यातैं सम्भवै है प्रश्न, कहा कारण ? ता संतानके प्रति विहित पणौं है यातैं अर्थात् संतानके पूर्व निराकरण पणौं है यातैं बहुरि जाकै यो मत है सो कहै है कि हमारे रतननिकी वृष्टि आकाशतैं पड़ी क्योंकि हमारे निश्चय करि अवाच्य ही तत्व इष्ट करिये है क्योंकि निश्चय करि अव्यापाररूप सव धर्मनिके विषैं वचनको व्यवहार नहीं है सो ही तुममें कह्यो है यातैं। उत्तर, सो नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि ऐसैं माननेमैं स्ववचन विरोध है यातैं क्योंकि प्रथम तो संताननै अंगीकार कियो अर इहां संतानका खंडननैं इष्ट कियो यातैं अथवा तत्वकी प्रतीतिका उपायको जो छिपाव ताको प्रसंग आवै है यातैं।

भावार्थ—नहीं है किया जिनके ऐसे जे सर्व धम तिनमें वचनको व्यवहार नहीं मानिये है तो क्षणिक भी कैसें कहो हो अथवा जामें वचनको व्यवहार नहीं है ता तत्वके स्थापनेको भी अभाव ही है क्योंक वचन बिना काहेतैं स्थापन करै है और सुनू कि जानैं सो ज्ञान ऐसो कर्तृ साधन पणौं नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, क्षणिक वादीके यो है अर यो नहा है ऐसा विशेष ज्ञानकी अनुपलब्धि है यातैं। क्योंकि निश्चय करि जा वादीनें कर्तृ साधन पणानैं अर करण साधन पणांनैं जान्यूं है ता वादीनैं यो कहनों बनें है कि यो कर्तृ साधन है अर करणादि साधन नहीं है अर क्षणिक वादीके प्रत्यर्थ वशवर्ती ज्ञान विकल्पपणानै होतां संता नहीं धारण कियो है उभय स्वभाव जानैं ताकै विशेषकी उपलब्धि नहीं होय है क्योंकि शुक्लका अर इतरका विशेषकूं नहीं जानने वारेकै यो शुक्ल है नील पीत आदि नहीं है ऐसो भेद विज्ञान नहीं उत्पन्न होय है ॥१०॥ वार्त्तिक—अस्तित्वेप्यविक्रियस्य तदभावोनभिसंबधात् ॥ ११ ॥ अर्थ—जीवका विद्यमान पणानैं होतां संता भी क्रिया रहितके करणादि साधनको अभाव है क्योंकि ज्ञानकै अर आत्माकै वाके मतमे संबंध नहीं है यातैं। टीकार्थ—आत्माका अस्तित्वनैं होतां संता भी ज्ञानके करणादिकनिको अभाव है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, विक्रिया रहितके करणादि साधनको अनाभसंबंध है यातैं क्योंकि जाके ऐसो मत है कि आत्माकै ज्ञान नामा गुण है सो आत्मातैं अर्थांतर है क्योंकि आत्मा इंद्रिय मन पदार्थ इनि च्यारनिका सन्निकर्षतैं जो उत्पन्न होय है सो ज्ञान अन्य है ऐसा वचनतैं ताके ज्ञान करण होनेकूं नहीं योग्य है ॥ ॥११॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर रूप वार्तिक—पृथगात्मलाभाभावात् ॥ १२ ॥ अर्थ—भिन्न आत्मा लाभका अभाव है यातैं। टीकार्थ—लोकके विषैं छेदने वारा देवदत्ततैं अर्थांतर भूत तीक्षणपणां गुरुपणां कठिनपणां आदि विशेष लक्षण संयुक्त विद्यमान परशो जो है ताके करण भाव देखिये है

तैसैं ज्ञानका स्वरूपनैं पृथक् हम नहीं प्राप्त होय हैं यातैं किञ्च, वार्त्तिक—अपेक्षाभावात् ॥ १३ ॥ अर्थ—तिहारे मतमें ज्ञानके अपेक्षाको अभाव है यातैं। टीकार्थ—देवदत्तके आश्रित ऊंचा उठना नीचा पड़ना आदि क्रिया युक्त परशूके ही करण भाव देखिये है तैसैं ज्ञानकरि अपेक्षावान कर्त्ताकै साध्य किंचित् क्रियांतर नहीं है। भावार्थ—उठना पड़ना रूप क्रिया युक्त परशूके करणपणौं है अर सो क्रिया देवदत्त रूप कर्त्ताके आश्रय है सो नहीं बनैं है क्योंकि आत्मा रूप कर्त्ता कूं विक्रिया रहित मानो हो अर करण जो होय है सो कर्त्ताके आश्रित क्रियाको अपेक्षावान होय है सो तिहारे है नहीं यातैं ज्ञानके करण पणांको अभाव है ॥१३॥ किंच, वार्तिक-तत्परिणामाभावात् ॥१४॥ अर्थ—वो आत्मके ज्ञान क्रियारूप परिणामको अभाव है यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि छेदन क्रियारूप परिणाम्या देवदत्तनैं छेदन क्रियाका सचिव पणाकैं विषैं उपयुक्त कियो परशू जो है सो करण है या युक्त है तैसैं आत्मा ज्ञान क्रियारूप परिणाम्यूं नहीं है यातैं भी ज्ञान करण नहीं है ॥ १४ ॥ वा र्तक—अर्थान्तरत्वे तस्याज्ञत्वात् ॥ १५ ॥ अर्थ—ज्ञानतैं अर्थान्तर पणानैं होतां संता आत्माकै अज्ञपणौं होय है यातैं। टीकार्थ—या लोकमें जो ज्ञानतैं अन्य है सो अज्ञ देखिये है जैसैं घटादिक द्रव्य है तैसैं ज्ञानतैं अन्य आत्मा जो है ताकै अज्ञपणांको प्रसंग आवै है। प्रश्न, ज्ञानका योगतैं ज्ञातापणों है दंडीके समान देखवा पणांतैं। उत्तर, ऐसैं कहो हो सो भी नहीं है क्योंकि आत्माके ज्ञान स्वभावका अभावनैं होतां संता इन्द्रिय अर मनके समान संबंधका नियमकी अनुपपत्ति है क्योंकि ज्ञान स्वभावका अभावनैं होतां संता भी आत्माकै विषैं ही ज्ञानको सम्बन्ध योग्य है अर मन करि तथा इन्द्रिय करि नहीं योग्य है ऐसा नियमको अभाव है यातैं अर युतसिद्ध दण्ड दण्डी जे हैं तिनकै सम्बन्ध है सो विद्यमान प्रसिद्ध दण्ड जो है ताको विशेषण मात्रपणां करि ग्रहण करवातैं है अर आत्माके ज्ञानकी उत्पत्तिनैं होतां संतां हिताहितका विचाररूप विक्रिया

की उत्पत्ति है यातैं दृष्टांतके समानता नहीं है अर्थात् दण्डका सम्बन्धतैं दण्डी दण्डरूप क्रियानें नहीं प्राप्त होय है अर आत्मा ज्ञानका सम्बन्धनें होतां संता ही हिता हितका विचार रूप ज्ञानके समान विक्रियानें प्राप्त होय है तातै दृष्टांतकै समानता नहीं है। भावार्थ—आत्मा तो ज्ञान रहित पणातैं अज्ञानी है अर ज्ञानकूं कर्त्ता मानिये तो कर्त्ता शून्य अज्ञानी है अर ज्ञानकूं करण मानिये तो कर्ता हीन अज्ञानी है अर दोऊ अज्ञानरूप जे हैं तिनकै सम्बन्धनैं होतां संता भी अज्ञानी पणांको प्रसंग आवैं है क्योंकि जन्मांध दोय जे हैं तिनका सम्बन्धनें होतां संता दर्शन शक्तिका अभावके समान देखवा पणातैं अर और सुनूं कि इन्द्रियनिकै तथा मनकै ज्ञान पणांको प्रसंग आवै है यातैं क्योंकि जाकरि जानिये सो ज्ञान है ऐसैं करण साधन अंगीकार करिये है तो इन्द्रियनिकै अर मनकै भी ज्ञानपणांको प्रसंग आवैगो क्योंकि तिनकरि भी जानिये है यातैं ज्ञान में अर इद्रिय में भेदको अभाव है यातैं अर और सुनूं कि दोउनिके निष्क्रिय पणातैं कर्ता पणौं तथा करण पणों कैसैं संभवै ? अर्थात् नहीं संभवै है तिनमें प्रथम तो सर्व गत आत्मा जो है ताकै क्रिया नहीं बणै है अर ज्ञानकै भी क्रिया नहीं है क्योंकि क्रियावान पणौं द्रव्यको ही लक्षण है ऐसो वचन है यातैं तातैं क्रिया रहितकै कर्तापणौं तथा करण पणौं कैसैं होय बहुरि जाकै ऐसो मत है कि गुणका भिन्न पणातैं पुरुष जीवात्मा शुद्ध है अर नित्य है क्योंकि निगुणकै निर्विकार पणौं है यातैं ताकै भी ज्ञान करण होनेकूं नहीं योग्य है। प्रश्न, काहेतैं उत्तर, शुद्धकै सम्बन्ध नहीं बणै है यातैं सो ऐसैं है कि इन्द्रिय मन अहंकार महत् वृत्ति करि ग्रहण करी अर सत्ता मात्र तथा संकल्प मात्रका अभिमानरूप परिणति स्वरूप भई जो बुद्धि सो तो प्रकृति है अर विक्रिया रहित शुद्ध पुरुष है ताकै वा प्रकृतिरूप बुद्धि करण कैसैं होय अर लोककैं विषैं क्रियारूप रूप परिणम्यूं देवदत्त जो है ताकै ही करणको संप्रयोग देखिये है इत्यादि जोड़ने योग्य है। अर ज्ञानके कर्तृ

साधन भी नहीं सम्भवै है क्योंकि लोककै विषैं करण पणां करि प्रसिद्ध खड्ग जो है ताको यो तीक्ष्ण पणां गौरव पणां कठिन पणां करि ग्रहण कियो विशेष जो है सो ही छेदै है ऐसैं वाकी प्रशंसामैं तत्पर कहनेकी प्रवृत्ति प्रयत्नमें होत संतै कर्तृ धर्मको अध्यारोप करिये है । तैसैं ज्ञान करण पणां करि प्रसिद्ध नहीं है अर पूर्वोक्त दोषनिकी उपपत्ति है यातैं तातैं या मतवारेके ज्ञानकै कर्त्ता पणौं अयुक्त है अर भाव साधन पणौं भी उपपत्ति मान नहीं है क्योंकि विक्रिया रहितकै भाव रूप परिणामनको अभाव है यातैं क्योंकि विक्रिया स्वभाव वस्तु तन्डुलादिक जे हैं तिनकै ही विक्लेदन कहिये ढीला पणौं आदि भाव जो है ताका दर्शनतैं पकनो जो है सो पाक है इत्यादि भावको निर्देश युक्त है अर आकाशकै विक्रिया नहीं होय है यातैं भाव निर्देश युक्त नहीं है। बहुरि और सुनूं कि फलका अभावतैं भी भाव साधन नहीं है क्योंकि तिहारे निश्चय करि ज्ञान प्रमाणरूप इष्ट है अर प्रमाणनैं फलवान होवो योग्य है अर जानन विना प्रमाणको फल अन्य नाहीं पाइये हैं तातैं प्रमाण स्वरूप औरनैं होनो योग्य है अर जा स्वरूप अन्यनैं होतां संतां वो जानन रूप फल प्रमाण स्वरूप आत्माकै होय है सो फल विक्रिया रहित आत्माकै नहीं है यातैं भाव साधन पणौं नहीं है अर या विचारमें जानन भाव भी भावांतर नहीं है यातैं फलकै विषैं प्रमाण पणांको उपचार है ऐसैं कहोगे सो भी अयुक्त है क्योंकि मुख्यको अभाव है यातैं अथवा ज्ञानकैं विषैं आकार भेदतैं फलकी अर प्रमाणकी परि कल्पना भी अयुक्त है अर्थात् ज्ञानको स्वरूप तो प्रमाण रूप है अर प्रमाण फलवान होय है तातैं आकार भेद है अर आकार भेदतैं प्रमाणकी कल्पना करो हो सो भी अयुक्त है क्योंकि आकार आकारवानके भेद अभेदके विषैं अनेक दोषनिकी उपपत्ति है यातैं अर निर्विकल्पक पणातैं तत्वकैं आकारकी कल्पनाको अभाव है अर बाह्य वस्तुका आकारका अभावनैं होतां संता भी अंतरङ्ग आकारकी अनुपपत्ति है यातैं या कारणतैं परम ऋषि सर्वज्ञकरि

भाषितत्तैं अंगका गहन प्रपंचमें प्रवीण अर स्याद्वाद रूप प्रकाश करि उन्मीलित भये हैं ज्ञान-रूप नेत्र जिनके ऐसे जिनेंद्रके सेवक जे हैं तिनकै एक ही पदार्थके विषैं अनेक पर्यायका संभवतैं स्पष्ट अर्थ रूप यो करण पणां आदिको कथन उत्पन्न होय है ॥ १५ ॥ वार्तिक—मत्यादीनां ज्ञान शब्देन प्रत्येकमभिसंबन्धो भुजिवत् ॥ १६ ॥ अर्थ—मत्यादिकनिको ज्ञान शब्द करि प्रत्येक संबन्ध भुजिवत् होय है। टीकार्थ—जैसें देवदत्त, जिनदत्त, गुरुदत्त जे हैं ते भोजन करो ऐसें कहतां संता भोजन करो यो शब्द एक एक प्रति सम्बन्धनें प्राप्त होय है ऐसें ही इहां भी एक एक प्रति ज्ञान शब्दको सम्बन्ध है तातें मतिज्ञानं श्रुतज्ञानं अवधिज्ञानं मनः पर्यज्ञानं केवलज्ञानं ऐसा होय है अर मत्यादिकनिका सामान अधिकरणनैं होतां संतां ग्रहण किया लिंग संख्या पणातें वा ही लिंग संख्याको ग्रहण इहां नहीं है ताको प्रत्युत्तर प्रथम सूत्रकी व्याख्यामें कह्यो है ॥ १६ ॥ वार्तिक—स्वंतत्वादल्पाचुतरत्वादल्पविषयत्वाच्च मतिग्रहणमादौ ॥१७॥ अर्थ-स्वंतपणातैं अल्प स्वरवान पणां-नें अल्प विषय पणांतें मति शब्दको ग्रहण आदिके विषैं है। टीकार्थ—मति यो शब्द जो है सो स्वंत है तथा अवधि आदि शब्दनितैं अल्प स्वर है तथा अवधि आदितें चक्षु आदिका प्रति नियत विषयपणांतें याको विषय अल्प है तातैं याको आदिमैं ग्रहण करिये हैं ॥ १७ ॥ वार्तिक—तदनंतरं श्रुतं ॥ १८॥ अर्थ—मति पूर्वक पणां करि मतिकैं अनन्तर श्रुतको वचन है। टीकार्थ—मतिज्ञान पूर्वक श्रुतज्ञान है ऐसें कहेंगे तातैं मतिज्ञानके अनंतर श्रुतज्ञान शब्द कियो है ॥१८॥ तथा वार्तिक-विषयनिबन्धनतुल्यत्वाच्च ॥ १९ ॥ अर्थ—अथवा मतिज्ञानका विषयका नियमकैं समान पणांतैं मतिकै अनंतर श्रुत कह्यो है। टीकार्थ—मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु,ऐसें कहेगें यातैं मति ज्ञानके तुल्य पणांतें मतिज्ञानके अनंतर श्रुत शब्द कह्यो है ॥१९॥ तथा वार्तिक-तत्सहायत्वाच्च॥२०॥ अर्थ—मति श्रुतके सह गामी पणौं है यातैं भी मतिज्ञानके निकट श्रुत कह्यो है। टीकार्थ—जैसें

नारद पर्वतके सहगामी पणांतैं जहां नारद है तहां पर्वत है अर जहां पर्वत है तहां नारद है क्योंकि परस्पर अपरित्याग है यातैं मतिज्ञान श्रुतज्ञानकै परस्पर अपरित्याग है कि जहां मतिज्ञान है तहां श्रुतज्ञान है अर जहां श्रुतज्ञान है तहां मतिज्ञान है तातैं मतिज्ञानके अनन्तर श्रुतज्ञानको ग्रहण है ॥२०॥ वार्तिक—प्रत्यक्षत्रयस्यादाववधिवचनं विशुद्ध्यभावात् ॥ २१ ॥ अर्थ—प्रत्यक्ष तीन जे हैं तिनके मध्य प्रथम अवधिको वचन विशुद्धिका अभावतैं कि अल्प पणांतैं कियो है। टीकार्थ-मति-ज्ञान श्रुतज्ञान प्रत्यक्ष पणांतैं अवधिके विशुद्धपणानैं होता संता भी उपदेश किये प्रत्यक्ष ज्ञान जे हैं तिननें अपेक्षाकरि अवधि विशुद्ध नहीं है तातैं याकै तिनमें प्रथम स्थापन कियो है ॥२१॥ वार्तिक—ततो विशुद्धतरत्वान्मनःपर्ययग्रहणम् ॥ २२ ॥ अर्थ—तातैं विशुद्ध पणातैं मनः पर्ययको ग्रहण है। टीकार्थ—अवधितैं मनःपर्ययज्ञान विशुद्धतर है तातैं। प्रश्न, याकै विशुद्धताकी प्रकर्षता कौन कृत है ? उत्तर, संयम गुणकी निकटता कृत है यातैं याको अवधिकै अनंतर ग्रहण है ॥ २२ ॥ वार्तिक--अंते केवलग्रहणं ततः परं ज्ञानप्रकर्षाभावात् ॥ २३ ॥ अर्थ—अंतकै विषैं केवलको ग्रहण है क्योंकि ताकै परे ज्ञानके प्रकर्ष पणांको अभाव है यातैं। टीकार्थ—सर्व ज्ञान जे हैं तिनका जाननके विषैं केवल ज्ञानकी सामर्थ्य हैं यातैं अर याका अन्य ज्ञान करि ज्ञान पणांको अभाव यातैं है अर यातैं अन्य उत्कृष्ट ज्ञान नहीं है यातैं तातैं परे ज्ञानके प्रकर्षताको अभाव है ॥ २३ ॥ वार्तिक-तेनैव सह निर्वाणाच्च ॥२४॥ अर्थ—अथवा केवल ज्ञान करि सहित ही निर्वाण है यातैं। टीकार्थ—यातैं केवल-ज्ञान करि सहित ही निर्वाण है क्षायोपशमिक ज्ञान करि सहित निर्वाण नहीं है तातैं अंतकै विषैं केवल शब्दको ग्रहण है ॥ २४ ॥ इहां कोऊ कहै है। वार्तिक--मतिश्रुतयोरेकत्वं साहचर्यादेकत्राव-स्थानाच्च विशेषात् ॥२५॥ अर्थ-प्रश्न, सहाचर्यतैं अर एकत्र अवस्थानतैं अविशेष है यातैं मतिश्रुतकै एक पणौं है। टीकार्थ—प्रश्न, मतिज्ञान श्रुतज्ञानकै एक पणौं प्राप्त होय है ? प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,

साहचर्यतैं अर एकत्र अवस्थानतैं अविशेष है यातैं एक पणौं है ॥२५॥ उत्तर रूप वार्तिक—नातस्तत् सिद्धेः ॥ २६ ॥ अर्थ—उत्तर, यातैं एकत्रकी सिद्धि नहीं है। टीकार्थ—उत्तर, एक पणौं नहीं है, प्रश्न,काहेतैं ?-उत्तर, जातैं मतिज्ञान श्रुतज्ञानके साहचय कहिये है तथा एकत्र अवस्थान कहिये है यातैं ही दोऊनिमें भेद सिद्ध है क्योंकि भिन्न भिन्न नियमरूप विशेष करि सिद्ध जे हैं तिनके ही साहचर्य अर एकत्र अवस्थान संभवै है अर और तरैं नहीं है ॥ २६ ॥ तथा वार्तिक—तत्पूर्वकत्वाच्च ॥ २७ ॥ अर्थ-मतिपूर्वक पणौं है यातैं भी एक पणौं नहीं है । टीकार्थ—मतिपूर्वं श्रुतं ऐसैं कहेगे तातैं दोउनिमें विशेष है यो तो पूर्व है अर यो पीछे है ऐसें दोऊनिके अभेद कैसें संभवै॥२७॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक-तत एवाविशेषः कारणसदृशत्वाद्युगपद्वृत्तेश्चेति चेन्नात एव नानात्वात् ॥२८॥ अर्थ-प्रश्न,मति पूर्वक पणातैं ही अविशेष है क्योंकि कार्यके कारण सदृशपणौं होय है यातैं अथवा युगपत्प्रवृत्ति होवातैं एक पणौं है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि यातैं ही नहीं है क्योंकि नाना पणौं है यातैं टीकार्थ—प्रश्न, जातैं मति पूर्वक पणौं है तातैं ही अभेद है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, कार्यके कारण सदृश पणौं होय है यातैं प्रश्न, कैसे ? उत्तर, तन्तु पटके समान है जैसैं शुक्लादि तन्तुको कार्य पट द्रव्य जो है सो शुक्लादि गुण युक्त ही होय है तैसें मतिज्ञानका कार्य पणातैं श्रुतज्ञानकै मतिज्ञानात्मक पणौं है बहुरि दोउनिकी युगपत्प्रवृत्तितै भी दोउनिकै एकपणौं ही है जैसैं अग्निके विषैं उष्ण अर प्रकाश ये दोऊ जे हैं तिनकी युगपत्प्रवृत्ति है तातैं दोऊनिके अग्नि स्वरूप पणौं है तैसैं सम्यग्दर्शनका प्रकट होवातैं अनंतर युगपत् मतिज्ञान श्रुतज्ञानकै ज्ञान नामकी प्रवृत्ति है तातैं अभेद है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, यातैं ही नाना पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि जातैं ही कारण सदृश पणौं अर युगपत्प्रवृत्ति प्रेरणा करिये है तातैं ही नानापणौं सिद्ध है क्योंकि दोयके ही सदृश पणौं अर युगपत्प्रवृत्ति बणै है ॥२८॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--विषयाविशेषा-

दितिचेन्न ग्रहण भेदात्॥२९॥अर्थ-प्रश्न,विषयका अविशेषतैं दोउनिके एक पणों है?उत्तर सो नहीं है क्योंकि ग्रहणमें भेद है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न,विषयका भेदतैं मतिज्ञान श्रुतज्ञानकै एक पणों ही है क्योंकि "मतिश्रुतयोर्निबंधोद्रव्येष्व सर्वपर्यायेषु" ऐसैं कहैंगे यातैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर,ग्रहण करनेमें भेद है यातैं। सो ऐसैं है कि मतिज्ञान करि तौ और तरैं ग्रहण करिये है अर श्रुतज्ञानकरि और तरैं ग्रहण करिये है अर जो विषयका अभेदतैं अभेद मानै है ताके एक घट विषय जो है ताका दर्शनकै अर स्पर्शकै अभेद प्राप्त होय है॥ २९ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—उभयोरिंद्रियानिंद्रियनिमित्तत्वादिति चेन्नासिद्धत्वात् ॥ ३० ॥ अर्थ—प्रश्न, दोउनिकै विषैं इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्त पणांतैं दोउनिकै एक पणों है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि हेतुकै असिद्ध पणों है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न,दोउनिकै इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्त पणातैं एक पणों है तिनमें प्रथम मति ज्ञान जो है सो तो इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्ततैं प्रगट होय है ऐसी प्रतीति है ही अर श्रुत ज्ञान भी वक्ताकी जिह्वा अर श्रोताका श्रवण रूप निमित्त पणांते अर अंतःकरणका निमित्त पणांतैं दोऊ ही उभय निमित्त है,उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर,हेतुकै असिद्ध पणों है यातैं क्योंकि जिह्वा तो शब्दका उच्चारणमात्र क्रियाको निमित्त है अर ज्ञानको निमित्त नहीं है अर श्रवण भी अपनो विषय मति ज्ञान जो है ताको निमित्त है श्रुतज्ञानको निमित्त नहीं है ऐसैं श्रुतज्ञानकै दोऊ ही निमित्त पणों असिद्ध है अर सिद्ध हेतु ही साध्य अर्थनें साधै है असिद्ध हेतु नहीं साधै है ॥ ३० ॥ प्रश्न, तो कहा निमित्त श्रुतज्ञान है ? उत्तर रूप वार्तिक—अनिंद्रियनिमित्तोऽर्थावगमः श्रुतम् ॥ ३१ ॥ अर्थ—अनिंद्रिय है निमित्त जानैं ऐसो अर्थको जानन भाव जो सो श्रुत है। टीकार्थ—इन्द्रिय अनिंद्रियका बलाधान पूर्वक प्राप्त भया अर्थकै विषैं नो इन्द्रियकी प्रधानतातैं जो उत्पन्न होय है सो श्रुतज्ञान है ॥ ३१ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--ईहादि प्रसंग इति चेन्नाव-

गृहीतमात्रविषयत्वात् ॥ ३२ अर्थ--प्रश्न, ऐसें कहे ईहादिकनिको प्रसंग आवे है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इन्द्रियनि करि ग्रहण किया मात्र विषय पणां ईहादिकनिके है यातें। टीकार्थ--प्रश्न, ऐसें कहे ईहादिकनिके भी श्रुतज्ञानको नाम प्राप्त होवेगो क्योंकि वे भी अनिंद्रिय निमित्त ही है उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, ईहादिकनिके अवग्रह करि ग्रहण किया मात्र विषय पणों है यातें क्योकि इंद्रियनि करि ग्रहण कियो अर्थ है ता मात्र ही है विषय जाको ऐसो नहीं है। प्रश्न, तो श्रुत कैसाक है ? उत्तर, अपूर्व है विषय जाको ऐसो श्रुत है सो ऐसें है कि एक घटनें इंद्रिय अनिंद्रियतें यो घट है ऐसें निश्चय करि वाको जातिके अन्य अनेक देश कालरूप आदि विलक्षण अपूर्व घट जे हैं तिननें जो जानें है सो श्रुतज्ञान है तथा नाना प्रकार अर्थनें प्ररूपणा करनेमें तत्पर जो है सो श्रुत है अथवा इन्द्रिय अनिन्द्रिय करि जीवनें तथा अजीवनें ग्रहण करिवा के विषें संत्,संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर भाव, अल्प,बहुत्व आदि प्रकार करि अर्थका प्ररूपण करवाके विषें जो समथ है सो श्रुतज्ञान है ॥ ३२ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—श्रुत्वावधारणाच्छ्रुतमितिचेन्न मतिज्ञानप्रसंगात् ॥ ३३ ॥ अर्थ—प्रश्न, सुणि करि अवधारण करवातें श्रुत है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि मतिज्ञानको प्रसंग आवे है यातें। टीकार्थ—जो सुणि करि अर्थनें धारण करे सो श्रुत है ऐसें कितनेक मानें है ? उत्तर, सो युक्त नहीं है। प्रश्न,काहेतें ? उत्तर, मतिज्ञानका प्रसंगतें क्योंकि मतिज्ञानका भी शब्द सुणि करि ऐसें जाणे है कि यो गोको शब्द है अर लक्षणनें निश्चय करि असाधारण होवो योग्य है सो यामें नहीं है अर इंद्रिय अनिन्द्रिय करि ग्रहण किया अथवा नहीं ग्रहण किया गो पर्यायका समूहात्मक शब्दके विषें तथा वा शब्दका वाच्य अर्थके विषें करण इंद्रियका व्यापार विना ही श्रुतज्ञान प्रवर्तें है ॥३३॥ अवें दशमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जीवादिकनिके विषें जाननेके उपाय नयादिक जे हैं तिन करि यथावत् पणां करि जानन होय है

सो तो प्रमाण नयैरधिगमः ऐसैं कह्यो अर कितनेकके प्रमाण ज्ञान मान्य है अर कितनेकके प्रमाण सन्निकर्ष है यातैं अधिकार रूप किया मतिज्ञानादिक जे हैं तिनके ही प्रमाण पणां जनावने निमित्त सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

तत्प्रमाणे ॥ १० ॥

अर्थ—तत् कहिये प्रत्यक्ष परोक्ष भेद रूप दोय ज्ञान जे हैं ते प्रमाण हैं। प्रश्न,प्रमाण शब्दको कहा अर्थ है ? उत्तर रूप वार्तिक-भावकर्तृ करणत्वोपपत्तेः प्रमाणशब्दस्येच्छातोर्थाध्यवसायः ॥ १ ॥ अर्थ—प्रमाण शब्दके भाव अर्थ कर्त्ता अर्थ करण अर्थकी उपपत्ति है यातैं इच्छातैं अर्थको अध्यवसाय है। टीकार्थ-यो प्रमाण शब्द भाव अर्थमें तथा कर्त्ता अर्थमें तथा करण अर्थमें प्रवर्त्तै है तिनमें प्रथम ही भाव अर्थमें तो ऐसैं है कि प्रमेय अर्थ प्रति निवृत्ति भयो है व्यापार जाकै ताकै तत्वका कथनतैं प्रमा जो है सो प्रमाण है। वहुरि कर्ता अर्थमें ऐसैं हैं कि प्रमेय अर्थ जो प्रमाण करने योग्य अर्थ ता प्रति प्रमाण करवा पणांकी शक्तिरूप परिणम्यूं आत्मा जो है ताका आश्रित पणातैं प्रमेयनें प्रमाण करै सो प्रमाण है। वहुरि करण अर्थके विषैं ऐसे है कि प्रमाताके अर प्रमेयके तथा प्रमाणके अर प्रमेयके कथंचित् अन्य पणातैं जा करि प्रमाण करिये सो प्रमाण है ॥ १ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—अनवस्थेति चेन्न दृष्टत्वात्प्रदीपवत् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, ऐसैं माने अनवस्था होय है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रदीपकके समान देखवा पणातैं। टीकार्थ--प्रश्न ? इहां यो विचार करने योग्य है कि प्रमाणकी सिद्धि परतैं है कि स्वतैं ही है जो परतैं है तो जैसैं प्रमेयकी सिद्धि प्रमाणके अधीन है तैसैं प्रमाणकी सिद्धि भी प्रमाणांतरके आधीन है अर प्रमाणांतरकी भी सिद्धि अन्य प्रमाणांतरके अधीन है अर वाकी भी सिद्धि अन्यकै अधीन है ऐसैं अनवस्था है अर जो प्रमाणकी

सिद्धि स्वतै ही है ऐसैं होत संतैं भी जैसैं प्रमाणके स्वतै ही सिद्धि है तैसैं प्रमेयके भी प्रमेयस्वरूपतै ही सिद्धि है यातैं प्रमाण व्यवस्थाकी कल्पना नहीं संभवे अर इच्छा मात्र विशेष हेतुको वचन कहो सो भी नहीं संभवै है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, प्रदीपके समान देखवा पणातै सो ऐसैं है कि प्रदीपक घटादिकनिको प्रकाशक अर आपको भी प्रकाशक देखिये है तैसैं प्रमाण भी अन्यको अर आपको सिद्ध करनें वारो है अथवा यो और अर्थ है जो भाव साधन, कर्तृ साधन करण साधन जे हैं तिनके विषैं कोऊ एक साधनरूप प्रमाण शब्द है। प्रश्न, ऐसैं है तो अनवस्था प्राप्त होय है सो ऐसैं कि एक पदार्थका स्वरूपके विषैं विरुद्ध शक्तिको अवस्थान है सो अनवस्थान है उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, प्रदीपकके समान देखिवा पणांतैं जैसैं एक प्रदीपकके प्रदीपनं कहिये दिपनो ऐसो अर्थ तो भावसाधन रूप है अर प्रदीपयति कहिये प्रकाशै है ऐसो अर्थ कर्त्ता साधन रूप है अर अनेन प्रदीप्यते कहिये या करि दिपै है ऐसो अर्थ करण साधनरूप है ऐसे भावादि शक्तिको अविरोध है तैसैं प्रमाणके भी भावादि शक्तिको अविरोध है यातैं ॥२॥ तथा उत्तर, रूप वार्तिक—इतरथा हि प्रमाण व्यपदेशाभावः ॥ ३ ॥ अर्थ—अर प्रमाणके स्वसंवेदन पणों नहीं मानिये तो प्रमाण नामको ही अभाव होय टीकार्थ—जो प्रमाण आपको प्रकाशक है तो याके पर करि जनावने योग्यपणातैं याके प्रमाण नामही नहीं होय ॥ ३ ॥ तथा उत्तर रूप वार्तिक--विषयज्ञानतद्विज्ञानयोरविशेषः ॥ ४ ॥ अर्थ तथा विषयका ज्ञानके अर वा का विज्ञानके अवशेष होय टीकार्थ—विषयाकारका जानन स्वरूप ज्ञानके विषैं जो स्वाकारको जानन नहीं है तो विषयाकारका जानन रूप विज्ञानके विषैं विषयाकार रूपताही है यातैं दोउनिके अभेद होय ॥ ४ ॥ तथा उत्तर रूप वार्तिक--स्मृत्यभाव प्रसंगश्च ॥ ५ ॥ अथ—अथवा स्मतिका अभावको प्रसंग आवे है। टीकार्थ—पूर्वकालमें अनुपलब्ध अर्थ है ताके सो

ही यो है ऐसो स्मृति ज्ञान नहीं होय है अर जो विज्ञान निज स्वरूपनें नहीं जाने है तो नही प्राप्त
भयो है निज स्वरूपको विज्ञान जाकै ऐसो हुवो सन्तो उत्तर कालमें कैसैं कहै है कि मैं जानूं हूं
तातैं स्मृतिको अभाव होय है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वातिक—फलाभाव इति चेन्नार्थाववोधे प्रीति-
दर्शनात् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, भावसाधनमें फलको अभाव होय है। उत्तर, सो नहीं होय है क्योंकि
अर्थको ज्ञान होतैं प्रीतिको दर्शन है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,भावसाधनके विषैं प्रमाणनें होतां संता
प्रमाणके विषैं प्रमा ही प्रमाण है क्योंकि प्रमा विना और प्रमाणको फल नहीं पावै है यातैं फलको
अभाव होय है सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, अर्थका जाननेके विषैं प्रीति को दर्शन है
यातैं सो ऐसैं है कि जानन है स्वभाव जाको अर कर्मकरि मलीन ऐसो आत्मा जो है ताके इंद्रि-
यनिका अवलम्बनतैं अर्थका निश्चयनें होतां संता प्रीति उत्पन्न होय है सो प्रमाण को फल है
ऐसैं कहिये है ॥ ६ ॥ तथा वार्तिक—उपेक्षाज्ञाननाशो वा ॥७॥ अर्थ—अथवा उपेक्षा और अज्ञान-
को नाश होय है। टीकार्थ—राग द्वेषका नहीं धारन करना रूप तो उपेक्षा अर अज्ञानका नाश ये
दोय फल है ऐसैं कहिये है ॥ ७ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—ज्ञातृप्रमाणयोरन्यत्वमिति चेन्ना-
ज्ञत्व प्रसंगात् ॥८॥ अर्थ—प्रश्न, ज्ञाताके अर ज्ञानके अन्य पणौं है ? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि ऐसैं
मानें ज्ञाताके अज्ञपणांको प्रसंग आवे है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, आपनें तथा परनें प्रमाण करे सो
प्रमाण ऐसो कर्तृ साधन पणौं कहो हो सो अयुक्त है क्योंकि जातैं अन्य प्रमाण स्वरूप ज्ञान है
सो गुण है अर अन्य प्रमाता आत्मा है सो गुणी है अर गुण गुणीके अन्यपणौं द्रव्य रूपके समान
है तैसैं ही आत्मा इंद्रिय मन अर्थ इनिका सन्निकर्षतैं जो उत्पन्न होय है सो अन्य है ऐसा वचन
तैं अन्य तो प्रमाण है अर अन्य प्रमाता है तातैं करण साधन पणौं ही युक्त है ? उत्तर, सो नहीं है
प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अज्ञ पणांको प्रसंग आवै है यातैं क्योंकि ज्ञानतैं भिन्न आत्मा जो है

ताकै अज्ञपणौं घटके समान प्राप्त होय है ॥८॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक---ज्ञान योगादितिचेन्नातत्स्वभावत्वे ज्ञातृत्वाभावोऽध प्रदीपसंयोगवत् ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न, ज्ञानका योगतैं ज्ञाता है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अतत्स्वभावनें होतां संता ज्ञाता पणांकौ अभाव अन्धके प्रदीपकका संयोगके समान है। टीकार्थ--प्रश्न, ज्ञानका योगतैं ज्ञाता पणौं है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, ज्ञातृ स्वभावका अभावनें होतां संता ज्ञाता पणांको अभाव है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, अन्धका अर प्रदीपकका संयोगके समान सो ऐसैं है कि जैसैं जन्मांधके प्रदीपकका संयोगनें होतां संता द्रष्टा पणौं नहीं होय है तैसैं ही ज्ञानका संयोगनें होतां संतां भी अज्ञ स्वभाव आत्मा जो है ताकै ज्ञाता पणौं नहीं होय है॥९॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—प्रमाण प्रमेययोरन्यत्वमिति चेन्नानवस्थानात् ॥१०॥ अर्थ--प्रश्न,प्रमाण और प्रमेयके अन्यपणौं है? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि अनवस्थान होय है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न,प्रमाण तो अन्य है अर प्रमेय अन्य है। प्रश्न,काहेतैं? उत्तर, दीपकके अर घटके समान लक्षण भेद है यातैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण? उत्तर, अनवस्थान है यातैं सो ऐसैं है कि जो जैसैं वाह्य प्रमेयाकारतैं प्रमाण अन्य है तैसैं अभ्यंतर प्रमेयाकारतैं भी अन्य है तो या अभ्यंतर प्रमाणके अनवस्था होय है सो ऐसैं है कि घटाकार ज्ञान जो है सो तो वाह्य प्रमेयाकार है अर वा को जानन भाव जो है सो अभ्यंतर प्रमेय है अर प्रमेयको सिद्ध करनें निमित्त प्रमाण अवश्य चाहिये तातैं ताकै जानने निमित्त अन्य तीसरा प्रमाणांतर चाहिये अर सो हू प्रमेय रूप है तातैं ताकै जानने निमित्त चतुर्थ प्रमाणांतर चाहिये ऐसैं अनवस्था होय है तातैं कथंचित्प्रमाण प्रमेय अन्य नहीं है ॥ १० ॥ तथा वार्तिक—प्रकाशवदिति चेन्न प्रतिज्ञाहानेः॥११॥ अर्थ--प्रश्न, प्रमाण प्रकाशकके समान है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि ऐसैं माने प्रमाणके और प्रमेयके सर्वथा अन्य पणौं कह्यो हुतो ता प्रतिज्ञाकी हानि होयगी। टीकार्थ-प्रश्न, तहां ऐसैं है तो हू अन-

वस्था दोष नहीं है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, प्रकाशके समान सो ऐसैं है कि जैसैं प्रकाशके घटादिक-निको तथा आपको प्रकाश पणौं है यातैं प्रकाशके अनवस्था दोष नहीं है ऐसैं ही प्रमाण प्रमेयके अन्य पणौं होतां संता भी अनवस्था नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, प्रतिज्ञा—की हानि होयगी यातैं क्योंकि प्रकाश जो है सो निश्चय करि अपना स्वरूप को अभास है सो आपका अर परका प्रकाशनमें समर्थ है ऐसैं दिखायो संतो प्रमाण प्रमेयके अन्य पणांकी प्रतिज्ञा जो है ताहि दूरि करै है॥ ११ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अनन्यत्वमेवेति चेन्नोभयाभाव-प्रसंगात् ॥ १२ ॥ अर्थ---प्रश्न,अन्य पणांमें दोष आवै है तो अन्य पणौं ही हो ? उत्तर, सो नहीं है तो क्योंकि दोउनिका अभावको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ--जो अन्यपणानें होतां संता दोष है तो ज्ञाताके अर प्रमाणके तथा प्रमाणके अर प्रमेयके अन्य पणौं ही है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, दोउका अभावको प्रसंग आवै है यातैं सो ऐसैं है कि जो ज्ञातातै अन्य प्रमाण है अर प्रमाणतैं अनन्य प्रमेय है तो इनि युगलनिके विषैं एकका अभावनें होतां संता वा तैं अविना-भावी दूसरो जो है ताका भी अभावको प्रसंग आवेगो। भावार्थ-ज्ञाताका अभावनें होतां संता करण रूप प्रमाणको अभाव अवश्यम्भावी है क्योंकि कर्त्ताकी क्रियाको सापेक्ष पणौं करणके होय है सो कर्त्ताका अभावमें नहीं संभवै यातैं अर प्रमाणका अभावनें होतां संता ज्ञाताको अभाव अवश्यंभावी है क्योंकि करण सामिग्री विना निश्चल अविक्रियके कर्त्ता पणौं नहीं संभवै है तथा प्रमाणका अभाव-नें होतां संता प्रमेयको अभाव अवश्यभावी है क्योंकि जा वस्तुको ग्राहक प्रमाण नहीं है सो वस्तु आकाशके पुष्पके समान अभाव रूप है यातैं अर प्रमेयका अभावनें होतां संता प्रमाणको अभाव अवश्यंभावी है क्योंकि प्रमेय विना प्रमाण काहेको निश्चय करे अर निश्चय नहीं करे तो प्रमाण नाम ही नहीं रहै। प्रश्न, ऐसैंहै तो कैसै सिद्ध है ? उत्तर रूपवार्त्तिक--अनेकांतात् सिद्धिः ॥१३॥ अर्थ-उत्तर,

अनेकांततैं सु सिद्ध है। टीकार्थ-उत्तर,अनेकांततैं सिद्धि है सो ऐसैं है कि कथंचित् अन्यपणौं कथांचित् अनन्यपणौं है इत्यादि सो संज्ञा लक्षण आदिका भेदतैं तो कथंचित् अन्यपणौं है अर भिन्न अनुपलब्धितैं कथंचित् अनन्य पणौं है इत्यादि सप्त भंग रूप है तातैं या सिद्ध भई कि प्रमेय तो नियमतैं प्रमेय ही है अर प्रमाण जो है सो प्रमाण भी है अर प्रमेय भी है ॥ १३ ॥ वर्तिक—वक्ष्यमाणभेदापेक्षया द्वित्वनिर्देशः ॥ १४ ॥ अर्थ—वक्ष्यमाण भेदकी अपेक्षा करि द्विवचन पणांको निर्देश है। टीकार्थ—आद्ये परोक्षं, प्रत्यक्षमन्यत्, ऐसैं कहेंगे ताकी अपेक्षा करि प्रमाणे ऐसैं द्विवचनको निर्देश वचन करिये है ॥ १४ ॥ वार्त्तिक---तद्वचनं सन्निकर्षादिनिवृत्यर्थम् ॥ १५ ॥ अर्थ—तत् वचन जो है सो सन्निकर्षादि प्रमाणाभासकी निवृत्तिके अर्थि है। टीकार्थ-तत् कहिये मत्यादि ज्ञान वर्णन कियो सो प्रमाण लक्षनें प्राप्त होय है अर सन्निकर्षादिकप्रमाणनें नहीं प्राप्त होय है प्रश्न, सन्निकर्षादिकनिके प्रमाणपणांनें होतां संता कहा दोष है? ॥१५॥ उत्तररूप वार्तिक—सन्निकर्षे प्रमाणे सकलपदार्थपरिच्छेदाभावस्तदभावात् ॥ १६ ॥ अर्थ--सन्निकर्षनें प्रमाण होतां संता सकल पदार्थका परिज्ञानको अभाव होय है क्योंकि सन्निकर्षको अभाव है यातैं। टीकार्थ—जाको मत ऐसो है कि सन्निकर्ष तो प्रमाण है अर अर्थको अधिगम फल है ताकै सकल पदार्थनिको परिज्ञान नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, वाको अभाव है यातैं अर्थात् वा सन्निकर्षको अभाव है यातैं। प्रश्न, कैसैं? उत्तर,ऐसैं कहो हो तो कहिये है सो सुनो कि जा काहूनें सर्वज्ञ होनों योग्य है ताकै जो पदार्थका परिज्ञानको हेतु सन्निकर्ष है सो सन्निकर्ष चार विषय तथा तीन विषय तथा दो विषय रूप है कि आत्मा तो मन करि संयुक्त होय अर मन इंद्रिय करि संयुक्त होय अर इंद्रिय पदार्थ करि संयुक्त होय तदि पदार्थको ज्ञान होय है सो सन्निकर्ष प्रमाण मानिये है तिनमें चार विषय तथा तीन विषय तो नहीं संभवै है क्योंकि मनकै अर इंद्रियनिकै एक काल प्रवृत्ति पणांको अभाव है तथा

भिन्न भिन्न नियमरूप विषय पणौं है यातैं अर सूक्ष्म अंतरित विप्रकृष्ट रूप त्रिकालवर्त्ती ज्ञेय अनंतो है सो इहां मन अर इंद्रियनि करि कैसैं खींचिये है अर वा ज्ञेयका सन्निकर्षनैं नहीं होतां संता वाको जानन रूप फल नहीं प्रवर्ते है यातैं सर्वज्ञको अभाव होय है अर सर्वज्ञका अभावतैं ही दोय विषय संनिकर्षको अभाव है क्योंकि सवज्ञ नहीं तदि सर्वको सन्निकर्ष भी नहीं ॥ १६ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक--सर्वगतत्वादात्मनः सकलेनार्थेन सन्निकर्ष इति चेन्न तस्य परीक्षायामनुपपत्तेः ॥१७॥ अर्थ प्रश्न--आत्माकै सर्वगत पणातैं सकल अर्थ करि सन्निकर्ष है। उत्तर,सो नहीं है क्योंकि सर्वगत पणांकी परीक्षाके विषैं अनुपपत्ति है यातैं। टीकार्थ-प्रश्न सर्वगत पणातैं आत्माके सकल अर्थकरि सन्निकर्ष है ऐसैं कहो सो नहीं है क्योंकि सर्वगत पणांकी परीक्षाके विषैं अनुपपत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि जो सर्वगत आत्मा है तो वाकै क्रियाका अभावतैं पुण्य पापका कर्तापणांका अभावनैं होतां संता पाप पुण्य पूर्वक संसार अर संसारका अभाव रूप मोक्ष नहीं संभवै है। प्रश्न, इंद्रिय समूहकै संसार है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इंद्रिय समूहकै अचेतन पणौं है यातैं अर इंद्रिय समूहकै ही मोक्षकी प्राप्ति होयगी यातैं ॥ १७ ॥ तथा वार्त्तिक—सर्वेन्द्रियसन्निकर्षाभावश्चक्षुर्मनसो प्राप्यकारित्वाभावात् ॥ १८ ॥ अर्थ—अथवा सर्व इंद्रियनिकै सन्निकर्षको अभाव है क्योंकि चक्षुकै अर मनकै प्राप्यकारी पणांको अभाव है यातैं। टीकार्थ—अथवा सर्व इन्द्रिय विषय सन्निकर्ष नहीं सम्भावै है क्योंकि चक्षुकै अर मनकै प्राप्यकारी पणांको अभाव आगे कहैंगे यातैं ॥ १८ ॥ तथा वार्त्तिक—सर्वथाग्रहणप्रसंगश्च सर्वात्मना सन्निकृष्टत्वात् ॥ १९ ॥ अर्थ--अथवा प्राप्यकारी होत संतै सर्वथा ग्रहणको प्रसंग आवै है क्योंकि सर्वात्मा करि सन्निकर्ष पणौं होय है यातैं। टीकार्थ--अर जे इंद्रियां प्राप्यकारी हैं तिन करि भी सर्वथा अर्थका ग्रहणको प्रसंग प्राप्त होय। प्रश्न,काहेतैं ?,उत्तर,सर्वात्मा करि प्राप्त होवा पणातैं। भावार्थ--इंद्रिय सन्निकर्षकूं

प्रमाण माननेवारेके पदार्थको सर्व ग्रहण होनों चाहिये क्योंकि जे प्राप्यकारी है ते सर्वात्मकरि पदार्थतैं भिड़ै है तातैं पदार्थका सर्व गुण पर्यायनैं जाने चाहिये सो नहीं जाने हैं यातैं सन्निकर्ष प्रमाण नहीं है ॥ १९ ॥ तथा वार्त्तिक—तत्फलस्य साधारणत्वप्रसंगः स्त्रीपुरुषसंयोगवत् ॥ २० ॥ अर्थ--सन्निकर्षका फलके साधारणपणांको प्रसंग स्त्री पुरुषका संयोगके समान होय है। टीकार्थ-वासन्निकर्ष प्रमाणके जो अर्थका जाननरूप फल है तानै साधारण होनों योग्य है। प्रश्न,कैसैं ? उत्तर, स्त्री पुरुषका संयोगके समान जैसैं स्त्री पुरुषका संयोग जनित सुख दोउनिकै ही साधारण है तैसैं इन्द्रियनिके अर मनके अर्थका भावको जाननो प्राप्त होय है ॥ २० ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक-शय्यावदिति चेन्नाचेतनत्वात् ॥ २१ ॥ अर्थ—प्रश्न, शय्याके समान इंद्रियनिके जाननों नहीं होय हैं। उत्तर,सो नहीं है क्योंकि मन आदिके भी चेतन पणौं है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न, जैसैं शय्या-दिकनिके पुरुषको संयोग साधारण होत संतैं भी वो फलरूप सुख शय्यादिकनिकै नहीं है। प्रश्न,तो कौनके है ? उत्तर,वो फलरूप सुख पुरुषके ही है तैसैं ही इहां भी जानना कि इंद्रियके तथा मनके जानन भाव नहीं है ? उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, अचेतन पणातैं अर्थात् अचेतन शय्यादिक जे हैं तिनके संयोगने होतां संता भी सुख नहीं है अर मन इंद्रियनिके होय है ॥२१॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—इहापि तत एवेति चेन्नाविशेषात् ॥ २२ ॥ अर्थ—प्रश्न, अचेतन पणातैं ही मन आदिकै ज्ञान नहीं होय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अचेतन पणौं आत्मामें अर मन इंद्रिय आदिमें अविशेषतैं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,ये मन आदि जे हैं तिनके सन्निकर्षनै होतां संता भी ज्ञानरूप फल नहीं होय है। प्रश्न,काहेतैं?उत्तर,अचेतनपणातैं ही ? उत्तर,सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर,अविशेषतैं अर्थात् प्रथम तो अज्ञ स्वभाव पणौं सर्व आत्मादिकनिकै अविशेष-रूप है कि समान है तिनमें यो विशेष कौन कृत है कि सन्निकर्षको फल जानन रूप अर्थान्तरभूत

होतो संतो भी सदा काल आत्मा करि ही संबंधने प्राप्त होय है अर मन आदि करि नहीं संबंधनें प्राप्त होय है प्रश्न,आत्माके ज्ञ स्वभावनें होतां संता जानन होय है। उत्तर,ऐसें मानैं तो प्रतिज्ञाकी हानि होवेगी अर्थात् जानन स्वभाव ही आत्माने मानेंगे तो तुमारी प्रतिज्ञा ऐसी है कि ज्ञान गुण-का योगतैं जाने है ताकी हानि होवेगी ॥२२॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक-समावायादिति चेन्ना विशेषवत् ॥ २३ ॥ अर्थ--प्रश्न समवायतैं आत्मामें चेतन पणौं है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि समवायको संबंध दोउनिके अविशेषतैं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, समवाय नामा अयुत सिद्ध लक्षण संबंध है ताको कियो यो विशेष है कि जानन भाव आत्माके ही होय है अर मन इन्द्रियनिके नहीं होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अविशेष है यातैं अर्थात् समवाय जो है निश्चय करि सर्वगत है अर ज्ञ स्वभाव शून्यपणों आत्मामें अर मन आदिमें समान होतां संतां भी यो समवाय आत्मा करि ही ज्ञाननें संबंध रूप करै है अर मन आदि करि ज्ञाननें संबंध रूप नहीं करै है यो वचन ज्ञानवाननिका मनके विषैं प्रीतिको करनवारो नहीं है ऐसैं ही इंद्रि-यनिके विषैं भी जोड़नें योग्य है॥ २३ ॥ अवैं ग्यारमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि अनुमान उपमानके विषैं तथा अनुमान आगमके विषैं तथा अनुमान प्रत्यक्षके विषैं तथा उपमान प्रत्यक्ष के विषैं तथा उपमान आगम प्रत्यक्षके विषैं तथा प्रत्यक्ष परोक्षके विषैं सूं कोऊ युगलका ग्रहण-में विपर्यय प्रसंग होत संतै मत्यादिकनिके विषैं अवशेषकरि प्रमाणद्वयकी प्राप्ति होवातैं निश्चय करने निमित्त सूत्रकार कहे हैं। सूत्रम्

आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥

अर्थ--पूर्व सूत्रमें कहे जे ज्ञानके भेद तिनमें आदिके दोय जे हैं ते परोक्ष हैं। वार्त्तिक--आदि शब्दस्यानेकार्थवृत्तित्वे विवक्षातः प्रथम्यार्थः संग्रहः ॥ १ ॥ अर्थ---आदि शब्दके अनेक अर्थनिमें

प्रवृत्ति होत संतै भी वक्ताकी इच्छातैं प्रथम पणां रूप अर्थको ग्रहण है। टीकार्थ—यो आदि शब्द अनेक अर्थनि में प्रवृत्ति करन वारो है कि कहूं तो प्रथम अर्थके विषें प्रवर्तै है कि अकारादिक वर्ण है तथा ऋषभादिक तीर्थंकर है। वहुरि कहूं प्रकार अर्थके विषें प्रवर्तै है कि भुजंगादि कहिये सर्प समान घातक जे हैं ते दूरि करने योग्य है। वहुरि कहूं व्यवस्था अर्थ में प्रवर्तै है कि सर्वादिक सर्व नाम है। वहुरि कहूं सामीप्य अर्थमें प्रवर्तै है कि नद्यादिक क्षेत्र है कि नदीके समीप क्षेत्र है। वहुरि कहूं अवयव अर्थमें प्रवर्तै है कि टिदादिक है कि टित् याको अवयव ही है इनमें सूं इहां आदि शब्दको वक्ताकी इच्छातैं प्रथम पणांको अर्थ जानवे योग्य है अर्थात् आदिमें होय सो आद्य कहिये। प्रश्न, सो कहा है? उत्तर, मति श्रुत है ॥ १ ॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—श्रुताग्रहणम प्रथमत्वात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, श्रुतको अग्रहण है क्योंकि श्रुतके प्रथम पणाको अभाव है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न, आदि शब्द करि श्रुतको ग्रहण नहीं प्राप्त होय है प्रश्न,काहेतैं? उत्तर,अप्रथमपणातैं अर्थात् सूत्रमें श्रुत प्रथम नहीं है ॥ २ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--उत्तरापेक्षयाद्वित्वमिति चेन्नाति प्रसंगात् ॥३॥ अर्थ--प्रश्न,उत्तरकी अपेक्षातैं प्रथम पणौं है? उत्तर,सो नही है क्योंकि अति प्रसंग होय है यातै। टीकार्थ--प्रश्न, अवधि आदि उत्तर जे हैं तिनकी अपेक्षा करि श्रुतके आदि पणौं है उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अति प्रसंग है यातैं अर्थात् जो उत्तरनें अपेक्षा करि आदिपणौं कल्पना करिये है तो केवलनें अपेक्षाकरि सर्वके आदि पणौं प्राप्त होय है ॥ ३ ॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--द्वित्वनिर्देशादिति चेन्न तदवस्थत्वात् ॥ ४॥ अर्थ—प्रश्न, द्विवचनका निर्देशतैं अति प्रसंग नही है? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि वा अतिप्रसंगके अवस्थित पणौं है यातैं। टीकार्थ--प्रश्न, द्वित्वका निर्देशनें होतां संता सर्वको संग्रह नहीं होय है यातैं अति प्रसङ्ग नहीं है अर्थात् दोयको ही संग्रह होय है, सो नहीं है ॥ प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, ता दोषका अवस्थानतैं अति

प्रसंग ही है क्योंकि कौन दोय जे हैं तिनको ग्रहण है ॥ ४ ॥ ऐसैं प्रश्नोत्तर होत सतैं आचाय सिद्धांत वचन कहै है। वार्तिक---न वा प्रत्यासत्तेः श्रुत ग्रहणम् ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा पूर्वोक्त दूषण नहीं है क्योंकि मतिके निकट है यातैं श्रुतको ग्रहण है। टीकार्थ—अथवा यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, मतिके निकट है यातैं श्रुतको ग्रहण है क्योंकि द्विवचनका निर्देशतैं जो ग्रहण करने योग्य है सो आदिके निकट है तातैं वो ही ग्रहण करिये है क्योंकि वाकै ही समीप पणातैं औपचारिक प्रथम पणौं है तथा श्रुततैं अथवा अर्थतैं भी समीप पणौं श्रुतके ही है ॥५॥ वार्त्तिक—उपात्तानुपात्त प्राधान्यादवगमः परोक्षम् ॥ ६ ॥ अर्थ—उपात्त अनुपात्त अर प्रकाशादि पर इनका प्रधानपणातैं ज्ञानन होय सो परोक्ष है। टीकार्थ उपात्त तो स्पर्शन रसन घ्राण श्रोत्र इन्द्रियां अर अनुपात्त चक्षु और मन अर प्रकाश उपदेशादि पर इनका प्रधान पणांते जो अवगमः कहिये जानना होय सो परोक्ष ज्ञान है ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं गति शक्ति करि संयुक्त अर स्वयमेव गमन है तैसैं ही मतिज्ञानावरण श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमनैं होतां संता जानन स्वभाव संयुक्त अर स्वयमेव जाननेकूं असमर्थ आत्मा जो है ताकै पूर्वोक्त कारणनिकी प्रधानतारूप दोउ हो ज्ञान जो है सो पराधीन पणातैं परोक्ष है ऐसैं कहिये है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—अतएव प्रमाणत्वाभाव इत्यनुपालंभः ॥७॥ अर्थ-पराधीनपणातैं हो प्रमाणपणांको अभाव है ऐसो उपालंभन नहीं है। टीकार्थ-या विषयमें अन्य वादी उपालंभते कहिये वोलंभो देवे है कि परोक्ष ज्ञान प्रमाण नहीं है क्योंकि जाकरि प्रमाण करिये सो प्रमाण है अर परोक्ष प्रमाणतैं ही परोक्ष करि किंचित् भी नहीं प्रमाण करिये है ऐसैं कहै है सो उपालंभ नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, परोक्ष पणातैं ही क्योंकि जातैं पराधीन है तातैं ही परोक्ष है ऐसैं कहिये हैं परन्तु अजानन भावरूप नहीं है ॥ ७ ॥ अवैं द्वाद-

शमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये हे कि कह्यो है लक्षण जाको ऐसा परोक्ष ज्ञानतैं अन्य सर्व ज्ञान जे हैं तिन सवनिके प्रत्यक्षपणौं जनावने निमित्त सूत्रकार कहे है। सूत्रम्—

प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥

अर्थ—परोक्षतैं अन्य ज्ञान तीन प्रकार है ऐसैं कहिये हैं। प्रश्न, यो प्रत्यक्ष शब्द कहा अर्थको वाचक है? उत्तररूप वार्तिक—इन्द्रियानिंद्रियानपेक्षमतीतव्यभिचारं साकारग्रहणं प्रत्यक्षम् ॥ १ ॥ अर्थ—इन्द्रिय और अनिंद्रियकी नहीं है अपेक्षा जा विषैं अर दूर भयो है व्यभिचार तातैं ऐसो साकार ग्रहण जो है सो प्रत्यक्ष है। टीकार्थ-इन्द्रिय तो चक्षु आदि पांच अर अनिंद्रिय मन तिनके विषैं कोऊकी भी अपेक्षा जाके नहीं विद्यमान है अर जो जामें नहीं है ताको तामें ज्ञान होनो सो व्यभिचार है अर दूर भयो है व्यभिचार जाको सो अतीत व्यभिचार है अर विकलरूप आकार सहित वर्तै सो साकार है। भावार्थ—मन इन्द्रियनिकी अपेक्षा रहित अव्यभिचारी आकार सहित ग्रहण करन वारो ज्ञान जो है सो प्रत्यक्ष कहिये है या लक्षणमें इन्द्रिय अनिंद्रियकी अपेक्षा रहित विशेषण जो है सो तो मतिश्रुतका निषेधके अर्थि है क्योंकि वे भी अव्यभिचारी साकार ग्राही है परन्तु इन्द्रिय अनिंद्रियकी अपेक्षा सहित है यातैं। वहुरि अतीत व्यभिचारी विशेषण जो है सो विभंगज्ञानका निषेधके अर्थि है क्योंकि विभंग ज्ञान इन्द्रिय अनिंद्रियकी अपेक्षा रहित तो है परंतु मिथ्यादर्शनका उदयतैं व्यभिचारी है यातैं। वहुरि साकार ग्रहण विशेष जो है सो अवधि दर्शन तथा केवल दर्शनका निषेधके अर्थ है क्योंकि वे अनाकार है यातैं ॥ १ ॥ प्रश्न, या सूत्र करि या नियम रूपता ही भई कि कुछ और भी प्रयोजन कहनें योग्य है? उत्तर, प्रश्न, कैसें? उत्तर, कहिये है वार्त्तिक—अक्षं प्रतिनियतमिति परापेक्षानिवृत्तिः ॥ २ ॥ अर्थ—अक्ष प्रति नियमरूप है यातैं

पराधीन पणांकी निवृत्ति है। टीकार्थ—इहां अक्ष शब्दकी निरुक्ति ऐसी है कि अक्ष्णोति व्यप्नोति जनातीति अक्षः याको अर्थ ऐसो है कि ज्ञेय पदार्थनें प्राप्त होय कि जानें सो अक्ष कहिये अर्थात् प्राप्त भयो है क्षयोपशम जाकै अथवा क्षीण भयो है अवरण जाकै ऐसो आत्मा जो है ता प्रति ही नियमरूप होय सो प्रत्यक्ष है ऐसा समासतैं परकी अपेक्षा जो है ताकी निवृत्ति करी है ॥ २ ॥ वार्तिक—अधिकाराद्नाकारव्यभिचारव्युदासः ॥३॥ अर्थ-प्रत्यक्ष ज्ञानका अधिकारतैं दर्शनको अर व्यभिचारी ज्ञानको निषेध है। टीकार्थ—यो प्रत्यक्ष ज्ञान अधिकारमें कियो सो सम्यग् है यातैं अनाकार दर्शन जो है ताको अर व्यभिचारी विभङ्ग ज्ञान जो है ताको निषेध कियो है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—करणात्यये ग्रहणाभाव इति चेन्न दृष्टत्वादीशवत् ॥ ४ ॥ अर्थ—प्रश्न, इन्द्रियनिका अभावमें पदार्थका ग्रहणको अभाव है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि समर्थके समान देखवा पणातैं। टीकाथ—प्रश्न,इन्द्रिय समूहका अभावनैं होतां संता अर्थको ग्रहण कहीं प्राप्त होय है क्योंकि इन्द्रिय रहितकै कछू भी ज्ञान नहीं देखिये है? उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, देखवा पणातैं प्रश्न,कैसे? उत्तर, समर्थके समान सो ऐसैं है कि जैसैं असमर्थ रथको कर्ता जो है सो उपकरणनिकी अपेक्षा सहित हुवो संतो रथनें करै है अर उपकरणका अभावनें होतां संता असमर्थ होय है अर जो तप विशेषतैं परिपूर्ण प्राप्त भई है ऋद्धि विशेष जाकै ऐसो समर्थ जो है सो वाह्य उपकरणरूप गुणकी अपेक्षा रहित हुवो संतो अर्थनिनें जानै है। वहुरि वो ही पुरुष क्षयोपशम विशेषनैं तथा क्षयनें होतां संता इन्द्रियनिकी अपेक्षा रहित हुवो संतो अपनी शक्ति करि ही अर्थनिनें जानै है ऐसैं होते कहा विरोध है ॥ ४ तथा वार्तिक—ज्ञानदर्शनस्वभावत्वाच्च भास्करादिवत् ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा ज्ञान दर्शन स्वभाव पणातैं भास्कर आदिके समान प्रकाशै है कि देखै जानै है। टीकार्थ—अथवा जैसैं भास्करादि प्रकाश स्वभाव पणातैं प्रकाशांतरकी अपेक्षा रहित हुआ

संता प्रकाश करने योग्य अर्थनिनैं प्रकाशै है तैसैं ही ज्ञान दर्शन स्वभाव आत्मा वा ज्ञानावरणका क्षयनें तथा क्षयोपशम विशेषनें होतां संता अपनी शक्ति करि ही अर्थनिनें अंगीकार करै है ऐसैं सिद्ध भयो ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—इन्द्रियनिमित्तं ज्ञानं प्रत्यक्षं तद्विपरीतं परोक्षमित्य विसंवादिलक्षणमिति चेन्नाप्तस्य प्रत्यक्षाभावप्रसंगात् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, इंद्रिय है निमित्त जानें ऐसो ज्ञान प्रत्यक्ष है अर यातैं विपरीत परोक्ष है या प्रकार अविसंवादी लक्षण है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि आप्तके प्रत्यक्षज्ञानका अभावको प्रसंग आवैं है। टीकार्थ—प्रश्न, इन्द्रियनिका व्यापारतैं उत्पन्न भयो ज्ञान जो है सो प्रत्यक्ष है अर व्यतीत भयो है इन्द्रियनिको विषय प्रति व्यापार जा विषैं सो परोक्ष है यो विसंवाद रहित लक्षण है सो ही कह्यो है। श्लोक—प्रत्यक्षं कल्पनापोढं नाम जात्यादियोजना। असाधारण हेतुत्वादक्षैस्तद्व्यपदिश्यतेः ॥ १ ॥ अर्थ—इन्द्रियनि करि कल्पना रहित जो नाम जाति आदिको योजना है सो प्रत्यक्ष कहिये क्योंकि इन्द्रियनिके असाधारण हेतु पणों है यातैं ॥१॥ अर इन्द्रिय अर्थका सन्निकर्षतैं उत्पन्न भयो ज्ञान जो है सो अव्यप देश है कि विसंवाद रहित है ऐसैं कोई कहै है अर आत्मा इन्द्रिय मन अर्थ इनि चारिनिका सन्निकर्षतैं जो उत्पन्न होय है सो अव्यभिचारी व्यवसायात्मक प्रत्यक्ष हैं केई कहै है । तथा श्रोत्र आदिकरि है प्रवृत्ति जाकी सो प्रत्यक्ष है ऐसे केई कहै है अर निरन्तर इन्द्रियनिका प्रयोगनें होतां सता पुरुषके वुद्धिको जन्म है सो प्रत्यक्ष है ऐसैं केई कहै है ऐसैं सर्व जन इन्द्रिय जनितनें हो अंगीकार करै है यातैं ही वो लक्षण विसम्वाद रहित निश्चय करवो योग्य है?उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न,कहा कारण?उत्तर, आप्तके प्रत्यक्ष ज्ञानका अभाव को प्रसंग आवै है यातैं सो ऐसैं है कि जो इन्द्रिय निमित्त हो ज्ञान प्रत्यक्ष इष्ट करिये है तो ऐसैं होत सतै आप्तके प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होय क्योंकि वाकै इन्द्रिय पूर्वक अर्थको जानन नहीं है अर वाकै इन्द्रिय पूर्वक ही ज्ञान कल्पना करिये तो वाकै असवज्ञपणों आवै है

ऐसैं पूर्वैं वर्णन कियो ही है ॥६॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक-आगमादितिचेन्न तस्य प्रत्यक्षज्ञानपूर्वकत्वात् ॥७॥ अर्थ—प्रश्न,अतींद्रिय अर्थका जानन आगमतैं होय है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा आगमके प्रत्यक्षज्ञान पूर्वक पणाैं है यातैं । टीकार्थ--प्रश्न,अव्याहत कहिये नहीं हणी जाय है शक्ति जाकी ऐसी आत्माके आगमतैं अतींद्रिय अर्थका जानपननैं होत सतैं सर्व अर्थका जानना होय है कि सर्वज्ञ होय है । उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कारण ? उत्तर, वा आगमके प्रत्यक्ष ज्ञानपूर्वक पणाैं है यातैं क्योंकि क्षीण भये हैं दोष जाके ऐसा आप्तनें प्रत्यक्ष ज्ञानतैं कह्यो जो है सो आगम है सर्व शास्त्रमात्र ही आगम नहीं है अर जो सर्वशास्त्र ही आगम है तो सर्वशास्त्रके अभेद होय सो अभेद नहीं है यातैं आगम के प्रमाण ताको अभाव होय ॥७॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--अपौरुषेयादिति चेन्न तदसिद्धे ॥८॥अर्थ-प्रश्न,अपौरुषेय है यातैं । उत्तर,सो नहीं है क्योंकि अपौरुषेयपणांकी असिद्धि है। टीकार्थ—प्रश्न, अनादिनिधन अपौरुषेय आगम है सो अत्यन्त परोक्ष अर्थक विषैं अरोकि गतिमान है तातैं सब अर्थनिको जानन होय है? उत्तर, सो नहीं है । प्रश्न,कहा कारण?उत्तर,वाकी असिद्धि है यातैं क्योंकि कोऊ आगम अपौरुषेय सिद्ध नहीं है यातैं अर हिंसादिकका विधाननें कहन वारो जो है ताकै प्रमाण ताकी असिद्धता है ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक-अतींद्रिययोगिप्रत्यक्षमिति चेन्नार्थाभावात् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, अतींद्रिययोगि प्रत्यक्ष है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अर्थ को अभाव है यातैं । टीकार्थ--प्रश्न,योगीके अतींद्रिय प्रत्यक्ष ज्ञान है सो आगमका विकल्पतै रहित है ताकरि यो योगी सर्व अर्थनिनैं प्रत्यक्ष जानैं है सो ही कह्यो है ॥ ६ ॥ अर्द्ध श्लोक--योगिनां गुरु निर्दशादितिभिन्नार्थ मात्रदृक् ॥१०॥ अर्थ—योगिनिके गुरुका उपदेशतैं अति भिन्न अर्थमात्रको देखनों है । उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अर्थका अभावतैं इहां अर्थ शब्दका दोय अर्थ है तिनमें प्रथम ता अर्थ नाम अक्षरार्थका है ताकी अपेक्षा ऐसी निरुक्ति होय है कि

अक्षं अक्षं प्रति वर्तते इति प्रत्यक्षं याका अर्थ ऐसा है कि इन्द्रिय इन्द्रिय प्रति प्रवर्तै सो प्रत्यक्ष सो यो अर्थ योगीके विषैं नहीं प्रवर्तै है क्योंकि योगीके इन्द्रिय जनित ज्ञानका अभाव है यातें। बहुरि अर्थ नाम भावका है ताकी अपेक्षा सर्व भाव नहीं है कि ज्ञानके परिणाम नहीं है क्योंकि स्वरूप तथा पररूप तथा उभयरूप हेतु अहेतुतें उत्पत्ति आदिका अभावतें सामान्य विशेषरूप एक अनेक जे हैं तिनके विषैं प्रवृत्तिका असंभव आदि दोषनिकी उपपत्ति है यातें तातैं अर्थका अभावतें निरालंबन योगीके ज्ञान कैसें है। भावार्थ--तिहारे ज्ञान नित्य है ताके परणति नहीं सम्भवै है। प्रश्न, सविकल्प स्वरूप करि भाव नहीं है निर्विकल्प स्वरूप करि है? उत्तर, या भी अयुक्त है। प्रश्न, काहेतें उत्तर, निर्विकल्पके जाननेका उपायको अभाव है यातें अर निर्विकल्प अर्थ भी है तथा निर्विकल्प अर्थ है विषय जाको ऐसो ज्ञान भी है ऐसें कहने कूं तुम समर्थ नहीं क्योंकि निर्विकल्प अर्थका तथा ज्ञानका लक्षणको तिहारे अभाव है यातें ॥१०॥ तथा वार्तिक-तदभावाच्च ॥११॥ अर्थ—अथवा योगीको अभाव है यातें। टीकार्थ—अथवा योगीको अभाव है यातें। अर्थात् याका कल्पित कोऊ योगी विद्यमान नहीं है क्योंकि वाका विशेष लक्षणका अभावतें अथवा सर्वके विरह है यातें। प्रश्न, निर्वाणकी प्राप्ति होत संते वहां यो योगी है अर्थात् निर्वाण दोय प्रकार है तहां सोपधि विशेष है दूसरा निरुपधि विशेष है तिनमें सोपधि विशेष निर्वाण जो ताके विषैं सर्वकूं जानने वारा योगी है? उत्तर, सोपधि निर्वाणके विषैं भी जैसें वानें बाह्य पदार्थ जे इन्द्रिय तिनको अभाव कल्पना करिये है तैसें अभ्यन्तरको भी कल्पना करो। भावार्थ—आभ्यन्तर पदार्थ आत्मा है सो निःक्रिय है ताके परणतिको अभाव है यातें जानन क्रिया संयुक्त योगीको अभाव ही है। प्रश्न, योगतें उत्पन्न भया धर्मका अनुग्रहतें आत्मा इंद्रिय विना भी सर्व अर्थनिनें जानै है उत्तर, सो नहीं है क्योंकि निःक्रिय नित्य विद्यमान वो आत्मा जो है ताके जानन क्रिया अर विषय-

को अनुग्रहण अर विकार इनिका अभाव है यातैं अर्थात् निःक्रियके तो जानन क्रिया अर नित्यके अनुग्रहण अर विद्यमानकै विकार नही संभवै है यातैं योगीकै जानन भाव नहीं है ॥ ११ ॥ तथा वार्तिक—तल्लक्षणानुपपत्तिश्चस्ववचनव्याघातात् ॥ १२ ॥ अर्थ—अथवा प्रत्यक्ष लक्षणकी अनुपपत्ति है क्योंकि स्ववचनको विरोध है यातैं। टीकार्थ—अथवा जा प्रत्यक्षको लक्षण कह्यो है सो लक्षण भी नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, स्ववचनका व्याघाततैं इहां आचार्य अकलङ्क देव कहै है कि और सर्व मातवरेनिके कहे प्रमाण लक्षण जे हैं ते अन्यापोहिक वौद्ध जो हैं तानें प्रत्युत्तर देनेमें हम आदर रूप नहीं है परन्तु वौद्ध कृत प्रमाण लक्षणमें गुणको सम्भावना जो है ताकै तिरस्कार निमित्त किंचित् उद्यम करिये है कि जो कल्पना रहित है सो प्रत्यक्ष है ऐसैं वौद्धनें कह्यो है सो कल्पना निश्चय करि जाति द्रव्य गुण क्रियाकी जो परिभाषा तीं कृत वचनको अर वृद्धिको विकल्प है तातैं रहित जो है सो कल्पनापोढ है यामें प्रश्न करिये है कि सर्वथा कल्पनापोढ है कि कथंचित् कल्पनापोढ है जो सर्वथा कल्पना पोढ है तो प्रमाण ज्ञान कल्पनापोढ है इत्यादिक कल्पनातैं भी रहित है क्योंकि कल्पनापोढ है या भी कल्पना ही है। यातैं कल्पना पोढ है इत्यादि वचनको घात है अथवा कल्पना पोढ है इत्यादि कल्पनातैं रहित नहीं है ऐसें इष्ट करिये तो सर्वथा कल्पना पोढ है ऐसा वचनको घात है अथवा कथंचित् कल्पना पोढ है तो एकांत वादका त्यागतैं। वहुरि भी स्ववचनको घात है अथवा कल्पना पोढ ही प्रमाण है ऐसो एकांत हमारे नहीं है ऐसैं कहै तो कल्पना पोढ ऐसो विशेषण कहा प्रयोजन निमित्त कियो है। इहां कहै है कि परमतकी अपेक्षा विशेषण कियो है अर्थात् परमतमें नाम जाति आदि भेद उपचार कल्पनारूप कहै है तातैं अपोढ है अर अपनें विकल्पनितैं अपोढ नहीं है सो ही कह्यो है।

श्लोक— सवितर्कविचारा हि पंचविज्ञानधातवः।
निरूपणानुस्मरणविकल्पनविकल्पकाः ॥ १ ॥

अर्थ—पांच विज्ञानके उत्पत्ति कारक है तिनकै नाम ये हैं कि वितर्क १ विचार २ निरूपण ३ अनुस्मरण ४ विकल्पन ५ ये हैं विकल्प जिनकै ऐसैं है। इहां उत्तर कहिये है कि आलंवनके विषैं अर्पणा जो है सो वितर्क है। बहुरि वाहीके विषैं वारम्वार चिंतवन करना जो है सो विचार है। बहुरि वाका नामादिक करि विकल्पना जो है सो निरूपण है। बहुरि पूर्व कालमें अनुभव कियाका अनुसार करि विकल्पन जो है सो अनुस्मरण है ये च्यार धर्म क्षण मात्र है अवस्थान जिनके ऐसैं इंद्रिय विषय विज्ञान निरन्वय जे हैं तिनकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है तथा यातैं ही ग्राह्य ग्रहण भावको अभाव दक्षिण नाम गौका सींगके समान है अर तिन धर्मनिकै कर्मवर्ती पणांनैं होतां संतां अपना अर्थका अभावको प्रसंग आवै। भावार्थ--तिहारे क्षणिक कहनें रूप अर्थ जो प्रयोजन ताका अभावको प्रसंग आवै है तथा उन धर्मनिकूं धारनें वारो जो पदार्थ ताका अभावको प्रसंग आवै है क्योंकि वे धर्म तो चक्रवर्ती अनेक क्षणमें होनवारे अर पदार्थ क्षण स्थाई हैं तातैं प्रश्न,संतान आदिकी अपेक्षा होतां ज्ञानके तिन धर्मनिकी उत्पत्ति है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा संतानकैपरीक्षाकेविषैं स्थित-रहनेंको असमर्थ पणौं है यातैं तातैं सव विकल्पनिनैं अविद्यमान होत संतैं यो विकल्प है अर यो विकल्प नहीं है ऐसैं विज्ञानकै भेद ज्ञानकी उत्पत्ति नहीं है अथवो सर्व विकल्पका अभावतैं या विज्ञानक नास्तिपणौं ही है अर एक ज्ञानकै अनुस्मरणादिकका अंगीकारनें होतां संता अनेकक्षण-वर्ता वस्तुका अस्तित्व सिद्ध भयो क्योंकि अनुस्मरणादिक अपना अनुभूति अर्थको ही होय है अर नहीं अननुभूति अर्थको ही होय है तथा अन्य करि अनुभूतका अनुस्मरणादिक नहीं देखिये है अर तैसैं ही मानस प्रत्यक्ष भी नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि निश्चय करि षट्के अनन्तर वितीत

भयो विज्ञान जो है सो मन है यातैं व्यतीत भयो असत् मन जो है सो विज्ञानको कारण कैसैं होय- इहां कहै है कि पूर्व ज्ञानका नामके अर उत्तर ज्ञानका उत्पादके एकै काल प्रवृत्ति है यातैं कार्य कारण भाव कल्पना करिये है। उत्तर, ऐसैं कल्पना करो हो तो एकै काल भिन्न संतानवान भी विनाशता उत्पन्न होतां जे हैं तिनकै भी कार्यकारण भाव हो। भावार्थ— एक कालमें होनेंतै ही कार्य कारण भाव मानिये है तो भिन्न संतानवान एक कालमें घट पटादिक वर्तै हैं तिनके भी कार्य करण भाव हो, इहां भी कहै है कि एक सन्तानके विषैं शक्तिको अनुगम जो है ताका अंगीकारनें होतां संता कार्यकारण भाव है? उत्तर, ऐसैं अङ्गीकार करतां संता प्रतिज्ञाकी हानि होय है कि प्रमाण ज्ञान निर्विकल्प है ताकी हानि होय है क्योंकि जामें शक्ति अङ्गीकार करी सो निर्विकल्प कहां रह्या ॥१२॥

वार्तिक—अपूर्वाधिगमलक्षणानुपपत्तिश्च सर्वस्य ज्ञानस्य प्रमाणत्वोपपत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—अथवा प्रमाणके अपूर्वाधिगम लक्षणकी अनुपपत्ति है क्योंकि स्मृति आदि सर्व ज्ञाननिकै प्रमाण पणांकी उपपत्ति है यातैं। टीकार्थ—अथवा अपूर्व अर्थको जानन है लक्षण जाको सो प्रमाण है सो यो लक्षण ज्ञानके अर ज्ञेयके अर्थात् दोउनिके सन्तान पक्षने अंगीकार करता संता नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, क्षण क्षण वर्ती सर्व ज्ञान जे हैं तिनके प्रमाण पणांकी उत्पत्ति है यातैं क्योंकि प्रमाण करिये जा करिकै सो प्रमाण है अर क्षण क्षण वर्ती सर्वज्ञान करि ही प्रमाण करिये है यातैं। भावार्थ—ज्ञानके अर ज्ञेयके क्षण स्थाई पणानें होतां संता तो अपूर्वाधिगम लक्षण बणै है अर दोउनिके सन्तानपक्ष अङ्गीकार करिये तो अपूर्वाधिगम लक्षण प्रमाणको नहीं बणै है याको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं अंधकारमें तिष्टते पदार्थनिको अपनी उत्पत्तिके अनंतर ही प्रदीपक प्रकाशक है सो उत्तर कालमें भी वा प्रकाशक नामनें नहीं छांडे क्योंकि प्रकाश स्वरूप अवस्थानकै ही प्रकाशक नामको करणपणौं है यातैं ऐसैं ही ज्ञान भी उत्पत्तिके अनंतर ही घटादिकनिको प्रकाशक होय

प्रमाण पणानें अनुभवकरि उत्तर कालमें भी वा प्रमाण नामनें नहीं छांडे है क्योंकि ज्ञानके प्रमाण पणौं है. यातैं अर जो ऐसैं मान्य है कि क्षणक्षण में अन्य ही प्रदीपक है यातैं अपूर्व ही प्रकाशक पणानें अवलम्बन करै है ऐसैं होत संतै ज्ञान भी दीपकके समान क्षण क्षणमें अन्य अन्य पणांकी उत्पत्तितैं अपूर्वाधिगम लक्षण रूप ही विद्यमान है याको उत्तर कहिये है कि तहां जो तैंने कह्यो कि क्षण क्षणमें उत्पन्न भयो ज्ञान प्रमाण है सो स्मृति इच्छा द्वेषके समान पूर्वकालमें प्राप्त भया विषयको ग्राहक पणातैं विशेष पणौं हणयूं जाय है। भावार्थ—ज्ञानकै अर ज्ञेयके संतान अङ्गीकार करेगो तो अपूर्वाधिगम लक्षण प्रमाणको करै है सो नहीं बणैगो अर दोऊनिकैं क्षणस्थाई पणौं अङ्गीकार करै तो स्मृति इच्छा द्वेष नहीं बणैंगे ॥ १३ ॥ वार्तिक---स्व संवित्तिफलानुपपतिश्चार्थांतरत्वाभावात् ॥ १४ ॥ अर्थ---अथवा स्वसंवित्तिके फल पणांकी अनुपपत्ति है क्योंकि अर्थांतरपणांको अभाव है यातैं। टीकार्थ---अथवा लोकके विषैं प्रमाण जो हैं सो फलवान देखिये है यातैं या प्रमाणके कोउ फलनें होनों योग्य है। इहां कोऊ कहै है कि ज्ञान दोउनिको प्रकाशरूप उत्पन्न होय है अर्थात् अपनो प्रकाशरूप तथा विषयका प्रकाशरूप उत्पन्न होय है ऐसैं दोउनिका प्रकाशरूपको जो ज्ञान है सो फल है? उत्तर, सो नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अर्थांतर पणांका अभावतैं क्योंकि लोकके विषै प्रमाणतैं फल अर्थांतरभूत प्राप्त हूजिये है सो ऐसैं है कि छेदनों वारो तथा छेदने योग्य तथा छेदन क्रिया इनि तीननिकी निकटतानें होतां संता दोय होना जो है सो फल है तैसैं स्वसंवेदन अर्थांतरभूत नहीं है तातैं याकै फल पणौं नहीं उत्पन्न होय है इहां वादी कहै हैं कि या प्रकार तो यो वचन सत्य ही है यातैं ही वा जाननरूप फलकै विषैं व्यापार सहित प्रतीति पणानें आलम्बन करि प्रमाण पणांको उपचार करिये है ॥ १४ ॥ उत्तररूप वार्तिक—प्रमाणोपचारानुपपत्तिर्मुख्याभावात् ॥ १५ ॥ अर्थ—फलकै प्रमाण पणांका उपचारकी अनुपपत्ति है क्योंकि मुख्य

प्रमाणको अभाव है यातैं। टीकार्थ—लोकके विषैं मुख्यपणांनें होतां संता उपचार देखिये है सो ऐसैं कि जैसैं विलक्षण तिर्यंच गति पंचेंद्रिय जाति नख दंष्ट्रा स्कन्ध केशनिका आटोप पीले नेत्र तारकादि अवयव संयुक्त सिंहनें विद्यमान होतां संता अन्य वालक आदिके विषैं क्रूरपणां शूरपणां आदि गुणका समान धर्म पणांतैं सिंह नामका उपचार करिये है। तैसैं इहां मुख्य प्रमाण नहीं है अर मुख्य प्रमाणका अभावतैं फलके विषैं प्रमाणको उपचार नहीं संभवै है ॥ १५ ॥ भावार्थ—जा प्रवतन स्वरूप ज्ञानमें प्रमाण भूतपणांको उपचार करिये है सो युक्त नहीं है क्योंकि प्रथम करण रूप ज्ञान जो है सो क्षण स्थाई होतो संतो उत्तर कालमें फलनें नहीं उत्पन्न करै है। प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आकारभेदाद्भेद इति चेन्नैकान्तवादत्यागात् ॥ १६ ॥ अर्थ—प्रश्न, आकारका भेदतैं भेद है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि एकांतवादको त्याग होय है यातैं। टीकार्थ—वा ज्ञानमें ग्राहक विषयाभास संवित्ति कहिये जानन ये ही भई जे तीन शक्ति तिनका आकारका भेदतैं प्रमाण प्रमेय फल रूप कल्पनाको भेद है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, एकांत वादका त्यागतैं अर्थात् ऐसैं कहनेतैं तिहारे सर्वथा निर्विकल्प ज्ञान इष्ट है ताको त्याग होय है यातैं क्योंकि एक पदार्थ अनेक आकार रूप है ऐसो मत तो जिनेन्द्रको है सो एकांतवादमें कैसैं संभवै अर जो ऐसैं ही अङ्गीकार करो हो कि एक क्षणवर्ती एक ज्ञान ही तीन शक्ति युक्त है तो द्रव्यमें कहा असंतोष है। रूपादि अनेक गुणात्मक एक परमाणु द्रव्य है अर ज्ञानादि अनेक गुणात्मक द्रव्य है ऐसो माननों चाहिये। इहां वादी कहै है कि अनेक धर्मात्मक द्रव्यकी सिद्धि तो मति हो यातैं तीन शक्ति रूप आकार ही है ज्ञान तिन स्वरूप नहीं है ऐसैं कल्पना करिये है ? उत्तर, ऐसैं होत संतै वै आकार कौनके है, आकार तो कोऊ वस्तुका होय सो वस्तु तिहारे मान्य नहीं यातैं तिन आकारनिको भी अभाव है। बहुरि और सुनूं कि तिन आकारनिकी उत्पत्ति युगपत् है कि

अनुक्रम करि है जो युगपत् पणां करि है तो कारण कार्य भाव विरोधनें प्राप्त होय है क्योंकि इहां प्रमाण तो कारण है अर संवित्ति कार्य है सो नहीं वणै है याही तैं युगपत् उत्पत्तिवानकै कारण कार्य भावको निषेध पूर्वं कियो ही है अर जो अनुक्रम करि उत्पत्तिवान है तो क्षणिक विज्ञाननिके आकारनिको कैसैं अनुक्रम संभवै है अर जो क्षणकके भी अनुक्रम संभवै है तो यहां जानन भाव है भावान्तर नहीं है, ऐसी प्रतिज्ञा जो है सो विशेष पणौं हणी जाय है। बहुरि और सुनों कि वाह्य ज्ञेयका अभावनें होतां संता अर अन्तरंगमें आकार त्रयकी कल्पनानें होतां संता प्रमाण अर प्रमाणाभास जे हैं ते नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि अन्तरंगमें आकारका अभेद मान्य है यातैं। भावार्थ—अन्तरगत आकार त्रयमें ऐसी कल्पना नहीं संभवै है क्योंकि एक पुरुषकै सीपमें रजतको ज्ञान है सो तो प्रमाणाभास है अर रजतमें रजतको ज्ञान है सो प्रमाण है ऐसैं दोउ ज्ञान एक पुरुषकै होय है सो वाह्य वस्तु दोय रूप होत संतै होय है अर तिहारै वाह्य वस्तुको सर्वथा अभाव है यातैं एक ज्ञानकै ही प्रमाण पणौं अर प्रमाणाभासपणौं नहीं संभवै। प्रश्न, जो वस्तु असत् है तानें सत् है ऐसैं कल्पना करै है सो प्रमाणाभास है अर जो असत्नें असत् ही अंगीकार करै है सो प्रमाण है ऐसैं ज्ञानमें विशेष है? उत्तर, ऐसैं होत संतै प्रमेयद्वयकरि व्यवस्थापित प्रमाण द्वयकी कल्पना जो है ताको घात है क्योंकि स्वलक्षण विषय तो प्रत्यक्ष प्रमाण है अर सामान्य लक्षण विषय अनुमान है तहां विकल्पातीपणातैं स्वलक्षण तो असाधारण धर्म है अर वो धर्म विकल्पातीत पणातैं सो यो है ऐसैं कहनें योग्य नहीं हैं अर वातैं विपरीत है सो सामान्य लक्षण है। भावार्थ—असाधारण धर्म विषय ज्ञान तो प्रत्यक्ष है अर साधारण विषय ज्ञान अनुमान है। इहां जैनी कहै हैं कि सर्व-वाह्य वस्तुकै असत् पणानैं होतां संता यो विशेष कौन कृत है क्योंकि असत् पणौं स्वतैं ही भेदनें न्हतीं प्राहोय है सम्बन्धीका भेदतैं भेद होय है जैसैं घटकै असत् पणौं पटकै असम् पणौं है सो

परस्परकी अपेक्षातैं है। इहां वादी कहै है कि तिन घटादिक संबंधीनिका अभावनें होतां संता संवन्धीकै आश्रित ज्ञानकै विशेषनिका भी अभाव होय हैं। इहां आचार्य कहै है कि ऐसैं मानेतैं हमारे आकाशतैं पड़ी रतन वर्षा भई क्योंकि विना प्रयास ही इष्ट प्राप्त भयो अर्थात् असत् पणौंको भी अभाव भयो यातैं ही सर्व विज्ञान मयी है ऐसो कहनो असत्यार्थ है क्योंकि याकै कल्पितपणों है यातैं इहां भी वादी कहै है कि निर्विकल्प अर्थ है विषय जाको ऐसो आत्मीय कहिये हमनें कह्यो सो ही विज्ञान प्रमाण है सो ही कह्यो है--

श्लोक—शास्त्रेषु प्रक्रियाभेदैरविद्यैवोपवर्ण्यते ।
अनागमविकल्पा हि स्वयं विद्या प्रवर्तते ॥ १ ॥

अर्थ—शास्त्रकैं विषैं प्रक्रियाके भेदनिकरि अविद्या ही वर्णन करिये है अर आगमका विकल्प रहित विद्या स्वयमेव प्रवर्तै है उत्तर, या भी अयोग्य है क्योंकि विकल्परहितकै जाननेका उपायको अभाव है यातैं सो ही कह्यो है। उक्तं च--

प्रत्यक्षबुद्धिः क्रमते न यत्र तल्लिंगगम्यं न तदर्थलिंगम् ।
वाचो न वा तद्विषयेण योगः का तद्गतिः कष्टमश्रृणवतस्ते ॥ १ ॥

अर्थ—जहां प्रत्यक्ष बुद्धि नहीं प्रवर्तै है सो वस्तु अनुमान गम्य है अर वो तिहारो निर्विकल्प ज्ञान अर्थ लिङ्ग नहीं है अर जा विषय करि वाणीको भी योग्य नहीं है ता विषयका जानना कैसैं होय यातैं नहीं सुणतो तू जो है ताकै वड़ो कष्ट है ॥ १६ ॥ १२ ॥ आवैं त्रयोदशमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि ऐसैं ग्रहण कियो है द्विविध पणौं जानें ऐसा प्रमाणकै आदि प्रकारका विशेषकी प्रतीतिकै अर्थ सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिः स्मृतिः संज्ञाचिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थांतरम् ॥ १३ ॥

अर्थ—मति स्मृति संज्ञा चिन्ता अभिनिबोध ये पांचू शब्द अन्य अन्य अर्थके देन वारे नहीं है एकार्थ वाची ही हैं। वार्तिक—इति शब्दस्यानेकार्थसम्भवे विवक्षावशादाद्यर्थसंप्रत्ययः ॥ १ ॥ अर्थ—इति शब्दका अनेक अर्थ सम्भवतां संतां वक्ताकी इच्छाका वशतैं आदि अर्थकी भले प्रकार प्रतीति होय है। टीकार्थ—इति शब्दके अनेक अर्थ संभवै है कि कहूं तो हेतुमें वर्तै है कि हंतीति पलायते वर्षतीति धावति। अर्थ-मारे है यातैं दोड़ै है तथा वर्षै है यातैं दोड़ै है। बहुरि कहूं एकवार अर्थमें प्रवर्तै है कि इति स्म उपाध्यायः कथयति। अर्थ--उपाध्याय ऐसैं ही कहै है बहुरि कहूं प्रकार अर्थमें प्रवर्त्तै है कि यथा गौरश्वः शुक्लो नीलश्वरतिप्लवते जिनदत्तो देवदत्त इति। अर्थ--जैसैं गौ चरै है। अश्व डाकै है जिनदत्त शुक्ल है। देवदत्त नील है अर्थात् या प्रकार हैं। बहुरि कहूं व्यवस्था अर्थमें प्रवर्तै है कि ज्वलितिक सन्तान्नो। अर्थ-ज्व है आदि विषैं जिनकै अर कस हैं अंत विषैं जिनकै ऐसैं धातुतैं नो प्रत्यय होय है। बहुरि कहूं अथका विपरीत पणामें प्रवर्तै हैं कि यथा गौरित्ययमाह। अर्थ--यो गौ ऐसैं जानै हैं! इहां कहना अर्थका था ताका विपर्यासतैं जानना अर्थ भया सो इनिका योगतैं भया है। बहुरि कहू समाप्ति अर्थमें प्रवर्तै है कि प्रथममाह्निकामिति, द्वितीयमाह्निकमिति। अर्थ-प्रथम आह्निक समाप्त भयो। दूसरो आह्निकसमाप्त भयो। बहुरि कहूं शब्द का प्रादुर्भाव कहिये प्रगट होनां जो है ता अर्थके विषैं प्रवर्तै है कि इति श्री दत्त इति सिद्धसैंन अर्थ--ऐसैं श्रीदत्त कहै है ऐसैं सिद्धसेन कहैं है। ऐसैं अनेक अर्थ जे हैं तिनमें सूं वक्ताकी इच्छाका वशतैं इहां आदि शब्दको अर्थ जानवे योग्य हैं अर्थात् मति स्मृति संज्ञा चिन्ता अभिनिबोधनें आदि लेय है। प्रश्न, वे और कौनसे हैं? उत्तर, प्रतिमा बुद्धि उपलब्धि आदि है अथवा

इति शब्दनिकैं अनर्थान्तरपणौं कैसैं हैं ॥१॥
प्रकार अर्थमें इति शब्द है तातैं या प्रकार है। प्रश्न, इनि शब्दनिकैं अनर्थान्तरपणौं कैसैं हैं ॥१॥
उत्तर रूपवार्त्तिक-मतिज्ञानावरणक्षयोपशमनिमित्तार्थोपलब्धिविषयत्वादनर्थांरत्वं रूढ़िवशात्॥२॥अर्थ-
मतिज्ञानावरणका क्षयोशम है निमित्त जनैं ऐसी अर्थकी उपलब्धिरूप विषयपणातैं इनि शब्दनिकै
एकार्थपणौं रूढ़िका वशतैं है। टीकार्थ—इनि मत्यादिक शब्दनिकै मतिज्ञानावरणको क्षयोशम है
निमित्त जानैं ऐसी अर्थकी प्राप्तिके विषैं प्रवर्तवातैं अनर्थांतरपणौं जानवे योग्य है। प्रश्न, माननो
सो मति ऐसैं तो भाव साधनरूप अर मानिये सो मति ऐसैं कर्मसाधन रूप इत्यादिक अर्थ है।
विषय जिनको सो मतिज्ञान है ऐसैं मत्यादिकनिकै अनर्थांतर पणौं कैसैं है? ऐसो प्रश्न, उत्पन्न
होय है यातैं कहे है। उत्तर, रूढ़िका वशतैं, सो ऐसैं है कि जैसैं गमन करै सो गौ ऐसैं अंगीकार है
तो हू शब्दकी प्रवृत्ति करि नियमको कारण गमन नहीं है। रूढ़िका वशतैं कहूं ही प्रवर्तै है तैसैं ही
मत्यादिक शब्द व्युत्पत्ति कर्ममें होत संतै भी अर्थका आश्रय करि कहूं भेदमें प्रवर्तै है। यातैं अन-
र्थांतर पणौं अंगीकार करिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—शब्दभेदादर्थभेदो गवाश्वादिवदिति चेन्नातः-
संशयात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर, शब्दका भेदतैं गो अश्व आदि शब्दकै समान। उत्तर,
सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अतः संशयात् कहिये जातैं हीं तू मत्यादिकनिकै शब्द भेद
तैं अर्थ--भेद पणौं कहै है यातैं ही संशय होय है। भावार्थ—तू शब्द भेदतैं अर्थ भेद कहै है तातैं
ही ऐसा संदेह होय है कि अर्थतैं भी भेद है कि नहीं है ॥३॥ प्रश्न,कैसैं संशय होय है ? उत्तररूप
वर्त्तिक--इन्द्रादिवत् ॥ ४ ॥ अर्थ--इन्द्रादिकोंके समान मत्यादिकनिकै अर्थमें अभेद है। टीकार्थ-
जैसैं इन्द्र शक्र पुरन्दर आदि शब्द भेदनैं होतां संता भी अर्थ भेद नहीं होय है तैसैं ही मत्यादि-
कनिकै शब्द भेदनैं होतां संता भी अर्थमें अभेद है अर जातैं ही संशय होय तातैं ही निर्णय नहीं १
होय है। भावार्थ—इन्द्र पुरन्दरादि शब्दतैं शचीपतिका ही निर्णय होय है अर जातैं निर्णय होय है

तातैं संशय नहीं होय है ॥४॥ किंच वार्तिक—शब्दाभेदेप्यर्थैकत्वप्रसंगात् ॥५॥ अर्थ—शब्द भेदतैं अर्थभेद मानेंगे तो शब्दका अभेदमें भी एक पणांको प्रसंग आवेगो यातैं। टीकार्थ—और सुनूं कि जाकै शब्द भेद अर्थ भेदमें हेतु है ऐसैं मान्य है ताकै वचन १ पशु २ व्रज् ३ दिशा ४ नेत्र ५ किरण ६ पृथ्वी ७ जल ८ लक्ष्य ९ इनि नव अर्थनिके विषै गौ शब्दका अभेदरूप दर्शनतैं वचन आदि अर्थनिके एक पणौं है। भावार्थ--शब्दका भेदतैं अर्थमें भेद मानिये है तो शब्दका अभेदतैं अर्थमें अभेद भी मानना चाहिये सो इष्ट नहीं है तातैं शब्द भेद अर्थके अन्यपणांको हेतु नहीं है ॥ ५ ॥ किंच वार्तिक--आदेशवचनात् ॥ ६ ॥ अर्थ—और सुनूं कि आदेशका वचनतैं शब्द भेद होतैं भी अर्थ में अभेद संभवै है। टीकार्थ—और सुनूं कि जैसैं इन्द्रादिक शब्दनिकै एक द्रव्यकी पर्यायका उपदेशतैं कथंचित् एक पणौं है अर भिन्न भिन्न नियमरूप पर्याय स्वरूप अर्थका उपदेशतै कथंचित् अन्यपणौं है क्योंकि ऐश्वर्यतैं इन्द्र है अर सामर्थ्यतैं शक्र है पुर नगरका भेदतैं पुरन्दर है तैसैं मत्यादिकनिकै एक द्रव्यकी पर्यायका उपदेशतैं एक पणौं है अर भिन्न भिन्न नियम रूप पर्याय स्वरूप अर्थका उदेशतैं कथंचित् नानापणौं है क्योंकि मनन करनो कि जानना सो तो मति है अर स्मरण करना सो स्मृति है अर संज्ञानं कहिये अनुभव करना सो संज्ञा है अर चिंतवन करना सो चिन्ता है याही कूं तर्क कहे है अर सन्मुख पणां करि नियम रूप जानन जो है सो अभिनिवोध है याही कूं प्रत्यभिज्ञान कहे है ॥६॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—पर्यायशब्दो लक्षणंनेति चेन्न ततोनन्यत्वात् ॥ ७ ॥ अर्थ—प्रश्न, पर्यायशब्द लक्षण नहीं है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पर्यायी के पर्यायतैं अनन्य पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,मत्यादिक अभिनिवोधका पर्याय शब्द है तातैं अभिनिवोधका लक्षण नहीं है। मनुष्य आदि शब्दके समान सो ऐसैं है कि जैसैं मनुष्य मर्त्य मनुज मानव आदि पर्याय शब्द है ते मनुष्यका लक्षण नहीं है? उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, मनुष्यतैं मर्त्य आदिके अनन्यपणांतैं इहां पर्यायीतैं अनन्य पर्याय शब्द है सो

लक्षण है ॥ ७ ॥ प्रश्न, कैसैं उत्तररूप वार्त्तिक—औष्ण्याग्निवत् ॥ ८ ॥ अर्थ—जैसैं उष्ण पर्याय अग्नितैं अनन्य है तैसैं मत्यादि शब्द भी एकार्थ वाची है। टीकार्थ--जैसैं अग्निको औष्ण्य पर्याय शब्द है क्योंकि पर्यायी जो अग्नि तातैं अनन्यपणातैं अग्निको लक्षण है तथा मत्यादिक,पर्याय शब्द जे हैं ते आभिनिवोधिक ज्ञान पर्यायी जो अभिनिबोध ताका अनन्य पणां करि लक्षण है अथवा पर्यायीतैं अनन्यपणातैं जैसैं मनुष्य मर्त्य मनुज मानवादिक असाधारण पणातैं अन्य घटादिक द्रव्यका असंबंधी मनुष्य जो है तातैं अनन्यपणातैं मनुष्यका लक्षण है अर जो निश्चय करि ऐसैं नहीं है तो मनुष्यादि पर्यायके अलक्षणपणातैं मनुष्यको अभाव होय यातैं मनुष्यादि लक्षण विना या मनुष्यके अन्य लक्षण नहीं है अर लक्षण विना लक्ष्यरूप मनुष्यपणौं,जो है ताको अभाव होवै सो इष्ट नहीं है यातैं पर्याय शब्द लक्षण है तैसैं ही असाधारण पणांतैं अन्य श्रुत ज्ञानादिकनिमें असम्भवी मति स्मृति आदि जे अभिनिवोधतैं अनन्य पणांतैं अभिनिबोधके लक्षण हैं यातैं ही पर्याय शब्द लक्षण है ॥ ८ ॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूप वार्त्तिक—गत्वा प्रत्यागतलक्षग्रहणात् ॥ ९ ॥ जानि करि पीछा वाहुड़नां रूप लक्षणका ग्रहणतैं। प्रश्न,कैसैं ? उत्तररूप वार्त्तिक—अग्न्युष्णवत् ॥ ॥ १० ॥ अग्निके अर उष्णके समान लक्ष्य लक्षण भाव है। टीकार्थ—जैसैं अग्नि है ऐसैं जानि करि बुद्धि उष्ण पर्याय शब्दनें प्राप्त होय है। प्रश्न, कैसैं प्राप्त होय है ? उत्तर, यो कौन अग्नि है ऐसे बुद्धिनें उत्पन्न होता ही स्मरण होय है कि जो उष्ण है सो है। बहुरि उष्ण है ऐसैं जानिकरि बुद्धि पीछी बाहुड़े है अर विचारै है कि यो कौन उष्ण है ऐसैं बुद्धिनें उत्पन्न होतां संतां स्मरण होय है कि जो अग्नि है सो है। तैसैं मतिज्ञान है ऐसैं जाणिकरि बुद्धि स्मृतिनें प्राप्त होय है या कौन मति है ऐसैं बुद्धिनें उत्पन्न होतां ही स्मरण होय है कि जो स्मृति है सो है ता पीछे स्मृति है ऐसैं जाणिकरि बुद्धि पीछी वाहुड़े है अर विचारै है कि कौन स्मृति है ऐसैं बुद्धिनें उत्पन्न होतां संता स्मरण होय है कि जो मति है सो है ऐसैं और शब्दनिके विषैं भी जाननें योग्य है तातैं जानि करि बाहुड़नें रूप लक्षणका ग्रहणतैं

जाणिये है कि पर्याय शब्द लक्षण हैं ॥१०॥ किंच वार्तिक—पर्यायद्वैविध्यादग्निवत् ॥ ११ ॥ अर्थ-पर्यायकैं द्विविधपणातैं अग्निके समान है। टीकार्थ—जैसैं अग्निको आत्मभूत उष्ण पर्याय लक्षण है अर धूम लक्षण नहीं है क्योंकि धूमके वाह्य ईंधन निमित्त पणानैं होतां संता कादाचित्कपणौं है कि कहूं पावै है कहूं नहीं पावै है यातैं तैसैं ही आभ्यन्तर मति स्मृति आदि पर्याय जो है सो आत्मभूत पणातैं लक्षण है अर अनात्मभूत वाह्य मति स्मृति आदि शब्द पुद्गल पर्यायीकी प्रतीत उत्पन्न करवासैं समर्थ नहीं है क्योंकि वा मत्यादि शब्द पुद्गलकै वाह्य इंद्रिय प्रयोग निमित्त पणौं है यातैं ॥ ११ ॥ तथा वार्तिक—इति करणस्य वाभिधेयार्थत्वात् ॥ १२ ॥ अर्थ—इति शब्दका करवाकै अभिधेय अर्थ पणौं है कि मत्यादि शब्दनिकै अभिधेय मतिज्ञान है ऐसा अर्थको जनावन पणौं है यातैं। टीकार्थ—अथवा यो इति शब्दको करणों या कहनें योग्यकै निमित्त जोड़िये है कि मति स्मृतिः संज्ञा चिन्ता अभिनिबोध ऐसैं जो अर्थ कहिये है सो मतिज्ञान है तातैं लक्षणपणौं उत्पन्न होय है ॥ २२ ॥ वार्तिक---श्रुतादीनामेतैरनभिधानात् ॥ १३ ॥ अर्थ--इनि करि श्रुतादिकनिको अनविधान हैं यातैं। टीकार्थ--इति मत्यादिकनि करि श्रुतादिक जे हैं ते नहीं कहिये है यातैं ॥ १३ ॥ वार्तिक---वक्ष्यमाणलक्षणसद्भावोच्च ॥ १४॥ अर्थ--वक्ष्यमाण लक्षणका सद्भावतैं मति शब्दके श्रुतादिकनिको प्रसंग नहीं है। टीकार्थ--निश्चय करि श्रुतज्ञानादिकनिको लक्षण कहेंगे तातैं तिनको मति शब्दके विषैं अप्रसंग है ॥ १४ ॥ १३ ॥ अवैं चतुर्दशमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो ऐसैं मतिज्ञानको लक्षण अंगीकार करिये है तो याकै आत्म लाभके विषैं कहा निमित्त है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥

अर्थ--अथवा आत्म प्रशादका अविशेषतैं सर्व ज्ञाननिकै एक पणांका प्रसंगनें होतां संता निमित्तका भेदतैं नाना पणौं प्रतिपादन करतां संता कहै है अर या अविशेषनें होतां संता भी

इनकै भिन्न पणौं अंगीकार करै है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर, सो मतिज्ञान इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्त है यातैं। प्रश्न, इंद्रिय नाम कहा है ? उत्तर, रूप वार्तिक---इंद्रस्यात्मनोर्थोपलब्धिलिंगमिंद्रियम् ॥ १॥ अर्थ--इंद्र जो आत्मा ताकै अर्थिकी प्राप्तिको लिंग जो है सो इंद्रिय है। टीकार्थ--इंद्र नाम आत्माको है सो आत्म कर्मकरि मलिन हुवो सन्तो स्वयमेव अर्थनिनें ग्रहण करनेकूं असमर्थ है ताकै अर्थका ग्रहणके विषैं जो लिङ्ग है सो इंद्रिय हैं ॥ १ ॥ प्रश्न, यो अनिंद्रिय कहा है ? उत्तररूप वार्तिक--अनिंद्रियं मनोनुदरावत् ॥ २ ॥ अर्थ--अनिंद्रिय मन है सो अनुदराके समान है। टीकार्थ-मन नाम अन्तःकरणको है सो अनिन्द्रिय है ऐसैं कहिये है। प्रश्न, इन्द्रियका निषेधकरि मन कैसैं कहिये है जैसैं यो अब्राह्मण है?ऐसे कहतां संता ब्राह्मण पणां करि रहित कोऊकै विषैं प्रतीति होय है तैसैं ही इहां भी इन्द्रका लिङ्ग रहित कोऊ और जो है ताकै विषैं यो अनिन्द्रिय है ऐसैं प्रतीति होय है परन्तु इन्द्रको लिङ्ग मन जो है ताकै विषैं ही प्रतीति नहीं होय है ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि इहां अकार करि ईषत् निषेध है यातैं। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अनुदराके समान है तैसैं अनुदरा कन्या है ऐसैं कहतां संता याकै उदर नहीं विद्यमान है सो नहीं है परन्तु गर्भका भारकूं धारण करनें समर्थ उदरका अभावतैं अनुदरा है तैसैं अनिन्द्रिय ऐसैं कहतां संता याकै इंद्रियपणांको अभाव है सो नहीं है परन्तु चक्षु आदिके समान भिन्न भिन्न नियमरूप देश अर विषय जो है ताको जो अवस्थान ताका अभावतैं अनिन्द्रिय मन है ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्तिक-अन्तरंगतत्करणमिन्द्रियानपेक्षत्वात् ॥ ३ ॥ अर्थ--सो मन अन्तरंग करण है क्योंकि इंद्रियनिकी अपेक्षा रहित पणौं है यातैं। टीकार्थ—याकै इंद्रियनिकै विषैं अपेक्षा नहीं है यातैं इंद्रियानपेक्ष हैं क्योंकि याकै गुण दोषका विचार रूप अपना विषयमें प्रवर्ततां संता इंद्रियनिकी अपेक्षा नहीं है तातैं मन अन्त रङ्गकरण है ऐसैं जानवे योग्य है अर इंद्रियनें तथा अनिंद्रियनें ग्रहण करि जो उत्पन्न होय है सो मतिज्ञान है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—तदित्यग्रहणमनंतरत्वादिति चेन्नोत्तरार्थत्वात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, तत् ऐसा शब्दको ग्रहण अनर्थक है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि

तत् शब्दके उत्तर सूत्रको प्रयोजन पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, मतिज्ञानके अनन्तरपणांतैं या सूत्र करि अभिसम्बन्ध होय है यातैं तत् या शब्दको ग्रहण अनर्थक है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, उत्तरार्थ पणातैं है कि निश्चय करि यो तत् शब्द अगला सूत्रके निमित्त है अर जो यो तत् शब्द नहीं होतो तो अवग्रह ईहा अवाय धारणा ये मतिज्ञानका भेद है ऐसैं जानने कूं समर्थ होता अर मतिज्ञानका ग्रहण निमित्त तत् शब्दको ग्रहण करतां संता ही वो मतिज्ञान अवग्रहादिक रूप है ऐसो सम्बन्ध सुगम होय है ॥ ४ ॥ १४ ॥ अवैं पंचदशम सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो ये कहे जे निमित्तद्वय तिनकी निकटतानैं होतां संता अपना स्वरूप लाभ प्रति उद्यमी अर नहीं वर्णन किये हैं भेद जाकै ताकै भेद जनावनेके निमित्त सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

अवग्रहेहावायधारणाः ॥ १५ ॥

अर्थ—अवग्रह १ ईहा २ अवाय ३ धारणा ४ ये च्यार भेद मतिज्ञानके हैं। वार्तिक—विषयविषयिसन्निपातसमनन्तरमाद्यं ग्रहणमवग्रहः ॥ १ ॥ अर्थ—विषय विषयीका मिलापकै अनन्तर प्रथम ग्रहण होय सो अवग्रह है। टीकार्थ—विषय जे पदार्थ अर विषयी जे इंद्रिय तिनका मिलापनैं होतां संता दर्शन होय है ताकै अनन्तर अर्थको जो ग्रहण सो अवग्रह है ॥ १ ॥ वार्तिक—अवग्रहीतेऽर्थे तद्विशेषाकांक्षणमीहा ॥ २ ॥ अर्थ—अवग्रह करि ग्रहण किया पदार्थके विषैं विशेष जाननेकी इच्छा जो है सो ईहा है। टीकार्थ--जैसैं पुरुष है ऐसैं अवग्रह रूप भयाके विषैं वाकी भाषा अवस्थारूप आदि विशेष जे हैं तिन करि विशेष जाननेकी इच्छा जो है सो ईहा है ॥ २ ॥ वार्तिक--विशेषनिर्ज्ञानाद्याथात्म्यावगमनमवायः ॥ ३ ॥ अर्थ--विशेषका निश्चय रूप ज्ञान होनेतैं यथावत् जानन भाव जो है सो अवाय है। टीकार्थ--भाषावयव रूप आदि विशेष जे हैं तिन करि निश्चय ज्ञान होवातैं वा पुरुषको यथावत् जानन जो है सो अवाय है कि यो दक्षिण दिशि निवासी युवा गौर है ॥ ३ ॥ वार्तिक—निर्णीतार्थाविस्मृतिर्धारणा ॥ ४ ॥ अर्थ—निर्णय-

रूप भया अर्थका नहीं भूलना जो है सो धारणा है। टीकार्थ—भाषावयव रूप आदि विशेष करि यथावत् पणांकरि निर्णय किया पुरुषका उत्तर कालमें सो ही यो है ऐसैं अविस्मरण जातैं होय सो धारणा है, सो ये च्यारू मतिज्ञानके भेद हैं॥ ४॥ इहां प्रश्न कहै है इनिके यो आनुपूर्वी पणौं कौन कृत है? उत्तर कहिये है कि वार्तिक—अवग्रहादीनामानुपूर्व्यमुत्पत्तिक्रमापेक्षम्॥ ५॥ अर्थ—अवग्रहआदिकनिकै आनुपूर्वी जो है सो उत्पत्तिका अनुक्रमको अपेक्षातैं है। टीकार्थ—अवग्रह पूर्वक पणातैं ईहादिकनिकी उत्पत्ति है यातैं आदिमें अवग्रह शब्द करिये है तैसैं ही और शब्दनिकै विषैं भी जोड़ने योग्य है॥ ५॥ इहां वादी कहै है कि वार्तिक—अवग्रहेहयोरप्रामाण्यं तत्सद्भावेपि संशयदर्शनाच्चक्षुर्वत् ॥६॥ अर्थ—अवग्रहके अर ईहाके अप्रमाणता है क्योंकि इन दोउनिका सद्भावमें भी सशयको दर्शन चक्षुवानके समान है कि जैसैं चक्षुवानके संशय रहै है तैसैं अवग्रह ईहावानके भी संशय रहै है। टीकार्थ--जैसैं नेत्रनिनैं विद्यमान होत संतैं भी निर्णय नहीं होय है क्योंकि नेत्रनिनैं होत संतैं भी यो स्थाणु है कि पुरुष है ऐसो संशय देखिये है यातैं तैसैं ही अवग्रहनैं होत सतैं भी निर्णय नहीं होय है क्योंकि ईहाका देखवातैं अर ईहाके विषय भी निर्णय नहीं है क्योंकि निर्णयके अर्थ ईहा है परन्तु ईहा निर्णयरूप नहीं है यातैं अर जो निर्णय रूप नहीं है सो संशय जाति ही है यातैं इन दोउनिकै अप्रमाणता है॥ ६॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—अवग्रहवचनादितिचेन्न संशयानतिवृत्तेरालोचनवत्॥ ७॥अर्थ-अवग्रहको वचन सम्यग्ज्ञानसैं है यातैं संशय नहीं है? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि संशयकी निवृत्ति आलोचनकै समान ही है। टीकार्थ—इहां जैनी कहै है कि अवग्रह संशयरूप नहीं है। प्रश्न,काहेतैं? उत्तर,अवग्रहको वचन सम्यग्ज्ञानका भेदनकी गणनामें कह्यो है यातैं क्योंकि यो पुरुष है ऐसैं कहन वारो अवग्रह है यातैं अर वा पुरुषका भाषा अवस्थारूप आदि विशेष जाननेकी इच्छा जो है सो ईहा है यातैं अर संशय जो है सो अप्रतिपत्ति रूप है कि संशय में एककी भी प्रतीति नहीं है। इहां फेर वादी कहै है कि तुमनें कह्या सो नहीं है प्रश्न,कहा कारण? उत्तर, संशयकी निवृत्ति नहीं है यातैं। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, अलोचनके समान सो

ऐसैं है कि जैसैं ऊर्ध्व अर्थका अलोचननें होतां संता यो ऊर्ध्व अर्थ है सो स्थाणु है कि पुरुष है ऐसा संशयकी निवृत्ति नहीं हैं तथा यो ऊर्ध्व अर्थ है ऐसा अवग्रहके विषैं ईहादिकका अपेक्षा पणातैं संशयकी निवृत्ति नहीं है ॥७॥ इहां जैनी कहे है कि वार्तिक—लक्षणभेदादन्यत्वमग्निजलवत्॥८॥ अर्थ-लक्षण भेदतैं अवग्रह ईहाके अर संशयके अन्य पणौं अग्निके अर जलके समान है। टीकार्थ-जैसैं अग्निके अर जलके दहन प्रकाशन आदि तथा द्रवता स्नेहता आदि भिन्न भिन्न लक्षण भेद-तैं अन्य पणौं है। भावार्थ—अग्निके दहन प्रकाशन आदि लक्षण है अर जलके पतला पणां सचिक्कण पणां आदि लक्षण है तातैं दोउनिके अन्यपणौं है तैसैं अवग्रहके अर संशयके लक्षण भेद-तैं अन्यपणौं है ॥८॥ प्रश्न, यो लक्षण भेद कहा है ? उत्तर, कहिये है। वार्तिक—अनेकार्थानिश्चितापर्युदासात्मकः संशयस्तद्विपरीतोऽवग्रहः ॥ ९ ॥ अर्थ—अनेक अर्थको नहीं है निश्चय जाके ऐसो अनिषेधात्मक तो संशय अर यातैं विपरीत अवग्रह है। टीकाथ—स्थाणु पुरुष आदि अनेक अर्थका अलंबनकी निकटतातैं अनेकार्थात्मक तो संशय है अर पुरुष आदि कोऊ एक अर्थका आलंबनतैं एकात्मक अवग्रह है अर स्थाणु तथा पुरुषरूप अनेक धर्मका अनिश्चितात्मक तो संशय है यातैं स्थाणु धर्मनिनें तथा पुरुष धर्मनिनैं निश्चय नहीं करै है अर अवग्रह जो है सो पुरुष आदि कोऊ एक धर्मको निश्चयात्मक है अर स्थाणुके तथा पुरुषके अनेक धर्म जे हैं तिनका नहीं निषेधात्मक संशय है यातैं भिन्न भिन्न नियमरूप स्थाणुके तथा पुरुषके धर्म जे हैं तिननैं संशय ज्ञान नहीं निषेध करै है अर अवग्रह जो है सो अन्य धर्मनिको निषेधात्मक हैं तातैं अन्य जन्म सम्बन्धी पर्यायनिनैं निषेध करि एक पुरुष पर्यायका ही आलंबनरूप है ॥ ९ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—संशयतुल्यत्वमपर्युदासादिति चेन्न निर्णयविरोधात्संशयस्य ॥ १० ॥ अर्थ—प्रश्न, अनिषेध स्वरूप अवग्रह है यातैं संशय तुल्यपणौं है ? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि संशयके निर्णयतैं विरोध है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, संशयके तुल्य अवग्रह है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,अनिषेध स्वरूप है यातैं सो ऐसैं है कि जैसैं संशय ज्ञान स्थाणु पुरुषका विशेषनिको अनिषेधात्मक है तैसैं अवग्रह

भी पुरुष है ऐसैं ग्रहण करै है परन्तु भाषावयव रूप आदिको अनिषेधात्मक है यातैं ही यो ऐसैं हैं जो उत्तर कालमें त्रा पुरुषका विशेष ग्रहण करने निमित्त ईहा प्रारम्भ करै है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, संशयके निर्णयको विरोध है यातैं क्योंकि संशय ही निर्णयको विरोधी है अवग्रह निर्णयको विरोधी नहीं है। अवग्रहमें निश्चय है यातैं ॥१०॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—ईहायां तत्प्रसङ्ग इति चेन्नार्थादानात् ॥ ११ ॥ ईहाके विषैं संशयको प्रसंग आवै है ? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि ईहाके अर्थको ग्रहण हैं यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,जो अवग्रह ज्ञाननिर्णयको विरोधी है यातैं संशय नहीं है तो निर्णयका विरोधी पणातैं ईहाके संशयपणांको प्रसंग है उत्तर,सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, ईहाके अर्थको ग्रहण है यातैं सो ऐसैं है कि अर्थनें अवग्रहरूप करि वाका विशेषकी प्राप्तिके अर्थि विशेष अर्थको ग्रहण जो है सो ईहा है अर संशय जो है अर्थ विशेषको आलंबन करन वारो नहीं है ॥११॥ तथा वार्तिक—संशयपूर्वकत्वाच्च ॥१२॥ अर्थ—ईहाके संशय पूर्वक पणौं है यातैं। टीकार्थ—संशय जो हैं सो ईहाके पूर्व ही उत्पन्न होय है प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, पुरुषनें ग्रहण करि इहां यो दाक्षिणात्य है कि उत्तरीय है इत्यादिक अप्रतीतिनें होतां संता संशय होय है ऐसैं संशयनें प्राप्त भया पदार्थका उत्तरकालमें विशेष जाननेकी इच्छा प्रति प्रयत्न जो है सो ईहा है यातैं संशयके ईहाके अर्थांतर पणौं है ॥१२॥ वार्तिक अतएव संशयावचनमर्थग्रहीते ॥ १३ ॥ अर्थ—यातैं ही संशयको वचन सूत्रमें नहीं है क्योंकि ईहाके अर्थको ग्रहण है यातैं। टीकार्थ यातैं ही सूत्रकेविषैं संशय नहीं कह्यो है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,अवग्रहादिकके अर्थको ग्रहण है यातैं अर सशयनें होतां संतां ईहाकी प्रवृत्ति नहीं है प्रश्न, यो अपाय शब्द है कि अवाय शब्द हैं? उत्तर,दोऊ तरैं ही दोष नहीं है क्योंकि दोउनिमें सूं एक शब्द होत संतै कोऊ एकके अथ को ग्राहक पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि जा समय कहेंगे कियो दाक्षिणात्य नहीं है ता समय अपाय शब्दको अर्थ त्याग करै है ऐसो होय है तातैं वा समय ऐसो अर्थ ग्रहण होय है कि यो उत्तर दिशा नवासी है अर अवाय शब्द अधिगम वाची है सो अर्थको

ग्राहक है तातैं जा समय यो उदीच्य है ऐसैं अवाय करै है वा समय यो दक्षिण दिशा निवासी नहीं है ऐसैं अपाय शब्द अर्थ करि ग्रहण कियो होय है। इहां कोऊ कहै है कि तुम जैनिनिनें कह्यो कि विषयका अर विषयीका मिलापनें होतां संता दर्शन होय है अर दर्शनके अनंतर ही अवग्रह होय है सो अयुक्त है क्योंकि दोउनिके विलक्ष पणौं नहीं है यातैं अर्थात् अवग्रहतैं विलक्षण दर्शन नहीं है। इहां उत्तर कहिये हैं कि तुमने कह्यो सो नहीं है क्योंकि दोउनिके विलक्षण पणौं है यातैं। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर,या विचारमें चक्षु दर्शनावरणका अर वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं अर अंगोपांग नामा नाक कर्मका लाभतैं नहीं प्रगट भई है विशेष सामर्थ्य जाकी ऐसा नेत्रकरि कछुयेक या वस्तु है ऐसैं अनाकार आलोकन जो है सो दर्शन कहिये है सो बालकका उन्मेषके समान है कि जैसैं जन्मता बालकके यो प्रथम भयो अवलोकन जो है सो नहीं प्रगट भया रूप द्रव्य विशेषका आलोचनतैं दर्शन कहिये है तैसैं ही सर्वके जाननो ता पीछे दोय तीन समयमें भया अवलोकनके विषैं चक्षु अवग्रह नामा मतिज्ञानावरणका तथा वीर्यान्तरायका क्षयोपशमतैं तथा अंगोपांग नामा नाम कर्मका लाभतैं यो रूप है ऐसैं निर्णय रूप भयो विशेष जो है सो अवग्रह है कि चक्षु अवग्रह है। बहुरि और सुनूं कि जो प्रथम समयमें अवलोकन करता बालकके जो दर्शन भयो है सो तिहारे अभिप्रायमें अवग्रहका जातिपणांतैं ज्ञान इष्ट है तो कहो हो कि वो ज्ञान मिथ्याज्ञान है कि सम्यग्ज्ञान है जो मिथ्याज्ञान है तो वाके मिथ्याज्ञान पणांनैं होतां संता भी संशय विपर्यय अनध्यवसाय स्वरूप पणौं होय तिनमें प्रथम ही संशय विपर्यय स्वरूप तो नहीं है क्योंकि चेष्टित जो दर्शन ताकै सम्यग्ज्ञान कारण पणांतैं तथा प्रथम समयमें होवा पणांबैं वो संशय विपर्यय नहीं है। भावार्थ—दर्शन सम्यक्ज्ञानका हेतुतैं तातैं संशय विपर्यय रूप नहीं है तथा दर्शन तो प्रथम समयमें होय है अर संशय तथा विपर्यय दर्शनके भये पीछे पीछे वाके सदृश द्रव्यको स्मरण भये पीछे होय है तातैं संशय विपर्यय स्वरूप दर्शन नहीं है अर अनध्यवसाय रूप भी नहीं है क्योंकि अर्थका आकार जे हैं तिनका आलंबनको अभाव है यातैं ॥ १३ ॥

किंच, वार्तिक—कारणनानात्वात्कार्यनानात्वसिद्धेः ॥ १४ ॥ अर्थ—कारणका नाना पणातैं कार्यके नाना पणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—जैसैं मृत्तिका रूप तथा तंतुरूप कारणका भेदतैं घट रूप तथा पट रूप कार्यमें भेद है तैसैं दर्शनावरणका अर ज्ञानावरणका क्षयोपशमरूप कारणका भेदतैं उनके कार्य दर्शन जे हैं तिनके भी भेद है अर अवग्रहतैं पूर्व दर्शन होय है तातैं शुक्ल कृष्ण आदि रूप विज्ञानकी सामर्थ्य सहित आत्मा जो है ताकै यो शुक्ल है कि कृष्ण है इत्यादि विशेषकी अप्रतिपत्तितैं संशय होय है ता पीछैं शुक्ल कृष्णका विशेष जाननेकी वांछा प्रति उद्यम जो है सो ईहा है ता पीछे यो शुक्ल ही है कृष्ण ही है ऐसैं निश्चय होना जो है सो अवाय है अर निश्चय भया अर्थका अविस्मरण जो है सो धारणा है ऐसैं श्रोत्रादिकनिके विषैं तथा मनके विषैं भी जोड़ने योग्य है क्योंकि, तिन तिनका आवरण रूप कर्मका क्षयोपशम स्वरूप विकल्पतैं भिन्न भिन्न अवग्रहादि ज्ञानावरणका भेद इष्ट करिये है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, ज्ञानावरण मूल प्रकृति है ताकी पांच उत्तर प्रकृति है तिनकी भी उत्तरोत्तर प्रकृति विशेष है सो ही प्राचीन आगम है कि ज्ञानावरणस्योत्तरप्रकृतय असंख्येयालोकाः, याको अर्थ ऐसो है कि ज्ञानावरण को उत्तर प्रकृति असंख्यात लोक प्रमाण है या वचनतैं। प्रश्न, ईहादिकनिके अमतिज्ञानको प्रसंग आवै है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, उत्तरोत्तर कार्य पणातैं सो ऐसैं है कि अवग्रह तो कारण हैं अर ईहा कार्य है। बहुरि ईहा कारण है अर अवाय कार्य है। बहुरि अवाय कारण है अर धारणा कार्य है अर ईहादिकनिके इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्त पणौं नहीं है ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि ईहादिकनिके अनिंद्रिय निमित्त पणौं है यातैं मतिज्ञान नाम है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो श्रुतज्ञानके भी मतिज्ञानको प्रसंग प्राप्त होय है क्योंकि श्रुतज्ञान भी अनिंद्रिय निमित्त है यातैं उत्तर, इंद्रिय करि ग्रहण किया पदार्थके ही ईहादिकनिको विषय पणौं है यातैं ईहादिकनिके इंद्रिय निमित्त पणानें भी उपचार रूप करिये है अर श्रुतज्ञानके या विधि नहीं है क्योंकि वाके

अनिंद्रिय विषय मात्र पणौं है यातैं। श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। प्रश्न, जैसैं चक्षु आदि इंद्रियनितैं अवग्रह आदि भये पीछे ईहादिक होय हैं तैसैं ही चक्षु आदि इंद्रियनितैं एक घट आदि पदार्थनें जाणि अनेक देशकाल संबधी वाके सजातीय तथा विजातीय घट आदि पदार्थनें जाणै सो श्रुतज्ञान है यातैं श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग आवै है? उत्तर, ईहादिकनिके तो विषय वो ही है कि जो नेत्र आदिके गोचर भयो अर श्रुत ज्ञानके विषय वो ही है जो चक्षु आदिके गोचर नहीं भयो तातैं श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। प्रश्न, जो अनिंद्रिय निमित्त ईहादिक है ऐसैं है तो चक्षु इंद्रिय ईहा आदि नामको अभाव होयगो क्योंकि मतिज्ञानके तीनसै छत्तीस भेद कहेंगे तहां बहु आदि पदार्थ विषय चक्षु इन्द्रिय निमित्त ईहादिक आलाप होय है सो अनिंद्रिय निमित मानेतैं नहीं बनेंगे? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इंद्रिय शक्ति रूप परिणम्यूं जीव जो है ताके भावेंद्रिय पणानें होतां संता वाका व्यापार रूप चतुरिंद्रिय ईहादि स्वरूपके कार्य पणौं है, यातैं अर इंद्रियभाव परिणम्यों ही जीव भावेंद्रिय इष्ट करिये है ता आत्माके विषयाकार रूप परिणति:जो है सो ईहादिक है ऐसैं चक्षु इंद्रिय ईहा आदि आलाप होय है ॥१४॥१५॥ अबैं शोडषमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो वे अवग्रहादिक मतिज्ञानका भेदज्ञानावरण क्षयोपशम निमित्त कह्या ते कौन विषयके होय है ऐसा प्रश्ननें होतां सतां सूत्रकार कहै है। सूत्रम्---

बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥

अर्थ—बहुत १ बहुतप्रकार २ शीघ्र ३ नहीं निकस्यो ४ नहीं कह्यो ५ निश्चल ६ अर इनिके प्रतिपक्षी एक १ एक प्रकार २ मंद ३ निकस्यो ४ कह्यो ५ चलाचल ६ ऐसैं द्वादश भेद रूप विषय जे हैं तिनका अवग्रहादिक होय है। वार्तिक--संख्यावैपुल्यवाचिनो बहुशब्दस्य ग्रहणमविशेषात् ॥१॥ अर्थ—संख्याको अर विपुलताको वाचक बहु शब्द जो है ताको ग्रहण अविशेषतैं है। अर्थ—निश्चय

करि बहु शब्द संख्या वाची तथा विपुलता वाची है तातैं दोऊ अर्थको ही ग्रहण है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, इहां अविशेष रूप कह्यो है यातैं तहां संख्याके विषैं तो एक दोय बहुत ऐसैं है अर विपुल पणामें बहुत तंदुल है बहुत दाल है ऐसैं है ॥ १ ॥ प्रश्नोतररूप वार्तिक—बह्ववग्रहाद्यभावः प्रत्यर्थवशवर्तित्वादिति चेन्नसर्वदैकप्रत्ययप्रसंगात् ॥ २॥ अर्थ-बहुतका अवग्रहादिकनिको अभाव है क्योंकि प्रत्यर्थ वशवर्ती पणौं ज्ञानके हैं यातैं। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सदा काल एककी प्रतीतिको प्रसङ्ग आवे है। टीकार्थ—प्रश्न, प्रत्यर्थ वशवर्ती विज्ञान जो है सो अनेक अर्थनिनैं ग्रहण करनेंकूं समर्थ नहीं हैं यातैं। बहुतका अवग्रहादिकको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सर्वदा एककी प्रतीतिको प्रसङ्ग आवे है यातैं सो ऐसैं है कि जैसैं अरण्य जो वृक्ष रहित प्रदेश तथा अटवी जो बहुत वृक्षवान प्रदेश ताकैं विषैं कोऊ एक ही पुरुषनें देखतां सतां अनेक पुरुष नहीं है ऐसैं जाणें है अर जो और तरह है कि एकनें देखतां संतां अनेक नहीं है ऐसी प्रतीत नहीं होय है तो एकके विषैं अनेक पणांकी बुद्धि होय सो मिथ्याज्ञान है तथा नगर वन स्कंधावारकूं जाननेवारेके भी सर्वकालमें एककी प्रतीति होय यातैं तिहारे अनेकार्थ ग्राही विज्ञानका अत्यंत असम्भवतैं नगर वन स्कंधावारकी प्रतीतिकी निवृत्ति होय हैं अर ये नगर वन आदि संज्ञा निश्चय करि एक ही अर्थमें रहनेवारी नहीं है अर प्रत्यर्थ वशवर्ती ज्ञानका अङ्गीकार करवातैं हम नगर वन आदिनें जाने है ऐसा लोकका भला व्यवहारकी निवृत्ति होय है ॥२॥ किंच, वार्तिक—नानात्वप्रत्ययाभावात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, और सुनूं कि नाना पणांकी प्रतीतिको अभाव होय है यातैं। अर्थ—प्रश्न, जाकै नियमतैं एकार्थ ग्राही ज्ञान है ताकै पूर्व ज्ञानको निवृत्तिनें होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति है अथवा पूर्व ज्ञानकी निवृतिनें नहीं होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति है ऐसैं दोऊ तरैं ही दोष उत्पन्न होय है सो ऐसै है कि जो पूर्व ज्ञान उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति समयमें है तो जो कह्यो हुतो कि एक मन पणांतैं एकार्थ ग्राही ज्ञान है सो यो कहनों विरोधनें

प्राप्त होय है अर पूर्व ज्ञान उत्तर ज्ञानकी उत्पत्तिमें अङ्गीकार करतां संतां जैसैं एक मन अनेक प्रतीतिको उत्पन्न करनेंवारो है तैसैं एक प्रतीति अनेक अर्थनिमें प्रवर्त्तनवारी होयगी क्योंकि अनेक अर्थनिकी प्रतीतिको एक कालमें संभव है यातैं अर ऐसैं अनेक अर्थकी उपलब्धिकी उत्पत्ति होयगी तहां जो तिहारे अभिमत है कि एकको ज्ञान एक अर्थनें ही ग्रहण करै है या वचनको व्याघात होय है अर जो पूर्व ज्ञानको निवृत्तिनें होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति प्रतिज्ञा करिये हैं कि सर्वथा एक अर्थनें एक ही ज्ञान ग्रहण करै है तो यो यातैं अन्य है व्यवहार नहीं होय है अर यो व्यवहार है ही तातैं यो पूर्वैं कह्यो कि एकार्थ ग्राही ज्ञान है तातैं बहुतको अवग्रह नहीं करै है सो कुछ नहीं है ॥३॥ किंच वार्त्तिक—आपेक्षिकसंव्यवहारनिवृत्तेः ॥४॥ अर्थ—और सुनूं कि आपेक्षिक भला व्यवहारकी निवृत्ति होय है यातैं। टीकार्थ—जाकै एक ज्ञान अनेक अर्थको ग्राहक नहीं विद्यमान है ताकै मध्यमा अर प्रदेशनी दोऊ अंगुलीको युगपत् अनुपलंभ होवातैं उन विषय दीर्घ वा ह्रस्व व्यवहार विनष्ट होय है क्योंकि यो व्यवहार अपेक्षा सहित है अर तिहारे अपेक्षा नहीं है यातैं ॥ ४ ॥ किंच, वार्त्तिक—संशयाभावप्रसंगात् ॥ ५ ॥ अर्थ—और सुनूं कि संशय ज्ञानका अभावको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ—एकार्थ विषय वर्ती विज्ञाननें होतां संतां प्रतीतिको जन्म स्थाणुमें तथा पुरुषमें प्रथम एकमें होय है दोउनिमें नहीं होय है क्योंकि दोउनिमें प्रतीतिको होनों प्रतिज्ञातैं विरुद्ध है यातैं, अर्थात् ज्ञानके क्षणस्थाई पणौं मान्य है यातैं बहुरि जो स्थाणुमें पुरुषको अभाव है यातैं स्थाणुके अर बंध्या पुत्रके समान संशयको अभाव है भावार्थ—बंध्या पुत्रको संदेह स्थाणुमें कदाचित् ही नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि बंध्या पुत्र अवस्तु है यातैं तैसैं ही एकार्थ ग्राही ज्ञानमें पुरुषका अभावतैं स्थाणुनें अनेक कोटिकू ग्रहण करनेंवारो संशय कदाचित् ही नहीं उत्पन्न होय है। बहुरि तैसैं ही पुरुषके विषैं स्थाणु द्रव्यका अनपेक्षपणातैं संशय नहीं होय है क्योंकि इहां भी तैसैं ही पूर्ववत् मनुष्यपणांको भाव इष्ट है

याते एकार्थ ग्राही विज्ञानकी कल्पना कल्याणकारी नहीं है ॥ ५ ॥ किंच, वार्त्तिक—इप्सितनिष्पत्त्यनियमात् ॥ ६ ॥ अर्थ—और सुनूं कि वांछित अर्थकी उत्पत्तिका नियमको अभाव होय है यातें। टीकार्थ—विज्ञानके एकार्थावलंबी पणानें होतां संतां चित्र कर्ममें प्रवीण चैत्रपुरुष पूर्ण कलशकूं लिखतो जो है ताकै चित्र कर्मकी क्रियाका प्रकारका ज्ञानकै अर कलशका प्रकार ग्रहण करनें रूप विज्ञानके भेदतें परस्पर विषयका मिलापका अभावतें अनेक विज्ञानको जो उत्पादताका रुकवाका क्रमनें होतां संतां कार्यकी अनियम करि उत्पत्ति होय, अर वा उत्पत्ति नियमकरि देखिये है सो एकार्थ ग्राही विज्ञानके विषें विरोधनैं प्राप्त होय है तातैं नानार्थ ग्राही विज्ञानकी प्रतीति ही अङ्गीकार करने योग्य है ॥ ६ ॥ तथा वार्त्तिक—द्वित्र्यादिप्रत्ययाभावाच्च ॥७॥ अर्थ—अथवा दोय तीन आदिको प्रतीतिको अभाव होय है यातैं। टीकार्थ—अथवा एकार्थ विषयवर्ती विज्ञाननें होतां संतां ये दोय है ये तीन है इत्यादि प्रतीतिको अभाव होय है क्योंकि तिहारे एक विज्ञान दोय तीन आदि पदार्थनिको ग्राहक नहीं है यातैं ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—संतानसंस्कारकल्पनायां च विकल्पनानुपपत्तिः ॥ ८ ॥ अर्थ—संतानकी अर संस्कारकी कल्पनानें होतां संतां भी विकल्पकी अनुपपत्ति है यातैं। टीकार्थ—अथवा संतानको कल्पनानें अर संस्कारकी कल्पनानें करतां संता भी विकल्पकी अनुपपत्ति है क्योंकि इहां प्रश्न उपजे है कि संतान अर संस्कार जो है सो ज्ञान जातीय है कि अज्ञान जातीय है जो अज्ञान जातीय है तो वातैं कछू प्रयोजन नहीं है अर ज्ञान जातीय पणानें होतां संतां भी एकार्थ ग्राही पणौं है कि अनेकार्थ ग्राही पणौं है जो एकार्थ ग्राही पणौं है जो वाही दोषनिकी विधि तिष्ठै है अर अनेकार्थ ग्राही पणौं है तो प्रतिज्ञाकी हानि प्राप्त होय है ॥८॥ वार्तिक—विधग्रहणं प्रकारार्थम्॥९॥ अर्थ—विधि शब्दको ग्रहण प्रकारके अर्थ है। टीकार्थ—विध १ युक्त २ गत ३ प्रकार ४ ये च्यार शब्द समान अर्थ कूं कहन वारे हैं याते इहां प्रकार अर्थमें विध शब्द जानना अर्थात् बहुविधं कहिये बहुत प्रकार है ॥९॥

वार्तिक—क्षिप्रग्रहणमचिरप्रतिपत्यर्थम् ॥१०॥ अर्थ—क्षिप्र शब्दको ग्रहण अचिरकी प्रतीतिके अर्थ है। टीकार्थ—पदार्थकी प्रतीति कैसें होय ऐसें प्रश्नतें होतां संतां क्षिप्रको ग्रहण करिये है। भावार्थ—अचिर पदार्थकी प्रतीतिके अर्थि क्षिप्र शब्दको ग्रहण है ॥१०॥ वार्तिक—अनिःसृतग्रहणमसकलपुद्गलोद्गमार्थम् ॥ ११ ॥ अर्थ—अनिसृत पदको ग्रहण असमस्त पुद्गलका उदयके अर्थ है। टीकार्थ—समस्त पुद्गलको है प्रकाश जा विषें ऐसा पदार्थका ग्रहण होवाके अर्थि अनिसृत पदको ग्रहण करिये हैं। भावार्थ—पदार्थका एक देशके देखनेतें भी पदार्थको ज्ञान होय है ऐसा जनावनें निमित्त अनिःसृत शब्दको ग्रहण है ॥ ११ ॥ वार्तिक—अनुक्तमभिप्रायेण प्रतिपत्तेः॥१२॥ अर्थ—अनुक्त पदको ग्रहण अभिप्राय करि प्रतीति होवातें है। टीकार्थ—अभिप्राय करि ज्ञान होय है यातें अनुक्त पदको ग्रहण करिये है ॥ १२ ॥ वार्तिक—ध्रुवं यथार्थग्रहणात् ॥१३॥ अर्थ—ध्रुवशब्द यथार्थका ग्रहणतें है। टीकार्थ—यथार्थको ग्रहण होय है यातें ध्रुवको ग्रहण करिये है ॥१३॥ वार्तिक—सेतरग्रहणाद्विपर्ययविरोधः ॥१४॥ अर्थ—सेतर पदका ग्रहणतें उक्ततें विपरीतको ग्रहण होय है। टीकार्थ—सेतरका ग्रहणतें अल्प १ अल्प विध २ चिर ३ निःसृत ४ उक्त ५ अध्रुव ६ इनिको संग्रह होय है ॥ १४ ॥ वार्तिक—अवग्रहादिसंबंधात्कर्मनिर्देशः ॥ १५ ॥ अर्थ—अवग्रहादिकका संबंधतें कर्म निर्देश है। टीकार्थ—बह्वादिकनिके कर्मको निर्देश है सो अवग्रहादिककी अपेक्षा जानवे योग्य है।भावार्थ—बहु आदिकनिके षष्ठी विभक्ति है तातें ऐसा जनाया है कि बहु आदिनिका अवग्रहादि होय है ॥ १५ ॥ वार्तिक—बह्वादीनामादौ वचनं विशुद्धिप्रकर्षयोगात् ॥१६॥ अर्थ—बहु आदिकनिको आदिके विषें वचन है सो विशुद्धिका अधिक योगतें है। टीकार्थ—ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशमको जो विशुद्धि ताका प्रकर्ष योगतें होतां संतां बहु आदिकनिके अवग्रहादिक होय है यातें तिनको ग्रहण आदिमें करिये है॥ १६ ॥ वर्तिक—ते च प्रत्येकमिंद्रियानिन्द्रियेषु द्वादशविकल्पा नेयाः ॥१७॥ अर्थ-वे अवग्रहा-

दिक प्रत्येक इंद्रिय अर अनिंद्रियनिके विषैं द्वादश द्वादश भेद रूप होय है, अर्थात् दोय से अठ्यासी भेद होय है। टीकार्थ—वे बहु आदिका अवग्रहादिक इंद्रिय अनिंद्रिय जे हैं तिनके विषैं एक एक प्रति द्वादश द्वदश विकल्प जानने, सो ऐसैं है कि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका अर वीर्यान्तरायका चयोपशमतैं अर आंगोपांग नामा नामकार्मका लाभतैं संभिन्न श्रोत्रनामा ऋद्धि धारक तथा अन्य पुरुष एकै काल तत कहिये तांतिका अर वितत कहिये ढंका तथा तालका अर घन कहिये कांसीकी ताल आदिका अर सुषिर कहिये फूंकका तथा औरका शब्द जे हैं तिनका श्रवणतैं बहु शब्दनें अवग्रह रूप करै है कि सर्वका शब्दनें भिन्न भिन्न करै है सो करण इंद्रिय निमित्तक बहुको अवग्रह है। प्रश्न, अवग्रह तो सामान्यको ग्राहक है ताके तत आदिका शब्द भिन्न भिन्न ग्रहण करना कह्या सो कैसैं संभवै है? उत्तर, तत आदिका समुदाय रूप शब्दका सामान्य मात्र करि ग्रहण करै है तहां तत वितत आदिकी ईहा उत्तर कालमें करैगा ऐसैं बहु आदि द्वादश भेदनिमें ही जानना। प्रश्न, इहां संभिन्न श्रोत्र नामा ऋद्धि धारीके भी अवग्रह होना कह्या अर संभिन्न श्रोत्र जो है सो तत् आदिका भिन्न भिन्न शब्द विशेषको जाननें वारो है तातैं याकै अवग्रहादिक कैसे संभवै है? उत्तर, ऋद्धिधारीनिके भी ज्ञान अनुक्रमतैं ही प्रवर्तै है तातैं अवग्रहादिक संभवै है अर ऋद्धिकै धारनेतैं ज्ञानकी सूक्ष्मता है ही अर अल्प श्रोत्रेन्द्रियावरणका चयोपशम रूप परिणम्यूं आतमा ततआदि शब्दनिके विषैं कोऊ एकका अल्प शब्दनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक अलपको अवग्रह है। बहुरि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका चयोपशम आदिको निकटतानैं होतां संता एक दोय तीन च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुणौं तथा आदि शब्दको जो विकल्प ताका भिन्न भिन्न अवग्राहक पणातैं बहुविधनें अवग्रह रूप करै है कि जानैं है। भावार्थ, एक वाद्यके जे बहु भेद तिनका सामान्य शब्दकूं ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक बहु विधको अवग्रह है अर अल्प है विशुद्धि जा विषैं ऐसो श्रोत्रेंद्रिय आदि परिणमनको

कारण आत्मा जो है सो तत आदि शब्दनिका एक प्रकारका अवग्रहणातैं एक प्रकारनें ग्रहण करै है सो कर्णेंद्रिय निमित्तक एक विधको अवग्रह है। बहुरि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका क्षयोपशम आदिका परिणामी पणातैं शीघ्र शब्दनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक शीघ्रको अवग्रह है अर अल्प श्रोत्रेंद्रियावरणका क्षयोपशम आदिका परिणामी पणातैं बहुत काल करि शब्दनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक विलम्बितको अवग्रह है। बहुरि भले प्रकार विशुद्ध रूप श्रोत्र आदिका परिणामतैं समस्तपणां करि नहीं उच्चारण कियाका ग्रहण करवातैं अनिःसृतनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक अनिःसृतको अवग्रह है अर प्रतीतिमें आयानें कि प्रत्यक्षमें सुणयानें ग्रहण करै है सो कर्णेन्द्रिय निमित्तक निःसृतको अवग्रह है। बहुरि प्रकृष्ट विशुद्धि रूप श्रोत्रेंद्रियादि परिणामका कारण पणातैं एक अक्षरका उच्चारणनें होतां संतां अभिप्राय करि ही विना उच्चारण किया समस्त शब्दनें ग्रहण करै है कि तू यो शब्द कहेगो ऐसैं कहै सो करणेंद्रिय निमित्तक अनुक्तको अवग्रह है अथवा स्वरका संचारणतैं पूर्व ही तंत्री द्रव्यका तथा मृदंगादिकनिका मिलावना करि ही वादित्रमें प्राप्त भया ऐसा विना कह्या ही शब्दनें अभिप्राय करि ग्रहण करिके कहै कि तू यो शब्द बजावेगो ऐसैं कहै सो भी करणेन्द्रिय निमित्तक अनुक्तको अवग्रह है अर प्रतीतमें आवै सो करणेंद्रिय निमित्तक उक्तको अवग्रह है अर्थात् सकल शब्दका उच्चारणतैं जानें सो उक्तको अवग्रह है। बहुरि संक्लेश परिणामको त्यागी जो है ताकै यथा योग्य श्रोत्रेन्द्रियावरणका क्षयोपशमादिक परिणाम कारण जे हैं तिनका यथावस्थित पणातैं जैसैं प्रथम उत्पन्न भया शब्दको ग्रहण होय है तैसैं ही अवस्थित शब्दनें ग्रहण करै है नहीं न्यून ग्रहण करै नही अधिक ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक ध्रुवको अवग्रह है अर फेरफेर होवा पणां करि संक्लेशरूप तथा विशुद्धि परिणाम स्वरूप कारणकी है अपेक्षा जाकै ऐसा आत्माकै यथायोग्य परिणामकरि ग्रहण किया श्रोत्रेन्द्रियकी निकटतानें होतां संतां भी श्रोत्रेंद्रियावरणका

आत्माकै लब्ध्यक्षररूप षट् प्रकार श्रुतज्ञान हैं तातैं अनिःसृत अनुक्तका भी अवग्रहादिक करै है ॥ १६ ॥ अबै सत्तरमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो अवग्रहादिक बहु आदि कर्मनिका संग्रह करनेवारे है तो बहु आदि विशेषण काहेकौ है ऐसा प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है।

सूत्रम्—

अर्थस्य ॥१७॥

अर्थ—बहु आदिकनिकै अवग्रहादिक होय है ते अर्थके होय है अर चक्षु आदिको जो विषय सो अर्थ है अर बह्वादिक विशेषणनि करि विशिष्ट अर्थ जो है ताका अवग्रहादिक होय है॥ १७ ॥ वार्त्तिक—इयर्ति पर्यायानर्यते वा तैरित्यर्थोद्रव्यम् ॥ १ ॥ अर्थ—अपनी पर्यायनिनैं प्राप्त होय अथवा तिन पर्यायनि करि प्राप्त हूजिये सो अर्थ है सो ही द्रव्य है अर्थ—अपनें अपनें संबंधी अर अन्तरंग बाह्य रूप निमित्तका वशतैं उत्पत्ति प्रति सन्मुख भये पर्याय जे हैं तिननैं प्राप्त होय है अथवा तिन पर्यायनि करि प्राप्त हूजिये है कि जानिये है सो अर्थ है। प्रश्न, सो अर्थ कहा है ? उत्तर, द्रव्य है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—अर्थवचनं गुणग्रहणनिवृत्त्यर्थम् ॥ २ ॥ अर्थ—ऐसो वचन है सो गुणका ग्रहणकी निवृत्तिके अर्थ है कितनेक पुरुष रूपादिक गुण ही इन्द्रियनि करि सन्निकर्ष रूप होय है तातै गुणको ग्रहण होय है ऐसें माने है वा मतकी निवृत्तिके अर्थ अर्थस्य ऐसौ सूत्र कह्यौ है अर वै रूपादिक गुण अमूर्त्तिक है तातैं इन्द्रियनिका सन्निकर्षनै नहीं प्राप्त होय है। प्रश्न, गुणनिका प्रचय विशेषनें होतां संतां सन्निकर्ष संभवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि गुणादिकनिके प्रचय-की अनुपपत्ति हैं यातैं अथवा प्रचयनें होतां संता भी अर्थान्तर रूप होनेका अभाव है यातैं सूक्ष्म अवस्थाका नहीं उलंघनतैं गुणनिको अग्रहण ही होय है। प्रश्न, ऐसैं होत संतैं यो व्यवहार

नहीं होय कि मैं रूप देख्यो गंध सूंघ्यो उत्तर, अर्थका ग्रहणतैं होत है क्योंकि गुणनिके अर्थतैं अभिन्न पणौं है यातैं गुणनिका भी ग्रहणकी उपपत्ति है ॥२॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—तेषु सत्सु मतिज्ञानात्मलाभात् सप्तमीप्रसंगः ॥ ३ ॥ अर्थ—तिन विषयनिनैं होत संतै मतिज्ञानका स्वरूपको लाभ है यातैं सप्तमीको प्रसंग होय है टीकार्थ—जातैं विषयनिनैं विद्यमान होत संतै मतिज्ञान प्रकट होय है तातैं अर्थ ऐसो सप्तम्यंत सूत्र कहनें योग्य है ॥ ३ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—नानेकांतात् ॥ ४ ॥ अर्थ—उत्तर सो नहीं है क्योंकि अनेकान्त है यातैं टीकार्थ—तुमने कह्या सो नहीं है क्योंकि यो एकांत नहीं है कि अर्थनें होत संतै मतिज्ञान होयही है क्योंकि अर्थनें होत संतै भी पृथिवी तलका भवनमें उत्पन्न भयो अर वहांसे निकस्यो कुमार जो है ताके घट रूप आदिका मतिज्ञानको अभाव है यातैं अथवा यो भी एकांत नहीं है कि अधिकरणका सत्वतैं सप्तमी प्रसंग आवे। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अधिकरणका विवक्षित पणातैं अर विवक्षाका वशतैं ही कारक होय है ॥ ४ तथा वार्त्तिक—क्रियाकारकसम्बन्धस्य विवक्षितत्वात् ॥ ५ ॥ अर्थ—क्रिया कारक संवन्धके विवक्षित पणौं है यातैं। टीकार्थ—अवग्रहादिक क्रिया विशेष कह्या है तिनके अवश्य कोऊ कर्मनें होनों योग्य हैं यातैं वहु आदि है विकल्प जाके ऐसा अर्थका अवग्रहादिक होय है ऐसे कहिये है ॥ ५ ॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—बह्वादि समानाधिकरण्याद्बहुत्व प्रसंगः ॥ ६ ॥ अर्थ-प्रश्न, वहु आदिका समानाधिकरणपणातैं वहुवचन पणाको प्रसंग आवे है। टीकार्थ—यातै वहु आदि ही अर्थ है अर अर्थतैं अन्य वहु आदि नहीं है तातैं वहु आदिका समान अधिकरण पणातैं अर्थानां ऐसे सूत्र है बहुवचन पणों प्राप्त होय है ॥ ६ ॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—न वानभिसंवंधात् ॥ ७ ॥ अर्थ—उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अर्थको वहु आदि करि संवंध नहीं हैं यातैं टीकार्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहाकारण उत्तर, अनभिसवंध है यातैं क्योंकि निश्चय करि अर्थके बहु पणां आदि करि अभिसंवंध नहीं करिये है। प्रश्न, तो कौन करि अभिसम्बन्ध

करिये है, उत्तर, अवग्रहादिकनि करि सम्बन्ध करिये है, प्रश्न, कौनको ? ऐसा प्रश्न होतां संता कहिये है कि इहां अर्थको संबंध करिये है अर उन अवग्रहादिकनिका विशेष रूप बहु आदिको ग्रहण है ॥८॥ तथा वार्तिक-सर्वस्य वार्यमाणत्वात् ॥६॥ अर्थ--अथवा जाति प्रधान पणातैं सर्वके एक वचन योग्य है। टीकार्थ—अथवा सर्व ही जानने योग्य पदार्थ जे हैं तिनके अर्थ पणौं है अर एक वचन योग्य है। टीकार्थ—अथवा सर्व ही जानने योग्य पदार्थ जे हैं तिनके अर्थ पणौं है अर निर्देशके जाति प्रधान पणौं है यातैं अर्थस्य ऐसैं एक वचन पणांको निर्देशयुक्त है ॥६॥ तथा-वार्तिक--प्रत्येकमभिसंबंधाद्वा ॥१०॥ अर्थ—अथवा प्रत्येक अभि संबंध है यातैं। टीकार्थ--अथवा प्रत्येक अभि संबंध करिये है कि बहु-अर्थका तथा बहुविध अर्थका अवग्रहादिक होय है ऐसैं ॥१०॥ अवैं अठारमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि ये अवग्रहादिक सर्व इंद्रिय अनिंद्रियका विषय रूप अर्थका होय है कि कुछ विषयमें विशेष है ऐसैं प्रश्न होत संतै सूत्रकारक हैं है ॥ सूत्रम्—

व्यंजनस्यावग्रहः ॥१८॥

अर्थ—अप्रगटको अवग्रह ही होय है अर अप्रकट शब्द आदि समूह जो है सो व्यंजन है अर वाकै अवग्रह ही होय है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कियो है? उत्तर, नियमके अर्थ कीयो है कि अवग्रह होय है ईहा नही होय है। प्रश्न, ऐसैं है तौ एवकार और करनों योग्य हो, उत्तर रूप वार्तिक-नवा सामर्थ्यादव धारण प्रतीतेरब्भक्षवत् ।१। अर्थ-एवकार करनों योग्य नहीं है क्योंकि अपभक्ष शब्दके समान सामर्थ्यतैं अवधारणकी प्रतीति है यातैं। टीकार्थ-एवकारकरनों योग्य नहीं है। प्रश्न कहाकारण ? उत्तर, सामर्थ्यतैं एवकारको अर्थ जो नियम ताकी प्रतीति है यातैं। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, अपभक्षणवत् है कि जैसैं जल भक्षण नहीं करै ऐसो कोऊ नहीं है ऐसी सामर्थ्यतैं नियमकी प्रतीति है तथापि जलभक्षण करै है ऐसैं कहतां संता ऐसा अर्थकी प्रतीति होय है कि जल ही पान करै है और कछू भी नहीं भक्षण करै है ऐसा नियम की प्रतीति होय है तैसैं ही पूर्व सूत्रमें सर्व

विषयका अवग्रहादिक होनेकी प्रसिद्धता होत संतें इहां अवग्रह शब्द है सो नियमके अर्थ जानिये है ॥१॥ प्रश्नोतर रूप वार्तिक—तयोरभेदो ग्रहणाविशेषादिति चेन्न व्यक्ताव्यक्तभेदादभिनव शरावतत् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, अर्थमें अर व्यंजनमें अभेद है क्योंकि दोउनिका ग्रहणमें अविशेष है यातें। उत्तर, सो नहीं, नवीन सरावाके समान व्यक्त अव्यक्तमें भेद है यातें। टीकार्थ—प्रश्न, अर्थावग्रह अर व्यंजनावग्रह ये दोऊ जे हैं तिनके विषैं भेद नहीं है क्योंकि ग्रहणमें अविशेष है यातें शब्दादिकनिका ग्रहण प्रति विशेष नहीं है। उत्तर। सो नहीं है, प्रश्न, कहाकारण? उत्तर। व्यक्त अव्यक्तका भेदतें व्यक्तको ग्रहण तो अर्थावग्रह है अर अव्यक्तको ग्रहण व्यंजनावग्रह है। प्रश्न, कैसें है? उत्तर, नवीन सरावाके समान है कि जैसें सूक्ष्म जलका कणनि करि दोय तीनवार सींच्यो नवीन सरावो आर्द्र नहीं होय। बहुरि वोही सरावो वारवार सींच्यो थको शनैं शनै आर्द्र होय है तैसें ही आत्माके शब्दादिकनिका प्रगट ग्रहणतें पूर्व व्यंजनावग्रह है अर प्रकटको ग्रहण जो है सो अर्थावग्रह है ॥२॥ अब उगणीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि सर्व इंद्रियनिके अवशेष करि व्यंजनावग्रहका प्रसंगनें होतां संता जहां असंभव है ताके अर्थ निषेधरूप सूत्रकार कहै है। सूत्र—

न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥

अर्थ—नेत्रकरि तथा अनिंद्रिय करि व्यंजनावग्रह नहीं होय है। प्रश्न, काहेतें? उत्तर रूप वार्तिक—व्यंजनावग्रहाभावश्चक्षुर्मनसोरप्राप्यकारित्वात् ॥१॥ अर्थ—नेत्रके अर मनके व्यंजनावग्रहको अभाव है क्योंकि अप्राप्यकारी पणौं है यातें। टीकाअर्थ—यातें अप्राप्य कहिये नहीं भिड्यो अर अविदिक् कहिये सन्मुख अर युक्त कहिये योग्य अर सन्नि कर्षका विषयमें अवस्थित अर वाह्य प्रकाश करि अभिव्यक्त कहिये प्रगट ऐसा अर्थमें नेत्र प्राप्त होय है अर मन भी अप्राप्त

किंचित् किंचित् प्रगट होवातैं फेर फेर हुवो जो उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट श्रोत्रेन्द्रियावरण आदिको क्षयोपशमरूप परिणाम पर्यों तातैं अध्रुव शब्दनें ग्रहण करे है कि कहूं वहुतनें कहूं अलपनें कहूं वहुविधनें कहूं एक विधने कहूं शीघ्रनें कहूं विलंवितनें कहूं अनिःसृतनें कहूं नि सृतनें कहूं उक्तनें कहूं अनुक्तनें ग्रहण करे है सो करणेंद्रिय निमित्तक अध्रुवको अवग्रह है। प्रश्न, इहां अध्रुव अवग्रह दश भेद रूप कह्यो सो ही दसों भेद पृथक् पृथक् पूर्वे कहे हैं तातैं द्वादशमा भेद भिन्न रूप नहीं वनि सकै हैं ? उत्तर, वहां तो वहु आदिका हेतुरूप परिणामनिकी विशुद्धता उत्कृष्ट अनुत्कृष्टरूप जहां जैसा है तैसा ही अवस्थित है अर इहां वारम्वार उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट रूप हेतुके होनेतैं एक ही विपयमें द्वादशभेद रूप अवग्रह होय है तातैं द्वादशमा भेद भिन्न रूप वने है। प्रश्न, बहुमें अर वहुविधिमें कहा विशेष है क्योंकि दोउनिमें ही तत आदिका शब्दको ग्रहण अविशेष रूप है यातैं ? उत्तर, कहिये है कि तुमनें कह्यो सो नहीं है क्योंकि दोऊनिमें विशेषको दर्शन है यातैं सो ऐसैं है कि कोउ तो अति वाचालतादि रहित हुवो संतो नहीं विशेषणरूप सामान्य अर्थ करि वहुत शास्त्रनिनें कहे है अर वहुत विशेषण रूप अर्थ करि नहीं कहे है अर कोऊ वे ही वहुत शास्त्र जे हैं तिनके विषैं वहुत अर्थनि करि परस्पर अतिशय युक्त वहत विकलपन करि व्याख्यान करै है तैसैं ही तत् आदि शब्दको ग्रहण अविशेष रूप होतां सतां भी जो भिन्न भिन्न तत् आदिका शब्द एक, दोय, तीन, च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुण कार करि परिणति रूप भया जे है तिनको ग्रहण जो है सो तो वहु विधि ग्रहण है अर जो तत् आदिका शब्दनिको सामान्य ग्रहण है सो वहु ग्रहण है। प्रश्न, उक्तमें अर निःसृतमें कहा विशेष है ? सकल शब्दनिका निकसवातैं निःसृत है अर उक्त भी ऐसो ही है। उत्तर कहिये हैं कि अन्यका उपदेश पूर्वक शब्दको ग्रहण जो है सो तो उक्त है कि यो जोको शब्द है ऐसे कह्याको ग्रहण जो है सो तो उक्त है अर अन्यका विना कह्या ही ग्रहण करै कि यो गोको शब्द है सो निः-

सृत है ऐसें तो श्रोत्र इंद्रियकैं आश्रित बहु आदि द्वादश विषयका अवग्रहको स्वरूप उदाहरण सहित कह्यो अवैं चक्षु इंद्रिय करि अवग्रह होय है सो कहिये है कि चक्षु करि विशुद्ध चक्षु-इंद्रियावरणका क्षयोपशम परिणाम रूप कारण पणातैं शुक्ल, कृष्ण, रक्त, नील, पीत, रूप, पर्याय स्वरूप जो बहुतनें ग्रहण करे है सो चक्षु इंद्रिय जनित बहुको अवग्रह है अर पूर्वें श्रोत्र इंद्रिय-कह्यो है तैसें ही चक्षु करि अल्पनें ग्रहण करे है सो चक्षु इंद्रिय जनित अल्पको अवग्रह है। बहुरि उत्कृष्ट विशुद्ध जो चक्षु इंद्रिय आदि आवरणको क्षयोपशम रूप परिणाम ता कारण-पणातैं एक एक प्रति एक दोय तीन च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुणं परिणम्यूं जो शुक्ल आदि पांच प्रकार रूप गुण ताका अवग्राहक पणांकी सामर्थ्यतैं बहुविध रूपनें अवग्रह रूप करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित बहुविधको अवग्रह है अर पूर्ववत् एक विधनें अवग्रह रूप करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित एक विधको अवग्रह है अर क्षिप्रको तथा चिरको भी कह्यो सो ही क्रम है। बहुरि पंचवर्णके जे वस्त्र तथा कंवल तथा चित्र पट आदि जे हैं तिनका एक वार एक देश विषय जे पंच वर्ण तिनका ग्रहणतैं समस्त पंच वर्ण अदृष्ट तथा अनिसृत जे हैं तिनके विषें भी तत् वर्णका प्रगट करवाकी सामर्थ्यतैं अनिसृतनें ग्रहण करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित अनिसृतको अवग्रह है अथवा देशांतरमें तिष्ठतो पंचवर्ण रूप परिणम्यूं एक वस्त्र आदि जो है ताका कथनतैं समस्त देशनिमें व्यापी पणां करि नहीं कह्यो ताको भी एकदेश संबंधी कथन करि ही वाकै समस्त पंचवर्णका ग्रहणतैं अनिसृत है सो चक्षुरिंद्रिय जनित अनिःसृतको अवग्रह है अर प्रतीतिमें आवे सो निःसृत है अर्थात् समस्त प्रगट पणानें ग्रहण करे सो चक्षुरिन्द्रिय जनित निःसृतको अवग्रह है। बहुरि सुविशुद्धि रूप चक्षु इन्द्रिय आदिका क्षायोपशमनें होत संतें आत्मा शुक्ल कृष्ण आदि वरणको जो मिलाप ताका दर्शनतैं अन्य करि अकथित भी वर्णनें अभिप्राय करि ही जाणै है अर कहै है कि तू यो वर्ण इन वर्णद्वयका मिलापतैं करैगो ऐसें ग्रहण करवात विना कह्या रूपनें

ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय जनित अनुक्तको अवग्रह है अथवा देशांतरमें तिष्ठतां पंच वर्णरूप एक द्रव्यका कथनकैं विषैं ताल्वादि करणका मिलापतैं प्रथम ही एक बार भी नहीं कह्या द्रव्यनें कहै है कि तू या प्रकार हमारा वस्तुनें पंचवर्णमेंसूं कोऊ एक वर्ण रूप करेगो ऐसैं विना कह्या रूपनें ग्रहण करै है सो भी चक्षुरिंद्रिय जनित अनुक्तको अवग्रह है अर पराया अभिप्रायकी अपेक्षा रहित अपना चक्षुरिंद्रियरूप परिणामकी सामर्थ्यतैं ही कह्यो जो रूप तानें ग्रहण करै है सो चक्षुरिंद्रिय जनित उक्तको अवग्रह है। बहुरि संक्लेशरूप परिणामको त्यागी जो है ताके यथा योग चक्षुरिंद्रियावरणका क्षयोपशम रूप परिणाम स्वरूप कारणका अवस्थित पणातैं जैसो प्रथम समयमें रूप ग्रहण करै है तैसो ही अवस्थितरूप जो है तानें ग्रहण करै है नहीं न्यूननें ग्रहण करै है नहीं अधिकनें ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय जनित ध्रुवको अवग्रह है अर वारंवार संक्लेशरूप तथा विशुद्धरूप परिणामकी हैं अपेक्षा जाकै ऐसा आत्माकै यथायोग्य परिणामकरि ग्रहण कीया चक्षुरिन्द्रियकी निकटतानें होतां संतां भी चक्षुरिंद्रियावरणका किंचित् किंचित् प्रगट होवातैं वारंवार उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट चक्षुरिन्द्रियावरणका क्षयोपशम रूप परिणामका कारणपणातैं अध्रुव रूपनें ग्रहण करै है सो कहूं तो बहुनें, कहूं अल्पनें, कहूं बहुविधिनें, कहूं एक विधनें, कहूं शीघ्रने, कहूं विलंवितने, कहूं अनिःसृतनें, कहूं निःसृतने, कहूं अनुक्तनें, कहूं उक्तनें, ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय निमित्तके अध्रुवको अवग्रह है ऐसैं ही घ्राण आदि इन्द्रिय निमित्तक अवग्रह जे हैं तिनके विषैं जोड़नें योग्य है तथा ईहा अवाय धारणा भी बहु आदिकनि करि तथा इनके प्रतिपक्षीनि करि जोड़नें योग्य है, इहां कोऊ कहै कि श्रोत्र, घ्राण, स्पर्शन, रसन स्वरूप इन्द्रियनिको चतुष्क जो है ताका प्राप्यकारीपणातैं अनिःसृत अनुक्त शब्द आदिका अवग्रह ईहा अवाय धारणा होना युक्त नहीं है याको उत्तर कहिये है कि अनिःसृत अनुक्तके भी प्राप्त पणौं है यातैं युक्त है। प्रश्न, कैसैं उत्तर, पिपीलिकादिकके समान है - सो ऐसैं है कि जैसैं पिपी-

लिकादिकनिकै घ्राण रसन इन्द्रियनिका स्थानमें अप्राप्त गुरु आदि द्रव्यनें होतां संता भी गंधको तथा रसको ज्ञान होय है सो जितना अस्मदादिकनिकै अप्रत्यक्ष, सूक्ष्म, गुरु आदिका अवयव है तिन करि पिपीलिका आदिका घ्राण रसन इंद्रिय जे हैं तिनके परस्पर अनपेक्ष वृत्ति है तातैं दोष नहीं है अर्थात् गुड़ादिकनिका सूक्ष्म अवयवनिकै अर पिपीलिकादिकनिका घ्राण रसन इन्द्रियनिकै अर पर संयोगरूप होनेकी वृत्ति ऐसी है जामें अन्य किसीकी अपेक्षा नहीं है अर अपन सारसेनिके अप्रत्यक्ष है तैसैं ही अनिसृत अनुक्तका अवग्रहादिककैं विषैं भी शब्दादिकनिका सूक्ष्म अवयवनिकै प्राप्त पणौं है ॥ १७ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अस्मदादीनां तदभाव इति चेन्न श्रुतापेक्षत्वात् ॥ १८ ॥ अर्थ—प्रश्न, अस्मदादिकनिकै अनिसृतको अर अनुक्तका सूक्ष्म अवयव स्पर्शको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि श्रुतापेक्ष पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, अस्मदादिकनिकै तो अनिसृत अनुक्तका सूक्ष्म अवयव स्पर्शको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि जैसैं भूमिग्रहके विषैं भले प्रकार वृद्धिनैं प्राप्त भयो अर वहांतैं बारै निकस्यो ऐसो पुरुष जो है ताकै चक्षु आदि करि अवभासित घट आदि द्रव्य जे हैं तिनके विषैं यो घट है यो रूप है इत्यादि जो विशेष परिज्ञान होय है सो श्रुत ज्ञानकी अपेक्षा सहित है क्योंकि वा ज्ञानकै परका उपदेशकी अपेक्षा सहित पणौं है यातैं तैसैं ही अस्मदादिकनिकैं निश्चय करि अनिसृत अनुक्त भी ज्ञान विकल्प जो शब्दादिकनिको अवग्रहादिक स्वरूप ज्ञान सो श्रुतज्ञानकी अपेक्षा सहित है ॥ १८ ॥ किंच वार्त्तिक—लब्ध्यक्षरत्वात् ॥ १९ ॥ अर्थ—आत्माके लब्ध्यक्षर रूप श्रुतज्ञानपणौं है यातैं। टीकाअर्थ—श्रुतज्ञानका प्रभेदका प्ररूपणाके विषैं लब्ध्यक्षर श्रुतज्ञानको कथन षट् प्रकार भेद रूप कियो है सो ऐसैं है कि चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसन, स्पर्शन मनोरूप लब्ध्यक्षर है ऐसैं आर्ष उपदेश है यातैं चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसन, स्पर्शन, इन्द्रिय मनोरूप लब्ध्यक्षरकी निकटतातैं या सिद्धि है कि अनिःसृत अनुक्त शब्दादिकनिको अवग्रहादिक रूप ज्ञान होय है। भावार्थ--

है कि अर्थमें नहीं प्राप्त होय करि ही ग्रहण करे है तातै इन दोउनिके व्यंजनावग्रह नहीं होय है। प्रश्नोतर रूप वार्तिक—इच्छामात्र मिति चेन्न सामर्थ्यात् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, यो कहनों इच्छा मात्र है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि सामर्थ्य है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, अप्राप्त अर्थको ग्रहण करने वारो चक्षु है यो कहनों इच्छा मात्र है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, सामर्थ्यतैं है। प्रश्न, कैसें सामर्थ्य है? उत्तर रूप वार्तिक— आगमतो युक्तितश्च ॥३॥ अर्थ—उत्तर, आगमतैं अर युक्तितैं सामर्थ्य है। टीकार्थ---आगमतैं अर युक्तितैं नेत्रके अर अनिंद्रियके अप्राप्यकारी पणौं सिद्ध है तिनमें प्रथम तो आगम सुनों। गाथा—

पुट्ठं सुणोदि सद्दं अपुट्ठं पुणवि पस्सदे रूवं।
गंधं रसं च फासं पुट्ठं पुट्ठं वियाणादि ॥१॥

अर्थ—स्पर्श्या शब्दनें तो सुणैं है अर स्पर्श्या ही रूपनें देखे है अर स्पर्श्या अस्पर्श्या गन्धनें रसनें स्पशनें जाने है ॥१॥ टीकार्थ—और युक्ति तैं भी अप्राप्यकारी चक्षु है। इहां अनुमानको प्रयोग करिये है कि नेत्र अप्राप्यकारी है क्योंकि स्पर्श्याको अवग्रह नेत्रनिके नहीं होय है यातै, अर जो स्पर्श इन्द्रियकै समान प्राप्यकारी है तो स्पर्श्या अंजननें भी ग्रहण करै सो नहीं ग्रहण करै है यातैं मनके समान नेत्र अप्राप्यकारी जानवे योग्य है। इहां कोउ कहै है कि नेत्र प्राप्यकारो है क्योंकि आवृतानवग्रहात् कहिये आवरणित पदार्थको स्पर्श इंद्रियके समान अवग्रह नहीं होय है यातै। इहां जैनी कहै है कि काच भोडल स्फाटिक जे हैं तिनकरि आच्छादित पदार्थको अवग्रह होत संतै अव्यापक पणातैं तिहारो हेतु असिद्ध है ताको दृष्टांत ऐसो है कि वनस्पतीका चैतन्यके विषैं स्वप्नके समान है। भावार्थ—वनस्पती कूं अचेतन मानने वारे ऐसो हेतु देवै कि बुद्धिपूर्वक क्रियाका अभावतैं वनस्पती अचेतन है ताकूं कहिये है कि सूता हुआ पुरुषके भी चैतन्य तो देखिये है अर रूप हेतु अव्यापक पणातैं असिद्ध है, तैसैं ही इहां

आवरणितका नहीं ग्रहण करना रूप हेतु नेत्रके अप्राप्यकारीपणांमें दियो है सो असिद्ध है तथापि तिहारो हेतु संशय रूप है कि व्यभिचारी है क्योंकि तिहारे इहां साध्य नेत्रके प्राप्यकारीपणौ है तातैं विपक्ष जो अप्राप्यकारी अयस्कान्तोपल ताके विषैं भी आवृतानवग्रह हेतुको दर्शन है कि दृढ़तर आवरणितको अवग्रह नहीं देखिये है तातै व्यभिचारी है इहां वादी कहै है कि नेत्र भौतिक है कि तैजस आदि भूतनिकरि बनै है यातैं अग्निके समान प्राप्यकारी हो है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि याके भी अयस्कांतोपल करि भी प्रत्युतर पणौ है यातैं, क्योंकि अयस्कांतोपल लोहनै नहीं प्राप्त होय करि ही लोहनै आकर्षण करतो संतो भी दृढ़तर आवरणितनै नहीं आकर्षण करै है अर अति विप्रकृष्टनैं भी नही आकर्षण करे है, यातै यो अयस्कांतोपल हेतु संशयावरण है यातै। तथा प्रश्न. नेत्र बाह्य इन्द्रिय पणातैं प्राप्यकारी है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि द्रव्येंद्रिय है उपकारी जाको ऐसो जो भावेंद्रिय ताके पदार्थके जानने विषैं प्रधानपणौं है यातैं। प्रश्न, अप्राप्यकारी पणानैं होतां संता आवर्णित पदार्थका तथा दूरवर्ती पदार्थका ग्रहणको प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि याके भी अयस्कांतोपलकरि ही प्रत्युत्तरपणों है यातैं क्योंकि अयस्कांतोपल लोहमें नहीं प्राप्त होय करि ही लोहनैं आकर्षण करतो संतो भी दृढ़तर आवर्णितनैं नहीं आकर्षण करै है अर अति विप्रकृष्टनैं भी नहीं आकर्षण करै है। चक्षुरिंद्रियके अप्राप्यकारी पणानैं होतां संता संशयको अर विपर्ययको अभाव होय है? उत्तर, सो चक्षुरिंद्रियके प्राप्यकारी पणानैं होतां संतां भी अविशेष है कि जा युक्ति करि अप्राप्यकारी पणामें संशय विपर्ययको अभाव कहै है ता युक्ति करि प्राप्यकारी पणामे भी संशय विपर्ययको अभाव संभवै है तातैं विशेष नहीं है। इहां कोऊ कहै है कि नेत्र तैजस पणातैं किरणवान है तातै प्राप्यकारी अग्निके समान है या भी अयोग्य है क्योकि या वचनको हमारे अंगीकार नहीं है कि तैजस चक्षु है ऐसै हम निश्चय करि नहीं अङ्गीकार करैं है क्योकि तेजको लक्षण उष्ण-

पणौं है यातैं है या कारण करि चक्षुरिंद्रिका स्थान उष्ण होय सो चक्षुका देश प्रति स्पर्शन करि इंद्रिय प्रवर्त्ततो उष्ण स्पर्शको अवलंबन करन वारो नहीं देखिये है यातै ही नेत्र अतैजस है अर भासुर पणांकी भी अनुपलब्धि है यातै भी अतैजस है। प्रश्न, अदृष्टका वशतैं अनुष्ण पणौं तथा अभासुरपणौं है ? उत्तर, सो नहीं क्योंकि अक्रिय ऐसा अदृष्टके गुणपणौं है यातैं। गुण अदृष्ट अक्रिय है अर अक्रियके पदार्थका भाव स्वभावका निग्रह करनेको सामर्थ्य नहीं है। प्रश्न, रात्रिचर विलाव आदि जो है ताकै नेत्रनिकै किरण रूप भासुर पणांका दर्शनतैं नेत्र किरणवान है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अतैजस मणि आदि पार्थिव पुद्गल द्रव्य जे हैं तिनके भी भासुरपणां रूप परिणामकी उपपत्ति है यातैं और सूनूं कि नेत्र जो है सो गतिमानतैं विपरीत धर्मवान है यातै क्योंकि या लोकमें जो गति मान है सो निकट वर्त्तीनं तथा दूरवर्तीनिं एकै काल नहीं प्राप्त होय है अर नेत्र वैसा नहीं है क्योंकि नेत्र शाखानं अर चंद्रमानें एकै काल ग्रहण करै है कि जितना काल करि शाखानें प्राप्त होय है तितनां ही काल करि चंद्रमानें प्राप्त होय है यातैं गतिमान द्रव्यतै विधर्मपणौं स्पष्ट है तातैं गतिमान चक्षु नही है अर जो प्राप्यकारी चक्षु है तो अन्धकार युक्त रात्रिके विषै दूरवर्ती क्षेत्रमे अग्निनें प्रज्वलित होतां संता वाकै समीप प्राप्त भया द्रव्यका ग्रहण होय है अर अन्तरालमें प्राप्त भया द्रव्यको जानन काहेतैं नहीं होय है। इहां वादी कहै है कि अन्तरालमें प्रकाशका अभावतें जानन नही होय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि नेत्र तैजस पणांतै अग्नि आदिके समान अन्य प्रकाश कूं नहीं चाहे है अर नेत्र तैजस रूप होत संतै भी प्रकाशादिकूं चाहे है तो अग्निके भी सहायांतरकी अपेक्षाका प्रसंग आवेगा यातै अर और सुनूं कि जो चक्षु रश्मिवान पणातै ही प्राप्यकारी है तो सांतरको कि अन्य द्रव्य करि आच्छादित द्रव्यको अर अधिकको ग्रहण नही प्राप्त होय क्योंकि स्पर्शनादिक इन्द्रियनिका अन्तर रहित गंधादिक विषय होत संतै सांतरको ग्रहण नहीं

देखिये है अर अधिकको भी ग्रहण नहीं देखिये है या विषयमें श्लोक वार्तिकमें ऐसैं लिख है। श्लोक—

संतोपि रस्मयो नेत्रे मनसाधिष्टता यदि, विज्ञान हेतवोर्थेषु प्राप्तेष्वेवेति मन्यते ॥१॥
मनसोणुत्वतश्चक्षुर्मयूखेष्वनधिष्टितेः, भिन्नदेशेषु भूयस्त्वपरमाणुवदेकशः ॥२॥
महीयसो महीध्रस्य परिच्छित्तिर्न युज्यते, क्रमेणाधिष्टतौ तस्य तदंशेष्वेव संविदः ॥३॥
निरंशोवयवी शैलो महीयानपि रोचिषा नयनेन परिच्छेद्यो मनसाधिष्टितेन चेत् ॥४॥
नस्यान्मेचकविज्ञानं नानावयवगोचरं तद्देशिविषयं चास्य मनो हीनैर्दृगंशुभिः ॥५॥

अर्थ—नेत्रनिके विषैं विद्यमान भी किरण जे हैं ते जा समय मन करि व्याप्त होय है ता समय ही प्राप्त भया ही अर्थके विषैं विज्ञानके हेतु है ऐसैं माने है तिन प्रति कहिये है। मनके अणुपणों है यातैं भिन्न भिन्न प्रदेशवान नेत्रनिकी किरण जे हैं तिनमें मनका नहीं व्याप्त हो वातैं प्रचुर परमाणुमान महान पर्वत जो है ताकी परिच्छित्ति नहीं योग्य होय है अर वा मनकी अनुक्रम करि व्याप्त होत संतै वा अंशके विषैं ही ज्ञान होय है अर्थात् जा समय जा किरणमें मन व्यापै है वा समय वा ही किरण द्वारा ज्ञान होय है। इहां वादी कहै है कि निरंश कहिये अखंड रूप अर अवयवी कहिये बहु प्रदेशी माहान पर्वत जो है सो भी मनकरि व्याप्त किरणवान नेत्र करि जाननें योग्य है इहां जैनी कहै है कि ऐसें है तो नाना प्रकार अवयव गोचर मेचक जो है ताको ज्ञान नहीं होय। भावार्थ—मेचक भी अखंड अवयवी बहु प्रदेशी एक द्रव्य है अर वामें एके काल पंचवरणात्मक ज्ञान होय है सो नहीं होनों चाहिये क्योंकि दोउनिके समानता है यातै अर मन करि हीन नेत्रनिकी किरणनि करि नेत्रके अपने प्राप्त होनें योग्य देशको ज्ञान होनों चाहिये क्योंकि नेत्रनिके प्राप्यकारी पणौं तुमारे अङ्गीकार है यातै अर ऐसा मानिये कि बाह्य प्रधिष्ठानतैं इंद्रियकी प्रवृत्ति है यातैं इंद्रिय विषयके सांतर तथा अधिक

जो है ताको ग्रहण होय है। भावार्थ—ऐसो जिनको मत है सो भी अयुक्त है क्योंकि बाह्य अधिष्ठानतैं इंद्रियनिकी प्रवृत्ति नहीं है क्योंकि इंद्रियनिमें चिकित्सा आदि यथावत् ग्रहणको दर्शन है यातैं अर बाह्य अधिष्ठानतैं ही इंद्रियनकी वृत्ति मानिये तो तो अधिष्ठानका आच्छादन होत संतैं भी विषयका ग्रहणको प्रसंग होय अर मन भी बाह्य अधिष्ठान रूप नहीं है यातैं, अर मन करि आश्रित इन्द्रिय जो है सो ही अपना विषयके विषैं व्यापार करै है अर मनके बाह्य अधिष्ठान नहीं है यातैं मनको बहिर अधिष्ठान जो है ताका अभावतैं विषयका अग्रहणको प्रसंग आवै अर मनके अनुकूल इंद्रिय वृत्ति होत संते संभवको अभाव है यातैं सो ऐसैं है कि विप्रकीर्ण कहिये फैल्यो हुवो नेत्रनिका किरणनिको समूह जो है सो अणुरूप मन जो है तानें कैसैं अधिष्ठान करेगो। इहां कोऊ कहै है कि—श्रोत्र इंद्रिय अप्राप्यकारी है क्योंकि श्रोत्रके विप्रकृष्ट कहिये दूरवर्त्ती विषयको ग्रहण होय है यातैं, उत्तर, या भी अयुक्त है क्योंकि या वचनके असिद्ध पणौं है यातैं। इहां प्रथम तो यो साध्य है कि श्रोत्र जो है सो विप्रकृष्ट शब्दनें ग्रहण करै है कि घ्राणेंद्रियके समान अत्यंत मिला हुआ अपना विषय भावरूप परिणम्यां पुद्गल द्रव्यनें ग्रहण करै है तहां विप्रकृष्ट शब्दका ग्रहणनें होतां संतां अपना कर्णका मध्य छिद्रमें प्राप्त भया माछरका शब्दनें नहीं ग्रहण कियो चाहिये क्योंकि कोऊ एक इन्द्रिय दूरवर्ती तथा स्पर्श रूप निकटवर्त्ती दोऊ विषयको ग्रहण करनकरो नहीं देख्यो है यातैं। प्रश्न, शब्दकै आकाशका गुण पणातैं स्पर्शवान गुण पणांको अभाव है अर्थात् यातैं ही प्राप्यकारी पणों नहीं संभवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अमूर्त्तिक आत्माका गुणकै समान इंद्रियका विषयपणांको अदर्शन है यातैं तथा शब्दको स्पर्श भी अनुभवमें आवै है क्योंकि अग्नि यंत्रका शब्दतैं महान मंदिर आदिको खंडन होतो देखिये है यातै। शब्द स्पर्श गुणवान है अर स्पर्श गुणवान है यातैं आकाशको गुण नहीं है। प्रश्न, आप्तका अवग्रहनें होतां संतां श्रोत्र

इंद्रियके दिशा संबंधी देशका भेद करि सहित विषयका ग्रहणको अभाव होय? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि शब्द रूप परिणम्या अर फैलता पुद्गल जे हैं तिनका वेग रूप शक्ति विशेषके दिशा संबंधी भेद सहित विषयपणांकी उपपत्ति है यातैं अर्थात् जा दिशामें शब्द उत्पन्न भयो ता दिशातैं अनुक्रम करि सामान्य विशेष रूप ग्रहण करिये है यातैं दिशा विशिष्ट शब्दको ग्रहण होय है अथवा तिन शब्दनिके सूक्ष्मपणातैं अप्रतिघात है यातैं सर्व तरफतैं प्रवेश करवातैं प्राप्तको अवग्रह होय है ऐसैं शंका समाधान होनेतैं यो सिद्ध भयो कि चक्षु अर मन जे हैं तिननैं वर्जि करि अवशेष इंद्रियनिकैं व्यंजन जो अप्रकृष्ट विषय ताकौ अवग्रह होय है अर सर्व इन्द्रियनिकै अर्थको अवग्रह होय है ॥ ३ ॥ और या विषयमें श्लोक वार्तिकके विषैं ऐसा लिखिये है। श्लोक—

दूरे शब्दं शृणोमीति व्यवहारस्य दर्शनात्। श्रोत्रमप्राप्यकारीति केचिदाहुस्तदप्यसत् ॥१॥
दूरे जिघाम्यहं गंधमितिव्यवहृतीक्षणात्। घ्राणस्याप्राप्यकारित्वप्रशक्तेरिष्टहानित ॥२॥
गंधाधिष्ठानभूतस्य द्रव्यप्राप्तस्य कस्यचित्। दूरत्वेन तथा वृत्तौ व्यवहारोत्र चेन्नृणाम् ॥३॥
समं शब्देन समाधानमिति यत् किंचने दृशं। चोद्यमीमांसकादीनामप्रातीति कुवादिनाम् ॥४॥
कुड्यादिव्यवधानेपि शब्दस्य श्रवणाद्यदि। श्रोत्रमप्राप्यकारीष्टं तथा घ्राणं तथेष्यताम् ॥५॥
द्रव्यांतरितगंधस्य घ्रात सूक्ष्मस्य तस्य चेत्। घ्राण प्राप्तस्य संवित्ति श्रोत्रप्राप्तस्य नोध्वने ॥६॥
यथा गंधाणवकेचिच्छक्ताकुड्यादिभेदने। सूक्ष्मास्तथैव नः सिद्धः प्रमाणाध्वनिपुद्गला ॥७॥

अर्थ—दूरमें तिष्टता शब्दनें मैं सुणूं हूं ऐसा व्यवहारका दर्शन है यातैं श्रोत्र अप्राप्यकारी है ऐसैं कितनेक कहै है सो भी असत् है क्योंकि दूरमें तिष्टता गंधने मैं सूंघूं हूं ऐसा व्यवहारका दर्शनतैं घ्राणेंद्रियके अप्राप्यकारी पणांका प्रसंगतैं इष्ट जो निहारे घ्राणेंद्रियके प्राप्यकारी पणौं ताकी हानि होय है यातैं। प्रश्न, गंधको आधार भूत कोऊ प्राप्तरूप जो

द्रव्य ताका दूर पणां करि तैसे वृत्ति होतसंते कि दूरमे तिष्टता द्रव्यनें हम सूंघे है ऐसा इहां कोई मनुष्यनिके व्यवहार देखिये है याते घ्राणेंद्रियके प्राप्तकारी पणों ही सिद्ध होय है ? उत्तर, ऐसैं है तो शब्द करि समाधान है यातै शब्दकी अप्राप्ति है ऐसो कुवादी मीमांसकनिको कहनों कछू भी नहीं है अर जो भींति आदिका अंतरनें होतासंता भी शब्दका श्रवणतै श्रोत्रेंद्रिय अप्राप्यकारी पणांकी इष्ट है तो तैसैं ही घ्राणेंद्रिय भी तैसैं ही इष्ट करो अर अन्य द्रव्यकरि आच्छादित गंध जो है ताका सूक्ष्म अंश कूं सूंघे है यातैं घ्राणेंद्रियके प्राप्त भया गंधको ज्ञान होय है अर श्रोत्रेंद्रिय कूं प्राप्त भया शब्दको ज्ञान नहीं होय है ऐसे है तो जैसे कितने सूक्ष्म गंधके परमाणु भींति आदिके भेदनेमें समर्थ है तैसै ही हमारे अनुमान प्रमाणतें शब्दके सूक्ष्म पुद्गल भी भींति आदिके भेदनेमें समर्थ है सो अनुमानको प्रयोग ऐसैं है कि शब्द जो है सो पुद्गल परिणाम है क्योंकि शब्दके बाह्य इंद्रियको विषय पणौं है यातै गंधादिकके समान है इत्यादि प्रमाण करिसिद्ध शब्द परिणत पुद्गल है ऐसैं आगैं समर्थन करेंगे अर वे शब्द परिणत पुद्गल जे हैं ते गंध पुद्गल परिणतिके समान भींति आदिनें भेद करि इंद्रियने प्राप्त होनसंते जानने योग्य है ऐसै नहीं प्राप्तभया शब्दनिको इंद्रियनि करि ग्रहण नहीं होय है अर्थात् प्राप्त भयेनिको ही इंद्रियनि करि ग्रहण होय है। प्रश्न, श्रोत्र इंद्रिय गोचर है स्वभाव जिनको ऐसैं मूर्त्तिको स्कन्ध जे हैं ते मूर्त्तिमान भींति आदि करि कैसै नहीं हते जाय हैं ? उत्तर, ऐसै हैं तो सुनूं कि तिहारे शब्दके व्यंजक वायु जनित ध्वनि जे हैं ते कैसैं नहीं हने जाय हैं ऐसैं समान कहने योग्य है। प्रश्न, ध्वनिका भींति आदिकरि प्रतिघातनें होतां सतां जहां शब्दका प्रगटताका अयोगतै अर अप्रगट शब्दका श्रवणका असंभवतै वाका भींति आदि करि अप्रतिघात सिद्ध है क्योंकि भींति करि अन्तरित शब्दका श्रवणकी अन्यथा अनुपत्ति है यातैं। उत्तर, ऐसै कहो हो तो सुनूं कि तातैं ही कहिये शब्द श्रवणतैं ही शब्दादिकनिका पुद्गल जे हैं जिनको अप्रतिघात है क्योंकि

देख्यो हुवो परिहार है यातैं जा परिहारतै अंतरित शब्दका श्रवण सिद्ध होय है ताहीतै गंधात्म पुद्गलनिको अप्रति घात देखिये है तैसैं ही शब्दनिको अप्रतिघात विरोधनें नहीं प्राप्त होय है। बहुरि जो असूर्त्तिक सर्वगत शब्दकी कल्पनातैं वाके व्यंजक कहिये प्रगट करन वारो वायु संबंधी ध्वनि जे हैं तिनका ही अप्रतिघाततैं शब्दनिका श्रवण है ऐसो तिहारो अभिधान है तो सुनूं कि तैसैं ही अमूर्त्तिक गंन्धका कस्तूरिकादि द्रव्य विशेषका संयोग जनित अवयव जे हैं ते व्यंजक है अर ते ही मूर्त्त द्रव्यांतर करि अप्रतिहत होत संतैं घ्राण हेतु है कि घ्राण इन्द्रियका विषय है ऐसी कल्पना करी संती कैसैं दूर करनेमें आवेगी। प्रश्न, ऐसैं मानेतैं गंधके पृथिवी गुणपणांको विरोध है कि प्रथिवी गुण नहीं वणि सके है? उत्तर, ऐसैं हैं तो शब्दके भी पुद्गल पणांको विरोध होय है। बहुरि तैसैं ही अन्य पुरुपनि करि शब्दनें द्रव्यांतरपणांकरि अङ्गीकार करवातै दोष नहीं है। उत्तर, ऐसैं है तो तैसैं ही गंधके भी द्रव्यांतर पणौं अङ्गीकार करो क्योंकि प्रमाण-का वल करि आया अर्थनें निवारण करनेकूं असमर्थ पणौं है ॥ ३ ॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—मनसोऽनिंद्रियव्यपदेशाभाव स्वविषयग्रहणे करणांतरानपेक्षत्वाच्चक्षुर्वत् ॥ ४ ॥ अर्थ—मनके अनिं-द्रिय नामको अभाव है क्योंकि अपना विपयका ग्रहणके विषै अन्य करणकी अपेक्षा रहित पणातै चक्षुके समान है। टीकाथ—जैसैं चक्षु रूपका ग्रहणके विषै करणांतरनै नहीं अपेक्षा करै है यातै इन्द्रिय नामनें प्राप्त होय है तैसैं ही मन भी गुण दोषका विचार आदि अपना व्यापारके विषैं करणांतरमें नही अपेक्षा करै है यातै इंद्रिय पणानें प्राप्त होय है अर अनिंद्रिपणानें नहीं प्राप्त होय है ॥४॥ उत्तर रूप-वातिक—न वा प्रत्यक्षत्वात् ॥५॥ अर्थ—उत्तर, अथवा अप्रत्यक्ष पणौं है यातै। टीकार्थ—यो दोष नहीं है। प्रश्न-कहा, कारण? उत्तर, अप्रत्यक्ष पणातै सो ऐसैं है कि चक्षु आदि इंद्रिय परस्पर जीवनिके इंद्रियणातैं प्रत्यक्ष है तैसै मन नहीं है काहेतैं? उत्तर, याकै सूक्ष्म द्रव्य रूप परिणाम है यातैं तातैं अनिंद्रिय है ऐसैं कहिये है ॥५॥ इहां वादी कहै है कि मन है

ऐसैं अप्रत्यक्षनें कैसैं जानिये है ? उत्तररूप वार्तिक—अनुमानात्तस्याधिगमः ॥६॥ अर्थ—उत्तर, अनुमानतैं वा मनको जानन है। टीकार्थ—उत्तर, लोकके विषैं अप्रत्यक्ष अर्थ जे हैं तिनको भी अनुमानतैं जाननों देखिये है कि जैसैं सूर्यकी गति तथा वनस्पतीकी वृद्धि ह्रास अनुमानतैं जानिये हैं तैंसैं ही अनुमानतैं मनको भी अस्तित्व ग्रहण करिये है सो हेतु कहा है ? उत्तर रूप वार्तिक—युगपज्ज्ञानक्रियानुत्पत्तिर्मनसो हेतुः ॥७॥ अर्थ—उत्तर, एकै काल ज्ञान रूप क्रियाकी अनुपपत्ति है सो मनका अस्तित्वको हेतु है। टीकार्थ, उत्तर, शक्तिमान चक्षू आदि करणनिनें विद्यमान होत संतैं अर रूपादिक वाह्य विषयनें भी विद्यमान होत संतैं अर अनेक प्रयोजननैं भी होत संतैं जातैं ज्ञाननिकी अर क्रियानिकी युगपत् अनुत्पत्ति है तातैं मन है ऐसैं अनुमानतैं मनको अस्तित्व ग्रहण करिये है अर्थात् पांचू इंद्रियनिनैं प्रवर्त्तन करावनें वारो कोऊ है ऐसा अनुमानतैं मनको अस्तित्व ग्रहण करिये है ॥७॥ तथा हेतुरूप वार्तिक—अनुस्मरणदर्शनाच्च ॥८॥ अर्थ—अथवा अनुस्मरणका दर्शनतैं मनको अस्तित्व है। टीकार्थ—अथवा जातैं एक वार देख्यो तथा सुण्यूं जो है तानैं अनुस्मरण करिये हैं यातैं अनुस्मरणका दर्शनतैं वा मनके अस्तित्व निश्चय करवो योग्य है। इहां वादी कहै है कि एक आत्माके कारण भेद काहेतैं है ॥ ८ ॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—ज्ञस्वभावस्यापि करणभेदोऽनेककलाकुशलदेवदत्तवत् ॥ ९ ॥ अर्थ—उत्तर, ज्ञान स्वभाव आत्माके भी करण भेद है सो अनेक क्रियामें कुशल देवदत्तके समान है। टीकार्थ—उत्तर, जैसैं अनेक ज्ञान क्रिया शक्ति युक्त देवदत्तके भी करण भेद देखिये है अर चित्र कर्ममें वर्त्तमानके वर्त्तिका कहिये सलाई अर लेखनी कहिये कलम कुर्चिका कहिये कूंची आदि उपकरणनिकी अपेक्षा देखिये है तथा काष्टका कर्ममें वर्त्तमान जो है ताकै वासी कहिये वसोलो अर घटमुख कहिये हतोड़ो अर वृक्षादन कहिये करोत आदि उपकरणकी अपेक्षा देखिये है। तैंसैं ही क्षयोपशमका भेदतैं ज्ञानक्रिया परिणाम रूप शक्ति युक्त आत्माकै भी चक्षु आदि अनेक करणकी अपेक्षा नहीं विरोधनें

प्राप्त होय है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—स नामकर्मसामर्थ्यात् ॥१०॥ अर्थ—सो करण भेद नाम कर्मकी सामर्थ्यतैं है। टीकार्थ—सो यो करण भेद नाम कर्मकी सामर्थ्यतैं जानवो योग्य है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, इहां जो यो शरीर नाम कर्मका उदयादिक करि ग्रहण किया कि यवकी नालीका संस्थान रूप श्रोत्रेंद्रिय है सो ही शब्दकी उपलब्धिमें समर्थ है और नहीं है तथा जो यो घ्राणेंद्रिय अति मुक्तकको चंद्रक जो है ताका संस्थानके समान है संस्थान जाको ऐसो यो ही गंधका जाननेंमें समर्थ है और नहीं है तथा जो यो जिह्वा इंद्रिय चुरप्र जो करणी जातिको खुरपो ताकी आकृतिको धारक है सो ही रसका जाननमें समर्थ हैं और नहीं है तथा जो यो स्पर्शनेंद्रिय अनेक आकृतिको धारक है सो ही स्पर्शको ग्रहण करनवारो है और नहीं है तथा जो यो चक्षु-इंद्रिय मसूरके आकार कृष्ण तारा रूप अधिष्ठानवान है सो ही रूपका ग्रहणमें समर्थ है और नहीं है ऐसैं आभिनिबोधिक ज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि जाननें योग्य है सो ऐसैं है कि द्रव्यतैं मतिज्ञानी सर्व द्रव्यनिनें अर असर्व पर्यायनिनें उपदेश करि जानें है अर क्षेत्रतैं उपदेश करि सर्व क्षेत्रनें जानैं है अथवा क्षेत्र नाम विषयको है तातैं चक्षुको क्षेत्र सैंतालीस हजार दोयसै तिरेसठ अर एक योजनका साठि भागमें सूं इकतीस भाग प्रमाण है अर श्रोत्रको विषय क्षेत्र द्वादश योजन है अर घ्राण रसन स्पर्शन जे हैं तिनको विषय नव योजन क्षेत्र है अर कालतैं उपदेश करि सर्व कालनें जाने है अर भावतैं उपदेश करि जीवादिकनिका औदयिकादिक भावनिनें जानैं है। वहुरि मतिज्ञान सामान्यतैं तो एक है अर इन्द्रिय अनिंन्द्रिय भेदतैं दोय प्रकार है अर अवग्रहादि भेदतैं च्यार प्रकार है सो च्यार प्रकारको मतिज्ञान तिन इन्द्रियनि करि तथा अनिंद्रिय करि गुणित चतुर्विंशति प्रकार है अर वै ही व्यंजनावग्रह जे हैं तिन करि अधिक अष्टाविशति प्रकार है अर वै ही मूल भंग अवग्रहादिक जे हैं तिन करि अधिक तथा द्रव्य क्षेत्र काल भाव सहित बत्तीस प्रकार है। वहुरि वे तीनूं ही विकल्प अल्प बहु आदि प्रति

पक्षीनिकी अपेक्षा रहित बहु आदि षट् भेदनि करि गुणित एक सो चवालीस तथा एक सौ अड़सठि तथा एक सौ बाणवै प्रकार है। बहुरि वै ही चौबीस तथा अट्ठाईस तथा बत्तीस भेद बहु आदि द्वादश भेदनि करि गुणित दोयसै अठ्यासी तथा तीनसै छत्तीस तथा तीनसै चौरासी प्रकार है। प्रश्न, व्यंजनावग्रहके विषैं बहु आदि विकल्पनिको अभाव है। प्रश्न, काहेतैं। उत्तर, अप्रकट पणातैं। इहां जैनी कहै है कि व्यंजनका अवग्रहकै समान व्यंजनावग्रहके विषैं बहु आदिकी सिद्धि है सो ऐसैं है कि जैसैं अव्यक्तका ग्रहणरूप अवग्रह है तैसैं ही बहु आदि विकल्प भी अप्रकट रूप करि ही जानवे योग्य है। प्रश्न, अनिःसृतके विषैं व्यंजनावग्रह कैसैं है क्योंकि अनिःसृतके विषैं भी जे जितनेक पुद्गल सूक्ष्म निःसृत है ते सूक्ष्म पुद्गल साधारण पुरुषनि करि नहीं ग्रहण करिये है? उत्तर, जितनेक पुद्गल निःसृत है तिनके इन्द्रियनिके स्थान-को अवगाहन है क्योंकि नेत्रके अर मनके तो व्यंजनावग्रह है ही नहीं अर अवशेष च्यार इन्द्रिय जे हैं तिनकै प्राप्यकारी पणौं ही है तातैं सूक्ष्म निःसृत पुद्गलनिके इन्द्रिय स्थानको अवगाहन होय ही है यातैं अनिःसृतके विषैं व्यंजनावग्रह होय ही है ॥ १० ॥ १६ ॥ अबैं बीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि परोक्ष ज्ञानके द्विविध पणानैं होतां संता कह्या है लक्षण अर विकल्प जाकै ऐसा मतिज्ञानतैं विधर्मी जो उपदेशरूप कियो दूसरो ज्ञान सो कहा निमित्तक है, अर कितनेक प्रकारको है। ऐसो प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥

अर्थ—श्रुतज्ञान मतिज्ञान पूर्वक होय है अर दोय भेद रूप तथा अनेक भेद रूप तथा द्वादश भेद रूप है। वार्त्तिक—श्रुतशब्दोजहत्स्वार्थवृत्ति रूढिवशात् कुशल शब्दवत् ॥ १ ॥ अर्थ—श्रुत शब्द अजहत् स्वार्थ वृत्ति है सो रूढिका वशतैं कुशल शब्दके

समान है। अर्थ—श्रुत शब्द रूढ़िका वशतैं नहीं छोड़ी है स्वार्थ वृत्ति जानैं ऐसो हुवो संतो कुशल शब्दकै समान है कि जैसैं कुशल शब्द कुशल जोडाव ताकी लवन कहिये काटने रूप क्रियानैं प्रतीति करि उत्पन्न भयो है तो हू रूढिका वशतैं कोऊ ज्ञान विशेषके विषैं प्रवर्तै है। ॥ १ ॥ वार्तिक—कार्यप्रतिपालनात् पूरणाद्वापूर्वं कारणम् ॥ २ ॥ अर्थ—कार्यका प्रतिपालनतैं तथा पूरणतैं पूर्वकारण है। टीकार्थ—कार्यनैं पालै है अथवा पूरै है सो पूर्व कहिये अर पूर्व कारण लिंग निमित्त ये च्यार शब्द अनर्थान्तर रूप है अर मतिज्ञान व्याख्यान कियो सो है पूर्व जाकै सो मति पूर्व है कि मतिज्ञान है कारण जानैं ऐसो श्रुतज्ञान है ॥ २ ॥ वार्तिक—मतिपूर्वकत्वे श्रुतस्य तदात्मकत्व प्रसंगो घटवदतदात्मकत्वे वा तत्पूर्वकत्वाभावः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, मति पूर्वक पणानैं होतां संता श्रुतकै मतिज्ञानात्मक पणांको प्रसंग घटके समान है अर मतिज्ञानात्मक पणानैं नहीं होतां संता मतिपूर्वक पणांको अभाव होय है। टीकार्थ—प्रश्न, इहां वादी कहै है कि मतिज्ञान पूर्वक श्रुतज्ञान है सो भी मतिज्ञानात्मक पणातैं प्राप्त होय है क्योंकि निश्चय करि कारणका गुणके अनुविधायी कार्य देखिये हैं कि जैसैं मृत्तिका है निमित्त जानैं ऐसो घट मृत्तिका स्वरूप है अर जो मृत्तिका स्वरूपपणौं नहीं इष्ट करिये है तो वा घटके मृत्तिका पूर्वक पणौं नष्ट होय है ॥ ३ ॥ उत्तररूप वार्तिक—न वा निमित्तमात्रत्वाद्दंडादिवत् ॥ ४ ॥ अर्थ-सो नहीं है क्योंकि दंडादिकके समान निमित्त मात्रपणौं है यातैं। टीकार्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है प्रश्न,कहा-कारण? उत्तर, निमित्तमात्रपणातैं दंडादिकके समान है सो ऐसैं है कि मृत्तिकानैं अपना अंतःकरण में कि अपना निजस्वरूपमें घटहोने रूप परिणाम कै सन्मुख होतां संता दंड चक्र तथा कुलाल पुरुषका प्रयत्न आदि निमित्त मात्र है जातै दंडादिक निमित्तनिकूं विद्यमान होतसतै भी शर्करादिकका समूह रूप मृत्तिकाको पिंड आप अपना स्वरूपमें घट होने रूपपरिणामका निरुत्सुक-पणातैं घट नहीं होय है यातैं मृत्तिकाको पिंड ही बाह्य दंडादिक निमित्तको अपेक्षा हुवो संतो आभ्यं-

तर परिणामकी शक्तिकी निकटतातैं घट होय हैं दंडदिक घट नहीं होय है यातैं दंडादिकनिकै निमित्त मात्रपणौं है तैसैं ही पर्यायीके अर पर्यायके कथंचित् अन्य पणातै आत्माकै अपना निज-स्वरूपमें श्रुत होने रूप परिणामकै सन्मुखपणौं होत संतै मतिज्ञान निमित्त मात्र है जातैं श्रोत्रेंद्रिय-का बलाधाननैं होतां संता अर बाह्य आचार्य कृत पदार्थका उपदेशकी निकटतानैं होतां संतां भी श्रुतज्ञानावरणका उदयके वशीकृत सम्यग्दृष्टी जो है ताकै अपना स्वरूपमें श्रुत होनेका निरुत्सुक पणातैं आत्माकै श्रुतरूप परिणमन नहीं होय है तातैं बाह्य मतिज्ञानादि निमित्तकी अपेक्षा सहित हुवो संतो आत्मा ही आभ्यंतर श्रुत ज्ञानावरणका क्षयोपशम आदि करि ग्रहण कीयो जो श्रुत होने रूप परिणाम ताकै सन्मुखपणातैं श्रुती होय है अर मतिज्ञानके श्रुतरूप होनों नहीं है क्योंकि मति-ज्ञानके निमित्त मात्रपणौं है यातैं॥ ४ ॥ तथा वार्तिक—अनेकांताच्च ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा अनेकांत है यातैं भी श्रुतज्ञानके मतिज्ञानात्मक पणौं ही नहीं है। टीकार्थ—यो एकांत नहीं है कि कारण-सदृशही कार्यहोय है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,तहां भी सप्तभंगी संभवै है यातैं। प्रश्न,कैसैं ? उत्तर,घटके समान सो ऐसै है कि जैसै यह मृत्तिकाका पिंडरूप कारण करि कथंचित् सदृश है कथंचित् सदृश नहीं है इत्यादि जानने क्योंकि मृत्तिका द्रव्य अजीव अनुपयोग आदिका उपदेशतैं सदृश है अर पिंड घट संस्थान आदि पर्यायिका उपदेशतैं सदृश नहीं है अर और भंग पूर्ववत् जानने योग्य है। बहुरि जाकै एकांत करि कारणके अनुरूप कार्य है ताकै घट पिंड शिविक आदि पर्याय एक रूप करि प्राप्त होय है सो एक रूप नहीं है अर और सुनूं कि कारणके समान ही कार्य अंगीकार करिये तो जल धारण आदि व्यापार नहीं करिये क्योंकि जल धारण रूप व्यापारको मृत्तिकाका पिंडके विषैं अदर्शन है यातैं। बहुरि और सुनूं कि मृत्तिकाका पिंडकै घटपणां करि परिणाम है तैसै ही एकांत सदृश पणां करि घटकै भी घटपणां करि परिणाम होय सो नहीं है। भावार्थ-मृत्तिकाका पिंडके तो परिणमन घट रूप है अर घटके घट रूप परिणमन नहीं है कपालादि रूप परिणाम

है तातैं एकांत करि कारण सदृश कार्य नहीं है यातैं एकांत करि कारण सदृशपणौं कार्य के नहीं है तैसैं ही श्रुत भी सामान्य उपदेशतैं कथंचित् कारण सदृश है क्योंकि मति भी ज्ञान है श्रुत भी ज्ञान है अर अव्यवहित कहिये निरंतर अर सन्मुख ऐसा विषयका ग्रहणरूप अर नाना प्रकार अर्थ जो है ताका प्ररूपणमें समर्थपणां आदि पर्यायका उपदेशतैं कथंचित् कारण सद्रश नहीं है अर्थात् अव्यवहितको तथा सन्मुखको ग्रहण तो मतिज्ञानके होय है अर नाना प्रकार अर्थका प्ररूपण रूप सामर्थ्य श्रुतज्ञानकै होय है यातैं कारण कार्य के सदृशपणौं नहीं है अर और भंग-पूर्ववत् जाननें योग्य है ॥ ५ ॥ वार्तिक—श्रोत्रमतिपूर्वस्यैव श्रुतत्वप्रसगस्तदर्थत्वादितिचेन्नोक्तत्वात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, श्रोत्र अर मतिपूर्वककै ही श्रुतपणांको प्रसंग आवै है क्योंकि श्रोत्रको विषय है यातैं। उत्तर,सो नहीं है क्योंकि याका उत्तरके पूर्व कथित पणौं प्राप्त होय है ? प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,श्रोत्र-का अर्थपणातैं क्योंकि सुणि करि अवधारणतैं श्रुत है ऐसैं कहिये है ता कारण करि चक्षु आदि मति-ज्ञान पूर्वककै श्रुतज्ञान पणौं नहीं प्राप्त होय है? उत्तर,सो नही है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, याको उत्तरकै पूर्वै कथित पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि यो श्रुतशब्द रूढिशब्द है क्योंकि रूढिशब्द जे है ते अपनी उत्पत्तिकी तथा क्रियाकी अपेक्षा रहित प्रवर्त्तै है यातैं सर्व इंद्रिय जनित मतिज्ञान पूर्वककै श्रुतपणांकी सिद्धि है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आदिमतोऽन्तवत्वाच्छ्रुतस्यानादि-निधनत्वानुपपत्तिरितिचेन्न द्रव्यादिसामान्यापेक्षयातत्सिद्धेः ॥ ७ ॥ अर्थ—आदिमानके अंतवान पणौं है यातैं श्रुतके अनादि निधन पणांकी अनुपपत्ति है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि द्रव्यादिसामान्यकी अपेक्षा करिके आदिमान पणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,मतिपूर्व या वचनतैं श्रुतके आदिमान पणौं अंगीकार कियो अर लोकके विषैं आदिमान जो है सो अंतवान देखिये है तातैं आदि अंतका संभवतैं अनादि निधन श्रुत है, ऐसैं वचन हत्यो जाय है तातैं पुरुष कृतपणातैं अप्रमाण है ? उत्तर,यो दोष नहीं है क्योंकि द्रव्यादि सामान्य की अपेक्षा करि

अनादि निधनताकी अर अप्रमाणताकी सिद्धि है सो ऐसैं है कि द्रव्य क्षेत्र काल भाव जे हैं तिनका विशेष कहनेकी नहीं इच्छा होत संतै श्रुत अनादि निधन है ऐसैं कहिये है क्योंकि कोऊ पुरुष करि कहूं कदाचित् कथंचित् उत्प्रेक्षा रूप नहीं कीयो है यातैं। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावकी ही विशेष अपेक्षाकरि आदि अंत संभवै है यातैं मति पूर्वक श्रुत है ऐसैं कहिये है कि जैसैं अंकुर वीज पूर्वक है सो संतानकी अपेक्षा करि अनादि निधन है। बहुरि पुरुषकृत पणौं अप्रमाणताको कारण नहीं है क्योंकि नहीं स्मरण कीयो है कर्त्ता जाको ऐसा चोरी आदिका उपदेशकै प्रमाणताको प्रसंग आवै है यातैं अर अनित्यकै प्रत्यक्षादिकतैं प्रमाणता होत संतै कहा विरोध है ॥ ७ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—सम्यक्त्वोत्पत्तौ युगपन्मतिश्रुतोत्पत्तेर्मतिपूर्वकत्वाभाव इति चेन्न सम्यक्त्वस्यतदपेक्षत्वात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, सम्यकत्वकी उत्पत्तिकै विषैं युगपत् मति श्रुतकी उत्पत्ति है यातैं मतिपूर्वक पणांको अभाव है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सम्यक्त्वके तदपेक्षपणौं है कि मति श्रुतकी अपेक्षावानपणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न—मति अज्ञानके प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिनैं होतां संतां युगपत् मति श्रुत ज्ञान परिणाम होय है यातैं मतिपूर्वक पणौं श्रुतकै नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न—कहा कारण? उत्तर, सम्यक् पणांके ताकी अपेक्षापणौं है यातैं सो ऐसैं है कि मति अज्ञानके अर श्रुत अज्ञानके सम्यक् पणौं तो सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिमैं एकै काल ही है परन्तु आत्म लाभ तो क्रमवान नहीं है यातैं मतिपूर्वक पणौं श्रुतकै पिता पुत्रकै समान योग्य है अर्थात् पिता अर पुत्र ये दोऊ शब्द सापेक्ष है तातैं प्रमाणता एकै काल ही है तथापि आत्मलाभ अनुक्रमतैं ही है ॥८॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—मतिपूर्वकत्वाविशेषाच्छ्रुताविशेष इति चेन्न कारणभेदात्तद्भेद सिद्धेः ॥९॥ अर्थ—मति पूर्वक पणांका अवशेषतैं श्रुतमें अविशेष प्राप्त होय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि कारणमें भेद है यातैं मति श्रुतमें भेदकी सिद्धि है। टीकार्थ—प्रश्न, सर्व प्राणीनिकै श्रुत अविशेष रूप प्राप्त होय है

प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, कारणका अविशेषतैं क्योंकि मतिपूर्वक पणौं कारण इष्ट है सो मतिज्ञान सर्वकै अविशेष रूप है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, कारणमैं भेद है यातैं मतिज्ञानकै तथा श्रुत ज्ञानकै भेदकी सिद्धि है क्योंकि पुरुष प्रति मतिज्ञानावरण श्रुतज्ञानावरण-को क्षयोपशम रूप कारण वहुत प्रकार भिन्न भिन्न है अर वाकी भेदतैं तथा वाह्य निमित्तका भेदतैं मतिपूर्वक पणांमें अविशेष होतां संतां भी श्रुतके प्रकर्ष अप्रकर्षको योग है ॥९॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—श्रुताच्छ्रुतप्रतिपत्तेर्लक्षणाव्याप्तिरिति चेन्न तस्योपचारतोमतित्वसिद्धेः ॥१०॥ अर्थ—प्रश्न, श्रुततैं श्रुतकी प्रतीति होय है यातैं लक्षणके अव्याप्ति है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पूर्वश्रुतके उपचारतैं मतिज्ञानपणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—जा समय कृत संगति पुरुष जो है सो शब्द परिणन पुद्गल स्कन्धतैं ग्रहण किया है वर्णपद वाक्य आदि भाव जानैं ऐसा अर चक्षु आदिका विषयतैं अविनाभावी ऐसो अर प्रथम श्रुत विषय भावनें प्राप्त भयो ऐसो घट जो है तातैं जल धारणादि कार्य रूप संबंधांतरनें धूमादिकतैं अग्न्यादिकके समान प्राप्त होय है ता समय श्रुततैं श्रुतकी प्रतीति है या हेतु करि मति पूर्वक लक्षण श्रुतको कह्यो सो अव्यापी है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा प्रथम श्रुतके उपचारतैं मतिपणांकी सिद्धि है यातैं मतिपूर्वक श्रुत जो है सो ही कहूं मति है ऐसे उपचार रूप करिये है अथवा व्यवधानमें पूर्व शब्द वर्तै है सो ऐसे है कि मथुरातैं पूर्व पाटलीपुत्र नगर है इहां ऐसा भाव है कि जैसैं मथुरातैं पूर्व और ग्राम नगर केई जे हैं तिनको व्यवधान है कि तो हू पूर्वकी तरफ पाटलीपुत्र है तातैं ऐसा कहिये है कि मथुरातैं पूर्व पाटलीपुत्र है तैसैं ही मतिज्ञानतैं श्रुतज्ञान होय है अर वा श्रुत ज्ञानतैं अन्य श्रुतज्ञान होय है तो हू मतिज्ञान पूर्व श्रुतज्ञान होय है ऐसैं कहनेमें दोष नहीं है क्योंकि कहूं साक्षात् मति पूर्व है कहूं परंपरा मति पूर्व है तो हू मतिपूर्व ग्रहण करि ग्रहण करिये है ॥१०॥ वार्तिक—भेदशब्दस्य प्रत्येकं परिसमाप्तिर्भुजिवत् ॥११॥ अर्थ—भेदशब्दकी प्रत्येक

समाप्ति भुजिशब्दके समान है। टीकार्थ—जैसैं देवदत्त जिनदत्त गुरुदत्त जे हैं ते भोजन करो इहां भोजन करो यो एक शब्द है सो प्रत्येक लगाइये है तैसैं ही इहां भी भेद शब्द प्रत्येक संबंधरूप करिये है कि दोय भेद तथा अनेक भेद तथा द्वादश भेदरूप श्रुतज्ञान है ॥ ११ ॥ वार्तिक—तत्रांगप्रविष्टमंगवाह्यं चेति द्विविधमंगप्रविष्टमाचारादि द्वादशभेदं वुद्ध्यातिशयर्द्धियुक्तगणधरानुस्मृत ग्रंथरचना ॥ १२ ॥ अर्थ—तिनमें अंग प्रविष्ट तथा अंगवाह्यरूप दोयप्रकार है तिनमें अंग प्रविष्ट तो आचारादि द्वादश भेदरूप है सो बुद्धिका अतिशय रूप ऋद्धि करियुक्त गणधर जे हैं तिनकरि स्मरणरूप कीयो ग्रंथ रचन जो है सो अंगप्रविष्ट है। टीकार्थ—भगवत् अर्हत्सर्वज्ञरूप हिमवन गिरितैं निकसी वचनरूप गंगा जो है ताका अर्थरूप विमल जल करि प्रक्षालित है अंतःकरण जिनके ऐसैं बुद्धिका अतिशयरूप ऋद्धिकरि युक्त गणधर जे हैं तिनकरि अनुस्मरणरूप है ग्रंथरचना जिन विषैं ऐसैं आचारादि द्वादश प्रकार अंगप्रविष्ट श्रुत है सो ऐसैं कहिये है सो ऐसैं है कि आचारांग १ सूत्र कृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग ५ ज्ञातृधर्म कथांग ६ उपासकाध्ययनांग ७ अंतकृद्दशांग ८ अनुत्तरोपपादादिक दशांग ९ प्रश्न व्याकरणांग १० विपाक सूत्रांग ११ दृष्टिवादांग १२ ऐसा नामको धारक द्वादश अंगरूप श्रुत है। वहुरि और सुनूं कि आचारांगके विषैं शुद्धिका अष्टकरूप तथा पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति आदि विकल्परूप चर्याको विधान है। वहुरि सूत्रकृत अंगके विषैं ज्ञान विनय प्रज्ञापना कल्प्य अकल्प्य छेद उपस्थापना व्यवहार धर्मरूप क्रिया प्ररूपण करिये है। वहुरि स्थान अंगके विषैं अनेक धर्मनिको है आश्रय जिन विषैं ऐसैं पदार्थनिको निर्णय करिये है। वहुरि समवाय अंगके विषैं सर्वपदार्थनिकै समवाय चिंतवन करिये है सो द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप विकल्पकरि समवाय च्यार प्रकार है तिनमैं धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय लोकाकाश एक जीव ये च्यारूं पदार्थ जे हैं तिनके तुल्य असंख्यात प्रदेशीपणातैं एक प्रमाणकरि द्रव्यनिका

एक रूप होनेतैं द्रव्य समवाय है अर जंबूद्वीप सर्वार्थसिद्धि अप्रतिष्ठान नरक नन्दीश्वर द्वीपकी एक वावड़ी ये च्यारू चेत्र तुल्य योजन एक लत्तयोजन चौड़ाईका प्रमाणकरि चेत्रका एक रूप होनेतैं चेत्र समवाय है अर उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालके तुल्य दश कोटाकोटी सागरोपम प्रमाण है यातैं काल एक रूप होवातैं काल समवाय है अर चायिक सम्यक्त्व केवलज्ञान केवल दर्शन यथाख्यात चारित्र इन च्यारनिका जो भाव ताको जो अनुभव ताका तुल्य अनंत प्रमाण पणातैं भावका एक रूप होवातैं भाव समवाय है। वहुरि व्याख्या प्रज्ञप्ती अंगके विषैं जाकरि व्युत्पत्ति रूप करिये कि व्याख्यान करिये सो व्याकरण करिये हैं ती व्याकरण संबंधी साठि हजार प्रश्न ऐसैं हैं कि जीव है या जीव नहीं है इत्यादि निरूपण करिये है। वहुरि ज्ञातृधर्म कथा अंगके विषैं आख्यान कहिये दिव्यध्वनि अर उपाख्यान कहिये गणधरादिकृत उपदेश तिनका बहुत प्रकार जे हैं तिनको कथन है। वहुरि उपासकाध्ययन अंगमें श्रावक धर्मको लत्तण है। बहुरि अंतकृत्दशांगके विषैं जिननें संसारको अंत कियो ते अंतकृत कहिये ते नमि १ मतंग २ सोमिल ३ रामपुत्र ४ सुदर्शन ५ यमलीक ६ वलीक ७ निष्कंवल परलांवष्ट ६ पुत्र १० ए दश बर्द्धमान तीर्थंकरका तीर्थके विषैं होत भये अर ऐसैं ही ऋषभादिक तेईस तीर्थंकरनिके तीर्थके विषैं और और दश दश मुनीश्वर दश दश दारुण उपसर्गनें जीति समस्त कर्मका चयतैं अंतकृत कहिये है अर अंतकृत दश दश जामें वर्णन करिये सो अंतकृद्दशांग है अथवा अंतकृत् जे हैं तिनकी जो व्यवस्था सो अंतकृद्दशांग है कहिये है अर याके विषै ही अर्हत् आचार्यनिकी विधि तथा साधुनिकी विधि वर्णन करिये है। वहुरि औपपादिक दशांगके विषैं उपपाद जन्म है प्रयोजन जिनके ते ये औपपादिक कहिये है अर विजय वैजयंत अपराजित सर्वार्थसिद्धि नामा पांच अनुत्तर विमान है और अनुत्तरनिके विषै औपपादिक जे हैं ते अनुत्तरोपपादिक कहिये है ते ऋषिदास १ धन्य २ सुनत्तत्र ३ कार्तिक ४ नंद ५ नंदन ६ शालिभद्र ७ अभय ८ वारिषेण ६ चिलातपुत्र १०

ये दश वर्द्धमान तीर्थंकरका तीर्थके विषैं होत भये अर ऐसैं ही ऋषभादिक त्रयोविंशति तीर्थंकरनिका तीर्थके विषैं और और दश दश मुनीश्वर दश दश दारुण उपसर्गनिनें जीति विजयादिक अनुत्तर विमाननिकै विषैं उत्पन्न होय है ऐसैं याके विषैं भी अनुत्तरोपपादिक दश वर्णन करिये है सो अनुत्तरोपपादिक दशांग है अथवा अनुत्तरोपपादिक जे हैं तिनकी जो दशा सो अनुत्तरोपपादिक दशा कहिये ऐसा अनुत्तरोपपादिक दशांगके विषैं तिनकी आयु तथा विक्रिया संवंधी अनुवंध विशेष वर्णन करिये है। वहुरि प्रश्न व्याकरण अंगके विषैं आक्षेप जो स्थापन अर विक्षेप जो खंडन तिन करि हेतु नयके आश्रित प्रश्न जे हैं। तिनको व्याख्यान है सो प्रश्न व्याकरण है ता विषैं लौकिक वैदिक अर्थिनिको निर्णय है। वहुरि विपाक सूत्र अंगके विषै सुकृतदुःकृत जे हैं तिनको विपाक चिंतवन करिये है। वहुरि द्वादशमूं अङ्ग इष्टिवाद है ताके विषैं कौत्कल १ कांठे विद्धि २ कौशिक ३ हरि ४ श्मश्रु ५ मांछ ६ पिक ७ रोमत ८ हारीत ९ मुंडशालायन १० आदि क्रियावाद दृष्टिनिके एक सौ अस्सी भेद वर्णन करिये है अर मारीच १ कुमार २ कपिल ३ उलूक ४ गार्ग्य ५ व्याघ्र ६ भूति ७ वाठलि ८ माठर ९ मौद्गलायन १० आदि अक्रियावाद दृष्टिनिकै चौरासी भेद वर्णन करिये है अर शकल्प १ बाल्कल २ कुथुमे ३ सात्यमुद्रि ४ नारायण ५ कठ ६ माध्यंदिन ७ मौद ८ पैपलाद ९ वादरायण १० आवष्टीकृत १० ऐरिकायन ११ वसु १२ जैमनि १३ आदि अज्ञान कुदृष्टीनिकै सड़सठि भेद वर्णन करिये है। अर वशिष्ट १ पाराशर २ जतुकर्णि ३ वाल्मीकि ४ रोमार्षि ५ सत्य ६ दत्त ७ व्यास ८ एलापुत्र ९ उपमन्यव १० इंद्रदत्त ११ अयस्थून १२ आदि वैनयिक दृष्टीनिके वत्तीस भेद वर्णन करिये है ये तीनसै तिरेससि ३६३ मिथ्यावादी जे हैं तिनको प्ररूपण तथा खंडन दृष्टिवाद अंगमें करिये है। सो दृष्टिवाद पांच प्रकार है कि परिकर्म १ सूत्र २ प्रथमानुयोग ३ पूर्वगत ४ चूलिका पांच हैं, तिनमें पूर्वगत चतुर्दश प्रकार है कि उत्पाद पूर्व १

अग्रायणी पूर्व २ वीर्यप्रवाद पूर्व ३ अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व ४ ज्ञान प्रवाद पूर्व ५ सत्य प्रवाद पूर्व ६ आत्मप्रवाद पूर्व ७ कर्म प्रवादपूर्व ८ प्रत्याख्यानामधेय पूर्व ९ विद्यानुवादपूर्व १० कल्याणनामधेय पूर्व ११ प्राणवाय पूर्व १२ क्रिया विशालपूर्व १३ लोकविंदुसार पूर्व १४ तिनमें काल पुद्गल जीव आदिकै जा समय जहां जैसैं पर्यायकरि उत्पाद होय है सो तहां वर्णन करिये है सो उत्पादपूर्व है। बहुरि क्रियावादादिकनिकी प्रक्रिया जा विषैं वर्णन करिये है सो अग्रायणी है अर अङ्गादिकनिका स्व समवाय तथा विषय जहां कह्यो है सो अग्रायणी पूर्व है। बहुरि छद्मस्थनिको वीर्य तथा केवलीनिको वीर्य वहुरि सुरेंद्रनिकी तथा दैत्यनिकै अधिपतिनिकी ऋद्धि अर नरेंद्र चक्रधर वलदेव आदि जे हैं तिनकी ऋद्धि अर द्रव्यनिको वीर्यलाभ अर सम्यक्त्वको लक्षण जहां कह्यो है सो वीर्य प्रवाद नाम पूर्व है। बहुरि पंच अस्तिकायनिको अर्थ और नय जे हैं तिनको अर्थ अर अनेक पर्यायनि करि यो है यो नहीं है इत्यादि समस्तपणां करि जहां प्रकाशित है सो अस्तिनास्तिप्रवाद है अथवा जहां छहूं ही द्रव्यनिको भाव अभाव पर्याय विधि करि तथा उभय नय करि वशीकृत अर अर्पित अनर्पितकरि सिद्ध ऐसैं जे स्व पर पर्याय तिनकरि जहां निरूपण करिये सो अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व है। बहुरि पंच ज्ञाननिको जो प्रादुर्भाव ताको जो विषय ताकै आयतनरूप ज्ञानी तिनका तथा अज्ञानीनिका इंद्रियनिकी प्रधानता करि जहां ज्ञानको विभाग वर्णन कीयो है सो ज्ञानप्रवादपूर्व है। बहुरि जहां वचन गुप्ति तथा वचनका जे संस्कार तिनका कारण तथा वचनको प्रयोग तथा द्वादश भाषा तथा वक्ता तथा अनेक प्रकार मृषाभिधान दश प्रकार सत्यको सद्भाव प्ररूपित है सो सत्य प्रवाद है। तिनमें वचन गुप्ति तो आगे कहैंगे अर वचन संस्कारका कारण शिर कंठ आदि अष्ट स्थान है अर वचन प्रयोग शुभ अशुभ लक्षण रूप आगे कहैंगे अर अभ्याख्यान १ कलह २ पैशुन्य ३ असंवद्ध प्रलाप ४ रति ५ अरति ६ उपधि ७ निकृति ८ अप्रणति ९ मोष १० सम्यग् ११ मिथ्यादर्शन स्वरूपिका १२ ऐसैं भाषा द्वादश प्रकार है। तिनमें यो या हिंसादिक

कर्मको कर्त्ता है अर यो या विरता विरतको कर्त्ता है ऐसैं कहना जो है सो अभ्याख्यान भाषा है। अर कलह भाषा प्रसिद्ध है ही। अर पीछेतैं दोषका प्रकट करना जो है सो पैशून्य भाषा है। अर धर्म काम मोक्ष रूप प्रयोजनतैं नहीं मिलावनी जो है सो असंबद्ध प्रलाप भाषा है। अर शब्द आदि विषयके विषैं तथा देश आदिके विषैं प्रतीति की उत्पन्न करन वारी वाणी जो है सो रति भाषा है अर तिनके विषैं ही द्वेषकूं उपजावनें वाली वाणी जो है सो अरति भाषा है। अर जा वाणीनें सुणिकरि ग्रहका उपार्जन रक्षण आदिकैं विषैं उद्यमी होय सो उपधि भाषा है जा वाणीनें सुणिकरि वणिक् व्यवहारके विषैं निवृत्तिमें प्रवीण आत्मा होय सो निकृति भाषा है। अर जा वाणीनें सुणि करि तपविज्ञान करि अधिक जे हैं तिनमें भी नहीं प्रणाम करै सो अप्रणति भाषा है। अर जा भाषानैं सुणिकरि चौरोके विषैं प्रवर्तै सो मोष भाषा है। अर जो वाणी सम्यग् उपदेश कूं देनेवारी है सो सम्यग्दर्शन भाषा है। अर जो मिथ्या उपदेशकूं देनेवारी है सो मिथ्यादर्शन भाषा है, ऐसैं द्वादश भेदरूप भाषा जाननी अर अप्रगट है वक्ता पणांकी पर्याय जिनके ऐसैं वक्ता द्वीन्द्रियादिक है। अर द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय अनेक प्रकार अनृत है अर दश प्रकार सत्यको सद्भाव है सो नाम १ रूप २ स्थापना ३ प्रतीति ४ संवृत्ति ५ संयोजना ६ जनपद ७ देश ८ भाव ९ समय १० ऐसैं सत्यका भेद करिये है। तिनमें सचेतन अचेतन द्रव्यका अर्थनैं नहीं होत संतै भी जो व्यवहारके निमित्त संज्ञा करना है सो नाम सत्य है जैसैं इन्द्र इत्यादि संज्ञा जो है सो व्यवहारमें सत्य है। अर जो पदार्थकूं नहीं निकट होतसंतै भी रूप मात्र करि कहिये सो रूप सत्य है सो जैसैं चित्र पुरुष आदिकै विषैं चैतन्योपयोगादिक प्रयोजननें नहीं विद्यमान होतसंतै भी पुरुष है इत्यादिक है। अर अर्थनैं नहीं विद्यमान होत संतै भी द्यूत कर्ममें अक्ष निक्षेपादिककै विषैं कार्यके निमित्त स्थापन कियो सो स्थापना है। अर आदिमान अनादिमान जे औपशमिकादिक भाव तिननें प्रतीतकरि जो वचन प्रवर्तै सो प्रतीति सत्य है याकै उदाहरण

सांनिपातिक भाव कहेंगे तहांतैं जानना अर जो लोकके विषैं संकोच रूप करि ग्रहण कियो वचन है सो संवृत्ति सत्य है सो जैसैं पृथ्वी आदि अनेक कारण पणांनें होतां संता भी पंकमें उत्पन्न भयो सो पंकज है इत्यादि अर धूम चूर्ण वास अनुलेपन प्रघर्षणके विषैं तथा पद्माकर हंस सवतोभद्र क्रौंचव्यूह आदिके विषैं तथा सचेतन अचेतन द्रव्यनिका यथा भाग विधि रचनाको प्रगट करनें वारो जो वचन है सो संयोजना सत्य है। अर बत्तीस हजार देश आर्य अनार्य भेद रूप जे हैं तिनके विषैं धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप च्यारूं पुरुषार्थनिकूं प्राप्त करनें वारो जो वचन है सो जनपद सत्य है। अर ग्राम नगर राज गण पाखंड जाति कुल आदिके जे धर्मनिको उपदेशक वचन है सो देश सत्य है। अर छद्मस्थ ज्ञानीके द्रव्यका याथात्म्यको अदर्शन है तो हू संयमीके तथा संयतासंयतके निज गुणका परिपालनके अर्थि यो प्राशुक है यो अप्राशुक है इत्यादि जो वचन है सो भाव सत्य है अर आगम गम्य भिन्न भिन्न नियम रूप षट् प्रकार द्रव्य जे हैं तिनको पर्यायनिको यथावत् प्रकाश करनवारो जो वचन सो समय सत्य है ऐसैं दश प्रकार सत्य है। वहुरि जहां आत्माका अस्तित्व पणां नास्तिपणां नित्यत्वपणां अनित्यपणां कर्त्ता पणां भोक्ता पणां आदि धर्म अर षट् जीवनिकायके भेद युक्तितैं दिखाया है सो आत्मप्रवाद पूर्व है। वहुरि जहां कर्मनिका बंध उदय उपशम निर्जरा जे हैं तिनके पर्याय अर विपाक तथा प्रदेश तथा अधिकरण तथा जघन्य मध्यम उत्कृष्ट स्थिति दिखाये हैं सो कर्म प्रवाद पूर्व है। वहुरि जहां व्रत नियम प्रतिक्रमण प्रति लेखना तप कल्प उपसर्ग अचार प्रतिक्रमा विराधना आराधना तथा आराधनकी विशुद्धिको उपक्रम तथा मुनिपणांको कारण तथा परिमित अपरिमित द्रव्य भाव जे हैं तिनको प्रत्याख्यान वर्णन कियो है सो प्रत्याख्यान नामधेय पूर्व है। वहुरि जहां समस्त विद्या अर अष्ट महा निमित्त अर तिनको विषय अर रज्जु राशिकी विधि तथा क्षेत्र श्रेणी तथा लोकको प्रतिष्ठा कहिये आधार तथा संस्थान तथा समुद्घात आदि कहिये है सो

विद्यानुवाद पूर्व है। ताके विषैं अंगुष्ट प्रसेना नामानें आदि लेय सातसै तो अल्प विद्यानिको अर रोहिणीनें आदिलेय पांचसै महा विद्यानिको विषय अर अंतरिक्ष १ भौम २ अंग ३ स्वर ४ स्वप्न ५ लक्षण ६ व्यंजन ७ छिन्न ८ ये आठ महा निमित्त ज्ञान जे हैं तिनको विषय जो है सो लोक है। अर जहां वस्त्रका सूतकै समान अथवा चर्मका अवयवकै समान आनुपूर्वी करि ऊर्ध्व अध तिर्यक् व्यवस्थित असंख्यात आकाशका प्रदेशकी भूमि है ते श्रेणी कहिये। अर अलो-काकाश अनंतो जो है ताका बहु मध्यके विषैं सुप्रतिष्टक कहिये ठौणा जो है ताका संस्थानके समान संस्थान वान लोक है तामैं ऊर्ध्वलोक तो मृदंगकी आकृति है अर अधोलोक वेत्रासन जो कुरसी ताकी आकृति है अर मध्यलोक झालरिके आकृति है। सो तनुवातलय करि वेष्टित ऊर्ध्व अधः तिर्यक्के विषै चहूं तरफ वेष्टित है अर चतुर्दश रज्जू प्रमाण लंबो है अर मेरु १ प्रतिष्ट २ वज्र ३ वैडूर्य ४ पटल ५ अन्तर ६ रुचक ७ सांस्थित ८ इन नामके धारक अष्ट आकाशके प्रदेश हैं सो लोकको मध्य है। अर लोकका मध्यतैं यावत् ऐशान स्वर्गको अंत है तावत् ड्योढ़ रज्जू है। अर माहेंद्र स्वर्गका अन्तमें तीन रज्जू है। अर ब्रह्म लोकका अन्तमें साढ़ा तीन रज्जू है। अर कापिष्ट स्वर्गका अन्तमें च्यार रज्जू है। अर महाशुक्र स्वर्गका अन्तमें साढ़ी च्यार रज्जू है। अर सहस्रार स्वर्गका अन्तमें पांच रज्जु है। अर प्राणत स्वर्गका अन्तमें साढ़े पांच रज्जू है। अर अच्युत स्वर्गका अन्तमें छह रज्जू है। अर लोकका अन्तमें सात रज्जु है। बहुरि तैसैं ही लोकका मध्यतैं नीचे यावत् शर्करा पृथिवीको अन्त है तावत् एक रज्जू है तातैं नीचे पांच पृथिवीनिके प्रत्येक एक एकका अन्त अन्तमें एक एक रज्जु वृद्धिनें प्राप्त भई है तातैं नीचैं तमस्तम प्रभा पृथिवीतैं लोक पर्यंत एक रज्जु है ऐसैं नीचे सात रज्जु है। बहुरि या लोकके घनोदधि घनवात तनुवातका वलय तीन है इन करि यो सर्व लोक सर्व तरफतैं वेष्टित है। अर लोकके नीचे तथा लोककी दिग विदिग् पार्श्ववर्ती कलंकल नामा सातमी पृथ्वी

पर्यंत तीनूं ही वातवलयनिको प्रत्येक विस्तार वीस वीस हजार योजन है। अर ताकै उपरि अनुक्रमतैं हानिका वशतैं तिर्यग्लोक वर्ती आठ दिशा विदिशा संबंधी पार्श्वके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय पंच च्यार तीन योजन विस्तीर्ण है। बाहुरि वाकै उपरि वृद्धिका वशतैं ब्रह्मलोकमें आठूं ही दिशा विदिशाके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय सात पांच च्यार योजन विस्तीर्ण है। वहुरि वाके ऊपरि हानिका वशतैं लोकका अग्रके विषैं आठूं ही दिशा विदिशा संबंधी पार्श्वके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय पांच च्यार तीन योजन विस्तर्ण दंड वलय है। वहुरि नीचैं तीनूं ही वलय ऐसें है कि ऊपरि लोकका अग्रके विषैं घनोदधिको तो विस्तार दोयकोश अर तनुवातको विस्तार किंचित् घाटि एक कोश प्रमाण है। वहुरि नीचे कलंकल नामा सातमी पृथ्वीका पर्यंतके समीप घनोदधिको तो विस्तार सात योजनको है अर घनवातको विस्तार पांच योजनको अर तनुवातको विस्तार च्यार योजनको है। भावार्थ—लोकका मूलतैं कलंकल नामा सातमी पृथ्वी पर्यंत तो वीस वीस हजार योजनको प्रत्येक विस्तार पूर्वे कह्यो है अर वा पर्यंततैं उपरि सात पांच च्यार योजनको इहां कह्यो है। अर अधो लोक मूलके विषैं दिशा विदिशामें चौड़ो सात रज्जु है अर तिर्यक् लोकके विषैं एक रज्जु चौड़ो है अर ब्रह्मलोकके विषैं पांच रज्जु चौड़ो है अर लोकका अग्रके विषै एक रज्जु चौड़ो है। वहुरि लोकके विषैं चौड़ो एक रज्जु अर पट् रज्जुका सातसा भाग है ता पीछें एक राजू नीचे जाय वालुका पृथ्वीका अन्तके विषैं दोय राजू अर पांच रज्जूका अन्तमें सात भाग चौड़े है ता पीछें एक रज्जु नीचे अवगाहन करि पंक प्रभाका अन्तके विषैं तीन रज्जू अर च्यार रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक राजू नीचे अवगाहन करि धूम प्रभाका अन्तमें च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है। ता पीछे एक रज्जू नीचे अवगाहन करि तम प्रभाका अन्तमें पांच रज्जू अर दोय रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू नीचे अवगाहन करि तमस्तम प्रभाका अन्तमें षट्

रज्जू अर एक रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू नीचे अवगाहन करि कलंकलका अन्तमें सात रज्जू चौड़ो है। बहुरि वज्र तल जो लोकको मध्य तातैं ऊपरि एक रज्जू उल्लंघन करि दोय रज्जू अर एक रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि तीन रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें ऊर्ध्व रज्जू उपरि उल्लंघन करि पांच रज्जू चौड़ो है ता पीछें ऊर्ध्व रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि तीन रज्जू अ रदोय रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि दोय रज्जू अर एक रज्जुका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि लोकका अन्तके विषैं एक रज्जू चौड़ो है या रज्जू विधि है। बहुरि हंति धातुके गमन क्रियावान पणातैं आत्म प्रदेशनिको एकत्र होय बाहिर उद्गमन होय सो समुद्घात है सो सात प्रकार है तिनके नाम वेदना १ कषाय २ मारणांतिक ३ तेजो ४ विक्रिया ५ आहारक ६ केवली सात विषयनिका भेदत ये नाम है। तिनमें वात आदितैं उत्पन्न भया रोगका तथा विष आदि द्रव्यका संबंधतैं उत्पन्न भया संताप करि ग्रहण करी वेदनाको कियो वेदना समुद्घात होय है। अर बाह्य अभ्यंतर कारणकी उत्कर्षता करि उत्पन्न भया क्रोधादिकको कीयो कषाय समुद्घात होय है। अर उपक्रम अनुक्रम रूप आयुका क्षय करि प्रगट भयो है मरणांत प्रयोजन जा विषैं सो मारणांतिक समुद्घात होय है। अर जीवनिका अनुग्रह तथा उपघात करनेमें समर्थ एसो तैजस शरीर जो है ताका रचवा निमित्त जो है सो तैजस समुद्घात है। अर एकत्व तथा पृथक्त्व रूप नाना प्रकार विक्रिया मई शरीरका तथा वचनका प्रचार ग्रहण आदि विक्रियाको है प्रयोजन जा विषैं सो वैक्रियक समुद्घात है। अर उक्त विधिकरि अल्प सावद्य पूर्वक सूक्ष्म अर्थको ग्रहण है प्रयोजन जा-विषैं ऐसा आहारक शरीरकी रचनाके अर्थि

आहारक समुद्घात है। अर वेदनीय कर्मका बहुपणातैं तथा आयु कर्मका अल्प पणातैं अनाभोग पूर्वक कहिये विना भोग कीया ही वेदनीय कर्मकी स्थितिनें आयु कर्मकी स्थितिकै समान करवा निमित्त द्रव्य स्वभाव पणातैं सुरा द्रव्यको झाग वेग बुद्बुदानिका प्रगट होना तथा उपशम होनाके समान देहनें तिष्ठता आत्म प्रदेशनिको बाहिर निष्कासन जो है सो केवलिसमुद्घात है। अर आहारक समुद्घात तथा मारणांतिक समुद्घात तो एक दिशामें ही प्रवर्त्तनें वारे हैं क्योंकि आत्मा आहारक शरीरनें रचतो संतो श्रेणी गति पणातैं एक दिशा संबंधी असंख्यात आत्म प्रदेशनिनें बाहिर निकासि करि एक हाथ प्रमाण आहारक शरीरनें रचै है क्योंकि अन्य क्षेत्रमें समुद्घात करनेंका कारणको अभाव है यातैं। अर यानै जहां नरकादिक क्षेत्रमें उत्पन्न होनों है तहां ही मारणांतिक समुद्घात करि आत्म प्रदेश एक दिशावर्ती निकसै है अन्य क्षेत्रमें नहीं निकसै है यातैं दोऊ एक दिशावर्त्ती है अर्थात् आहारक तो निकट वर्ती जा क्षेत्रमें केवली भगवान विद्यमान है ता ही क्षेत्रके सन्मुख जाय है अर मारणांतिक जा क्षेत्रमें उत्पन्न होनों है ताही क्षेत्रके सन्मुख जाय है तातैं अन्य क्षेत्रमें जावनेंका कारणको अभाव कह्यो है। अर अवशेष पाचूं समुद्घात छहूं दिशावर्ती है। यातैं वेदनादिक समुद्घातका वशतैं बाहिर निकस्या आत्म प्रदेशनिको पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर ऊर्ध्व अधः ये ही छहूं दिशा जे हैं तिनकै विषैं गमन इष्ट है क्योंकि आत्म प्रदेशनिकै श्रेणी गति पणौं है यातैं। वेदना १ कषाय २ मारणांतिक ३ तेजः ४ वैक्रियिक ५ आहारक ६ ये षट् समुद्घात तो संख्यात समय वर्ती है अर केवलि समुद्घात अष्ट समयवर्ती है सो दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूर्ण ये च्यार कर्म तो च्यार समयमें करै है। बहुरि प्रतर कपाट दंड स्व शरीरमें पीछो प्रवेश ये च्यार कर्म च्यार समयमें करै है। ऐसैं समुद्घात जानना। बहुरि जहां रवि शशि ग्रह नक्षत्र तारा गण जे हैं तिनको चार उपपादि गति तथा विपर्यय गति फल जे हैं तिननें तथा

शकुनको कथन तथा अर्हत् बलदेव वासुदेव चक्रधर आदिके गर्भावतार आदि महा कल्याणनिनें कहे हैं सो कल्याण नामधेय पूर्व है। बहुरि जहां काय चिकित्सा आदि अष्टांग आयर्वेद तथा प्रथ्वी आदि भूतनिका कर्मको अनुक्रम तथा सर्प आदि जंगम जीवनिका कर्मको अनुक्रम तथा प्राणापान कहिये श्वासोछ्वासको विभाग शुभाशुभ रूप विस्तार करि वर्णन कियो है सो प्राणवाय पूर्व है। बहुरि जहां बहत्तरि संख्या प्रमाण लेखन आदि कला अर स्त्रियांका चौसठि संख्या प्रमाण गुण अर समस्त शिल्पि कर्म अर काव्यके गुण दोष क्रिया तथा छदकी रचना अर क्रिया अक्रियाका फलका उपभोक्ता वर्णन कियो है सो क्रिया विशाल पूर्व है। बहुरि जहां अष्ट तो व्यवहार अर च्यार वीज अर परिकर्म राशिकी क्रियाको विभाग अर और सर्व श्रुतकी संपत्ति कही है सो लोक बिंदुसार पूर्व है। ऐसैं द्वादश अंगनिको स्वरूप जाननों अर अङ्गनिके पदनिकी संख्या तथा पदका प्रमाण गोमट्टसारकी वचनिका तैं तथा अन्य ग्रंथतैं जानना। वार्तिक—आरातीयाचार्यकृतांगार्थप्रत्यासन्नरूपमंगबाह्यम् ॥ १३ ॥ अर्थ—अङ्गधारीनितैं पीछे भये जे आरातीय अचार्य तिनके बनाये अङ्गनिके अर्थनिका संक्षेप रूप जे हैं ते अङ्गबाह्य है। टीकार्थ—जो गणधरनिके शिष्य प्रति शिष्य भये तथा जान्यूं है श्रुतार्थको तत्व जिननें ऐसैं आरातीय जे हैं तिननें काल दोषतैं अल्प बुद्धि अल्प आयु अल्प बलवान जे हैं तिन प्राणीनिका अनुग्रहके निमित्त संक्षेप रूप अङ्गनिका अर्थको तथा वचनको है स्थापन जामें ऐसो जो उपनिबद्ध कहिये रचना रूप कियो सो अङ्गबाह्य है ॥ १३ ॥ वार्तिक—तदनेकविधं कालिकोत्कालिकादिविकल्पात् ॥ १४ ॥ अर्थ—सो अङ्गबाह्य कालिक उत्कालिक विकल्पतैं अनेक विकल्प रूप है। टीकार्थ— सो अङ्गबाह्य कालिक उत्कालिक रूप अनेक प्रकार है तिनमें कितनेक तो स्वाध्यायके समयमें नियत काल रूप कालिक है कि समयके समयमें ही पठन पाठनके योग्य है अर कितनेंक अनियत काल रूप उत्कालिक है कि सर्व समयमें ही

पठन पाठनके योग्य है इत्यादिक विकल्प है यातैं अर तिनके भेद उत्तराध्ययन आदि अनेक प्रकारके हैं ॥ १४ ॥ इहां वादी कहै है कि सूत्रकारनें अनुमानादिकनिको भिन्न उपदेश नहीं कियो ताको कहा प्रयोजन है ? उत्तर रूप वार्तिक—अनुमानादीनां पृथगनुपदेशः श्रुतावरोधात् ॥ १५ ॥ अर्थ—अनुमानादिकनिको भिन्न उपदेश नहीं है सो श्रुतज्ञानमें अंतरभूत है यातैं नहीं है। टीकार्थ—जातैं ये अनुमानादिक जे हैं ते श्रुतज्ञानमें अन्तरगत होय है तातैं तिनको पृथक् उपदेश सूत्रकार नहीं कीयो है सो ऐसै है कि प्रत्यक्षपूर्वक तीन प्रकार अनुमान है तिनके नाम ये है कि पूर्ववत् १ शेषवत् २ सामान्यतोद्रष्ट ३ तिनमें जानें अग्नितैं निकसतो धूम पूर्वे देख्यो सो प्रसिद्ध अग्नि धूमका संवंध करि ग्रहण कीयो है संस्कार जानें ऐसो पुरुष पीछें धूमका दर्शनतैं इहां अग्नि है ऐसैं पूर्ववत् अग्निनें ग्रहण करै है यातैं पूर्ववत् अनुमान है। वहुरि तैसैं ही जानें पूर्वें विषाण विषाणीको संवंध जान्यो है ताके विषाणको रूप देखि यातैं विषाणीके विषैं अनुमान होय सो शेषवत् अनुमान है। वहुरि तैसैं ही देवदत्तकी देशांतरमें प्राप्ति गति पूर्वक देखि संवंध्यंतर कहिये गतिको संवंधी जो देवदत्त तातैं अन्य सूर्य जो है ताके विषैं देशांतर प्राप्तिका दर्शनतैं अत्यन्त परोक्ष जो गति ताको अनुमान है सो सामान्य तो दृष्ट अनुमान है सो ये तीनूं ही अनुमान अपनें प्रतीति उत्पन्न करनेके समयमें तो अनक्षर श्रुत रूप है अर परके प्रतीति उत्पन्न करनेके समयमें अक्षर श्रुत रूप है। वहुरि जैसैं गौ है तैसैं ही गवय है केवल सास्ना जो गलकंवल ता करि रहित ही है ऐसैं उपमान प्रमाण जो सो भी स्व परकी प्रतीति रूप विषय पणातैं अक्षर अनक्षर स्वरूप श्रुतके विषैं अन्तरगत होय हे। वहुरि शाब्द प्रमाण भी श्रुत ही है क्योंकि भगवान ऋषभ देव ऐसैं कहै है या प्रकार परंपरातैं आया पुरुपागमतैं या समय वर्तीनिको वचन भी ग्रहण करिये है यातैं श्रुतमें अन्तरभाव होय है। वहुरि प्रकृतितैं पुष्ट पुरुष दिवसमें नहीं भोजन करै है अर जीवै है ऐसा वचनमें

अर्थनें प्राप्त होय है कि रात्रिमें भोजन करै है ऐसैं अर्थापत्ति प्रमाण है अर चार प्रस्थको एक आढक होय है ऐसो ज्ञान होत संतै आढकनें देखि कहै है कि अर्द्ध आढकको कोद्रव संभवैं है ऐसैं प्रतिपत्ति प्रमाण संभवै है। बहुरि तृण गुल्म आदिके सचिक्कण पत्रफल आदिको अभाव देखि अनुमान करिये है कि इहां निश्चय करि मेघ नहीं वर्ष्यो है ऐसैं अभाव प्रमाण है। ये अर्थापत्ति आदि सूत्रमें नहीं कहे जे हैं तिनको भी अनुमानके समान पूर्ववत् श्रुतमें अतंरभाव होय है ऐसैं परोक्ष प्रमाण तो व्याख्यान कीयो अबैं प्रत्यक्ष ज्ञान कहने योग्य है सो दोय प्रकार है तिनमें प्रथम देश प्रत्यक्ष है दूसरो सकल प्रत्यक्ष है, तहां अवधिज्ञान मनः-पर्यय ज्ञान तो देश प्रत्यक्ष है अर केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष है ॥ १५॥ २० ॥ अबैं इकवीसमा सूत्र की उत्थानिका लिखिये है कि ऐसैं ही है तो तीन प्रकारका प्रत्यक्ष की आदिमें प्रथम यो अवधि-ज्ञान है सो ही व्याख्यान करने योग्य है। इहां उत्तर कहिये है कि याको लक्षण कह्यो है कि आत्माके प्रशाद विशेषनैं होतां सतां सार्थक संज्ञा करवातैं अवधीयते कहिये मर्याद करिये है सो अवधिज्ञान है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो वाके भेद कहनो योग्य है? उत्तर कहिये है कि भवप्रत्यय अर-गुण प्रत्यय भेदतैं तथा देशावधि सर्वावधिभेदतैं अवधिज्ञान दोय प्रकार है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि रूप त्रिविध पणौं नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि सर्व शब्दके निरवशेष वाची पणौं है यातैं सर्वावधिनैं अपेक्षा करि परमावधिकै देशाविधि पणौं ही कहै है तिनमें जो यो भव प्रत्यय है ताका प्रतिपादनके आर्थि सूत्रकार कहै है।

सूत्रम्—

भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥

अर्थ—भव है कारण जानें ऐसो अवधि देव और नारकीनिकै होय है। प्रश्न, भव ऐसैं कहिये

है सो भव नाम कहा है? उत्तररूप वार्तिक—आयुर्नामकर्मोदयविशेषापादितपर्यायो भवः ॥ १ ॥ अर्थ—आयु कर्म अर नाम कर्मका उदय विशेष ग्रहण कीयो पर्याय जो है सो भव है ॥ टीकार्थ—आत्माके पर्याय है सो आयुका अर नामका उदय विशेषतैं तथा अवशेष कारण की अपेक्षातैं प्रकट होय है सो साधारण लक्षण भव है ऐसैं कहिये है ॥ १ ॥ वार्तिक—प्रत्ययशब्दस्यानेकार्थसंभवे विवक्षातो निमित्तार्थगतिः ॥ २ ॥ अर्थ—प्रत्यय शब्दका अनेक अर्थ संवभवतां संता भी वक्ताकी इच्छातैं निमित्त अर्थकी प्राप्ति है। टीकार्थ—यो प्रत्यय शब्द अनेकार्थ रूप है कि कहूं ज्ञान अर्थ में प्रवर्तै है सो जैसैं "अर्थाभिधानप्रत्ययः" याको अर्थ ऐसो है कि अर्थ अभिधान अर प्रत्यय कहिये ज्ञान है। वहुरि कहूं शपथ अर्थमें प्रवर्तै है सो जैसैं "पर द्रव्यहरणादिषु सत्सु पालंभे प्रत्ययोऽनेन कृतः" याको अर्थ ऐसो है कि पर द्रव्यहरण आदिके विषैं उपालभनैं होतां संता यानैं शपथ कियो है। वहुरि कहूं हेतु अर्थमें प्रवर्तै है सो जैसैं "अविद्या प्रत्ययाः संस्काराः" याको अर्थ ऐसो है कि अविद्या है कारण जिननैं ऐसैं संस्कार है तिनमें वक्ताकी इच्छातैं इहां निमित्त अर्थ जानने योग्य है यातैं भव है प्रत्यय कहिये निमित्त जानैं सो भव प्रत्यय है ॥ २ ॥ वार्तिक—क्षयोपशमाभाव इति चेन्न तस्मिन्सति सद्भावात् खे पतत्रिगतिवत् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, भवनैं निमित्त होत संतै क्षयोपशमके निमित्त पणांको अभाव होय है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि क्षयोपशमनैं होतां संता भवको सद्भाव होय है यातैं आकाशमें पक्षीकी गतिके समान है। टीकार्थ—जो वहां भव निमित्त अवधि है तो कर्मको क्षयोपशम निमित्त है ऐसैं कहनो अनर्थक है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, क्षयोपशमनैं होतां संतां भवका सद्भावतै भव निमित्त कहिये है सो आकाशनैं पक्षीका गमनके समान है सो ऐसैं है कि जैसें आकाशनैं होतां संता पक्षीकी गति है तैसैं अवधिज्ञानावरणका क्षयोपशमरूप अंतरंग हेतुनैं विद्यमान

होत संतैं पत्नीके समान भव प्रत्यय अवधिको होनों है अर भव जो है सो वाह्य निमित्त है ॥ ३ ॥ वार्तिक—इतरथा ह्यविशेषप्रसंगः ॥ ४ ॥ अर्थ—भव वाह्य निमित्त नहीं है तो निश्चय करि अवधिकै अवशेष रूप होनेको प्रसंग आवै। टीकार्थ—निश्चय करि जो भव हेतु होय तो सर्व देव नारकीनिकै भवरूप हेतु तुल्य है यातैं अवधिकै अविशेषको प्रसंग होय अर प्रकर्ष अप्रकर्ष भाव करि अवधिकी प्रवृत्ति इष्ट है। प्रश्न, तो फेर भव हेतु कैसैं है? उत्तर, ऐसैं कहोहो तो सुनूं कि वृत नियम आदिका अभावतैं भव हेतु है कि जैसैं तिर्यंचनिकै तथा मनुष्यनिकै अहिंसा वृत नियम पूर्वक अवधि होय है तैसैं देव नारकीनिकै अहिंसादि वृतनियमको योग नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर भवनैं प्रतीति करि कर्मका उदयको तैसैं होनों है यातैं तातैं वहां भव ही वाह्य साधन है ऐसैं कहिये है ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—अविशेषात्सर्वप्रसंग इति चेन्न सम्यग्गधिकारात् ॥ ५ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें विशेष नहीं है यातैं सर्व देवनारकीनिकै अवधिको प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सम्यक्को अधिकार है यातैं। टीकार्थ—देव नारकीनिकै ऐसा अविशेष रूप वचनतैं मिथ्यादृष्टीनिके भी अवधिको प्रसंग होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर सम्यक्का अधिकारतैं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान ऐसा अनुवर्तै है ताका संबंधतैं सम्यग्दृष्टीनिके तो अवधि है अर मिथ्यादृष्टीनिके विभंग ज्ञान है ऐसैं जानवे योग्य है अथवा आगानैं कहेंगे ताका अभिसंबंधतैं सर्वके अवधिको प्रसंग नहीं आवै है सो निश्चय करि ऐसैं कहेंगे कि मतिश्रुतावधयोर्विपर्ययश्च याको अर्थ ऐसो है कि मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान विपर्यय भी है अर सम्यक् भी है अथवा व्यख्यानतैं कि शास्त्रतैं विशेषकी प्रतीति है ॥ ५ ॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आगमे प्रसिद्धे नारकशब्दस्य पूर्वनिपात इति चेन्नोभयलक्षणप्राप्तत्वाद्देवशब्दस्य ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, आगममें नारक शब्द की प्रसिद्ध है यातैं पूर्व निपात होनों योग्य है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि देव शब्दके उभय लक्षण

प्राप्तपणौं है यातैं। टीकार्थ—नारक शब्दको पूर्व निपात करि होनों योग्य है। क्योंकि आगममें प्रसिद्ध है यातैं सो ऐसैं हैं कि निश्चय करि आगममें जीव स्थान आदिमें तथा सत् संख्या आदिका विवर्णमें अनुयोग द्वार करि आदेश वचनमें नारकीनिकी ही आदिमें सत् आदि प्ररूपणा करी है तातैं नरक शब्दको पूर्व निपात करि होनों योग्य है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, देव शब्दके उभय लक्षण प्राप्त पणातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि देव शब्द ही अल्प स्वरवान है अर उत्तम है यातैं सूत्रमें पूर्व प्रयोगके योग्य है अथवा आगममें वाच्य है विषय जाको ऐसो ही निर्देश करनों सो ऐसो नियम नहीं है। प्रश्न, तुमनें कह्यो है कि प्रकर्ष अप्रकर्ष भाव करि अवधिकी प्रवृत्ति इष्ट है यातैं वा प्रवृत्ति कैसैं है ऐसैं कहा हो तो कहिये है कि देवनिमें प्रथम भवन वासीनिकै विषैं दश प्रकारकेनिकै ही जघन्य अवधि तो पचीस योजन प्रमाण है अर उत्कृष्ट अधो भागमें तो असुर कुमारनिमें असंख्याता योजन कोटाकोटि पर्यंत है अर ऊर्ध्वभागमे ऋजुविमान प्रथम स्वर्गको जो है ताका उपरिम भाग पर्यंत है अर नागकुमार आदि नव प्रकार जे हैं तिनमें भी उत्कृष्ट अवधि अधो भागमें तो असंख्यात योजन सहस्र पर्यन्त है अर ऊर्ध्व भागमें मंदर मेरुकी चूलिका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यग् असंख्यात सहस्र योजन सर्व भवन वासीनिकै अवधि है। बहुरि अष्ट प्रकार व्यंतर जे हैं तिनकै जघन्य अवधि तो पचीस योजन प्रमाण है अर उत्कृष्ट भी अधो भागमें असंख्याता योजन सहस्र प्रमाण है अर ऊर्ध्वभागमें अपना विमानका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यक् असंख्याता कोटाकोटी योजन प्रमाण है। बहुरि वैमानिकनिकै विषैं सौधर्म ऐशान स्वर्ग निवासीनिकै जघन्य अवधि ज्योतिषीनिके उत्कृष्ट है सो है अर उत्कृष्ट अधो भागमें रत्न प्रभाका अंत पर्यंत है अर सानत्कुमार माहेंद्र निवासीनिकै अधोभागमें जघन्य अवधि तो रत्न प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें शर्करा प्रभाका अन्त पर्यन्त है अर ब्रह्म

ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्ट स्वर्ग निवासीनिकै अधो भागमें जघन्य शर्करा प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें वालुका प्रभाका अंत पर्यंत है। अर शुक्र महा शुक्र सतार सहस्रार निवासीनिकै अधो भागमें जघन्य अवधि वालुका प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधोभागमें पंक प्रभाका अंत पर्यन्त है। अर आनत प्राणत आरण अच्युन निवासीनिकै अधोभागमें जघन्य अवधि पंक प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें धूम प्रभाका अंत पर्यंत है अर नव ग्रैवेयिक निवासीनिकै अधोभागमें जघन्य अवधि धूम प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधोभागमें तम प्रभाका अंत पर्यंत है अर नव अनुदिश निवासीनिकै तथा पंच अनुत्तर विमान निवासीनिकै अधोभागमें लोक नाली पर्यंत है अर सौधर्मादि अनुत्तर निवासीनिकै ऊर्ध्व भागमें अपना विमानका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यग् असंख्याता योजन कोटाकोटी है। प्रश्न, अथानंतर इनि सब देवनिकै काल द्रव्य भाव जे हैं तिनके विषैं कितनी अवधि है? उत्तर, इहां कहिये है कि जाकै यावत् क्षेत्रको अवधि है ताकै तावत् आकाशका प्रदेशनिका परिज्ञानतैं होतां संता कालके विषैं अर द्रव्यके विषैं भी परिज्ञान होय है अर्थात् उतना ही अतीत अनागत समयमें अवधिज्ञान प्रवर्तै है अर उतना ही असंख्यात भेद रूप अनंत प्रदेशात्मक पुद्गल स्कंध जे हैं तिनके विषैं तथा कर्म सहित जीवनिके विषैं अवधिज्ञान प्रवर्तै है। वहुरि भावतैं ऐसैं जाननां कि अपना विषय पुद्गल स्कंधनिकै जे रूपादिक विकल्प हैं तिनके विषैं तथा औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक जीवके परिणाम जे हैं तिनके विषैं अवधिज्ञान प्रवर्तै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, इनिके पौद्गलिक पणौं है यातैं। अथानंतर नारकीनिकै विषैं ऐसैं है कि एक योजन प्रमाण है सो अर्द्ध कोश हीन यावत् है कि एक कोश प्रमाण है सो ऐसैं है कि रत्न प्रभाके विषैं अधोभागमें एक योजन अवधि है अर दूसरी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें साढ़ा तीन कोश प्रवर्तै है अर तीसरी पृथ्वीके विषैं अधोभागमें अवधिज्ञान तीन कोश प्रवर्तै है २१७

अर चौथी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें ढाई कोश प्रवर्तैं है अर पांचमी पृथ्वीके विषैं-अवधि ज्ञान अधोभागमें दोय कोश प्रवर्तैं है अर छठी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभाग ड्योढ़ कोश प्रवर्तैं है अर सातमी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें एक कोश प्रवर्तैं है अर सातूं ही पृथ्वीके विषैं नारकीनिके अवधि उपरिम भागके विषैं अपना नरकरूप आवासका अंत पर्यंत प्रवर्तैं है अर तिर्यग् असंख्याता कोटा कोटी योजन पर्यंत प्रवर्तैं है अर कालतैं तथा द्रव्यतैं तथा भावतैं परिमाण पूर्ववत् जाननें योग्य हैं ॥ ६ ॥ २१ ॥ अबैं बाईसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो भव प्रत्यय अवधि देवनारकीनिकै है तो क्षयोपशम निमित्त कौनकै है ऐसा प्रश्न होतां संता सूत्रकार कहै है । सूत्रम्—

क्षयोपशमनिमित्तः षड् विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥

अर्थ—क्षयोपशम निमित्त अवधि मनुष्य तिर्यंचनिकै है सो षट् भेद रूप है। टीकार्थ—क्षयोपशम निमित्त अवधि षट् भेद रूप देव नारकीनितैं अन्य मनुष्य तिर्यंच जे हैं तिनकै होय है सो अवधिज्ञानावरणका देशघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयनें होतां संता सर्व घाती स्पर्द्धकनिको उदयाभाव जो है सो क्षय है अर उदयनें नहीं प्राप्त भया वै ही जे हैं तिनकी सद् अवस्था जो है सो उपशम है अर ये दोऊ है निमित्त जाकूं ऐसो क्षयोपशम निमित्त अवधि जो है सो अवशेष जे हैं तिनके जानवे योग्य है ? प्रश्न, वे अवशेष कौन है ? उत्तर, मनुष्य अर तिर्यंच है प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—शेषग्रहणादविशेषप्रसंग इति चेन्न तत्सामर्थ्यविरहात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, शेष पदका ग्रहणतैं विशेष रहित मनुष्य तिर्यंचनिके अवधिके होनेको प्रसंग आवै है उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अवधि होनेकी सामर्थ्यको विरह है यातैं । टीकार्थ—देव नारकीनितैं अन्य है ते शेष है तातैं तिन सर्व तिर्यंचनिकै तथा सर्व मनुष्यनिकै अविशेषतैं अवधिको

प्रसंग आवै है कि सर्व तिर्यंच मनुष्यनिकै अवधि होवै ऐसो प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा सामर्थ्यको विरह है यातैं असंज्ञीनिकै तथा अपर्याप्तनिकै वा अवधिज्ञानके उत्पन्न करनेको सामर्थ्य नहीं है अर सर्व ही संज्ञीनिकै तथा सर्व ही पर्याप्तनिकै भी वा अवधिज्ञानकै उत्पन्न करनेको सामर्थ्य नहीं है ॥१॥ प्रश्न, तो अवधिज्ञानकै उत्पन्न करनेको सामर्थ्य कौनकै है ? उत्तररूप वार्तिक— यथोक्तनिमित्तसंनिधाने सति शांतक्षीणकर्मणां तस्योपलब्धेः ॥२॥ अर्थ—यथोक्त सम्यक्त्वके निमित्तनिके होनेकी निकटतानें होता संता उपशम रूप तथा क्षीण रूप भयो है कर्म जिनकै तिनकै अवधिकी प्राप्ति होय है यातैं। टीकार्थ—यथोक्त सम्यग्दर्शन आदि निमित्तकी निकटतानें होतां संता शांत भयो है तथा क्षीण भयो है अवधिज्ञानावरण कर्म जिनके तिनके अवधिज्ञानकी प्राप्ति होय है। सर्व मनुष्य तिर्यंचनिकै क्षयोपशम निमित्त नहीं होय है ॥२॥ प्रश्न, क्षयोपशमनिमित्तः शेषाणां, ऐसैं कह्यो है। उत्तर रूप वार्त्तिक—सर्वस्य क्षयोपशम निमित्तत्वे तद्वचनं नियमार्थं अब्भक्षवत् ॥३॥ अर्थ—उत्तर, सर्वके क्षयोपशम निमित्त पणानें होतां संता क्षयोपशम निमित्त वचन जो है सो नियमके अर्थि अप् भक्ष समान है। टीकार्थ—जैसैं कोउ जल ही भक्षण करै है सो नहीं है अर्थात् जल सर्व ही भक्षण करै है तो हू यो जल भक्षण करै है ऐसो कहनों जो है सो नियमके अर्थि कहिये है कि जल ही भक्षण करै है तैसैं ही सर्वके क्षयोपशम निमित्त पणानें होतां संता भी क्षयोपशम पदको ग्रहण नियमके अर्थि है कि मनुष्यनिके तथा तिर्यंचनिके क्षयोपशम निमित्त ही है भव निमित्त नहीं है सो या अवधि षट् विकल्प रूप है ॥३॥ प्रश्न, काहेतैं ? उतररूप वार्तिक—अनुगाम्यननुगामिऽवर्धमानहीयमानावस्थिताऽनवस्थितभेदात् षड्विधः ॥४॥ अर्थ—उत्तर, अनुगामी अननुगामी वर्धमान हीयमान अवस्थित अनवस्थित भेदतैं षट् प्रकार है। टीकार्थ—उत्तर, अनुगामी १ अननुगामी २ वर्धमान ३ हीयमान ४ अवस्थित ५ अनवास्थित ६ ऐसा भेदतैं अवधिज्ञान षट् प्रकार है तिनमें कोई अवधि सूर्यका

प्रकाशके समान गमन करताकै साथि गमन करै है सो अनुगामी है। अर कोऊ अवधि सन्मुख-प्रश्नको उत्तर देनेवारो पुरुष जो है ताका वचनके समान साथि गमन नहीं करे है। उत्पत्ति स्थानमें ही अत्यंत छूटि जाय है सो अननुगामी है अर और अवधी अरणीका मथनतैं उत्पन्न भयो अर शुष्क पत्रनिका संचय रूप ईंधनका समूहमें प्रज्वलित भयो अग्नि जो है ताके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी विशुद्धिरूप परिणामका निकट होवातैं जा परिणाम उत्पन्न रूप भयो तातैं असंख्यात लोक पर्यंत वृद्धिनें प्राप्त होय है सो वर्द्धमान है अर और अवधि विछेदनें प्राप्त भई है उपादान कारणकी संतति जाके ऐसा अग्निकी शिखाके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी हानि तथा संक्लेश परिणामकी वृद्धिका योगतैं जा परिणामरूप उत्पन्न भयो तातैं अंगुलका असंख्यातवां भाग पर्यन्त घटै है सो हीयमान है अर और अवधि लिंगके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिका अवस्थानतैं जा परिणामरूप उत्पन्न भयो तातैं वा परिमाण ही वा भवका चय पर्यंत तथा केवलज्ञानकी उत्पत्ति पर्यंत तिष्ठै है नहीं घटै है नहीं वधे है सो अवस्थित है अर और अवधि वायुका वेग करि प्रेरित जलकी तरंगके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी वृद्धि तथा हानिका योगतैं जा परिमाण उत्पन्न होय है तातैं यानैं यावत् वृद्धिनैं प्राप्त होनों है तावत् वधे हैं अर यानैं यावत् घटनों है यावत् घटैं हैं सो अनवस्थित है ऐसैं षट् विकल्परूप अवधि है॥४॥

वार्त्तिक—पुनरपरेऽवधेस्त्रयो भेदाः देशावधिःपरमावधिःसर्वावधिश्चेति ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा अवधिका और तीन भेद है कि देशावधि परमावधि सर्वावधि रूप हैं। टीकार्थ—बहुरि और अवधि देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ३ रूप तीन है तिनमें देशावधि जघन्य उत्कृष्ट मध्यम भेद रूप तीन प्रकार है तैसैं ही परमावधि भी जघन्य उत्कृष्ट मध्यम भेद रूप तीन प्रकार है अर सर्वावधि निर्विकल्प पणातैं एक रूप ही है तिनमें जघन्य देशावधि जो है सो उत्सेधांगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्र पर्यंत है अर उत्कृष्ट देशावधि सर्व लोक पर्यंत है,

अर इन दोऊनिका मध्यमें प्रवर्तनें वारो अनेक विकल्परूप मध्यम देशावधि है। बहुरि जघन्य परमावधि एक प्रदेश अधिक लोकक्षेत्र प्रमाण है और उत्कृष्ट असंख्यात लोक क्षेत्र प्रमाण है अर मध्यमको मध्यम क्षेत्र है कि नहीं जघन्य है कि नहीं उत्कृष्ट है, अर सर्वावधि उत्कृष्ट परमावधिका क्षेत्रतैं वाहिर असंख्यातक्षेत्र प्रमाण है अर वर्धमान १ हीयमान २ अवस्थित ३ अनवस्थित ४ अनुगामी ५ अननुगामी ६ प्रतिपाती ७ अप्रतिपाती ८ ये आठ भेद देशावधिका होय है। प्रश्न, सूत्रमें छै भेद कहे हैं अर तुम आठ भेद कैसैं कहो हो ? उत्तर, प्रतिपाती अप्रतिपाती भेद जे हैं ते उन ही छहूं भेदनिमें अंतर्गत होय है अर हीयमान तथा प्रतिपाती इनि दोउ भेदनि विना और छहूं भेद परमावधिको होय है अर अवस्थित १ अनुगामी २ वर्धमान ३ अप्रतिपाती ४ ये च्यार भेद सर्वावधिका होय है। तिनमें छै भेद तो उक्त लक्षण है अर वीजलीका प्रकाशके समान विनाशीक प्रतिपाती है अर यातैं विपरीत अविनाशी अप्रतिपाती है अवैं इनको द्रव्य क्षेत्र काल भाव कहै है तिनमें सर्व जघन्य देशावधिको क्षेत्र उत्सेधांगुलका असंख्यातमा भाग मात्र है अर आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र काल है अर अंगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्रका प्रदेश प्रमाण द्रव्य है अर ता प्रमाण क्षेत्रमें व्याप्त असंख्यात स्कंधके विषैं अनंत प्रदेश जे हैं तिनमें ज्ञान प्रवर्तै है अर अपना विषय रूप जो स्कंध तामैं प्राप्त भया जे अनंत वर्ण आदि विकल्प सो भाव है तिनमें ज्ञान प्रवर्तै है। अवैं ताकी वृद्धिकी वृद्धि कहिये है कि एक जीवकै प्रदेशोत्तरा क्षेत्र वृद्धि नहीं है परंतु नाना जीवनिकै प्रदेशोत्तर क्षेत्र वृद्धि है सो सर्व लोक पर्यंत है अर एक जीवकै तो अंगुलका असंख्यातमा भाग मूलतैं ऊर्ध्व विशुद्धिका वशतैं मीडककी गति करि अंगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्र वृद्धि है सो सर्व लोक पर्यन्त है अर नाना जीव भी प्रदेशोत्तर वृद्धि करि तितनों वधै है कि जितनों अंगुलको असंख्यातमो भाग है अर कालकी वृद्धि एक जीवकै तथा नाना जीवनिकै मूल रूप आवलीका असंख्यात-

मा भाग प्रमाण कालतैं कहूं एक समय अधिक वृद्धि होय है सो यावत् आवलीको असंख्यात-मो भाग होय अर्थात् विशेष वृद्धि होय तो आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र होय। प्रश्न, सो या क्षेत्र वृद्धि तथा काल वृद्धि कौनसी वृद्धि करि है? उत्तर, च्यार प्रकार करि है कि असंख्यात भाग वृद्धि करि, संख्यात गुण वृद्धि करि, असंख्यात गुण वृद्ध करि वृद्ध होय है ऐसैं ही द्रव्य भी वृद्धनें प्राप्त होतो च्यार प्रकार वृद्धि करि वधै है अर भाव वृद्धि छै प्रकार है कि अनंत भाग वृद्धि, असंख्यात भाग वृद्धि, संख्यात गुण वृद्धि, असंख्यात गुण वृद्धि, अनंत गुण वृद्धि या कही जो क्षेत्र काल द्रव्य भाव वृद्धिता करि सर्वलोक पर्यन्त वृद्धि जानने योग्य है। वहुरि ऐसैं ही हानि भी जानने योग्य है। वहुरि जो अंगुलके असंख्यातमा भाग अवधि क्षेत्र है ताकै आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र काल है अर अंगुलके असंख्यातवैं भाग क्षेत्र संबंध आकाशका प्रदेश प्रमाण द्रव्य है अर पूर्व भावतैं कोऊके अनंत गुणा, कोऊके असंख्यात गुणा प्रमाण भाव होय हैं। वहुरि जो अवधि अंगुल मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् न्यून आवली प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है अर जो अवधिका एक कोश मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् अधिक उच्छ्वास प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अवधि जंबूद्वीप मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् अधिक एक मास प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्व-वत् है। वहुरि जो अवधि मनुष्य लोक मात्र क्षेत्रको है ताकै एक संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अवधि रुचक नामा तेरमूं द्वीप जो है ताका अन्त प्रमाण क्षेत्रको है ताकै प्रथक्त्व संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अधिक संख्यात द्वीप समुद्र प्रमाण क्षेत्रको है ताकै असंख्यात संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है ऐसैं जघन्य तथा उत्कृष्ट तिर्यग् क्षेत्र संवन्धी मनुष्यनिको देशावधि कह्यो। अवै तिर्यंचनिको उत्कृष्ट देशावधि कहिये है कि क्षेत्र तो असंख्यात द्वीप समुद्र है अर काल असंख्यात

संवत्सर है अर तैजस शरीर प्रमाण द्रव्य है। प्रश्न, सो तैजस शरीर कितनों है? उत्तर, असंख्यात द्वीप समुद्र संवन्धी आकाशका प्रदेशांके प्रमाण असंख्याता तैजस शरीरकै योग्य द्रव्य वर्गणा जे हैं तिन करि रच्यो है तितना असंख्याता स्कंधनिनैं तथा अनंत प्रदेशनिनैं जानैं है सो भाव है ऐसैं पूर्ववत् तिर्यंचनिको तथा मनुष्यनिको जघन्य देशावधि है। वहुरि तिर्यंचनिकै देशावधि ही होय है, परमावधि सर्वावधि नहीं होय है तथा अनन्तर मनुष्यनिकै उत्कृष्ट देशावधि कहिये है कि असंख्याता द्वीप समुद्र प्रमाण तो क्षेत्र है अर असंख्याता संवत्सर प्रमाण ही काल है अर कार्माण द्रव्य परिमाण द्रव्य है। प्रश्न, वो कार्माण द्रव्य कितनोंक है? उत्तर, असंख्यात द्वीप समुद्र संवंधी आकाशकै प्रदेशनिकै प्रमाण असंख्याता ज्ञानावर्णादि कार्मण द्रव्य वर्गणा है सो कार्मण द्रव्य है अर भाव पूर्ववत् जाननें कि उतना ही असंख्याता स्कंधनिनैं तथा अनंत प्रदेशनिनें जानै है सो भाव है या देशावधि उत्कृष्ट मनुष्यनिमें संयतीनिकै होय है। अवैं परमावधि कहिये है कि जघन्य परमावधिको क्षेत्र एक प्रदेशादिक लोक प्रमाण है अर प्रदेशादिक लोक लोकाकाशका प्रदेशांको धारण कियो है प्रमाण जानें ऐसैं अविभागी समय है ते असंख्याता संवत्सर है अर प्रदेशादिक लोकाकाशका प्रदेशांको धारण कियो है प्रमाण जानैं सो द्रव्य है अर भाव पूर्ववत् है या उपरांति क्षेत्र वृद्धि कहिये है कि नाना जीवनिकै तथा एक जीवकै अवशेष करि विशुद्धिका वशतैं असंख्याता लोक प्रमाण वृद्धि है सो यावत् उत्कृष्ट परमावधिको क्षेत्र है तावत् असंख्याता लोक प्रमाण वृद्धि है। प्रश्न, वो असंख्यात कितनोंक है? उत्तर, आवलीका असंख्यातमा भाग प्रमाण है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् है अर लोक सहित अलोकाकाशका प्रमाण असंख्यात लोक उत्कृष्ट परमावधिको क्षेत्र है। प्रश्न, वे असंख्यात लोक कितनें है! उत्तर, अग्निकायका जीवांके तुल्य है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् जाननें सो यो तीनूं

प्रकारको ही परमावधि उत्कृष्ट चारित्रके ही होय है औरकै नहीं होय है अर वर्द्धमान ही है, हीयमान नहीं है अर अप्रतिपाती है प्रति पाती नहीं है अर जाकै लोक सहित अलोक प्रमाण असंख्यात लोकमें यावत् उत्पन्न भयो है ताकै तावत् अवस्थित रहवातें अवस्थित है, अर्थात् उतना प्रमाणतें घटै नहीं है अर अनवस्थित भी है परन्तु वृद्धि प्रति है हानि प्रति नहीं है अर या लौकिक देशांतर गमनतें अनुगामी है अर्थात देशांतरमें जावते नहीं छूटै है यातें अननुगामी है अर्थात् या उत्कृष्ट परमावधि चरम शरीरीके ही होय है यातें अनुगामी है अर्व सर्वावधि कहिये है कि असंख्यातनिकै असंख्यात भेद पर्णां है यातें उत्कृष्ट परमावधिको क्षेत्र जो है सो असंख्यात लोक गुणित होय सो याको क्षेत्र है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् है। सो यो वर्द्धमान भी नहीं है अर हीयमान भी नहीं है प्रतिपाती भी नहीं है क्योंकि संयमरूप भवका क्षेत्रतें पूर्ववत् अवस्थित है यातें अप्रतिपाती है अर भवांतर प्रति अनुगामी है कि याकै अन्य जन्म नहीं है अर देशांतर प्रति अनुगामी है अर सर्व शब्दकै सकलार्थवाची पणातें द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि सर्वावधिकै अंतरगत परमावधि है यातें परमावधि भी देशावधि ही है तातें अवधि दोय प्रकार ही है कि एक सर्वावधि दूसरी देशावधि है अर और सुनूं कि कही वृद्धिके विषै जा समय काल वृद्धि है ता समय च्यारनिकी वृद्धि नियम रूप है अर क्षेत्र वृद्धितें होतां संतां काल वृद्धि भाज्य है कि होय है अथवा नहीं होय है अर द्रव्यकी तथा भावकी वृद्धि नियम रूपा है अर द्रव्यकी वृद्धितें होतां संता भाव वृद्धि नियमरूपा है अर क्षेत्रकी वृद्धि तथा कालकी वृद्धि भाज्य है कि होय अथवा नहीं होय अर भाव वृद्धितें होतां संता भी द्रव्यकी वृद्धि नियम रूप है अर क्षेत्रकी तथा कालकी वृद्धि भाज्य है कि होय अथवा नहीं होय सो यो अवधि ज्ञानोपयोग दोय प्रकार है कि एक तो एक क्षेत्र रूप है दूसरो अनेक क्षेत्र रूप है तिनमें श्री ऋषभ स्वस्तिक नंद्यावर्त आदि चिह्न जे है तिनमें कोऊ उपयोगको

वाह्य उपकरण है विद्यमान जाकै ऐसो अवधि है सो एक चेत्र है अर वे ही अनेक वाह्य उपकरण जे हैं तिनमें उपयोग है विद्यमान जाकै ऐसो अवधि जो है सो एक चेत्र है। भावार्थ—जा पुरुषकै पूर्वोक्त चिह्नमेंसूं एक चिन्ह होय ताकै एक चेत्ररूप अवधि होय है अर सर्व चिन्ह होय ताकै अनेक चेत्ररूप अवधि होय है अर्थात् ये वाह्य चिन्ह हैं तिनमें आत्म प्रदेशनिके उपरिका आवरणको ही चयोपशम भयो है तातैं तहांतैं ही जानैं है सो गोमट्टसारमें कह्यो है। गाथा—

भवपच्चयिगो सुरणिरयाणं तित्थेवि सव्व अंगुत्थो।
गुणपच्चगौणरतिरियाणं संखादिचिन्हभवो ॥

संस्कृत—भवप्रत्ययोवधिज्ञानं सुरनारकाणां तीर्थंकरेपि सर्वांगोत्थं।
गुणप्रत्ययावधिज्ञानं नरतिरश्चां संखादिचिन्हभवः॥

अर्थ—तहां भव प्रत्यय अवधिज्ञान देवनिकै अर नारकीनिकै तथा अंतको है शरीर जिनकै ऐसे तीर्थंकरनिकै संभवै है सो अवधि तिनकै सर्व अंगतैं उत्पन्न भयो है अर्थात् सर्व आत्म प्रदेशनिके उपरि तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यांतराय ये ही जे दोय कर्म तिनका चयोपशमतैं उत्पन्न भयो है अर गुण प्रत्यय अवधि ज्ञान जो है सो पर्याप्त मनुष्यनिकै अर तिर्यंचनिकै होय है तिनमें भी संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यंच मनुष्यनिकै संभवै है सो अवधि तिनकै शंखादि चिन्होद्भव है अर्थात् नाभिकै उपरि शंख पद्म वज्र स्वस्तिक मीन कलश आदि शुभ चिन्ह करि व्याप्त आत्म प्रदेशनिकै उपरि तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय ये ही जे दोय कर्म तिनका चयोपशमतैं उत्पन्न भयो है अर भव प्रत्यय अवधि ज्ञानकै विषैं दर्शन विशुद्धयादि गुणका सद्भावनैं होतां संता भी दर्शन विशुद्धयादि गुण की अपेक्षा-विना ही भव प्रत्ययपणौं जानने योग्य है। अर गुण प्रत्यय अवधिज्ञानकै विषैं तिर्यग्मनुष्य-भवका सद्भावनैं होतां सता भी तिर्यग्मनुष्य भवकी अपेक्षा विना ही गुण प्रत्ययपणौं जानवे

योग्य है। प्रश्न, ऐसैं है तो पराधीन पणांतैं अवधिकै भी परोक्ष पणांको प्रसंग आवे है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इन्द्रियनिकै विषैं ही परपणां की रूढि है यातैं सो ही कहै है। श्लोक—इन्द्रियाणि पराण्याहुरिंद्रियेभ्यः परं मनो। मनसस्तु परावुद्धिर्बुद्धेः परतरो हि सः ॥१॥ अर्थ—इन्द्रिय जे हैं ते पर है अर इंद्रियनितैं परे मन है अर मनतैं परे इन्द्रिय जनित ज्ञानरूपा वुद्धि है अर वुद्धितैं परे जो है सो आत्मा है ॥१॥ ऐसैं वहुत प्रकार अवधिज्ञान व्याख्यान कियो है ॥५॥२२॥ अवे तेईसमा सूत्र की उत्थानिका कहै है कि अवसर प्राप्त मनःपर्यय जो है ताके भेद पुरःसर लक्षण कहनेको इच्छुक सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥

अर्थ—ऋजुमति अर विपुलमति भेदरूप मनःपर्यय दोय प्रकार है। वार्तिक—ऋज्वी निर्वर्तिता प्रगुणा च ॥१॥ अर्थ—रच्या हुवा सरल अर्थनैं जानै सो ऋजुमति है। टीकार्थ—कोऊ कारणतैं रच्यौ अर सरल जो वचन काय मनकृत अर्थ अर पराया मनमें प्राप्त भयो ताका जाननतैं ऋज्वी कहिये सरल है वुद्धि जाकी सो ऋजुमति कहिये ॥१॥ वार्तिक—अनिर्वर्तिता कुटिला च विपुला ॥२॥ अर्थ—नहीं रच्या कुटिल अर्थनैं जानैं सो विपुलमति है। टीकार्थ—कोऊ कारणतैं नहीं रच्यो जो वचन मन काय कृत अर्थ अर पराया मनमें प्राप्त भयो ताका जाननतैं विपुल है मति जाकी सो विपुलमति है अर ऋजुमति तथा विपुलमती जो है सो ऋजुविपुलमती है या सूत्रमें एक मति शब्दकै गतार्थपणांतैं दूसरा मति शब्दको अप्रयोग है अर्थात् एक मति शब्द ही दोउनिकै साथ लगानेतैं अर्थकी प्राप्ति होय है अथवा ऋजु अर विपुल सो ऋजुविपुल है अर ऋजु विपुल ऐसी है मति कहिये वुद्धि जिनकी ते ऋजुविपुलमती है सो यो मनःपयय दोय प्रकार है कि एक ऋजुमती है दूसरो विपुलमती है। प्रश्न, इहां वक्तव्य ज्ञानकै भेद है अर ऋजुमती

विपुलमती शब्द ज्ञानकै वाचक है सो कैसैं है ? उत्तर, ज्ञान ज्ञानीकै आधार है तातैं आधारकै भेदतैं आधेयमें भेद जानना तथा अनेकांततैं कथंचित् ज्ञानी अर ज्ञान एक ही है तातैं दोष नहीं है। प्रश्न, ऐसैं इहां भेद तो कहे अवैं याको लक्षण कहने योग्य है। उत्तर कहिये है। वार्तिक—मनःसंबंधेन लब्धवृत्तिर्मनःपर्ययः ॥३॥ अर्थ—मनका सम्बन्ध करि पाई है प्रवृति जानैं सो मनःपर्यय ज्ञान है। टीकार्थ—वीर्यान्तरायका तथा मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं अर आंगोपांग नामा नामकर्मको जो लाभ ताका प्राप्त होवातैं अपना अर परका मनका संबंध करि प्राप्त भई है वृत्ति जानैं ऐसो उपयोग जो है सो मनःपर्यय है। प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—मतिज्ञानप्रसंग इति चेन्नाऽन्यदीयमनोऽपेक्षामात्रत्वादभ्रे चंद्रव्यपदेशवत् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, मनका संबंध होनेतैं मतिज्ञानको प्रसंग आवे है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पराया मनकी अपेक्षा मात्र पणौं है यातैं वादलमें चंद्रमाका नामकै समान है। टीकार्थ—जैसैं मन अर चक्षु आदि इंद्रिय जे हैं तिनका संबन्धतैं चक्षु आदि ज्ञान प्रगट होय है सो मतिज्ञान है तैसैं ही मनःपर्यय भी मन संबन्धतैं पाई है वृत्ति जानैं ऐसो है यातैं मतिज्ञान नामनैं प्राप्त होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, पराया मनको अपेक्षा मात्र पणातैं। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अभ्रके विषैं चन्द्रका उपदेशकै समान है सो ऐसैं है कि जैसैं अभ्रमें चन्द्रमाने देखो यामें अभ्र अपेक्षारूप कारण मात्र है अर चक्षु आदिकै समान चंद्र ज्ञानको उत्पन्न करनवारो नहीं है तैसैं ही परायो मन भी अपेक्षा रूप कारण मात्र है कि पराया मनमैं तिष्ठता अर्थनैं मनःपर्यायकै जानै है तातैं या मनःपर्ययकै पराया मनकै आधीन उत्पन्न होनौं नहीं है यातैं मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। वार्तिक—स्वमनो देशे वा तदावरणकर्मक्षयोपशमव्यपदेशाच्चक्षुष्यवधिज्ञाननिर्देशवत् ॥५॥ अर्थ—अपना मनोदेशमैं वा स्थानका आवरणका क्षयोपशम नामतैं नेत्रनिकैं विषैं अवधिज्ञानका नामकै समान है। टीकार्थ—अथवा जैसैं चक्षुदेशस्थ आतम प्रदेशनिकै अवधिज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं चक्षुकै विषैं अवधिज्ञानको

नाम इष्ट है अर अवधिज्ञान मतिज्ञान नहीं है तैसैं ही मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं अपना मनोदेशस्थ आत्मप्रदेशनिके मनः पर्यय नाम है अर या मनःपर्ययकै मतिज्ञान पणौं नहीं है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—मनःप्रतिबंधज्ञानादनुमानप्रसंग ; इति चेन्न प्रत्यक्षलक्षणाऽविरोधात् ॥६॥ अर्थ—पराया मनका संबधतैं भयो ज्ञान है यातैं अनुमानको प्रसंग आवै है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रत्यक्ष लक्षणतैं याके अविरोध है यातैं। टीकार्थ—जैसैं धूमतैं मिल्या अग्निकै विषैं धूमका बंधतैं अनुमान होय है तैसैं ही पराया मनका संबन्धतैं वा मनतैं मिल्या पदार्थनिनैं जानतो संतो मन पर्यय ज्ञान अनुमान है? उत्तर, सो नहीं। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर, प्रत्यक्ष लक्षणतैं अविरोध है यातैं क्योंकि जो प्रत्यक्ष लक्षण कह्यो है कि इंद्रिय अनिंद्रियको अपेक्षा रहित अर व्यभिचार रहित अर साकारको ग्रहण जामैं होय सो प्रत्यक्ष है ऐसा प्रत्यक्ष लक्षणकरि मनःपर्ययके अविरोध है यातैं मनःपर्यय अनुमान नहीं हैं अर अनुमान प्रत्यक्ष लक्षणकरि विरोधनैं प्राप्त होय सो ऐसैं है कि ॥ ६ ॥ उपदेशपूर्वकत्वाच्चक्षुरादिकरणनिमित्तत्वाद्वानुमानस्य ॥ ७ ॥ वार्तिक—अथवा अनुमानकै उपदेशपूर्वक पणांतैं अर चक्षु आदि करणका निमित्त पणांतैं प्रत्यक्ष लक्षणतैं विरोध है यातैं। टीकार्थ—अथवा निश्चय करि उपदेशतैं ही यो अग्नि है यो धूम है ऐसैं जानिकरि पीछैं चक्षु आदि करणका संबन्धतैं धूमका दर्शनतैं अग्निकै विषैं अनुमान करै है तातैं या अनुमानकै कह्यो प्रत्यक्ष लक्षण विरोधतैं प्राप्त होय है। तैसैं मनःपर्यय उपदेश चक्षु आदि करणका संबंधनैं नहीं अपेक्षा करै है ॥७॥ वार्तिक—स द्वेधा सूत्रोक्तविकल्पात् ॥ ८ ॥ अर्थ— सो सूत्रोक्त विकल्पतैं दोय प्रकार है। टीकार्थ—वो मनःपर्यय दोय प्रकार है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, सूत्रोक्त विकल्पतैं ऋजुमति विपुलमति है ॥८॥ वार्तिक—आद्यस्त्रेधार्जुमनोवाक्कायविषयभेदात् ॥ ९ ॥ अर्थ—सरल मन वचन कायरूप विषयका भेदतैं ऋजुमति तीन प्रकार है। टीकार्थ—आदिको

ऋजुमति मन पर्यय तीन प्रकार है। प्रश्न, काहेत ? उत्तर, सरल मन वचन कायरूप विषय भेदतैं ऋजुमन कृत अर्थको जाननें वारो ऋजु वचन कृत अर्थ जानने वारो अर ऋजु काय कृत अर्थको जाननें वारो है सो ऐसैं है कि मन करि प्रगट अर्थनैं चिन्तवन करि अथवा धर्मादि युक्त असंकीर्ण वचननैं उच्चारण करि अथवा उभय लोक संबंधी फलका निष्पादनकै अर्थ अंगोपांगका तथा प्रत्यंगका निपातन संकोचन प्रसारण आदि लक्षण काय प्रयोग करि बहुरि लगता ही समयमें अथवा कालांतरमें वा ही अर्थनैं मन करि चिंतवन कियो वचन करि कह्यो काय करि कियो है तौ हू विस्मरण पणांतैं चिंतवन करनेंकूं समर्थ नहीं होय है या प्रकारको वो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति मन पर्यय ज्ञानको धारक प्रश्न करतां संता तथा नहीं प्रश्न करतां संता जानै है कि जो यो अर्थ या विधि करि तुमनैं चिंतवन कियो है तथा यो अर्थ या विधिकरि कह्यो है तथा यो अर्थ या विधिकरि कियो है। प्रश्न, यो अर्थ कैसैं प्राप्त होय है ? उत्तर, आगमका अविरोधतैं निश्चय करि आगममें कहै है कि मन करि मननैं प्राप्त होय परका चिंतादिकनिनैं जानें है। इहां मन शब्द है सो आत्मना ऐसा अर्थको वाचक है तातैं वा करि पराया मननैं सर्व तरफतैं प्राप्त होय जानैं है अर मन करि चिंतित सचेतन अचेतन अर्थ जो है ताको मनमें तिष्ठनैंतैं मन नाम है ताको दृष्टांत ऐसो है कि मंचमें तिष्ठते पुरुषनिको मंच नाम होय है तैसैं जाननों अर्थात् वा पराया मनमें तिष्ठता अर्थनैं आत्मा जो है सो आप करि जांणि अपनी तथा परकी चिंता जीवित मरण सुख दुःख लाभ अलाभ आदिनैं जानैं हैं सो व्यक्त मनवान जीवनिका अर्थनैं जानैं है अव्यक्त मनवाननिका अर्थनैं नहीं जानैं है। इहां व्यक्त नाम प्रगट कीया अर्थको है अर जिननैं चिंतवन करि भले प्रकार रच्यो है ते जीव व्यक्त मन हैं तिन करि चिंतवन कियो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति जानैं है और अव्यक्त मनवाननिकरि चिंतवन कीयो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति नहीं जानै है अर यो मनःपर्यय ज्ञानका-

लतैं जघन्य करि अन्य जीवनिका तथा अपना दोय तीन भव ग्रहणनैं गति आगतिकरि प्ररूपण करै है अर उत्कृष्ट करि अन्यका तथा अपना सात आठ भव ग्रहणनैं गति आगतिकरि प्ररूपण करै है अर क्षेत्रमैं जघन्य करि पृथक्त्व कोशके मध्यवर्तीनैं जानैं है वाहिर कानैं नहीं जानैं है अर उत्कृष्ट करि पृथक्त्व योजनके मध्यवर्तीनैं जानैं है वाहिर कानैं नहीं जानैं है ॥ ६ ॥ वार्तिक—द्वितीयः षोढा ऋजुवक्रमनोवक्कायविषयभेदात् ॥ १० ॥ अर्थ—ऋजु अर वक्र मन वचन काय रूप विषयका भेदतैं दूसरो छै प्रकार है। टीकार्थ—दूसरो विपुलमती नामा मनःपर्यय छै प्रकार भेदतैं प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, ऋजु अर वक्र जे मन वचन काय रूप विषय तिनका भेदतैं तिनमैं ऋजुमतिका विकल्प तौ पूर्वोक्त जानना अर वक्रका विकल्प उनतैं विपरीत जोड़ने योग्य है तथा अपना अर परका चिंता जीवित मरण सुख दुःख लाभ अलाभ आदि अव्यक्त मनवाननि करि तथा व्यक्त मनवाननिकरि चिंतित अचिंतित जे हैं तिननैं विपुलमती जानैं है अर कालतैं जघन्य करि सात आठ भव ग्रहणनैं प्ररूपण करै है अर उत्कृष्ट करि असंख्याता भव ग्रहणनैं गति आगति करि प्ररूपण करै है अर क्षेत्रतैं जघन्य करि पृथक्त्व योजन वर्तीनैं अर उत्कृष्ट करि मानुषोत्तर पर्वतके मध्य वर्तीनैं प्ररूपण करै है वाहिर कानैं नहीं प्ररूपण करै है ॥ १० । २३ ॥ अवैं चौवीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि ऐसैं दोय प्रकार मनः पर्यय ज्ञाननैं वर्णन कियो ताकै परस्परतैं और भी विशेष है या नहीं है ऐसा प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

विशुद्धि प्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥

अर्थ—विशुद्धि अर अप्रतिपात जे हैं तिन करि तिन दोउनिमैं विशेष है। अर्थ—विशुद्धि अर अप्रतिपात इनि दोऊ गुणनितैं दोऊनिमैं विशेष है तहां मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयो

पशमनैं होतां संता आत्माकै जो उज्वलता है सो विशुद्धि है अर पीछा पड़ना जो है सो प्रतिपात है सो उपशांत कषायकै चारित्र मोहका उत्कट पणांतैं प्रच्युत भयो है संयमको शिखर जाकै ताकैं प्रतिपान होय है अर क्षीण कषायकै प्रतिपातका कारण जे हैं तिनका अभावतैं अप्रतिपात होय है इनको समास पूर्वक अर्थ ऐसो होय है कि विशुद्धि अर अप्रतिपात जो है विशुद्ध प्रतिपातो कहिये अर ये विशुद्धि अर अप्रतिपात जे हैं तिन करि तिन दोऊनिमैं विशेष है सो तद्विशेष है। प्रश्न, पूर्व सूत्रकै विषैं ही तिनको विशेष भलै प्रकार जानिये है। वहुरि यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है। उत्तररूपवार्त्तिक—विशेषान्तरप्रतिपत्यर्थं पुनर्वचनम् ॥१॥ अर्थ—विशेषकी प्रतीतिकै अर्थ पुनः सूत्र कियो है। टीकार्थ—जो सूत्रमें विशेष कह्यो तितना करि ही या शिष्यकै संतोष नहीं होय है तातैं और विशेष जनावनें निमित्त वहुरि यो सूत्र कहिये है। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—च शब्दप्रसंग इति चेन्न प्राथमिकल्पिकभेदाभावात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, च शब्दको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रथम सूत्रमैं कह्यो जो मनःपर्यय ताकै भेदनिको अभाव है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, ऐसैं है तो सूत्र मैं च शब्द कहनेंको प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है जैसैं मनःपर्यय ज्ञानका ऋजुमती अर विपुलमती भेद है तैसैं ही विशुद्धि अर अप्रतिपात भी वा ही मनःपर्ययका भेद होय तौ च शब्द सूत्रमैं कहनों योग्य होय यातैं विशुद्ध तथा अप्रतिपात ये दोऊ ऋजुमति विपुलमतिका विशेष है, भेद नहीं है तातैं च शब्दको अप्रयोग है तिनमैं विशुद्धकरि प्रथम ऋजुमति जो है तातैं विपुलमति द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि विशुद्धतर है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, इहां कार्मण द्रव्यका अनंत भाग जे हैं तिनकै विषैं अन्त्यको भाग सर्वावधि ज्ञान करि जानिये है। वहुरि वा अनंत भाग रूप कियाको अनंतमू भाग ऋजुमति मनःपर्ययकै जाननें योग्य है। प्रश्न, अनंतमा भागका भी अनंतमा भाग कह्या सो कैसैं है? उत्तर, अनंतकै अनंत भेद पणौं है यातैं अर ऋजुमतिका विषय रूप कार्मण द्रव्यका अनंत भागतैं दूर विप्रकृष्ट

अति अल्प स्वरूप अनन्तमूं भाग जो है सो विपुल मतिको विषय है ऐसैं द्रव्य क्षेत्र कालकी विशुद्धितो कही, अर भावतैं विशद्ध सूक्ष्मतर द्रव्यका विषय पणातैं ही जानवे योग्य है अर प्रकृष्ट क्षयोपशम विशुद्धि रूप भावका योगतैं अप्रतिपात जो हैं ताकरि भी विपुलमति विशेष है क्योंकि विपुलमतिका स्वामीकै कषायका उत्कृष्ट क्षयोपशम विशुद्धि रूप भावका योगतैं अप्रति पाति जो हैं ताकरि भी विपुलमति विशेष हैं क्योंकि विपुलमतिका स्वामीकैं कषायका उत्कट पणांतैं हीयमान चरित्रको उदय पणौं है यातैं ॥ २ ॥ २४ ॥ अवैं पच्चीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि या मनःपर्ययकै अपना स्वरूप प्रति यो विशेष है तो ये अवधिमनःपर्ययकै अपना स्वरूप प्रति यो विशेष है तो ये अवधि मनःपर्यय जे हैं तिनकै विषैं काहेतैं विशेष है ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥२५॥

अर्थ—विशुद्धि क्षेत्र स्वामी विषय जे हैं तिन करि अवधिमैं अर मनः पर्ययमैं विशेष है। टीकार्थ—उज्वलता जो है सो तो विशुद्धि है अर जहां तिष्ठता भावनिनैं प्राप्त हूजिये सो क्षेत्र है अर प्रेरक जो है सो स्वामी है अर ज्ञेय जो है सो विषय है। प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अवधिज्ञानान्मनःपर्ययस्य विशुद्ध्यभावोऽल्पद्रव्यविषयत्वादिति चेन्न भूयेः पर्यायज्ञानात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, अवधिज्ञानतैं मनःपर्यय ज्ञानकै विशुद्धिको अभाव है क्योंकि मनःपर्ययकै अल्प द्रव्य विषय पणौं है यातैं? उत्तर, सो नही है क्योंकि प्रचुर पर्यायनिकौ ज्ञान है तातैं। अर्थ—प्रश्न, अवधिज्ञानतैं मनःपर्ययज्ञान अविशुद्धतर है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अल्प द्रव्य विषय पणांतैं जातैं सर्वावधिका विषय रूप रूपी द्रव्य जो है ताको अनंतमो भाग मनःपर्ययको विषय रूप द्रव्य है सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वाहुल्यता करि पर्यायको ज्ञान है यातैं सो जैसैं कोऊ

पुरुष तो बहुत शास्त्रनिनैं एक देश करि व्याख्यान करै है परन्तु समस्त पणां करि उनमें प्राप्त भया अर्थनिनै कहनेंकूं समर्थ नहीं होय है अर दूसरो पुरुष एक शास्त्रनैं समस्त पणां करि व्याख्यान करै है सो वाकै जितनें अर्थ हैं तितनें सर्व अर्थनिनैं कहनेंकूं समर्थ होय है तातै यो पूर्व वक्तातैं विशुद्धतर विज्ञानवान है तैसैं अवधिज्ञानको विषय रूप द्रव्य जो है ताका अनंतमां भागकूं जाननें वारो है तौ हू मनःपर्यय ज्ञान विशुद्धतर है यातैं वा अनंतमा भाग रूपादिक बहु पर्यायनि करि प्ररूपण करै है ऐसैं विशुद्धि कही अर क्षेत्र पूर्वै कह्यो अर विषय आगे कहेंगे अर स्वामित्व प्रति कहिये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—विशिष्टसंयमगुणैकार्थसमवायी मनःपर्ययः ॥२॥ अर्थ—विशेषरूप संयम गुणकरि एकार्थ समवायी मनःपर्यय ज्ञान है कि जाकै विशुद्धि संयम होय ताही कै मनःपर्यय होय है। टीकार्थ—जहां विशेष संयम गुण विद्यमान है तहां मनःपर्यय प्रवर्तै है तैसैं ही है कि मनुष्यनिकै विषैं मनःपर्यय प्रकट होय है अर देव नारकी तिर्यञ्चनिकैं विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर मनुष्यनिमैं उत्पन्न हो तो संतो गर्भजनिकै विषैं उत्पन्न होय है परन्तु सम्मूर्छनकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर गर्भजनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो. कर्मभूमिजनिकै विषैं उत्पन्न होय है। भोगभूमिजनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर कर्म भूमिजनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो पर्याप्तनिकै विषैं उत्पन्न होय है अपर्याप्तनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर पर्याप्तनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं ही उत्पन्न होय है। मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यग्दृष्टी सम्यग्मिथ्यादृष्टीनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है। अर सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो संयमीनिकै विषैं उत्पन्न होय है अर संयत सम्यग्दृष्टी संयतासंयत सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर संयतीनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो प्रमत्त आदि क्षीण कषाय पर्यंत गुण स्थाननिकै विषैं उत्पन्न होय है औरनिमैं नहीं उत्पन्न होय है अर तिन गुण स्थाननिमैं भी उत्पन्न होतो संतो वर्द्धमान चारित्र वानकै विषैं उत्पन्न होय है। हीयमान

चरित्र वानकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर वर्द्धमान चारित्रवानकै भी उत्पन्न होतो संतो सप्त विधि ऋद्धिमैंसूं कोऊ ऋद्धि प्राप्तकै विषैं उत्पन्न होय है औरनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर ऋद्धिप्राप्तनिकै विषैं भी कोउसाकै उत्पन्न होय है सर्वकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है यातैं विशिष्ट संयम पदको ग्रहण वाक्यमैं है। बहुरि अवधिज्ञान च्यारूं गतिवाननिकै विषैं उत्पन्न होय है। ऐसैं स्वामीका भेदतैं भी इनमैं विशेष है ॥ २ ॥ २५ ॥ अवैं छव्वीसमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि अवैं केवलज्ञानको लक्षण कहनेंको अवसर है तानें उल्लंघन करि ज्ञाननिका विषयको नियम परीक्षा करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, केवलज्ञानकै "मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतरायक्षयाच्च केवलम्" ऐसैं सूत्रकार करि ही वक्ष्यमाण पणौं है यातैं प्रश्न, जो ऐसैं है तो आदिके मति श्रुत जे हैं तिनका विषयनिको नियम कहौ ? उत्तर, ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥

अर्थ—मतिज्ञानका अर श्रुतज्ञानका विषयको नियम असर्व पर्यायवान छहूं द्रव्यनिकै विषैं है। टीकार्थ—निवंधन कहिये नियम जो है सो निवंध है। प्रश्न, कौनको ? उत्तर, मति श्रुतका विषयको। प्रश्न, ऐसैं है तो सूत्रमैं विषय शब्दको ग्रहण करनें योग्य है ? उत्तर, नहीं कर्तव्य है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूपवार्तिक—प्रत्यासत्तेः प्रकृतविषयग्रहणाभिसंबंधः ॥ १ ॥ अर्थ—निकटतातैं प्रकरणमैं आया विषयांका ग्रहणको अभिसंबंध है। टीकार्थ—विषयको ग्रहण प्रकरण प्राप्त है। प्रश्न, प्रकरण प्राप्त कहां है ? उत्तर, विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्यः या सूत्रमैं विषय शब्द है तहांतैं निकटपणांतैं विषयको ग्रहण इहां भलेप्रकार संवंधनैं प्राप्त करिये है। प्रश्न, यो विषयशब्द विभक्तयन्तकरि दिखायो है तातैं इहां संवंध होनेंकूं समर्थ नहीं है ? उत्तर, अर्थका वशतैं

विभक्तिको विपरिणाम होय है जैसैं देवदत्तस्योच्चानि गृहाणि आमंत्रयस्वैनं देवदत्तमिति, याको अर्थ ऐसो है कि देवदत्तका ग्रह उच्च है या देवदत्तनैं आमन्त्रण करहु यामैं देवदत्त शब्द षष्ठ्यन्त है ताकूं ही दूसरां द्वितीयांतकरि ग्रहण कीयो है देवदत्तका गाय अश्व हिरण है अर यो धनवान है, विधवाको पुत्र है। इहां षष्ठ्यन्तकूं प्रथमांत करि कह्यौ है इहां भी ऐसैं ही नियम है। प्रश्न, कौनको ? उत्तर, विषयको अभिसंबंध षष्ठचन्त करि करिये है ॥ १ ॥ प्रश्न, द्रव्येषु ऐसो वहु वचन कहा निमित्त है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—द्रव्येष्विति बहुत्वनिर्देशः सर्वद्रव्यसंग्रहार्थः ॥ २ ॥ अर्थ—उत्तर, द्रव्येषु ऐसो वहु वचन रूप निर्देश सर्व द्रव्यनिका संग्रहकै अर्थि है। टीकार्थ—जीव, धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल है नाम जिनकै ऐसैं षट् द्रव्य है तिन सर्वनिका संग्रहकै निमित्त द्रव्येषु ऐसैं वहु वचनको निर्देश करिये है। वार्त्तिक—तद्विशेषणार्थमसर्वपर्यायग्रहणम् ॥ ३ ॥ अर्थ—मतिज्ञान श्रुतज्ञानका विशेषणकै अर्थ असर्व पर्याय पदको ग्रहण कियो है। टीकार्थ—तिन द्रव्यनिको अवशेष करि मति श्रुतकै विषय भावको प्रसंग होत संतै द्रव्यनिका विशेषणकै अर्थ असर्वपर्याय शब्दको ग्रहण करिये है अर मति श्रुतका विषय भावनैं प्राप्त भया जे वै द्रव्य ते कितनेंक पर्यायनि करि विषय भावनैं प्राप्त होय है। अनंती सर्व पर्यायनिकरि विषय भावनैं नहीं प्राप्त होय है। इहां मति है सो चक्षु आदि इंद्रिय निमित्त जानैं ऐसी है अर वा मति जो रूपादिकनिको आलंबन करनें वाली है सो जा द्रव्यकै विषैं रूपादिक है ता द्रव्यकै विषैं प्रवर्तै है परंतु तहां सर्व पर्यायनिनैं नहीं ग्रहण करै है। चक्षु आदिका विषयनिनैं ही आलंबन करै है अर श्रुत भी शब्द लिंग है कि शब्द है निमित्त जानैं ऐसो है अर सर्व शब्द संख्याते ही हैं अर द्रव्य पर्याय जे हैं ते संख्याते अनंत भेद रूप है। भावार्थ—द्रव्य करि तो संख्यात भेद रूप है अर पर्यायनि करि अनंत भेद रूप है ते सर्व विशेषाकार करि तिन शब्दनि करि विषय

रूप नहीं करिये है अनभिलाप्यानां कहिये नहीं कहनेमें आवै अर्थात् केवलज्ञानके गोचर ऐसैं जीवादि पदार्थनिकै अनंत भागनिमैं एक भाग मात्र जीवादिक पदार्थ जे हैं ते प्रज्ञापनीय कहिये है अर वै प्रज्ञापनीय भाव हैं ते श्रीमत्तीर्थंकरका सातिशय दिव्यध्वनि करि प्रतिपादन करनें योग्य होय है अर वा सातिशय दिव्यध्वनि करि प्रतिपादित प्रज्ञापनीय भाव जे जीवादिक पदार्थ तिनका अनंत भागनिमें एक भाग मात्र द्वादशांग श्रुत स्कंधको निवंध कहिये विषय पणां करि नियम रूप होय है अर्थात् श्रुत केवलीनिकै भी अगोचर अर्थ जे है ताकै प्रतिपादनकी है शक्ति जा विषैं ऐसी दिव्यध्वनि अर वा दिव्यध्वनिकै भी अगोचर जीवाद्यर्थनिका ग्रहणकी शक्ति केवलज्ञानमें है। भावार्थ—केवलज्ञान गोचर जीवादिक पदार्थनिको स्वरूप जो है ताका अनंतमां भागनैं दिव्यध्वनि जनावै है अर ता दिव्यध्वनिका जनाया अर्थ का अनंतमूं भाग श्रुतको विषय है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—अतिन्द्रियेषुमतेरभावात्सर्वद्रव्यासंप्रत्यय इति चेन्न नोइंद्रियविषयत्वात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, इंद्रिय पादार्थनिकै विषैं मतिज्ञानका अभावतैं सर्व द्रव्यकी अप्रतीति है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि उन द्रव्यनिकै नो इंद्रियको विषय पणौं है यातैं। अर्थ—प्रश्न, धर्मास्थिकायादिकनिकै विषैं मतिज्ञानको अभाव है क्योंकि तिनकै अतींद्रिय पणौं है यातैं तातैं सर्व द्रव्य विषय निवंधा मतिज्ञान है ऐसो लक्षण अयुक्त है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, तिनकै नो इंद्रिय विषय पणौं है यातैं नो इंद्रियावरणका क्षयोपशम विशेषकी उपलब्धि जो है ताकी है अपेक्षा जाकै ऐसो नो इंद्रिय तिन धर्मास्तिकायादिकनिकै विषैं प्रवर्तै है अर जो निश्चय करि तिनकै विषैं नो इंद्रिय नहीं वर्तती तौ अवधिकै साथि ही श्रुतज्ञाननैं भी उपदेश करता कि यो भी रूप द्रव्यकै विषैं ही प्रवर्तै है यातैं तथा सर्वार्थ सिद्धिमें पूज्यपाद स्वामी ऐसैं लिख्या है। तिन धर्मास्तिकायादिकनिको आलंबन करनवारो अनिंद्रय नामा करण है सो नो

इंद्रियावरणका क्षयोपशमकी उपलब्धि पूर्वक उपयोग आत्मप्रदेशनिका परिस्पंद रूप अवग्रह रूप है सो अतींद्रिय पदार्थनिके विषैं प्रवर्तनैं का समय मैं इंद्रियनिमैं प्राप्त होय श्रुतज्ञान रूप होनेका अनुक्रमनैं उल्लंघन करि इंद्रिय संनिकर्षकी प्राप्तिकै पूर्वै ही आपनां विषयका ग्रहण करवा कै विषैं पाई है उत्कर्षता जानें ऐसो हुवो संतो अवग्रहादि चतुष्टय रूप परिणम्यूं होय मतिज्ञान का कार्यनैं देनेवालो आप होय श्रुतज्ञानका विषयभूत धर्मास्तिकायादिक जे हैं तिननैं कितनीक पर्यायनि करि सहित जानैं है ॥ ४ ॥ २६ ॥ अवैं सत्ताईसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि मति श्रुतकै अनंतर निर्देश करनें योग्य अवधिज्ञान जो है ताको कहा विषय निवंध है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय हैं यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥

अर्थ—रूपी द्रव्यकै विषैं अवधिज्ञानका विषयको निवंध है। वार्तिक—रूपस्यानेकार्थत्वे सामर्थ्याच्छुक्लादिग्रहणं ॥ १ ॥ अर्थ—रूप शब्दकै अनेकार्थपणानैं होतां संता भी प्रकरण की सामर्थ्यतैं शुक्ल आदिको ग्रहण करिये है। ;टीकार्थ— यो रूप शब्द अनेकार्थवाची है कि कहूं तौ चाक्षुष कहिये चक्षुरिंद्रियका विषयकै विषैं प्रवर्तै है सो जैसैं रूप रस गंध स्पर्श कहिये चक्षुरिंद्रियको विषय रूप है, रसना इंद्रियको विषय रस है, नासिका इंद्रियको विषय गंध है, त्वचा-इंद्रियको विषय स्पर्श है बहुरि कहूं स्वभाव अर्थकै विषै प्रवर्तै है सो जैसैं अनंत रूप है कि अनंत स्वभाव है तिनमैं सूं इहां या सूत्रकी सामर्थ्यतैं शुक्लादि चक्षु विषयकै विषैं प्रवर्त्ततो संतो ग्रहण करिये है अर जो रूप शब्दनैं स्वभाववाची ग्रहण करिये तौ यो सूत्र ही अनर्थक होय क्योंकि कोउकै स्वभाव नहीं है ऐसो कोउ ही नहीं है यातैं ॥ १ ॥ वार्तिक—भूमाद्यनेकार्थ—संभवे नित्ययोगोऽभिधानवशात् ॥ २ ॥ अर्थ—रूपी शब्दमें इन प्रत्यय भयो है ताको भूमि

आदि अनेक अथ-संभवतां संतां भी अभिधानका वशतैं नित्य योग अर्थ ग्रहण करिये है। टीकार्थ—रूप है विद्यमान जिनकै ते रूपी कहिये। इहां नित्य विद्यमान अर्थमैं इन प्रत्यय हुवो है तातैं इन प्रत्यय वाननिकै प्रचुर आदि बहुत अर्थ संभवै है तो हू इहां कथनका वशतैं नित्य योग अर्थ जानवो योग्य है कि नित्य ही पुद्गल जे हैं ते रूप करि युक्त है सो जैसैं वृक्ष क्षीर जो रसता-करि युक्त है तैसैं है। प्रश्न, जो ऐसैं है तौ अवधिज्ञानकै रूप मुख करि ही पुद्गल विषय भावनैं प्राप्त होय रसादि मुख करि नहीं होय? उत्तर, यो दोष नहीं है। वार्तिक—तदुपलक्षणार्थ त्वात्तदविनाभाव रसादिग्रहणं ॥ ३ ॥ अर्थ— रूपकै उपलक्षणार्थ पणांतैं रूपतैं अविनाभावी रसादिकको ग्रहण है। टीकार्थ—वो रूप गुण जो है सो द्रव्यकै उपलक्षण पणां करि कहिये यातैं रूपतैं अविनाभावी रसादिक भी ग्रहण करिये है। प्रश्न, जो ऐसैं है तौ वा पुद्गलमैं प्राप्त भया सर्व अनंतगुण पर्याय जे हैं तिनकैं विषैं अवधिका विषयको निबंध प्राप्त होय है यातैं कहै है। वार्तिक—असर्वपर्यायग्रहणानुवृत्तेर्न सर्वगतिः ॥ ४ ॥ अर्थ—असर्व पर्याय पदका ग्रहण अनुवर्तै है तातैं सर्वगत नहीं है। टीकार्थ—असर्व पर्यायेषु ऐसैं पूर्व सूत्र मैं पठित है सो इहां ग्रहण मैं अनुवर्तै है सो जैसैं देवदत्तकै अर्थि गौ देवौ अर जिनदत्तकै अर्थ कंवल देवौ ऐसैं ही इहां भी असर्व पर्यायेषु ऐसा संबंधतैं सर्वपर्यायनिमैं अवधिकी गति नहीं है तातैं पूर्वोक्त द्रव्य क्षेत्र आदि परिमाण रूपी पुद्गल द्रव्यकै विषैं अर औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक जीवकै पर्याय जे हैं तिनकै विषैं अवधिज्ञान उत्पन्न होय है क्योंकि इनकै रूपी द्रव्यको संबंध है यातैं अर क्षायिक पारिणामिक भावनिकै विषैं तथा धर्मास्तिकायादिकनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि रूपादिका संबंधको अभाव है यातैं ॥ ४ ॥ २७ ॥ अवैं अट्ठाईसमा सूत्रकी उत्था-निका लिखिये है कि मनःपर्ययका विषयको नियम कहा है ऐसा प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥

अर्थ—जो रूपी द्रव्य सर्वावधिज्ञानका विषय पणां करि समर्थित कियो है ताका अनंत भाग किया जो एक भाग होय है ताकै विषैं मनः पर्यय ज्ञान प्रवर्तै है ॥ २८ ॥ अवैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो अंतकै विषैं दिखायो केवलज्ञान है ताका विषयको निबंध कहा है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥

अर्थ—सर्व द्रव्य अर सर्व पर्याय जे हैं तिनकै विषैं केवलज्ञानका विषयको निबन्ध है। टीकार्थ—इहां प्रश्न है कि द्रव्य कहा है। उत्तररूपवार्तिक—स्वपर्यायान् द्रवति द्रूयते वा तैरिति द्रव्यम् ॥ १ ॥ अर्थ—अपनी पर्यायनिनैं प्राप्त होय अथवा पर्यायनि करि प्राप्त होय सो द्रव्य है। टीकार्थ—अपनी पर्यायनिनैं द्रवै है कि प्राप्त होय है सो द्रव्य है इहां बहुलकी अपेक्षा करि कर्त्ता अर्थ मैं प्रत्यय है अथवा तिन पर्यायनिकरि प्राप्त हूजिये कि जानिये सो द्रव्य है। वार्तिक—कथंचिद्भेद-सिद्धौ तत्कर्तृकर्मव्यपदेशसिद्धिः ॥ २ ॥ अर्थ—कथंचित् भेदकी सिद्धि होत संतैं वा कर्त्ता कर्मका उपदेशकी सिद्धिनैं होतां संता कह्यौ कर्तृकर्मको उपदेश सिद्ध होय है ॥ २ ॥ वार्तिक—इतरथा हि तदप्रसिद्धेरत्यंताव्यतिरेकात् ॥ ३ ॥ अर्थ—जो कथंचित् भी भेद नहीं मानिये तौ कर्त्ता कर्मकी अप्रसिद्धितैं अत्यन्त एक पणौं होय है यातैं। टीकार्थ—जो एकांत करि एकत्व ही अवधारण करिये है ताकै कर्तृकर्मको उपदेश अप्रसिद्ध है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अत्यंत अव्यतिरेकतैं सो ही एक वस्तु निर्विशेष निश्चय करि शक्त्यंतरकी अपेक्षा विना कर्तकर्म होनेकूं समर्थ नहीं है ॥ ३ ॥ प्रश्न, पर्याय कहा है ? उत्तररूप वार्तिक—तस्य मिथोभवनं प्रतिविरोध्यविरोधिनां धर्माणामुपात्तानुपात्तहेतुकानां शब्दांतरात्मलाभनिमित्तत्वादर्पितव्यवहारविषयोऽवस्थाविशेषः

पर्यायः ॥ ४ ॥ अर्थ—द्रव्यकै परस्पर होनें प्रति उपात्तानुपात्त हेतुकै जे विरोधी अविरोधी धर्म तिनक शब्दांतर रूप आत्मलाभका निमित्तपणातैं अर्पण कीयो जो व्यवहार विशेष रूप अवस्था विशेष सो पर्याय है। अर्थात् द्रव्यकै अवस्था विशेष जो है सो पर्याय है। टीकार्थ—परस्पर सामिल होनें प्रति कितनेंक तौ अविरोधी धर्म है अर कितनेंक विरोधी धर्म है तिनमैं प्रथम जीवकै अनादि पारिणामिक चैतन्य जीवत्व, द्रव्यत्व, भव्यत्व तथा अभव्यत्व ऊर्ध्वगति स्वभावत्व अस्तित्व आदि करि औदयिकादिक भाव यथा संभव एकैं काल होवातैं अविरोधी है अर नारक तैर्यग् देव मनुष्य स्त्री पुरुष नपुंसक एकेंद्रिय द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय बाल पणौं कुमार पणौं कोप प्रसाद आदि भाव जे हैं ते साथि अनवस्थानतैं विरोधी है तैसैं ही पुद्गलका अनादि पारिणामिक रूप रस, गंध, स्पर्श, शब्द, सामान्य, अस्तित्वादिक जे हैं ते शुक्लादि पंचक तथा तिक्तादि पंचक गंध द्वय स्पर्शको अष्टक रूप पर्यायनि करि प्रत्येक एक दोय तीन च्यार पांच आदि संख्यात अनंत गुण रूप परिणामनि करि यथा संभव युगपत् होवातैं अविरोधी है अर शुक्ल कृष्ण नील तौ वर्ण अर तिक्त कटुक रस अर शुभ अशुभ गंध इत्यादि विरोधी है अर सहानवस्थानतैं परमाणुमैं अर स्कंधमैं प्रायोगिक तथा वैश्रिसिक जे हैं ते विरोधी हैं। भावार्थ—परमाणुमैं तौ प्रायोगिक कहिये प्रयोग जनित गुण तथा पर्याय नहीं है अर वैश्रिसिक जो स्वाभावोत्पन्न गुण तथा पर्याय ही है अर स्कंधमैं प्रायोगिक ही गुण पर्याय है, वैश्रिसिक नहीं है ऐसैं ही धर्मास्तिकायादिकनिमैं भी अमूर्त्तत्व अचेतनत्व असंख्येय प्रदेशत्व गति कारण स्वभावत्व अस्तित्व आदि धर्म जे हैं ते अनंत भेदवान जे अगुरु लघु गुण जनित हानि वृद्धि रूप विकार तिन करि निज स्वभाव रूप कारण करि तथा पर स्वभाव रूप कारण करि गतिका कारण पणां रूप विशेष आदि करि अविरोधी तथा परस्पर विरोधी जानवे योग्य है तिनमैं किननेंक तौ उपात्त हेतुक है कि द्रव्य क्षेत्र काल भाव है निमित्त जिननैं ऐसैं औदयिकादिक

हैं अर कितनेंक अनुपात्त हेतुक है ते तीनूं कालमैं अविकारी पारिणामिक चैतन्यादिक है ते विरोधी अविरोधी उपात्त हेतुक अनुपात्त हेतुक धर्म जे हैं तिनको शब्दांतर रूप आत्म लाभका निमित्त पणांतै चेतन नारक बालक ऐसैं आरोपण कीया व्यवहारको विषय है सो व्यवहार नय ऋजु सूत्रनय शब्द नय ऐसैं त्रिविध नयात्मक है अर द्रव्यार्थिकनयका अर्पणातैं पर्यायार्थिक करि अर्पित कियो वा पर्यायार्थिकको विषय ऐसौ वा द्रव्यको व्यवस्था विशेष जो है सो पर्याय है ऐसैं कहिये है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—तयोरितरेतरयोगलक्षणो द्वंद्वः ॥ ५ ॥ अर्थ—तिनके इतरेतर योग लक्षण द्वंद्व समास होय है। टीकार्थ—तिन द्रव्य पर्यायनिकै परस्पर योग लक्षण द्वंद्व समास जानवे योग्य हैं सो ऐसैं है कि द्रव्य और पर्याय जे हैं ते द्रव्य अर पर्याय है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—द्वंद्वेऽन्यत्वं प्लक्षन्यग्रोधवदिति चेन्न तस्य कथंचिद्भेदेऽपि दर्शनाद्गोत्वगोपिंडवत् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, द्वंद्व समासनैं होतां संतां पीपल बड़कै समान अन्य पणौं होय है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि तिनकै कथंचित् भेदनैं होतां संतां भी गोपणां कै अर गो शरीरकै समान देखिये है यातैं। टीकार्थ—जो द्वंद्व समास है तौ प्लक्ष जो पीपल अर न्यग्रोध जो बड़ तिनकैं समान द्रव्य पर्यायनिकै अन्यपणौं प्राप्त होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा द्वंद्व समासको कथंचित् भेदनैं होतां संता भी गौ पणां कै अर गो पिंडकै समान दर्शन है यातैं सो जैसैं गोपणौं अर गो पिंड जो है सो गोत्व पिंड है ऐसैं अनन्यपणांनैं होतां संता भी द्वंद्व समास होय है तैसैं ही द्रव्य पर्यायकै विषैं भी द्वंद्व समास होय है। प्रश्न, समान्य विशेषकै अन्यपणांतैं यो कथन साध्य सम है। अर्थात् सामान्य तौ द्रव्य है अर विशेष पर्याय है अर इन दोउनिकै अन्यपणांनैं होतां संतां दोऊ ही साध्य भया साधन कोऊ नहीं रह्या? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि यो समान्य विशेषको अनन्यपणौं पूर्वैं कह्यो है यातैं अर्थात् कथंचित् अन्य है, कथंचित् अनन्य है ॥ ६ ॥ वार्तिक—द्रव्यग्रहणं पर्यायविशेषणं

चेन्नानर्थक्यात् ॥ ७ ॥ अथ—प्रश्न, द्रव्यनिकै पर्याय जे हैं ते द्रव्य पर्याय है ऐसैं तत्पुरुष समास होत संतैं द्रव्यको ग्रहण जो है सो पर्यायको विशेषण है? उत्तर, सो नहीं है ऐसैं किये द्रव्यपदको ग्रहण अनर्थक होय। टीकार्थ—प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अनर्थक पणांतैं सो ऐसैं है कि ऐसैं समास होत संतैं द्रव्यको ग्रहण अनर्थक है क्योंकि निश्चय करि अद्रव्यकै पर्याय नहीं है अर्थात् पर्याय द्रव्यकै ही होय हैं तातैं द्रव्य शब्द सूत्रमैं अनर्थक हो तो ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—द्रव्याज्ञानप्रसंगाच्च ॥ ८ ॥ अर्थ—अर पर्याय ही कहते अर द्रव्य नहीं कहते तौ केवल द्रव्यका अज्ञानको प्रसंग आवतो यातैं। टीकार्थ—केवलज्ञान करि पर्याय ही जानिये है द्रव्य नहीं जानिये है ऐसैं द्रव्यका अज्ञानको प्रसंग आवै है क्योंकि तत्पुरुष समासकै उत्तर पदको प्रधान पणौं है यातैं। प्रश्न, ऐसैं मान्य है कि सर्व पर्यायनिनैं जानतां संता कछू भी अज्ञान नहीं है तातैं पर्यायनितैं भिन्न द्रव्यको अभाव है यातैं? उत्तर, जो ऐसैं है तौ द्रव्यको ग्रहण अनर्थक होय ऐसैं पूर्वैं कह्यो ही है तातैं यो द्वंद्व समास उत्तम कह्यो है क्योंकि यानैं होत संतैं द्रव्य शब्दकैं अनर्थक पणौं नहीं आवै है। प्रश्न, द्वंद्व समासनैं होत संतैं भी द्रव्यको ग्रहण अनर्थक है क्योंकि पर्यायनितैं भिन्न करि द्रव्यकी अनुपलब्धि है यातैं? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि संज्ञा अर निज लक्षण पणां आदि जानित भेदतैं भेदकी उपपत्ति है यातैं ॥८॥ प्रश्न, सर्व शब्दको ग्रहण कहा निमित्त है, बहु वचनका निर्देशतैं ही बहु पणांकी प्रतीत सिद्ध होय है यातैं? उत्तर रूपवार्तिक—सर्वग्रहणं निर्विशेषप्रतिपत्यर्थम् ॥ ९ ॥ अर्थ—सर्व पदको ग्रहण निर्विशेषकी प्रतीतिकै अर्थ कियो है। टीकार्थ—जे लोकालोकका भेद करि भिन्न भये ऐसैं त्रिकाल विषय द्रव्य पर्याय अनंत जे हैं तिन समस्तनिकै विषैं केवलज्ञानका विषयको निबंध है ऐसैं प्रतीति उत्पन्न करनें निमित्त सर्व शब्दको ग्रहण है, अर्थात् जितना लोकालोक-का स्वभाव है तितना अनंतानंत भी जो होय तौ तिन सबनिनैं जानने कूं याको सामर्थ्य है,

ऐसौ अपरिमित महात्म्य है सो केवलज्ञान जानवे योग्य है ॥ ६ ॥ अवैं तीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि मत्यादिकनिका विषयको निर्वंध तौ अवधारण भयौ परंतु या नहीं जानी कि एक आत्माके विषैं अपना निमित्त की निकटता जनित हैं वृत्ति जिनकी ऐसैं ज्ञान युगपत् पणां करि कितनें होय है ? उत्तर, ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है । सूत्रम्—

एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥

अर्थ—प्रश्न, एक यो शब्द कहा वाची है ? उत्तर रूप वार्तिक—अनेकार्थसंभवे विवक्षातः प्राथम्यवचन एकशब्दः ॥ १ ॥ अर्थ—एक शब्दका अनेक अर्थ संभवतां संतां भी वक्ताकी इच्छातैं प्रथमको वाचक एक शब्द है । टीकार्थ—यो एक शब्द अनेक अर्थनिमैं दृष्ट प्रयोग है सो ऐसैं है कि कहूं संख्या अर्थमैं प्रवर्तै है कि एक दोय वहुत इत्यादि अर कहूं अन्य पणां मैं प्रवर्तै है कि एक आचार्या कहिये अन्य आचार्य है अर कहूं असहाय अर्थमैं प्रवर्तै है कि जे वीर हैं ते एकाकी विचारै हैं अर कहूं प्रथम अर्थमैं वर्तै है कि एक आगमन है अर कहूं प्राधान्य अर्थमैं प्रवर्तै है कि एक हत सेनानैं करूंगो कि प्रधान हत सेनानैं करूंगो ऐसो अर्थ होय है तिनमैं सूं इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रथम अर्थ को वाचक एक शब्द जानवे योग्य है ॥ १॥ वार्तिक—आदिशब्दश्वावयववचनः ॥ २ ॥ अर्थ-आदि शब्द अवयवको वाचक है । टीकार्थ— यो आदि शब्द अनेक अर्थमैं संभवता वक्ताकी इच्छातैं इहां अवयव को वाचक जाननें योग्य है अर कहूं व्यवस्था अर्थमैं प्रवर्तै है कि ब्राह्मणादिक च्यार वर्ण है कि ब्राह्मणतैं व्यवस्था है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र है ऐसो अर्थ है अर कहूं प्रकार अर्थमैं प्रवर्तै है कि भुजंगादिक परिहार करनें योग्य है कि भुजंगका प्रकार कहिये भुजंग सद्रश विषवान परिहार करनें योग्य है ऐसा अर्थ है अर कहूं समीप पणांमैं प्रवर्तै है कि नद्यादि क्षेत्र है कि नदीके समीप क्षेत्र है ऐसो अर्थ है

अर कहूं अवयव अर्थमैं प्रवर्तै है कि ऋगादि अध्ययन करै है कि ऋग्वेद के अवयव पढ़ै है ऐसो अर्थ है ता कारण करि यो कह्यो होय है कि एक को आदि सो एकादि अर्थात् प्रथम को अवयव, प्रश्न, कौनसा प्रथम को ? उत्तर, परोक्षको प्रश्न, कौनसो अवयव है? उत्तर, मतिज्ञान अर्थात् एकादि कहिये मतिज्ञान आदि। वार्तिक— सामीप्य बचनो वा ॥ ३ ॥ अर्थ— अथवा आदि शब्द सामीप वाचक है। टीकार्थ—अथवा यो आदिशब्द सामीप्यको वाचक देखवे योग्य है ता कारण करि प्रथम मतिज्ञान जो है ताकै समीप श्रुतज्ञान है ऐसैं कह्यो होय है अर्थात् एक जो मति ताकै आदि कहिये समीप सो श्रुत है ॥३॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक— मतेर्वहिर्भावप्रसंग-इति चेन्नानयोः सदा व्यभिचारात् ॥ ४ ॥ अर्थ—आदि शब्द सामीप वाची होत संतैं मति शब्दकै वहिर्भावको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इनि दोउनिकै सदा अव्यभिचार है यातैं। टीकार्थ—ऐसैं होत संतैं मतिकै वहिर्भाव प्राप्त होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, इन दोऊनिकै सदा अव्यभिचार है यातैं ये मति श्रुत जे हैं ते सर्वकाल नारद पर्वतकै समान अव्यभिचारी है तातैं इनिमैंसूं कोऊ एकका ग्रहणनैं संतां होतां दूसराको ग्रहण निकट होय है। प्रश्न, एकादि शब्द करि तौ मति श्रुत ग्रहण किया तातैं इहां आदि शब्द और ग्रहण कीया चाहिये ॥ ४ ॥ उत्तररूपवार्तिक—ततोन्यपदार्थवृत्तावेकस्यादिशब्दस्य निवृत्ति-रुष्ट्रमुखवत् ॥ ५ ॥ अर्थ—तातैं अन्य पदार्थवृत्तिकै एक आदि शब्दको निवृत्ति उष्ट्र मुख प्रयोगकै समान होय है। टीकार्थ—जैंसैं उष्ट्रको जो मुख सो उष्ट्र है अर उष्ट्र मुखकै समान है मुख याको सो उष्ट्रमुख है ऐसा समासकै विषैं एक मुख शब्द की निवृत्ति है कि लोप होय है ऐकों ही इहां भी एकादि है आदि जिनकै ते एकादि कहिये ऐसैं समासकै विषैं एकादि शब्दकी निवृत्ति होय है ॥५॥ वार्त्तिक—अवयवेन विग्रहः समुदायो वृत्त्यर्थः ॥६॥ अर्थ—अवयव करि समास करिये है सो समासको अर्थ समुदाय होय है। टीकार्थ—अवयवकरि विग्रह कहिये है कि समास करिये है

अर समासको अर्थ समुदाय होय है ता कारण करि एकादि ज्ञानकैं आभ्यंतरवर्ती करि भाज्यानि कहिये अर्पण करनें योग्य है। भावार्थ—एकादि जो मतिज्ञान श्रुतज्ञान तानैं अभ्यंतर करि यथा संभव उत्तर ज्ञान भाज्य होय है। प्रश्न, सर्व ही अर्पण करनें योग्य है। कहा कारण ? उत्तर, नहीं, च्यार पर्यंत ही अर्पण करनें योग्य है। प्रश्न, या काहेतैं ? ॥ ६ ॥ उत्तररूप वार्तिक—केवलस्यासहायत्वादितरेषां च क्षयोपशमनिमित्तत्वाद्यौगपद्याभावः ॥ ७ ॥ अर्थ—केवलकै असहाई पणातैं अर अन्यकै क्षयोपशम निमित्त पणातैं एकैं काल होनेंको अभाव है। टीकार्थ—जो क्षायिक केवलज्ञान है सो असहाय है अर और ज्ञान जे हैं ते क्षयोपशम निमित्त है यातैं केवलतैं इनकै विरोध है तातैं युगपत् असंभव हैं तातैं च्यार पर्यंत ही होय है ऐसैं कहिये है ॥ ७ ॥ प्रश्नोत्तर रूपवार्तिक—नाभावोऽभिभूतत्वाद् हनि नक्षत्रवदिति चेन्न क्षायिकत्वात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, केवलकै होतैं अन्यको अभाव नहीं है दिवसकै विषैं नक्षत्रनिकै समान तिरस्कृतपणौं है यातैं ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि केवलके क्षायिक पणौं है यातैं। टीकार्थ—केवलनैं होतां संतां क्षायोपशमिक ज्ञाननिको अभाव नहीं है तो कहा है कि महान् केवलज्ञानकरि तिरस्कार रूप किया अपना प्रयोजनकै विषैं भास्करको प्रभाकरि तिरस्कार रूप भया नक्षत्रनिके सम व्यापार नहीं करै है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा—कारण ? उत्तर, क्षणिकपणातैं क्षीण भयो है समस्त ज्ञानावरण जाकै ऐसो भगवान अर्हंत जो है ताकै विषैं क्षायोपशमिक ज्ञाननिको संभव कैसैं होय क्योंकि निश्चय करि परिपूर्ण प्राप्त भई है सर्व शुद्धि जा विषैं ऐसा स्थानकै विषैं एक प्रदेशकी अशुद्धि नहीं रहै हैं ॥८॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—इंद्रियत्वादिति चेन्नार्षार्थानवबोधात् ॥९॥ अर्थ—प्रश्न, इंद्रियवान पणातैं केवलीकै भी मत्यादिक संभवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि आर्षका अर्थको अवबोध तिहारै नहीं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, ऐसैं ही आगम प्रवर्तै है कि पंचेंद्रिय जे हैं ते असंज्ञी पंचेंद्रियनैं आदि लेय अयो-

गकेवली पर्यंत है यातैं इंद्रियवान पणातैं इंद्रियको कार्य ज्ञान जो है तानैं होवो योग्य है? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आर्ष वचनका अर्थको अनववोध है, यातैं क्योंकि निश्चय करि आर्ष वचनमैं संयोगकेवली अर अयोगकेवलीकै पंचेंद्रियपणौं है सो द्रव्येंद्रिय प्रति कह्यो है भावेंद्रिय प्रति नहीं कह्यो है अर जो निश्चय करि भावेंद्रिय प्रति ही यो वचन होय तो नहीं चीण भया सकलावरण पणातैं सर्वज्ञ पणांको निवृत्ति होय तातैं यो कह्यो होय है कि कोऊ एक आत्माकै विषैं मति श्रुत ये दोय होय है अर कोऊ आत्माकै विषैं तीन होय है कि मति श्रुत अवधि होय है अथवा मति श्रुत मनःपर्यय होय है अर कोऊ आत्माकै विषैं च्यार होय है कि मति श्रुत अधधि मनःपर्यय होय है परंतु एक आत्माके विषैं युगपत् पांच नहीं संभवे है ॥ ९ ॥ वार्तिक—संख्यावचनो वैकशब्दः ॥ १० ॥ अर्थ—अथवा संख्या वाची एक शब्द है। टीकार्थ—अथवा यो एक शब्द संख्यावाची है एक है आदि जिनकै ते एकादि कहिये। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, एक आत्माकै विषैं एक मतिज्ञान होय है अर जो अचर श्रुत है सो दोय अनेक द्वादश भेदरूप उपदेशपूर्वक होय है सो भजनीय है कि होय अथवा नहीं होय और पूर्ववत् होय है। वहुरि और कहै है कि असंख्य पणां असहायपणां प्रधान पणांको वाचक एक शब्दनैं होतां संता एकादीनि कहिये केवल आदि होय है कि एक आत्माकै विषैं चायिक पणातैं एक केवलज्ञान होय है अर दोय होय है तहां मति श्रुत होय है इत्यादि पूर्ववत् जानना ॥१०॥ अवैं इकतीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि कह्या मत्यादिक ज्ञान नामनैं ही प्राप्त होय है कि अन्यथा नामनैं प्राप्त होय है ऐसो प्रश्न होत संतैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिश्रुतावधयोर्विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥

अर्थ—मति श्रुत अवधि जे हैं ते विपर्यय स्वरूप भी होय हैं कि कुमति कुश्रुत कुअवधि

स्वरूप होय है। अर्थ—मति श्रुत अवधि जे हैं ते विपर्यय स्वरूप भी है अर चकारतैं सम्यक् स्वरूप भी है। इहां विपर्यय नाम अन्यथाका है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, सम्यक्का अधिकारतैं अर च शब्द जो है सो समुच्चयकै अर्थि है कि विपर्यय भी है अर सम्यग् भी है। प्रश्न, इनिकै विपरीतता काहेतैं है? उत्तर रूप वार्त्तिक—मिथ्यादर्शनपरिग्रहान्मत्यादिविपर्ययः ॥ १ ॥ अर्थ—मिथ्यादर्शनका परिग्रहतैं मत्यादिकनिकै विपरीतता है। अर्थ—जो यो दर्शनमोहनीयका उदयनैं होतां संता मिथ्यादर्शन रूप परिणाम होय है ताकरि सहित एकार्थ समवायतैं मत्यादिकनिकै विपरीतता होय है। प्रश्न, भ्रष्टाका गृहमैं प्राप्त भया भी मणि कनक आदि जे हैं तिनकै स्वभावको विनाश नहीं होय है तैसैं ही मत्यादिकनिकै भी स्वभावको विनाश नहीं होय है? उत्तर, यो दोष नहीं है। वार्त्तिक—सरजसकटुकालाबूगतदुग्धवत्स्वगुणविनाशः ॥ २ ॥ अर्थ—रज सहित कड़वी तूंबड़ी जो है ताकै विषैं प्राप्त भया दुग्धकै समान निज गुणको विनाश होय है। टीकार्थ—जैसैं रज सहित कटुक आलाबू जो तूंवो ताका भाजनकै विषैं स्थापन कियो दुग्ध अपना गुणनैं परित्याग करै है तैसैं ही मत्यादिक भी मिथ्यादृष्टि रूप भाजनमैं प्राप्त भया दोषनैं प्राप्त होय है क्योंकि आधारका दोषतैं आधेयमैं दोष उत्पन्न होय है। प्रश्न, और सुनूं कि निश्चय करि यो एकांत नहीं है कि ये मणि कनक आदि भ्रष्टाका गृहमैं प्राप्त भया भी स्वभावनैं नहीं तजै है ऐसैं कह्यो सो एकांत नहीं है। प्रश्न, तहां या कैसैं अवधारण करिये है कि मत्यादिक आलाबू दुग्धवत् दोषनैं प्राप्त होय है अर मत्यादिक मणि कनक आदिवत् दोषनैं नहीं प्राप्त होय है॥ २ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—पारिणामिकशक्तिविशेषात् ॥ ३ ॥ अर्थ—उत्तर, परिणामन करावनैंवाला वस्तुका शक्ति विशेषतैं परिणामन होय है। टीकार्थ—परिणाम वस्तुको परिणामन करावनैंवारा वस्तुका शक्ति विशेषतैं अन्यथा भाव होय है सो जैसैं आलाबू द्रव्य दुग्धनैं विपरीत परिणामायवे कूं समर्थ है तैसैं ही मिथ्यादर्शन भी मत्यादिकनिकूं अन्य-

था पणांनैं करनेकूं समर्थ है क्योंकि मिथ्यादर्शनका उदयनैं होतां संता अन्यथा निरूपणाको दर्शन है यातै अर भ्रष्टाको गृह मणि कनक आदिकै विकार उत्पन्न करनेकूं समर्थ नहीं है अर उनकूं विशेष परिणाम करावनेंवारा द्रव्यकी निकटतानैं होतां संता तिनके भी अन्यथा परिणाम होय ही है। बहुरि जा समय सम्यग्दर्शन उत्पन्न होय है ता समय मिथ्या परिणामका दर्शनको अभाव है यातैं तिन मत्यादिकनिकै सम्यक्त्व पणों है यातैं सम्यग्दर्शन मिथ्यादर्शनका उदय विशेषतैं तिन तीननिकै दोय प्रकार कल्पना होय है कि मतिज्ञान मत्यज्ञान श्रुताज्ञान अवधिज्ञान विभंगज्ञान ऐसैं ॥ २ ॥ ३१ ॥ अबैं बत्तीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि इहां वादी कहै है कि रूपादि विषयकी उपलब्धिकै व्यभिचारका अभावतैं विपर्यय ज्ञानको अभाव है क्योंकि जैसैं मतिज्ञान करि सम्यग्दृष्टी रूपादिकनिनैं ग्रहण करै है तैसैं ही मिथ्यादृष्टि भी मत्यज्ञान करि ग्रहण करै है अर जैसैं घटादिकनिकै विषैं रूपादिकनिनैं श्रुतज्ञान करि सम्यग्दृष्टी निश्चय करै है अर अन्य जे हैं तिनके अर्थ उपदेश करै है तैसैं ही श्रुतज्ञान करि मिथ्यादृष्टी भी निश्चय करै है अर अन्य जे हैं तिनके अर्थ उपदेश करै है ऐसैं ही अवधिज्ञान करि रूपी अर्थनें ग्रहण करै है तैसैं ही विभंगज्ञान करि रूपी अर्थनैं ग्रहण करै है तातैं ये तीनूं विपर्यय नहीं है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है तातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥

अर्थ—सत् असत्का अविशेषतैं अपनी इच्छापूर्वक उपलब्धितैं उन्मत्तकै समान है। वार्तिक-- सच्छब्दस्यानेकार्थसंभवे विवक्षातः प्रशंसार्थग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्थ--सत् शब्दका अनेक अर्थ संभवतां संतां वक्ताकी इच्छातैं प्रशंसा अर्थको ग्रहण है। टीकार्थ—यो सत् शब्द अनेकार्थ वाची

है ऐसैं व्याख्यान कियो है, ता सत् शब्दको इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रशंसा अर्थको ग्रहण जानवे योग्य है कि प्रशस्त तत्त्व ज्ञान है ऐसो सत् शब्दको अर्थ है अर असत् है सो अज्ञान है। सत् असत् जे हैं तिनको अविशेष करि अपनी इच्छाकरि उपलब्धितैं है कि ग्रहण करवातैं विपर्यय है प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, उन्मत्तवत् सो जैसैं उन्मत्त दोषका उदयतैं उपहत भई है इंद्रिय अर मति जाको ऐसो जीव जो है सो विपरीत ग्राही होय है सो अश्वनैं गो अंगीकार करै है अर गोनैं अश्व निश्चय करै है अथवा लोष्टनैं सुवर्ण अर सुवर्णनैं लोष्ट अथवा लोष्टनैं लोष्ट अर सुवर्णनैं सुवर्ण जानै है कि निश्चय करै है अर अविशेष करि निश्चय करतो जो है ताकै अज्ञान ही है तैसैं ही मिथ्यादर्शन करि उपहत हैं इंद्रिय अर मति जाकी ताकै मति श्रुति अवधि भी अज्ञान ही है ॥ १ ॥ वार्तिक—भवत्यर्थग्रहणं वा ॥ २ ॥ अर्थ—अथवा सत् शब्दको विद्यमान अर्थ ग्रहण है। टीकार्थ—अथवा यो सत् शब्द भवति अर्थमें जाननें योग्य है अर्थात् सत् कहिये विद्यमान ऐसो अर्थ है अर असत् कहिये अविद्यमान ऐसो अर्थ है तिन दोउनिको अविशेष करि अपनी इच्छा करि उपलब्धितैं विपर्यय है। कदाचित् रूपादि सत् भी असत् ऐसैं अंगीकार करै है अर असत् भी सत् ऐसैं अंगीकार करै है अर कदाचित् सत् असत् ही अर असत् असत् ही ऐसैं अंगीकार करै है ॥ २ ॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर रूपवार्तिक—प्रवादिपरिकल्पनाभेदाद्विपर्ययग्रहः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रतिवादीकी कल्पनाका भेदतैं विपरीत ग्रहण होय है टीकार्थ—प्रतिवादीनिका कल्पनाका भेदतैं विपर्यय ग्रहण होय है सो ऐसैं है कि प्रथम तौ कितनेक कहै है कि द्रव्य ही है रूपादिक नहीं है अर और कहै है कि रूपादिक ही है द्रव्य नहीं है अर औरनिको मत ऐसो है कि अन्य द्रव्य हैं अन्य रूपादिक हैं। प्रश्न, इनकै विपर्यय ग्रहण कैसैं है ? उत्तर कहिये है कि जो द्रव्य ही है अर रूपादिक नहीं है तो लक्षणका अभावतैं लक्ष्यका अनवधारणको प्रसंग आवै है अर और सुनूं कि इंद्रिय करि सन्निकर्ष रूप कीयो

द्रव्य रूपादिकका अभावनैं होतां संता सर्वात्मा करि सन्निकर्ष करिये तातैं सर्वात्मा करि ग्रहणको प्रसंग आवै है अर करण भेदका अभावको प्रसंग आवै है सो यो नहीं तौ प्रत्यक्षगम्य हैं अर नहीं अनुमान गम्य है अर रूपादिक ही द्रव्य नहीं है ऐसैं भी निराधारपणांतैं रूपादिकनिका अभावको प्रसंग आवै है अर और सुनूं कि परस्पर विलक्षण रूपादिकनिका समुदायनैं होतां संतां भी समुदायकै एक अर्थांतर भावतैं कि एक रूप भावतैं सर्वको अभाव होयगो अर्थात् एक रूप होतैं रूपादिक भिन्न भिन्न है तिन सवनिको अभाव होयगो क्योंकि उनकै परस्परतैं अर्थांतर पणौं है यातैं अर निश्चय करि द्रव्य अन्य है अर रूपादिक गुण अन्य हैं ऐसैं होत संतैं भी तिनकै लक्ष्य लक्षण भावको अभाव होय है क्योंकि परस्परतैं अर्थांतर पणौं है यातैं अर्थात् जे भिन्न भिन्न हैं तिनक लक्ष्य लक्षण भाव नहीं होय है। इहां वादी कहै है कि दंड दंडीके समान भिन्न भिन्न होतैं भी लक्ष्य लक्षण भाव होय है? उत्तर, ऐसैं कहो हो सो नहीं है क्योंकि दृष्टांतकै विषम पणौं हैं यातैं सो ऐसैं है कि भिन्न भिन्न विद्यमाननिकै लक्ष्य लक्षण युक्त होय है अर अविद्यमाननिकै लक्ष्य लक्षण भाव युक्त नहीं होय अर्थात् द्रव्य अर गुण उपलब्ध नहीं है तातैं लक्ष्य लक्षण भाव युक्त नहीं है अर और सुनूं कि द्रव्यतैं अर्थान्तर भूत रूपादिक गुण जे है तिननैं अमूर्त्तिक होत संतै इंद्रिय संनिकर्ष युक्त नहीं होय है तातैं रूपादिकनिका ज्ञान को अभाव होयगो अर अरर्थान्तरभूत द्रव्य रूपादिकनिका ज्ञानको कारण होनें कूं योग्य नहीं होय है ॥ ३ ॥ वार्तिक—मूलकारणविप्रतिपत्तेः ॥ ४ ॥ अर्थ—मूल कारणमें विवाद है यातैं। टीकार्थ— इनि वादीनिकै घटादिकनिका मूल कारणकै विषैं विवाद है सो ऐसैं है कि कितनेंक तो कहै है कि अव्यक्त जो प्रधान तातैं महत् अर महत् तैं अहंकार अर अहंकारतैं तन्मात्रा अर तन्मात्रातैं इन्द्रिय अर इंद्रियतैं महाभूत अर महाभूततैं मृत्पिंडादिकनिकी रचना ऐसैं अनुक्रम करि घटादिक जो विश्व रूप जगत् ताको उत्पाद होय है सो

अयुक्त है क्योंकि अमूर्त्त पणां निरवयवपणां निःक्रिय पणां अतींद्रियपणां अनंत पणां नित्यपणां अपर प्रयोज्यपणां आदि विशेषणनि करि संयुक्त प्रधान जो है ताकै यातैं विलक्षण घटादि कार्य होनेंकूं योग्य नहीं होय है क्योंकि कारणतैं विलक्षण कार्यकै अदृष्टपणौं है यातैं अथवा और सुनूं कि अपर प्रयोज्य कहिये पर कर नहीं प्रेरित अर आप अभिप्राय रहित प्रधान जो है ताकै अभिप्राय पूर्वक उत्पत्तिको अनुक्रम युक्त नहीं होय है अर और सुनूं कि प्रथम तौ पुरुष जो है सो निःक्रिय पणां तैं महत् आदिकै उत्पन्न करनें निमित्त प्रधाननैं नहीं प्रयुक्त करै है कि नहीं प्रेरणा करै है अर प्रधान आप निःक्रय पणां तैं अपना प्रधान स्वरूपनैं महत् आदिका उत्पन्न करवा निमित्त प्रयुक्त करनेंकूं नहीं योग्य है क्योंकि आप गमन करनेमैं विकल पांगलो पुरुष आपनैं सावधान करि उठाय गमन करतो नहीं देख्यो है यातैं अर और सुनूं कि प्रयोजन रहित प्रधान जो है ताकै महत् आदिको उत्पन्न करनौं युक्तिमान् नहीं है। इहां वादी कहै है कि प्रधानकै तो प्रयोजन नहीं है तथापि पुरुषको भोग है सो प्रयोजन है? उत्तर, ऐसैं कहो हो सो नहीं है क्योंकि स्वारथका अभावतैं कि प्रथम तौ प्रधानकै अपनौं प्रयोजन नहीं है यातैं अर ता सिवाय पुरुष विभू नित्य आत्मा जो है ताकै भोग परिणामको अभाव है यातैं अर और सुनूं कि अचेतन पणातैं भी उत्पत्ति क्रम नहीं संभवै है क्योंकि या लोकमैं चेतन चैत्र नामा पुरुष ओदनको अर्थी क्रियाफल साधन जे हैं तिनको जानने वारो ओदनकै अर्थ अग्नि संधुक्षण आदिकै विषैं प्रवर्तन करतो देख्यो है तैसो प्रधान चैतन्य नहीं है यातैं याक महत् आदि क्रियाका उत्पतिको क्रम जो है ताको अभाव है अर पुरुष भी महत् आदिका अनुक्रमको प्रेरक नहीं है क्योंकि पुरुषकै निःक्रिय पणौं है यातैं। वहुरि और वादी कहै है कि भिन्न भिन्न नियम रूप पार्थिव आदि जाति करि विशेष रूप परमाणू प्राणीनिका अदृष्ट आदिकी निकटतानैं होतां संतां संग रूप भये तिनतैं अर्थान्तर भूत घटादि कार्यको आतम लाभ होय है कि अपना स्वरूपको [प्रगट पणौं

होय है याको उत्तर आचार्य कहै है कि ऐसौं कह्यौ सो भी अयुक्त है कि अणु जे है तिनकै नित्य पणांतैं कार्यका आरम्भ करने रूप शक्तिको अभाव है यातैं अर आरम्भ करत संतें नित्य पणांकी हानि है यातैं अर नित्यकै अर्थान्तरभूत कार्यको आरम्भ युक्त नहीं है क्योंकि कारणतें भिन्न कार्यकी अनुपलब्धि है यातैं अर कारणतैं भिन्न कार्यकी उपलब्धिनैं होतां संतां अणुके सहित पणांको अभाव कहो हो सो भी युक्त नहीं होवैगो। भावार्थ—अर और सुनूं कि परमाणूनिकैं जाति प्रति भिन्न होनेको नियम भी नहीं सभवे क्योंकि भिन्न जातिमाननिकैं उनतें भिन्न कार्यका आरम्भको दर्शन है यातैं। प्रश्न, भिन्न जाति माननिकें विषैं समुदाय मात्र है? उत्तर, तुल्य जातिमाननिकै विषैं भी समुदायके विषैं कर्तापणौं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि आत्माके तथा घटात्मा जो मृत्तिका द्रव्य ताकै निःक्रियपणौं तथा नित्यपणौं है यातैं अर अदृष्ट आदि आत्म गुण जो है ताकै भिन्न क्रिया पणांतै ही कर्तापणौं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि निःक्रिय है सो अर्थान्तरमैं क्रियाको हेतु नहीं देख्यो है यातैं अर और वादी ऐसा मानै है कि वर्णादि परमाणूंका समुदायात्मक रूप परमाणूं अतीन्द्रिय विषय जे हैं ते एकत्र भया संतां इन्द्रिय ग्राही समुदायात्मक रूप परमाणू अतीन्द्रिय विषय जे हैं ते एकत्र भया संता इन्द्रिय ग्राही पणांनै अनुभव करि घटादि कार्यका आत्मलाभको हेतुपणौं जो है तानैं प्राप्त होय है? उत्तर, सो अयुक्त है क्योंकि प्रत्येक रूप परमाणूंनिकै अतीन्द्रिय पणां तें अर तातैं अन्य घटादि कार्यकै भी अतीन्द्रिय पणांको प्रसंग आवै है यातैं अर तातैं ही कि अतीन्द्रिय पणांतैं ही दृश्य विषय-में प्रमाण प्रमाणाभासकै विकल्पको अभाव होय है अर कार्यका अभावतैं कार्यको लिंग रूप कारण जो है ताकौ भी अभाव होय है। बहुरि और सुनूं कि क्षणिक पणांतैं तथा निःक्रिय पणां-तैं कार्यका आरम्भको अभाव है। अभिन्न शक्तिवाननिकै परस्पर अभिसंबंधको अभाव है अर और अन्य चेतन अर्थ नहीं है जो तिनकै सम्बन्धको कर्त्ता होय है अर अन्य चेतन कर्त्ताका अभा-

वतैं क्षणिक परमाणूके संबंधको अभाव है ऐसैं अन्य भी प्रवादी जे हैं तिनकै विषैं विद्यमानमें अविद्यमान अर अविद्यमानमें विद्यमान विपर्यय है सो मिथ्यादर्शनको जो उदय ताका वशतैं पित्तका उदय करि आकुलित रसना इन्द्रिय विपर्ययग्राही होय है ताकै समान जानवे योग्य है, तातैं जो कह्यो कि रूपादि विषयको उपलब्धिकै व्यभिचारका अभावतैं मिथ्यादृष्टिको ज्ञान अय अज्ञान रूप नहीं है सो असम्यक् है ॥ ४ । ३२ ॥ अवै तेतीसका सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि लक्षण आदि करि ज्ञान तौ व्याख्यान कियो अर चारित्र व्याख्यान करने योग्य है। तानैं उल्लंघनि करि नय कहिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, मोक्षका विधानकै विषैं चारित्रके वक्ष्यमाण पणौं है यातैं। प्रश्न, मोक्षकी विधिकै विषैं काहेतैं कहिये है ? उत्तर, ऐसैं कह्यो हो तो सुनूं कि मोक्ष प्रति चारित्रके प्रधान कारण पणौं है यातैं। प्रश्न, कहाकृत प्रधानता है ? उत्तर, सर्व कर्म रूप इंधनका निःशेष दहनकृत प्रधानता है क्योंकि जातैं आत्मा व्युपरत क्रिया नामा चतुर्थ शुक्ल ध्यानसैं प्रगट भयो है आतमबल जाकै एसो हुवो संतो समस्त कर्म रूप ईंधनका निःशेष दहन करनेमें समर्थ होय है। इहां आशंका है कि जो क्षायिक सम्यक्त्व और क्षायिक केवलज्ञान सहित आत्मा ही समस्त कर्मरूप ईंधनका निःशेष दहन करनेमें समर्थ होय तो क्षायिक केवल ज्ञानकी उत्पत्तिकै अनन्तर ही समस्त कर्मको क्षय होय कि मोक्ष होय ? उत्तर, व्युपरतक्रिया ध्यानकी उपत्तिकै अनन्तर ही समस्त कर्मको क्षय होय है। तातैं व्युपरतक्रिया ध्यानको उत्पत्तिकै अनन्तर ही उत्तम परिपूर्ण चारित्र होय है सो कर्मादानका हेतुरूप क्रियाकी निवृत्तिरूप चारित्र है एसैं वचन है यातैं, जो ऐसैं है तो इहां वो ही चारित्र कह्यो ? उत्तर, मोक्षका विधानकै विषैं भी वो कहने योग्य हैं। यातैं इहां काहेतैं गौरव होय तातैं वहां ही कहेंगे। प्रश्न, ऐसैं सम्यग्दर्शन ज्ञानका प्रतिपादन करि जीवादि व्याख्यान करने योग्य कहिये है अर प्रमाण तो व्याख्यान कियो अर प्रमाण भाषित अर्थकै एक देश कहने वारे नय हैं क्योंकि प्रमाणनयैरधिगमः ऐसो वचन है यातैं

प्रमाणके अनन्तर कहने योग्य नय हैं । प्रश्न, ऐसैं है तो वे कितने हैं ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है । सूत्रम्—

नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवम्भूता नयाः ॥ ३३ ॥

अर्थ—नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवम्भूत ये सात नय हैं ते नय शब्दकी अपेक्षा करि एक आदि असंख्यात विकल्परूप है तहां अति संक्षेपतैं प्रतिपत्ति कहिये ज्ञान नहीं होय, अर अति विस्तारकै विषैं अल्प बुद्धिमाननिकैं अनुग्रह नहीं होय यातैं मध्य वृत्ति करि सप्त नय इहां कहिये है तिनका सामान्य लक्षण कहने योग्य है, तहां प्रथम सामान्य लक्षण कहिये हैं। वार्त्तिक—प्रमाणप्रकाशितार्थविशेषप्ररूपको नयः ॥१॥ अर्थ—प्रमाण करि प्रकाशरूप किया अर्थको विशेष प्ररूपण करनवारो जो ज्ञान है सो नय है। टीकार्थ—प्रकर्ष करि जो मान सो प्रमाण है, अर्थात् सकलदेश जो है सो प्रमाण है ता प्रमाण करि प्रकाशित अर्थात् प्रमाणाभास करि परिग्रहीत नहीं ऐसैं अस्तित्व, नास्तित्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, आदि धर्मात्मक जीवादिक अर्थ जे हैं तिनकै जे विशेष रूप पर्याय तिनको प्रकर्ष करि प्ररूपक है। अर्थात् निरुद्ध कहिये रुक्यो है दोषका आगमको द्वार जाकै ऐसा दोषको जो प्रकर्ष ता करि प्ररूपण करनवारो है लक्षण जाको सो नय है। ताकै मूल भेद दोय है तहां एक द्रव्यास्तिक है दूसरो पर्यायास्तिक है इनकी निरुक्ति ऐसी ह कि द्रव्य है ऐसी है बुद्धि जाकी सो द्रव्यस्तिक है। अर्थात् द्रव्यको होनों ही है क्योंकि या द्रव्यतैं अन्य भावकै विकार कहिये पर्याय सो यहीं है यातैं ऐसैं द्रव्यास्तिक है अर पर्याय ही हैं ऐसी है मति जाकी सो पर्यायास्तिक है कि जन्मादि भाव विकार मात्र ही होनो है। अर तातैं अन्य द्रव्य नहीं है क्योंकि पर्याय विना द्रव्यकी अनुपलब्धि है। यातैं ऐसैं पर्यायास्तिक है अथवा द्रव्य ही है अर्थ कहिये प्रयोजन याको अर तुण कर्म जे है ते

प्रयोजन रूप नहीं हैं, क्योंकि वे तो द्रव्यकी अवस्था रूप हैं यातैं, ऐसो द्रव्यार्थिक है अर रूपादि गुण तथा उत्क्षेपण आदि कर्म रूप पर्याय ही है प्रयोजन याको सो पर्यायार्थिक है। अर पर्यायतैं अन्य द्रव्य नहीं है, ऐसैं पर्यायार्थिक है अथवा अर्थतैं कहिये प्राप्त हूजिये अथवा गम्यते कहिये जानिये अथवा निष्पादिते कहिये उत्पन्न कहिये सो अर्थ है अर कार्यनैं द्रवति कहिये प्राप्त होय सो द्रव्य है अर्थात् कारण है, अर द्रव्य ही है अर्थ जाको अर्थात् कारणरूप ही कार्य है। अर्थान्तर नहीं है क्योंकि कार्य कारणमें कछू स्वरूप भेद नहीं है पर्वके अर अंगुलीकै समान दोऊ एकाकार ही है ऐसैं द्रव्यार्थिक नय कहिये है, अर सर्वतरफतैं प्राप्त हूजिये सो पर्याय है, अर पर्याय ही है प्रयोजन कहिये कार्य याको अर्थात् द्रव्य प्रयोजन नहीं है क्योंकि अतीत अनागतमें विनष्ट अनुत्पन्न पणां करि व्यवहारको अभाव है यातैं सो ही वर्त्तमान काल वर्त्ती पर्याय कार्य कारण नामको भजनेवारो है। ऐसैं पर्यायार्थिक अथवा अर्थन जो है सो अर्थ है कि प्रयोजन है सो अर्थ है। अर द्रव्य ही है प्रयोजन जाको सो द्रव्यार्थिक है क्योंकि प्रत्यय कहिये प्रतीत अभिधान कहिये नाम अनुवृत्ति कहिये ताकै अनुकूल प्रवर्त्तन अर लिंग कहिये चिन्ह इनका दर्शनकूं छिपावनेंमैं असमर्थ पणौं है यातैं अर पर्याय ही प्रयोजन जाको सो पर्यायार्थिक है क्योंकि वाक् कहिये शब्द अर विज्ञान कहिये जाननभाव इनकी निवृत्तिको तथा प्रवृत्तिको कारण भूत व्यवहार जो है ताकी प्रसिद्धतैं अर्थात् मृत्पिंडके घट पर्याय होय है तहां मृत शब्दकी निवृत्ति है, अर मृत ज्ञानकी निवृत्ति है, अर घट शब्दकी तथा घट ज्ञानकी प्रवृत्ति है अर या है कारण जानैं ऐसा व्यवहारकी प्रसिद्धि है यातै ॥१॥ ऐसैं इनि दोऊ नयके भेद नैगमादिक है तिनके विशेष लक्षण कहिये। वार्त्तिक—संकल्पमात्रग्राही नैगमः ॥२॥ अर्थ—पदार्थका संकल्प मात्रको ग्रहण करणवारो जो है सो नेगमनय हैं। टीकार्थ—याकै विषैं प्राप्त होय सो निगम अथवा प्राप्त होना मात्र जो है सो निगम है अर निगममैं कुशल होय सो नैगम है,अथवा

निगममें होय सो नैगम है ताको लोकमें व्यवहार अर्थका सकल्प मात्र ग्रहण है। प्रस्थ, इन्द्र ग्रह गमी आदिके विषैं है सो ऐसैं हैं कि कोऊ पुरुष परसूनें ग्रहण करि गमन करतो जो है तानैं देखि कहै कि कहा निमित्त जावै है ऐसौ प्रश्न होत संतै वो वाके अर्थ कहै कि, प्रस्थ लेने निमित्त जाऊं हूं ऐसैं ही इन्द्रके अर्थ तथा ग्रहादिकके विषैं तथा गमीके विषैं जानना सो ऐसैं है कि इहां कोऊ प्रश्न करै है कि कौनसौ गमी है कि गांव जाय है ऐसैं कहत संतै सो कहै कि मैं गमी हूं। इहां वर्त्तमान कालमें नहीं गमन करतो संतो भी कहै है कि मैं गमी हूं, ऐसैं व्यवहार है या प्रकार और भी अनेक नैगम नयके विषय जाननें ॥२॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक— भाविसंज्ञाव्यवहार इति चेन्न भूतद्रव्यसन्निधानात् ॥ ३ ॥ अर्थ—यो भाविसंज्ञा व्यवहार है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि भूत द्रव्यके असन्निधान है यातें। टीकार्थ—यो नैगम नयको विषय नहीं है यो तो भाविसंज्ञा व्यवहार है कि जैसे भूत संज्ञा व्यवहार है। वर्त्तमान संज्ञा व्यवहार है तैसें ही ये उदाहरण भाविसंज्ञा व्यवहारके है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, भूतद्रव्यका असन्निधानतैं क्योंकि निश्चय करि कुमार तथा तंडुल आदि द्रव्यमें आश्रयकरि राजा तथा ऊदन आदि भावनि संज्ञा प्रवर्तै है तैसें नैगम नयका विषयमें किंचित् भूत द्रव्य नहीं है जाका आश्रयकरि भाविनी संज्ञा जानिये ॥ ३ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—उपकारानुपलम्भात्सम्व्यवहारानुपपत्तिरिति चेन्नानुप्रतिज्ञानात्। अर्थ—प्रश्न, उपकारका अनुपलम्भतैं व्यवहारको अनुपपत्ति है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रतिज्ञा नहीं करी है यातैं। टीकार्थ—नैगम नयके वक्तव्य विषय जो है ताकै विषैं उपकार नहीं प्राप्त होय है, अर भावि संज्ञा विषय राजादिकके विषैं उपकार प्राप्त होय है। तातें यो नैगम नय युक्त नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अप्रतिज्ञानतैं क्योंकि हमने या प्रतिज्ञा नहीं करी है कि उपकारतैं नहीं होतां संता ही नैगम नय होय। प्रश्न, तो कहा है? उत्तर, या नयको विषय-

दिखाइये है अथवा उपकार प्रति सन्मुख पणांतैं उपकारवान नहीं है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—स्वजात्य-
विरोधेनैकत्वोपनयात्समस्त ग्रहणं संग्रहः ॥५॥अर्थ-अपनी जातिका अविरोध करि एक पणांनैं प्राप्त
करवातैं समस्तको ग्रहण जो है सो संग्रह नय है। टीकार्थ—वुद्धि नामा अनुकूल प्रवृत्ति लिंग
इनको सदृशपणौं जो है सो जाति है, अथवा निज रूपको ग्रहण जो है सो जाति है, सो चेतन
अचेतन स्वरूपात्मक है। अर शब्दकी प्रवृत्तिका निमित्तपणां करि प्रति नियमतैं अपना
नामकी भजने वारी होय है। अर अपनी जाति है सो स्व जाति है। अर नहीं प्रच्यवन है सो
अविरोध है अर अपनी जातितैं नहीं प्रच्यवन जो है सो स्व जात्यविरोध है। अर वा अपनी जाति-
का अविरोध करि एक पणांका प्राप्त होवातैं एक पणांकी प्राप्ति होवातैं। प्रश्न, कौनको ग्रहण
होय है। उत्तर, भेदनको ग्रहण होय है अर्थात् समस्त भेदनिको ग्रहण जो है सो संग्रह है।
याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं सत् तथा द्रव्यं तथा घट इत्यादि सत् ऐसैं कहतां संतां सत्ताका
सम्वन्धकै योग्य द्रव्य पर्याय तथा तिनकै भेद तथा प्रभेदनिकै तिनतैं अव्यतिरेक पणांतैं ता एक पणां
करि संग्रह होय है। अर द्रव्यं ऐसा कहतां संता जीव अजीव तिनकै भेद तथा प्रभेदनिकै द्रव्य-
पणांका अविरोधतैं वै एकत्व पणांकरि संग्रह होय है। अर घट ऐसैं कहतां संता नामादिक
भेदतैं तथा मृत्तिका सुवर्ण आदि कारण विशेषतैं तथा वर्ण संस्थान विकारतैं भिन्न जे घट शब्द-
के वाच्य सर्व घट तिनका वाच्यपणांका अव्यतिरेक पणातैं एक पणांकरि संग्रह होय है। ऐसैं
औरनिकै विषैं भी जानना तिनमें नाम अर प्रतीत जे हैं ते सामान्य है अर्थात् जाति है क्योंकि दूर भयो
विशेष भाव है यातैं। प्रश्न, सत्तादिक अर्थान्तर भूत है तिनका अभिसम्वन्धतैं सत् आदि नाम
है? उत्तर, सो नहीं? क्योंकि दोऊ तरैं करि ही अनुपपत्ति है यातैं। इहां यो विचार करने योग्य है
कि सत्ताका सम्वन्धतैं पूर्व द्रव्यादिकनिकै विषैं सत् ऐसो नाम अर प्रतीत है या नहीं है जो है
तो प्रकाशितको प्रकाशन व्यर्थ है तैसैं सत्ताको सम्वन्ध व्यर्थ है। पर सत्ताकै दोय पणांको

प्रसंग आवे है कि अभ्यन्तर रहन वारी है, दूसरी वाह्य रहन वारी है, यातैं सिद्धान्त विरोध होय है सो सिद्धान्त सत् रूप लिंगका अविशेषतैं अर शेप लिंगका अभावतैं एक भाव है ऐसो है यातैं खर विषाणादिकनिमैं अति प्रसंग नहीं है। प्रश्न, यो द्रव्यके अर सत्ताके विशेष है सो समवाय कृत है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि समवायके पूर्वैं निषेध पणौं है यातैं, अर औरसुनूं कि सत्ताकै सत् ऐसौं नाम जो है ताके सत्तान्तर हेतुपणातैं तथा अहेतु पणांनैं होतां संता अनवस्था तथा प्रतिज्ञा हानि दोषको प्रसंग आवे। इहां वादी कहै है कि पदार्थके शक्ति प्रति नियमतैं कि पदार्थ पदार्थ प्रति भिन्न भिन्न शक्तिका नियमतैं द्रव्यादिकनिके विषैं सत् ऐसो नाम जो है सो तो निमित्तान्तर हेतुक है अर सत्ताके विषैं सत् ऐसो नाम है सो स्वतै ही है ? उत्तर, जो ऐसैं है तो संसर्गवादको त्याग होय कि सत्ताके सत्तान्तरका सम्बन्धको त्याग होय, अर इच्छा मात्र कल्पनाको प्रसंग आवै, अर और सुनूं कि पदार्थान्तर सत्तादिक जे हैं तिनकी द्रव्यादिकनिकै विषैं प्रवृत्ति जो है सो याकी है ऐसें बहुव्रीहि समास रूप है कि सो या है, ऐसैं कर्मधारय समास रूप है जो सो याकी है ऐसौ समास है तो मत्वर्थीय पणांकरि सत्तावान् द्रव्य है ऐसौ होनो योग्य है। जैसैं गोमान् यवमान् है तैसें है यातैं मत्वर्थकै भावार्थकी निवृत्ति कहने योग्य है। अथवा सो यो है ऐसा अभिसम्बन्ध करि समास करिये तो सत्ता द्रव्य है। ऐसौ अर्थ प्राप्त होय है कि जैसैं दंड पुरुष है यातैं सत् द्रव्य है ऐसें कहो हो सो नहीं है क्योंकि यामें भावरूप अर्थको निवृत्ति कहने योग्य है। अर और सुनूं कि दृष्टान्तका अभावतैं क्योंकि निश्चय करि कोऊ एक अनेकको सम्बन्धी नहीं देख्यो है। अर्थात् ऐसौ कोऊ ही नहीं है कि जानैं देखि एक सत्ता अनेक सम्बन्धिनी निश्चय करिये। प्रश्न, नीली द्रव्यकै समान एक सत्ता अनेक सम्बन्धिनी है ? उत्तर, सो नहीं है। क्योंकि नीली द्रव्यके भी अनेक पणौं है यातैं। प्रश्न, नीलीपणांके समान सत्ता अनेक सम्बन्धिनी है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा नीली पणांके

असिद्ध पणौं है यातैं। वार्तिक—अतो विधिपूर्वकमवहरणं व्यवहारः। ॥६॥ अर्थ—संग्रहनयतै ग्रहण किया अर्थको आनुपूर्वी करि ग्रहण करणा जो है सो व्यवहार है। टीकार्थ—अतः कहिये यातैं, प्रश्न, काहेतैं, उत्तर, संग्रहतैं सो ऐसो है कि संग्रह नय करि ग्रहण किया अर्थनिको विधि पूर्वक अवहरण जो है सो व्यवहार है। प्रश्न, कौनसा विधि है? उत्तर, संग्रहनय करि ग्रहण कियौ अर्थ जो है ताको आनुपूर्वी करि ही व्यवहार प्रवर्तै है सो यो विधि है सो ऐसैं हैं कि सर्वका संग्रह करि सत्को ग्रहण है सो अनपेक्षित विशेष है सो भला व्यवहारके अर्थ समर्थ नहीं है यातैं व्यवहार नय आश्रय करिये है अथवा जो सार है सो द्रव्य है अथवा गुण है इहां जीव अजीवकी अपेक्षा रहित संग्रह नय ग्रहण किया द्रव्य करि भी व्यवहार करने कूं समर्थ नहीं होय है यातैं जीव द्रव्य है, तथा अजीव द्रव्य है ऐसा व्यवहारनै आश्रय करै है, अथवा संग्रह नय कै विषैं प्राप्त भया जीव अजीव भी भला व्यवहारकै अर्थि समर्थ नहीं है यातैं देव नारक आदि तथा घट पट आदि व्यवहार करि आश्रय करिये है। याको उदाहरण ऐसो है कि कषायलो द्रव्य जो है सो औषधि है। ऐसैं कहतां संता सामान्यकै विशेषात्मक पणांतैं न्यग्रोध आदिका विशेष सामार्थ्यनैं आश्रय करिये है क्योंकि प्रभु चक्रवर्ती भी सर्व कषायला द्रव्यनैं एकत्र करनेकूं समर्थ नहीं है यातैं अर संग्रह नय करि ग्रहण किया नाम स्थापन द्रव्य जे हैं ते भी भला व्यवहारके अर्थ समर्थ नहीं है यातैं भाव रूप वर्त्तमानपर्यायही ग्रहण करिये है ऐसैं यो नय तावत् प्रवर्त्तै है कि यावत् फेर विभाग नहीं होय ॥ ६ ॥ वार्तिक—सूत्रपातवत् ऋजुसूत्रः ॥७॥ अर्थ—सूत्रका पतनकै समान सरल कहै सो ऋजुसूत्र नय है ॥ टीकार्थ—जैसैं सरल सूत्रको पतन है तैसैं ऋजुसूत्र कहिये सरलसूत्रयति कहिये व्याख्यान करै सो ऋजुसूत्र है सो सर्व त्रिकाल विषय पर्यायनिनैं उल्लंघन करि वर्त्तमान विषयनैं ग्रहण करैं है। क्योंकि अतीत अनागतकै विनष्ट अनुत्पन्न पणां करि व्यवहारको

अभाव है यातैं याको विषय वर्त्तमान कालवर्त्ती पर्याय मात्र ही दिखायो है। याको उदाहरण ऐसो है कि कशायो भैषज्यं कहिये क्वाथ जो है औषधि है। इहां परिपूर्ण प्राप्त भयो है रस जा विषैं ऐसो कषाय जो है सो भैषज है अर प्राथमिक कषाय अल्प रसवान जो है सो नहीं है क्योंकि वाकै अनभिव्यक्त इस पणौं है यातैं अर याको विषय विपच्यमान अर पक्व है अर पक्व जो है सो कदाचित् पच्यमान है कि वो पकतो हुओ है, अर कदाचित् उपरत पाक है कि पक्व है। प्रश्न, या असत् है क्योंकि तिनकै विरोध है यातैं सो ऐसैं हैं कि पच्यमान तो वर्त्त-मान विषय है, अर पक्व अतीत विषय है तिन दोऊनिको एककै विषैं अवस्थित रहनो जो है सो विरोधी है? उत्तर, यो दोष नहीं है। क्योंकि इहां ऐसो उत्तर उपजै है कि पचनकी आदिमें अविभाग समय जो है ताकै विषैं कोऊ असं पक्यो हुवो है कि नहीं है जो पक्व नहीं है तो द्वितियादि समयकै बिषैं भी नहीं पकवातैं पाकको अभाव होय है तातैं पाकका होवाते वाकी अपेक्षा करि पच्यमान है सो पक्व है अर जो अपेक्षा अंगीकार नहीं करिये तो सम कै त्रिविधिको अप्रसंग होवै क्योंकि वै ही ओदन पच्यमान जो है सो कथंचित् पक्व है कथंचित् पच्यमान है। ऐसैं कहिये है क्योंकि पाक करनवारेका अभिप्राय को अतिवृत्ति है। यातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि कोऊ पाकको कर्त्ता जो है ताकै तो भले प्रकार विशद पक्या हुआ ओदनकै विषैं पक्वको अभिप्राय है सो उपरित पाक है ऐसैं कहिये है अर कोउ पाकको कर्त्ता जो है ताकै किंचित् पक्याकै विषैं ही कृतार्थ पणौं है यातैं पच्यमान भी पक्व कहिये हैं। ऐसैं क्रियमाण अर कृत तथा भुज्यमान अर भुक्त तथा वध्यमान अर वद्ध तथा सिद्ध्यत् अर सिद्ध आदि जे हैं ते जोड़ने योग्य है, तथा याको उदाहरण प्रस्थ ऐसैं होय है कि याकै विषैं तिष्ठै है यातैं प्रस्थ है सो जा समयमें प्रमाण करिये ता समयमें है। अतीत अनागत ध्यान जो है ताका मानको अभाव है यातैं, तथा उदाहरण कुम्भकारका अभावको ऐसैं है कि शिवकादि पर्यायका करण समयमें

तो वा कुंभका अभावतैं कुंभकार नामको अभाव है यातैं और कुम्भ पर्यायका समयमें कुम्भकार अपना अवयवनिका प्रचारतैं ही निवृत्ति करै है कि कुम्भनैं करैं है यातैं भी कुम्भकारका नामको अभाव है तथा उदाहरण ऐसैं है कि तिष्ठता पुरुष प्रति प्रश्न करै है या समय कहांसे आवत हो, ऐसैं पूछतां संतां कहै है कि कहांतै भी नहीं आयो क्योंकि या समय यो ऐसैं मानैं है कि या काल गमन क्रिया परिणामको अभाव है यातैं, तथा कोऊनै प्रश्न कियो कि तुम कहां वसौ हौ तहां यो कहै है कि याही आकाश प्रदेशतैं अवगाढ़ रूप करनेको कूं हम समर्थ हैं अथवा आत्म परिणामनैं ही अवगाढ़ रूप करने कूं हम समर्थ हैं क्योंकि याको वांही वास है यातैं, अथवा काक कृष्ण है ऐसौ कहनौ भी याकौ विषय नहीं है। क्योंकि दोऊनिकै ही निज स्वरूपात्मकपणौं है यातैं कृष्ण तो कृष्णात्मक है काकात्मक नहीं है अर जो कृष्ण भी काकात्मक होय तो भ्रमरादिकनिकैं भी काकपणांको प्रसंग आवै, अर काक काकात्मक हैं कृष्णात्मक नहीं है अर जो काक भी कृष्णात्मक है तो शुक्ल काकको अभाव होय है क्योंकि काकनिकै पंचवर्णात्मक पणौं है यातैं, अथवा पित्तकै तथा अस्थिकै तथा रुधिर आदिकै पीला पणां शुक्लपणां रक्तपणां आदि वर्णवान पणौं है यातैं इनतैं भिन्नकरि काकको अभाव है यातैं क्योंकि एककै समान अधिकरण पणौं नहीं होय है, क्योंकि द्रव्यकै पर्यायनितैं अनन्यपणौं है यातैं अर पर्याय ही भिन्न भिन्न शक्तिमान है, कछु द्रव्य नाम नहीं है। ऐसैं या ऋजुसूत्र नयकै अभिप्रायतैं काक कृष्ण नहीं है। प्रश्न, कृष्ण गुणका प्रधानपणांतैं काक कृष्ण है? उत्तर,सों नहीं है क्योंकि ऐसैं मानैं अस्थि रक्तादिकनिकै विषैं कृष्णगुणको अतिप्रसङ्ग आवै है यातैं अथवा सहतके विषैं कषाय मधुर पणांनैं होतां संता विरोध है यातैं सो ऐसैं हैं कि कोऊ काकका अर कृष्णका विशेषको जानने वारो जो है, तातैं द्वीपान्तर निवासी अर नहीं प्राप्त भयो है कृष्णको अर काकको विशेष जाकै ता प्रति कृष्ण काक है ऐसैं कहता संता संशय उत्पन्न होय है कि यो काक कृष्णपणांतैं गुणका प्रधान

पणांतैं कहै है कि द्रव्यकाही तैसा परिणाम भया है यातैं कहै है अथवा यातैं ही पलाल आदिका दाहको अभाव है, क्योंकि पलालके अर दाहके भिन्न भिन्न कालको परिग्रहण है यातैं क्योकि या नयको अविभाग रूप वर्त्तमान समय है सो विषय है यातैं अर अग्निको सम्बन्धन दीपन, ज्वलन, दहन ये जे हैं ते असंख्यात समयके अन्तरालवान हैं। यातैं याके दहनको अभाव है। अर ओर सुनूं कि जा समय दाह है ता समय पलाल नहीं है क्योंकि दाह समय भस्म पणांकी रचना है यातैं, अर जा समय पलाल है ता समय दाह नहीं है। प्रश्न, जा पलाल है सो ही दहे है, उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अवशेष सहित है यातें। प्रश्न, समुदायकूं कहनवारे शब्दनिकी अवयवनिके विषें भी वृत्तिको दर्शन है यातें दोष नहीं है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि एक देशके दाह रहित वैसाका वैसा अवस्थितपणां है यातैं एक देशके दाहका अभावके उक्तपणां है, यातैं। प्रश्न, दाहका असम्भवतैं पलालदाह कहनां सम्भवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वचन विरोध है यातैं अर वैसाका वैसा अवस्थित पणां है यातैं तिनमैं प्रथम ही वचन विरोध तो ऐसो है कि जो निरवशेष पलालका दाहको असंभव है यातैं एक देश दाहतैं पलालको दाह जो है सो अदाह नहीं है, ऐसैं तू कहै है तौ तिहारा वचनके निरविशेष पर पक्ष दूषण पणांका अभावतैं पर पक्षको एक देश जो है ताके दूषक पणौं है यातैं एक देश रूप दूषक पणातैं यो वचन समस्त भी दूषक ही है ऐसैं या वचनके साधक पणांकी सामर्थ्यको अभाव है, अर वैसाको वैसौ स्थित रहणौ भी एक समयमैं दाहको अभाव है। ऐसा उक्त पणातैं अवयवनिके अनेक पणानैं होतां संतां जो अवयव दाहतैं सर्वत्र दाह है तो अवयवान्तरका अदाहतैं सर्व दाहको अभाव है। अर जो अवयवका दाहतैं सर्वत्र दाह है तो अवयवान्तरका अदाहतैं अदाह काहेतैं नहीं है, यातैं दाह नहीं है। ऐसैं पान भोजनादि व्यवहारको अभाव है अथवा या नयकी अपेक्षा करि शुक्ल वस्त्र आदि द्रव्य कृष्ण नहीं होय है क्योंकि दोउनिके भिन्न कालमैं अवस्थित पणौं है

यातैं अर प्रत्युत्पन्न विषयनैं होतां संता भी निवृत्त पर्यायका अनभिसम्बन्धतैं शुक्ल कृष्ण नहीं है। प्रश्न, ऐसैं होत संतैं सर्व व्यवहारका लोप होय हैं? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इहां तो विषय मात्रको प्रदर्शन है यातैं। अर पूर्व नयके वक्ता पणातैं व्यवहारकी सिद्धि है ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—शपत्यर्थमाह्वयति प्रत्याययतीति शब्दः ॥ ८ ॥ अर्थ—उच्चारण कियो शब्द अर्थनैं कहै, बुलावैं, प्रतीति करावै सो शब्दनय है। टीकार्थ—उच्चारण कियो शब्द जो है सो कृत संगत पुरुषकै अपना अभिधेयकै विषैं प्रतीतिनै धारण करै है सो शब्दनय है ऐसैं कहिये है ॥ ८ ॥ वार्त्तिक—स च लिंगसंख्यासाधनादिकाव्यभिचारनिवृत्तिपरः ॥ ९ ॥ अर्थ—सो लिंग संख्या साधन आदिका व्यभिचारकी निवृत्तिमें तत्पर है। टीकार्थ—लिंग तो स्त्री लिंग, पुरुष लिंग, नपुंसक लिंग, है अर संख्या एक वचन पणौं, द्विवचन पणौं, बहु वचन पणौं है अर साधन अस्मद युष्मद आदि शब्द हैं, इत्यादिकनिको व्यभिचार नहीं होनो जो है सो न्याय है अर वा न्यायको निवृत्तिमें तत्पर यो नय है सो ऐसैं है कि तिनमें प्रथम तो लिंग व्यभिचार है कि स्त्रीलिंगकै विषैं पुरुष लिंगको कहनो कि तारका है सो स्वाति है, अर पुरुष लिंगकै विषैं स्त्री लिंग कहनो कि अवगम है सो विद्या है, अर स्त्री लिंगकै विषैं नपुंसक लिंग कहनो कि वाणी है सो आतोद्य है, अर नपुंसक लिंगकै विषैं स्त्री लिंग कहनो कि आयुध है सो शक्ति है। अर पुरुष लिंगकै विषैं नपुंसक लिंग कहनो कि पट है सो वस्त्र है। अर नपुंसक लिंगकै विषैं पुरुष लिंग कहनो कि द्रव्य है सो परशु है। वहुरि संख्या व्यभिचार ऐसैं है कि एक वचनकै विषैं द्विवचन कहनो कि नक्षत्र है सो पुनर्वसु है। अर एक वचनकै विषैं वहुवचन कहनो कि नक्षत्र है सो शत-भिषज है, अर द्विवचनकै विषैं एक वचन कहनो कि गायनिको देनेवारो सो ग्राम हैं, अर द्विवचनकै विषैं वहु वचन कहनो कि पुनर्वसु है ते पंच तारका है, अर वहुवचनकै विषैं एक वचन कहनौं कि आम्र है ते वन है, अर बहु वचनकै विषैं द्विवचन कहनौं कि देव अर मनुष्य है ते दोय

राशि है। वहुरि साधन व्यभिचार ऐसें हैं कि एहि मनोरथेन यास्यति नहि यास्यसि यातस्ते पितेति। अर्थ— एहि कहिये तू आहू मन्ये कहिये में मानूं हूं रथेन यास्यसि कहिये रथ करि गमन करूंगो सो नहीं जायगो तिहारो पिता गयो। इहां मन्यसे रथेन यास्यामि ऐसा चाहिये था ताकी ऐवज मन्ये रथेन यास्यसि ऐसा कह्या सो मन्यसे ऐसा मध्यम पुरुपका मन्ये ऐसा उत्तम पुरुष था ताकी एवज यास्यसि ऐसा मध्यम पुरुष किया, इत्यादि है सो साधन व्यभिचार है। वहुरि आदि शब्द करि कालादि व्यभिचार ग्रहण करिये कि विश्व दृश्वास्य पुत्रो भविना कहिये समस्तकूं देखत भयो ऐसो याके पुत्र होनहार है। इहां भावी कार्यमें होत भयो ऐसें भूत रूप कह्यो है ऐसें काल व्यभिचार है, अर संतिष्ठते की एवज प्रतिष्ठते कहे तथा विरमतिकी एवज उपरमति कहे सो उपग्रह कहिये उपसर्ग व्यभिचार है। इहां शब्दी कहे है कि इत्यादिक व्यभिचार युक्त है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, अन्य अर्थको अन्य अर्थ करि सम्वन्ध होनेको अभाव है यातें अर जो होय तो घट पट होउ पट प्रसाद होउ तातें यथालिंग यथा संख्या साधन आदि कहनौं न्याय है। प्रश्न, ऐसें शब्द नयके मानेतें लोकमें अर समयमें विरोध होय है ? उत्तर, ऐसें हैं तो भला ही विरोध हो इहां तौ हमनें तत्व निर्णय करिये हैं। अर सुहृद पुरुषनिके विषै उपचार है कि ज्ञानवाननिनें कहनौ उपचार है। वार्त्तिक—नानार्थ समभिरोहणात्समभिरूढः ॥ १० ॥ अर्थ—इहां नानार्थ समभिरोहणात् पद पंचम्यन्त है सो कौमुदीका मततें ल्यप प्रत्ययका लोपमें पंचमी है तातें नाना अर्थनिनें छोड़ि करि ऐसा अर्थ होय है। तातें नाना अर्थनिनें छाड़ि करि एक अर्थनें ग्रहण करे है सो समभिरूढनय है। टीकार्थ—जातें नाना अर्थनिनें उलंघनि करि एक अर्थनें सन्मुख पणां करि रूढ होय है कि अर्थनें ग्रहण करनें वारो होय है तातें समभिरूढ है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, वस्त्वन्तरका असंक्रमण करि वा एकमें ही तिष्ठवापणातें। प्रश्न, कैसे ? उत्तर, अवितर्क्य ध्यानके समान सो जैसें तीसरो शुक्ल ध्यान सूक्ष्म क्रिया रूप

अवितर्क अर अवीचार ऐसो ध्यान है सो अर्थका तथा व्यंजनका तथा योगनिका पलटनका अभावतैं सूक्ष्म काय योगमें तिष्ठवापणातैं है तथा गौ यो शब्द वाक् आदि अनेक अर्थनिमें प्रवर्त्तै है तथापि पशु विशेष गौ जो है ताकैं विषैं रूढ़ है। ऐसैं औरनिकै विषैं भी रूढ़ि शब्द है सो या नयको विषय है। अथवा अर्थकी प्राप्तिकै अर्थ शब्दको प्रयोग है। तहां एक अर्थको एक शब्द करि गतपणौं है यातैं पर्याय शब्दको प्रयोग अनर्थक होय। अर जो शब्द भेद है सो जैसैं इन्दन क्रिया वान पणातैं इन्द्र है और समर्थ पणातैं शक्र है, अर पुर नगर आदिका भेदन करवातैं पुरन्दर है। ऐसैं ही सर्वत्र जाननैं अथवा जो जहां अधिरूढ़ है सो तहां प्राप्त होय करि सन्मुख पणांकरि प्राप्त होवातैं समभिरूढ़ है। सो जैसैं कोऊ प्रश्न करै कि तुम कहां तिष्ठो हो तदि वो कहै कि निज स्वरूपमें तिष्ठै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, वस्त्वन्तरमें प्रवृत्तिका अभावतैं। अर जो अन्यकी अन्यमें प्रवृत्ति होय तो ज्ञानादिक आत्मगुण जे हैं तिनकी तथा रूपादिक पुद्गल जे हैं तिनकी आकाशमें प्रवृत्ति होय ॥१०॥ वार्तिक—*येनात्मना भूतस्तेनैवाध्यवसायतीत्येवंभूतः॥ ११॥* अर्थ—जा समय जा स्वरूप करि भयो ता समय ता स्वरूप करि ही प्रतीति करावै है यातैं एवम्भूत नय है। टीकार्थ-जा स्वरूप करि तथा जा नाम करि शब्द उत्पन्न भयो है ताकरि ही जा स्वरूप करि तथा जा नाम करि शब्द उत्पन्न भयो है ताकरि ही निश्चय करावै सो एवम्भूत नय है। सो जैसैं इन्द्र शब्द परमेश्वरपणांको कहन वारो है सो परिणाम जामें जा समय प्रवर्त्तै है तामें ता समय ही युक्त है। नाम स्थापना द्रव्य जे हैं तिनकै विषैं युक्त नहीं है, क्योंकि नामादिकनिमें परमेश्वर रूप परिणामको अभाव है यातैं ऐसैं ही और भी शब्दनिकै विषैं अपना अभिधेय रूप क्रिया को परणतिका क्षणमें ही वा नाम की युक्त है अर क्षणमें नहीं युक्त है, अथवा स्वरूप करि भयो अर्थ ता स्वरूप करि ही निश्चय करावै कि जैसैं गमन करती गौ है कि जा समय गमन करै है ता ही समय गौ है तिष्ठती तथा सोवती गौ नहीं है, क्योंकि पूर्वकालमें तथा उत्तर

कालमैं गमन करनरूप अर्थका अभावतैं दंडीकै समान है ऐसैं ही औरनिकैं विषैं भी जानना। अथवा जा स्वरूपकरि जा ज्ञान करि भयौ कि परिणम्यौ ता स्वरूप करि ही निश्चय करावै सो एवम्भूत है सो जैसैं इन्द्रका तथा अग्निका ज्ञान करि परिणति आत्मा ही इन्द्र है, अग्नि है ऐसैं एवम्भूत अर्थका प्रतीति उत्पन्न करावतैं शब्द एवम्भूत है। इहां वा कार्यतैं वा शब्दपणां-की प्रसिद्धि है यातैं, प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—दाहकत्वाद्यतिप्रसंग इति चेत्तदव्यतिरेका-दप्रसंगः इति॥ अर्थ—दाहकपणांतैं अति प्रसङ्ग है ऐसैं है तो अव्यतिरेकतैं अप्रसङ्ग है। टीकार्थ—अग्नि आदि नाम जो आत्माकै विषैं करिये है तो दाहक पणां आदि अति प्रसङ्ग हूजिये है ऐसैं कहिये है? उत्तर, वातैं अभिन्न है यातैं अति प्रसङ्ग नहीं होय है सो ऐसैं है कि वे नामादिक जा स्वरूप करि कहिये है ता स्वरूपतैं तिन नामादिकनिको अव्यतिरेक है। अर धर्मनिके प्रति नियत अर्थमैं वृत्तिपणौं है यातैं तातैं नो आगम भावरूप अग्निकै विषैं वर्त्तमान दाहकपणौं है सो आगमभावरूप अग्निक विषैं प्रवर्त्तै, ऐसैं नैगमादिक नय कह्या अर इनकै उत्तरोत्तर सूक्ष्म विषय पणौं है और पूर्व पूर्व हेतु पणातैं अनुक्रम है ऐसैं ये नय पूर्व पूर्व विरुद्ध महा विषमरूप हैं अर उत्तर उत्तर अनुकूल अल्प विषय रूप है, क्योंकि द्रव्यकी अनन्त शक्ति है यातैं शक्ति शक्ति प्रति भेदनैं प्राप्त भया नय बहु विकल्प-रूप उत्पन्न होय है। ये पूर्वोक्त गुण प्रधान पणांकरि परस्पर सापेक्ष हुआ संता सम्यग्दर्शनका कारण होय है क्योंकि पुरुषार्थ रूप क्रियाका साधन स्वरूप सामर्थ्यतैं तत्वादिकके समान यथा योग्य उपाय करि स्थापन किया पट आदि संज्ञानैं प्राप्त होय है। अर स्वतन्त्र हुआ संता तत्वा-दिकके समान असमर्थ होय है। प्रश्न, ऐसो दृष्टान्त विषम उपन्यास रूप है। प्रश्न, तत्वादिक निरपेक्ष भी कोऊ अर्थ मात्रनैं तो उत्पन्न करै है कि कोऊ प्रत्येक तंतु तो त्वक्त्राणमें समर्थ है। अर कोऊ एक वृक्षकी छालित उत्पन्न भयो तंतु वंधनमें समर्थ है अर ये नय निरपेक्ष हुआ

संता कछू भी सम्यग्दर्शन मात्रनैं नहीं प्रगट करे है ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि तिहारे कहनेका अभिप्रायको अनवबोध है यातैं परका कह्या अर्थ नैं नहीं जाणिकरि यो उपालम्भ करै है जो कह्यौ कि निरपेक्ष तन्तुआदिकनिकै विषैं पटादि कार्य नहीं है अर जो वानैं कार्य दिखायो सो पटादि कार्य नहीं है। प्रश्न, तो कहा है ? उत्तर, तन्तुआदि कार्य है अर तन्तुआदि कार्य भी निरपेक्ष तन्तुआदि अवयनिकैं विषैं नहीं है ऐसैं भी हमारी पक्ष सिद्धि ही है। प्रश्न, निरपेक्ष तन्तुकै अवयवनि के विषैं भी तन्तु आदि कार्य शक्तिकी अपेक्षा करि है ऐसैं कहिये है ? उत्तर, बुद्धि अभिधान रूप कि ज्ञान ऐसा नाम रूप निरपेक्ष नयकै विषैं भी कारणका वशतैं सम्यग्दर्शनका कारणपणां रूप विपरिणतिका सद्भावतैं शक्ति स्वरूप करि अस्तित्व है ऐसैं कहेतैं दृष्टान्त कह्यो हुतो ताका उपन्यासकै समपणौं ही है ॥ १२ ॥ १३ ॥

श्लोक—ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयानां चैव लक्षणम् ।
ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥ १॥

अर्थ—या अध्यायके विषैं ज्ञानको तथा दर्शनको स्वरूप अर नयनिका लक्षण अर ज्ञानकै प्रमाणता निरूपण कियो ॥ १ ॥

इति श्रीमदकलंकदेव प्रणीते तत्वार्थ वार्त्तिके व्याख्यानालङ्कारे प्रथमेऽध्याये तदपरनाम राजवार्त्तिक सागरोद्धृत तत्त्व कौस्तुभे षष्ठ आह्निकं परिसमाप्तम् ।

। आन्हिकमैं मूल ग्रन्थ संख्या अर्थ ताकै मध्य सूत्र २५ हैं अर वार्त्तिक एकसौ वाणवै हैं। तिनमैं नवम सूत्र परि चौतीस हैं, दशम सूत्रपर तेईस हैं। ग्यारमा सूत्र पर सात हैं। वारमा सूत्रपर सोला। तेरमा पर चौदा। चौदमापर चार। पनरमापर चौदा। सोलमापर

उगणीस। सतरा पर नव। अठारमा पर दोय। उगणीसमा पर दश। वीसमा पर पनरा। ईकवीसमा पर छै। वाईसमा पर पांच। तेईसमा पर दश। चौवीसमा पर दोय। पच्चीसमा पर दोय। छवीसमा पर च्यार। सत्ताईसमा पर चार। अट्ठाईसमा पर नही है। गुणतीसमा पर नव। तीसमा पर दश। इकतीसमा पर तीन वत्तीसमापर चार। तेतीसमा सूत्र पर वारा वार्त्तिक हैं। तिनकी देश भाषा मयी वचनिका रूप अर्थ पण्डित फतैलाल जी की सम्मतितैं श्रीमज्जिन वचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवालने कर्मका क्षय निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यौ है। तामैं ग्रन्थप्रमाण श्लोक संख्या ६२६० है।



श्रीमद्भट्टाकलंकदेव विरचित

तत्वार्थ राजवार्तिक

द्वितीय अध्याय ।

टीकाकार—

स्वर्गीय पं० मन्नालालजी दूनीवाले

प्रकाशक—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, पोष्ट बक्स ६७४८ कलकत्ता



नमः सिद्धेभ्यः।

तत्वार्थ राजवार्तिक



भाषा वचनिका समेत ॥



द्वितीय अध्याय।

तहां ग्रंथकार इष्टदेवकी जयात्मक स्तुति करता संता मंगलाचरण करै है।

श्लोक—जीयाच्चिरमकलंकब्रह्मा लघुहव्वनृपतिवरतनयः ।
अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः प्रशस्तजनहृद्यः ॥१॥

अर्थ—नहीं है अष्टादश दोष विशेष रूप कलंक जाके अर प्रजाने बधावे सो ब्रह्मा कहिये। अर अकलंक ऐसो जो ब्रह्मा सो अकलंक ब्रह्मा कहिये अर्थात् ऋषभदेव अर याके ब्रह्म पणों तौ कर्म भूमिको जो प्रयोग ताका प्रदर्शकपणां करि जाणिवे योग्य है। अर्थात्-आदि ब्रह्मा है सो चिरकाल सर्वोत्कर्षपणां करि वर्तो। क्योंकि धर्मके अनादि निधनपणांनैं होतां संतां भी प्राप्त

भया अवसर्पिणी कालका प्रारंभके विषैं प्रथम रत्नत्रय स्वरूपका धारण पणौं करि तथा प्रवर्त्तक पणां करि असाधारण उपकार कर्तापणौं विशेष पण कह्यो है। यातैं ही चिरकाल जयवंतौ रहो या पदकी समीचीन गति है। बहुरि वो अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, लघु हव्व नृपति वर तनय है याको अर्थ ऐसो है कि हव्व शब्द प्राकृत रूप है सो कोऊ नृपति विशेषको वाचक है सो तौ द्वितीय अर्थमें ग्रहण करने योग्य है। अर इहां तौ प्रकृति भूत पणांतैं कि प्राकृतमें हव्य शब्दनैं हव्व आदेश भयो है यातैं हव्व शब्दको ग्रहण है तातैं ही लघु हव्व नृपति वर तनयः ऐसो भयो है। अर याको अर्थ ऐसो है कि हव्व शब्दके भोजन वाचकता है। क्योंकि हुदानादनयोः या धातु करि उत्पन्न पणौं है यातैं तथा हव्य कव्ये दैव पैत्र्ये अन्ने ऐसा लिंगानुशासन है यातैं तातैं ही लघु कहिये सूक्ष्म है हव्य कहिये भोजन जाकै सो लघु हव्व कहिये क्योंकि अन्तिम भोग भूमिमें उत्पन्न भया कल्पवृक्षतैं है उत्पत्ति जाकी ऐसा भोजनका करवातैं भोजनमें लघु पणौं है। अर्थात्- जघन्य भोग भूमिमें वोर प्रमाण भोजन है यातैं लघु पणों कह्यो है। इहां लघु शब्द है सो अपेक्षा सहित है यातैं कहो कि कौनतैं लघु है ऐसी आशंकानै होतां संतां कहिये है कि कर्म भूमिज मनुष्यनितैं लघु भोजन है सो लघु हव्व नृपति है अर्थात्-नाभि राजा है। ताको वर पुत्र ऋषभदेव है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः। याको अर्थ ऐसो है कि निखिल जे विद्वज्जन ते निखिल विद्वज्जना कहिये अथवा विद्वांस तौ देव है क्योंकि विबुध पर्यायका वाचक पणांतैं है। अर जन जे हैं ते मनुष्य हैं तिनकरि निरंतर नुत है कि प्रकर्षपणौं स्तुति रूप है विद्या कहिये केवल ज्ञान जाको अथवा विद्वान् कहिये वित् जो अवधिज्ञान सो है विद्यमान जाके सो विद्वान् सौधर्मेन्द्र है। अर जना कहिये भरतादि भक्त जन तिन करि नुत है कि आदर करि ग्रहण करी है विद्या कहिये हेयोपादेयरूप उपदेश जाको ऐसो है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, प्रशस्तजनहृद्यः।

याको अर्थ ऐसो है कि प्रशस्ता कहिये प्रशंसानैं प्राप्त भया कि सप्त प्रकार ऋद्धिनैं प्राप्त भया ऐसा वृषभसैन आदि गणेश है अर जना कहिये द्वादश सभा निवासी प्राणी है तिनका हृदय गत अर्थका प्रकाशपणा तैं हृद है कि मनोहर है। ऐसैं तौ ऋषभदेवकी जयात्मक स्तुति रूप अर्थ जाननूं। वहुरि दूसरो अर्थ यो है कि अकलंक नामक आचार्य जो ब्रह्मा है या अर्थमें ब्रह्मा शब्दको निरुक्ति ऐसी है कि वधायो है चरित्र जानैं अथवा वधायो है सूत्रार्थ जानैं ऐसो ब्रह्मा है। अर अकलंक ऐसो जो ब्रह्मा कहिये या पदकरि शास्त्र कर्त्ता अपना नामनैं प्रगट करे है सो चिरकाल जयवंतो रहो। याको अर्थ पूर्ववत् जानौं। वहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर—लघुहव्वनृपतिवरतनयः याको अर्थ ऐसो है कि हव्व नामा नृपति जो है सो हव्व नृपति कहिये। अर हव्व नृपतिको जो उत्तम पुत्र सो हव्व नृपति वर तनय कहिये अर लघु ऐसो जो हव्व नृपतिको उत्तम पुत्र सो लघु हव्व नृपति वर तनय कहिये। अर्थात् हव्व नृपतिको कनिष्ठ पुत्र है। वहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः याको अर्थ ऐसो है कि निखिल कहिये समस्त विद्वज्जन आगमदर्शी जे हैं तिनकरि निरंतर नुत है कि प्रस्तुत है स्याद्वाद विद्या जाकी ऐसो है। वहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, प्रशस्तजनहृद्यः। याको अर्थ ऐसो है कि प्रशस्त जना कहिये सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त भव्य जे हैं तिनका मनको हरन वारो है। क्योंकि वाकै अपना वचनरूप अमृत करि मिथ्यादर्शनरूप संशयादिक हालाहलका दूरि करिवा पणांतैं ॥ १ ॥ अवैं प्रथम सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है। कि इहां कहैं हैं कि मोक्षमार्गकी व्याख्याका प्रसंग करि सम्यग्दर्शनादिक जे हैं ते उपदेशके विषय होय हैं, अर तिनका लक्षण तथा उत्पत्ति कारण तथा विषयका नियम आदि प्रथम अध्यायके विषैं व्याख्यान किये तहां तत्वार्थका श्रद्धानतैं सम्यग्दर्शन कह्यो। अर तत्वार्थ जीवादिकनिनैं कह्या तहां आदिमें कह्यो जो जीव ताको कहा श्रद्धान करने योग्य है

ऐसा प्रश्न होत संतैं कहै हैं कि जाका अवधारणतैं तथा ज्ञानतैं तथा उपासनातैं जो उत्पन्न होय सो श्रद्धान करने योग्य है। यातैं तत्व कहिये है सो तत्व आत्माको स्वभाव है यातैं श्रद्धान करने योग्य है। प्रश्न, ऐसैं है तो आत्माको तत्व कहा है सो कहो ? ऐसैं कहतां संतां उत्तर रूप सूत्र कहै हैं तथा उत्थानिका लिखिये हैं कि अथवा प्रमाण नयके अनन्तर ही दिखाये हैं ते प्रमेयके जनावनें रूप हैं कि प्रमेय इनतैं जाने जांय हैं। अर प्रमेय जीवादिक पदार्थ हैं ते अवैं दिखायवे योग्य है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो या प्रथम कहा हुवा जीवको तत्व कहा है ऐसा प्रश्न होत संतैं सूत्रकार कहै हैं। सूत्रम्—

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥१॥

अर्थ—औपशमिक अर क्षायिक ये दोय भाव हैं तथा मिश्र भी भाव है, ये तीन भाव जीवके निज तत्व हैं। बहुरि औदयिक अर पारिणामिक भाव हैं ते भी निज तत्व हैं ॥१॥ प्रश्न, औपशमिकादिकनिके लक्षण भी कहौ। उत्तररूप वार्तिक—कर्मणोनुद्भूतस्ववीर्यवृत्तितोपशमोधः प्रापितपंकवत् ॥१॥ अर्थ—कर्म कै नहीं प्रगट भई जो अपना वीर्यकी प्रवृत्तिता तीं स्वरूप आत्माकी विशुद्धि जो है सो उपशम है सो जैसैं नीचे बैठि गयो है कादो जाको ऐसा जलके समान उज्वलता है। जैसैं कतकादिक द्रव्यानिका मिलापतैं अधोभाग मैं प्राप्त भयो है मल द्रव्य जाको ऐसो कालिमा सहित जल जो है ताकै वा मल कृत कालिमाको जो उदय ताका अभावतैं उज्वलता पाइये हैं। तैसैं सम्यग्दर्शन आदि कारणका वशतैं कर्मके नहीं प्रगट भई जो अपना वीर्यकी प्रवृत्तिता तीं रूप आत्माकी विशुद्धि जो है सो उपशम है। अर्थात् आत्माका स्वभावनें मलिन करनवारे कर्म सत्तामें विद्यमान हैं। तथापि सम्यग्दर्शनादिककी निकटतातैं शक्तिका नहीं प्रगट होना जो है सो उपशम है ॥१॥ वार्तिक—क्षयो निवृत्तिरात्यंतिकी ॥२॥ अर्थ—प्रथम तो अधोभागमें प्राप्त भयो है पंक जाको बहुरि दूसरा उज्वल पात्रमें प्राप्त भयो

ऐसो जो जल ताकै अत्यंत उज्वलता जो है सो क्षय है तैसैं आत्माकै भी कर्मकी अत्यंत निवृत्ति— नैं होतां संतां अत्यंत विशुद्धि जो है सो क्षय है। इहां कारणको कार्यके विषैं उपचार करि कह्यो है क्योंकि विशुद्धताको कारण कर्मको क्षय है ताकूं ही विशुद्धि कही है सो योग्य ही है ॥२॥ वार्तिक—उभयात्मको मिश्रः क्षीणाक्षीणमदशक्तिकोद्रववत् ॥३॥ अर्थ—जैसैं प्रक्षालन विशेषतैं कुछ क्षीण भई अर कुछ नहीं क्षीण भई है मद शक्ति जिनकी ऐसे जे कोद्रव तिनकी दोय भेदरूप प्रवृत्ति है। तैसैं यथोक्त सम्यग्दर्शनादिक जे कर्म क्षयका कारण तिननैं निकट होतां संता कर्मका एकोदेश क्षय होवातैं अर एकोदेश शक्तिका उपशम होवातैं आत्माके जो भाव होय सो उभयात्मक मिश्रभाव हैं। ऐसैं उपदेश करिये है ॥३॥ वार्तिक—द्रव्यादिनिमित्तवशात्कर्मणः फलप्राप्तिरुदयः ॥४॥ अर्थ—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, रूप निमित्तनैं प्रतीति करि पक्या जो कर्म ताका फलकी जो प्राप्ति सो उदय नामनैं पावै है ॥४॥ वार्तिक-द्रव्यात्मलाभमात्रहेतुकः परिणामः ॥५॥ अर्थ—द्रव्यका स्वरूपको लाभ मात्र ही जाको हेतु है अर और हेतु नहीं है सो परिणाम है ऐसैं कहिये है। भावार्थ-अपना स्वरूपको जनावनेवारो जो भाव है सो परिणाम हैं ॥५॥ वार्त्तिक--तत्प्रयोजनत्वाद्वृत्तिवचनम् ॥६॥ अर्थ—ते उपशमादिक हैं प्रयोजन जिनके ऐसी वृति करिये हैं अर्थात् कर्म्मनिको उपशम है प्रयोजन जाको सो औपशमिक भाव है अरकर्मनिको क्षय है प्रयोजन जाको सो क्षायिक भाव है। अर कर्मनिको क्षयोपशम है प्रयोजन जाको सो क्षयोपशमिक भाव है सो ही मिश्रभाव है। अर कर्मनिको उदय है प्रयोजन जाको सो औदयिक भाव है। अर पारिणाम है प्रयोजन जाको सो परिणामिक भाव है। ऐसैं ए पांच भाव आत्माका स्वतत्व है कि निज तत्व है अर्थात् असाधारण भाव है ॥६॥ अबै इनि भावनिका अनुक्रम जनावनैं निमित्त कहै हैं। वार्तिक—व्याप्तेरौदयिकपारिणामिकग्रहणमादाविति चेन्न भव्यजीवधर्मविशेषख्यापनार्थत्वादादावौपशमिकादिभाववचनम् ॥७॥ अर्थ—प्रश्न, सर्व जीवनिमैं

साधारणपणाकी व्याप्तितैं औदयिक परिणामिक भावनिको ग्रहण आदिमें न्याय्य है? उत्तर, ऐसे नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, भव्य जीवनिका धर्म विशेष जनावनेंका प्रयोजनपणांतैं क्योंकि निश्चय करि भव्यकूं मोक्षका प्रतिपादनके अर्थ ही यो प्रयास है, यातैं आत्माका धर्म विशेष औपशमिकादि भाव जे हैं ते आदिमें कहिये है ॥७॥ वार्त्तिक—तत्र चादावौपशमिकवचनं तदादित्वात्सम्यग्दर्शनस्य ॥८॥ अर्थ—बहुरि तिनभावनिमें सम्यग्दर्शनकी आदिमैं औपशमिकभाव है। ता पीछें क्षायिकभाव है। ता पीछें क्षायोपशमिक भाव है। यातैं आदिमें औपशमिक भाव ग्रहण करिये है ॥८॥ वार्त्तिक—अल्पत्वाच्च ॥९॥ अर्थ—औपशमिक भावनिकैं अल्पपणौं है यातैं भी आदिमें ही योग्य है। अथवा क्षायिकतैं अर क्षायोपशमिकतैं औपशमिक भाव अल्प है सो ऐसें है कि उपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त्त है सो अन्तर-मुहूर्त्त असंख्यात समय प्रमाण है। तहां समय २ निरन्तर संचय रूप किया उपशम सम्यग्दृष्टी अन्तरमुहूर्त्तकी समाप्ति पर्यन्त पल्योपम असंख्यात भाग प्रमाण है यातैं सर्वतैं अल्प है। भावार्थ-उपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त्त प्रमाण कह्यो ताका समय असंख्यात कह्या ते समय पल्यका जे असंख्यात समय तिन प्रमाण है अर बाकी कालका समय २ प्रति भिन्न २ सम्यग्दृष्टी तिष्ठे है। तातैं ते हू तावत्प्रमाण है। तातैं अल्प है ॥९॥ वार्तिक—ततो विशुद्धिप्रकर्षयुक्तत्वात् क्षायिकः ॥१०॥ अर्थ-निश्चय करि औपशमिकतैं क्षायिक भाव जो है सो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति इनका समस्त पणांकरि क्षय होवातैं अत्यन्त शुद्ध युक्त है। तातैं औपशमिकतैं परै क्षायिक वचन है ॥१०॥ वार्तिक-बहुत्वाच्च ॥११॥ अर्थ-औपशमिक सम्यग्दृष्टीनितैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी बहुत हैं। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, गुणाकार विशेषतैं प्रश्न, कौनसा गुणाकार है? उत्तर, आवलीको असंख्यातमो भाग जो है सो भी असंख्यात समय प्रमाण है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, आवलीको असंख्यातको रासिका असंख्यात ही भेद है। तातैं आवलीका असंख्यात भाग करि गुण्या उपशम

सम्यग्दृष्टी क्षायिक सम्यग्दृष्टिकी संख्यानै प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, संचय कालका महत्पणातैं इहां क्षायिकसम्यग्दृष्टीको तेतीस सागरोपम किंचित् अधिक काल है। ताका प्रथम समयतैं आरम्भ करि समय समयके विषैं संचय किया वाका कालकी परिसमाप्त पर्यन्त बहुत होत हैं भावार्थ—क्षायिक सम्यक्त्वको काल आठ वर्ष घाटि दोय कोटि पूर्व अधिक तेतीस सागरका है ताकै समय प्रति भिन्न भिन्न तिष्ठते क्षायिक सम्यग्दृष्टी तावत् प्रमाण होय है। यातैं उपशम सम्यग्दृष्टीतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी बहुत हैं ॥११॥ वार्त्तिक—तदसंख्येयगुणत्वात्तदनन्तरं मिश्रवचनम् ॥१२॥ टीकार्थ—क्षायिकतैं असंख्यात गुणौं क्षायोपशमिक है सो द्रव्यतैं हैं। भावतैं नहीं है अर निश्चय करि भावतैं विशुद्धताकी प्रकर्षताका योगतैं क्षायोपशमिकतैं क्षायिक अनन्तगुणौं है। तातैं द्रव्यतैं क्षायिकतैं क्षायोपशमिक असंख्यातगुणौं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, गुणाकार विशेषतैं है प्रश्न, वो गुणाकार कौनसो है ? उत्तर, आवलीका असंख्यात भाग प्रमाण है। प्रश्न, काहेतैं है ? उत्तर, संचयकालका महत् पणातैं है इहां क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टी कै छयाछठि सागर प्रमाण पूर्व पूर्णकाल है। ताका प्रथम समयतैं आरम्भ करि समय समयके विषैं संचय किया क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टी वा कालकी समाप्ति पर्यन्त बहुत होय है ॥१२॥ वार्तिक- तदनन्तगुणत्वादन्तेद्वयवचनम् ॥१३॥ अर्थ—तिन सबनिके विषैं ही अनन्त गुण औदयिक अर पारिणामिक भाव हैं। तातैं अन्तके विषैं तिनको वचन कियो है ॥१३॥ वार्तिक—तैरेव चात्मनः समधिमात् ॥१४॥ अर्थ—अतीन्द्रियपणातैं आत्माको जाननौ मनुष्य तिर्यंच योनि आदि तौ औदयिक भावनिकरि तथा चैतन्य जीवत्व आदि पारिणामिक भावनिकरि होय है यातैं भी दोऊनिको वचन अन्तमैं ही योग्य है ॥१४॥ वार्तिक—सर्वजीवतुल्यत्वाच्च ॥१५॥ अर्थ—अथवा सर्व जीवनिकै औदयिक अर पारणामिक भाव तुल्य हैं तातैं भी तिनको अन्तके विषैं वचन कहनो न्याय है ॥१५॥ इहां प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—तत्वमिति बहुवचनप्रसङ्ग इति चेन्न भावस्यैकत्वात्॥१६॥

अर्थ—प्रश्न, औदयिकादि पंच भावनिका समान अधिकरण पणातैं तत्वके बहुवचनकी प्राप्ति होय है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, भावके एक पणातैं तत्व ऐसैं कह्यौ है, क्योंकि यो एक भाव है ॥१६॥ वार्त्तिक--फलभेदान्नानात्वमिति चेन्न स्वातमभावभेदस्याविवक्षितत्वाद्गावोधनमिति यथा॥१७॥ अर्थ—प्रश्न, इनि औपशमिकादि भावनिकै पांच पणौं है यातैं फल भेदतैं भावनि कै नाना पणूं है। उत्तर-ऐसैं, नहीं है। प्रश्न-कहा कारण ? उत्तर, अपने निज भावनिके भेदनिको कहनेकी इच्छा नहीं है यातैं बहुरि याको दृष्टान्त कहै है कि जैसैं गावो धनं कहिये गऊ जे हैं ते धन हैं। भावार्थ--गावः धनं इहां गावः शब्द बहुवचनांत होत संतैं भी धनं ऐसैं एक वचन कहतैं भी समानाधिकरण पणौं होय है क्योंकि गऊ प्रत्येक प्रत्येक धन है। तथापि गो गति भेदनकी अविवक्षाकरि गावो धनं ऐसा होय है। तैसैं ही औपशमिकादयः भावाः तत्वं इहां औपशमिकादिकनिकै बहुवचनांतपणौं होत संतैं भी तत्व ऐसा एक वचन कहनेतैं भी समानाधिकरणपणौं होय है। क्योंकि औपशमिकादिक प्रत्येक प्रत्येक तत्व हैं। तथापि औपशमिकादिगत भेदनकी अविवक्षाकरि तत्वं ऐसो एक वचन कह्यो है ऐसे जानना ॥१७॥ वार्त्तिक-प्रत्येकमभिसम्बन्धाच्च ॥१८॥ अर्थ--अथवा भावनिकै तत्व शब्दका अभिसंबंध करवातैं एक पणौं उत्पन्न होय है सो ऐसे औपशमिक भाव निज तत्व है। क्षायिक भाव निज तत्व है। मिश्र भाव निज तत्व है, औदयिक भाव निज तत्व है, पारिणामिक भाव निज तत्व है। ऐसैं पांच भाव निज तत्व हैं ॥१८॥ वार्तिक—द्वंद्वनिर्देशो युक्त इति चेन्नोभयधर्म्मव्यतिरेकेणान्यभावप्रसंगात् ॥१९॥ अर्थ—प्रश्न, तत्व शब्दको औपशमकादिक शब्दनिकै प्रत्येक संबंध करो हो तो इहां द्वन्द्व समासको निर्देश करवो योग्य है, तहां यो भी अर्थ होय है अर दोय च शब्द नहीं कर्तव्य होय है ? उत्तर, तुमनैं कह्यौ तैसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उभय धर्म विना और भावकी प्राप्ति होवाको प्रसंग आवै है यातैं। भावार्थ—ऐसैं द्वन्द्व समास करवातैं उपशम अर क्षायिक दोऊ भावनिका

मिलाप रूप मिश्र भाव है तातैं भिन्न और मिश्र भावकी प्रतीत होवै तातैं द्वन्द्व समास करना योग्य नहीं है। अर च शब्दके होतैं पूर्वोक्त दोऊ भावनिका आकर्षणको अर्थ युक्त होय है ॥१६॥ वार्तिक—क्षायोपक्षमिक ग्रहणमिति चेन्न गौरवात् ॥२०॥ अर्थ- ऐसैं है तो अन्य भावकी निवृत्ति के अर्थ मिश्र शब्दकी एवज क्षायोपशमिक शब्दको ग्रहण करवो ही योग्य है। उत्तर, तुमने कह्यौ तैसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, ऐसैं करनेतैं सूत्रमें गौरव होय है यातैं ॥२०॥ वार्तिक—मध्ये मिश्रवचनं क्रियते पूर्वोत्तरापेक्षार्थम् ॥२१॥ अर्थ—सूत्रके मध्यमें मिश्र वचन करिये है सो पूर्व उत्तर भावनिके ग्रहण करनेकी अपेक्षाकै अर्थि हैं। प्रश्न, दोऊ भावनिकी अपेक्षाको कहा प्रयोजन है ? उत्तर, भव्यनिकैं औपशमिक अर क्षायिक सम्यक्त्व चारित्र भी भाव है। अर औदयिक परिणामिक ज्ञान दर्शन, चारित्र रूप भी भाव है। भावार्थ—भव्यनके औपशमिक सम्यम्यक्त्व अर औपशमिक चारित्र तथा क्षायिक सम्यम्यत्व अर क्षायिक चरित्र तथा क्षायोपशमिक सम्यम्यक्त्व अर क्षायोपशमिक चारित्र तथा औदयिक परिणामिक भी भाव है। अर भव्यनिके भी औदयिक परिणामिक तथा क्षायोपशमिक भी भाव है। तहां अभव्यनिके तथा भव्य मिथ्यादृष्टीनिकै चारित्र विना ज्ञान दर्शनके विकल्प हैं ते क्षायोपशमिक हैं। प्रश्न, सम्यक्दर्शन विना क्षायोपशमिक दर्शन ज्ञान कैसैं संभवै ? उत्तर, घुणाक्षरन्यायकरि स्वयमेव कर्मकी चालतैं ज्ञान दर्शनके विकल्प क्षयोपशमरूप होय हैं ते ज्ञान दर्शनके विकल्प हैं। अर ये सम्यक्रूप ज्ञान दर्शनके विकल्प रूप नहीं है। प्रश्न, ऐसे हैं तो सूत्रमें छैः भेद कहे चाहिये ? उत्तर, नहीं कहे चाहिये क्योंकि क्षायोपशम दोय प्रकार है कि एक सम्यक् क्षयोपशम है दूसरो असम्यक्क्षायोपशम है यातैं ॥२१॥ वार्तिक--जीवस्येति वचनमन्यद्रव्यनिवृत्त्यर्थम् ॥२२॥ अर्थ,--सूत्रमें जीवस्य ऐसो वचन है सो यो स्वतत्त्व जीवको है अन्यद्रव्यको नहीं है ऐसैं जनावने निमित्त है ॥२२॥ वार्तिक--स्वभावपरित्यागापरित्यागयोः शून्यता निर्मोक्षप्रसंग इति चेन्नादेशवचनात् ॥२३॥ अर्थ--प्रश्न, इहां यो विचार करनौं योग्य है कि

आत्मा औपशमकादि भावनिको परित्यागी है कि अपरित्यागी है जो परित्यागकरे है तो स्वभावका अभावका आत्माके शून्यता प्राप्त होयगी याको दृष्टांत कहे हैं कि जैसे अग्निके उष्ण स्वभावका परित्यागनै होतां संता अभाव होय है तैसैं अभाव होयगा। अर जो आत्मा क्रोधादि स्वभावको ।A अपरित्यागी है तो क्रोधादि स्वभावका अपरित्यागतैं आत्माके मोक्षको अभाव प्राप्त होयगो ।८ उत्तर, ऐसे कह्यौ हो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, आदेशका वचनतैं ऐसैं है कि अनादि पारिणामिक चैतन्य रूप स्वभाव है आत्मानैं कहने वारा जो द्रव्यार्थिक नय ताका आदेशतैं कथंचित् स्वभावको अपरित्यागी है। अर आदिमान औदयिकादि पर्याय स्वभाव रूप आत्मानैं-कहनेवारो जो पर्यायार्थिक नय ताका आदेशतैं कथंचित् स्वभावको परित्यागी है। इत्यादि पूर्ववत् सप्तभंगी जानवो योग्य है अर जाके एकांत करि स्वभावको परित्याग अथवा अपरित्याग है ताकैं यथोक्त दोष होय है अर स्याद्वादीनिकैं नहीं होय है ॥२३॥ वार्तिक—अप्रतिज्ञानात् ॥२४॥ अर्थ—अर या हम नहीं प्रतिज्ञा करैं हैं कि स्वभावका परित्यागतैं तथा अपरित्यागतैं मोक्ष है। प्रश्न, तो काहेतैं मोक्ष है? उत्तर, अष्ट प्रकारके कर्मनिका जो परिणमन ताकरि वशीकृत जो आत्मा ताकैं द्रव्य क्षेत्र काल भाव रूप वाह्य निमित्तकी निकटतानैं होतां संता अर आभ्यंतर सम्यग्दर्शन, ज्ञान चरित्र मोक्षमार्गकी प्रवलताकी प्राप्तिनै होतां संता सर्वकर्मका क्षयतैं मोक्ष होनो कह्यो है। तातैं तुमने कह्यो सो दोष नहीं है। अर तुमने अग्निको दृष्टांत कह्यो सो भी योग्य नहीं है क्योंकि अग्निके उष्ण स्वभावका परित्यागनैं होतां संता भी द्रव्यको अभाव नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, द्रव्यरूप पदार्थका अवस्थानतैं। भावार्थ—पुद्गल द्रव्यको ही पर्याय उष्ण भाव है ताका अभावनै होतां संता भी विद्यमान अचेतनपणां आदि गुणानि करि संयुक्त द्रव्यको अवस्थान है यातैं अर्थात् जैसैं जीव द्रव्यके मनुष्य पर्याय है तैसैं पुद्गलके अग्नि-पर्याय है। अर पर्यायका नाश होनेतैं द्रव्यको नाश नहीं होय है। अर जीव द्रव्य अपने योग्य

अन्य पर्यायनैं प्राप्त होय है तैसैं ही पुद्गल द्रव्य अपने योग्य अन्य पर्यायनैं प्राप्त होय है तथापि दोऊ ही द्रव्य अपना नित्य ध्रौव्य गुणनैं नहीं छांडे है तातैं अभाव नहीं है। प्रश्न, अग्नि पर्यायको तो अभाव होय है। उत्तर, पर्याय तो क्षणस्थाई ही होय है ताको कहा कहनो है ॥२४॥ वार्तिक—कर्मसंन्निधाने तदभावे चोभयभावविशेषोपलब्धेर्नेत्रवत् ॥ २५ ॥ अर्थ—बहुरि जैसैं नेत्र है सो रूप ग्राहक स्वभाव रूप है सो जा समय रूप नहीं ग्रहण करै ता समय रूपग्राहक स्वभावका परित्यागतैं भी अभावरूप नहीं है अथवा क्षायोपशमिकपणांतैं होतां संता रूप ग्राहक स्वभावी जे नेत्र हैं तिनको समस्तपणैं क्षीण भये हैं सकल आवरण जा विषैं ऐसा केवल ज्ञानकै विषैं मतिज्ञानका अभावतैं नेत्रात्मक रूप ग्राहकका स्वभावनैं परित्यागनै होतां संता भी द्रव्यनेत्रका सद्भावतैं नेत्रको अभाव नहीं मानिये है। तैसैं कर्मके निमित्ततैं भये जे औदयिकादिक भाव तिनका अभावनैं होतां संता भी क्षायिक भावका सद्भावतैं आत्माको अभाव नहीं है। विशेष उपलब्धि है इहां कोऊ प्रश्न करै है कि कर्मका निमित्ततैं भये जे भाव तिनकूं स्वभाव कैसे कहे ? उत्तर, क्रोधादिक विभाव कर्मके निमित्ततैं होय है। तथापि क्रोधादिरूप आत्मा ही होय है। तातैं उपचारतैं स्वभाव कह्या है॥२५॥ अबै दूसरा सूत्रकी उत्थानिका कहैं है कि इहां कोऊ प्रश्न करै है कि आत्माके औपशमकादिक भाव हैं ते भेदवान हैं कि अभेदरूप हैं। इहां उत्तर कहै हैं कि भेदवान हैं। प्रश्न, जो ऐसे हैं तो वे भेद कहो कि कितनेक हैं ? यातैं उत्तर रूप सूत्र कहैं हैं ॥ सूत्रम्---

द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥३॥

अर्थ—दोय नव अष्टादश एकविंशति तीन भेद यथाक्रम हैं। भावार्थ—औपशमिकभाव दोय प्रकार है। क्षायिकभाव नव प्रकार है। मिश्रभाव अष्टादश प्रकार है। औदयिकभाव एकविंशति प्रकार हैं। पारिणामिकभाव तीन प्रकार है। ऐसैं तिरेपनभाव आत्माके निज तत्व

हैं। प्रश्न, यो कहा निर्देश है। उत्तररूपवार्त्तिक—द्व्यादीनांकृतद्वन्द्वानां भेदशब्दे न वृत्तिः ॥ अर्थ--दोय, नव अष्टादश, एकविंशति, तीन होय ते द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रय कहिये ऐसैं द्वंद समास करि पीछे भेद शब्दके साथ यो सामास जानने योग्य है। प्रश्न, इहां इतरेतर योगमें द्वंद्व समास कियो सो तुल्य योगमें होय है कि समानाधिकरणमें होय है? अर इहां तुल्ययोग नहीं हैं। प्रश्न, कैसैं उत्तर, द्व्यादिकशब्द जे हैं ते संख्येय प्रधान हैं कि संख्या जाकी कीजिये ता अर्थनैं कहै है। एकविंशति शब्द संख्यान अप्रधान है कि संख्याकूं कहैं हैं तातैं द्वन्द्वसमास नहीं वन सकै है यहां ग्रन्थकार कहैं हैं कि यो दोष नहीं है क्योंकि इनि द्व्यादिक संख्या शब्दनिकूं संख्येय प्रधान पणां होत संते भी कारणान्तरका आश्रयतैं संख्या वाची शब्दनिके विषैं भी समास होय हैं सो ऐसे हैं कि जैसे प्रधान हैं सो किंचित् निमित्तनैं अपेक्षाकरि गौणनैं आश्रय करे है जैसैं प्रधान भूत भी राजा गौणभूतजो मंत्री तानैं आश्रय करै है अर वा मंत्री करि प्रयोग रूप कियो जो कियाको फल ताका प्रयोजनवानपणांतैं ता मंत्रीको ता अर्थमें प्रधानपणों भी जाने है। भावार्थ—द्व्यादिक शब्द संख्येय प्रधान है तौ हू गौणभूत जो संख्यान प्रधान ताको योग होत संतैं अपना संख्येय प्रधान अर्थनैं गौणकरि संख्या प्रधानरूप होय तुल्य योग करैं हैं। तातैं इतरेतरयोग द्वंद्व समास होय हैं। इहां वादी कहै है कि यो समाधान तो युक्तिकै आश्रय है। अर व्याकरण शास्त्र करि तो विरुद्ध ही है। उत्तर, ऐसे ही व्याकरण शास्त्रमें कह्यो है। एकादय: प्राग्विंशतेः संख्येयप्रधाना विंशत्यादयस्तु कदाचित्संख्यानप्रधानाः—कदाचित्संख्येयप्रधाना है। इति याकौ अर्थ ऐसो हैं कि एकादिक शब्द जे हैं ते वीसतैं पूर्व उगणींस पर्यंत तो संख्येय प्रधान हैं। विंशत्यादिक जे हैं ते कदाचित् संख्यान प्रधान हैं कदाचित् संख्येय प्रधान हैं अरद्व्यादिक शब्द भी संख्यान अर्थ प्रवर्त्तें तो अर विंशत्यादिक शब्दनिकरि तुल्य होय तहां कहा दोष होय। सो कहिये है कि अपने सम्बन्धी शब्दनिकी विभक्ति

जो है तानें अपनी विभक्तिकरि द्वयादिक शब्दनिकी विभक्तिको भिन्न पणांकरि श्रवण होय। अर संख्याकूं स्वतैं एकपणांतै एकवचन सुनिये है सो जैसैं विंशतिर्गवां। इहां गो नें है तिनकी विंशति संख्या है ऐसौ अर्थ होय है। तहां विंशति शब्दको सम्बन्धी जो गौ शब्द ताकै षष्टी विभक्ति अर बहुवचन सुनिये है। अर विंशति संख्या प्रधान शब्दकै प्रथमा विभक्ति अर एक वचन ही सुनिये है। भावार्थ—पंच घटा, दश घटा इहां पंचन् शब्दकूं संख्यातप्रधान मानिये तौ विंशति गवां प्रयोगके समान घटाना पंच ऐसा प्रयोग होना चाहिये। तथा पंचशब्दकै बहुवचनान्त पणां भी नहीं होना चाहिये क्योंकि संख्या वाची शब्दकूं स्वतैं एक पणौं है यातैं। प्रश्न, व्याकरण शास्त्रमें ही द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने या सूत्रमें संख्यावाची जो द्वि शब्द तथा एक शब्द है तिनकी प्रवृत्ति देखिये है। अर प्राग्विंशतेः संख्येयप्रधानाः या सूत्रमें संख्येय प्रधान कहे हैं सो दोऊनिकी संगति कैसैं है? उत्तर, ऐसैं है कि द्व्येकयोः इहां संख्या वाचीका प्रयोग नहीं है। प्रश्न, तौ काहेका प्रयोग है। उत्तर, दो संख्याविशिष्ट जो समुदाय ताकै गौणभूत जे दोय अवयव तिनकौ वाची द्वि शब्द जो है ताकौ प्रयोग है। भावार्थ—समुदायके अवयव जे हैं ते तो संख्येय ही हैं संख्या नहीं है। अर जो संख्या ही मानिये तौ द्वि शब्द करि दोय संख्याका ग्रहण अर एक शब्द करि एक संख्याको ग्रहणमें ऐसैं दोऊनिका संयोगतैं तीन संख्याको बोध होय तातैं द्व्येकयो या शब्द-की एवज द्व्येकेषां ऐसा बहुवचनांत प्रयोग होय। तातैं समुदायवाची ही शब्द है संख्यावाची नहीं है। याको दृष्टान्त ऐसो है कि बहु शक्तिकीटकं याको इहां ऐसो अर्थ जाननौ कि बहुत हैं शक्ति जाकी ऐसो कीटक है। इहां बहु शब्दकै संख्यावाची पणांतैं बहुवचन होय है। तथापि बहु शिष्ट समुदाय रूप है शक्ति जाकी ऐसौ अर्थ करनेंतैं बहु शब्दकै संख्येय पणौं ही है। भावार्थ—संख्या पणौं मानिये तो बहुशक्तयः कीटकं ऐसौ बहुवचन विशिष्ट प्रयोग होय तातैं संख्येय प्रधान ही माननौं योग्य है। इहां प्रश्न ऐसौ उपजे है कि कीटकं या एक वचनांत शब्दका सामानाधिकरण

पणातैं वहुशक्तयः ऐसा वहुवचनांतका अभाव होगा कि एक वचनांत ही होगा। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, नयका आश्रयतैं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः या प्रयोगके समानाधिकरण संभवै है। प्रश्न, भाव प्रत्यय विना कि द्वित्व, एकत्व ऐसा शब्द विना गौण रूप अर्थ कैसै संभवै है ? उत्तर, भाव प्रत्यय विना भी गुण प्रधान निर्देश होय है कि जैसें व्याकरणका सूत्रकारनैं द्वेकयो ऐसा सूत्रप्रभाव प्रत्यय रहित कियो है यातैं ऐसें वादीकी शंका होतसंतें आचार्य उत्तर कहै है कि ऐसें तो द्वयादिक शब्द संख्येय प्रधान ही है। अर एक विंशति शब्द भी संख्येय वृत्ति ही ग्रहण करिये है। यातैं तुल्य योगकी उत्पत्तितैं भेदशब्दके साथ द्वन्द्व समास युक्त है। वहुरि प्रश्नभेद शब्द करि सहित समास हो तौ परन्तु इहां स्वपदार्थ प्रधान वृत्ति है कि अन्य पदार्थ प्रधान वृत्ति है। भावार्थ—केई समास तो पूर्व पदार्थ प्रधान होय है कि दोय पद होय तहां दूसरा पदको अर्थ तौ गौणरूप होय अर पूर्व पदको अर्थ प्रधानरूप होय है। जैसैं अव्ययीभाव समास है। अर केई समास स्वपदार्थ प्रधान होय है कि जिन पदनिका समास करिये तिन सर्व पदनिका ही अर्थ प्रधानता करि भाषै सो स्वपदार्थ प्रधान होय है जैसें कर्मधारय समास है। अर केई समास अन्य पदार्थ प्रधान होय है कि जिन पदार्थका समास करिये तिन पदनिका अर्थ तौ गौणरूप भासै अर अन्यपदार्थको अर्थ प्रधानरूप भासै सो जैसैं वहुव्रीही समास है तातैं इहां कर्मधारय समास है कि वहुव्रीहि समास है ? उत्तर, इहां स्वपदार्थ प्रधानवृत्ति है। प्रश्न, कैसें ? उत्तर, "विशेषणं विशेष्येण वहुलम्" या सूत्रकरि समास होय है सो ऐसैं कि दोय, नव, अष्टादश, एकविंशति तीन रूप ही भेद होय द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रिभेदा कहिये ऐसें है। वहुरि प्रश्न, द्वियमुनं याका समास ऐसा है कि द्वे यमुने समाहृते इति याको अर्थ ऐसो है कि दोय मुनी एकत्र होय सो द्वि यमुन कहिये, इत्यादिक शब्दनिमें पूर्व प्रधान वृत्ति है कि अव्ययी भाव समास होय है। अर पूर्वपद जो द्वि शब्द सो तौ विशेष्य है, अर यमुना

उत्तरपद है सो विशेषण है। तैसैं ही इहां द्वादिक शब्दनिकूं विशेष पणां उक्त है। ता कारण करि भेद शब्दकूं विशेषणपणां होतां संता या भेद शब्दको पूर्व निपात प्राप्त होय है कि भेदाद्विनवाष्टादशैकविंशतित्रयः ऐसा सूत्र प्राप्त होय है। उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, जो द्वि यमुनं या पदमैं द्वि शब्दकूं विशेष्यपणा कह्या था सो तौ सामान्य कथन होतां संतां विशेष अभिधान कहिये। विशेष कथन जाका करिये ता अर्थ की प्राप्तिमें कह्या था सो ऐसै है के द्वे कि कौन दोय है ऐसा सामान्य अर्थका प्रतिभास होत संतै कहिये है कि यमुने कि यमुना नामा नदी है, ऐसा विशेषका अभिधान कहिये है। अर जो प्रथम ही यमुने ऐसा प्रथमाका द्विवचन रूप प्रयोग उक्त होत संतै पीछै द्वि शब्दको प्रयोग कियो अनर्थ होय है। भावार्थ—यमुने ऐसैं कहतां संता प्रथमाका द्विवचनका योगतैं दोय यमुना है। ऐसा अर्थका प्रतिभास होय है तातैं वहुरि द्वे ऐसा कहना व्यर्थ होता। तातैं द्वे ऐसा कहना प्रथम ही भया, तहां आकांक्षा होय है कि वे दोय कौन हैं, तव कहिये है कि यमुना है। ऐसैं दोऊ पदनिका कहनां संगत होय है अर इहां तो वहुवचनतैं संदेह होय है कि भेदाः ऐसैं कहत संतैं संदेह होय है कि कितने भेद हैं तातैं कहिये है कि द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय इति अर्थात् ये भेद हैं। अर द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय ऐसा ही प्रथम कहना होय तौ संदेह होय है कि ये कौन है, तव भेद है ऐसा कहना ही पड़ेगा। यातैं द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय दया पदमें अर भेदाः या पदमैं दोऊ ही स्थलमें विशेष्य विशेषणका व्यभिचार है कि दोऊ ही के विशेष्य विशेषण पणांका यथेच्छपणातैं भेद शब्दका पूर्वनिपात नहीं बणौं है अर जो कदाचित् भेदकूं विशेषण ही मानिये तो भेद शब्दका पूर्व निपात ही होना योग्य होय है। परन्तु सो नहीं सम्भवै है क्योंकि द्व्यादिक शब्दनिकै गुणवाची पणौं है, यातैं विशेषण पणौं ही विवक्षित है। तातैं द्व्यादिक शब्दका ही पूर्व निपात

होय है। भेद शब्दका नहीं होय है। इहां प्रश्न उपजै है कि द्व्यादिकनिकूं गुणवाचकता कैसै है। उत्तर, द्व्यादिक शब्द संख्याप्रधान है अर संख्या है सो गुण है यातैं अर व्याकरणमें ऐसा सिद्धपद है कि जातिवाचक शब्दसमभिव्याहारे गुणवाचस्य शब्दस्य विशेषणत्वमेव नीलघटवत् इति याका अर्थ शब्द चार प्रकारके हैं कि जातिवाची १ संज्ञावाची २ क्रियावाची ३ गुणवाची ४ तहां जातिवाचीकै गुणवाचीकै समास होत संतैं गुणवाचक है सो विशेषण ही होय है जैसैं नील-घट, इहां नील शब्द तौ नीलरूपका बोधक पणातैं गुणवाची है। अर घटशब्दत्त्व जातिविशिष्ट पृथु वुध्नोदराकारवान जो मृत्तिकाको पर्याय है ताको वाची है तहां जो प्रथम नीलः ऐसा कहता संतै नीलरूपवानका बोध होय है। तहां बहुरि आकांक्षा उपजै है कि नील रूपवान कौन है तहां कहिये है कि घट इति कि घट है। इहां नीलपद तौ विशेषण भया है अर घट पदका विशेष्य भया है। अर जहां घटः ऐसा कहनां होय है तहां आकांक्षा उपजै है कि कौनसा घट है, तहां कहिये है कि नीलः इति कि नीलरूपवान है सो घट है, इहां घटपद तौ विशेष्य है। अर नीलपद विशेषण है। इहां विशेषण नाम तौ अन्य पदार्थनितैं भिन्न जनावनैं वारे लक्षणका है अर वा लक्षण करि अन्य पदार्थनितैं भिन्न होय सो विशेष्य है सो यथा सम्भव इहां लगवनां परन्तु ये दोऊ सम्भव पणां जहां होय है कि दोऊ शब्द भिन्न भिन्न होय अर एक विभक्तिमान होय अर जहां समास होय तहां नहीं होय, क्योंकि जातिवाचीकै समास होत संतैं गुणवाची शब्दको विशेषण पणां ही सिद्धान्त पठित है। यातैं ऐसैं ही द्विनवाष्टा दशैक विंशतित्रय अर भेद ऐसैं जुदे जुदे शब्द होते तौ विशेष्य विशेषण दोऊ सम्भव था परन्तु इहां समास है यातैं द्व्यादिक गुण-वाची शब्दनिकूं विशेषणपणां ही विवक्षित है। तातैं इनहीका पूर्वनिपात कियो है। ऐसैं तो स्व पदार्थ प्रधान वृत्ति समर्थन करी। बहुरि कहैं ह कि अन्यपदार्थ प्रधान वृत्ति भी हो। अर्थात्। बहुव्रीही समास भी हो सो ऐसैं होय है कि दोय, नव अष्टादश एकविंशति त्रिभेदा कहिये ऐसा

समासमें संख्याप्रधान जे द्व्यादिक तिनकै विशेष्यपणातैं होत संतैं भी सर्वनामसंख्ययो रुप संख्यानं याका अर्थ ऐसा है कि बहुव्रीही समासकै विषैं सर्वनाम वाची शब्दनिकूं अर संख्यावाची शब्दनिकूं पूर्वनिपातको [उपसंख्यान है कि होनौ है या सूत्र करि संख्यावाची द्व्यादिक शब्दको पूर्वनिपात भयो है। ऐसैं अन्य पदार्थ वृत्ति समर्थन करी। अवैं इहां ऐसा विचार करना कि प्रथम कह्यो जो कर्मधारय समास ताकै विषैं तो अर्थका वशतैं विभक्तिको विपरिणाम करनों कि भेदाः या सूत्रमैं भेदाः कहनेतैं भेद होय है। ऐसा अर्थमें आकांक्षा होय है कि किनके भेद होय है तहां पूर्वसूत्रतैं औपशमिकादिकनिकी अनुवृत्ति करि षष्ट्यन्तवणाय तिनके भेद है ऐसा अर्थका सम्वन्ध करना। अर दूसरो जो वहुव्रीही समास तामैं पठित क्रम करि ही अर्थात् प्रथमांत सूत्र पठित है ता क्रम करि ही औपशमिकादिकनिका सम्वन्ध करना ॥१॥ वार्त्तिक—भेद-शब्दस्य प्रत्येकं परिसमाप्तिर्भुजिवत् ॥२॥ अर्थ—यथा देवदत्तजिनदत्तगुरुदत्ता भोज्यंतां जैसैं देवदत्त, जिनदत्त, गुरुदत्त ये तीन शब्द जे हैं तिनमें एक एक प्रति भोज्यंतां या क्रिया शब्दमैं लगाइये है तैसैं ही भेद शब्द एक एक प्रति लगावनां योग्य है सो ऐसैं दोय भेद, नव भेद इत्यादि बहुरि याही अर्थकूं स्पष्ट करनें निमित्त कहै हैं ॥२॥ वार्त्तिक—यथा निर्दिष्टौपशमिकादि-भावाभिसम्बन्धार्थं द्व्यादिक्रम वचनं ॥३॥ अर्थ--इहां क्रम शब्द आनुपूर्वी वाचक है तातैं जो क्रम है सो यथाक्रम है। तातैं ऐसा अर्थ भया कि जैसा अनुक्रमि करि औपशमिकादिभाव कह्या, तैसा अनुक्रमि करि ही द्व्यादिक शब्दनि करि अभिसम्बन्ध कर्त्तव्य है। अवैं तीसरा सूत्र की उत्था-निका कहै है। प्रश्न, यो यथाक्रम कैसैं है। ऐसैं प्रश्न होत संतै कहिये है कि नहीं निर्द्धार कियो है जिनको ऐसे जे संख्येय तिनका सम्बन्धी जो द्व्यादिक संख्यावाची शब्द तिनकै प्रति विशिष्ट जे अभिधेय तिनके कहनेका प्राप्त भया अवसरमें युगपत् कहनेंका असम्भवतैं जो यो आदिमें कह्यो औपशमिक भाव ताके भेद दिखावनेंकूं कहै हैं ॥२॥ सूत्रम्—

सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥

अर्थ—औपशमिक भाव दोय प्रकार कह्या ते सम्यक्त्व रूप और चारित्र रूप है। ऐसें व्याख्यान कियो है लक्षण जिनको ऐसें जो सम्यक्त्व अर चारित्र तिनके औपशमिक पणां कैसें है ऐसो प्रश्न होतें संतें कहें है। वार्तिक- सप्तप्रकृत्युपशमादौपशमिकं सम्यक्त्वं ॥१॥ अर्थ-अनन्तानुबन्धी, चारित्र मोह सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार तो कषाय अर दर्शन मोह सम्बन्धी मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व ऐसें तीन ये। इनि सप्त प्रकृतिनिका उपशमतें औपशमिक सम्यक्त्व होय है सो अनादि मिथ्यादृष्टी भव्यकै कर्मका उदय करि ग्रहण करी कलुपताने होतां संतां तिन सप्त प्रकृतिनको उपशम काहेतें होय है? ऐसा प्रश्न होत संतें कहे हैं ॥१॥ वार्तिक--काललब्ध्याद्य-पेक्षयातदुपशमः ॥२॥ टीकार्थ—काल लब्धि आदि कारणनिनें अपेक्षा करि तिन सप्त प्रकृतिनको उपशम होय है। तहां प्रथम तो या काल लब्धि है कि कर्माविष्ट आत्मा भव्य जो है सो संसारमें परिभ्रमणरूप अर्द्ध पुद्गलपरिवर्त्तन नामा कालनें अवशेष रहतां संतां प्रथम सम्यक्त्वका ग्रहणके योग्य होय है। अधिक कालनें रहतां संतां सम्यक्त्वके योग्य नहीं होय है। या प्रकार एक काल लब्धि है। अर दूसरी कर्म स्थितिका नामा काल लब्धि है कि उत्कृष्ट स्थितिमान तथा जघन्य स्थितिमान कर्मनिनें विद्यमान होतां संतां प्रथम सम्यक्त्वको लाभ नहीं होय है। प्रश्न, तो कब होय है? उत्तर, घुणाक्षर न्याय करि समस्त कर्मनिकै विषें आयु कर्म बिना अन्तः कोटा-कोटि सागरोपम स्थितिमान कर्मबंधनें प्राप्त होतां संतां विशुद्ध रूप परिणामका वशतें विद्यमान कर्मनिनें एक हजार संख्यात सागरोपम घाटि अन्तः कोटाकोटी सागरोपम स्थितिके विषें स्थापित होतां संतां प्रथम सम्यक्त्वके योग्य होय है। बहुरि तैसें ही और काल लब्धि भावनिकी अपेक्षा है सो आगानें कहसी। अर आदि शब्द करि जाति स्मरणादिक ग्रहण करिये है। बहुरि

भव्य पंचेन्द्रिय संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, पर्यासक जो हैं सो सर्व विशुद्ध कहिये, अनिवृत्ति करणका चरम समयवर्त्ती होत संतैं प्रथम सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करै है श्न, अनुवत्ति करण गुणस्थान तो आठमां है अर इहां अनिवृत्तिकरणका चरम समय वर्तीकै प्रथम सम्यक्त्व होनां कैसैं कह्या है? उत्तर, वे अनिवृतिकरण स्थान तौ भिन्न है। अर ये तीन करण रूप परिणाम सदा काल परिवर्त्तन रूप हुआ करे हैं, तिन मैं अनिवृत्ति करणके समयमैं प्रथम सम्यक्त्व होना कह्या है। अर उत्पन्न करतो संतो जीव अन्तर्मुहूर्त ही प्रवर्त्तावै है। भावार्थ—प्रथमोपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त मात्र ही है। ता पीछे वहांतैं मिथ्यात्व कर्मनैं तीन प्रकार भेद नें प्राप्त करै है सो भेद सम्यक्त्व मिथ्यात्व २ सम्याग्मिथ्यात्व ३ रूप जानना। इहां भाव ऐसा भाव जानना कि सम्यक्त्व प्रकृतिका उदयतैं तो वेदक सम्यक्त्व होय है सो चलमलिन आगम रूप होय है। अर मिथ्यात्व प्रकृतिका उदयतैं सासादन गुण स्थानके मार्ग होय अतत्व श्रद्धान रूप मिथ्यात्वी होय है। अर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उदयतैं दधि गुड़ मिश्रित द्रव्यके समान पारणामी मिश्र गुणस्थानी होय है। प्रश्न, दर्शन मोहनीय कर्मकी प्रकृतिनैं उपशमावतो संतो कहा उपशमावे है। उत्तर, चारों ही गतिमैं उपशमावे है। तहां नारकी प्रथम सम्यक्त्वनैं उपजावतो कहां उपशमावै है। उत्तर, चारो ही गतिमैं उपशमावै है तहां नारकी प्रथम सम्यक्त्वनै ;उपजावते संतैं पर्यासक उपजावै है। अपर्यासक नहीं उपजावै है अर पर्यासक भी अन्तर मुहूर्त उपरान्त उपजावै है। अन्तर मुहूर्त पहली नहीं उपजावे है ऐसैं सातूं ही पृथ्वीनिकै विषैं उपजावे है। तहां भी उपरली तीनूं प्रथ्वीनिके विषैं तो नारकी तीन कारणनि करि सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करै है। तिनमैं कितनेक तौ पूर्व जन्मनैं स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक धर्मनैं श्रवण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक वेदनाका अनुभम करि उत्पन्न करै है। वहुरि नीचे चारूं पृथ्वीमैं दोय कारण करि ही सम्यक्त्वनै उत्पन्न करै है। तहां कितनेक तौ पूव जन्मनैं

स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक वेदना करि त्रासित होय करि सम्यक्त्व नै उत्पन्न करै है। अर तिर्यंच सम्यक्त्व नै उत्पन्न करतां संतां पर्याप्तक ही उत्पन्न करै है। अपर्याप्तक नहीं करै है। अर पर्याप्तकनिमें भी सात आठ दिन उपरान्त करै है पहली नहीं करै है। ऐसैं सर्व द्वीप समुद्रनिके विषैं तिर्यंचनिके तीन कारणनि करि सम्यक्त्वकी उत्पत्ति है। तिनमें कितनेक तो पूर्व जन्मनैं स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक धर्म श्रवण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक जिन विंबनैं देखि करि उत्पन्न करै है। प्रश्न, सर्व द्वीप समुद्रनिमें जिनविंब तो है ही नहीं, कारणनिमें कैसै कहो हो? उत्तर, यहां सामान्य वर्णन है तातैं जहां जहां है तहां तहां ही जानना। अर मनुष्य सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करतां संतां पर्याप्तक सैनी ही उत्पन्न करै है अपर्याप्तक नहीं करै है। अर पर्याप्तकनि में भी अष्ट वर्षकी स्थिति उपरांत करै है, पहली नहीं करै है। तहां तिनके ढाई द्वीपनिमें तथा दोय समुद्रनिके विषैं तीन कारणनि करि सम्यक्त्वकी उत्पत्ति है तिनमें कितनेक तो जाति स्मरणतैं अर और धर्म श्रवणतैं अर और जिन विंबका दर्शनतैं उत्पन्न करै है। अर देव सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करतां संता पर्याप्तक ही उत्पन्न करै है। अर अपर्याप्तक नहीं करै है। अर अपर्याप्तकनिमें भी अन्तरमुहूर्त्तके उपरांत ही उत्पन्न करै है। पहिली नहीं करै है ते देव भवनवासीनैं आदि लेय उपरिम ग्रैवेयिक पर्यंतका ही उत्पन्न करै है। तिनमें सहस्रार कल्प पर्यंतका देव तो चार कारणनि करि प्रथम सम्यक्त्वनैं प्राप्त होय है तिनमें कितनेक तो जातिस्मरण करि अर और धर्म श्रवण करि, अर और जिन महिमाका देखवा करि अर देवनिकी ऋद्धिका देखवा करि सम्यक्त्व उत्पन्न करै है। अर आनत, प्राणत, आरण, अच्युत स्वर्गनिके विषैं अन्य देवानिकी ऋद्धिका देखवा विना पूर्वोक्त तीन कारणनि करि ही उत्पन्न करै है, अर नव ग्रैवेयिकनिके विषैं जातिस्मरण तथा धर्म श्रवण रूप दोय कारणनितैं ही उत्पन्न करै है। अर ऊपरिके देव नियम करि सम्यग्दृष्टी ही होय है ॥२॥ अबै औपशमिक चारित्रके भेद जनावनैं निमित्त कहैं है। वार्त्तिक—

अष्टाविंशतिमोहविकल्पोपशमादौपशमिकं चारित्रम् ॥ ३ ॥ अर्थ---अनन्तानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ इनि विकल्पनिरूप षोडश तो कषाय अर हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ स्त्री वेद ७ पुरुष वेद ८ नपुंसक वेद ९ इनि विकल्पनिरूप नव नो कषाय ऐसैं चरित्र मोहके तो पच्चीस विकल्प, अर मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्त्व २ सम्यक्त्व ३ इनि विकल्पनिरूप तीन दर्शन मोहके विकल्प इनि दोऊनिके जोड़ रूप अष्टाविंशति मोह-विकल्पनिके उपशमतैं औपशमिक चारित्र होय है ॥३॥ वार्त्तिक—सम्यक्त्वस्यादौ वचनं तत्पूर्वकत्वाच्चारित्रस्य ॥४॥ अर्थ—निश्चय करि आत्माको प्रथम सम्यक्त्व पर्याय करि आविर्भाव होय है। ता पीछे अनुक्रमतैं चारित्र पर्याय रूप प्रगट होय है। या कारणतैं सम्यक्त्वकूं आदिके विषैं ग्रहण करिये है॥४॥ अबै चौथा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो क्षायिक भाव नव प्रकार कह्यो ताके भेदनिका स्वरूप दिखावने निमित्त कहै है। सूत्रम्—

ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥

अर्थ—ज्ञान १ दर्शन २ दान ३ लाभ ४ भोग ५ उपभोग ६ वीर्य ७ अर च शब्दतैं सम्यक्त्व ८ चारित्र ९ समुच्चय करिये है। वार्त्तिक—ज्ञानदर्शनावरणक्षयात्केवले ज्ञानदर्शने क्षायिके ॥१॥ अर्थ—समस्त ज्ञानारण दर्शनारण कर्मका क्षयतैं केवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिक होय है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—अनन्तप्राणिगणानुग्रहकरं सकलदानान्तरायक्षयादभयदानम् ॥२॥ अर्थ—दानांतराय कर्मका अत्यन्त समीचीनपणैं क्षय होवातैं प्रगट भयो त्रिकाल गोचर अनंत प्राणिगणको अनुग्रह करनवारो क्षायिक अभयदान है ॥२॥ वार्त्तिक—अशेषलाभांतराय-निरासात्परमशुभपुद्गलानामादानं लाभः ॥ ३ ॥ अर्थ—समस्त लाभान्तरायका अवशेष निरास

होनेतें परित्यक्त है कवलाहार रूपक्रिया जिनके ऐसें केवलीनिकें जानें शरीरका अर बलका आधारका कारण अर अन्य मनुष्यनितें असाधारण अर परम शुभ सूक्ष्म अनन्ता पुद्गल समय समय प्रति संबंधनें प्राप्त होय है सो क्षायिक लाभ है, तातें औदारिककी किंचित् न्यून पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण स्थिति कवलाहार विना कैसें संभवै या प्रकार जो वचन है सो अशिक्षितको कियो जनाइये है ॥३॥ वार्त्तिक-कृत्स्नभोगांतरायनिरोभावात्परमप्रकृष्टो भोगः ॥४॥ अर्थ—समस्त भोगांतराय कर्मका नाशतें प्रगट भयो अतिशयवान अनंतो भोग क्षायिक है। जाका किया पंचवर्णरूप सुगंधित पुष्पवृष्टि अर नाना प्रकारका दिव्यगंधकी वृष्टि अर चरणनिक्षेप स्थानमें सप्त पद्मपंक्ति अर सुगंधित धूप अर सुखरूप शीतल पवन आदि भाव हैं॥४॥ वार्तिक-निरवशेषोपभोगांतरायप्रलयात्प्रादुर्भूतोऽनन्तोपभोगः क्षायिकः ॥५॥ अर्थ—निरवशेष उपभोगांतराय कर्मका प्रलयतें प्रगटभयो उपभोग क्षायिक है। जाका किया सिंहासन, चामर, छत्र, अशोक वृक्ष, छत्रत्रय, प्रभामंडल, गंभीर स्निग्धस्वरूप परिणम्यं, दिव्यध्वनि अर देवदुंदुभी आदि भाव हैं ॥५॥ वार्तिक—वीर्यान्तरायात्यंतसंक्षयादनंतवीर्यम् ॥६॥ अर्थ—आत्माकी सामर्थ्यकूं रोकनेवारो वीर्यांतराय कर्म जो है ताका अत्यंत क्षयतें उत्पन्न भई जो प्रवृत्ति सो क्षायिक अनंतो वीर्य है।॥६॥ वार्तिक—पूर्वोक्तमोहप्रकृतिनिरवशेषक्षयात्सम्यक्त्वचारित्रे ॥७॥ अर्थ---पूर्वोक्त दर्शनमोहके त्रिकल्प अर चारित्र मोहके पंचविंशति विकल्पनिका निरवशेष क्षय होवातें क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र है। प्रश्न, ऐसें कहे जे अनन्त दान लब्धि आदि ते दानांतरायादि कर्मका क्षयतें अभयदानादिका कारण हैं तिनको प्रसंग सिद्धनिके विषै भी हो ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि शरीर नामकर्म अर तीर्थंकर नामकर्म आदिकी अपेक्षापणांतें सिद्धनिके विषै शरीर नामकर्म आदिका अभावतें होतां संतां दानादिकको प्रसंग नहीं है। अर परम अनंत अव्याबाधरूप करि ही तिनकी तहां प्रवृत्ति है सो केवल ज्ञानरूपकरि अनंतवीर्यकी प्रवृत्तिके समान है। प्रश्न, सिद्धपणों भी क्षायिक

आगममें कह्यो हैं तातैं ताको भी कथन या सूत्रमें करवो योग्य है? उत्तर, नहीं करवो योग्य है क्योंकि विशेषनिनैं दिखावता संतां उनको विषयरूप सामान्य विना कह्यो ही सिद्ध है। याको दृष्टान्त ऐसैं जाननूं कि पर्व आदि अंगुलके अवयवनिका निर्देशनैं होतां संता अंगुलकी सिद्धि है। तैसैं ही सिद्धपणौं विना कह्यो ही सिद्ध है। क्योंकि सर्व क्षायिक भावनिकैं विषैं साधारणपणौं है यातैं ॥७॥ अबै पांचवा सूत्रकी उत्थानिका कहैं है कि कह्यो जो अष्टादश विकल्परूप क्षायोपशमिक भाव ताकै भेद निरूपण करनैकै अर्थि कहै है ॥ सूत्रम्—

ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥

अर्थ—ज्ञान चार, अज्ञान तीन, दर्शन तीन, लब्धि पांच अर सम्यक्त्व अर चारित्र अर संयमासंयम ऐसैं अष्टादश भेदरूप क्षायोपशमिक भाव है ॥५॥ इहां व्याकरणरूप वार्तिक--चतुरादीनां कृतद्वंद्वानां भेदशब्देन वृत्तिः ॥१॥ अर्थ—च्यार तीन तीन पांच होय ते चतुस्त्रित्रिपंच कहिये अर ये है भेद जिनके ते चतुस्त्रित्रिपंचभेदा कहिये। ऐसैं द्वंद्व समास गर्भित वृत्ति है। प्रश्न, त्रि शब्दको इहां द्वंद्वापवादरूप एक शेष समास काहेतैं नहीं होय हैं? उत्तर, संख्याकरि पदार्थकी अप्रतीति होवातैं तथा अन्य पदार्थ प्रधानपणांते तथा भिन्न दूसरा त्रिशब्दका कहवामैं प्रयोजनको सद्भाव है कि अनुक्रमको स्पष्ट दर्शन है यातैं एक शेष नहीं होय है। प्रश्न? या सूत्रमें यथाक्रम वचन ज्ञानादिकनि करि आनुपूर्वीका सम्बन्धकै अर्थि कहनो योग्य है? वादी प्रति प्रश्नरूप उत्तर, कहा प्रयोजन? वादीको उत्तर, चार प्रकार ज्ञान तीन प्रकार अज्ञान इत्यादि अभिसम्बन्धके अर्थि यथाक्रम वचन कहनौ योग्य है। याको उत्तर ग्रन्थकार कहै हैं कि यथाक्रम वचनसूत्रमें कहनौ योग्य नहीं क्योंकि यथाक्रम ऐसो शब्द इहां कह्यो सो अनुवर्तै है। प्रश्न, कहां कह्यो है? उत्तर, द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् या सूत्रमें कह्यो सो अनुवर्त्तै है ॥१॥ प्रश्न, कौनका क्षयतैं

अर कौनका उपशमतैं चायोपशमिकभाव होय है। उत्तररूप वार्तिक—सर्वघातिस्पर्द्धकानामुदयचयात्तेषामेव सदुपशमाद्देशघातिस्पर्द्धकानामुदये चायोपशमिको भावः ॥२॥ अर्थ--स्पर्द्धक दोय प्रकार है तहां एक तो देशघाति स्पर्द्धक है। दूसरा सर्वघातिस्पर्द्धक है। तिनमेंसूं जा समय सर्वघाति स्पर्द्धकनि को उदय होय है ता समय तो किंचित् भी आत्माके गुणनिकी प्रगटता नहीं होय है। तातैं सर्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयको अभाव जो है सो चय है ऐसें कहिये है। अर नहीं उदयनें प्राप्त भया जे वे ही सर्वघाती स्पर्द्धक तिनका सत्तामें स्थिति रहना जो है सो उपशम है ऐसें कहिये है, अर नहीं प्रकट भयो जो निज वीर्यतारूप प्रवृत्तिपणातैं अङ्गीकार किया जे सर्वघाति स्पर्द्धक तिनको उदयाभावरूप चय होतां संतां अर देशघाती स्पर्द्धकको उदय होतां संता सर्वघातिका अभावतें प्राप्त भयो जो भाव सो चायोपशमिक भाव है ऐसें कहिये हैं ॥२॥ प्रश्न, स्पर्द्धक कहा है? उत्तररूप वार्तिक–अविभागपरिछिन्नकर्मप्रदेशरसभागप्रचयपंक्तिक्रमवृद्धिः क्रमहानिः स्पर्द्धकम् ॥३॥ अर्थ—उदय प्राप्त जो कर्म ताकै प्रदेश अभव्य राशितैं अनंतगुणा अर सिद्धराशिके अनंतमें भाग प्रमाण है। तिनमें सूं सर्वतैं जघन्य गुणवान एक प्रदेश ग्रहण कियो ताको अनुभाग जो है सो बुद्धितैं अर्धच्छेद करि तितनी वार परिछिन्न कियो कि अर्द्धच्छेदरूप विभाग स्वरूप कियो कि फेर विभाग नहीं होय ते अविभाग परिच्छेद कहिये ते अविभाग परिच्छेद सर्व जीवराशितैं अनंतगुणे हैं ऐसें एक राशि तो A याद्रकरि अर वैसें ही अवशेष सर्व जघन्य गुणवान प्रदेश जे हैं ते तैसें ही परिच्छेद रूप किये, अर A पंक्ति रूप किये अर वर्ग रूप किये। भावार्थ—जघन्य गुणवान प्रदेश भी अनंते हैं तिनमें सूं A एक एक नैं ग्रहण किये अर पूर्वोक्त प्रकार अर्धच्छेद किये अर पंक्ति रूप स्थापन करि वर्ग रूप किये ऐसैं सर्व जघन्य गुणवाननिकी राशि वर्गरूप करि स्थापन करी। बहुरि वातैं एक अविभाग परिच्छेदाधिक प्रदेश ग्रहण कियो अर तैसैं ही ताके अविभाग परिच्छेद किये अर वर्गरूप किये

सो भी एक राशि और भई। बहुरि तैसैं ही एक अविभाग परिच्छेदाधिक सम गुणवान सर्वराशि जो है तानैं अर्धच्छेद रूप करि वर्ग रूप करी ऐसैं यावत् एक अविभाग परिच्छेदको अधिक लाभ होय तावत् पर्यंत पंक्ति करी अर ता अधिक विभाग परिच्छेदको अलाभ होत संते ताकै अनंतर हो विशेष हीन अर क्रम वृद्धि अर क्रम हानि युक्त जे ये पंक्ति तिनको समुदाय भयो सो स्पर्द्धक कहिये है। ता उपरांत प्रदेश रहे ते दोय, तीन, चार तथा सख्यात असंख्यात गुणां रसवान नहीं पाइये है। अनंत गुणा रसवान ही पाइये है तिनमैंसूं एक प्रदेश जघन्य गुणवान ग्रहण कियो ताका अनुभागका अविभाग परिच्छेद पूर्ववत् किये। अर्थात् अर्धच्छेद करि वर्गात्मक करि पंक्ति रूप किये ऐसैं ताकै सम गुणवान प्रदेश भी अविभाग अर्द्धच्छेद रूप करि वर्गात्मक करि पंक्ति रूप किये ऐसैं करत संतैं सर्व वर्ग भये ते एकत्र किये वर्गणा होय है। अर्थात् एक अविभाग परिच्छेदाधिक राशि जो है सो पूर्ववत् विरलन करि पंक्तिरूप करी जो राशि तानैं विरलन देयकरि एकत्र करी ते वर्गणा है। तानैं तिन सकल राशनि प्रमाण वर्गणा भी अनंत होय है। यहां ग्रंथकार संकोचनैं करि अर्थनैं जनावे है कि यावत् इन राशनिके परस्पर अंतर होय है तावत् एक स्पर्द्धक होय है ऐसैं या क्रम करि विभाग करत संतैं सर्व स्पर्द्धक होय है ते अभव्य राशितैं अनंत गुणें अर सिद्धराशितैं अनंत भाग प्रमाण होय है सो यो समुदाय रूप एक उदय स्थान होय है ॥३॥ वार्तिक—तत्र ज्ञानं चतुर्विधं क्षायोपशमिकं आभिनिवोधिकज्ञानं श्रुतज्ञानमवधिज्ञानं मनःपर्ययज्ञानं चेति ॥४॥ अर्थ—वीर्यान्तराय अर मति ज्ञानावरणका तथा श्रुत ज्ञानावरणका सर्वघाती स्पर्धक जे हैं तिनका जो उदय ताका क्षय तैं अर सत्तामें उपशम होवातैं। अर देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां मतिज्ञान श्रुतज्ञान होय है। अर देशघाती स्पर्द्धकनिका जो रस ताका प्रकर्ष अप्रकर्षका योगतैं गुणघातका अतिशय अनतिशय पणांतैं वे ज्ञानके भेद हैं। भावार्थ—आत्मगुणका विशेषघातनैं होतां संतां तो मतिज्ञान ही होय है। अर न्यून घात होतां संतां श्रुतज्ञान होय है इनि मैं

इतनौं ही भेद है ऐसें ही अवधि मनःपर्ययके भी निज आवरणका क्षयोपशमरूप भेदतें क्षायोपशमिक पणौं जाननें योग्य है ॥४॥ वार्तिक—अज्ञानं त्रिविधं मत्यज्ञानं श्रुताज्ञानं विभङ्गं चेति ॥५॥ अर्थ—अज्ञान तीन प्रकार है तिनमैं एक मतिअज्ञान एक श्रुतअज्ञान एक विभंगज्ञान है, तिनके क्षायोपशमिकपणौं तो पूर्ववत् जाननूं कि द्वितीय अध्यायका प्रथम सूत्र संबंधी इकवीशमा वार्तिकमें कह्यो है तैसे जाननूं। अर ज्ञान अज्ञानको भेद मिथ्यात्व कर्मका उदय अनुदयकी अपेक्षा सहित है ॥५॥ वार्तिक—दर्शनं त्रिविधं क्षायोपशमिकं चक्षुर्दर्शनमचक्षुदर्शनमवधिदर्शनं चेति ॥६॥ अर्थ—क्षायोपशमिक दर्शन तीन प्रकार है तिनमैं एक चक्षुदर्शन एक अचक्षुदर्शन एक अवधिदर्शन है। ये तीनूं ही पूर्ववत् अपना आवरणका क्षयोपशमकी अपेक्षा सहित जानवो योग्य है ॥६॥ वार्तिक—लब्धयः पंच क्षायोपशमिकाः दानलब्धिर्लाभलब्धिर्भोगलब्धिरुपभोगलब्धिर्वीर्यलब्धिश्चेति ॥७॥ अर्थ—दानांतराय आदि सर्व घातिस्पर्द्धकानिका क्षयोपशमनैं होतां संतां अर देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयका सद्भावनैं होतां संतां दानलब्धि, लाभलब्धि, भोगलब्धि, उपभोगलब्धि वीर्यलब्धि, ये पांच लब्धि क्षायोपशमिक रूपा होय है। सूत्रमें सम्यक्त्व पद ग्रहण है ता करि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व ग्रहण करिये है सो अनंतानुवंधी कषाय चतुष्टयका तथा मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्वका उदयाभावरूप क्षय होवातैं अर सम्यक्त्व प्रकृतिका देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां तत्वार्थका श्रद्धानरूप क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होय है। अनंतानुवंधी अप्रत्याख्यानावरणी, प्रत्याख्यानावरणी रूप द्वादश कषाय जे हैं तिनका उदयाभावरूप क्षय होवातैं तथा सत्तामें उपशम होवातैं अर संज्वलन कषाय चतुष्टयनि मैं सूं कोऊ एक देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां अर नो कषायको जो नवक ताका यथा संभव उदयनैं होतां संता जो आत्माके निवृत्ति परिणाम होय है सो क्षायोपशमिक चारित्र है। अनन्तानुवंधी अर अप्रत्याख्यानी कषायको जो अष्टक ताका उदयाभाव रूप क्षयका

होपातैं तथा सत्तामें उपशम होवा तैं अर प्रत्याख्यानी कषायका उदयनैं होतां संतां तथा संज्वलन कषायका देशघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयनैं होतां संतां अर नो कषायको जो नवक ताका यथा संभव उदयनैं होतां संतां विरताविरत परिणाम जो है सो क्षायोपशमिक संयमासंयम है ॥७॥ वार्त्तिक—संज्ञित्वसम्यग्मिथ्यात्वयोगोपसंख्यानमिति चेन्न ज्ञानसम्यक्त्वलब्धिग्रहणेन गृहीतत्वात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें संज्ञी पणांको अर सम्यग्मिथ्यात्वको अर योगको नाम ग्रहण करवो योग्य है, क्योंकि ये भी निश्चय करि क्षायोपशमिक है यातैं? उत्तर, ऐसैं कहो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, ज्ञानका अर सम्यत्वका अर लब्धिका ग्रहण करनें करि उनका भी ग्रहणपणां है यातैं सो ऐसे हैं कि संज्ञी पणांतैं तो नो इन्द्रियावरणका क्षयोपशमकी अपेक्षावान पणांतैं मतिज्ञान करि ग्रहण कियो अर सम्यग्मिथ्यात्वनैं सम्यक्त्वका ग्रहण करवा करि ग्रहण कियो क्योंकि उभयात्मकको एकात्मक रूप परिग्रह करवातैं उदक मिश्रित दुग्धका नामके समान ग्रहण कियो जाननो अर योग जो है सो वीर्यलब्धिका ग्रहण करि ग्रहण कियो अथवा सूत्रमें च शब्दका ग्रहण करने करि समुच्चयको ग्रहण जानने योग्य है। प्रश्न, पंचेन्द्रिय पणांनैं समान होतां संतां नो इन्द्रियावरणको क्षयोपशम कोई जीवके भवके विषै है। अर कोई जीवके भवके विषैं नहीं है यो भेद काहेतैं है? उत्तर कहिये है कि संज्ञी जाति नाम कर्मका विशेषको जो उदय ताका बलका लाभनैं होतां संतां नो इन्द्रियावरणको क्षयोपशम होय है। अर वाका अभाव होते नहीं होय है। ऐसैं यो भेद है। याको दृष्टान्त कहै हैं कि एकेन्द्रिय जाति नाम कर्म आदिको जो उदय विशेष ताकी अपेक्षा करि एकेन्द्रिय आदिका क्षयोपशमका भेदके समान संज्ञी असंज्ञीपणांमें भेद है ॥८॥ अबै छठा सूत्रको उत्थानिका कहै हैं कि जो एकविंशति भेद रूप औदयिक भाव कहे ताके भेद अर नाम कहनेके अर्थि यो आरम्भ करिये है। सूत्रम्—

गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड् भेदाः ॥६॥

अर्थ—गति चार, कषाय चार, लिङ्ग तीन, मिथ्या दर्शन एक, अज्ञान एक, असंयत एक, असिद्ध एक, लेश्या छै ऐसैं एक विंशति भेद रूप औदयिक भाव हैं। यहां गत्यादिकनिकै इतरेतरयोगके विषैं द्वन्द्व समास होय है, अर चतुरादिकनिके द्वन्द्व गर्भा अन्य पदार्थ प्रधाना-वृत्ति होय है। प्रश्न, इहां एक शेष समास होना चाहिये? उत्तर, याको समाधान पूर्वें ज्ञाना-ज्ञानदर्शनलब्धय इत्यादिक सूत्रकी व्याख्यामें कह्यो सो ही जाननूं। वार्त्तिक—गति-नामकर्मोदयादात्मनस्तद्भावपरिणामाद्गतिरौदयिकी ॥ १ ॥ अर्थ—जा कर्म करि आत्माकै नारक आदि भावकी प्राप्ति होय सो गति नाम कर्म चार प्रकारका है सो ऐसैं है कि नरक गति नाम, तिर्यंग्गति नाम, मनुष्य गति नाम, देव गति नाम तिनमैं नरक गति नाम कर्मका उदय करि नारक भाव होय है सो औदयिक है। ऐसैं ही तिर्यग्गति नाम कर्मका उदयतैं तिर्यग्भाव औदयिक है, अर मनुष्य गति नाम कर्मका उदयतैं मनुष्य भाव औदयिक है। अर देव गति नाम कर्मका उदयतैं देव भाव औदयिक है ॥१॥ वार्त्तिक--चारित्रमोहोदयात्क-लुषभावः कषाय औदयिकः ॥२॥ अर्थ—चारित्र मोहकी प्रकृति कषाय वेदनीय जो है ताका उदयतैं आत्माकै क्रोधादि रूप कलुषपणौं उत्पन्न भयो सो औदयिक है। इहां कषाय शब्दकी निरुक्ति ऐसैं है कि आत्मानं कषति हिनस्तीति कषायः याको अर्थ ऐसो जाननूं कि आत्मानैं कषैं कि हणैं सो कषाय है सो कषाय क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार प्रकार है तिनके भेद अनन्तानुबंधी अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी, संज्वलन विकल्प रूप हैं ॥२॥ वार्त्तिक—वेदोदया-पादितोभिलाषविशेषो लिंगम् ॥ ३ ॥ अर्थ—वेदका उदयतैं ग्रहण कियो जो अभिलाष

विशेष सो लिंग है, सो लिंग दोय प्रकार है तहां एक द्रव्य लिंग, दूसरो भावलिंग तहां जो नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो द्रव्य लिंग है सो तो इहां नहीं अङ्गीकार कृत है, क्योंकि इहां आत्मपरिणामको प्रकरण है यातैं अर भावलिंग आत्माको परिणाम है सो स्त्री, पुरुष, नपुंसकनिकै परस्पर अभिलाप लक्षण है सो चारित्र मोहको विकल्प जो नो कषाय स्त्री-वेद, पुरुषवेद, नपुंसक वेद रूप ताका उदयतैं होय है तातैं औदयिक है ॥३॥ वार्त्तिक—दर्शनमोहोदय। तत्वार्थाश्रद्धानपरिणामो मिथ्यादर्शनम् ॥४॥ अर्थ—तत्वार्थनिकी रुचि स्वभाव आत्मा है ताकै वा स्वभावका रोकवाको कारण जो दर्शन मोह है ताका उदयमैं निरूपण किया भी तत्वार्थ-निकै विषैं श्रद्धान नहीं उत्पन्न होय। तातैं मिथ्यादर्शन औदयिक है ऐसैं कहिये है ॥४॥ वार्त्तिक—ज्ञानावरणोदयादज्ञानम् ॥५॥ अर्थ—जानन स्वभाव आत्माके ज्ञानावरण कर्मका उदयतैं होतां संतां ज्ञान नहीं होय है। तातैं अज्ञान भाव औदयिक है। सो मेघ समूह करि ढक गया सूर्यका तेजकी अप्रगटताके समान है सो ऐसैं है कि जैसैं-एकेन्द्रिय जीवकै रसना, घ्राण, श्रोत्र, चक्षु इन चारो इन्द्रियनिका प्रतिनियत जो मति ज्ञानावरण ताका सर्व घाती स्पर्द्धकनिका उदय-तैं रस गंध शब्द रूपको अज्ञान जो है सो औदयिक है। ऐसैं ही वे इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय-वान जीवनकै विषैं वाकीकी इन्द्रियनका विषयको अज्ञान कहने योग्य है। अर शुक सारिकादिक विना और पंचेन्द्रिय तिर्यंचनिके विषैं अर कितनेक मनुष्यनिके विषैं अक्षर श्रुतावरणका सर्व-घाती स्पर्द्धकनिका उदयतैं अक्षर श्रुतकी रचनाका अभावतैं अक्षर श्रुताज्ञान औदयिक है अर नो इन्द्रियावरणका सर्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयतैं हिताहितकी परीक्षा प्रति असामर्थ्यरूप असंज्ञिपणौं औदयिक है सो भी इहां अज्ञानभावके विषैं ही अन्तरभाव होय है। ऐसैं ही अवधि मनः पर्याय केवल ज्ञानावरणका उदय तैं प्रत्येक अज्ञानभाव है सो भी औदयिक कहने योग्य है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक—चारित्रमोहोदयादनिवृत्तिपरिणामोऽसंयतः ॥ ६ ॥ अर्थ—चारित्र

मोहका सर्वघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयतैं प्राणीनिका उपघात अर इन्द्रियनके विषय जे हैं तिनके विषैं द्वेषका अरि अभिलाषका निवृत्ति रूप परिणाम रहित असंयत भाव है सो औदयिक है ॥६॥ वार्तिक—कर्मोदयसामान्यापेक्षोऽसिद्धः ॥ ७ ॥ अर्थ—अनादि कर्म संबंधका संतान करि परतंत्र आत्मा जो है ताकै कर्मोदय सामान्य होतां संतां असिद्धपणांकी पर्याय है सो औदयिक है। बहुरि सो असिद्ध पणौं मिथ्यादृष्टी आदि सूक्ष्मसांपरायका अन्त पर्यंतके विषैं तौ कर्माष्टकका उदयकी अपेक्षा सहित है अर शांति भई है कषाय जाकै तथा क्षीण भई है कषाय जाकै ताकै सप्त कर्मका उदयकी अपेक्षा सहित है, अर संयोगकेवली के तथा अयोग, केवलीकै अघातिया कर्मनिका उदयकी अपेक्षा सहित है ॥७॥ वार्तिक—कषायोदयरंजितायोगप्रवृत्तिर्लेश्या ॥८॥ अर्थ—कषायनिका उदय करि रंजित योगनिकी प्रवृत्ति जो है सो लेश्या है,सो लेश्या दोय प्रकार है। तिन में एक द्रव्य लेश्या दूसरी भाव लेश्या है, तहां द्रव्य लेश्या तो पुद्गल विपाकी कर्मका उदय करि ग्रहण करी है सो इहां नहीं ग्रहण करिये है क्योंकि आत्माका भावनिको प्रकरण है यातैं अर भाव लेश्या जो है सो कषायका उदय करि रंजित योगनिकी प्रवृत्ति रूप है ऐसैं करि औदयकी है ऐसैं कहिये है। प्रश्न---आत्म प्रदेशनिका परिस्पंद रूप क्रिया है सो योग प्रवृत्ति है। अर जा योगनैं प्राप्त होय आत्माको परिस्पंद होय है वा योगकै योग्य वीर्यकी उपलब्धि जो है सो क्षायोपशमिकी है। ऐसैं व्याख्यान करी अर कषायनैं औदयिको व्याख्यान करी तातैं लेश्या अनर्थांतर भूत है ? उत्तर,यो दोष नहीं है क्योंकि कषाय कै अर लेश्या कै तीव्र मंद रूप अवस्थाका भेदतैं अर्थांतर पणौं ही है। बहुरि वा लेश्या छै प्रकार है सो ऐसैं है कि कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या, तेजो लेश्या, पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या है अर वा लेश्याके आत्म परिणामको अशुद्धताका अधिक पणांकी अपेक्षा करि कृष्ण आदि शब्दको उपचार करिये है। प्रश्न---उप शांत कषायमें अर क्षीण कषायमें अर सयोगकेवलीमें शुक्ल

लेश्या है। ऐसैं आगम कहैं है तहां कषाय करि अनुरंजित पणांका अभावतैं लेश्याके औदयिक पणौं नहीं उत्पन्न होय है उत्तर, पूर्वभाव प्रज्ञापन नयकी अपेक्षा करि यो दोष नहीं है क्योंकि पूर्वकालमें जो कषाय करि अनुरंजित योगनिकी प्रवृत्ति हुती सो ही या है ऐसा उपचारतैं औदयिकी कहिये है। अर उन योगनका अभावतैं अयोगि केवली अलेश्य है ऐसैं निश्चय करिये हैं बहुरि इहां प्रश्न करै हैं कि जैसैं अज्ञान औदयिक है तैसैं ही अदर्शन भी दर्शनावरणका उदयतैं औदयिक है अर निद्रा निद्रादिक भी औदयिक है। अर वेदनाय कर्मका उदयतैं सुख दुःख भी औदयिक है। अर हास्य रति अरति आदि छै नो कषाय भी औदयिक है अर आयु कर्मका उदय तैं भव धारण भी औदयिक है, अर ऊंच नीच कर्मका उदयतैं उच्च नीच गोत्र परिणाम होय है, यातैं इनिका नहीं ग्रहण करवातैं औदयिक भावको लक्षण सूत्रकार कियो सो न्यून है? उत्तर, यहां आत्मपरिणामका अधिकृत पणांतैं शरीरादिकनिकै विषैं औदयिक पणानैं होतां संतां भी पुद्गल विपाकी पणांतैं तिनको असंग्रह है ऐसैं मानिये हैं प्रश्न, ऐसे है तोऊ जे जीव विपाकी जात्यादिक है तिनको तौ ग्रहण करनौं योग्य है। यातैं उत्तर कहै है। वार्तिक—मिथ्यादर्शने दर्शनावरोधः ॥८॥ अर्थ—सूत्रमें मिथ्यादर्शन पद कह्यो है ताकै विषैं अदर्शनको अवरोध है कि अन्तर्भाव है अर निद्रा निद्रादिकनिको भी दर्शन सामान्यावरणपणांतैं वाहीमें अन्तर्भाव है। बहुरि प्रश्न, तत्वार्थनिको श्रद्धान जो है सो मिथ्यादर्शन है ऐसे कह्यो है। भावार्थ - वहां तो अश्रद्धाननैं अदर्शन कह्यो है अर इहां हम अदर्शन नहीं देखनकूं कहै हैं? उत्तर, तुमने कहा सो सत्य है तथापि सामान्य निर्देशके विषैं विशेषको अन्तर्भाव है यातैं श्रद्धान भी एक विशेष है। अर यो नहीं देखने रूप भी एक विशेष है। यातैं अदर्शन अप्रतिपत्ति मिथ्यादर्शन ये सामान्य अदर्शनका ही विशेष है ॥८॥ वार्तिक—लिंगग्रहणे हास्यरत्याद्यंतर्भावः सहचारित्वात् ॥१०॥ अर्थ—

लिंग शब्दका ग्रहणकै विषैं हास्य, रति, अरति, आदिको अन्तरभाव है। प्रश्न, काहेत ? उत्तर, सहचारीपणातैं, पर्वतका ग्रहणकरि नारदका ग्रहणकी नाईं अथवा लिंग विना हास्यादिकनिकी उत्पत्ति नहीं है। यातैं भी लिंगके कहनेतैं हास्यादिकको ग्रहण होय है ॥१०॥ वार्त्तिक—गतिग्रहणमघात्युपलक्षणम् ॥११॥ अर्थ—अघातिया कर्मनिका उदयतैं अंगीकार किया जे भाव तिन सवनिको गतिशब्दनिको ग्रहण जो है सो उपलक्षण है ताको दृष्टान्त ऐसौ है कि जैसैं काकनितैं घृतकी रक्षा करो। इहां काक शब्द जो है सो घृतके घातक सर्व जीवनिको उपलक्षण शब्द है तैसैं हो इहां गति शब्द सर्व अघातियानिको उपलक्षण जाननूं ता कारण करि नाम कर्मका विशेषका उदय करि ग्रहण किया जे जाति, शरीर, अंगोपांग, वर्ण, संस्थानादिक तथा वेदनीय आयु, नाम, गोत्रका उदय करि किया जो सुख दु:ख आयु शरीर उच्च नीच गोत्र ते गति शब्दका ग्रहण करि ग्रहण करिये है। प्रश्न, गति चार प्रकार है इत्यादिक आनुपूर्वीका जनावने निमित्त यथाक्रम वचन या सूत्रमें कहनौं योग्य है ? उत्तर, नहीं कहने योग्य है क्योंकि यथाक्रम शब्द इहां अनुवर्त्तै कि पूर्व सूत्रमें यथाक्रम वचन है ताको इहां अनुवृत्ति है ॥११॥ अवैं सातमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो पारणामिक भाव तीन भेदरूप कह्यो ताके जो विकल्प तिनका स्वरूप प्रतिपादनके अर्थि कहै है। सूत्रम्—

जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥

अर्थ—जीवत्व १ भव्यत्व २ अभव्यत्व ३ ये तीन भाव पारणामिक हैं ॥७॥ वार्त्तिक—अन्यद्रव्यासाधारणास्त्रयः पारणामिकाः ॥१॥ अर्थ—जीवत्व १ भव्यत्व २ अभव्यत्व ३ ये तीनभाव आत्माका अन्य द्रव्यतैं असाधारण पारिणामिक जाननैं योग्य है ॥१॥ प्रश्न, इनिकै पारिणामिक पणौं काहेतैं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—कर्मोदयक्षयक्षयोपशमानपेक्षत्वात् ॥२॥ अर्थ—कर्मका उदय क्षय क्षयोप-

शमकी अपेक्षा रहित पणातैं तीनूं भाव पारिणामिक हैं। भावार्थ—निश्चय करि या प्रकारको कर्म है ही नहीं जाका उदयतैं, क्षयतैं क्षयोपशमतैं जीव, भव्य, अभव्य कहिये है, तातैं अनादि कर्मकै कर्मोदयादिकका अभावतैं स्वरूप संम्बन्धरूप परिणामका निमित्त पणातैं पारिणामिक है ऐसैं कहिये है। वार्त्तिक--आयुद्रव्यापेक्षं जीवत्वं न पारिणामिकमिति चेन्न पुद्गलद्रव्यसम्बन्धे सत्यन्य-द्रव्यसामर्थ्याभावात् ॥३॥ अर्थ--प्रश्न, आयु द्रव्यकी अपेक्षा सहित जीवपणौं है। अर जीवपणौं पारिणामिक नहीं हैं। उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि पुद्गलका सम्बन्धनैं होतां संतां अन्य द्रव्यके सामर्थ्यको अभाव होय है यातैं। भावार्थ---इहां प्रश्न करे है कि आयु कर्मरूप द्रव्यका उदयतैं जीवै है सो जीव है, अर अनादि पारिणामिकपणांतैं जीव नहीं है। याको उत्तर कहे है कि तुमनैं कह्यो तैसैं नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आयु कर्मरूप पुद्गल द्रव्यका सम्बन्धनैं होतां संतां ही जीवपणौं होय तौ और धर्मादिक द्रव्यनिकी सामर्थ्यको अभाव होय यातैं क्योंकि आयु जो है सो तौ पुद्गल द्रव्य है अर जो वा आयुका सम्बन्धतैं जीवपणौं है तो जीवतैं अन्य द्रव्य धर्मिक जे हैं तिनकै भी आयुका सम्बन्धतैं ही जीवपणौं होयगो। अर्थात् उनकै भी आयुकर्मतैं ही अपने स्वरूपमें स्थितिपणौं ठहरैगो सो है नहीं तातै जीवपणौं पारिणामिक ही है ॥३॥ तथा और सुनूं कि वार्त्तिक---सिद्धस्याजीवत्वप्रसङ्गात् ॥४॥ अर्थ--जो आयुकर्मका सम्बन्धकी अपेक्षा सहित जीवपणां है सिद्धनिकै आयुकर्मका अभाव है। अजीवपणौं प्राप्त होय है। तातैं आयुकर्म अपेक्षा रहित पणांतैं जीवपणौं पारिणामिक है ॥४॥ वार्त्तिक—जीवे त्रिकालविषयविग्रहदर्शनादिति चेन्न रूढिशब्दस्य निष्पत्यर्थत्वात् ॥५॥ अर्थ-प्रश्न, जीवै है जीवतभयो जीवैगो ऐसैं त्रिकालविषय निरुक्ति देखिये है। तातैं प्राणधारणार्थपणातैं कर्मनिकी अपेक्षा पणांकरि सहित पारिणामिक पणौं है उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, काहेतैं उत्तर, रूढि शब्दकै स्वयं सिद्धपणौं है यातैं अर रूढिके शब्दके विषैं उपात्त काला क्रिया जो है सो व्युत्पत्यर्था ही है। अर्थात् अपनैं स्वाधीन धातुका अर्थकूं कहनें-

वारी नहीं है। थाको दृष्टान्त ऐसो जाननूं कि जैसैं गच्छतीति गौ याको निरुक्त अर्थ ऐसो है कि गमन करै सो गौ तथापि रूढ़ितैं नहीं गमन करती भी सास्नादिमान पशु विशेष जो है ताहि जनावै ही है। अर गमन करती महिषी आदिसैं नहीं जनावै है तैसैं ही जीव शब्द प्राणधारणादि अर्थको वाचक निरुक्त अर्थतैं है। तथापि रूढ़ितैं चेतनगुण युक्त पदार्थनैं ही जनावै है ऐसा जाननां ॥५॥ वार्त्तिक--चैतन्यमेव वा जीवशब्दस्यार्थः ॥६॥ अर्थ—अथवा जीव शब्द करि चैतन्य कहिये है सो अनादि द्रव्य भवनका निमित्त पणांतैं पारिणामिक है ॥६॥ वार्त्तिक—सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपरिणामेन भविष्यतीति भव्यः ॥७॥ अर्थ—भव्यादिकनिकै बाहुल्यता करि भविष्यत्कालका विषय पणांतैं जो आत्मा सम्यग्दर्शनादि पर्याय करि होयगो सो भव्य है। या प्रकार यो नाम पावै है ॥७॥ वार्त्तिक—तद्विपरीतोऽभव्यः ॥८॥ टीकार्थ—जो पूर्वोक्त सम्यग्दर्शनादि पर्याय करि नहीं होयगो सो अभव्य है ऐसैं कहिये है। प्रश्न, यो भेद कौनको कियो है? उत्तर, द्रव्यका स्वभावको कियो भेद है यातैं दोऊनिकै ही पारिणामिक पणौं है ॥८॥ इहां प्रश्नोत्तरूप वार्तिक-योऽनंतेनापि कालेन न सेत्स्यत्यसावभव्य एवेति चेन्न भव्यराश्यंतर्भावात्॥९॥ अर्थ---प्रश्न, जो अनन्त काल करि भी नहीं सिद्ध होयगो सो अभव्य तुल्यपणांतैं अभव्य ही है। अथवा सर्व भव्य सिद्ध होहिंगे ता पिछला कालमें जगत् भव्य शून्य होहिगो? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर--जे अनन्त कालमें भी सिद्ध नहीं होहिंगे तिनको भी भव्य राशिमें ही अन्तरभाव है यातैं याको दृष्टांत ऐसो, है कि जैसैं कनक पाषाण अनंत काल करि भी कनक नहीं होयगो तौहू वाके कनक पाषाणरूप शक्तिका योगतैं अंध पाषाणपणौं नहीं है। अथवा जो आगामी काल अनंत कालके विषैं भी नहीं आवेगो तौ हू ताके आगामी पणौं नहीं नष्ट होय है। तैसैं ही भव्यके भी स्व शक्तिका योगतैं भव्यपणौं नही प्रगट होत संतैं भी भव्यपणांकी हानि नहीं है ॥९॥ वार्त्तिक---भावस्यैकत्वनिर्देशोयुक्त इति चेन्न द्रव्यभेदाद्भावभेदसिद्धेः ॥१०॥

अर्थ-प्रश्न, जीव भव्य अभव्य इहां द्वंद्व समास करतां संतां तिनका भावनैं कहनेकी इच्छाके विषैं भाव शब्दकै एक वचन कहनौ योग्य हैं क्योंकि जीव भव्य अभव्य जे हैं तिनको भाव है तातैं जीव भव्याभव्यत्वं ऐसैं कहनौ योग्य है। उत्तर--ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, द्रव्यका भेदतैं भावके भेदपणांकी सिद्धि है यातैं भाव एक पणां ही करि नहीं कहने योग्य है या प्रकार नियम है। तातैं द्रव्य भेदतैं भावनिमें भेद होत संतैं वहुवचन पणांको उपदेश योग्य है क्योंकि जीव भव्य अभव्य जे हैं तिनके भाव हैं। तातैं जीव भव्याभव्यत्वानि ऐसैं ही योग्य है। वहुरि भावशब्दको प्रत्येक अभिसंवंध होय है तातैं जीवपणौं भव्यपणौं अभव्यपणौं जो है सो पारिणामिक भाव है ॥१०॥ वार्त्तिक---द्वितीयगुणग्रहणमार्षोक्तत्वादितिचेन्न तस्य नयापेक्षत्वात् ॥११॥ अर्थ--प्रश्न, इहां ऐसैं मान्य है कि या सूत्रमें द्वितीय गुणग्रहण करने योग्य हैं ? उत्तर---सो द्वितीय गुण कौनसो हैं, प्रश्न, सासादन सम्यग्दृष्टी गुणस्थान है सो भी जीवको साधारण पारिणामिक भाव है। अर ऐसैं ही आर्ष ग्रंथनिमें कह्यो है कि सासादन सम्यग्दृष्टी यो कौनसो भाव है। ऐसैं प्रश्न करतां संतां कहै है कि पारिणामिक भाव है। उत्तर, पारिणामिक भावनिकी गणनामें सासादन गुणस्थान नहीं कर्तव्य है। प्रश्न, काहेतैं। उत्तर, आर्षोक्त बचन कै नयकी अपेक्षा पणौं है यातैं सो ऐसैं जाननो कि सासादन भाव मिथ्यात्व कर्मको उदय क्षय उपशम जो है तानैं अपेक्षा नहीं करै है। या कारणतैं तो आर्ष ग्रंथनिमें याकू पारिणामिक कह्यो है। प्रश्न, सासादन किस कूं कहो हो ? उत्तर, आसादना नाम विराधनाका है तातैं विराधना सहित जो परिणामकूं कहो हो। उत्तर, आहै सो सासादन है सो अनंतानुवंधी कषायनिमें सूं कोई एकका उदयतैं सम्यक्त्वतैं चिगि मिथ्यात्वके सन्मुख भयो ताकै यावत् मिथ्यात्व नहीं प्राप्त भयो ताकै तावत् मध्यकाल सासादन परिणाम रहै हैं। प्रश्न, ऐसैं हैं तो ये परिणाम अनंतानुवंधाके उदयतैं भये इनकूं पारिणामिक आर्ष ग्रंथनिमें कैसैं कहे ? उत्तर, अनंतानुवंधीको कार्य

तौ मिथ्यात्व है, सासादन तौ प्रासंगिक है। अर जो सासादन ही अनंतानुवंधीको कार्य मानिये तौ मिथ्यात्वको कारण अन्य ठहरै है सो नहीं। या नयतैं सासादननैं पारिणामिक आर्षमें कह्यो है। याको दृष्टान्त ऐसो है कि जैसैं वृक्षतैं फलका टूटना रूप कारणको फल भूमिमैं फलको प्राप्त होनौ है अर मध्य मैं गमन रूप क्रिया है सो प्रासंगिक है तैसैं ही सासादन भी प्रासंगिक है तातैं कर्मोदयाद्यपेक्ष नहीं है पारिणामिक ही है। अर यहां सासादन औदयिक है ऐसैं ग्रहण करिये है। क्योंकि अनंतानुवंधी कषायका उदयतैं सासादनकी रचना होय है या नयतैं औदयिक है ॥११॥ प्रश्न, सूत्रमैं च शब्द कहा प्रयोजन निमित्त है? उत्तररूप वार्तिक—अस्तित्वान्यत्व कर्तृत्व भोक्तृत्व पर्यायवत्वासर्वगतत्वानादिसंतितिवंधनवद्धत्वप्रदेशवत्वारूपत्वनित्यत्वादिसमुच्चयार्थश्च शब्दः ॥१२॥ अर्थ-अस्तित्व, अन्यत्व कर्तृत्व, भोक्तृत्व, पर्यायवत्व, असर्वगत्व अनादिसंतति-वंधन वंधत्व, प्रदेशत्व, अरूपत्व, नित्यत्व आदि भाव भी पारिणामिक हैं तिन सवनिका समुच्चय-कै अथ च शब्द सूत्रमैं है ॥१२॥ प्रश्न—जो ये अस्तित्वादिक भाव भी पारिणामिक है तौ इनको सूत्रके विषैं ग्रहण काहेतैं नहीं कियो? उत्तररूप वार्तिक—अन्यद्रव्यसाधारणत्वादसूत्रिताः ॥१३॥ अर्थ—अस्तित्वादिक धर्म निश्चय करि और द्रव्यनि मैं साधारण है तातैं वे सूत्रमैं नहीं कह्या है सो ऐसैं जानना कि प्रथम तौ अस्तित्व साधारण है क्योंकि याकै षट् द्रव्य विषय पणौं है यातै। अर वा अस्तित्वके कर्मका उदय, क्षय, क्षयोपशमकी अपेक्षा रहित पणौं है यातै पारिणामिक है वहुरि अन्यत्व भी साधारण है क्योंकि सर्व द्रव्यनिके परस्पर अन्य पणौं है यातैं अर वो अन्यत्व भी कर्मका उदयादिककी अपेक्षाका अभाव तैं पारिणामिक है। वहुरि कर्तृत्व भी साधारण है। क्योंकि स्वाभाविक अपनी क्रियाकी उत्पत्तिके विषैं सर्व द्रव्यनिके स्वतंत्र पणौं है यातै। प्रश्न—क्रिया परिणाम युक्त जीव पुद्गल जे हैं तिनके तौ कर्त्तापणौं कहनौं योग्य है परंतु धर्मादिक द्रव्यनि कैसैं कहिये है? उत्तर—धर्मादिकनिके भी अपना अस्तित्व

आदि क्रिया विषय कर्तृत्वपणौं है अर वो कर्तृत्वपणौं कर्मका उदयादिककी अपेक्षाका अभाव-तैं पारिणामिक है इहां और प्रश्न करै है कि योग है नाम जाको ऐसा आत्म प्रदेशनिका परि-स्पंदकै जो कर्त्तापणौं है सो साधारण नहीं है। या कारणतैं जीवकै असाधारण भावनिकै विषैं योग गणना करने योग्य है। उत्तर, ऐसैं नहीं है, क्योंकि योग कै क्षायोपशमनिमित्त पणौं है यातैं असाधारण भावनिमैं गणना करनो योग्य नहीं है अर जो या जीवकै पुण्य पापको कर्त्ता पणौं है सो अन्य द्रव्यनिकै मध्य जीव द्रव्यकै ही असाधारण रूप होत संतै भी परिणामिक पणौं नहीं प्रश्न, काहे तैं उत्तर, या कर्त्तापणाकै भी कर्मनिको उदय क्षयोपशम निमित्तपणौं है यातैं। प्रश्न, मिथ्या दर्शन तौ निश्चय करि दर्शन मोहको उदय है निमित्त जिननैं ऐसैं है। अर योग जो है सो क्षायो-पशमिक है निमित्त जानैं ऐसो है या कारणतैं अन्य द्रव्यनितैं असाधारण अनादि पारिणामिक चैतन्य जो है। ताकी निकटतानैं होतां संतां पुण्य पापको कर्तापणौं होय है यातैं कर्तापणौं पारि-णामिक है। उत्तर, ऐसैं नहीं है, क्योंकि ऐसैं भये सर्व कालमैं कर्तापणांको प्रसङ्ग आवै है कि मुक्ति जीवनकै भी चैतन्य है तातैं पुण्य पापको कर्तापणौं होय है ऐसैं ठहरै, अर संसारीनिकै तीव्र मंदादि भेद रहित पुण्य पाप ठहरै। क्योंकि चैतन्य कारणको अभेद है यातैं। भावार्थ—चैतन्य-की निकटतातैं पुण्य पापको कर्तापणौं पारिणामिक मानिये तो चैतन्य सर्व कालमैं समान है तातैं सिद्धनिकै भी पुण्य पापको कर्तापणौं ठहरै। अर सर्व जीवनकै पुण्य पाप समान ठहरैं तातैं चैतन्यकी निकटतानैं होतां संतां भी कर्तापणौं पारिणामिक नहीं है। बहुरि भोक्तापणौं भी सा-धारण ही है। प्रश्न, काहेतैं भोक्तापणांका लक्षणकी ऐसैं उत्पत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि वीर्यका प्रकर्ष तैं पर द्रव्यका वीर्यका ग्रहण कर वाकी सामर्थ्य जो है सो भोक्तापणांको लक्षण है। ताको उदाहरण ऐसैं है कि जैसैं आत्मा आहारादिक पर द्रव्यनिका वीर्यनैं अपनो करवातैं भोक्ता है। तैसैं अचेतन विष जो है ताकै वीर्य प्रकर्षतैं कोद्रव द्रव्य आदिकका सार संग्रह करवातैं भोक्ता

पणों है। तथा लवण आदि द्रव्यनिकै वीर्यका प्रकर्षतैं काष्टादिक द्रव्यनिकूं लवण करवातैं भोक्तापणौं है सो कर्मका उदय आदि अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। बहुरि जो आत्माकै शुभाशुभ कर्मका फलको उपभोक्तापणौं है सो साधारण भी नहीं है। अर पारिणामिक भी नहीं है क्योंकि वा उपभोक्तापणांके क्षयोपशम निमित्त पणौं है। यातैं सो ऐसैं हैं कि वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं अर आंगोपांगनामा नामकर्मका लाभका प्राप्त होवातैं आत्माके शुभाशुभ कर्म फलका उपभोगके विषैं सामर्थ्य प्रगट होय है। प्रश्न, आहार आदिका वीर्यको अङ्गीकार करण लक्षण भोग है सो तो भोगांतरायका क्षयोपशमतैं है। अर ग्रहण कियाको जीर्ण होनो सो है तो वीर्यान्तरायका क्षयोपशमतैं है। परन्तु कर्मका सम्बन्ध विना विषादिक अचेतन द्रव्यनिके भोक्तापणों कैसैं है? उत्तर, ऐसैं कहो तो सुनूं कि द्रव्यनिकै प्रति नियत कहिये अपने अपने योग्य नियमरूप शक्ति पणांतैं भास्करका प्रतापकै समान भोक्ता पणौं है। बहुरि पर्यायवान पणौं भी साधारण ही है, क्योंकि सर्व द्रव्यनिकै अपने अपने योग्य नियमरूप पर्यायनिकी उत्पत्ति है। यातैं कर्मोदया-दिककी अपेक्षाका अभावतैं वो पर्यायवान पणौं पारिणामिक है। बहुरि असर्वगत पणों भी साधारण है क्योंकि परमाणु आदिकै तो अव्यापक पणों है यातैं। अर धर्मास्तिकायादिकनिकैं प्रमाणीक असंख्यात प्रदेश पणौंवान पणौं है यातैं। भावार्थ—सर्व गत सर्वव्यापी कूं कहिये है अर धर्मास्ति-कायादिक प्रमाणीक असंख्यात प्रदेशी है, यातैं सर्व लोकमें व्यापी है। परन्तु आकाशादिकनिमें नहीं व्यापै है। तातैं सर्वगत नहीं है। प्रश्न, असंख्यातमें भी प्रमानीक कैसैं कहो हो? उत्तर, इहां प्रमाणीक कहना केवल ज्ञान अपेक्षा है, छद्मस्थ ज्ञान अपेक्षा नहीं है। अर यो असर्वगत पणौं कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। अर जो आत्माकै कर्म करि ग्रहण किया शरीरकै समान होवा पणौं जो है सो असाधारण होतैं संतैं भी पारिणामिक नहीं है। क्योंकि यो शरीर प्रमाण होनों कर्म निमित्त पणांतैं हैं यातैं। बहुरि अनादि संतति बंधन बद्धपना भी

साधारण है। प्रश्न—काहेतैं उत्तर, सर्व द्रव्यनिकै अपना संतानका वंधन करि वद्ध पणां प्रति अना-
दिपणौं है यातैं सर्वही द्रव्य जीव, धर्म,अधर्म,आकाश, काल पुद्गल, जे हैं ते अपने अपने योग्य पारि-
णामिक चैतन्योपयोग स्थिति अवकाशदान वर्त्तना परिणाम वर्ण रस गंध स्पर्श आदि पर्यायका संतान
रूप वन्धन करि वद्ध है। भावार्थ—जीवके चैतन्योपयोगपणौं अर आकाशके अवकाश दानपणौं
अर कालकै वर्तना परिणाम पणौं अर पुद्गलके वर्ण, रस, गंध, स्पर्शवान पणौं अनादि संतानरूप
वन्धन करि वद्ध है सो भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। अर जो याकै
अनादि कर्म संतति वंधन करि वद्ध पणौं है सो असाधारण होत संतैं भी पारिणामिक नहीं है।
क्योंकि यो कर्म वंधनवद्ध पणौं कर्मको उदय है निमित्त जानै ऐसो है सो आगानैं सूत्रकार ऐसैं
कहैंगे कि अनादिसंवंधे च सर्वस्य। भावार्थ—तैजस अर कार्माण ये दोऊ शरीर सर्व जीवनिकै
अनादितैं संवंध रूप है। वहुरि प्रदेशवानपणौं भी साधारण है क्योंकि सर्व द्रव्यनिकै विषैं कोई
कै तो संख्यात प्रदेशवान पणौं है। कोईकै असंख्यात प्रदेशवान पणौं कोईकै अनंत प्रदेशवान पणौं
है यातैं अर यो प्रदेशवान पणौं भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। वहुरि
अरूपी पणौं भी साधारण ही है क्योंकि जीव, धर्म,अधर्म, काल, आकाश जे हैं तिनकै रूप योगको
अभाव है। अर वो अरूपी पणौं भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावसैं पारिणामिक है। वहुरि
नित्यपणौं भी साधारण ही है क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका उपदेशतैं सर्व द्रव्यनिकै नाशका अर
उत्पादका उपयोगको अभाव है यातैं अर वो नित्यपणौं कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारि-
णामिक है वहुरि ऊर्ध्वगति पणौं भी साधारण ही कर्मोदयादिककी अपेक्षाकाअभावतैं पारिणामिक
है क्योंकि अग्न्यादिकनिकै ऊर्ध्वगति पारिणामिक है अर वो ऊर्ध्वगति पणौं भी साधारण
है। ऐसैं ही और भी आत्माकै साधारण पारिणामिक गुण जोड़ने योग्य है ॥१३॥ इहां प्रश्नोत्तर
रूप वार्त्तिक—अनंतरसूत्रनिर्दिष्टोपसंग्रहार्थश्च शब्द इति चेन्नानिष्टत्वात् ॥ १४ ॥ अर्थ— प्रश्न,

पिछला सूत्रमें कहे गत्यादिकनिका उपसंग्रहके अर्थ नहीं है। उत्तर, ऐसें नहीं है, क्योंकि पारिणामिक लक्षणका अभावतें। भावार्थ---गत्यादिक औदयिक है पारिणामिक नहीं है यातें ॥१४॥ वार्त्तिक--त्रिभेदपारिणामिकभावप्रतिज्ञानाच्च ॥१५॥ अर्थ—बहुरि औपशमकादिक भावनिकी संख्याका जनावनेवारा सूत्रके विषैं तीन भेद रूप ही पारिणामिक है। या प्रकार प्रतिज्ञा कियो है यातैं तातैं गत्यादिकनिका संग्रहके अर्थ च शब्द नहीं है ॥१५॥ वार्त्तिक---गत्यादीनामुभयवत्वं क्षायोपशमिकभाववदिति चेन्नान्वर्थसंज्ञाकरणात् ॥१६॥ अर्थ--प्रश्न, जैसें क्षायोपशमिक भावके क्षय अर उपशम स्वरूप पणातें उभयवान पणौं है तैसें गत्यादिकनिके उभयवानपणांतैं औदयिक पारिणामिक पणौं है। ऐसें माननेतें औदयिक भाव एक विंशति भेद रूप है। अर पारणामिक तीन भेद रूप है सो भी सिद्ध रहे ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, पारिणामिक भावके सान्वर्थक संज्ञा करी है। यातें सो ऐसें हैं कि परिणाम जो स्वभाव सो है प्रयोजन जाको सो पारिणामिक है ऐसै सार्थक संज्ञा है। अर यो परिणाम स्वभाव गत्यादिकनिमें नहीं विद्यमान है क्योंकि गत्यादिकनिकै कर्मोदय निमित्त पणौं है यातें ॥१६॥ बहुरि सुनूं वार्त्तिक—तथानभिधानात् ॥ १७ ॥ अर्थ— जैसें उभयवानपणांतें ज्ञानादिक क्षायोपशमिक है ऐसें कहिये है तैसें गत्यादिक औदयिक पारिणामिक है। ऐसें भी कहना सो नहीं कहिये हैं अर तैसैं नहीं कहनेतें क्षयोपशमिकके समान गत्यादिक उभयवान नहीं है ॥१७॥ बहुरि और सुनूं कि वार्त्तिक—अनिर्मोक्षप्रसङ्गात् ॥१८॥ अर्थ—गत्यादिकनिकेउभयवानपणांतें पारिणामिकपणां होतां संतां निरन्तर अवस्थानतैं मोक्ष रहितपणांको प्रसंग आवे है यातें सिद्ध या भाई कि च शब्द आस्तत्वादिकनिका समुच्चयके अर्थि ही है ॥१८॥ वार्त्तिक—आदिग्रहणमात्रन्याय्यमिति चेन्न त्रिविधपारणामिकभावप्रतिज्ञाहानेः ॥१९॥ अर्थ--ऐसें है तौ जीवभव्याभयत्वानि च या सूत्रमें च शब्दकी येवज आदि शब्द ग्रहण करनौ न्याय्य है क्योंकि अस्तित्वादिकनिकै भी इष्ट

पणौं है यातैं। उत्तर, सो नहीं न्याय है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, त्रिविध पारिणामिकभावकी प्रतिज्ञा पूर्व सूत्रमें करी है ताकी हानि होय है यातैं, क्योंकि आदि शब्दका ग्रहणनैं करतां संतां निश्चय करि जीवपणां, भव्यपणां, अभव्यपणां, अस्तित्वपणां आदिकै पारिणामिकभाव पणांकी प्राप्ति होवातैं पारिणामिकभाव तीन प्रकार ही है। ऐसी जो प्रतिज्ञा पूर्व सूत्रमें करी हुती ताकी हानि होय यातैं ॥१६॥ वार्त्तिक— समुच्चयार्थेऽपि च शब्दे तुल्यमितिचेन्न प्रधानापेक्षत्वात् ॥२०॥ अर्थ-प्रश्न, ऐसैं है तो अस्तित्वादिकनिका समुच्चयकै अर्थ च शब्दनैं होतां संतां अस्तित्वादिकनिकै पारिणामिक पणांकरि समुच्चय होवातैं तीन भेदका प्रतिज्ञाकी हानि तौ तुल्य ही है? उत्तर, तुल्य नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, प्रधान पणांकी अपेक्षा पणांतैं क्योंकि कंठतैं तीन प्रकार ही कहै हैं, तीं अपेक्षा त्रिभेदकी प्रतिज्ञा है। ऐसैं विरोध नहीं है क्योंकि च शब्दकरि अस्तित्वादिकनिनैं साधारणपणांतैं द्योतित किये हैं यातैं तिनकै गौणभाव है। अर आदि शब्दकरि अस्तित्वादिकनिकौ अंगीकार करतां संतां अस्तित्वादिकनिकै प्रधानभाव प्रकट होय यातैं च शब्दकरि अस्तित्वादिकनिको द्योतित करतां संता विरोध नहीं है, अर जीवत्वादिकनिकै उपलक्षणार्थपणांतैं अस्तित्वादिकनिकै प्रधानता है। अर तद्गुणसंविज्ञान नामा बहुव्रीही समासनैं होतां संतां दोऊनिकै प्रधानता आवै तातैं आदि शब्द सूत्रमें कहनौं योग्य नहीं ॥२०॥ वार्त्तिक—सान्निपातिकभावोपसंख्यानमितिचेन्नाभावात् ॥२१॥ अर्थ—प्रश्न, सान्निपातिक भाव आर्ष ग्रन्थनिमें कह्यो है सो इहां कहनौं योग्य है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, प्रथम तौ सान्निपातिकभावको अभाव है यातैं क्योंकि छठो भाव है ही नहीं ॥२१॥ वार्त्तिक—मिश्रशब्देनाक्षिप्तत्वाच्च ॥२२॥ अर्थ—अर जो यो सान्निपातिक भाव विद्यमान है तौ हू मिश्रशब्दकरि यो आगयो। प्रश्न, मिश्र शब्द क्षायोपशमिकका संग्रहकै अर्थ है सान्निपातिकका ग्रहणकै अर्थि नहीं है ऐसैं कहिये है ॥२२॥ वार्त्तिक—च शब्दवचनात् ॥२३॥ अर्थ—

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च। ऐसैं सिद्ध होत संतैं जो मिश्रशब्दका समीपकैविषैं च शब्द कियो है ता करि जानिये है कि मिश्र शब्द करि दोऊ कहिये है। प्रश्न, मिश्रश्च यो कहा कहै है? उत्तर, क्षायोपशमिक भाव है अर सान्निपातिक भाव है। ऐसैं कहै है। भावार्थ--औपशमिक अर क्षायिक दोऊ शब्दनिकैं निकटमें मिश्र शब्द कियो है। तातैं तो क्षायोपशमिककूं जनाया है। अर मिश्र शब्दके निकट च शब्द है तातैं सान्निपातिककूं जनाया है। प्रश्न, यो अयोग्य वर्त्तै है। उत्तर, यामैं कहा अयोग्य है, प्रश्न, जो सान्निपातिक भाव है तो तुमनें अभावात् वार्त्तिक कह्यो है। तातैं विरोधनैं प्राप्त होय है। वहुरि नहीं है तो आर्ष ग्रन्थनिमें सान्निपातिकभाव कैसैं कह्यो है अर मिश्रशब्द करि कौनको आक्षेप होय है? उत्तर, यो दोष नहीं है, क्योंकि सान्निपातिकभाव नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, उन-पंच भावनितैं अन्यभावको अभाव है यातैं ऐसैं कहिये है। अर संयोग भंगकी अपेक्षा करि सान्निपातिकभाव है या कारणतैं आर्ष वचनमैं है अर उन पंच भावनितैं अन्यभाव छठो नहीं है ऐसा अभाव पक्षके विषैं तो आदि सूत्रके विषैं च शब्द है सो पूर्वोक्त भावनिका अनुकर्षणकै अर्थ है। अर भावपक्षमैं सान्निपातिक भावका प्रतिपादनकै अर्थ च शब्द है सो पूर्वोक्तका अनुकर्षणकी अपेक्षा करि जानवे योग्य है। प्रश्न, आर्षोक्त सान्निपातिकभाव कितना प्रकार है। इहां उत्तर कहिये है ॥२३॥ वार्त्तिक—षड्विंशतिविधः षड्त्रिशद्विधः एकचत्वारिंशद्विध इत्येवमादिरागमे उक्तः ॥२४॥ अर्थ—छव्वीस प्रकार तथा छत्तीस प्रकार तथा इकतालीस प्रकार है इत्यादिक आगमके विषैं कहे है इहां उक्तं च गाथा—

दुग तिग चदु पंचे वय संजोगा होंति सन्निवादेसु।

दस दस पंचय एक्कय भावा छव्वीस पिंडेण ॥१॥

अथ—दोय भावनिका संयोग करि तौ दश भेद होय है अर तीन भावनिका संयोग करि भी दश ही होय है अर इनका जोड़ कर छब्बीस भेद होय है। सो ही दिखाइये है कि दोय भावनिका संयोग करि दश भाव होय हैं तहां औदयिकनैं ग्रहण करि औपशमिकादि चतुष्टयका एक एकका त्याग करि प्रथमके विषैं दोय भेदका संयोगनैं होतां संतां चार भंग होय है तहां एक तौ औदयिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत क्रोध है अर दूसरो औदयिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्यणी कषाय है अर तीसरो औदयिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य पंचेन्द्रिय है अर चौथो औदयिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य जीव है। बहुरि दूसरा द्विभाव संयोगकै विषैं औदयिकनैं छोड़ि औपशमिकका ग्रहण करवातैं क्षायिकादि भावत्रयका एक एकका त्याग करि तीन भंग होय है, तहां एक तौ औपशमिक क्षायिक सान्निपातिक जीव नामा उपशान्त लोभ क्षीण दर्शन मोहवान पणातैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी है अर दूसरो औपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांत मान आभिनिबोधक ज्ञानी है, अर तीसरो औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांत मायावान भव्य है। बहुरि तृतीय द्विभाव संयोगकै विषैं औपशमिकनैं छोड़ि क्षायिकका ग्रहण करवातैं अर क्षायोपशमिक पारिणामिकका एक एकका त्यागतैं दोय भंग होय है, तहां एक तौ क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्षायिक सम्यग्दृष्टी श्रुतज्ञानी है अर दूसरो क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्षीण कषायी भव्य है। बहुरि चौथा द्विभावका संयोगकै विषैं क्षायिकका परित्यागतैं एक भंग होय है सो क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा अवधिज्ञानी जीव है सो ए द्विभाव संयोग भंग एकत्र किया संता दश होय है। बहुरि त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिक औपशमिकनैं ग्रहण करि क्षायिकादि भावत्रयका एक एक भावका ग्रहण करवातैं तीन

भाव होय है तहां एक तौ औदयिक औपशमिक चायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत मोह चायिक सम्यग्दृष्टी है, अर दूसरो औदयिक औपशमिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य उपशांत क्रोध बचन योगी है, अर तीसरो औदयिक औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांतमानी जीव है। बहुरि द्वितीय त्रिभाग संयोगके विषैं औपशमिकनैं छोड़ि औदयिक चायिकनैं ग्रहण करि चायोपशमिक पारिणामिकका एक एकका ग्रहणतैं दोय भंग होय है, तहां एक तौ औदयिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य चीण कशायी श्रुतज्ञानी है अर दूसरो औदयिक चायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य चीण दर्शन मोही जीव है। बहुरि तृतीय त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिकका ग्रहण करवातैं औपशमिक चायिकका त्यागतैं एक भंग होय है सो औदयिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य मनो यागी जीव है। बहुरि चतुर्थ त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिकनैं छोड़ि करि औपशमिकादि भाव चतुष्टयका एक एकका त्यागनैं करतां संतां चार भंग होय है तहां एक तो औपशमिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांतमान चीण दर्शन मोह काय योगी है, अर दूसरो औपशमिक चायिक पारिणामिक सान्निपातिकजीव भाव नामा उपशांत वेदी चायिक सम्यग्दृष्टी भव्य है, अर तीसरो औपशमिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांतमान मतिज्ञानी जीव है अर चौथो चायिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावभावनामा चीण मोह पंचेंद्रिय भव्य है। ये त्रिभाव संयोगरूप भंग कह्या ते जोड़रूप किया संतां दश प्रकार है। बहुरि चतुर्थ भाव संयोग करि औदयिकादिकनिकै विषैं एक एकका त्यागतैं पंच भंग होय है तहां एक तौ औपशमिक चायिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत लोभी चीण दर्शन मोही पंचेंद्रिय जीव हैं, अर दूसरो

औदयिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्षीण कषायी मति ज्ञानी भव्य है अर तीसरो औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत वेदी श्रुत ज्ञानी जीव है अर चौथो औदयिक औपशमिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत रागी क्षीण दर्शन मोही जीव है अर पांचमूं औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत मोही क्षायिक सम्यग्दृष्टी अवधिज्ञानी है। वहुरि पंच भाव संयोग एक होय है सो औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य उपशांत मोही क्षायिक सम्यग्दृष्टी पंचेंद्रिय जीव है। ऐसैं छव्वीस प्रकार सान्निपातिक भाव है। अवै छत्तीस प्रकार कहिये है सो ऐसैं दोय औदयिक सान्निपातिकतैं अर औदयिककै औपशमिकादि चार जे हैं तिन करि एक एक का सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां प्रथम तौ औदयिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्रोधी है, अर दूसरो औदयिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत क्रोधी है अर तीसरो औदयिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्षीण कषायी है अर चौथो औदयिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्रोधी मतिज्ञानी है अर पांचमां औदयिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य भव्य है अर दोय औपशमिकका सन्निपाततैं अर औपशमिककै औदयिकादि करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां एक तौ औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशम सम्यग्दृष्टी उपशांत कषायी है अर दूसरो औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत कषायी मनुष्य है अर तीसरो औपशमिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत क्रोधी क्षायिक सम्यग्दृष्टी है अर चौथो औपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत कषायी अवधि ज्ञानी है अर पांचमो औपशमिक पारिणामिक

सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत दर्शन मोही जीव है अर दोय क्षायिकका सन्निपाततैं अर क्षायिककै औदयिकादिक चार जे हैं तिन करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है, तहां एक तौ क्षायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्षायिक सम्यग्दृष्टी क्षीण कषायी है अर दूसरो क्षायिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण कषायी मनुष्य है अर तीसरो क्षायिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षायिक सम्यग्दृष्टी उपशांत वेद है अर चौथो क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण कषायी मतिज्ञानी है अर पांचमूं क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण मोही भव्य है। बहुरि दोय क्षायोपशमिकका सन्निपाततैं अर क्षायोपशमिककै औदयिकादिक चारनि करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां एक तो क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती अवधिज्ञानी है अर दूसरो क्षायोपशमिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती उपशांत कषायी है अर चौथो क्षायोपशमिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयतासंयत क्षायिक सम्यग्दृष्टी है अर पांचमूं क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा अप्रमत्त संयमी जीव है। बहुरि दोय पारिणामिकका सन्निपाततैं अर पारिणामिककै औदयिकादि चार करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है, तहां एक तौ पारिणामिक, पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा जीव भव्य है अर दूसरो पारिणामिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा जीव क्रोधी है अर तीसरो पारिणामिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा भव्य उपशांत कषायो है अर चौथो पारिणामिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा भव्य क्षीण कषायी है अर पांचमूं पारिणामिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती है ऐसें ये द्विभाव संयोगी जे हैं ते पच्चीस है। बहुरि पूर्वोक्त त्रिभाव संयोगी भंग दश हैं अर पूर्वोक्त पंच भाव संयोग करि एक भंग है। ऐसैं सर्व एकत्र किया छत्तीस भंग होय है अर पूर्वैं उत्पन्न भये

चतुर्भाव संयोगतैं पांच भंग है तिनका मिलापतैं ये ही छत्तीस भंग इकतालीस भंग रूप होय है ऐसैं इनिनैं आदि लेय और भी भंग आगमका अविरोध करि जानवे योग्य है ॥२४॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—औपशमिकाद्यात्मतत्त्वानुपपत्तिरतद्भावादितिचेन्न तत्परिणामात् ॥२५॥ अर्थ—प्रश्न, जो वै औपशमिकादिक भाव कह्या तिनकै आत्म तत्व नाम नहीं उपजै है ? उत्तर, काहेतैं ? प्रश्न, वै आत्माके भाव नहीं है यातैं ? क्योंकि वै सर्व ही कर्मका बंध उदय निर्जराकी अपेक्षा पणांतैं पौद्गलिक है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, औपशमिकादि रूप आत्माका परिणमनतैं। भावार्थ—पुद्गल द्रव्यका शक्ति विशेष करि वशीकृत आत्मा वा पुद्गल द्रव्य करि रंजित हुवो संतो जा समवाय निमित्ततैं जा जा परिणामनैं अंगीकार करै है ता समय तन्मय पणांतैं वा लक्षण रूप ही होय है। इहां उक्तं च गाथा—

परिणमदि जेन दव्वं तक्कालं तम्मयत्ति पण्णत्तं।
तह्माधम्म परिणदो आदा धम्मो मुणेयव्वो ॥१॥

संस्कृत—परिणमतियेनद्रव्यं तत्कालं तन्मय अस्ति प्रज्ञप्तं। तस्मात् धर्म परिणत आत्मा धर्म्म ज्ञातव्यः ॥१॥ अर्थ—जा समय द्रव्य जीं भाव करि परिणमै है ता समय तन्मय कह्यो है, तातैं धर्म्म करि परिणम्यूं जीव धर्म्म है ऐसैं जानवो योग्य है। सो परिणाम अन्य द्रव्यनितैं असाधारण पणांतैं आत्मतत्व है ऐसैं कहिये है ॥ २६ ॥ वार्तिक—अमूर्त्तत्वादभिभवानुपपत्तिरिति चेन्न तद्विशेषसामर्थ्योपलब्धेश्चैतन्यवत् ॥२६॥ अर्थ—प्रश्न, यो अमूर्तिक आत्मा कर्म्म पुद्गलनि करि नहीं तिरस्कार हूजिये है। तातैं औपशमिकादि भावरूप परिणामको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, तैसा विशेष सामर्थ्यकी उपलब्धि है यातैं सो याकै अनादि कर्म बंध संतान है यातैं यो जीव अनादि कर्मबंध संतानवान है अर तीं वानकै विशेष सामर्थ्यकी प्राप्ति

है। प्रश्न, सो कैसैं ? उत्तर, चैतन्यवत् है जैसैं अनादि पारिणामिक चैतन्य वशीकृत आत्मा तींवान है कि चैतन्यवान है ताकै नारकादि अर मत्यादि पर्यायकी विशेषकी प्रवृत्ति भी चेतन रूप ही है तथा अनादि कार्मण शरीर करि आशक्त पणांतैं कर्म आत्मके मूर्तमान पणांतैं गत्यादि पर्याय विशेष करि सामर्थ्यकी उपलब्धि भी मूर्तिमान है ऐसैं होतां संतां आत्मा अमूर्त्तिक नहीं है। मूर्तिमान है। प्रश्न, ऐसैं होतांसंतां आत्मा अमूर्तिक नहीं है। उत्तर, और सुनूं, वार्तिक—अनेकांतात् ॥२७॥ अर्थ—अनादि कर्म बंधका संतान करि परतंत्र आत्मा जो है ताकै अमूर्ति पणांप्रति अनेकांत है सो ऐसैं बंध पर्याय प्रति एक पणांतैं कथंचित् मूर्तिक है तथापि ज्ञानादि निज लक्षणका अपरित्यागतैं कथंचित् अमूर्तिक है इत्यादि पूर्ववत् जाननों अर जाकै एकांत करि अमूर्तिक ही आत्मा है ताकै यो दोष है अर अरिहंतकी आज्ञा प्रमाण माननैंवारेकै नहीं है ॥२८॥ और सूनूं वार्तिक-सुराभिभवदर्शनात् ॥२८॥ अर्थ—मदकूं, मोहकूं, विभ्रमकूं करन वारी सुरानैं पान करि नष्ट भई है स्मृति जाकी ऐसो जन काष्ट समान हलन चलन क्रिया रहित देखिये है तैसैं कर्मेन्द्रियका नष्ट होवातैं नहीं प्रगट होय है निज लक्षण जाको ऐसो आत्मा अमूर्तिक है। ऐसैं निश्चय करिये है ॥२८॥ वार्तिक—करणमोहकरं मद्यमितिचेन्नतद्विधिकल्पनायां दोषोपपत्तेः ॥ २६॥ अर्थ—इहां प्रश्न उपजै है कि चक्षु आदि इंद्रियनिकै व्यामोहको कारण मद्य है क्योंकि पृथ्वी आदितैं उत्पन्न भया प्रसाद स्वरूप पणांतैं इंद्रियनिकै ही व्यामोहको कारण है आत्मगुणकै व्यामोह करनें वारो नहीं है क्योंकि आत्माकै अमूर्तिक पणों है यातैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? तिन इंद्रियनिकै दो विध कल्पना करतां संतां दोषकी उत्पत्ति है यातैं तातैं इहां यो विचार करनें योग्य है कि वै इंद्रियां चेतन हैं कि अचेतन हैं जो अचेतन हैं तो अचेतन पणांतैं तिनकै मद करनवारो मद्य नहीं है अर जो अचेतनकै भी मद करनवारो मद्य है तो प्रथम ही अपनें पात्रकै मद करन वारो हो अर अचेतन है तो भिन्न नहीं प्राप्त होय है चेतन स्वभाव जिनतै एसैं

पणातैं ही चैतन्य नाम है। भावार्थ—
चक्षुरादि पृथ्वी आदि द्रव्यनिकै चेतना द्रव्यका सम्बन्ध पणातैं ही चैतन्य नाम है। भावार्थ— तिनकै
इंद्रिय पृथिव्यादि रूप है, तातैं कहिये है कि इंद्रियनितैं भिन्न प्रथिवी आदि जे हैं तिनकै
चेतना नहीं देखिये है तातैं चेतनके संबंधतैं ही चेतना है या कारणतैं आत्मा गुणकै ही मोहकर
पणौं सिद्ध है। इहां चारवाकको प्रश्न है कि पृथिवी आदिकै ही संयोग विशेषनैं होतां
संता पिष्ट किण्व आदिका एक पणांकै विषैं मदशक्तिकी प्रगटताकै समान सुख दुःख आदिकी
प्रगटता है। भावार्थ—जैसैं पिष्ट किण्व उदक आदिका मिलापकै विषैं मद शक्ति उत्पन्न होय है
तैसैं ही पृथिवी आदिका मिलाप विशेषकै विषैं सुख दुःखका अनुभव रूप शक्ति उत्पन्न होय है
उत्तर, सुख दुखका अनुभव रूप शक्तिकै रूपादिकतैं विधर्म्म पणौं है यातैं यो प्रश्न योग्य नहीं
है क्योंकि पृथिवी आदिका रूप आदि गुण जे हैं ते अवयवीनितैं भिन्न होत संतैं तथा अभिन्न
होत संतै क्रमकरिकैं ही हानिनैं प्राप्त होय है तैसैं भिन्न तथा अभिन्न शरीरके अवयव जे हैं तिनकै
विषैं सुख दुख आदिकी क्रमकरि हानि नहीं देखिये है, युगपत ही हानि देखिये है तातैं सुख दुःख
आदि पृथिवी आदिका गुण नहीं है अर और सुनूं कि जो सुखादिक पृथिवी आदिका ही गुण है
तौ नवीन मृतक और शरीर अवस्थाकै विषैं भी रूपादिककी नांई प्राप्त हुआ चाहिये। इहां भी चा-
रवाक कहै है कि सूक्ष्मभूत पृथिवी आदिका विनाशतैं सुखादिकनिकी प्राप्ति नहीं है? उत्तर,
ऐसैं है तो भौतसे स्थूल पृथिवी आदिका विद्यमान रहवातैं सुखादिकनिकी प्राप्ति होवै अर
और सुनूं कि सूक्ष्म पृथिवी आदिका विनाशतैं ही सुखादिकी अप्राप्ति है तौ तिनकै विषैं ही वे
गुण है यातैं समुदाय धर्मपणांका अभावतैं मद्यका दृष्टांतकी अयुक्त है अर और सुनूं कि भूत
सूक्ष्मनिका अस्तित्वकी सिद्धिकै समान आत्मत्वकी भी सिद्धि है अथवा जिन इंद्रियनिकै व्यामोह
होय सो अंतःकरण है कि बहिःकरण है जो बहिष्करण है तौ तिनकै अचेतन पणातैं व्यामो-
हको अभाव है अर जो अंतः करण है तौ तिनकै चेतनपणूं है कि अचेतन पणूं है सो अचेतन

पणूं होत संतै तो पूर्व वत् व्यामोहको अभाव है अर चेतन पणांनैं होतां संतां विज्ञान रूप पणांतैं व्यामोह युक्त है अर अमूर्तिक पणांतैं ज्ञानका नष्ट होवाको अभाव जो तुमनैं कह्यो सो युक्त नहीं है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो कर्मका उदय अर मद्यका आवेश करि वशी कृत आत्माको अस्तित्व दुरुपलक्ष्य है। उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, कर्मोदयनैं तथा मद्यका आवेशतैं होतां संतां भी निज लक्षण करि आत्माकी उपलब्धि है सो ही प्राचीन आगम कहै है। गाथा—

बंधं पड़ि एयत्तं लक्खणदो होदि तस्स णाणत्तं।
तम्हा अमुत्ति भावो णेयंतो होदि जीवस्स ॥१॥

अर्थ—बंध प्रति एकत्व है तथापि लक्षणतैं ताकै ज्ञान पणों है तातैं जीवकै अमूर्तिक भाव अनेकांततैं है ॥१।७॥ अवैं आठमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो ऐसैं है तो प्रथम वो ही लक्षण कहो जाका समीचीन पणैं धारण करवातैं बंध परिणाम प्रति अभेदनैं होतां संतां भी दोऊनिको विभाग भलै प्रकार ग्रहण करिये, ऐसैं प्रश्न होत संतैं जीवको लक्षण कहै है। सूत्रम्--

उपयोगो लक्षणम्

अर्थ—जीवको उपयोग लक्षण है ॥ ८ ॥ प्रश्न, उपयोग नाम कहा है? उत्तर रूप वार्तिक—वाह्याभ्यंतरहेतुद्वयसंन्निधाने यथा संभवमुपलब्धुश्चैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोगः॥१

अर्थ--वाह्य अभ्यंतर रूप हेतुद्वयकी निकटतानैं होतां संतां यथा संभव उपलब्धिका करता को चैतन्यानुविधायी परिणाम जो है सो उपयोग है। भावार्थ--वाह्य अभ्यंतर रूप हेतु दोय प्रकार है अर द्वय शब्द वार्त्तिकमैं है ताकी निरुक्ति ऐसी है कि दोय है अवयव जाकै सो दोय है अर्थात् उपयोगके हेतु वाह्य अर अभ्यंतर भेद रूप दोय प्रकार है। प्रश्न, स्वरूपका कथनतैं ही दोय होने पणांकी प्रतीति होनेतैं वार्त्तिकमैं द्वय शब्द

कह्यो सो अनर्थक है? उत्तर, अनर्थक नहीं है क्योंकि दोऊ भेदनिकै ही दोय पणांकी प्रतीतिकै अर्थि द्वय शब्द है तातैं वाह्य हेतु दोय प्रकार है अर आभ्यंतर हेतु भी दोय प्रकार ही है ऐसा जनाया है तहां आत्मभूत अर अनात्मभूत नाम वाह्य हेतु दोय प्रकार है तिनमैं आत्मा करि संबंधनैं प्राप्त भयो अर अविशेष रूप नाम कर्म करि ग्रहण कियो है भिन्न भिन्न रूप स्थान परिमाणको निर्माण जानैं ऐसौ चक्षु आदि इंद्रिय समूह जो है सो तौ आत्मभूत वाह्यहेतु है अर प्रदीपादि जो है सो अनात्मभूत वाह्य हेतु है अर अभ्यन्तर हेतु भी अत्मभूत आनात्मभूत नामक दोय प्रकार है तिन में मन, बचन, कायरूप पुद्गल वर्गणा है लक्षण जाको ऐसौ द्रव्ययोग चितवन आदिको अवलंबनभूत अंतरंगमैं रचनां विशेषपणांतैं आत्यंतर हेतु है, ऐसौ नाम पावतो संतौ आत्मातैं अन्यपणांते अनात्मभूत है, ऐसैं कहिये है। भावार्थ—मन वचन काय रूप पुद्गल वर्गणा अंतरंग रचना विशेष जो है सो अभ्यंतर अनात्मभूत हेतु है अर सो है निमित्त जाको ऐसौ भावयोग है सो वीर्यान्तरायका अर ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षय तथा क्षयोपशम निमित्ततैं आत्माकै प्रसन्नता है सो आत्मभूत आभ्यंतर हेतु है ऐसा नामकै योग्य होय है अर सो यो हेतु विकल्प जो है ताको निकट पणौं यथा संभव उपलब्धिका कर्ताकै होय है सौ ऐसैं जाननें, तहां प्रथम कोऊ प्राणीकै तो प्रदीपादि वाह्य हेतुकी निकटता है सो विज्ञानकी प्रवृत्तिनैं वाह्य कारण है क्योंकि प्रदीपाद्रिक विना चक्षु आदिकै विज्ञानकी अप्रवृत्ति है यातैं अर कितनेक व्याघ्र मार्जार आदिकनिकै तौ वाह्य प्रदीपादिक कारण विना भी विज्ञानकी प्रवृत्ति होनेंतैं पूर्वोक्त हेतुनिकै होतैं ही होय ऐसौ नियम नहीं है अर चक्षु आदिको भी पंचेद्रिय विकलेंद्रिय एकेंद्रिय विषयपणां करि निकटता प्रति नियत नहीं है अर मन वचन काय रूप अंतःकरण भी असंज्ञीनिकै मन विना होय है अर संज्ञीनिकै तीन है अर एकेंद्रियनिकै तथा विग्रहगतिनैं प्राप्तभयेनिकै तथा समुद्घातनैं प्राप्त भये संयोग केवलीनिकै एक काय

योग ही है तातैं योग भी यथा संभव ही है। बहुरि भाव योग क्षयोपशमादि कृत पंचेंद्रिय, विकलेंद्रिय, एकेंद्रिय, असंज्ञी, संज्ञी तथा विग्रह गतिवान तथा समुद्घात करनवारे संयोग केवलीनिकै विषैं नियमरूप है। भावार्थ—भावयोग अपने अपने योग्य सबनिकै है, तहां क्षयोपशमभाव तौ क्षीणकषाय पहली है अर याकै उपरान्त क्षायिक भाव है ऐसैं यथा संभव हेतुकी निकटतानैं होतां संतां चैतन्य आत्म स्वभाव अनादि जो है ताहि अनुकूल करै ऐसो है स्वभाव जाको सो चैतन्यानुविधायी परिणाम है सो उपयोग है ऐसैं कहिये हैं याको दृष्टान्त कहै कि जैसैं सुवर्णकै अनुकूल होनेवाले कड़ा, भुजबंध, कुंडल आदि विकार है तैसैं आत्माकै अनुकूल दर्शन ज्ञानरूप परिणमन होनों योग्य है अर आगानैं याही उपयोगका प्रकार दर्शन ज्ञानका भेद कहैंगे तातैं यो वचन पूर्वापर विरुद्ध देखिये है? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि चैतन्य नाम आत्माको सामान्यरूप स्वभाव है अर याका नहीं मिलापतैं और द्रव्यनिकै विषैं जीव नाम नहीं है अर या चैतन्यके भेद ज्ञान दर्शनादिक है तिनका समुदायकै विषैं वर्तमान चैतन्य शब्द है अर कहूं चैतन्य शब्द सुखादिक अवयव जे हैं तिनकै विषैं भी प्रवर्तै है क्योंकि समुदायमैं प्रवर्तनवारे शब्द अवयवनिकै विषैं भी प्रवर्तै है ऐसा न्याय है अर इहां समुदायमैं ही प्रवर्तमान चैतन्य शब्द ग्रहण कियो है अर आगानैं याही उपयोगका भेद ज्ञान दर्शनरूप विकल्प कहैंगे या हेतुतैं विरोध नहीं है। प्रश्न, लक्षण कहा है? उत्तररूपवार्तिक—परस्परव्यतिकरे सति येनान्यत्वं लक्ष्यते तल्लक्षणम् ॥२॥ अर्थ—बंध परिणामका कथनतैं परस्पर मिलान स्वभाव पणांनैं होतां संतां भी अन्यपणांका ज्ञानको कारण जो है सो लक्षण है। ऐसैं भलैप्रकार कहिये है याको दृष्टांत कहै है कि सुवर्णकै अर रजतकै बंध करि एकत्वनैं होतां संता भी वर्ण प्रमाण आदि असाधारण धर्म जो है सो लक्षण है ॥२॥ वार्तिक—अलक्षणमुपयोगोगुणगुणिनोरन्यत्त्वमिति चेन्नोक्तत्वात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, जैसैं उष्ण पणौं तो गुण है अर अग्नि गुणी है तैसैं आत्मा तो गुणी है अर तिन दोउनिकै

लक्षण भेदतैं अन्य पणौं है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, याको उत्तर पूर्वैं कह्यो है यातैं सो ऐसैं कह्यो है कि लक्षणनैं असरस्वभाव होतां संतां लक्षणका नहीं जाननको प्रसंग आवे है ॥३॥ वार्तिक—लक्ष्यलक्षणभेदादिति चेन्नाऽनवस्थानात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, याकै अनंतर यो मत है कि लक्ष्य तौ गुणो है अर लक्षण गुण है तातैं लक्ष्यतैं लक्षणनैं भिन्नरूप करि होनों योग्य है यातैं इनि दोऊनिकै अन्य पणौं है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अनवस्थान है यातैंसो ऐसैं जा लक्षण करि लक्ष्यनैं देखिये सो लक्षण लक्षण सहित है कि लक्षण रहित है जो लक्षण रहित है तो मींडककी चोटीकै समान अभावनैं प्राप्त होय है क्योंकि लक्षणनैं नहीं होतां संतां लक्ष्यको जानन नहीं होय है अर जो वो लक्षण सहित है तो वो भी वातैं अन्य है अर वाको लक्षण और करिये तौ वाको लक्षण अन्य ठहिरेगो, ऐसैं कहूं ही नहीं ठहिरनेतैं अनवस्था आवे है ॥४॥ अर और सुनूं वार्तिक—आदेशवचनात् ॥५॥ अर्थ—लक्ष्य लक्षणके अभेदतैं कथंचित् एक पणौं है अर संज्ञा, संख्या लक्षण आदिका भेदपणांतैं कथंचित् नाना पणौं है ऐसा आदेशका वचनतैं एकांतरूप दोषका सिलापको अभाव है ॥५॥ इहां कोऊ कहै है कि वार्तिक—नोपयोगलक्षणोजीवस्तदात्मकत्वात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, जीवको उपयोग लक्षण नहीं है क्योंकि दोउनिकै एकात्मक पणौं है यातैं। भावार्थ—या लोककै विषैं जो जा-स्वरूप है सो चीरस्वरूपकरि नहीं उपयुक्त हूजिये है याको दृष्टांत ऐसो है कि चीर चीर-स्वरूप है सो चीर स्वरूपकरि नहीं युक्त हूजिये है ऐसैं आत्माकै भी ज्ञानात्मक पणांतैं ज्ञान करि ही युक्त होनों नहीं संभवै है यातैं जीवकै उपयोग लक्षणको अभाव है ॥६॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूपवार्त्तिक—विपर्ययप्रसंगात् ॥७॥ अर्थ—अनन्य पणांनैं होतां संतां उपयोगनैं इच्छताकै तथा नहीं इच्छताकै कोईकै विपरीतता प्राप्त होय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अविपर्ययकै समान विपरीतता प्राप्त होय है सो ऐसैं जीव ही ज्ञानतैं अनन्य पणांनैं होतां संतां ज्ञानात्मा करि उपयुक्त होय है ऐसैं मानिये है

सो नहीं है जैसैं चीरादिककी चीरादि आत्मस्वरूपकरि नहीं उपयुक्त होय है अर कदाचित् चीरादिक ही चीरादि आत्मस्वरूप करि परिणम्यूं परंतु जीव तौ ज्ञानस्वरूप करि उपयुक्त नहीं हूजिये है क्योंकि यो अनिष्ट है यातैं। भावार्थ—योग शब्द वहां प्रवर्तै है कि जहां दोय वस्तु प्रथक् ग्रहण होय अर उनको योग करनौं होय अर इहां ज्ञान अर आत्मा पृथक् ग्रहण नहीं होय है दोऊ एकात्मक है तातैं उपयोग कहना अनिष्ट है ॥७॥ उत्तर रूप वार्तिक—नातस्तत्सिद्धेः ॥८॥ अर्थ—यो कहनौं योग्य नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, या अनन्यपणांतैं ही उपयोगकी सिद्धि है यातैं। भावार्थ—जा कारण करि अनन्यपणौं है ता कारण करि ही उपयोग सिद्ध होय है क्योंकि सर्वथा अन्यत्व होत संतै उपयोग नहीं सिद्ध होय है जैसैं आकाशकै रूपादिकतैं सर्वथा अन्यपणौं होत संतैं रूपादिक को उपयोग कहनौं नहीं वनै है अर जो पूर्वैं चीरको दृष्टांत कह्यो हौ कि चीर जो है सो चीरात्मक है तातैं चीरात्माकरि उपयुक्त नहीं होय है सो भी नहीं है क्योंकि चीरात्मक पणांतैं ही चीरात्मक करि उपयुक्त होनेकी सिद्धि है सो ऐसैं जैसैं तृण जल आदि कारणके वशतैं चीरभावकी प्राप्तिकै सन्मुख भयो जो पुद्गलस्कंध सो नैगम नयका आदेशतैं चीरनामको भजने वारो होय है क्योंकि चीरपणांकी शक्तिको सद्भाव है यातैं चीरात्माकरिकै ही परिणमननैं प्राप्त होय है ऐसैं कहिये है तैसैं आत्म भी ज्ञानादिस्वभाव शक्तिरूप कारणका वशतैं घट पटाद्याकारका अवग्रहादिरूप करि परिणमै है। यातैं, उपयोग आत्माकै सिद्ध होय है अर जो ऐसैं परिणमनरूप उपयोग कूं नहीं मानिये तौ उपयोगकै आत्मभाव नहीं होत संतै आत्मापणांकौ अभाव होय अर आत्मापणांकौ अभाव होय तदि उपयोगकौ भी अभाव ही होय। भावार्थ—सर्व द्रव्य अपने अपने स्वभावमैं परणमन करते संते ही द्रव्य नाम पावै है तातैं इहां आत्माकै घटपटाद्याकार रूप परिणामन है सो ही उपयोग है अर वो उपयोग ही आत्माकै द्रव्यपणौं जनावै है सो जैसैं अग्नि द्रव्यकै उष्णत्वादि रूप परिणमन है सो ही अग्निकै द्रव्यपणौं जनावै है तातैं

उपयोगनैं आत्मस्वरूप नहीं होत संतैं जैसैं उष्णताका अभावनैं होत संतै अग्निकौ अभाव होय तैसैं आत्मा हीकौ अभाव होय ॥८॥ वार्तिक—उभयथापि त्वद्वचनासिद्धेः ॥९॥ अर्थ—उपयोगनैं भिन्न मानतां संतां तथा अभिन्न मानतां संतां तिहारा वचनकी असिद्धि है यातैं। भावार्थ—अनेकांत करि वस्तु तत्वनैं निरूपण करणवारो जो अरिहंत संवंधी न्याय तातैं नहीं जानिकरि जो तैं प्रश्न कियौ कि जो वस्तु जा स्वरूपकरि विद्यमान है ताको ता स्वरूपकरि परिणामन नहीं होय है ताको उत्तर कहिये है कि दोउतरैं तिहारा वचनकी असिद्धि है सो ऐसैं तदात्मक अनुपयोग कहनेंवारो जो तू ताको स्व पर पक्ष साधन दूषणात्मक जो निज वचन ताकै स्वपक्ष साधक पणांरूप तथा पर पक्षवाधक पणांरूप परिणामनका अभावतैं जिस विषयमैं उपदेश कियौ तिस विषयमैं ही यो पूर्वोक्त-हेतु असाधक होय है जैसैं क्षीरकै दधिरूपपणां करि परिणमन तौ इष्ट करिये है अर क्षीरपणां करि नहीं इष्ट करिये है तैसैं ही स्वपक्षको साधक स्वरूप जो वो तिहारो वचन ताकै रूप करि अपरि-णामतैं ही साधक पणां इष्ट करिये है। दूषणपणां करि नहीं इष्ट करिये है, यातैं तदात्मक होत संतैं अनुपयोग है ऐसा तिहारा वचनकी असिद्धि है अथवा तिहारो वचन स्व परपक्ष साधक दूषात्म-क होत संतै स्वपक्ष साधक अर परपक्ष दूषक रूप पर्यायनि करि परिणमैं है तौ हू जो तू कहत भयो कि तदात्ममैं अनुपयोग है तातैं ताको तीं रूप करि परिणामन नहीं है ऐसौ यो वचन अयोग होय है ॥९॥ किंच, वार्तिक—स्वसमयविरोधात् ॥१०॥ अर्थ—और सुनूं कि जो तदात्मकमैं अनुपयोग है तो तिहारा निज सिद्धांतमैं विरोध आवै है। भावार्थ—जो जीं रूप है सो तीं रूप करि नहीं परिणामन वारो है ऐसौ तुम्हारो इष्ट है तौ सुनूं कि पृथ्वी, अप, तेज, वायु ये चार महाभूत जे हैं ते रूपाद्यात्मक हैं ते रूपाद्यात्मक पणां करि नहीं परिणामन पावैंगे अर उन महाभूतनिको परि-णामन रूपाद्यात्मक पणां करि तिहारै इष्ट है अर शुक्लादिरूप आदि परिणामन विशेष पृथिव्या-दिकनिमैं देखिये है यातैं तिहारै स्व समयमैं विरोध होय है ॥१०॥ किंच, वार्तिक--केनचिद्विज्ञाना-

त्मकत्वात् ॥११॥ अर्थ—और सुनूं कि जाकै आत्मा एकांतकरि ज्ञानात्मक है ताकै ज्ञानात्मा करि परिणामन न होय क्योंकि आप पूर्वें ही परिणामन रूप है यातैं अनेकान्तवादी आर्हत जो है ताकै तौ कथंचित् ज्ञानरूपपर्यायका उपदेशतैं आत्मा विज्ञानात्मक है अर कथंचित् अन्य पर्यायका उपदेशतैं अन्यात्मक है यातैं कथंचित् तदात्मक पणांतैं कथंचित् अतदात्मकपणांतैं परिणामनकी सिद्धि है अर जो एकांत करि ज्ञानात्मक ही होय तथा इतरात्मक ही होय तौ वाका परिणामनको अभाव होय अर परिणामनको अभाव होत संतैं आत्माको भी अभाव होय ॥११॥ वार्तिक—तदात्मकस्य तेनैवपरिणामदर्शनात् क्षीरवत् ॥१२॥ अर्थ—जैसैं क्षीर जो है सो द्रव्यपणांनैं तथा मधुरादि अपनां स्वभावनैं नहीं छांड़तौ गुड़ादिद्रव्यका संबंधतैं गुड़ क्षीर मिश्रित परिणामांतरनैं आश्रय करै है अरगवादिका स्तनतैं निकसत मात्र तौ उष्ण होय है बहुरि कालांतर करि शीतल होय हैं। बहुरि वै ही क्षीर अग्निका संबंधकरि उष्ण तथा घन होय है। बहुरि अग्नि संबंधका अभावमैं शीतल होय हैं तथापि क्षीर जातिनैं नहीं छांड़तौ उष्ण क्षीरादि नामको भजनैं वारो होय है सो इहां क्षीर क्षीरात्मा करि ही परिणाम्यू है अर जो क्षीर क्षीरात्मा करि नहीं परिणामैं तौ तहां क्षीर नामको अभाव होय है तैसैं ही उपयोगात्मक आत्मा जो है सो अपना उपयोग स्वभावनैं नहीं छोड़तो ज्ञान दर्शनादि स्वभाव करि परिणामननैं प्राप्त होय है यातैं तत्व स्वरूपकूं उपयोग कहनेमैं विरोध नहीं है ॥१॥ बहुरि या उपरांत यो उपयोग जो ऐसैं तत्स्वरूप नहीं होय तौ दूषण आवै है सो सुनूं। वार्तिक—अतैश्चैतदेवं यदि हिनस्यान्निःपरिणामत्वप्रसङ्गोऽर्थस्वभावसंकरो वा ॥१२॥ अर्थ—जो जीं स्वरूप है ताकौ तीं स्वरूप करि परिणामन नहीं है तो यदर्थ मात्रकै निःपरिणामी पणांको प्रसङ्ग आवै अर निःपरिणामी पणांतैं सर्वथा नित्य पणांनैं होतां संतां क्रिया कारक रूप व्यवहारको लोप होय बहुरि परिणामी पणांनैं होतां संतां पर स्वरूप करि परिणाम वातैं सर्व पदार्थनिका

स्वभावकै संकर पणांको प्रसङ्ग आवै अर परिणमन दोऊ रीतितैं ही इष्ट है तातैं निज स्वभाव करि परिणमन सिद्ध भयो। इहां कोऊ और कहै है। वार्त्तिक—उपयोगलक्षणानुपपत्तिर्लक्ष्याभावात् ॥१२॥ अर्थ---या लोककै विषैं विद्यमान लक्ष्य पदार्थको लक्षण होय है ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं विमान देवदत्तको दंडादिक लक्षण होय है अर अविद्यमान शशाका सींग आदिको कछू भी लक्षण नहीं होय है तैसैं सो ही आत्मा दुःख करि स्थापन करने योग्य है तातैं आत्माका अभावतैं उपयोगकै लक्षण पणौं काहेतैं होय ॥१२॥ प्रश्न, यो आत्माको अभाव कैसैं है ? उत्तर, ऐसैं है सो कहिये है। वार्त्तिक--तदभावश्चाकारणादिभिः ॥१३॥ अर्थ--वा लक्ष्य रूप आत्माको अभाव है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अकारणपणां आदितैं मींडककी शिखाके समान अभाव है ॥१३॥ अर और सुनूं वार्त्तिक---सत्यपि लक्षणत्वानुपपत्तिरनवस्थानात् ॥१४॥ अर्थ---अर लक्ष्य रूप आत्मानैं होतां संतां भी उपयोगकै तो लक्षणपणौं नहीं उपजै है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अनवस्थानतैं क्योंकि उपयोग जो है सो ज्ञान दर्शन स्वभाव है सो ज्ञान दर्शन क्षणिक पणांतैं अवस्थित नहीं है अर अवस्थित नहीं होय सो लक्षण नहीं होय क्योंकि वा अनवस्थित लक्षणका नाशनैं होतां संतां लक्ष्यको अप्राप्ति है यातैं याको दृष्टांत ऐसो है कि कोऊ प्रश्न करै कि देवदत्तको गृह केसोक है तदि कोऊ कहै कि जहां यो नीचैं काक है। बहुरि वा काकनैं उड़ जातां संतां वो घर भी नष्ट होय तैसैं ज्ञानादि लक्षण आत्माको होत संतैं क्षणिक स्वभावी पणांतैं ज्ञानादिकका अभावनैं होतां संतां आत्माको अभाव प्राप्त होय है ऐसा प्रश्नकै विषैं आचार्य कहै है ॥१४॥ वार्त्तिक---आत्मनिन्हवो न युक्तः साधनदोषदर्शनात् ॥१५॥ अर्थ---इहां आत्माको छिपाव करनौं युक्त नहीं है क्योंकि साधनमैं दोषका दर्शन है यातैं सुनूं कि पूर्वैं कह्यौ हुतौ कि आत्मा नहीं है अकारण पणांतैं मींडककी शिखाकै समान है ॥१५॥ याका उत्तर रूप वार्त्तिक--हेतुरयमसिद्धो विरुद्धोऽनैकांतिकश्च ॥१६॥अर्थ--यो हेतु असिद्ध विरुद्ध अनैकांतिक स्वरूप है भवार्थ--

आत्मा कारणवान ही है हमारे ऐसो निश्चय है क्योंकि नारकादिभवतैं भिन्न ऐसी द्रव्यार्थिक नयका अभावतैं नारक स्वरूप आत्माकै मिथ्यादर्शनादि कारण पणांतैं तिहारा कह्या अकारण हेतुकै असिद्धता है। बहुरि सकारण पणांतैं ही तिहारा मतमैं द्रव्यार्थिक पणां करि उपदेशका अभावतैं अर पर्यायकै पर्यायांतरका अनाश्रयतैं आश्रयका अभावतैं भी तिहारा कह्या अकारण हेतुकै असिद्धता है। बहुरि तिहारा कह्या अकारण हेतुकै विरुद्धता है सो ऐसैं है कि सर्व घटपटादि पदार्थ अकारण ही है ता कारण करि यो हेतु द्रव्यार्थिक नयकै विरुद्ध ही है क्योंकि विद्यमानकै अकारण पणौं है यातैं अर जो है सो नियम करि ही अकारण है अर विद्यमान है अर कारण-मान है ऐसो कोऊ पदार्थ है ही नहीं क्योंकि जो यो है ही तो याकै विद्यमान रचना पणांतैं कारण करि कहा प्रयोजन है अर जो अविद्यमान है ताकै ही कारणवान पणौं है क्योंकि कारणकै कार्यार्थपणौं है यातैं ऐसैं हेतुकै विरुद्धार्थता है। बहुरि मींडक शिखादिकनिकै अविद्यमानकी प्रतीतिका हेतु पणां करि कल्पित सात् पणांका अङ्गीकारतैं ही तिन मींडक शिखादिकनिकै कारणको अभाव है ऐसैं सत्मैं तथा असत्मैं प्रवर्तवातैं अकारण हेतुकै अनेकांतिक पणौं है अर दृष्टांत भी साध्य साधन रूप उभय धर्म करि विकल है सो ऐसौं है कि कर्म बंधका वशतैं नाना जाति सम्बन्धनैं प्राप्त होतो नित्य स्वरूप जीव जो है ताकै मींडक भवकी प्राप्ति होत संतैं मींडक नामको धारक जो है सो ही फेर मनुष्यणीका जन्मनैं प्राप्त होतां संतां जो मींडक हुतो सो ही यो शिखावान है ऐसौं एक जीव संबंध पणांतैं मींडककै शिखा है अर अनादि अनंत है परिणमन जाकै ऐसा पुद्गल द्रव्यकै भी मनुष्यणीका भोग्या आहारादिक जे हैं तिनकै केश भावका परिणमनतैं शिखाकी उत्पत्ति होनेंतैं कारण पणौं है यातैं हेतुकै नास्तित्व अर अकारणत्वधर्मका अभावतैं साध्य अर साधन रूप दोउ ही धर्म करि विकल्प पणौं है अर ऐसैं ही वंध्यापुत्र शशाका सींग आदिकै विषैं भी जोड़ने योग्य है। प्रश्न, इनिकै तो पूर्व जन्मकी कल्पना करि अस्तित्व

पणौं सिद्ध कियो परंतु आकाश कुसुमकै विषैं कैसैं सिद्ध होयगो ? उत्तर, तहां भी सिद्धि है ताको दृष्टांत सुनौ कि जैसैं वनस्पति नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो है विशेषरूप जानैं ऐसौ जो जीव पुद्गलको समुदायरूप वृक्ष ताकै पुष्प है ऐसैं कहिये है अर और भी पुद्गलद्रव्यपुष्प भावकरि परिणम्यौ सो तीं वृक्ष करि व्याप्तभाव करि व्याप्य भाव करि संबंधपणातैं वा वृक्षका पुष्प कहिये है तैसैं ही आकाश करि भी व्याप्य भाव करि संबंधपणां करि व्याप्तपणौं समान है तातैं आकाशको पुष्प नाम कहनौं युक्त है। प्रश्न, वृक्षकृत उपकारकी अपेक्षाकरि वृक्षको पुष्प है ऐसैं कहिये है ? उत्तर, आकाशकृत अवगाहन उपकारकी अपेक्षा वा पुष्प कैसैं नहीं है अर इतनौ अधिक है कि वृक्षतैं च्युत भयो भी आकाशतैं च्युत नहीं होय है। प्रश्न, आकाश नित्य है तातैं पुष्पको संबंधी नहीं है क्योंकि आकाशकै अर पुष्पकै अर्थान्तर भाव है। यातैं उत्तर, ऐसैं मान्य है तौ वृक्षकै भी पुष्प नहीं है क्योंकि या लोकमैं सर्वत्र ही नाम संख्या विशेष स्वलक्षण आदिकी अपेक्षा करि संबंध जोड़िये है। भावार्थ—आकाशकै अर पुष्पकै तथा वृक्षकै अर पुष्पकै व्याप्य व्यापक भावकरि संबंध नित्य है। इहां तात्पर्य ऐसैं है कि जा समय वृक्षकै व्यापकपणां है ता समय पुष्पकै भी व्यापकपणौं है तातैं नित्य कहिये अथवा बाह्य अर्थकै अकारण परिणम्यो जो विज्ञान ताका विषयपणांकी अपेक्षाकरि मींडक को शिखा वंध्यापुत्र आकाशपुष्प आदिमैं भी नास्तित्व अकारणत्व नहीं है यातैं तिहारी युक्तमैं क्षेपको उद्भावन चिंतवन करनौं योग्य है। भावार्थ—विज्ञानवादी तू जो है ताकै मींडक शिखादिक विज्ञानका विषय है तातैं आत्माका अभाव करनैंमैं मींडक शिखाको दृष्टांत कह्यो हुतो तामैं नास्तित्व अकारणत्व हेतु-दियो हुतो सौ नहीं बनै है। बहुरि इहां नास्तिक प्रश्न करै है कि ऐसैं कहो हौ तो सुनूं कि आत्मा नहीं है अप्रत्यक्ष पणांतैं शशाका सींगकै समान है ? उत्तर, यो हेतु भी योग्य नहीं है क्योंकि या हेतुकै भी असिद्ध विरुद्ध अनैकांतिकता नहीं छूटै है यातैं सो ऐसैं सकल लोकालोक है

विषय जाको ऐसा केवल ज्ञानकै प्रत्यक्ष पणांतैं शुद्धात्मा प्रत्यक्ष है अर कर्म नोकर्मरूप बंध करि पराधीन पिंड्यात्मा अवधि मन पर्यय ज्ञानकै भी प्रत्यक्ष है ऐसैं प्रत्यक्ष पणांतैं तुम्हारा कह्या हेतु असिद्ध है। बहुरि प्रश्न करै हैं कि इंद्रिय प्रत्यक्ष पणांका अभावतैं अप्रत्यक्ष है? उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि इंद्रिय प्रत्यक्षकै परोक्ष पणांका अंगीकार है यातैं सो ऐसैं है कि घटादिक अप्रत्यक्ष है क्योंकि अग्राहक जे इंद्रिय ते है निमित्त जाको ऐसा ग्राह्य पणांतैं धूमादि करि अनुमित अग्निके समान है सो ऐसैं है कि इंद्रिय अग्राहक है क्योंकि इंद्रियका विनाशनैं होतां संतां भी पूर्वकालमैं ग्रहण कीयाका स्मरणतैं गवाक्ष जो मंदिर ताकै समान घटादिक है। भावार्थ—नेत्रादिक इंद्रियनिकूं नष्ट होत संतैं भी पूर्वकालमैं अनुभव कीया गवाक्षादिकको स्मरण होय है तातैं इंद्रिय ग्राहक नहीं है क्योंकि जो इंद्रिय ही ग्राहक होती तो स्मरण भी इंद्रियकै साथ ही नष्ट हो जातो यातैं जानिये है कि इंद्रिय ग्राहक नहीं है। ग्राहक आत्मा है यातैं इंद्रिय प्रत्यक्ष जिसकूं कहो हौ सो अप्रत्यक्ष ही है अर और सुनूं कि प्रत्यक्षतैं अन्य जो है सो अप्रत्यक्ष है ऐसैं कहै सो तौ पर्युदास है अर प्रत्यक्ष नहीं है सो अप्रत्यक्ष है ऐसैं कहै सो प्रसज्यप्रतिषेध है तातैं जो अप्रत्यक्ष हेतुतैं पर्युदास रूप कहौ हौ तौ अन्य पणांकै दोय पदार्थनिकी स्थितिपणांतैं वस्तुपणांकी सिद्धि है। भावार्थ---दोय पदार्थ हुवा विना यातैं अन्य है ऐसो कहनों नहीं बनै है यातैं तिहारो कह्यो हेतु नास्तिपणांको तौ विरोधो है अर अस्तित्व साधनतैं अविरुद्ध है अर जो प्रसज्य प्रतिषेध रूप अप्रत्यक्ष हेतुनैं कहो हौ तौ प्रतिषेध करनें योग्य पदार्थनैं विद्यमान होतां संतां प्रतिषेधकी सिद्धि है यातैं विधि विषय सिद्धि है ऐसैं कथंचित्प्रत्यक्ष पणांको उत्पत्ति है यातैं भी हेतु असिद्ध है बहुरि अविद्यमान---शशाका सींगनैं इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं होतां संतां तथा विद्यमान विज्ञानादिकनिनैं भी इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं होतां संतां अप्रत्यक्ष पणांकी प्रतीतितैं हेतुकै अनेकांतिकता है ऐसैं कहतां संतां वादी कहै है कि विज्ञानादिकनिकै स्व संवेद्यपणांतैं तथा योग प्रत्यक्ष पणांतैं अप्रत्यक्ष

हेतुकै अनेकांतिक पणांको अभाव है। इहां जैनी कहै है कि विज्ञानादिकनिनैं स्वसंवेद्य योगि प्रत्यक्ष मानिये है तौ आत्मा भी स्वसंवेद योगी प्रत्यक्ष है याकै माननेमैं कहा असंतोष है। वहुरि दृष्टांत भी साध्य साधन रूप दोऊ धर्मनि करि विकल है क्योंकि पूर्वोक्त विधि करि अप्रत्यक्ष पणांको अर नास्तित्वपणांकी असिद्धि है यातैं वहुरि और सुनूं कि सर्व वाक्यार्थके विधि प्रतिषेधात्मक-पणांतैं कोऊ ही पदार्थ सर्वथा निषेधकै गम्य नहीं है अर अस्तित्वनैं होतां सन्तां वो पदार्थ उभयात्मक है ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं कुरव जातिके वृक्षनिकैं रक्त श्वेत पणांका निषेधनैं होतां संता भी रक्त श्वेत नहीं है तौ हू वर्ण रहित नहीं है अर प्रतिषेध पणांतैं रक्त श्वेत नहीं है ऐसैं विद्यमान वस्तु भी पर स्वरूप करि नहीं है अर प्रतिषेधनैं होतां संतां भी निज स्वरूप करि है, ऐसैं सिद्ध है वहुरि तैसैं ही प्राचीन सिद्धांत है। श्लोक--अस्तित्वमुपलब्धिश्च कथंचिदसतःस्मृतेर्नास्तितानुपलब्धिश्च कथंचित्सत एव ते ॥१॥ सर्वथैव सतो नेमौ धर्मौ सर्वात्मदोषतः सर्वथैवाऽसतो नेमौ वाचां गोचरताऽत्ययात् ॥२॥ अर्थ--अस्तित्व अर उपलब्धि कथंचित् असत्कै भी है क्योंकि असत्की भी स्मृति होय है। वहुरि नास्तितता अर अनुपलब्धि भी कथंचित् सत्कै ही होय है। वहुरि वै ये अस्तित्व अर उपलब्धि दोऊ धर्म सर्वथा ही सत्कै भी नहीं होय है क्योंकि सर्वात्म नामा दोष आवै है यातैं। वहुरि नास्तितता अर अनुपलब्धि ये दोऊ धर्म्म सर्वथा ही असत्कै भी नहीं होय है क्योंकि वाणीकै गोचरपणांका उल्लंघनतैं ॥२॥ नास्तिपणां करि अर असत्प्रत्यक्षपणां करि भी रहित वस्तु जो है सो कथंचित् अवस्तु है ऐसैं धर्मो असिद्ध है या प्रकार और भी एकांतवादीनि करि प्राप्त किया हेतु जे हैं ते दोषवांन पणां करि त्याज्य है ॥१६॥ अवैं आत्माका अस्तित्वनैं सिद्ध करिये है। वार्त्तिक---ग्रहणविज्ञानासंभविफलदर्शनाद् गृहीतृसिद्धिः ॥१७॥ अर्थ---जो ये पूर्व कृत कर्म करि रचे अर सहकृत तथा पृथक् कृत स्वभावकी सामर्थ्यतैं उत्पन्न भयो है भेद जिनमैं अर रूप रस गंध स्पर्श शब्दके ग्राहक ऐसैं चक्षु रसना घ्राण त्वचा कर्ण

नामके धारक इन्द्रिय जे हैं ते अर इन्द्रिय सनिकर्ष जनित विज्ञान जे हैं ते हैं तथापि तिनकै विषैं नहीं संभवै ऐसो विशेष रूप फल प्राप्त होय है प्रश्न, सो कहा है? उत्तर, आत्म स्वभावका स्थानको ज्ञान है सो यो विषयकी भलै प्रकार प्रतीति रूप है सो इन्द्रियनिकै तो अचेतन पणांतैं नहीं संभवै है अर इन्द्रिय संनिकर्ष रूप विज्ञाननिकै चणिक पणांतैं नहीं संभवै है अर एकार्थग्राही पणांतैं तथा उत्पत्तिकै अनंतर रुकवातैं भी नहीं संभवै है अर विषयकी भलै प्रकार प्राप्ति रूप फल देखिये है सो यो अकस्मात् नहीं देखिये है यातैं विषयकी प्रतिपत्तिमें चतुर इंद्रियनितैं तथा इंद्रिय संनिकर्ष ज्ञानतैं भिन्न ऐसो कोऊनैं होनों योग्य है यातैं विषयनैं ग्रहण करन वारा आत्माकी सिद्धि है ॥१७॥ किंच वार्त्तिक---अस्मदात्मास्तित्वप्रत्ययस्य सर्वविकल्पेष्विष्टसिद्धेः ॥१८॥ अर्थ---और सुनूं कि जो यो हमारो आत्मा है ऐसी प्रतीति जो है सो संशय अनध्यवसाय विपर्यय अर सम्यक प्रत्यय रूप जे सर्व विकल्प तिनकै विषैं इष्टनैं सिद्ध करै है तिनमें प्रथम ही संशय तौ नहीं है क्योंकि आत्माकै निर्णयात्मक पणौं है यातैं अर संशयनैं होतां संतां भी संशयका आलंबन पणांतैं आत्माकी सिद्धि है यातैं क्योंकि अवस्तु विषय संशय नहीं होय है अर अनध्यवसाय भी नहीं है क्योंकि जात्यंधकै अर वधिरेकै रूपकै अर शब्दकै समान अनादितैं भले प्रकार प्रतीति है यातैं अर ऐसैं ही विपर्यय भी नहीं है क्योंकि पुरुषमें स्थाणुकी प्रतीतिनैं होतां संतां स्थाणुकी सिद्धिकै समान आत्माका अस्तित्वकी सिद्धि है अर सम्यक प्रतीत तौ विसंवाद रहित ही है यो आत्माको अस्तित्व है ऐसैं हमारो पक्ष सिद्ध है ॥१८॥ इहां भी प्रश्नोत्तररूप वार्तिक---संतानादिति चेन्न तस्य संवृति सत्वाद् द्रव्यसत्वे वा संज्ञाभेदमात्रम् ॥१९॥ अर्थ--प्रश्न, संतान नामा कोऊ एक पदार्थ है सो इंद्रिय सन्निकर्ष रूप विज्ञानका आत्म स्वभावका स्थानादिको भलै प्रकार प्रतिपादन करनेवारो है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा संतानकै संवृति स्वरूप पणौं है कि उपचार स्वरूप पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि आत्मानैं नहीं होतां संतां

वो संतान निश्चय करि उपचार स्वरूप होतो संतो अपनैं कल्पित स्वरूप जो है ताक विषैं विशेष प्रतीति रूप कैसैं होय। अर्थात् संतानकूं उपचार स्वरूप माननैं सामान्य ज्ञान होनां संभवै है तथापि विशेष ज्ञान होना नाहीं संभवै है अर संतानके द्रव्यत्व अंगीकार करिये तो संज्ञामात्र भेद है अर्थात् आत्माको ही नाम संतान है यातैं अर्थमैं विवाद नहीं है। बहुरि वादीनैं जो कह्यो हुतौकि आत्मा है तोहू उपयोगकै लक्षण पणांकी उत्पत्ति नहीं है क्योंकि उपयोगकै अनवस्थान पणो है यातैं याको उत्तर ग्रंथकार कहै है कि कथंचित् अवस्थानतैं उपयोगकै लक्षण पणांकी उपपत्ति है क्योंकि उपयोगको सर्वथा विनाश तथा सर्वथा अवस्थान नहीं अंगीकार करिये है। प्रश्न, तो कहा अङ्गीकार करिये है? उत्तर कथंचित् विनाश है कथंचित् अवस्थान है सो पर्यायका आदेशतैं विद्यमान अर्थकी अनुपलब्धितैं विनाश है अर द्रव्यार्थका आदेशतैं अवस्थान है ऐसैं केई वेर परीक्षा कीयो है तातैं उपयोगकै लक्षण पणौं उत्पन्न होय है ॥१६॥ तथा वार्तिक—तदुपरमाभावाच्च ॥२०॥ अर्थ—और सुनूं कि कोउ उपयोगको विनाश है ऐसैं उपयोगकी परंपरा नहीं विश्राम लेवै है यातैं उपयोगके लक्षण पणौं निश्चय करनौं योग्य है ॥२०॥ तथा वार्तिक—सर्वथा विनाशे पुनरनुस्मरणाभावः ॥२१॥ तथा और सुनूं कि जो सर्वथा उपयोगको विनाश होय है तौ अनुस्मरणको अभाव होय है अर निश्चय करि यो अनुस्मरण अपना अनुभव किया अर्थको देखिये है अर नहीं तौ नहीं अनुभव कीयाको अनुस्मरण देखिये है अर नहीं अन्यकरि अनुभव कियाको अनुस्मरण देखिये है अर अनुस्मरणका अभावतैं अनुस्मरण है मूल जाको ऐसो सर्वलोक व्यवहार विनाशनैं प्राप्त होय है ॥२१॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—उपयोगसंबंधो लक्षणमिति चेन्नान्यत्वे संबंधाभावात् ॥२२॥ अर्थ—प्रश्न, उपयोग लक्षण आत्माको नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहे तैं? उत्तर, अन्यपणांतैं प्रश्न, तौ कहा है? उत्तर, उपयोगको संबंध लक्षण है याको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं देवदत्तको लक्षण दंड नहीं है। प्रश्न, तौ कहा है उत्तर, दंडको संबंध

लक्षण है अर: जो दंड ही लक्षण है तौ असंबद्ध दंड भी लक्षण होय ऐसैं करि कह्यो है कि क्रियावान गुणवान समवाय है कारण जानैं ऐसो द्रव्यको लक्षण है। इहां आचार्य कहै है कि सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अन्यपणांनैं होतां संता संबंधका अभाव है यातैं अर जो द्रव्यतैं गुण अर्थान्तर भूत है ताकै संबंधको अभाव है ऐसैं पूर्वै कह्यो है तातैं आत्मभूत लक्षण उपयोग है ऐसैं कोऊ दोष नहीं है ॥ २२ ॥ अबैं नवमां सूत्रकी उत्थानिका कहिये है कि जो उपयोग कह्यो ताके भेद दिखावनैं निमित्त कहै है। सूत्रम्—

स द्विविधोऽष्ट चतुर्भेदः ॥९॥

अर्थ—सो उपयोग दोय प्रकार है। सो अष्ट भेद अर च्यार भेद रूप है। प्रश्न, कैसैं दोय प्रकार है? उत्तररूप वार्तिक—साकारानाकारभेदाद्द्विविधः ॥ १ ॥ अर्थ—एक तौ साकार उपयोग दूसरो अनाकार उपयोग ऐसैं दोय प्रकार हैं तिनमें साकार तौ ज्ञान है अर अनाकार दर्शन है ॥१॥ वार्तिक—अभ्यर्हितत्वाज्ज्ञानग्रहणमादौ ॥२॥ अर्थ—निश्चय करि ज्ञान पूजनीक है क्योकि पदार्थनिका प्रकाशपणातैं अर दर्शन पदार्थनिको आलोकन मात्र है यातैं तातैं पूर्वकाल भावी भी दर्शन जो है तातैं ज्ञान प्रथम ग्रहण करिये है। प्रश्न, ज्ञानको ग्रहण आदिमैं करिये है ऐसैं कैसैं जानिये है ॥२॥ उत्तररूप वार्तिक—संख्याविशेषनिर्देशात्तन्निश्चयः ॥३॥ अर्थ—जातैं संख्या विशेषको निर्देश करिये है कि अष्ट भेद अर च्यार भेद है तातैं ज्ञानको निश्चय जानने योग्य है प्रश्न, चतुर शब्दको पूर्वनिपात करि होवो योग्य है क्योंकि संख्याया अल्पीयस्यादिवचनात् यो व्याकरणको सूत्र है ताको ऐसो अर्थ है कि संख्यावाची शब्द अल्प प्रमाणवान जो है ताको स्थापन आदिमैं होय ऐसा वचनतैं ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं चतुर्दश, उत्तर यो दोष नहीं है क्योंकि पूर्वै ऐसैं कह्यो है कि ज्ञानकै अभ्यर्हित पणों है यातैं पूर्वनिपात है तिनमैं ज्ञानोपयोग अष्ट प्रकार है सो ऐसैं है कि मतिज्ञान १ श्रुतज्ञान

२ अवधिज्ञान ३ मनःपर्ययज्ञान ४ केवलज्ञान ५ मत्यज्ञान ६ श्रुताज्ञान ७ विभंगज्ञान ८ अर दर्शनोपयोग चार प्रकार है सो ऐसैं है कि चक्षु दर्शन १ अचक्षु दर्शन २ अवधि दर्शन ३ केवल दर्शन ४ अर इनके लक्षणादिक पूर्वे व्याख्यान किये। प्रश्न, अवग्रहतैं अन्य दर्शन नहीं है? उत्तर, ऐसैं कहौ तो सुनूं कि इनकै अन्य पर्णौं पूर्वै कह्यो है कि छद्मस्थनिकै विषैं तौ तिन दोउनिकै क्रम करि वृत्ति है अर निरावरण केवल ज्ञान जो है ताकै विषैं एकै कालवृत्ति है। प्रश्न, दर्शनको अर ज्ञानको स्वभाव तौ एक जाननरूप अर केवलीकै दोऊ एकै काल कहे तौ इन दोउनिनैं केवलीकै विषैं भी न माननेको हेतु कहा है? उत्तर, पदार्थ मात्रको स्वरूप सामान्य विशेषात्मक है अर केवली यथावत ग्रहण करै है तातैं एकै काल ग्रहण करै है तौ हू सामान्य विशेषरूप ही ग्रहण करै है यातैं केवलीकै भी दोऊ भेद संभवै है ॥३।६॥ अवे दशमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ग्रहण कियो है परिणाम जानैं अर सर्व आत्मामैं साधारण ऐसो यथोक्त उपयोग जो है ताकरि उपलक्षित उपयोगी आत्मा जे हैं ते दोय प्रकार है ऐसैं जनावता संता कहै है। सूत्रम्---

संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥

अर्थ--सो आत्मा संसारी अर मुक्त ऐसैं दोय प्रकार है। वार्त्तिक--आत्मोपचितकर्मवशादात्मनो भवान्तरावाप्तिः संसारः ॥१॥ अर्थ—आत्मा करि संचय कियो कर्म अष्ट प्रकार है सो प्रकृति, स्थिति, अनुभाग बन्ध रूप भेद करि भेदनैं प्राप्त भयो जो है ताका वशतैं आत्माकै भवान्तरकी प्राप्ति जो है सो संसार है। ऐसा कहिये है। प्रश्न, या वार्त्तिकमें दोय आत्म पदनिको ग्रहण कहा निमित्त है? उत्तर, आत्मा ही कर्मनिको कर्त्ता है। अर कर्मका फलको भोक्ता भी सो ही आत्मा है। या प्रकारकूं दिखावनें निमित्त दोय आत्मपद कहे हैं, अर और ऐसें मानैं है कि जो गुण सतो गुण, तमोगुण रूप त्रैगुण जे हैं सो तो कर्त्ता है, अर परमात्मा भोक्ता है? उत्तर, सो

अयुक्त है क्योंकि अचेतनके पुण्य पापका विषयमें कर्त्तापणांकी घटादिकके समान अनुपपत्ति है यातें अर परकृतका फलको भोक्ता अन्यनें होतां संतां अनिर्मोक्षको प्रसङ्ग आवे है। अर अपना कियाको नाश होय है तातें जो कर्त्ता है सो ही भोक्ता है या युक्त है। अर द्रव्यतें तथा क्षेत्रतें तथा कालतें तथा भावतें तथा भवतें संसार पांच प्रकार है ॥१॥ वार्त्तिक—स येषामस्ति ते संसारिणः ॥२॥ अर्थ—अर वो संसार जिनके है ते संसारी है ॥२॥ वार्त्तिक—निरस्तद्रव्यभाववंधा मुक्ताः ॥३॥ अर्थ—वंध दोय प्रकार है, तहां एक द्रव्य वंध है अर एक भाव वन्ध है तिनमें कर्म नोकर्म रूप परिणत पुद्गल द्रव्य विषय जो है सो तो द्रव्य वंध है अर या द्रव्यवन्ध कृत क्रोधादि परिणाम जो है ता करि वशीकृत आत्मा जो है सो ही भाववन्ध है सो दोऊ ही वन्ध जिननें दूर किये ते मुक्त जीव है ॥३॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक---द्वंद्वनिर्देशो लघुत्वादिति चेन्नार्थान्तरप्रतीतेः ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, इहां द्वन्द्व समास युक्त निर्देश करनौं योग्य है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, लघु पणांतें, अर निश्चय करि द्वंद्व समासनें होतां संतां कह्या अर्थको सिद्ध पणों है यातें अर च शब्दका अप्रयोगनें होनां संतां लाघव होय है। इहां ग्रंथकार कहै है कि सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण। उत्तर, अर्थान्तरकी प्रतीति होय है यातें सो ऐसें है कि संसारी अर मुक्त ऐसें द्वंद्व समासनें होतां संतां अल्पस्वरपणांतें तथा अभ्यर्हित पणांतें मुक्त शब्दके पूर्व निपातनें होतां संतां मुक्त संसारिणः ऐसा प्राप्त होय है। अर ऐसां होत संतें अर्थान्तर प्रतीति होय कि जा भाव करि संसार छूट्यो सो मुक्त संसार है अर भाववान है ते मुक्ति संसारी है कि छूट्यो है संसार जिनके ऐसा अर्थकी प्रतीति होय है अर ऐसें होत संतें मुक्ति जीवनिकै ही उपयोग पणों कह्यो होय अर संसारीनिकै उपयोग पणों नहीं कह्यो होय यातें वाक्य ही करिये है कि भिन्न भिन्न ही पद करिये हैं, द्वंद्व समास रूप नहीं करिये है ॥४॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक---समुच्चयाभिव्यक्त्यर्थं च शब्दोऽनर्थक इति चेन्नोपयोगस्य गुणभावप्रदर्श-

नार्थत्वात् ॥५॥ अर्थ---प्रश्न, सूत्रमें च शब्द है सो अनर्थक है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अर्थभेद-तैं समुच्चय सिद्धि है कि द्वि प्रकारकी सिद्धि है यातैं क्योंकि निश्चय करि संसारी अर मुक्त भिन्न ही है। तातैं विशेषण विशेष पणांकी अनुपपत्ति है यातैं समुच्चय सिद्धि है सो जैसें पृथिवी अप तेज वायु ये भिन्न भिन्न है। तैसैं ही संसारी अर मुक्त भिन्न भिन्न ही है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उपयोगकै गुणभावका प्रदर्शनार्थ पणांतैं अर यो च शब्द समुच्चयके अर्थि नहीं है। प्रश्न, तौ काहेके अर्थि है ? उत्तर, अन्वाचयके अर्थि है। प्रश्न, अन्वाचय किसको कहौ हौ ? उत्तर, जहां निश्चय करि एक तो प्रधानभूत होय अर और गौणभूत होय सो अन्वाचय कहिये है। ताको दृष्टान्त ऐसौ है कि भेच्यं चर देवदत्तं चानयेति, याको अर्थ ऐसौ है कि भिक्षा करो, अर देवदत्तनें भी लाओ, या वाक्यमें प्रधानभूत तो भिक्षाको करनौं है अर देवदत्तको लावनौं अप्रधानभूत है। तैसैं संसारी तो प्रधानपणां करि उपयोगवान है, और मुक्त जीव गुणभाव करि उपयोगवान है ऐसैं अन्वाचय रूप उपयोगकूं दिखावनेकै अर्थि च शब्द है। प्रश्न, संसारीनिकै विषैं मुख्य उपयोग कैसैं है ? अर मुक्त जीवनिके विषैं गौण कैसैं है ? उत्तर रूप वार्तिक--परिणामान्तरसंक्रमाभावाद्ध्यानवत् ॥६॥ अर्थ-- जैसै एकाग्र चिन्ता निरोधो ध्यान है सो ध्यान शब्दको अर्थ छद्मस्थनिके विषैं मुख्य है, क्योंकि चिन्ता जनित विक्षेपवान जे हैं तिनके ही चिन्ताका निरोधकी उपपत्ति है यातैं अर चिन्ताका अभावतैं केव-लीकै विषैं ध्यानको फल कर्मनिको झड़नौं जो है ताका दर्शनतैं उपचरित रूप ध्यान है। तैसैं ही उपयोग शब्दको अर्थ भी संसारीनिके विषैं मुख्य है क्योंकि परिणामान्तरका संक्रमणतै कि पलटनेतैं अर मुक्त जीवनिकै विषैं परिणामका जो संक्रमण ताका अभावतै उपयोग गौण कल्पना करिये है क्योंकि उनकै उपलब्धि सामान्य है कि जैसा अनन्तरूप ज्ञानवर्त्तै है तैसा ही वर्तै है यातैं ॥६॥ वार्तिक---संसारिग्रहणमादौ बहुविकल्पत्वात्तत्पूर्वकत्वाच्च स्वसंवेद्यत्वाच्च ॥७॥

अर्थ-- संसारी पदको ग्रहण आदिके विषैं करिये है क्योंकि बहु विकल्पपणातैं कि संसारीनिकै गत्यादिक बहुत्व विकल्प है तथा तत्पूर्वकपणातैं कि ससारी पूर्वक ही मुक्त है, क्योंकि पूर्व संसारी है यातैं अर स्वसंवेद्यपणातैं कि संसारी स्वसंवेद्य है। क्योंकि गत्यादि परिणामनिकै अनुभूत पणौं है यातैं, अर मुक्तजीव जे हैं ते अत्यन्त परोक्ष हैं क्योंकि मुक्त जीवका अनुभवके अप्राप्तपणौं है यातैं ॥७॥१०॥ अबै ग्यारमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तिन भेदनिके विषै जानें ये शुभाशुभकर्मको जो फल ताका अनुभवनको जो सम्बन्ध ता करि वशीकृत हैं स्वभाव जिनको अर नहीं छूट्यो परिभ्रमण जिनके अर पूर्वकृत नाम कर्म रूप जो निमित्त ताकरि उत्पन्न भये हैं भेद जिनके ते प्राणी निश्चय करि जैसें होय तैसें वे जनावनें निमित्त कहे है। सूत्रम्---

समनस्काऽमनस्काः ॥११॥

अर्थ---पंचेन्द्रिय पर्यन्त संसारी मनस्का अर अमनस्का भेद रूप दोय प्रकार है। ते मनकी निकटता थकी तथा नहीं निकटता थकी अपेक्षा करि संसारी दोय प्रकार है अर मन भी दोय प्रकार है। तहां एक द्रव्य मन है। दूसरो भावमन है। तिनमें पुद्गलविपाकी कर्मका उदयकी है अपेक्षा जाकै ऐसौ तो द्रव्यमन है। अर वीर्यान्तराय तथा नो इन्द्रियावरण कर्मका क्षयोपशम करि आत्माकै विशुद्धि जो सो भावमन है। अर या मन करि सहित प्रवर्तें यातैं समनस्क है। अर नहीं है मन विद्यमान जिनके ते अमनस्क है। ऐसें दोय प्रकार संसारी है। इहां वादी कहै है कि वार्त्तिक-- द्विविधजीवप्रकरणाद्यथासंख्यप्रसङ्गः ॥१॥ अर्थ --निश्चय करि प्रकरणमें आये जीव दोय प्रकार है अर तहां एक तों संसारी है अर दूसरा मुक्त जीव है, तिनमें संसारी समनस्क है, अर मुक्त जीव अमनस्क है ऐ। यथासंख्य अर्थ प्राप्त होय है, वार्त्तिक-- इष्टमिति चेन्न सर्व संसारिणां समनस्कत्वप्रसंगात्---अर्थ--- प्रश्न, अर यो अर्थ इष्ट है

कि---संसारी समनस्क है अर मुक्त अमनस्क है, क्योंकि सिद्ध मन रहित ही है यातैं ऐसो कहो हो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण, उत्तर सर्व संसारीनिकै समनस्क पणांको प्रसंग आवै है, यातैं क्योंकि एक दोय तीन, चार इन्द्रिय वाननिकै अर पंचेन्द्रियनिमें भी केइनिकै मन विषय विशेष व्यवहारका अभावतैं अमनस्कता इष्ट है, ताको वा अर्थ कूं इष्ट किये व्याघात होय अर यहां यथासंख्यको उत्तर और कहिये है ॥२॥ वार्त्तिक--प्रथक्योगप्रक्रमे संसारी संप्रत्ययः ॥३॥ अर्थ – जो यो प्रथक् योग करण है कि भिन्न सूत्र कियो है ता करि जानिये है कि इहां संसारी ही सम्बन्धनें प्राप्त होय है। अर निश्चय करि और तरह होतो एक ही होतौ एक ही योग करता कि संसारिणो मुक्ताश्च, समनस्का मनस्का इति ॥३॥ तथा उत्तर रूप वार्त्तिक–उपरिष्ट-संसारिवचनप्रत्यासत्तेश्च ॥४॥ अर्थ--संसारी ऐसो वचन उपरिष्ट है कि आगला सूत्रमें है ताका निकट पणातैं अर अभिसम्बन्ध होवातैं संसारीकी प्रतीति होय है ॥४॥ यहां वादी कहै है। वार्त्तिक---तदभिसम्बन्धे यथासंख्यप्रसङ्गः ॥५॥ अर्थ—जो उपरिष्ट संसारी वचन है ताको सम्बन्ध करिये तौ तहां त्रस स्थावर शब्दको ग्रहण है ता शब्द करि यथा संख्या प्राप्त होय है कि समनस्क त्रस हैं। अमनस्क स्थावर हैं ॥५॥ प्रश्नोत्तर रूपवार्त्तिक -- इष्ट-मेवेति चेन्न सर्वत्रसानां समनस्कत्वप्रसङ्गात् ॥६॥ अर्थ--यो अर्थ इष्ट है ही कि त्रस समनस्क हैं अर स्थावर अमनस्क है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, सर्व त्रसनिकै समनस्क पणांका प्रसंगतैं द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रियवाननिकै अर असंज्ञी पंचेन्द्रि वाननिकै भी समनस्कपणौं प्राप्त होय, अर इनकै यो समनस्क पणौं अनिष्ट है। इहां उत्तर कहिये है कि यथासंख्य नहीं होय है, क्योंकि त्रस स्थावरको अनभिसम्बन्ध है यातैं सो ऐसो है कि संसारीको ग्रहण मात्र ही सम्बन्ध रूप करिये है, अर त्रस स्थावरको ग्रहण नहीं सम्बन्ध रूप करिये है, क्योंकि निश्चय करि सम्बन्ध इच्छाका वस करि होय अर एक योगका नहीं कर

वातैं त्रस स्थावरको सम्बन्ध नहीं करिये है। अर जो त्रस स्थावरका ग्रहण कर भी सम्बन्ध इष्ट होय तौ एक योग ही करिये कि समनस्कामनस्का संसारिणस्त्रसस्थावरा इति सो ऐसैं नहीं कियो ता कारणकरि जानिये है कि त्रस स्थावरको ग्रहण नहीं सम्बन्धरूप करिये है। अथवा एक योगका नहीं करवातैं मानिये है कि अनीततो संसारिणो मुक्ताश्च या वाक्यका ग्रहणको अर वच्यमाण त्रस स्थावरा या वाक्यका ग्रहणको समनस्कामनस्का या वाक्यका ग्रहणकरि सम्बन्ध नहीं हैं ॥६॥ उत्तरका असमर्थनरूप वार्त्तिक—इतरथान्यतरत्र संसारिग्रहणे सतीष्टार्थत्वादुपरि संसारिग्रहणमनर्थकम् ॥७॥ अर्थ—और प्रकारकरि होय सो इतरथा कहिये। प्रश्न, कैसैं? उत्तर जो संसारि मुक्तका ग्रहणकरि तथा त्रस स्थावरका ग्रहण करि याकै सम्बन्ध होय तो एक ही योग्य करिये कि संसारिणः मुक्ताः समनस्कामनस्कास्त्रसस्थावराश्चेति। अर ऐसैं होत संतैं दोऊनिमैंसूं एक सूत्रमें संसारी पदकौ ग्रहण करने योग्य होय। प्रश्न, एक सूत्र में भी कौनसे में होय? उत्तर—समनस्कामनस्का सूत्रकी आदिमें तथा अन्तमें करने योग्य होय। अर ऐसैं होतसंतैं इष्ट अर्थका सिद्धपणातैं संसारिणस्त्रसस्थावरा या सूत्रमें संसारीपदको ग्रहण अनर्थक होय ॥७॥ वार्त्तिक—आदौ समनस्कग्रहणमभ्यर्हितत्वात् ॥८॥ अर्थ—आदिकै विषैं समनस्क पदको ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं? अभ्यर्हितपणातैं, प्रश्न, कैसैं अभ्यर्हितपणो है? उत्तर, समनस्कके विषैं समस्त इन्द्रिय हैं यातैं अभ्यर्हित पणो है ॥८॥११ अबे द्वादशमां सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं कि जो ये निज कृतकर्मफलकी अपेक्षाकरि परिपूर्ण तथा अपरिपूर्ण इन्द्रियग्रामकरि ग्रहण किया द्विविधपणांकरि संयुक्त अर कार्मण शरीरकी प्रणालिकानैं ग्रहण करायो है नियमरूप अवस्था विशेष जिनको ते निश्चय करि जैसैं होय है तैसैंके जनावनें निमित्त कहे है॥ सूत्रम्—

संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥

अर्थ—संसारी जीव त्रस अर स्थावर भेदरूप दोय प्रकार हैं। इहां कोऊ कहै है कि त्रस कहा कहिये है अर स्थावर कहा कहिये है? उत्तररूप वार्त्तिक-त्रसनामकर्मोदयापादितवृत्तयस्त्रसाः ॥१॥ अर्थ—जीवविपाको त्रस नाम कर्म जो है ताका उदयकरि ग्रहण करी है वृत्ति जिननैं ते त्रस हैं, ऐसैं कहिये है ॥१॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—त्रसेरुद्वेजनक्रियस्यत्रसा इति चेन्न गर्भादिषु तदभावादत्र सत्वप्रसङ्गात् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, उद्वेजनार्थ त्रस धातुको त्रस शब्द बनैं है, तातैं ऐसी निरुक्ति होय है कि त्रस्यन्तीति त्रसा याको अर्थ ऐसो होय है कि भय कारण प्राप्त होत संतैं त्रास युक्त होय सो त्रस है। उत्तर, सो नहीं हैं, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गर्भादिकनिकैविषैं त्रसित पणांको अभाव है यातैं अत्रसपणांको प्रसंग आवै हैं यातैं गर्भस्थित तथा अंडस्थ, मूर्च्छित, सुषुप्त, आदि त्रस जे हैं तिनकै वाह्यभयका निमित्तको निकट पणौं होत संतैं भी चलनका अभावतैं त्रसपणौं होय। प्रश्न, तौ या शब्दकी उत्पत्ति त्रस्यन्तीति त्रसा ऐसी कैसे है? उत्तर, या निरुक्ति व्युत्पत्तिमात्र है अर अर्थ है सो प्रधानताकरि गो शब्दकी प्रवृत्तिकै समान नहीं आश्रय करिये है ॥२॥ वार्त्तिक—स्थावरनामकर्मोदयोपजनितविशेषाः स्थावराः ॥३॥ अर्थ—जीव विपाकी जो स्थावर नामकर्म ताका उदयकरि उत्पन्न भयौ है विशेष जिनके ते स्थावर हैं, ऐसैं कहिये है ॥३॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—स्थानशीला स्थावरा इति चेन्न वाय्वादीनामस्थावरत्वप्रसङ्गात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, तिष्ठन्तीत्येवंशीलाः स्थावराः या निरुक्तिको अर्थ ऐसो है कि तिष्ठनेको है स्वभाव जिनको ते स्थावर है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वायु आदिकनिकै अस्थावरपणांको प्रसङ्ग आवै है यातैं वायु, तेज, जल, जे हैं तिनकै निश्चय करि देशान्तरकी प्राप्तिका दर्शनतैं अस्थावरपणौं होय। प्रश्न, तौ या

निरुक्ति होय है कि स्थानशील हैं ते स्थावर है सो कैसैं हैं ? उत्तर, या प्रकार ही रूढ़ि विशेष जो है ताका बलका लाभतैं कहूं वर्त्तै है ॥४॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—इष्टमेवेतिचेन्नसमयार्थानवबोधात् ॥५॥ अर्थ—प्रश्न, यो मत इष्ट ही है कि वायु आदिकनिकै अस्थावर पणौं है ? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सिद्धान्तका जो अर्थ ताका अनवबोधतें क्योंकि निश्चयकरि सिद्धान्त ऐसैं अवस्थित है कि सत्की प्ररूपणांकैं विषैं कायका अनुवादमें त्रसनिको द्वीन्द्रियतें आरम्भकरि अयोगिकेवली पर्यन्त अवस्थान है, तातैं चलन अचलनकी अपेक्षा त्रस स्थावरपणौ नहीं है। कर्मोदयकी अपेक्षा ही हैं। ऐसैं स्थित है कि सिद्ध है ॥५॥ वार्त्तिक—त्रसग्रहणमादावल्पाच्तरत्वादभ्यर्हितत्वाच्च ॥६॥ अर्थ—त्रसको ग्रहण आदिकै विषैं करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर अल्प स्वरवानपणातैं तथा अभ्यर्हितपणांतैं क्योंकि त्रसनिमें सर्व उपयोगनिका सम्भव है यातैं अभ्यर्हितपणौं है ॥६।१२॥ आगैं तेरमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि सामान्य विशेष संज्ञाकरि ग्रहण किया भेदमात्रका विज्ञाननैं होतां संतां विशेषकरि अविज्ञात त्रस स्थावर जे हैं तिनको निर्णय कर्त्तव्य होत संतैं एकेन्द्रियनिकै अत्यन्त बहुभेद वक्तव्यपणांका अभावतैं आनुपूर्वीमैं भेद करि स्थावर भेदनिकी प्रतिपत्तिके आर्थि कहै है। सूत्रम्—

पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥

अर्थ—पृथिवी १ अप २ तेज ३ वायु ४ वनस्पती ५ इन पांच भेदनि रूप स्थावर हैं वार्त्तिक—नामकर्मोदयनिमित्ताः पृथिव्यादयः संज्ञाः ॥१॥ अर्थ—स्थावरनाम कर्मका भेद पृथिवी कायिक है अर जीवनिकैं विषैं पृथिव्यादि कर्मका उदयको है निमित्त जिननैं ऐसा पृथिवी आदि संज्ञा जानवे योग्य है। अर प्रथन आदि धातुतैं उत्पन्न है तो हू रूढ़िका वशतैं कथनादिककी अनपेक्षा करि वर्त्तै । अर इनि पृथिवी आदिकै आर्षकै विषैं प्रत्येक प्रत्येक चार

प्रकार पणौं कह्यौ है। प्रश्न, सो कैसैं? उत्तर, सो कहिये है कि पृथिवी १ पृथिवीकाय २ पृथिवी कायिक ३ पृथिवी जीव ४ इत्यादि पांचूं स्थावर भेदनिके नाम जाननैं तहां अचेतन वैश्रिसिक परिणाम करि रची काठिन्यादि गुणात्मिका जो है सो पृथिवी है। अर अचेतन पणातैं पृथिवी कायिक नाम कर्मका उदयनैं अविद्यमान होतां संता भी प्रथन क्रिया करि उपलक्षिता ही या है। अथवा पृथिवी सामान्य नाम है क्योंकि उत्तरके तीनूं भेद जो है तिनकै विषैं सम्भवै है यातैं, अर काय नाम शरीरका है तातैं पृथिवी कायिक जीवकरि परित्यक्त मृतक मनुष्य आदिकी कायकै समान जो है सो पृथिवी काय है ॥२॥ अर्थात् निर्जीव पुद्गल स्कंध मेरु जम्बू वृक्षा जो है सो पृथिवी काय है। इहां प्रश्न उपजै है कि निर अवयव पृथिवी परमाणूमैं पृथिवी काय नाम कैसै प्रवर्तेगा? उत्तर, अपेक्षा पृथिवी काय रूप बहुप्रदेशी होनेकी शक्ति अपेक्षा पृथिवी काय यह कहना सम्भव है। अर पृथिवी नाम जाकै है सो पृथिवी कायिक है सो वा कायका सम्बन्ध करि वशीकृत आत्मा है, अर ग्रहण कियो है पृथिवी कायिक नाम कर्मको उदय जानैं ऐसौ हुवो संतौ कार्मणका योग मैं तिष्ठतौ विग्रह गतिमैं आत्मा यावत् पृथिवीनैं कायपणां करि नहीं ग्रहण करै तावत् सो पृथिवी जीव है। बहुरि अप १ अपकाय २ अपकायिक ३ अपजीव ४ तेज १ तेजस्कायः २ तेजस्कायिक ३ तेजोजीवा ४ वायु १ वायुकाय २ वायुकायिक ३ वायुजीवः ४ वनस्पति १ वनस्पतिकाय २ वनस्पतिकायिक ३ वनस्पतिजीव ४ ऐसो जोड़ने योग्य है ॥१॥

वार्त्तिक—सुखग्रहणहेतुत्वात् स्थूलमूर्त्तित्वादुपकारभूयस्त्वाच्चादौ पृथिवी ग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—पृथिवीनैं होतां संतां जलको कुंभ करि अर अग्निकौं शारावादिकन करि वायुको कर्म घटादिकरि ग्रहण करिये है। तथा पृथिवी, विमान, भवन प्रस्तार आदि भावरूप परिणामनैं स्थूल मूर्त्ति है। अर स्नान पान आदि उपकार जलको है। अर पाक शोक प्रकाशन आदि उपकार अग्निको है, अर खेद स्वेदका दूर करना आदि उपकार वायुको है, अर तिन सवनिका उपकारतैं पृथिवीका

उपकार प्रचुर है. अर आसन, आच्छादन, वसन आदि भावरूप उपकार वनस्पतिका है। ऐसैं अप आदिकका जो उपकार भिन्न भिन्न कह्या सो पृथिवीतै होतां संतां सम्भवै है। अर जो पृथिवीका उपकार नहीं होय तो वो उपकार कहां अवस्थित रहनें वाके होय यातैं पृथिवीको ग्रहण आदिमें करिये है ॥२॥ वार्त्तिक—तदनन्तरमपां वचनं भूमितेजसोर्विरोधादाधेयत्वाच्च ॥३॥ अर्थ—पृथिवीके अनन्तर अपको वचन करिये है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, भूमिके अर तेजके विरोध है यातैं, अर आधेय है यातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि भूमिको विरोधी तेज है, क्योंकि तेजके विनाशकपणौं है यातैं अप करि व्यवधान करिये है ओर भूमि जलको आधार है, अर जल आधेय है यातैं ॥३॥ वार्त्तिक—ततस्तेजोग्रहणं तत्परिपाकहेतुत्वात् ॥४॥ अर्थ—पृथिवीका अर अपका परिपाकका हेतु तेज है। तातैं तिनके अनन्तर तेजको ग्रहण करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—तेजानन्तरं वायुग्रहणं तदुपकारकत्वात् ॥५॥ अर्थ—निश्चयकरि वायु तिर्यक् प्रवचन कर्मा है अर तेजको प्रेरणा करि उपकार करै है। यातैं तेजके अनन्तर वायुको ग्रहण करिये है ॥५॥ वार्त्तिक—अन्ते वनस्पतिग्रहणं सर्वेषां तत्प्रादुर्भावे निमित्तत्वादनंतरगुणत्वाच्च ॥६॥ अर्थ—निश्चयकरि वनस्पतिका या प्रादुर्भावके विषै पृथिवी आदि सर्व निमित्तपणांनैं प्राप्त होय है। अर तिन सर्वनिकै मध्य वनस्पति कायिक अनन्तगुणा है। तातैं अनन्तके विषै ग्रहण करिये है सो पांच प्रकार प्राणी स्थावर है। प्रश्न, इनकै प्राण कितने है? उत्तर, चार हैं। प्रश्न, ते कौनसे हैं, उत्तर, स्पर्शन इन्द्रिय प्राण १ काय वल प्राण २ उच्छ्वास निश्वास प्राण ३ आयु प्राण ४ ऐसैं चार हैं ॥६॥१३॥ अबै चतुर्दशमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। वे त्रस कौन हैं, ऐसौ प्रश्न होत संतैं इहां कहै है। सूत्रम्—

द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥

अर्थ—द्वीन्द्रियादिक त्रस हैं, वार्त्तिक—आदि शब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातो व्यवस्था ॥१॥

अर्थ—आदि शब्दकै प्रकार सामीप्यादि वचन पणातैं तिनमैं वक्ताकी इच्छातैं इहां व्यवस्था अर्थमैं आदि शब्द ग्रहण करिये है अर आगमकै विषैं निश्चयकरि ते व्यवस्था रूप है। सो ऐसैं हैं कि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय ऐसैं चार प्रकार त्रस हैं। प्रश्न, याको समास कौनसो हैं। उत्तर, दोय है इन्द्रिय जाकै सो द्वीन्द्रिय है, अर द्वीन्द्रिय है आदि विषय जिनकै ते द्वीन्द्रियाद्य है। ऐसैं बहुव्रीही समास होय है ॥१॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—अन्यपदार्थनिर्देश-द्वीन्द्रियाग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—इहां प्रधान पणांकरि अन्य पदार्थको आश्रय है तातैं द्वीन्द्रियको ग्रहण उपलक्षण रूप है। यातैं त्रसका ग्रहणमैं द्वीन्द्रियको ग्रहण नहीं प्राप्त होय है। याको दृष्टान्त ऐसो है:कि जैसैं पर्वत आदि क्षेत्र हैं। यामैं क्षेत्रका ग्रहण करि पर्वत नहीं ग्रहण करिये है। उत्तररूप वार्त्तिक—न वा तद्गुणसंविज्ञानात् ॥३॥ अर्थ-यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, तद्गुण संविज्ञान नाम समासतैं सो जैसैं शुक्लवाससं आनय ऐसैं कहतां संता शुक्ल वास्त्रवाननैं लाइये है, तैसैं यहां भी द्वीन्द्रियको अन्तरभाव है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—अवयवेन विग्रहे सति समुदायस्यवृत्यर्थत्वद्वा ॥ ४ ॥ अर्थ—अथवा अवयवनि करि समास करिये है अर वृत्तको अर्थ समुदायरूप करिये है। यातैं उपलक्षणरूप द्वीन्द्रियको भी त्रसपणाकैं विषैं अन्तर्भाव है सो जैसैं सर्वादिः सर्वनाम ऐसा सूत्रमें सर्वादिकहनैंतैं सर्व शब्दको भी सर्वनाम मैं अन्तर्भाव होय है। प्रश्न, ऐसैं है तो पर्वतादीनि क्षेत्राणि या वाक्यमें पर्वतको बहिर्भाव कैसैं है? उत्तर, पर्वतकै क्षेत्रपणांका सम्भवको अभाव है यातैं बहिर्भाव है ॥ प्रश्न, वे ये च्यारि प्रकारके प्राणी त्रस है तिनके प्राण कितने हैं? उत्तर, प्रथम ही द्विन्द्रियकै षट् प्राण हैं ते ऐसैं हैं कि स्पर्शन अर रसन ये दोय तो इन्द्रिय प्राण हैं, तथा वचन काय बल अर एक आयु उच्छ्वास निश्वास प्राण है अर त्रीन्द्रियकै वे ही षट् प्राण घ्राणेन्द्रिय करि अधिक सात होय है, अर चतुरिन्द्रियके वे ही सात प्राण चक्षुः इन्द्रिय करि अधिक आठ होय है, अर पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य असंज्ञी ये

हैं तिनके वै ही आठ प्राण श्रोत्र इन्द्रिय करि अधिक नव होय है। अर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य, देव, नारकनिकै वै ही नौ प्राण मनो इन्द्रिय करि अधिक दश होय हैं ॥ १४ ॥ अवैं पनरमा सूत्रकी उत्थानिका कहै हैं। आदि शब्द करि दिखाये अर नहीं जानी है संख्या जिनकी ऐसैं इन्द्रिय जे हैं ते इतने ही हैं ऐसा अवधारणके अर्थ कहैं हैं। सूत्रम्—

पंचेन्द्रियाणि ॥१५॥

अर्थ—इन्द्रिय पांच ही हैं। अथवा या सूत्रकी उत्थानिका ऐसैं भी है कि मिथ्यात्वीजन अपनी प्रक्रिया प्रगटि करनेके इच्छक हैं तिनमें कोऊ तो पांच इन्द्रिय निश्चय करैं हैं अर कोऊ षट् इन्द्रिय निश्चय करै हैं। अर कोऊ एकादश इन्द्रिय निश्चय करै हैं। तिनमें अनिष्ट संख्याकी निवृत्तिकै अर्थ नियम करता संता सूत्र कहैं है कि इन्द्रियां पांच ही हैं अधिक नहीं हैं। वार्तिक-इन्द्रस्यात्मनो लिंगमिन्द्रियम् ॥ १ ॥ अर्थ—नहीं निवृत्त भयो है कर्म बन्ध जाकै ऐसौ हो तो हू परमेश्वरपणांकी शक्तिका योगतैं इन्द्र नामके योग हो तो संतो भी आप पदार्थनितैं ग्रहण करनेकूं असमर्थ उपभोक्ता आत्मा जो है ताकै उपयोगको उपकरण स्वरूप लिंग जो है सो इन्द्रिय है ऐसैं कहिये हैं। वार्त्तिक—इन्द्रेण कर्मणा स्टष्टमिति वा ॥ २ ॥ अर्थ—अथवा निज कृत कर्मको जो विपाक ताका वशतैं आत्मा देवेन्द्रादिकनिकै विषैं तथा तिर्यंचनिकै विषैं इष्ट अनिष्टनैं अनुभव करै है तातैं वा विषयमैं कर्म ही इन्द्रय है ताकरि रची जो है ऐसैं कहिये हैं ताके भेद स्पर्शनादिक पांच कहैंगे ॥ २ ॥ वार्तिक—मनोपीन्द्रियमितिचेन्नानवस्थानात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, मन भी इन्द्रिय है ? यातैं इन्द्रियनिकी गणनामें ग्रहण करने योग्य है, क्योंकि कर्मकरि मलिन अर असहायी अर स्वयमेव अर्थका चिन्तयन प्रति असमर्थ ऐसौ आत्मा जो है ताकै मनकी क्रिया कृत बलाधान है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अनवस्थान

तैं सो जैसैं चक्षु आदि भिन्न भिन्न नियम रूप वाह्य देशमें अवस्थान रूप है तैसैं वाह्य देशमें अवस्थान रूप मन नहीं है यातैं मन अनिन्द्रिय है ॥३॥ वार्त्तिक—इन्द्रियपरिणामाच्च प्राक्तद्व्यापारात् ॥४॥ अर्थ—चक्षु आदिकनिकै रूपादि विषय उपयोग परिणामतैं पूर्व मनको व्यापार होय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, शुक्लादिरूपनैं देखनैंको इच्छक आत्मा प्रथम मन करि उपयोगनैं करै है कि या प्रकारका रूपनैं देखूं या प्रकारका रसनैं आस्वादूं तातैं मननैं वलाधानी करि कहिये मननें अग्रेसर करि चक्षु आदि इन्द्रियनिके विषैं व्यापार करै है। तातैं या मनके अनिन्द्रियपणौं है ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—कर्मेन्द्रियोपसंख्यानमितिचेन्नोपयोगप्रकरणात् ॥ ५ ॥ अर्थ—प्रश्न, कर्मेन्द्रिय वाक्, पाद, पाणि, उपस्थ, गुदा जे हैं ते भी वचन आदिकी क्रिया निमित्त है तातैं तिनको इहां ग्रहण करने योग्य है। उत्तर सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उपयोगका प्रकणतैं, उपयोग इहां प्रकरण प्राप्त है। अर उपयोगके उपकरण इन्द्रिय है ते इहां ग्रहण करिये है ता कारण करि कर्मेन्द्रियनिको अप्रसंग है ॥ ५ ॥ तथा वार्त्तिक—अनिन्द्रियत्वं वा तेषामनवस्थानात् ॥ ६ ॥ अर्थ—अथवा वाक् आदिकैं इन्द्रियपणौं नहीं है। अर उपयोगका साधन जे हैं तिनके विषैं निश्चय करि इन्द्रियनिको उपदेश युक्त है अर क्रिया साधनकै विषै युक्त नहीं है अर जो क्रिया साधनकै विषैं भी इन्द्रियपणौं युक्त है तौ अनवस्था प्रसंग आवै है क्योंकि सर्व ही आंगोपांग मस्तकादि क्रियाका साधन है ॥ ६ ॥ १५ ॥ अबैं सोलमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है, कि जो इन्द्रिय भोक्ता आत्मा जो है ताकै इष्ट अनिष्ट विषयनिकै विषै उपलब्ध हैं प्रयोजन जिनके ऐसैं हैं अर कहीं सामर्थ्य विशेष जो है तातैं व्याप्त भये हैं भेद जिनके ऐसैं इन्द्रिय जे हैं तिनके प्रत्येक भेद जतावनैंके अर्थ कहै है। सूत्रम्—

द्विविधानि ॥ १६ ॥

अर्थ---वे पांचूं इन्द्रिय जे हैं ते भिन्न भिन्न दोय भेद रूप हैं। वार्त्तिक—विध शब्दस्य

प्रकारवाचिनो ग्रहणम् ॥१॥ अर्थ—यो विध शब्द प्रकारवाची ग्रहण करिये है क्योंकि विध, युक्त, गत, प्रकार ये चार शब्द समान वाची हैं यातैं दोय हैं विध जाके ते द्विविध कहिये अर्थात् दोय प्रकार है। प्रश्न, वे दोय प्रकार कौनसे हैं? उत्तर, एक द्रव्येन्द्रिय अर दूसरो भावेन्द्रिय है ॥१६॥ अवै सत्तरमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है, तिनमें द्रव्येन्द्रियको स्वरूप जनावने निमित्त कहै हैं। सूत्रम्—

निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥

अर्थ—निर्वृत्ति अर उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय है। वार्तिक—निर्वर्त्यत इति निर्वृत्तिः। अर्थ—जो कर्म करि रचिये कि उत्पन्न करिये सो निर्वृत्ति है। ऐसै उपदेश करिये है ॥१॥ वार्त्तिक—सा द्वेधा वाह्याभ्यन्तरभेदात् ॥२॥ अर्थ—वा निर्वृत्ति दोय प्रकार है। प्रश्न, काहैतैं? उत्तर, वाह्य अर आभ्यन्तर भेदतैं ॥ २ ॥ तत्र वार्त्तिक विशुद्धात्मप्रदेशवृत्तिराभ्यन्तरा ॥३॥ अर्थ—तिनमें उत्सेधांगुलका असंख्यातमां भाग प्रमाण विशुद्ध अर भिन्न भिन्न नियमरूप चक्षु आदि इन्द्रियनिका संस्थान मान अवमानरूप अवस्थित आत्मप्रदेश जे हैं तिनकी वृत्ति जो है सो अभ्यन्तर निर्वृत्ति है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—तत्र नामकर्मोदयापादितावस्थाविशेषः पुद्गलप्रचयो वाह्या ॥ ४ ॥ अर्थ—तिन आत्मप्रदेशनिकै विषैं इन्द्रिय नामकूं भजनेआरो जो भिन्न भिन्न नियम रूप संस्थान नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो अवस्था विशेष पुद्गलनिको समूह है सो वाह्य निर्वृत्ति है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—उपक्रियतेऽनेनेत्युपकरणम् ॥५॥ अर्थ—जा निर्वृत्तिको उपकार करिये है सो उपकरण है ॥ ५ ॥ तद्द्विविधं पूर्ववत् ॥६॥ अर्थ—सो उपकरण पूर्ववत् वाह्याभ्यान्तरभेदतैं दोय प्रकार है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—तत्राभ्यन्तरशुक्लकृष्णमंडलं वाह्यमक्षिपत्रपक्ष्मद्व्यादिः ॥ ७ ॥ अर्थ—तिनमैं शुक्ल कृष्ण मंडल तौ आभ्यन्तर है अर अक्षि पत्र जो नीचे ऊपरि डोला अर

पद्मद्वय कहिये वाफनीको युगल जो है सो वाह्य उपकरण है। ऐसैं ही अवशेष पंचेन्द्रिय जे हैं तिनके विषैं जाननैं ॥ ७ । १७॥ अबै अठारमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि भावेन्द्रियनैं कहिये है ऐसैं करि कहै हैं। सूत्रम्—

लब्ध्युपयोगो भावेन्द्रियम् ॥१८॥

अर्थ—लब्धि अर उपयोगरूप भाव इन्द्रिय है। अर्थ—प्रश्न, लब्धि यो शब्द कहा वाची है? उत्तर, लब्धि है सो लाभ है। प्रश्न, जो ऐसैं हैं तो षित् पणांतैं अङ् प्रत्यय प्राप्त होय है? उत्तर, अनुवन्धकृत नियोग अनित्य है, विकल्प रूप है, यातैं नहीं होय, ताकौ दृष्टांत ऐसौं है कि "वर्णानुपलब्धौ वातदर्थगते" या व्याकरणका सूत्रमें भी लब्धि शब्द है। ऐसैं और भी प्रयोगनिमें लब्धि शब्द है। अथवा "स्त्रियां क्तिःलभादिभ्यश्चेति क्तिर्भवति" या सूत्रतैं भी लब्धि शब्द सिद्ध होय है। अर लभादिक इष्ट है यातैं। प्रश्न, लब्धि या शब्दको अर्थ कहा है? उत्तर, रूप वार्त्तिक—इन्द्रियनिर्वृत्तिहेतुःक्षयोपशमविशेषोपलब्धि ॥१॥ अर्थ—जाकी निकटतातैं आत्मा द्रव्येन्द्रियकी निवृत्ति प्रति व्यापार करै है सो ज्ञानावरणको क्षयोपशम विशेष है सो लब्धि है ऐसैं जनाइये हैं ॥१॥ वार्त्तिक—तन्निमित्तः परिणामविशेष उपयोगः ॥२॥ अर्थ—जो ज्ञानावरणको क्षयोपशम निमित्त कह्यौ ताहि प्रतीति करि उत्पन्न भयो आत्माको परिणाम है सो उपयोग है। ऐसैं उपदेश करिये हैं सो ये लब्धि अर उपयोग दोऊ ही भावेन्द्रिय है ॥२॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—उपयोगस्य फलत्वादिन्द्रियव्यपदेशानुपत्तिरिति चेन्न कारणधर्मस्यकार्यानुवृत्तेः ॥३॥ अर्थ—ऐसैं कहिये है कि इन्द्रियका फल उपयोग है प्रश्न, सो कैसैं? इहां इन्द्रिय नामनै प्राप्त होय है यातैं प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, कारण धर्मकै कार्यपणांकी अनुवृत्ति है यातैं इन्द्रिय नामनैं प्राप्त होय है। अर निश्चय करि कारण जो है सो कार्यरूप वर्त्ततौ लोककै विषैं देखिये है

सो जैसें घटाकार परिणत विज्ञान है सो घट है। ऐसें कहिये हैं तैसें इन्द्रिय निमित्त उपयोग जे है सो इन्द्रिय है ऐसें कहिये ॥३॥ वार्त्तिक—शब्दार्थसम्भवाच्च ॥४॥ अर्थ—जो शब्दार्थ इन्द्रको लिंग है अथवा इन्द्र करि रचित है सो उपयोगके विषें प्रधानपणां करि विद्यमान है यातें इंद्रिय व्यपदेश युक्त है ॥४॥१८॥ अब उगणीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहैं हैं कि कहा जे पाचूं इन्द्रिय तिनके संज्ञा अर आनुपूर्वी को विशेष जो है ताका प्रतिपादनके अर्थ कहै हैं। सूत्रम्—

स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥

अर्थ-स्पर्शन १ रसन २ घ्राण ३ चक्षु ४ श्रोत्र ५ ये पांच इंद्रिय हैं। वार्तिक-स्पर्शनादीनां करणसाधनत्वं पारतंत्र्यात्कर्तृसाधनत्वं च स्वातंत्र्यात्बहुलवचनात् ॥१॥ अर्थ—ये स्पर्शनादिक करण साधन रूप है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, परतन्त्र पणांतें, क्योंकि निश्चय करि इंद्रियनिके परतन्त्र पणां करि लोकके विषें विवक्षा विद्यमान है। अर आत्माके स्वतन्त्रपणांकी विवक्षानें होतां संतां जैसें या नेत्र करि मैं भले प्रकार देखूं हूं तथा करण करि मैं भले प्रकार सुनूं हूं। तातें वीर्यान्तरायको तथा भिन्न भिन्न नियम रूप इन्द्रियावरणको क्षयोपशम अर आङ्गोपाङ्गनामा नाम कर्मको लाभ ताका अवष्टम्भतें कि प्राप्त होवातें या करि आत्मा स्पर्शे है तातें स्पर्शन है अर या करि आत्मा रसयति कहिये आस्वादन करे है तातें रसन है। अर या करि आत्मा जिघ्रति कहिये सूंघे है तातें घ्राण है। चष्टे धातुके अनेकार्थ पणांतें, अर ताकी दर्शन अर्थकी विवक्षाके विषें पदार्थनिनें या करि आत्मा चष्टे कहिये देखे है तातें चक्षु है। अर या करि आत्मा शृणोति कहिये सुणे है तातें श्रोत्र है। वहुरि इंद्रियनिके स्वतन्त्रपणांकी विवक्षानें होतां संतां कर्तृ साधन पणों होय है। सो लोकके विषें स्वतन्त्र करि विवक्षा ऐसें है कि जैसें यो मेरो अक्षि भले प्रकार देखे है। अर यो मेरो कर्ण भले प्रकार सुणे है, ता कारण करि पूर्वोक्त क्षयोपशमादि

कारणनिकी निकटतानैं होतां संतां आत्मा ही स्पर्शं है तातैं स्पर्शन है। प्रश्न, कैसै ? उत्तर, वहुवचनतैं कर्त्ता अर्थमें युट् प्रत्यय होय है यातैं रसयति कहिये स्वाद लेवे सो रसन है। जिघ्रति कहिये सूंघै सो घ्राण है। अर चष्टे कहिये देखै सो चक्षु है। अर शृणोति कहिये सुणैं सो श्रोत्र है ॥१॥ वहुरि या सूत्रमें इंद्रियाणि ऐसें कितनेकनिकै पाठ है सो यो पाठ युक्त नहीं है। कैसैं ? उत्तररूप वार्त्तिक—अधिकृतत्वादिन्द्रियाणीति वचनमनर्थकम् ॥२॥ अर्थ—पंचेन्द्रियाणि ऐसैं पूर्व सूत्रमें हैं यातैं इन्द्रियपदको ग्रहण अनुवर्त्ते है, ता कारण करि इहां इन्द्रियाणि ऐसो वचन अनर्थक है ॥२॥ वार्त्तिक—स्पर्शनग्रहणमादौ शरीरव्यापित्वात् ॥३॥ अर्थ—जातैं शरीरनैं फैलाय तिष्ठै सो स्पर्शन है यातैं याको ग्रहण आदिमें करिये है क्योंकि "वनस्पत्यन्तानामेकं" या सूत्रके विषैं स्पर्शनको व्यापार है यातैं अर वनस्पत्यन्तनामेकं ऐसैं आगे सूत्र कहैंगे तहां स्पर्शनका ग्रहणकै अर्थ आदिमें वचन है ॥३॥ वार्त्तिक—सर्वसंसारिषूपलब्धेश्च ॥४॥ अर्थ—अथवा सर्व संसारीनिकै स्पर्शन है यातैं नाना जीवनिकी अपेक्षा करि व्यापी पणातैं आदिमें ग्रहण करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—ततो रसनघ्राणचक्षुषां क्रमवचनमुत्तरोत्तराल्पत्वात् ॥५॥ अर्थ—तातैं परे रसनादिक तीन जे हैं तिनकैं विषैं क्रमरूप वचन करिये हैं। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, उत्तरोत्तर अल्पपणांतैं सो ऐसै हैं कि सवतैं जघन्य चक्षु इन्द्रियके प्रदेश है, अर यातैं संख्यात गुणै श्रोत्र इन्द्रियके प्रदेश हैं। अर यातै विशेषाधिक घ्राणेन्द्रियकै विषैं प्रदेश है अर यातैं असंख्यात गुणां जिह्वा इन्द्रिय के विषै प्रदेश हैं अर यातैं अनन्तगुणा स्पर्शन इन्द्रियकै विषैं प्रदेश है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो चक्षुको ग्रहण अन्तमें करनैं योग्य है, क्योंकि सवतैं अल्प प्रदेश पणातैं ? उत्तर, यो प्रश्न सत्य है तथापि सुनूं कि ॥५॥ वार्त्तिक—श्रोत्रस्यान्ते वचनं बहूपकारत्वात् ॥६॥ अर्थ—जातै सूत्रका वलाधानतैं उपदेशनें सुणि हितकी प्राप्ति अर अहितको परिहार जो है ताकै अर्थ आदर करिये है। यातै श्रोत्र बहुत उपकारी है, तातैं अन्तमें

ग्रहण करिये है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—रसनमपि वक्तृत्वेनेति चेन्नाभ्युपगमात् ॥ ७ ॥ अर्थ—प्रश्न, रसन भी बहुत उपकारी है। प्रश्न, कैसै? उत्तर, जातें वक्तापणांकरि रसन जो है सो अभ्युदय निःश्रेयसके अर्थ उच्चारण अध्ययनकै विषैं प्रमाण है, यातें रसन ही अन्तमैं कहने योग्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अभ्युपगम्यतें, सो ऐसें है कि श्रोत्रकै बहु उपकारीपणांनैं अंगीकारकरि, रसनाके भी बहु उपकारीपणौं वरणन करता तुम जो हौ तिनमैं श्रोत्रकै बहु उपकारी पणौं अंगीकार कियो यातैं हमारो वांछित वचन श्रुतकै बहु उपकारी पणौं है सो अवसितः कहिये सिद्ध भयौ। अर नहीं अङ्गीकार करतां संता रसन बहु उपकारी-है ऐसा प्रसंगकी निवृत्ति है ॥ ७ ॥ किंच वार्त्तिक—श्रोत्रप्रणालिकापादितोपदेशात् ॥ ८ ॥ अर्थ—और सूनूं कि श्रोत्रकी प्रणालिका करि उपदेशनैं सुणि रसन वक्तापणां प्रति व्यापार करै है यातैं श्रोत्र ही बहु उपकारी है ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—सर्वज्ञे तदभाव इतिचेन्नेन्द्रियाधिकारात् ॥९॥ अर्थ—प्रश्न, सर्वज्ञ जो है सो श्रोत्रेन्द्रियका बलाधानतैं परतैं सुणिकरि वक्तापणांनैं नहीं अंगीकार करै है। प्रश्न, तो कैसे कहै है? उत्तर, सकल ज्ञानावरणका संक्षेपतैं प्रकट भयौ अतीन्द्रिय केवल ज्ञान रसनका लाभ मात्रतैं ही वक्तापणाकरि परिणत सकल श्रुत विषय अर्थनिनैं उपदेश करै है यातैं रसना ही बहु उपकारी है। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, इन्द्रियका अधिकारतैं यो इन्द्रियको अधिकार है यातैं जिनके विषैं इन्द्रियकृत हिताहितका उपदेश समस्तपणांकरि है तिन प्रति यो कहनों है सर्वज्ञ प्रति नहीं है यातैं दोष नहीं है ॥ ९ ॥ वार्त्तिक—एकैकवृद्धिक्रमज्ञापनार्थं च स्पर्शनादिवचनम् ॥ १० ॥ अर्थ—कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैक वृद्धानि ऐसे आगैं कहैंगे तहां वृद्धिको क्रम जनावनैं निमित्त स्पर्शनादिकनिकै अनुपूर्वी जाननैं योग्य है ॥ १० ॥ वार्त्तिक—एषां च स्वतस्तद्वतश्चैकत्वपृथक्त्वं प्रत्यनेकान्त. ॥११॥ अर्थ—इन स्पर्शनादि इन्द्रियनिकै स्वत कहिये आपनै कि आपसमैं अर तद्वतः

कहिये इन्द्रियवान आत्मा जो है तातैं एकत्व प्रति तथा पृथक्त्व प्रति अनेकान्त जानवे योग्य है कि कथंचित् एक रूप है, अर कथंचित् भिन्न रूप है, इत्यादि सप्तभङ्ग जाननां सो ऐसैं है कि प्रथम तौ स्वतः कहिये स्पर्शनादिकनिके आपसमैं एक पणौ ऐसैं है कि ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं उत्पन्न भई जो शक्ति ताकी अभेद कहनेकी इच्छानैं होता संतां स्पर्शनादिकनिके कथंचित् एक पणौं है, क्योंकि समुदायीनिकैं भिन्न पणांको अभाव है यातैं, अथवा समुदायका एक पणांतैं अवयविनके भी एक पणौं है। ऐसैं कथंचित् एक पणौं है। बहुरि भिन्न भिन्न नियमरूप क्षयोपशमकी उपलब्धि विशेषकी अपेक्षा करि कथंचित् नाना पणौं है। अर इन्द्रियकी बुद्धि अर इन्द्रियका नाम, अर प्रवृत्ति निवृत्तिका जो अर्पण ताका भेदतैं कथंचित् एक पणौं है, कथंचित् भिन्न पणौं है। अर्थात् इन्द्रियपणांकी बुद्धितैं तथा नामतैं तो एक पणौं है अर प्रवृत्ति निवृत्तितैं भिन्न पणौं है कि अपने २ विषय प्रति प्रवृत्ति करणैंतैं भिन्न पणांतैं, अर इन्द्रियवानकै भी इन्द्रियनितैं कथंचित् एक पणौं है। अर कथंचित् नानापणौं है सो ऐसैं है कि चैतन्यका अपरित्याग करि, उभय परिणाम कारणकी है अपेक्षा जाकै ऐसौ इन्द्रियवान जो है ताकै इन्द्रिय पर्यायात्मक पर्यायका लाभनैं होतां संता इन्द्रियरूप परिणामनितैं तप्त लोहका पिंडके समान है कि तप्त भयो लोहको पिंड अग्नि नामको भजनेंवारो होय है। तैसैं परिणामतैं कि इन्द्रियरूप परिणमन करवातैं आत्मानै भिन्न करि इन्द्रियकी अनुपलब्धि है यातैं कथंचित् इन्द्रियकै अर इन्द्रियवानकै एक पणौं है, अर औरतरैं एकान्त करि, अन्य पणानैं होतां संता आत्मा घटकै समान इन्द्रिय रहित ठहरै। तथा पांचू इन्द्रियनिमैंसूं कोऊ एककी निवृत्तिनैं होतां संता इन्द्रियवान आत्माका अवस्थानतैं भी कथंचित् नाना पणौं है। अथवा पर्यायीकै अर पर्यायकै भेद है यातैं भी कथंचित् नाना पणौं है। अर संज्ञाकै भेद अर अभेदकी विवक्षाकी उत्पत्ति है यातैं कथंचित् एक पणौं, कथंचित् नाना पणौं जानवे योग्य है ॥ ११ ॥ १९ ॥ अबैं बीसवां सूत्रकी उत्थानिका कहै हैं कि तिन

इन्द्रियनिका विषयनिकूं दिखावनै निमित्त कहै हैं। सूत्रम्—

स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥

अर्थ—स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, शब्द ये पांचूं अनुक्रमि करि पांचूं इन्द्रियनिके विषय हैं। वार्त्तिक—स्पर्शादीनां कर्मभावसाधनत्वं द्रव्यपर्यायविवक्षोपपत्तेः ॥ १ ॥ अर्थ—स्पर्शादिकनकै कर्मसाधन पणौं तथा भाव साधनपणों है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर द्रव्य पर्यायके कहनेकी इच्छा उत्पन्न होय है यातैं सो तहां जा समय द्रव्यनैं प्रधान पणांकरि कहै है ता समय इन्द्रिय जो है तानैं द्रव्य ही सन्निकर्ष करिये है। तातैं द्रव्यतै भिन्न स्पर्शादिक कछु भी नहीं है। ऐसी विवक्षानैं होतां संता स्पर्शादिकनिकै कर्मसाधनपणौं निश्चय करिये है कि स्पर्शन करिये सो स्पर्श, अर आस्वादन करिये सो रस, सूंघिये सो गन्ध, अर वर्णन करिये सो वर्ण, और सुनिये सो शब्द। वहुरि जा समय पर्याय प्रधान पणांकरि विवक्षित होय ता समय भेदकी उत्पत्ति है यातैं, उदासीनपणांकरि अवस्थितभावका कथनतैं भावसाधन पणौं स्पर्शादिकनिकै संभवै है कि स्पर्शन जो है सो स्पर्श है। अर आस्वादन जो है सो रस है। अर सूंघनौं जो है सो गन्ध है। अर वर्णन जो है सो वर्ण है, अर सुननौं जो है सो शब्द है। प्रश्न, ऐसें है तो सूक्ष्मपरमाणु आदि जे हैं तिनके विषैं स्पर्शादि व्यवहार नहीं प्राप्त होय है ? उत्तर यो दोष नहीं है, क्योंकि सूक्ष्म जे हैं तिनके विषै भी वे स्पर्शादिक है क्योंकि सूक्ष्म परमाणू आदिका कार्य स्थूल जे हैं तिनके विषैं स्पर्शादिकनिको दर्शन है यातैं अनुमान किया संता है। क्योंकि सर्वथा असत् जे हैं तिनकौ प्रादुर्भाव नहीं होय है। प्रश्न, तो कहा होय है उत्तर, इन्द्रियग्रहण योग्य नहीं है। अर उनके इन्द्रियग्रहणके अयोग्यपणांनैं होतां संता भी उनके विषैं रूढ़िका वशतैं स्पर्शादिकनिको व्यवहार है। प्रश्न, तदर्था यो कहा वाची शब्द है, उत्तर, तिनका जो अर्थ सो तदर्थ है। प्रश्न,

वे कौन हैं तिनको अर्थ है ? उत्तर, इन्द्रियनिकै अर्थ है कि विषय है प्रश्न, ऐसैं है तो सुनूं, प्रश्नरूप वार्तिक—तदर्था इति वृत्यनुपपत्तिरसमर्थत्वात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, तदर्था ऐसी वृत्ति कहिये समास नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, असमर्थपणांतैं क्योंकि निश्चयकरि समर्थ अवयवनिकूं वृत्ति करि होनौं योग्य है अर वा सामर्थ्य इहां नहीं है। प्रश्न, काहेतैं, उत्तर, सापेक्ष जो होय है सो असमर्थ होय है। अर इहां निश्चयकरि इन्द्रियनिनैं अपेक्षा करैं है तातैं असमर्थ है ॥२॥ उत्तररूप वार्तिक—नवागमकत्वान्नित्यसापेक्षेषुसम्बन्धिशब्दवत् ॥ ३ ॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, गमकपणांतैं इहां वृत्ति होय है, अर गमकपणूं सम्बन्धि शब्द के समान नित्य सापेक्षके विषैं होय है सो ऐसैं हैं कि तैसें सम्बन्ध शब्द जे देवदत्तको गुरुकुल तथा देवदत्तको गुरुपुत्र इत्यादिकनिके विषैं वृत्ति होय है, क्योंकि गुरु शब्द नित्य ही शिष्यनैं अपेक्षा करे है। ऐसैं ही इहां भी तत्शब्द सामान्य विशेष वचनरूप आकांक्षा करनवारो हुवो संतो प्रकरणमें आई इन्द्रियनिनैं अपेक्षा करतो भी वृत्तिने प्राप्त होय है ॥३॥ वार्तिक—स्पर्शादीनामानुपुर्व्येण निर्देश इन्द्रियक्रमाभिसम्बन्धार्थः ॥ ४ ॥ अर्थ—स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, शब्द ये जे हैं ते स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दा कहिये ऐसैं अनुपूर्वीकरि निर्देश है सो स्पर्शादिक इन्द्रियनिकरि अनुक्रमि करि अभिसम्बन्ध होय ताकै अर्थ है, ऐसैं ये स्पर्शनादिक पुद्गल द्रव्यके गुण अविशेष करि जानने योग्य है, अर या विषयमैं कितनेक वादी तिन स्पर्शादिकनिनैं विशेष कल्पना करैं है। अर कहै हैं कि रूप रसगन्ध स्पर्शवान् पृथिवी है अर रूप रस स्पर्शवान् जल है, तथा द्रव्व स्निग्ध गुणवान भी जल है अर रूप रस स्पर्शवान तेज है। अर स्पर्शवान, वायु है। इहां आचार्य कहै है कि ऐसैं कहैं है सो अयुक्त है क्योंकि वायु घटके समान स्पर्शवान है। अर तेज भी रूपवान पणांतें गुड़कै समान रसवान और गंधवान है जल भी रसवान पणातैं आम्रफलके समान गन्धवान है। अर और सुनूं कि जलादिकके विषैं

अर गन्धादिककी साक्षात् उपलब्धि है यातैं। प्रश्न, पार्थिवी परमाणूका संयोगतैं, गंधादिकनिकी उपलब्धितैं? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि विशेष हेतुका अभाव है यातैं सो ऐसैं है कि पार्थिव परमाणूंका ये गंधादिक गुण है। अर संसर्गतैं अन्यजलादिकनिमें प्राप्त होय है। ऐसा दर्शनतैं अर निश्चयकरि देखिये है कि पृथिवीके परमाणूंनिकै कारणका वशतैं द्रव्यपणौं है। अर द्रव्यरूप जल जो है ताकै करकात्म भाव कहिये कठोर गाढ़ा पणांकरि घन भाव देखिये है। अर घनको द्रव भाव देखिये है अर तेजको मषी भाव देखिये है अर वायुको भी रूपादिक देखिये हैं। इहां वादी कहै है कि कैसैं जानिये? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो सुनूं कि पुद्गल परमाणुके विषैं तिन रूपादिकनिकी कैसैं गति हैं, इहां वादी फेर कहै है कि पुद्गल परमाणुको कार्य जो स्कंध ताकै विषैं रूपादिकका दर्शननैं अनुमान परमाणुमें करिये है। उत्तर, ऐसैं है तो इहां भी तैसैं ही जानने योग्य है ॥४॥ वार्त्तिक---तेषां च स्वतस्तद्वतश्चैकत्वपृथक्त्वं प्रत्येनकांतः ॥५॥ अर्थ---तिन स्पर्शादिकनिकै स्वतः कहिये परस्परतैं तथा द्रव्यतैं एक पणां प्रति तथा भिन्न पणां प्रति अनेकांत जानने योग्य है कि कथंचित् एक है, कथंचित् भिन्न है इत्यादि अर या विषयमें और वादी एक पणांनैं तथा भिन्न पणांनैं एकांत करि अङ्गीकार करै है सो अयुक्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, जो एकान्त करि स्पर्शादिकनिकै एक पणौं है तो स्पर्शन इन्द्रिय करि स्पर्शगुणकी प्राप्ति होत संतै रसादिकनिकी भी उपलब्धि होय। अर स्पर्शादिमान द्रव्यतैं भी स्पर्शादिकनिकै अभिन्न पणांनैं होतां संतां प्रश्न करिये है कि तत एव कहिये द्रव्य ही है, अथवा स्पर्शादिक ही है, ऐसैं दोय पक्ष उपजै हैं। तहां जो द्रव्य ही है तो लक्षणका अभावतैं लक्ष्यको अभाव होवैगो। अर जो स्पर्शादिक ही है तो निराधार पणांतैं स्पर्शादिकनिको भी अभाव होवैगो। बहुरि एकान्त करि भिन्न पणौं ही है तो घटका पीतादिरूपकी उपलब्धितैं होतां संतां घटका आकारकी अनुपलब्धि के समान स्पर्शकी उपलब्धिनैं होतां संतां रूपादिककी अनुपलब्धितैं यो घट स्पर्शित है। ऐसैं

नहीं जानिये है क्योंकि वा घटके स्पर्शादिक स्वरूप पणांको अभाव है यातैं। अर स्पर्शादिमान द्रव्यतैं भी अत्यन्त भिन्न स्पर्शादिकनिनैं होतां संतां दोऊनिको ही अभाव होवेगो। प्रश्न, ग्रहण भेदतैं स्पर्शादिकनिके भिन्न पणौं है? उत्तर-जो ऐसैं कहो तो सुनूं कि ग्रहणका अभेदनैं होतां संतां दोऊनिको ही अभाव होवैगो। प्रश्न, ग्रहण भेदतैं स्पर्शादिकनिके भिन्न पणौं है? उत्तर जो ऐसैं कहौ हो तो सुनूं कि ग्रहणका अभेदनै होतां संतां भी नाना पणांकी उपलब्धि है सो ऐसैं है कि शुक्ल कृष्णादिके विषैं संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग विभाग परत्व, अपरत्व, कर्मसत्तादि गुणत्व जे हैं तिनके रूप समवायतैं कि रूपका ग्रहणमें ही इनका ग्रहण होवातैं चाक्षुष कहिये चक्षुरिन्द्रिय रूप जे ये तिनकै नाना पणांकी उपलब्धि है यातैं ग्रहणका अभेदनैं होतां संतां भी नाना पणांकी उपलब्धि है। प्रश्न, संज्ञा जो है सो निज तत्व है यातैं लक्षण भेदतैं नानां पणौं है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि संज्ञाका अभेदनैं होतां संतां भी द्रव्य गुण कर्म जे हैं तिनकै नाना पणांकी उपलब्धि है यातैं, अर्थात् द्रव्य नाम एक है तौ हू द्रव्य अनेक है तथा गुण नाम एक है तो हू गुण अनेक हैं। तथा कर्म नाम एक है तो हू कर्म अनेक है यातैं नाना पणांकी उपलब्धि है ॥५॥ प्रश्न, द्रव्य गुण कर्मनिके नाना पणौं नहीं है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रतिज्ञाका विरोधतैं कि जो निश्चय करि द्रव्य गुण कर्मनिके एकपणौं ही है। तो महत् आदि करि परिणत अर भिन्न पणां करि अनुपलभ्यमान जे सत्व रजस्तम तिनकैं अन्यपणौं प्रतिज्ञा कियो हुतौ सो हानि रूप होय है। अर जो सत्व रजस्तम जे है तिनके विषैं भी अनन्य पणौं ही है तौ वक्तव्य स्वरूप भेदकी कल्पनां अनर्थक कहा होयगी। तातैं कथंचित् एक पणौं कथंचित् भिन्न पणौं अङ्गीकार करने योग्य है। सो द्रव्यका अर्प्पणतैं एक पणौं है अर पर्यायका अर्प्पणतैं नाना पणौं है ॥५।२०॥ अवैं इकवीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि इहां कोऊ कहै है जो मन अनवस्थानतैं इन्द्रिय नहीं होय है ऐसैं कहि करि निराकरण कि सो यो मन उपयोगको

उपकारी है या नहीं है ? उत्तर, उपकारी ही है, क्योंकि मन विना इन्द्रियनिकै अपनें विषयकै विषैं अपना प्रयोजन रूप वृत्तिको अभाव हैं यातैं। प्रश्न, मनके इन्द्रियनिका सहकारीपणां मात्र ही प्रयोजन है या और भी प्रयोजन है ? ऐसा प्रश्न होतां संतां कहै है। सूत्रम्—

श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥

अर्थ—श्रुत ज्ञान मनको विषय है। अर परि प्राप्त भयो है श्रुत ज्ञानावरणको क्षयोपशम जाकै ऐसौ आत्मा जो है ताकै श्रुत रूप अर्थकै विषैं अनिन्द्रियको है आलम्बन जा विषैं ऐसो ज्ञान जो है ताकी प्रवृत्ति होय है यातैं अथवा श्रुतज्ञान जो है सो श्रुत है सो अनिन्द्रियको विषय है, क्योंकि श्रुत ज्ञानकै मनपूर्वक पणौं है यातैं, अर अतिन्द्रियको विषय रूप पदार्थ जो है सो इन्द्रिय व्यापारतैं रहित है कि वा विषयकै विषैं इन्द्रियको प्रचार नहीं है। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक--- श्रुतं श्रोत्रेन्द्रियस्य विषय इति चेन्न श्रोत्रेन्द्रियग्रहणे श्रुतस्य मतिज्ञानव्यपदेशात् ॥१॥ अर्थ— प्रश्न, श्रुत अनिन्द्रियको विषय नहीं है, प्रश्न, तौ कौनको विषय है ? उत्तर, श्रोत्रेन्द्रियको विषय है। अर निश्चय करि जा समय श्रोत्र इन्द्रिय करि ग्रहण करिये है ता समय वो अवग्रहादि रूप मति-ज्ञान है। ऐसैं पूर्वें व्याख्यान कियो है तातैं उत्तर कालमैं जो मतिपूर्वक जीवादि पदार्थ स्वरूप विषय है सो श्रुत अनिन्द्रियको विषय है। ऐसैं निश्चय करने योग्य है ॥१।२॥ अवैं वाईसमा सूत्र-की उत्थानिका कहै है कि भिन्न भिन्न है नियम रूप विषय जिनके ऐसैं कहे जे इन्द्रिय तिनकै स्वामी पणांको निर्देश कर्त्तव्य होत संतैं प्रथम ग्रहण कियो जो स्पर्शन इंद्रिय ताका प्रथम स्वामीपणांका निश्चय करावनें निमित्त कहै है। सूत्रम्—

वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥

अर्थ—वनस्पती है अन्त विषैं जिनकै ऐसैं पृथिवी, जल, तेज, वायु, वनस्पति कायके जीव जे

हैं तिनके एक स्पर्शन इन्द्रिय है। वार्तिक—अन्तशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातोऽवसानगतिः ॥१॥ अर्थ—यो अन्त शब्द अनेकार्थ रूप है, तहां कहूं तो अवयव अर्थके विषैं प्रवर्ते है कि जैसैं वस्त्रांतः कहिये वस्त्रको अवयव है अर कहूं सामीप्य अर्थके विषैं प्रवृत्तै है कि उदकांतंगतः कहिये उदकके समीप प्राप्त भयो है अर कहूं अवसान अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं संसारांतं गतः कहिये संसारका अंतनैं प्राप्त भयो है तिननैं इहां वक्ताकी इच्छातैं अवसान अर्थमें अंत शब्दकी गति जानवे-योग्य है। अर्थात्—वनस्पत्यन्तानां कहिये वनस्पती है अवसानमें जिनके तिनके एकेन्द्रिय है ॥१॥ वार्तिक—सामीप्यवचनेहि वायुत्रससंप्रत्ययप्रसङ्गः ॥ २ ॥ अर्थ—वनस्पत्यन्तानां या शब्दको अर्थ वनस्पतिकै समीप जे हैं तिनकै ऐसो ग्रहण करतां संता वायु कायिक जे हैं तिनके तथा त्रस-निकै एकेन्द्रिय पणांकी प्रतीति प्राप्त होय है ॥२॥ प्रश्नरूप वार्तिक—अन्तशब्दस्य सम्बन्धिशब्द-त्वादादिसंप्रत्ययः ॥३॥ अर्थ—यो अन्त शब्द सम्बन्धी शब्द पणांतैं कोऊ पूर्वनै अपेक्षा करि प्रवर्ते है तातैं ता अर्थतैं आदिकी प्रतीति होय है। ता कारणतैं यो अर्थ जानिये है कि पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यंतनिकै एकेन्द्रिय है ॥३॥ इहां कोऊ कहै है कि प्रश्न रूप वार्तिक—अवशिष्टै-केन्द्रियप्रसङ्गो विशेषात् ॥४॥ अर्थ—पृथिवी आदि वनस्पती पर्यंतनिकै स्पर्शन आदि जे हैं तिनकै विषैं सूं कोऊ अविशेष रूप एक इंन्द्रिय प्राप्त होय है। प्रश्न—काहेतैं? उत्तर, अविशेषतैं सो ऐसैं है कि याही एकनैं होनौं योग्य है, ऐसे कोऊ विशेष नहीं है, क्योंकि यो संख्यावाची एक शब्द है ॥४॥ उत्तर रूप वार्तिक—न वा प्राथम्यवचने स्पर्शनसंप्रत्ययात् ॥५॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर—प्राथम्यवचनमें होतां संतां स्पर्शनकी प्रतीत है यातैं यो एक शब्द प्राथम्य वचन है अर प्राथम्य वचननें ही सूत्र पाठमें आश्रय कियो है तातैं स्पर्शनकी प्रतीति होय है। अर एक शब्द लोकके विषैं भी प्राथम्य वचन है कि वीर्यान्तरायका अर स्पर्शनेन्द्रि-यावरणका क्षायोपशमनं होतां संतां अर अवशेष इन्द्रियनिके जे सर्वघाती स्पर्द्धक तिनका उद-

यनैं होतां संतां अर शरीर अंगोपांग नामा नाम कर्मका लाभकी प्राप्तिनैं होतां संतां अर एकेन्द्रिय जाति नामानाम कर्मका उदयकै वशवर्त्ती होतां संतां स्पर्श नामा एक इन्द्रिय प्रगट होय है ॥५।२२॥ अव तेईसमां सूत्रकी उत्थानिका कहैं हैं—कि और इन्द्रियनिका स्वामी पणांतैं दिखावनैं निमित्त कहै हैं। सूत्रम्—

कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३ ॥

अर्थ—कृमि, पिपीलिका, भ्रमर, मनुष्य आदिनिकै एक एक इन्द्रियकी वृद्धि है। वार्त्तिक—ऐकैकमिति वीप्सा निर्देशः ॥१॥ अर्थ—एक एक शब्द दोय वेर है सो वीप्सामैं जानवे योग्य है। ऐसो व्याकरणको मत है ॥१॥ वार्त्तिक—बहुत्वनिर्देशः सर्वेन्द्रियापेक्षः ॥ अर्थ—सर्व इन्द्रिनिनैं अपेक्षा करि बहु वचन पणांको निर्देश है कि बहु वचन कियो है। अर एक एक की है वृद्धि रूप जिनकै ते एकैक वृद्धनि कहिये है ॥१॥ प्रश्न, तिनमैं एक एक की वृद्धि है सो पूर्वतैं है कि उत्तरतैं है, अर्थात् क्रमतैं है कि मनुष्यतैं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—असंदिग्धं स्पर्शमेकैकेन वृद्धिमित्यादि विशेषणात् ॥३॥ अर्थ—स्पर्शन ऐसो इहां शब्द अनुवर्त्तै है, तानैं आरम्भ करि एक एक करि वृद्धिनैं प्राप्त होय है इत्यादि विशेषणतैं सन्देह नहीं है ॥२॥ प्रश्न, सो कैसैं ? उत्तर रूप वार्तिक—वाक्यान्तरोपप्लवात् ॥४॥ अर्थ—या निवन्धनस्थान रूप वाक्यतैं कि निर्णय रूप भयो जो वनस्पत्यन्तनिकै स्पर्शन रूप एकेन्द्रिय पणौं तातैं वाक्यांतर प्राप्त होय है जो जैसैं अन्नयाः वाक्यतैं ? उत्तर, भक्ष्यतां, भज्यतां, दीव्यतां ये वाक्यान्तर जे हैं तिनको उपप्लव करिये है अर्थात् अन्नो भक्ष्यतां कहिये वेहड़ो भक्षण करो ऐसैं वाक्यान्तरको उपप्लव करिये है। ऐसैं ही इहां भी कृम्यादिकनिकै रसन वृद्धि स्पर्शन है कि रसना करि अधिक स्पर्शन है। अर पिपीलिकादिकनिकै घ्राणकरि अधिक स्पर्शन रसन है अर भ्रमरादिकनिकैं चक्षु करि अधिक स्पर्शन रसन घ्राण

है। अर मनुष्यादिकनिकैं कर्ण करि अधिक स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु है, ऐसें वाक्यान्तर जे हैं ते उपप्लवन्ते कहिये संयुक्त करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—आदि शब्दः प्रकारे व्यवस्थायां वा वेदितव्यः ॥५॥ अर्थ—जा समय आगम अनपेक्षित है कि आगम नहीं अपेक्षा करिये है। ता समय आदि शब्द प्रकार अर्थको विषैं जाननूं कि कृम्यादय कहिये कृमि प्रकार है कि कृमि सदृश है अर जा समय आगमनैं अपेक्षा करिये ता समय आदि शब्द व्यवस्था अर्थमें है कि वे कृमि आदि आगममें प्रसिद्ध है अर तिन इन्द्रियनिकी उत्पत्ति स्पर्शन इन्द्रियकी उत्पत्तितैं उत्तरोत्तर सर्व घाती स्पर्द्धकनिका उदय करि व्याख्यान करी॥२३॥ अबैं चौवीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहे है। अर्थ—कि दोय भेदरूप वे संसारी जे हैं तिनके विषैं इन्द्रिय भेदतैं पांच प्रकार जे हैं तिनमैं नहीं कहे हैं भेद जिनके ऐसैं जे पंचेन्द्रिय तिनके जनावनैं निमित्त कहे है। सूत्रम्—

संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥

अर्थ—मन सहित जे हैं ते संज्ञी हैं। अर मनको लक्षण पूर्वैं व्याख्यान कीयो है, ता मनकरि सहित हैं ते संज्ञी हैं। इहां वादी कहें है। वार्त्तिक—समनस्कविशेषणमनर्थकं संज्ञिशब्देन गतत्वात् ॥१॥ अर्थ–संज्ञिनः या विशेषण करि ही जानन पणौं होय है यातैं समनस्का ऐसौ विशेषण सूत्रमें अनर्थक है ॥ १ ॥ प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तातैं कहिये है वार्त्तिक---- हिताहितप्राप्तिपरिहारयोर्गुणदोषविचारणात्मिका संज्ञा ॥ २ ॥ अर्थ—निश्चय करि यो हित है यो अहित है याकी प्राप्तिमें यो गुण है तथा याका परिहारमैं यो गुण है अथवा याकी प्राप्तिमें यो दोष है, तथा याका परिहारमें यो गुण है ऐसा विचार स्वरूप संज्ञा है ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—व्रीह्यादिपाठादिनिसिद्धिः ॥३॥ अर्थ—जातैं संज्ञा शब्दतैं व्रीह्यादि पाठतैं इनि प्रत्ययनैं होतां संता संज्ञिनः ऐसौ शब्द सिद्ध होय है। ऐसैं शब्दतैं सिद्ध करि उत्तररूप वार्त्तिक कहे है।

न वा शब्दार्थव्यभिचारात् ॥ ४ ॥ अर्थ—समनस्क विशेषण बिना केवल संज्ञा शब्द अर्थनैं व्यभिचार है। प्रश्न, अर्थके व्यभिचारनैंमें कहा दोष है? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो सुनूं कि जो संज्ञानैं नाम कहिये हैं तो निवर्त्यको अभाव होय है कि व्यावर्त्तन करने योग्य कोऊ नहीं करैं है, क्योंकि नाम सर्व पदार्थको है यातैं अमनस्क संज्ञी नहीं है। ऐसा इष्ट अर्थका अभाव होय है। अर जो संज्ञाकै रूढ़ि पणौं है ऐसैं कहिये तौ वा संज्ञा सर्व प्राणीनि प्रति नियमरूपा है यातैं भी संज्ञीनिका अभावतैं निवर्त्यको अभाव होय है। अर संज्ञानं संज्ञा ऐसी निरुक्तितैं जो संज्ञा नाम मतिज्ञानका मानिये तो ज्ञान सर्वकै है यातैं भी निबर्त्यको अभाव तुल्य है क्योंकि सर्व प्राणीनिकै ज्ञानात्मक पणौं है यातैं ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आहारादिसंज्ञेति चेन्नानिष्टत्वात् ॥ ५ ॥ अर्थ—या संज्ञा आहार भय मैथुन परिग्रह विषया है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अनिष्ट पणातैं क्योंकि निश्चय करि सर्व संसारीनिकै आहार, भय, मैथुन, परिग्रह संज्ञाका संनिधानतैं संज्ञी होय। अर यो सर्व होनों अनिष्ट है तातैं समनस्का ऐमो विशेषण अर्थवान है ऐसैं करतां गर्भमें तथा मूर्छामें तथा सुषुप्त आदि अवस्थामें तिष्टतां संतां हित आहितकी परीक्षाका अभावनैं भी होतां संतां मनका सन्निधानतैं संज्ञी पणौं उत्पन्न होय है ॥ ५।२४ ॥ अबैं पचीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो या संसारीकै हिताहितकी प्राप्ति निवृत्तिको कारण मनरूप करणकी निकटतानैं होतां संतां आत्म प्रदेशनिको परिस्पंद होय है। अर छोड्यो है पूर्व शरीर जानैं अर नवीन शरीर प्रति उद्यमवान भयौ ऐसौ मन रहित आत्मा जो है ताकै जो कर्म है सो काहैतैं है ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥

अर्थ—विग्रह गतिकै विषैं कर्म योग है, अथवा जो समनस्क प्राणी विचारि करि क्रियानैं

प्रारम्भ करै है तो भिन्न भई है देह जिनकै तिनकै मननैं नहीं होतां संतां उपपाद क्षेत्र प्रति संन्मुखपणांकरि जो प्रवृत्ति विग्रहकै अर्थि है सा काहेतैं है ? ऐसौ प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै हैं कि विग्रहगतिकै विषैं कर्म योग है। वार्त्तिक—विग्रहो देहस्तदर्थाविगतिर्विग्रहगतिः। अर्थ—औदारिकादि शरीर नाम कर्मका उदयतैं औदारिकादि शरीरका रचवामैं समर्थ विविध पुद्गल जे हैं तिननैं ग्रहण करे। अथवा संसारी जीव जो है तानैं ग्रहण करिये है सो विग्रह कहिये अर विग्रह नाम देहकी है अर विग्रहकै अर्थि जो गति सो विग्रह गति है। प्रश्न, प्रकृति विकृति भाव सम्बन्धनै होतां सतां अर्थ मैं प्रवृत्ति होय है कि चतुर्थीमैं समास होय है। अर इहां प्रकृति विकृतिका अभिसम्बन्धको जो अभाव तातैं समास नहीं प्राप्त होय है। उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि अश्व घासादिकके समान समास जाननैं योग्य है। अर्थात् अश्व घासादि या पदकौ ऐसौ अर्थ होय है कि अश्वकै अर्थि घास आदि द्रव्य हैं। इहां प्रकृतिकी विकृति नहीं है। घास अश्वतैं अन्य द्रव्य है। तथापि तादर्थ्य चतुर्थीका वाक्यमैं देखिये है ॥१॥ वार्त्तिक—विरुद्धो ग्रहो विग्रहो व्याघात इति वा ॥ अर्थ—अथवा विरुद्ध जो ग्रहण सो विग्रह है कि व्याघात है। अर्थात् पुद्गलको आदान जो ग्रहण ताको निरोध है कि वार्त्तिक—विग्रहेण गतिर्विग्रहगतिः ॥३॥ अर्थ---आदानका निरोध करि गति होय है ऐसो अर्थ है ॥३॥ वार्त्तिक--कर्मेति सर्वशरीरप्ररोहणसमर्थं कार्मणम् ॥४ अर्थ—सर्वशरीर जातै उत्पन्न होय है सो बीजभूत कार्मण शरीर है सो कर्म है ऐसैं कहिये है ॥४॥ वार्त्तिक—योग आत्मप्रदेश परिस्पन्दः ॥५॥ अर्थ—कायादि वर्गणा है निमित्त जानै ऐसौ आत्मप्रदेशनिको परिस्पंद जो है सो योग है। अथवा कायादि वर्गणाको निमित्तभूत आत्म प्रदेश जो है सो योग है ऐसैं कहिये है ॥५॥ कर्मनिमित्तो योगः कर्मयोगः ॥६॥ अर्थ—वा विग्रहगतिके विषैं कार्माणशरीरकृत योग है, अर जा योग करि कर्मनिको ग्रहण होय है अर जा करि उत्पन्न करि हो अमनस्क जीवकै भी विग्रहकै अर्थिगति होय है ॥६॥ अवै

छव्वीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है, कि परमाणूंकी स्थितिका सम्बन्ध करि उपचाररूप जे आकाशके प्रदेश तिनकै आधेय जीव अर पुद्गल हैं ते देशान्तर प्रति सन्मुख हुआ संतां दूर कियो है प्रदेशांको क्रम जा विषैं ऐसी गतिनैं रचै है। या ग्रहण कियो है प्रदेशनिको क्रम जा विषैं ऐसी गतिनैं रचै है। ऐसा विचारनैं होतां संतां याका निर्धारकै अर्थि कहै है। सूत्रम्—

अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥

अर्थ—जीव अर पुद्गल जे हैं तिनकी गति अनुश्रेणि रूप है। वार्त्तिक—आकाशप्रदेशपंक्तिःश्रेणिः ॥१॥ अर्थ—लोकका मध्यमैं आरम्भ करि ऊर्ध्व तथा अधः तिर्यक् क्रमरूप आकाशका प्रदेश अनुक्रमि करि रचना रूप भये तिनकी जो पङ्क्ति सो श्रेणी है ऐसैं कहिये है ॥१॥ वार्त्तिक—अनोरानुपूर्व्ये वृत्तिः ॥२॥ अर्थ—अनु शब्दको अनुपूर्वी अर्थमैं समास होय है अर्थात् आनुपूर्वी करि जो श्रेणि सो अनुश्रेणि है ॥२॥ वार्त्तिक—जीवाधिकारात् पुद्गलासंप्रत्ययः इति चेन्न गतिग्रहणात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, जीवाधिकारतैं पुद्गलनिकै अनुश्रेणि गति है ऐसी प्रतीत नहीं होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गति शब्दका ग्रहणतैं सो ऐसैं हैं कि जो निश्चय करि इहां जीवकै ही गति इष्ट है तौ गतिका अधिकारमैं फेर गति शब्दको ग्रहण अनर्थ होय तातैं जानिये है कि सर्व गतिमाननिकी गति ग्रहण करिये है ॥३॥ वार्त्तिक—क्रियान्तरनिवृत्त्यर्थं गतिग्रहणमिति चेन्नावस्थानाद्यसम्भवात् ॥४॥ अर्थ—गति शब्दको ग्रहण क्रियान्तरिकी निवृत्तिके अर्थ है कि गति ही है और क्रिया नहीं है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अवस्थान आदिको अभाव है यातैं कि विग्रह गतिनैं ग्रहण करी ऐसा जीवका अवस्थान शयन आदि क्रिया नहीं सम्भवै है यातैं स्वतैं ही गति अर्थकी प्रतिति होय है तातैं गति शब्द या सूत्रमैं अनर्थक ही ठहरै है सो नहीं तातैं या गति शब्दका सर्व गति-

माननिकी गति जनावनेका ही प्रयोजन सूत्रकारका जानना ॥४॥ वार्तिक—उत्तरसूत्रे जीवग्रहणाच्च ॥५॥ अर्थ—अथवा अविग्रहाजीवस्य ऐसौ सूत्र आगैं कहैंगे तामें जीवका ग्रहणतैं हम ऐसैं मानैं है कि इहां दोऊनिकै ही गति आश्रित करी है ॥५॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—विश्रेणिगतिदर्शनान्नियमायुक्तिरिति चेन्न कालदेशनियमात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, चक्रादिकनिकै तथा मेरुकी प्रदक्षिणा करता ज्योतिषनिकै तथा मंडलिक वायुनिकै तथा मेरु आदिकी प्रदक्षिणाका समयमें विद्याधरनिकै विश्रेणि गति भी देखिये है। तातैं अनुश्रेणि ही गति है। ऐसैं नियम नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, सो नहीं होय है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, कालको तथा देशको नियम है यातैं तहां प्रथम काल नियम तौ ऐसैं हैं कि जीवनिकै मरण कालमें भवान्तरको मिलाप होत संतै तथा मुक्त जीवनिकै उर्ध्वगमन कालमें अनुश्रेणी ही गति है। अर देशको नियम ऐसौ है कि ऊर्ध्वलोकतैं अधोगति अर अधोलोकतैं ऊर्ध्वगति तथा तिर्यग्लोकतैं अधोगति अथवा ऊर्द्ध्व गति जो है सो अनुश्रेणी रूप है। अर पुद्गलनिके भी जो लोकान्तर प्रापणी गति है सो अनुश्रेणी गति ही है अर जो और गति है सो भजनीय है। तातैं भ्रमण रेचक आदि गति भी सिद्ध है ॥६।२६॥ अवैं सत्ताईसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै हे। पूर्वभाव प्रज्ञापक नय करि अवभासित व्यवहारनैं अन्तर नीति करि तथा रूढ़िका वशतैं विनिमुक्त कर्म बन्धन जीव जो है ताकै भी जीवपणांनैं अवधारण करि यो सूत्र अपदिक्षत कहिये उपदेश करत भयौ। सूत्रम्—

अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥

अथ—अविग्रहा गति मुक्ति जीवकै है। क्योंकि विग्रह, व्याघात, कुटिलपणौं ये तीनू शवद अनर्थान्तर है कि एक अर्थकूं कहनवारे हैं, अर सो विग्रह जाकै नहीं विद्यमान है सो या

अविग्रहा गति है। प्रश्न, कौनकै ? उत्तर, जीवके प्रश्न केसेकनिकैं है ? उत्तर, मुक्तके है। प्रश्न कैसें जानिये है ? उत्तर रूप वार्तिक—उत्तरत्रसंसारिग्रहणादिहमुक्तगतिः ॥२॥ अथ—उत्तर सूत्रके विषैं संसारी पदका ग्रहणतैं इहां मुक्ति जीवनिकी गति है ऐसौ जानिये है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है कि श्रेण्यन्तरको संग्रह जो है सो विग्रह है। अर वाको जो अभाव है सो अनुश्रेणि गति है। या सूत्र करि ही सिद्ध होय है। यातैं या सूत्र करि प्रयोजन नहीं है। उत्तर, इहां प्रयोजन है कि अनुश्रेणि गति या पूर्व सूत्रमें जीव पुद्गलनिकी कहूं विश्रेणि भी गति है। या प्रयोजनके जनावनैं निमित्त अविग्रहाजीवस्य यो सूत्र है। बहुरि तहां ही कही है कि कालदेशका निमित्ततैं अनुश्रेणि गति है अर सर्वत्र अनुश्रेणि गति नहीं है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा अर्थकी सिद्धि भी याही सूत्रका अर्थतैं है ॥१२७॥ अबै अट्ठाईसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो कर्म संग रहित आत्माके अप्रतिबन्ध करि लोक पर्यंत एक समय मात्र कालवान गति प्रतिज्ञा रूप करिये है तौ कार्मण देह सहित की गति प्रतिबन्धिनी है। या मुक्त जीवकै अप्रतिबंध करि ही है। ऐसें प्रश्न होत संतें यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥२८॥

अर्थ—विग्रहवान गति संसारिनके चारि समय पहिली है। वार्तिक—कालपरिच्छेदार्थं प्राक्चतुर्भ्य इति वचनम्। अर्थ—समयका लक्षण जो है सो आगानै कहैंगे। अर चार समयतैं पहिली विग्रहवान गति है। ऐसा कालका परिज्ञानकै अर्थि प्राक्चतुर्भ्यः ऐसें कहिये हैं। प्रश्न चार समय उपरान्त गति काहेतै नहीं है ? उत्तर, विग्रहका जो निमित्त ताका अभावतैं कि सर्वोत्कृष्ट जो विग्रह है सो निमित्त जानैं ऐसा तिर्यक् क्षेत्रके विषैं उत्पन्न होनेको इच्छुक प्राणी तिर्यक् क्षेत्र-सम्बन्धा अनुपूर्वीमें सरल श्रेणीका अभावतैं इषुगतिका अभावतैं होतां संतां तिर्यक् क्षेत्र प्रति

प्राप्त करनवारी जो निमित्तरूप तीन विग्रहवान जो गति तानैं आरम्भ करै है। अर तीन उपरांत है विग्रह जा विषैं ऐसी गतिनैं नाहीं आरम्भ करै है। क्योंकि जा विषैं तीन सिवाय विग्रह होय वैसा उत्पादका क्षेत्रको अभाव है यातैं उतना ही काल करि साठी चावल आदिका स्वरूप लाभकै समान उत्पाद क्षेत्रनै प्राप्त होय है यातैं सो जैसैं साठी आदि चावलनिके प्रमाणीक कालकी अवधिकरि परिपाक होय है नहीं न्यूनकरि होय, नहीं अधिककरि होय है तैसैं ही अन्तर भव जो विग्रहगति ताकैं विषैं कालको नियम जाननै योग्य है ॥१॥ वार्त्तिक—चशब्दःसमुच्चयार्थः॥२॥ अर्थ—च शब्द उपपाद क्षेत्र प्रति ऋज्वी गति कहिये अविग्रहागति अर कुटिलागति कहिये विग्रहवती गति जे है तिनका समुच्चयकै अर्थि है। अर्थात् सर्व गतिका ग्रहणके अर्थि च शब्द है ॥२॥ वार्त्तिक–आङ्ग्रहणं लघ्वर्थमितिचेन्नाभिविधिप्रसंगात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, लघु होनेके निमित्त सूत्रमें आङ्पदको ग्रहण करने योग्य है कि आचतुर्भ्यः ऐसा कहनै योग्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारणतैं ? उत्तर, अभिविधिका प्रसंगतै कि जाकरि चतुर्थ समयनैं व्याप्य करि विग्रह प्रवर्त्तै ऐसौ अर्थ होय सो अनिष्ट हैं यातैं ॥३॥ वार्त्तिक—उभयसम्भवे व्याख्यानान्मर्यादासंप्रत्ययः इति चेन्न प्रतिपत्तेर्गौरवात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, मर्यादा अर्थमें अर अभि विधि अर्थमें आङ् शब्द प्रवर्त्तै है, तिनमें व्याख्यानतैं विशेष जो इष्ट है ताकी प्रतीति होय है। यातैं मर्यादाकी भलैप्रकार प्रतीति होयगी यातैं आङ् शब्दनैं होतां संतां भी दोष नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अर्थकी प्रतितिमैं गौरव होय है यातैं कि आङ् शब्दनैं होतां संतां दोऊ अर्थकी प्रतीतिमैं गौरव होय है यातैं कि आङ् शब्दनैं करतां संतां दोऊ अर्थकी प्रतीति होय तिनमैं एकको त्याग अर एककी प्रतीति होनेमें गौरव होय है। यातैं स्पष्ट अर्थकी प्रतीतिके अर्थ सूत्रमें प्राक्पदको ग्रहण करिये है अर ये चार गति जे हैं तिनकै आर्षोक्त संज्ञा ऐसी है तिनके नाम ऐसैं हैं कि इषुगति १ पाणिमुक्तागति २ लांगलिकागति ३ गौमूत्रिकागति ४ है। तहां प्रथम-

की इषुगति जो है सो तो अविग्रहा है कि मोड़ा रहित इषु जो बाण ताके समान सरल है अर अब शेष तीन गति है सो विग्रहवान है कि मोड़ा सहित है। तिनमें इषुगतिके समान जो है सो इषुगति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें बाणकी गति लक्ष्यदेश पर्यन्त सरल है। तैसें संसारीनिकै तथा सिद्ध भये जीवनिकै सरल गति है सो एक समयकी है। अर पाणि-मुक्ताके समान गति जो है सो पाणिमुक्तागति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है, उत्तर, जैसें पाणिकरि तिर्यक् दिशा सन्मुख फेंक्या द्रव्यकी गति एक विग्रहा है कि मोड़ा सहित है। तैसें संसारीनिकै एक विग्रहगति पाणिमुक्ता है सो दोय समयकी है। अर लांगलिके समान लांगलिका गति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें लांगल दोय वक्रतावान है तैसें दोय विग्रहवान् गति लांगलिकी है सो तीन समयकी है। अर गोमूत्रिकाके समान गोमूत्रिका गति है। इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें गौमूत्रिका बहुवक्रतावान है तैसें तीन विग्रहवान गति है सो गौमूत्रिका है सो चार समयकी है ॥४॥ अवैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो या विग्रहवान क्रिया है सो चार समयकी अवस्थारूप निश्चय करिये है तो परित्यक्त है व्याघात जा विषैं ऐसी गति कितनां समयकी है ऐसो प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

एकसमयाविग्रहा ॥२९॥

अर्थ—विग्रह रहित जो गति है सो एक समयकी है। वार्त्तिक—अधिकृतगतिसमानाधि-करणत्वात् स्त्रीलिङ्गनिर्देशः ॥ अर्थ—गतिको अधिकार है। अर वा गतिका समानाधिकरण पणातैं इहां स्त्रीलिङ्गको निर्देश जानवे योग्य है। अर एक है समय जाकै सो एक समया है। अर नहीं विद्यमान है विग्रह जाकै सो अविग्रहा है, अरं निश्चय करि ऐसी गतिमान जीव अर पुद्गल जे हैं तिनकै नहीं व्याघात करि लोक पर्य्यन्त भी एक समयकी है ॥१॥ वार्त्तिक—

आत्मनो क्रियावत्त्वसिद्धेरयुक्तमिति चेन्न क्रियापरिणामहेतुसद्भावाल्लोष्टवत् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, सर्व गतपणातैं निष्क्रिय आत्माकै क्रियावानपणौं नहीं है तातैं गतिको कल्पन अयुक्त है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? क्रिया परिणाम रूप हेतुका सद्भावतैं। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, लोष्टकै समान सो जैसैं लोष्ट आप क्रिया परिणाम पणातैं वाह्य आभ्यन्तर कारणकी अपेक्षा सहित हुवो संतो देशान्तरमें प्राप्त होनें समर्थ क्रियानैं अंगीकार करै है। अर कर्मका अभावनैं होतां संता प्रदीपककी शिखाके समान स्वभावकी ऊर्ध्वगमन रूप क्रियानैं अंगीकार करै है यातैं दोष नहीं है। अर सर्वगत पणानैं होतां संता संसारको अभाव होय कि जो सर्वगत आत्मा है तो क्रियाका अभावतैं संसारको अभाव होय ॥२॥ अवैं तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि वंधकी संतति प्रति अनादि अर कर्मको जो संचय ताकी जो वृत्ति ताका सम्बन्ध करि आदिमान द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भावरूप पंच प्रकार संसार पणानैं होतां संतां तथा मिथ्या दर्शन आदि कारणनिकी निकटतानैं होतां संता उपयोगात्मक यो आत्मा निरन्तर पणां करि कर्मनैं ग्रहण करै है। ऐसा उपदेशतैं विग्रह गतिके विषैं भी आहारक पणौं प्राप्त होय है। तातैं नियमके अर्थ यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥

अर्थ—एक तथा दोय तथा तीन समय अनाहारक है। वार्त्तिक—समयसंप्रत्ययः प्रत्यासत्तेः। अर्थ—एक समया विग्रहा या सूत्रमें समय कह्यो है ताकरि इहां निकटतातैं अभि सम्बन्ध जानवे योग्य है कि एक समय दोय समय तीन समय अनाहारक है। ऐसौ अर्थ होय है। प्रश्न, तहां समय शब्द उपसर्जनी भूत है कि गौण रूप है सो कैसैं इहां सम्बन्ध रूप होय? उत्तर, अन्यका अभावतैं अर्थकी सामर्थ्यतैं सम्बन्ध देखने योग्य है ॥१॥ वार्त्तिक—

वा शब्दोत्र विकल्पार्थो ज्ञेयः ॥२॥ अर्थ—या सूत्रमें वा शब्द है सो विकल्पार्थ जानवे योग्य है। अर विकल्प जो है सो यथेच्छ अर्थनैं कहै है एक अथवा दोय अथवा तीन समय अनाहारक है ॥२॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—सप्तमीप्रसंगः इति चेन्नात्यन्तसंयोगस्य विवक्षितत्वात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अत्यन्त संयोगका विवक्षित पणातैं, क्योंकि निश्चय करि अत्यन्त संयोगतैं होतां संतां सप्तमीका अपवादतैं द्वितिया करिये है। ऐसौ व्याकरणकौ मत है ॥३॥ वार्त्तिक—त्रयाणां शरीराणां षण्णां पर्याप्तीनां योग्यपुद्गलग्रहणमाहार ॥४॥ अर्थ—निश्चय करि तैजस कार्मण शरीर यावत् संसारका अन्त पर्यन्त नित्य उपचीयमान स्वयोग्य पुद्गल है कि नित्य अपने योग्य पुद्गलनिनैं ग्रहण करै है। यातैं आहारादि अभिलाषके कारण जे अवशेष औदारिक, वैक्रियिक, आहारक ये तीन शरीर तिनकै योग्य अर आहार १ शरीर २ इन्द्रिय ३ श्वासोछ्वास ४ भाषा ५ मन ६ ये षट् पर्याप्ति जे हैं तिनके योग्य पुद्गलनिको गहण जो है सो आहार है ऐसैं कहिये है ॥४॥ वार्त्तिक—विग्रहगतावसंभवादाहारकशरीरनिवृत्तिः ॥ ५ ॥ अर्थ—ऋद्धि प्राप्त ऋषीश्वर जे हैं तिनकै आहारक शरीर प्रगट योग है। यातैं विग्रहगतिके विषैं आहारक शरीरका असम्भवतैं निवृत्ति है कि निषेध है ॥५॥ वार्त्तिक—शेषाहाराभावो व्याघातात् ॥६॥ अर्थ—विग्रह गतिके विषैं औदारिक, वैक्रियक अर षट् पर्याप्ति ऐ ही जे आहार तिनकौ अभाव है। प्रश्न, काहे तैं है उत्तर, व्याघाततैं कि अष्ट विध कर्म पुद्गल सूक्ष्मरूप परिणम्या जे हैं तिनका संचयरूप मूर्त्ति कार्मण शरीर जो है ताका वशतैं प्रावृट् काल करि परिणत जो जलधर तातैं निकस्यो जो जल ताका ग्रहणमें समर्थ अर क्षेप्यो ऐसो तप्त लोहको वाण जो है ताकै समान पूर्व देहकी निवृत्ति अर समुद्घात रूप दुःख करि उष्णपणातैं गमन करतो भी आहारक है। तथापि वक्र गतिका वशतैं एक दोय समयनै व्याप्य करि अनाहारक है। तिनमैं एक समयकी इषु गतिके विषैं कह्यौ है लक्षण जाको ऐसा आहारनैं अनुभव करतो संतौ ही गमन करै है। अर एक विग्रह वान

दोय समयकी पाणिमुक्ता गति जो है ताकै विषैं प्रथम समयमें अनाहारक है। अर दूसरा समयमें आहारक है। अर दोय विग्रहवान तीन समयकी लांगलिका गति जो है ताकै विषैं प्रथम अर द्वितीय समयमें अनाहारक है, अर तृतीय समयमें आहारक है। अर तीन विग्रहवान चार समयकी गौमूत्रिका गति जो है ताकै विषैं चतुर्थ समयमें तो आहारक है अर और प्रथमके तीन समय जो है तिनकैं विषैं अनाहारक है ॥६॥ इहां तीन विग्रह अर चार समयके स्पष्ट जनावनें निमित्त संस्थान लिखिये है। अबैं इकईसमा सूत्रको उत्थानिका कहे है। कि निश्चय करि शुभाशुभ फलको देनेवारो कार्मण शरीर यो है ताकरि अनुग्रहीत है क्रिया याकै अर अनुश्रेणीनैं ग्रहण करतो संतो पूर्वोपार्जित कर्म फलनैं अनुभवन करने प्रति कर्म करि परिपूर्ण अर अविग्रहवान तथा विग्रहवान जो गमन द्वय ता करि प्राप्त होय है देशान्तर जाकै एसौ संसारी जो है ताकै नवीन मूर्त्यन्तरकी रचनाका प्रकार जनावनैं निमित्त यो सूत्र कहे है। सूत्रम्—

सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥३१॥

अर्थ—संसारी जीवकै सम्मूर्च्छन १ गर्भ २ उपपाद ये तीन प्रकार जन्म हैं। वार्त्तिक--समन्ततो मूर्च्छनं सम्मूर्च्छनम् ॥१॥ अर्थ---तीन लोकके विषैं ऊपर नीचैं तथा बगलमैं देहको सर्व तरफतैं मूर्च्छन कहिये अवयवनिको प्रकलपनौं जो है सो सम्मूर्च्छन है ॥१॥ वार्त्तिक---शुक्रशोणितगरणात् गर्भः ॥२॥ अर्थ—जहां शुक्रको अर श्रोणितको गरणं कहिये मिलन जो है सो गर्भ है ॥२॥ वार्त्तिक---मात्रोपयुक्ताहारात्मसात्करणाद्वा ॥३॥ अर्थ---अथवा माता करि उपयुक्त किया आहारका अंगीकार करवा रूप गरणतैं गर्भ है ॥३॥ वार्त्तिक---उपेत्य पद्यतेऽस्मिन्नित्युपपादः ॥४॥ अर्थ---हल या सूत्रतैं अधिकरण साधनरूप घञ् प्रत्यय होय है। तातैं उपपाद पद सिद्ध होय है। अर यो देव नारकीनिका उत्पत्ति स्थान विशेषको नाम है। ऐसैं ये तीन

संसारी जीवनिकै जन्म हैं तिनके प्रकार हैं ॥४॥ वार्त्तिक-सम्मूर्च्छनग्रहणमादावतिस्थूलत्वात् ॥५॥ अर्थ---निश्चय करि सम्मूर्च्छनितैं उत्पन्न भयो शरीर जो है सो अति स्थूल है यातैं याको ग्रहण आदिमें करिये है। प्रश्न, वैक्रियक शरीरतैं अति स्थूल गर्भज शरीर है। तातैं सम्मूर्च्छन अर गर्भज ये दोऊ जे हैं तिनके विषैं आदिमें कौंनको वचन करनौं न्याय है। ऐसैं प्रश्न होत संतैं कहे है ॥५॥ वार्त्तिक---अल्पकालजीवित्वात् सम्मूर्च्छनम् ॥६॥ अर्थ---गर्भज उपपादक जे हैं तिनतैं सम्मूर्छन प्राणी अल्पजीवी हैं। तातैं सम्मूर्च्छनको आदिके विषैं करनौं न्याय है ॥६॥ किंच, वार्त्तिक---तत्कार्यकारणप्रत्यक्षत्वात् ॥७॥ अर्थ---गर्भ अर उपपाद है जन्म जिनके तिनके कार्य अर कारणका अप्रत्यक्ष है। अर्थात् अनुमान गम्य है। अर जे सम्मूर्च्छन जन्म है ताकौ कारण मांसादिक अर वाको कार्य शरीर ये दोऊ ही लोकके विषैं प्रत्यक्ष है। तातैं याको ग्रहण आदिके विषैं करिये है ॥७॥ वार्त्तिक—तदनन्तरं गर्भग्रहणं कालप्रकर्षनिष्पत्तेः ॥ ८ ॥ अर्थ—निश्चय करि गर्भ जन्म जो है सो सम्मूर्छन जन्मतैं कालकी अधिकता करि उत्पन्न होय है तातैं सम्मूर्छनिके अनन्तर गर्भ जन्मको ग्रहण करनौ न्याय है ॥८॥ वार्त्तिक—उपपाद ग्रहणमन्ते दीर्घजीवित्वात् ॥९॥ अर्थ---सम्मूर्छनज जे हैं तिनतैं उपपाद जन्म वारे दीर्घ जीवी है यातैं अंतमें ग्रहण करिये है ॥९॥ प्रश्न, यो जन्म विकल्प कौनको कियो है ? उत्तर, कहिये है ॥ वार्त्तिक—अध्यवसायविशेषात् कर्मभेदे तत्कृतो जन्मविकल्पः ॥१०॥ अर्थ—अध्यवसाय जो है सो परिणाम है सो असंख्यात लोक प्रमाण विकल्प रूप है ताके भेदतैं वाके कार्य कर्म वन्ध जे हैं तिनमें विकल्प है। तातैं कर्मवंधके फल जन्म विकल्प जाननें योग्य है। क्योंकि निश्चय करि कारणके अनुकूल कार्य देखिये है। अर शुभाशुभ लक्षणरूप कर्म जो हैं सो शुभाशुभ रूप ही जन्मनैं उत्पन्न करे है ॥१०॥ वार्तिक—प्रकारभेदाज्जन्मभेद इति चेन्न तद्विषयसामान्योपदानात् ॥११॥ अर्थ—प्रश्न, जन्मके प्रकार बहुत हैं अर वाका समानाधिकरण पणातैं जन्मके भी

बहुवचन पणौं प्राप्त होय है सो जैसैं जीवादयः पदार्थ ऐसो वाक्य है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा संसारीको विषय सामान्य जो है ताका ग्रहणतैं कि वा जन्मका प्रकार विषय रूप जो है ताहि इहां सामान्य जन्म शब्द करि ग्रहण करिये है तातैं एकत्व निर्देश है सो जैसैं जीवादयस्तत्वं ऐसो वाक्य है ॥१२॥ अवैं बत्तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहे है। कि अधिकार रूप कियो अर संसार विषय है जाको ऐसौ जो उपभोग ताकी जो लब्धि ताको जो अधिष्ठान कहिये स्थिति तामैं प्रवीण ऐसौ जन्म जो है ताको यो विकल्प कहनें योग्य है यातैं कहै हैं। सूत्रम्—

सचित्तशीतसंवृताः सेसरामिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥

अर्थ—सचित्त, शीत, संवृत, सेतर, मिश्र ये एक एक जन्मकी योनि है कि उत्पत्ति कारण है। वार्त्तिक—आत्मनः परिणामविशेषश्चित्तम् ॥१॥ अर्थ—चैतन्य स्वरूप आत्मा जो है ताकौ परिणाम विशेष जो है सो चित्त है। अर वा चित्त करि सहित प्रवर्त्तैं सो सचित्त है ॥१॥ वार्त्तिक—शीत इति स्पर्शविशेषः ॥२॥ अर्थ—शीत या शब्द करि स्पर्श विशेष ग्रहण करिये है, अर शुक्लादि शब्दकै समान उभय वचन पणातैं शीत गुण युक्त द्रव्य भी शीत कहिये है ॥२॥ वार्त्तिक—संवृतो दुरुपलक्ष्यः ॥३॥ सम्यक्वृत रूप है सो संवृत है। यातैं दुरुपलक्ष्य प्रदेशकूं संवृत कहिये है ॥३॥ वार्त्तिक—सेतराः सप्रतिपक्षाः ॥ ४ ॥ अर्थ—इतर जे प्रतिपक्षी तिन करि सहित जो हैं सो सेतर है। अर्थात् सप्रतिपक्षी है। प्रश्न, वे कौन है ? उत्तर, अचित्त है, उष्ण है, विवृत है ॥४॥ वार्त्तिक—मिश्रग्रहणमुभयात्मकसंग्रहार्थम् ॥५॥ अर्थ—उभयात्मकका संग्रहणकै अर्थि मिश्रपदको ग्रहण करिये है सो ऐसैं है कि सचित्ता चित्तशीतोष्ण, संवृत विवृत ऐसे होय ॥५॥ वार्त्तिक—च शब्द प्रत्येकसमुच्चयार्थ ॥६॥ अर्थ—मिश्राश्च ऐसैं च शब्द है सो प्रत्येकका समुच्चयके अर्थि करिये

है अर जो शब्द नहीं करिये तो तौ मिश्र शब्द पूर्वोक्तनिको ही विशेषण ठहरै ताकरि सचित्त शीत संवृत अर सेतर जा समय मिश्र होय ता समय ही योनि होय यो अर्थ प्राप्त होय। अर चा शब्दनैं होतां संतां सचित्तादिक प्रत्येक योनि है। अर मिश्र भी योनि है यो अर्थ लब्धि होय है। प्रश्न, च शब्द विना भी वैसा अर्थ की प्रतीति होय है। यातैं पूर्वोक्त अर्थ रूप प्रयोजन नहीं है, क्योंकि अन्तरेणापि तत्प्रतीतेः, याको अर्थ ऐसौं है कि च शब्द विना भी समुच्चय अर्थ प्रतीतिमें आवै है यातैं सो जैसैं पृथिव्यप्तेजोवायुरिति ऐसा वाक्य मैं च शब्द नहीं है। तथापि भिन्न भिन्न समुच्चय ग्रहण करिये है। इहां प्रश्न उपजै है कि जो कह्यौ है कि निश्चय करि च शब्द विना पूर्वोक्तनिके ही विशेषण होय सो यो दोष नहीं है। क्योंकि विशेषण अर्थका संभवनै होतां संतां समुच्चय अर्थ ही है ऐमैं व्याख्यान करिये है ॥६॥ उत्तर रूप वार्तिक—इतरयोनिभेदसमुच्चयार्थस्तु ॥७॥ अर्थ—ऐसैं है तो सूत्रमें नहीं कहे जे ये योनिनके भेद तिनका समुच्चयकै अर्थि च शब्द है। प्रश्न, वे भेद कौनसे है? उत्तर, आगानैं कहैंगे ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—एकशो ग्रहणं क्रममिश्रप्रतिपत्त्यर्थम् ॥ ८ ॥ अर्थ—एक एकका होय सो एकशः कहिये है। ऐसैं वीप्सामे शस् प्रत्यय होय है तातैं एकशः पदको ग्रहण क्रम मिश्रकी प्रतीतिकै अर्थ है ऐसैं जानिये है कि सचित्त अर अचित्त तथा शीत अर उष्ण तथा संवृत अर विवृत है। अर ऐसैं मति जानूं कि सचित्त शीत आदि भी मिश्र होय है ॥८॥ वार्तिक—तद्ग्रहणं क्रियते प्रकृतापेक्षार्थम् ॥९॥ अर्थ—जिनको जो योनि सो तद्योनि है। प्रश्न, किनको? उत्तर, सम्मूर्च्छनादि किनको;॥ ९ ॥ वार्त्तिक—यूयत इति योनिः ॥ १० ॥ तथा वार्त्तिक—सचित्तादिद्वन्द्वे पुंवद्भावाभावो भिन्नार्थत्वात् ॥ ११ ॥ अर्थ—यूयते कहिये उत्पन्न हूजिये जाकै विषैं सो योनि है अर यो योनि शब्द स्त्रीलिंग है ताकी अपेक्षा सचित्तादिक शब्द भी स्त्रीलिंगः है। तिनको द्वन्द्व समास होत संतैं पुंवद्भाव नहीं प्राप्त होय है कि सचित्ताश्च शीताश्च

संवृताश्च सचित्तशीतसंवृता ऐसैं प्रश्न काहेतैं है ? उत्तर, भिन्नार्थ पणांतैं, क्योंकि निश्चयकार
पुंवद्भाव एकाश्रयनैं होतां संतां कह्यौ है ॥११॥ उत्तररूप वार्त्तिक—नवा योनिशब्दस्योभयलिङ्ग-
त्वात् ॥१२॥ अर्थ—यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उभयलिङ्ग पणांतैं इहां योनि
शब्दकै पुंल्लिङ्ग जानवे योग्य है ॥१२॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—योनिजन्मनोरविशेषः इति चेन्ना-
धाराधेयभेदादुविशषोपपत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, योनिकै अर जन्मकै अभेद है, क्योंकि जातैं
आत्मा ही देवादि जन्म पर्यायतैं औपपादिक है ऐसैं कहिये है सो ही योनि है। उत्तर, सो नहीं
है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आधाराधेय रूप भेदकी उपपत्ति है कि निश्चयकरि आधार
योनि है। अर आधेय जन्म है। यातैं सचित्तादि योनि है अधिष्ठान जाको ऐसो आत्मा संमू-
र्च्छनादि जन्मनिका शरीर, आहार, इन्द्रिय आदि जे हैं तिनकै योग्य पुद्गल जे हैं तिननै ग्रहण
करै है ॥ १३ ॥ वार्त्तिक—सचित्तग्रहणमादौ चेतनात्मकत्वात् ॥ १४ ॥ अर्थ—सचित्तको ग्रहण
आदिकैं विषैं करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, चेतनात्मकपणातैं क्योंकि निश्चिय करि लोककै
विषैं चेतनात्मक अर्थ प्रधान है यातैं ॥ १४ ॥ वार्त्तिक—तदनन्तरं शीताभिधानं तदाप्यायनहेतु-
त्वात् ॥ १५ ॥ अर्थ—ता पीछैं शीत योनिका अभिसन्वन्ध करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर,
जन्मका उत्पत्ति कारणपणांतैं क्योंकि निश्चयकरि सचेतन अर्थका उत्पत्तिको कारण शीतस्पर्श
ही है ॥ १५ ॥ वार्त्तिक—अन्ते संवृतग्रहणं गुप्तरूपत्वात् ॥१६॥ अर्थ-अन्तके विषैं संवृत शब्दको
ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, गुप्तरूपपणांतैं, क्योंकि लोककै विषैं गुप्तरूप वस्तु कर्मकरि
ग्राह्य है ॥ १६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—एक एव योनिरितिचेन्न प्रत्यात्मं सुखदुःखानुभवनहेतु-
सद्भावात् ॥ १७ ॥ अर्थ—सव जीवनिकै एक ही योनि हाय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा
कारण ? उत्तर, आत्मा आत्मा प्रति भिन्न भिन्न सुख दुःखका अनुभवनको सद्भाव है यातैं, क्यों-
कि निश्चयकरि आत्मा आत्मा प्रति शुभाशुभ परिणाम भिन्न भिन्न है। अर वा परिणाम जनित

कर्मबन्ध भी विचित्र है। यातैं विचित्र कर्मबन्ध करि सुख दुःखका अनुभवका कारणरूप योनि भी बहुविधि आरम्भ करिये है ॥ १७ ॥ वार्त्तिक—तत्राचित्तयोनिका देवनारकाः ॥ १८ ॥ अर्थ—तहां देव अर नारकी जे हैं ते अचित्त योनिवान है क्योंकि निश्चयकरि तिनकैं उपपादस्थानके प्रदेश पुद्गल समूह है सो अचित्त योनि है ॥१८॥ वार्त्तिक—गर्भजा मिश्रयोनयः ॥ १९ ॥ अर्थ—जे गर्भज जीव हैं ते मिश्रवान जानवे योग्य है। क्योंकि निश्चयकरि तिनकै माताका गर्भकै विषैं शुक्र अर शोणित जो है सो तो अचित्त है अर तहां ही योनि स्वरूप करि आत्मप्रदेश हैं ते चेतनावान है तातैं मिश्र है ॥ १९ ॥ वार्त्तिक—शेषास्त्रिविकल्पः ॥ २० ॥ अवशेष सम्मूर्छन जे हैं ते तीनूं विकल्परूप है कि कितनेक सचित्त योनि हैं, अर और अचित्त योनि है अर और मिश्र योनि हैं। अर तिन सम्मूर्छननिमैं जे साधारण शरीरवान हैं ते सचित्त योनि है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, परस्पर आश्रयपणातैं अर और जे हैं ते अचित्त योनि है तथा मिश्र योनि है ॥ २० ॥ वार्त्तिक—शीतोष्णयोनयो देवनारकाः ॥ २१ ॥ अर्थ—देव अर नारकी जे हैं ते तो शीत योनिवान है तथा उष्णवान योनि है, क्योंकि निश्चयकरि तिनके उपपादस्थान कितनेक उष्ण हैं कितिनेक शीत हैं यातैं ॥ २२ ॥ वार्त्तिक—उष्णयोनिस्तेजस्कायिकः ॥ २२ ॥ अर्थ—अग्निकायके जीव उष्णयोनि जानने योग्य है ॥ २२ ॥ वार्त्तिक—इतरे त्रिप्रकाराः ॥ २३ ॥ अथ—अर और कायके जीव तीन प्रकारके योनिवान हैं। कितनेक शीत योनिवान है। अन्य उष्ण योनिवान है। अर मिश्रयोनिवान है ॥ २३ ॥ वार्त्तिक—देवनारकैकेन्द्रियासंवृतयोनयः ॥ २४ ॥ अर्थ—देवनारकी अर एकेन्द्रिय जे हैं ते संवृत योनिवान है ॥२४॥ वार्त्तिक—विकलेन्द्रिया जीवाः विवृतयोनयो वेदितव्याः ॥ २५ ॥ अर्थ—विकलेन्द्रिय जीव जें हैं ते विवृत योनिवान जानवे योग्य है ॥ २५ ॥ वार्त्तिक—मिश्रयोनयो:गर्भजाः ॥२६॥ अर्थ—गर्भज जीव जे हैं ते मिश्रयोनिवान है कि किंचित् विवृत योनिवान जानवे योग्य है ॥२६॥ वार्त्तिक—तद्भेदाश्च शब्दसमुच्चिता प्रत्यक्षज्ञानिदृष्टाः

इतरेषामागमगम्याश्चतुरशीतिशतसहस्रसंख्याः ॥ २७॥ अर्थ—तिन नव योनिनके भेद कर्म भेद जनित हैं भिन्न भिन्न वृत्ति जिनकी ऐसैं हैं ते प्रत्यक्ष ज्ञानीनिकरि दिव्य नेत्र जो ज्ञाननेत्र ताकरि देखै है। अर छद्मस्थ जे हैं तिनकै श्रुत है नाम जाका ऐसा आगमकरि जानने योग्य चौरासी लाख संख्या प्रमाण जाननें योग्य है सो ऐसैं है कि नित्य निगोदनिके सात लाख भेद हैं अर अनित्य निगोदके सात लाख भेद है। प्रश्न, वे नित्य निगोद तथा अनित्य निगोद कौन है? उत्तर, भूत, भविष्यत्, वर्त्तमानकालमें त्रसभावके योग्य नहीं है ते नित्य निगोद है। अर जे त्रस भावनैं प्राप्त भया अर प्राप्त होवेंगे ते अनित्य निगोद है। अर पृथिवी, अप, तेज, वायु, कायकनिकै सात सात लाख भेद है, अर वनस्पतिकायकनिकै दश लाख भेद है विकलेन्द्रियनिकै छे लाख भेद हैं। देवनिकै नारकीनिकै तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चनिकै प्रत्येक चार चार लाख भेद है अर मनुष्यनिके चौदा लाख भेद है ये सर्व एकत्र जोड़िरूप किया संतां चौरासी लाख कहिये है। उक्तं च, गाथा—

णिच्चिदरधादुसत्तय तरुदस वियलिंदिएसु छच्चेव।
सुरणिरयतिरियचउरो चोद्दस मणुए सद सहस्सा ॥१॥

संस्कृत—नित्येतरधातु सप्तसप्ततरोः दशविकलेन्द्रियेषु षट् चैव।
सुरनारकतिरश्चां चतुरश्चतुर्दशमनुष्येषु शतसहस्राश्च ॥१॥

अवैं तेतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ऐसैं इनि नव भेद रूप योनि संकटके विषैं तीन प्रकार जन्म सर्व प्राण धारीनिकै अनियम करि प्राप्त होय है। तातैं जिनके जैसैं सम्भवैं तिनके तैसैंके अवधार निमित्त कहै है। सूत्रम्—

जरायुजांडजपोतानां गर्भः ॥३३॥

अर्थ—जरायुज, अंडज अर पोत जे हैं तिनके गर्भ जन्म है। वार्त्तिक—जालवत्प्राणि-

परिवरणं जरायुः ॥ १ ॥ अर्थ—जो जालके समान प्राणीके सर्व तरफतैं आवरण रूप फैल्यो मांस शोणित होय सो जरायु है ऐसैं कहिये है ॥१॥ वार्त्तिक—शुक्रशोणित परिवरणमुपात्तकाठिन्यं नखत्वक्सदृशं परिमंडलमंडम् ॥२॥ अर्थ—जहां निश्चय करि नखकी त्वचाके समान ग्रहण कियो है कठिनपणौं जानैं ऐसो शुक्र शोणितको आवरण रूप मंडलाकृति है सो अंड है ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—संपूर्णावयवः परिस्पंदादिसामर्थ्योपलक्षितः पोत ॥ ३ ॥ अर्थ—किंचित् भी आवरण विना परिपूर्ण है अवयव जाकै अर योनितैं निकसनैं मात्रतैं ही परिस्पंदादि सामार्थ्य करि संयुक्त जो है सो पोत है ऐसैं कहिये है। अर इन शब्दनिके निरुक्ततैं अर्थ ऐसैं है कि जरायुके विषैं उत्पन्न होय सो जरायुज कहिये। अर अंडाके विषैं उत्पन्न होय सो अंडज कहिये। अर जरायुज तथा अंडज तथा पोत जे हैं ते जरायुजांडजपोता कहिये ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—पोतजा इत्ययुक्तमर्थभेदाभावात् ॥ ४ ॥ अर्थ—कितनेक पुरुष पोतजा पढ़ै हैं सो अयुक्त है। प्रश्न, कहेतैं, उत्तर, अर्थभेदका अभावतैं कि निश्चय करि पोतके विषैं उत्पन्न होय है ऐसो कोऊ पदार्थ पोत नहीं है ॥ ४ ॥ वार्तिक—आत्मापोतज इतिचेन्नतत्परिणामात् ॥५॥ अर्थ—प्रश्न, पोतके विषैं उत्पन्न भयो आत्मा पोत है ऐसैं अर्थ भेद है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा पोत रूप परिणामतैं कि आत्मा ही पोत परिणाम करि परिणम्यो पोत है। ऐसैं कहिये है, तातैं आत्मातैं भिन्न पोत नामा कोऊ और जरायुके समान नहीं है। तथा प्रश्न, पोतकैं विषैं उत्पन्न भयो सो पोतज है ? उत्तर, पदार्थ भेद नहीं है। अर्थात् पोत रूप परिणम्यूं आत्मा ही पोत नाम पावै है। अन्य कोऊ पदार्थ नहीं है। वार्त्तिक—जरायुजग्रहणमादावभ्यर्हितत्वात् ॥ ६ ॥ अर्थ—जरायुजको ग्रहण आदिमें करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अभ्यर्हित पणातैं प्रश्न, कैसैं अभ्यर्हित पणौं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—क्रियारम्भशक्तियोगात् ॥ ७ ॥ अर्थ—निश्चय करि अंडनितैं देखिये है यातैं। वार्त्तिक—

केषांचित्महाप्रभवत्वात् ॥८॥ अर्थ—अर जरायुजनिमैं ही उत्पन्न भये कितनेक चक्रधर वासुदेव आदि महा प्रभाववान होय है। प्रश्न, इहां तीर्थंकरका नाम क्यूं नहीं कह्या? उत्तर, निश्चय करि तीर्थंकर भी जरायुजनिकी गणनामें ही है, तथापि षट् कुमारका गर्भ सोधन आदि क्रिया करै है। तातैं माताको गर्भ स्फटिक समान दिव्य है। यातैं तीर्थंकर का शरीरके ऊपर रुधिर मांस जालके समान जरायु नहीं है। तातैं नहीं कह्या है। प्रश्न, ऐसैं है तो यो पोत ही क्यों नहीं कहौ? उत्तर, पोत जो हैं सो गर्भतैं निकसत ही अपनी पर्यायके योग्य चलन बोलन आदि कर्म करे है अर तीर्थंकर सखिलित चरण रूप तो चलन अर गदगद रूप बोलन आदि कर्म करे है तातैं पोत नहीं है, जरायुज ही है। किंच वार्त्तिक—मार्गफलाभिसम्बन्धात् ॥९॥ अर्थ—और सुनूं कि जरायुजनिके ही सम्यग्दर्शन आदि मार्ग जो है ताका फलरूप मोक्ष सुख करि अभि सम्बन्ध होय है, अर औरनिकै नहीं होय है। यातैं अभ्यर्हितपणौं है ॥९॥ वार्त्तिक—तदनन्तरमंडजग्रहणं पोतेभ्योऽभ्यर्हितत्वात् ॥१०॥ अर्थ—जरायुजके अनन्तर अंडजनिको ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, पोतनितैं अभ्यर्हितपणौं है यातैं, क्योंकि अंडजनिके विषैं कितनेक सारिकादिक अक्षर उच्चरण आदि क्रियाकै विषैं कुशल है यातैं पोतनितैं अभ्यर्हित है ॥१०॥ वार्त्तिक—उद्देशवान्निर्देश इति चेन्न गौरवप्रसंगात् ॥ ११ ॥ अर्थ-प्रश्न, सम्मूर्छन गर्भोपपादाज्जन्म या सूत्रमें उद्देश है ताकै समान नहीं निर्देशनैं होनैं योग्य है। यातैं सम्मूर्छनजनिको पूर्व ग्रहण कर्त्तव्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गौरवको प्रसंग आवै है यातैं जो निश्चय करि सम्मूर्छनजको निर्देश आदिमें करिये तो शास्त्र गौरव होय है। क्योंकि एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच तथा मनुष्य जे हैं तिनमें कितनेकनिको सम्मूर्छन जन्म है। यातैं गर्भजनिनै तथा औपपादिकनिनैं कहि करि शेषाणां सम्मूर्छनं ऐसैं लघु उपाय करि कहूंगो या अभिप्रायतैं उद्देशको क्रम उल्लंघन कियो ॥११॥

वार्त्तिक—सिद्धेविधिरवधारणार्थः ॥ १२ ॥ अर्थ—जरायु आदिकनिकै गर्भ जन्मका सम्बन्धकी सामान्य करि सिद्ध होत संतैं बहुरि आरम्भ करि विधि नियमकै अर्थ है कि जरायुज अंडज अर पोत जे हैं तिनकै ही गर्भ जन्म है। इनतैं अन्य देवनारकी सम्मूर्च्छन जे हैं तिनकै गर्भ जन्म नहीं है। प्रश्न, नियमके अर्थि आरम्भ करतां संता जरायुज अंडज पोत जे हैं तिनकै गर्भ ही जन्म है ऐसो नियम काहेतैं नहीं है ? उत्तर, आगैं शेषाणां एसौ वचन है। भावार्थ—जरायुज, अंडज पोतनिकै गर्भ ही जन्म है, ऐसौ नियम करिये तो औरनिके गर्भ जन्म भी है। ऐसा अर्थको प्रतिभास होय। अर शेषाणां सम्मूर्छनं या सूत्रतैं अवशेषनिकै सम्मूर्छन जन्म ही इष्ट है। तातैं विरुद्ध होय, यातैं जरायुजादिकनिकै ही गर्भ जन्म है ऐसौ नियम कियो है ॥१२॥ अबै चौतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो ये जरायुज, अंडज, अर पोत हैं जे तिनकै गर्भ जन्म अवधारण करिये है तो निश्चय करि उपपाद जन्म किनकै होय है। ऐसा प्रश्न उपजे है यातैं कहै है। सूत्रम्—

देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥

अर्थ—देव नारकीनिके उपपाद जन्म है। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—देवादिगत्यादय एवास्य जन्मेति चेन्न,, शरीरनिर्वर्त्तपुद्गलाभावात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, मनुष्य तथा तिर्यक् योनि छिन्नायु जो है सो कार्मण काय योगस्थ होत संतै देवादिगतिका उदयतैं देवादि नामको भजनेवारो होय है, ऐसैं करि वो ही वाको जन्म है ऐसैं मानै हैं सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर शरीरकी रचना करनवारे पुद्गलनिका अभावतैं, क्योंकि देवादि शरीरकी रचनानैं होतां संतां ही निश्चय करि देवादि जन्म इष्ट है अर वा कार्मण योगस्थ अवस्थाके विषैं अनाहारक पणांतैं देवादि शरीरकी रचना ही है, तातैं उपपाद ही जन्म युक्त है। अर वो उपपाद जन्म देव नारकीनि

के ही है ॥ १ ॥ अबै पैंतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ऐसैं है तो दिखाये हैं जन्मके भेद जिनके ऐसे जरायुजादिक जे है तिनतैं अन्य जे हैं तिनकै कौनसो जन्म है, ऐसौ प्रश्न उपजे है, यातैं कहै है। सूत्रम्—

शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥ ३५ ॥

अर्थ—पूर्वोक्तनितैं अवशेष जे हैं तिनकै सम्मूर्छन जन्म है। वार्त्तिक—उभयत्रनियम. पूर्ववत् ॥ १ ॥ अर्थ—दोऊ ही योगनिमें पूर्ववत् नियम जानने योग्य है कि देव नारकीनिकै ही उपपाद जन्म है अर अवशेषनिकै ही सम्मूर्छन जन्म है अर और कहे जे जरायुज अंडज पोत देव नारकी तिनकै सम्मूर्छन जन्म नहीं है। प्रश्न, ऐसैं कैसैं जानिये है? उत्तर, पूर्वोक्त दोऊ सूत्रनिमें ही जन्मको नियम है। जन्मवान जीवनको नियम नहीं है ऐसैं या सूत्रमें शेषपदका ग्रहण है तातैं जानिये है कि दोऊ पूर्वोक्त सूत्रनिमें जन्मका ही नियम है। तातैं जरायुज, अंडज, पोत जे हैं तिनके ही गर्भ जन्म है। अर देव नारकीनिकै ही उपपाद जन्म है। ऐसा निश्चय रूप अर्थके विषैं गर्भ अर उपपाद ये दोऊ जन्म नियमरूप है अर जरायुजादिक जीव जे हैं ते नियमरूप नहीं है क्योंकि तिनकैं सम्मूर्छनादिक भी प्राप्त होय है। यातैं शेषपद ग्रहण करिये है क्योंकि शेषनिकै ही सम्मूर्छन जन्म है। अर जरायुजादिकनिकै सम्मूर्छन जन्म ही है ऐसो अवधारणको अर्थ है। अर जो निश्चय करि जन्मवाननिको नियम होय तो जरायुज अंडज पोत जे हैं तिनकै गर्भ ही जन्म है अर देव नारकीनिकै उपपाद ही जन्म है ऐसैं गर्भ उपपाद जन्म जे हैं तिनका अनवधारणतैं जहां सम्मूर्छन जन्म है तहां अन्य जन्म भी प्राप्त होय है अर तहां सम्मूर्छन ही है ऐसा नियमतैं शेष पदको ग्रहण अनर्थक होय तातैं जन्मवान प्रति नियम नहीं है। प्रश्न, यो सूत्र अनर्थक है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, पूर्वोक्त दोऊ सूत्रनिके विषैं दोउ तरह नियमनै होतां संता

जरायुजादिकनिकै गर्भ उपपाद जन्मनिका व्यभिचारनैं नहीं होतां संतां अवशेषनिकै ही सम्मूर्छन जन्म है ऐसो उत्सर्ग कहिये विधान तिष्ठै है। एसैं कहिये कि वो ध्वनितैं प्राप्त भयो जो नियम है ताकै दोय रूप होनौं दुर्लभ है। तातैं जो वो नियम है, ताकै एक पणातैं जन्ममें अथवा जन्मवाननिमैंसूं एक मैं ही नियम आश्रय करिवे योग्य है। अर एकरूप नियमनैं होतां संतां यो सूत्र आरम्भ करने योग्य होय है॥ १॥ अवैं छत्तीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है। कि तीन प्रकार हैं जन्म जिनके अर ग्रहण किये हैं बहुत विकल्प रूप नव योनिके भेद जिननैं ऐसै वे संसारी जे हैं तिनकै शुभाशुभ नाम कर्म करि रचे अर बंधको फल जो है ताका अनुभवन करनेके स्थान ऐसे शरीर जे हैं ते कितने हैं ऐसो प्रश्न होत संतै कहे है। सूत्रम्—

औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥

अर्थ—औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण ये पांच शरीर हैं। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—शीर्यन्ते इति शरीराणि घटाद्यति प्रसंग इति चेन्न नामकर्मनिमित्तत्वाभावात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, जे शीर्यन्ते कहिये विघटन शील होय ते शरीर कहिये है तो घटादिकनिके भी विसरण कहिये विघटनो है। तातैं शरीर पणौं अति प्रसंगरूप होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, नाम कर्म निमित्त पणांका अभावतैं कि शरीर नाम कर्मका उदयतैं शरीर पणौं है सो घटादिकनिकै विषैं नहीं है। यातैं अतिप्रसग नहीं है॥१॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—विग्रहाभाव इति चेन्न रूढिशब्देष्वपि व्युत्पत्तौ क्रियाश्रयात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, जो शरीर नाम कर्मका उदयतैं शरीर नाम है तो शीर्यंत इति शरीराणि ऐसो समास नहीं उत्पन्न होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, रूढि शब्दनिके विषैं भी व्युत्पत्तिके विषैं क्रियाका आश्रयतैं होय है यातैं सो जैसैं गच्छति इति गौ ऐसो समास करिये है तैसैं ही शीर्यन्ते इति शरीराणि ऐसो

समास होय है ॥ २ ॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—शरीरत्वादिति चेन्न तदभावात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, शरीरपणौं ऐसौ नाम समन्यस्वरूप जाति जो है ताको विशेष है ताका योगतैं शरीर है। नाम कर्मका उदयतैं शरीर नाम नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, सामान्य विशेषका अभावतैं शरीरमैं शरीरपणांनैं नहीं होत संतै अग्निकै समान नहीं जाननैंको प्रसंग आवै इत्यादि करि अर्थान्तर भूत जातिका सम्बन्धकी कल्पना खंडित करी है। यातैं शरीरतैं भिन्न शरीरपणौं नहीं है ॥ ३ ॥ वार्तिक—उदरास्थूलवाचिनो भवे प्रयोजने वा ठञ् ॥ ४ ॥ अर्थ-उदार नाम स्थूलका है, तातैं भव अर्थमें तथा प्रयोजन अर्थमें ठञ् प्रत्यय होत संतै औदारिक पद सिद्ध होय है ॥ ४ ॥ वार्तिक—विक्रियाप्रयोजनवैक्रियकम् ॥ ५ ॥ अर्थ—अष्ट गुण रूप ऐश्वर्यका योगतैं एक अनेक अणु महत् शरीर नाना प्रकार करणौं जो है सो विक्रिया है अर वा विक्रिया है प्रयोजन जाकौ सो वैक्रियक शरीर है ॥ ५ ॥ वार्तिक—आह्रियते तदित्याहारकम् ॥ ६ ॥ अर्थ—सूक्ष्म पदार्थका निर्णयके अर्थि तथा असंयमकी परिहारकी वांछा करि प्रमत्त संयतीनि करि आह्रियते कहिये रचिये सो आहारक है ॥ ६ ॥ वार्तिक तेजो निमित्तत्वात्तैजसम् ॥ ७ ॥ अर्थ— जो तेजको निमित्त है सो तैजस है, अथवा तेजके विषैं होय सो तैजस है। ऐसैं कहिये है ॥ ७ ॥ वार्तिक—कर्मणामिदं कर्मणासमूह इति कार्मणम् ॥८॥ अर्थ—कर्मनिको जो यो कार्य सो कार्मण है अथवा कर्मनिको समूह जो है सो कार्मण है सो कथंचित् भेदकी विवक्षाकी उपपत्तितैं कार्मण है ऐसैं कहिये है ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—सर्वेषां कार्मणत्व प्रसंग इति चेन्न प्रतिनियतौदारिकादिनिमित्तत्वात् ॥९॥ अर्थ—प्रश्न, कर्मनिको जो यो अथवा कर्मनिको समूह जो है सो कार्मण है ऐसैं कहिये है तो सर्व शरीरनिकै ही कार्मणपणौं तुल्य है। यातैं औदारादिकनिकैं भी कार्मण पणांको प्रसंग आवै। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर भिन्न भिन्न नियम रूप औदारिकादि शरीरनिकै निमित्त पणौं है यातैं कि औदारिक शरीर नामादिक कर्म भिन्न भिन्न नियम

रूप हैं। तिनका जो उदय ताका भेदतैं भेद है ॥ ६ ॥ तथा वार्तिक—तत्कृतत्वेप्यन्यत्वदर्शनात् घादिवत् ॥१०॥ अर्थ—अथवा जैसैं मृत्तिकाका पिंडरूप कारण जो है, ताका अवशेषनैं होतां संता भी घट शरावादिकनिके संज्ञा तथा अपना अपना लक्षण भेदतै भेद है तैसैं कर्मकृतपणांका अविशेषनैं होतां संतां भी औदारिकादि शरीरनिके संज्ञा अपना अपना लक्षण आदि भेदतैं भेद निश्चय करिये है ॥१०॥ तथा, वार्तिक—तत्प्रणालिकयाचाभिनिष्पत्तेः ॥११॥ अर्थ—अथवा कार्मण शरीरकी प्रणालिका करि औदारिकादि शरीरनिकी उत्पत्ति है यातैं कार्य कारणका भेदतै सर्व शरीरनिके कार्मण पणौं नहीं है ॥१॥ किंच-वर्त्तिक—विस्रसोपचयेन व्यवस्थानात् क्लिन्न गुडरेणुश्लेषवत् ॥१२॥ अर्थ—जैसैं वेस्रसिक परिणामात् कहिये स्वाभाविक परिणामतैं नर्म गुड़में मिली हुई रेणुकाको अवस्थान है, तैसैं ही कार्मण शरीरके विषै भी औदारिकादिकनिको वैस्रसिक उपचय करि अवस्थान है। ऐसैं पाचूं ही शरीरिनिके नाना पणौं सिद्ध है। प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—कार्मणमसन्निमित्ताभावदिति चेन्न निमित्तनिमित्तभावातस्यैव प्रदीपवत् ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, कार्मण नामा शरीर नहीं है, प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, निमित्तका अभावतैं क्योंकि जाको निमित्त नहीं है सो खरपिषाणके समान नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, कार्मण शरीरके ही प्रदीपक समान है कारण कार्य भाव है। यातैं सो जैसैं प्रदीप स्वरूप करि ही अपना प्रकाशनतै प्रकाश अर प्रकाशक है। तैसैं ही कार्मण शरीर ही आपको कारण कार्य रूप आप ही है ऐसैं सिद्ध है ॥ १३ ॥ तथा वार्तिक—मिथ्यादर्शनादिनिमित्तत्वाच्च ॥१४॥ अर्थ—अथवा कार्मण शरीरको निमित्त नहीं है। ऐसैं कहै है सो नहीं है। प्रश्न, तौ कहा निमित्त है ? उत्तर, मिथ्या दर्शनादि निमित्त कर्मण शरीर है। तातैं निमित्तका अभावतैं कर्मण शरीरको अभाव है ऐसैं कह्यो हुतो सो असिद्ध है ॥ १४ ॥ वार्त्तिक—इतरथा ह्यनिर्मोक्ष प्रसङ्गः ॥१५॥ अर्थ—जो कार्मण शरीर अनिमित्त है ऐसैं ग्रहण करिये तौ अनिर्मोक्ष ठहरै क्योंकि अहेतु-

कके विनाश हेतुपणांको अभाव है यातैं ॥ १५ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अशरीरं विशरणाभावादिति चेन्नोपचयापचय धर्मकत्वात् ॥१६॥ अर्थ—प्रश्न, जैसैं औदारिकादि शरीर विघटै है तातैं शरीर है तैसैं कार्मण शरीर नहीं विघटै है, तातैं याकै अशरीरपणौं है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? अपचय तो मिलनौ अर अपचय जो विघटनौं इनि दोऊ धर्म संयुक्त पणांतैं निमित्तका वशतैं निश्चय करि कर्मनिको आवनौं जावनौं निरन्तर है यातैं कर्मण शरीरकै भो विशरण है ॥ १६ ॥ वार्त्तिक—तद्ग्रुणमादावितिचेन्न तदनुभेदत्वात्। अर्थ—प्रश्न, कार्मण शरीरको ग्रहण आदिके विषैं करने योग्य है । प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, और शरीरनिको याकै आधारपणौं है यातैं, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वाकै अनुमेय पणौं है यातैं सो जैसैं घटादि कार्यकी उपलब्धितैं परमाणूं आदिको अनुमान करिये है, तैसैं औदारिकादि कार्यकी उपलब्धितैं परमाणू आदिको अनुमान करिये है क्योंकि कार्यलिङ्गं हि ऐसो वचन है यातैं ॥ १७॥ वार्त्तिक---तत एव कर्मणो मूर्त्तिमत्वं सिद्धं ॥१८॥ अर्थ--जातैं याको मूर्त्तिमान कार्य है तातैं ही कारणरूप कर्म जो है ताकै मूर्त्तिमान पणौं सिद्ध है क्योंकि अमूर्त्तिक निःक्रिय अदृष्ट आत्मगुण जे हैं तिन करि मूर्त्तिमान क्रियावान द्रव्यको आरम्भ युक्त नहीं है ॥१८॥ वार्त्तिक---औदारिक ग्रहणमादावतिस्थूलत्वात् ॥१९॥ अर्थ—यो औदारिक शरीर इन्द्रिय ग्राह्य पणांतैं अति स्थूल है तातैं याको आदिमें ग्रहण करने योग्य है॥१९॥उत्तरेषां क्रमःसूक्ष्मक्रमप्रतिपत्त्यर्थम् ॥२०॥ अर्थ--औदारिकतैं उत्तर वैक्रियादिक जे हैं तिनका पाठको अनुक्रमकै प्रतीतिकै अर्थ जानवे योग्य है। क्योंकि निश्चय करि परं परं सूक्ष्म ऐसैं कहैंगे यातैं ॥२० ॥ अबै सैंतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। कि जैसैं औदारिक शरीरको उपलब्धि इन्द्रियनि करि है तैसैं और शरीरनिकी उपलब्धि काहेतैं नहीं होय है ऐसा प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है॥

सूत्रम्---

परं परं सूक्ष्मम् ॥ ३७॥

अर्थ—सूत्रोक्त अनुक्रमतैं परैं परैं सूक्ष्म है॥ वार्त्तिक— परशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातो-व्यवस्थार्थगतिः ॥ १ ॥ अर्थ—यो पर शब्द अनेकार्थ वाची है सो कहूं तो व्यवस्था अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं पूर्वपरः कहिये यो पहिली है यो परै है। अर अन्य अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं पुत्रः पर भर्या कहिये अन्य पुत्र है, अन्य भार्या है ऐसैं जानिये है। अर कहूं प्रधान पणामें प्रवर्त्तै है कि जैसैं परं इयं कन्या कहिये या कुटुम्बके विषैं या कन्या प्रधान है ऐसैं जानिये है। अर कहूं जैसैं परं कहिये इष्ट धाममें प्राप्त भयो इत्यादि अर्थ में सूं इहां वक्ता की इच्छातैं व्यवस्था अर्थ ग्रहण करिये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—पृथग्भूतानां शरीराणां सूक्ष्मगुणेन वीप्सानिर्देशः ॥ २ ॥ अर्थ—संज्ञा लक्षण प्रयोजन आदि करि पृथग्भूत शरीर जे हैं तिनको सूक्ष्म गुणकरि वीप्सा रूप निर्देश करिये है कि परैं परैं सूक्ष्म है ॥ २ ॥ अवैं अड़तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो परैं परैं सूक्ष्म है तो प्रदेशसे भी परैं परैं निश्चय करि हीन होयंगे। ऐसी विपरीत प्रतीतिकी निवृत्तिके अर्थि कहै है। सूत्रम्—

प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥ ३८ ॥

अर्थ--तैजसतैं पूर्वके शरीर प्रदेशनितैं असंख्यात गुणवान है। वार्त्तिक---प्रदेशपरिमाणवः ॥१॥ अर्थ—जाकरि प्रमाण करिये ते प्रदेश हैं कि परमाणु है ते ही घटादिकनिके विषैं अवयवपणां करि ग्रहण करिये है, अथवा जिनकरि प्रमाण करिये ते प्रदेश है। तिनकरि ही आकाशादिक-निको क्षेत्र आदिको विभाग दिखाइये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक---प्रदेशेभ्यःप्रदेशतः ॥ २ ॥ अर्थ प्रदे-शनितैं होय सो प्रदेश कहिये इहां अपादान अर्थमें ही यरुहोचित या सूत्रतैं तसि प्रत्यय होय है ॥२॥ तथा वार्त्तिक--- प्रदेशैर्वा प्रदेशतः तसिप्रकरणेऽयादिभ्य उपसंख्यानमिति तसिः ॥३॥

अर्थ---प्रदेशनितैं होय सो प्रदेशतः कहिये। इहां तसि प्रकरणे कहिये तसि प्रकरणके विषैं आद्यादिभ्यः या सूत्रतैं तसि प्रत्यय होय करि प्रदेशत. पद सिद्ध होय है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक--संख्यानातीतो संख्येयः ॥ ४ ॥ अर्थ---संख्यान जो गणना ताकरि रहित होय सो असंख्येय है। अर असंख्येय रूप है गुणाकार जाको सो यो असंख्येय गुण है॥ ४ ॥ वार्त्तिक---परं परमित्यनुवृत्तेः प्राक्तैजसादिवचनम् ॥ ५॥ अर्थ---परं परं ऐसैं अनुवर्त्तै है ताकरि कार्माण पर्यन्त असंख्येय गुणपणांकी प्राप्तिनैं होतां संतां मर्यादाकरि निर्णयके अर्थि प्राक्तैजसात् ऐसैं कहिये है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक---प्रदेशतः इति विशेषणमवगाहक्षेत्रनिवृत्यर्थम् ॥६॥ टीकार्थ---प्रदेशनितैं परैं परैं असंख्यात गुणाकार युक्त है अर अवगाहन क्षेत्रतैं असंख्यात गुणाकारवान नहीं है। ऐसा अर्थ की प्रतीतिके अर्थि प्रदेशतः ऐसो विशेषण ग्रहण करिये हैं। या करि यो कहनौ है कि औदारिकतैं वैक्रियक असंख्यात गुण प्रदेशवान है। अर वैक्रियकतैं आहारक असंख्यात गुणैं प्रदेशवान है। प्रश्न, इहां गुणाकार कौनसो है? उत्तर, पल्यकी उपमा जाकूं ऐसो असंख्येय गुण भाग होती है। अर्थात् असंख्यातरूप पल्य जो है ता कौ गुणाकार है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक---उत्तरोत्तरस्य महत्वप्रसङ्गः इति चेन्न प्रचय विशेषाद्यः पिंडतूलनिचयवत् ॥ ७ ॥ अर्थ--प्रश्न, जो उत्तरोत्तर असंख्यात गुणा प्रदेश हैं तो परमाणुका महत्वपणांनैं होनौं योग्य है? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, प्रचय विशेष है यातैं सो लोहपिंड अर तूल निचय के समान है सो जैसैं लोहपिंडकै बहु प्रदेशीपणांनैं होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं है तैसैं ही उत्तर शरीर कै असंख्यात गुण प्रदेश पणांतैं होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं है तैसैं ही उत्तर शरीरके असंख्यात गुणप्रदेश पणांतै होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं बंध विशेषतैं जानने योग्य है ॥ ८ ॥ अबैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तैजसतैं प्राक् परैं परैं असंख्यात गुण प्रदेश कह्या तो उत्तरके दोऊ शरीरनिकै सम प्रदेश पणौं है या कुछ विशेष है, उत्तर,

कार्मण कै ही अप्रतिघात है। ऐसैं कैसैं कहिये है यातैं, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर, सर्वत्रको विवच्छित पणौं है यातैं, लोक पर्यन्त सर्वत्र तैजस कार्मणको प्रतिघात नहीं है। ऐसैं भी विशेष विवच्छित है। अर वैक्रियक आहारक कैं तैसैं सर्वत्र अप्रतिघात नहीं है॥ ३॥ अवैं इकतालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तैजस कार्मणकै अर वैक्रियक आहारक आदिनिकै इतनौं ही विशेष है या और भी कोऊ विशेष है। ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। अथवा आत्माकै अनादि पणातैं अर शरीरकै आदिमान पणातैं विकरण कहिये इन्द्रिय रहित आत्मा जो है ताकै प्रथम शरीरको सम्बन्ध कौन कृत हैं ऐसौ प्रश्न होत संतैं कहै है। सूत्रम्—

अनादिसम्बन्धे च ॥ ४१ ॥

अर्थ—आत्माके अनादिमान पणातैं अर शरीरके आदिमान पणातैं अतीन्द्रिय, अमूर्त्तिक आत्मा जो है ताकै आदिमान शरीरको सम्बन्ध कहा कृत है यातैं कहै है कि तैजस कार्मण शरीर अनादि सम्बन्ध रूप है। प्रश्न, च शब्दको ग्रहण कहा निमित्त है। उत्तर रूप वार्त्तिक—च शब्दो विकल्पार्थः ॥१॥ अर्थ—च शब्द जो है सो विकल्परूप अर्थके निमित्त जाननें योग्य है कि अनादि सम्बन्धरूप भी है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो कहिये है। वार्त्तिक—बंध-संतत्यपेक्षायानादिसम्बन्धः सादिश्च विशेषतो जीववृक्षवत् ॥ २ ॥ अर्थ—जैसैं बीजतैं वृक्ष उत्पन्न होय है। अर वीज वृक्षतैं उत्पन्न होय है, अर वा वीजतैं अन्य वृक्ष उत्पन्न होय है। ऐसैं कार्यकारणरूप सम्बन्ध सामान्य जो है ताकी अपेक्षा करि सम्बन्ध है। अर या वीजतैं यो वृक्ष है, अर, या वृक्षतैं यो वीज है ऐसैं विशेषकी अपेक्षा करि सादि सम्बन्ध है। ऐसैं ही तैजस कार्मण-कै भी वारंवार होता निमित्त नैमित्तक संततिकी अपेक्षा करि अनादि सम्बन्ध है। अर विशेषकी

अपेक्षा करि सादि सम्बन्ध है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—एकान्तेनादिमत्वेभिनवशरीरसम्बन्धाभावो निर्निमित्तत्वात् ॥ ३ ॥ अर्थ—जाके मतमें एकान्त करि आदिमान शरीर है ताके मतमें शरीर सम्बन्धकै पूर्व आत्यन्तिकी शुद्धिनैं धारण करितो जीव जो है ताकै अभिनव शरीरको सम्बन्ध नहीं होय। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, निर्निमित्तपणातैं ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—मुक्तात्माभावप्रसङ्गश्च ॥ ४ ॥ अर्थ अर एकान्त करि सादि सम्बन्ध मानिये तो जैसैं सादि शरीर अकस्मात् सम्बन्धनैं प्राप्त होय है तैसैं ही मुक्तात्माकै भी अकस्मात् शरीर सम्बन्ध होय। यातैं मुक्तात्माका अभाव प्रसङ्ग होय। वार्त्तिक—एकान्तनादित्वे चानिर्मोक्ष प्रसङ्गः ॥ ५ ॥ अर्थ—बहुरि एकान्तकरि शरीरनिकै अनादि पणौं कल्पना करिये तो तैसैं भी आकाशके समान जाकै अनादिपणो है ताको अन्त भी नहीं है यातैं कार्य कारणका सम्बन्धका अभावतैं निर्मोच प्रसंग आवै है। प्रश्न, अनादिरूप बीज वृक्षको संतान जो है ताकै भी अग्निका सम्बन्धनैं होतां संतां अन्त देख्यौ है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि ताकै एकान्त करि अनादिपणांका अभावतैं निश्चय करि जीव वृक्ष जे हैं ते दोऊ ही विशेषकी अपेक्षा करि आदि भाव है। तातैं कोऊ प्रकार करि अनादि सम्बन्ध रूप है। अर कोऊ प्रकार करि आदिमान सम्बन्धरूप है। ऐसौ कहनौं उत्तम है ॥ ५ ॥ अबै ब्यालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ये तैजस कार्मण दोउ शरीर कोऊ जीवकै ही है या सर्वकै अविशेष करि है ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

सर्वस्य ॥ ४२ ॥

अर्थ—सर्व संसारीकै है। वार्त्तिक—सर्वशब्दो निरवशेषवाची ॥ १ ॥ अर्थ—सर्व शब्द निरवशेषवाची है। तातैं निरवशेष संसारी जीव जो हैं तिनकै वे दोऊ ही शरीर हैं ऐसौ अर्थ है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—संसरण धर्म सामान्यादेकवचननिर्देशः अर्थ—संसरण धर्म जो जामनमरण-

धम सामान्य रूप ताका योगतैं एक वचनको निर्देश करिये है। अर जो कोऊ संसारीकै वे दोऊ शरीर नहीं होते तो संसारीपणौं ही याकै नहीं होतो ॥ २ ॥ अबैं तियालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि अविशेषरूप कहनैं तैं तिन औदारिकादिकनिकरि सर्व संसारीनिकैं युगपत् पणांकरि सम्बन्धका प्रसङ्ग होतां संतां संभवसे शरीरनिके दिखावनेके अर्थि यो कहै है। सूत्रम्—

तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥

अर्थ—तैजस कार्मणनैं आदि लेय एकैं काल एक जीवकै च्यार पर्यन्त शरीर होय है वार्त्तिक—तद्ग्रहणं कृतशरीरद्वयप्रतिनिर्देशार्थम् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रकरणमें आये जे तैजस कार्मण दोय शरीर तिनका प्रति निर्देशकै अर्थि तत् ऐसैं कहिये हैं ॥ १ ॥ वार्त्तिक—आदिशब्देन व्यवस्थावाचिनाशरीरविशेषणम् ॥ अर्थ—पूर्वसूत्रमें व्यवस्थित शरीर जे हैं तिनकी आनुपूर्वीका प्रतिपादन करि आदि शब्द करि विशेषण करिये है। अर्थात् वे दोऊ हैं आदि जिनके ते ये तदादि कहिये है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—पृथक्त्वादेव तेषां भाज्यग्रहणमनर्थकमिति चेन्नेकस्यद्वित्रिचतुःशरीरसम्बन्धविभागोपपत्तेः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, भाज्यानि कहिये पृथक् करने योग्य है, अर वे औदारिकादिक परम्परातैं तथा आत्मातैं लक्षण भेदतैं पृथक् भूत ही है यातैं भाज्य पदको ग्रहण अनर्थक है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, एक जीवकै दोय तथा तीन तथा चार शरीरका सम्बन्धको जो विभाग ताकी उपपत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि दोऊ आत्माकै तैजस कार्मण ये दोय शरीर हैं अर आत्माकै औदारिक, तैजस, कार्मण ये तीन शरीर है। अथवा वैक्रियक, तैजस, कार्मण ये तीन शरीर है, अर अन्यकै औदारिक आहारक, तैजस कार्मण शरीर है। ऐसै विभाग करिये है तातैं भाज्यपद सार्थक है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—युगपदिति कालैकत्वे ॥ ४ ॥ अर्थ—युगपत यो निपात कालका एक पणांमें देखवे योग्य है कि एक कालके

विषैं चार पर्यन्त ही शरीर ही है। अर काल भेदनैं होतां संतां पांच ही होय है॥ ४॥ वार्त्तिक—आङभिविध्यर्थः ॥ ५ ॥ अर्थ—आङ् यो शब्द अभिविधिके अर्थ देखिवे योग्य है, ता कारण करि च्यार भी कोऊ जीवकै होय है अर मर्यादा अर्थके विषैं आङ् शब्दनैं होतां संतां च्यार शरीर नहीं होय ॥५॥ प्रश्न, पांचू शरीर एकै काल काहेतैं नहीं होय है ? उत्तररूप वार्त्तिक—वैक्रियकाहारकयोर्युगपदसम्भवात्पंचाभाव । अर्थ—जा संयतीके आहारक शरीर है ताकै वैक्रियक नहीं है। अर जो देवनारकीके वैक्रियक शरीर है ताकै आहारक नहीं है यातैं युगपत् पंचनिको असम्भव है। ॥६॥ अबै चौवालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि फिर भी तिन शरीरनिका विशेषकी प्रतिपत्तिके अर्थि कहै है। सूत्रम्—

निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

अर्थ—अंतको शरीर कार्मण जो है सो निरुपभोग है। सूत्रकी अनुक्रमकी अपेक्षाके विषैं अन्तमैं होय सो अन्त्य कहिये और ए सो अन्तमैं तिष्ठनैं वारो कार्मण शरीर है सो निरुपभोग है। या वचनतैं अर्थापत्ति प्रमाणनैं या सिद्ध होय है कि और शरीर सोपभोग है। वार्त्तिक—कर्मादाननिर्जरा सुखदुःखानुभवनहेतुत्वात् सोपभोगमितिचेन्न विपक्षितापरिज्ञानात् ॥१॥ प्रश्न, कार्मण जो है सो काय योग करि कर्मतैं ग्रहण करै है, तथा निर्जरा करै है, अर सुख दुःखनैं अनुभव करै है। तातैं सोपभोग ही है निरुपभोग नहीं है। उत्तर सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर विवक्षितका अपरित्यागतैं कि विवक्षित उपयोग जो है तातैं नहीं जानि करि परनैं यो प्रश्न कियो है। प्रश्न, इहां यो कौनसो उपभोग विवक्षित है ॥१॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—इन्द्रिय निमित्त शब्दाद्युपलब्धिरुपभोगः ॥ २ ॥ अर्थ—इन्द्रियरूप प्रणाली करि शब्दादिकनिकी उपलब्धि जो है सो उपभोग है सो कार्मणकै नहीं है ऐसैं कहिये है अर विग्रह गतिके विषैं भी भाव इन्द्रियनिकी उपलब्धिनैं

होतां सतां द्रव्येन्द्रियकी निवृत्तिका अभावतैं शब्दादि विषयको जो अनुभव ताका अभावतैं निरुपभोग कार्मण शरीर है। ऐसैं कहिये है। प्रश्न, तैजस भी निरुपभोग तातैं वा सूत्रमें निरुपभोगमन्त्यं ऐसैं कैसैं कहिये है, यातैं उत्तर कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—तैजस्य योगनिमित्तत्वाभावादनधिकारः ॥ ३ ॥ तैजस शरीर योग निमित्त भी नहीं है। तातैं याको उपभोग विचारमें अधिकार नहीं है। तातैं योग निमित्त शरीर जे हैं तिनके विषैं अन्त्यको जो है सो निरुपभोग है अर और सोपभोग है यो अर्थ इहां विवक्षित है ॥ ३ ॥ अबै पैतालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तहां आम्नाय रूप किये हैं लक्षण जिनके ऐसे जन्म जे हैं तिनमें ये शरीर प्रगटपणातैं प्राप्त भये संतै अविशेष करि है या कुछ विशेष है, ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है, यातैं कहै हैं। सूत्रम्—

गर्भसम्मूर्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—सूत्र पठित अनुक्रमकी अपेक्षा करि आदिमें होय सो आद्य कहिये सो ऐसौ आद्य औदारिक है, यातैं जो गर्भज तथा सम्मूर्छनज है सो सर्व औदारिक देखने योग्य है। अबै छियालीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि औदारिकके अनन्तर जो कह्यौ है सो कौनसा जन्मके विषैं है ऐसौ प्रश्न उत्पन्न होय है। यातैं कहै हैं। सूत्रम्—

औपपादिकं वैक्रियकम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—औपपादिकके विषैं होय सो औपपादिक है। अर व्याकरणके मत है अध्यात्मादित्यादिक या सूत्रतैं औपपादिक शब्द सिद्ध होय है सो सर्व औपपादिक जे हैं ते वैक्रियक जानने योग्य है ॥ ४६ ॥ अबैं सैंतालीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है। जो औपपादिक वैक्रियक है तो जो औपपादिक नहीं है। ताकै वैक्रियक पणांको अभाव है ऐसौ प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है। सूत्रम्—

लब्धि प्रत्ययं च ॥४७॥

अर्थ—या सूत्रमें वैक्रियक ऐसो अभि सम्बन्ध प्राप्त होय है यातैं लब्धि है कारण जानैं ऐसो भी वैक्रियक है। वार्त्तिक—प्रत्ययशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातः कारणगतिः ॥१॥ अर्थ—यो प्रत्यय शब्द अनेकार्थ रूप है। तातैं कहूं ज्ञान अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं अर्थाभिधान प्रत्यया कहिये अर्थ अभिधान प्रत्यय तीनूं शब्द ज्ञानके वाचक हैं। अर कहूं सत्य पणांकैं विषैं प्रवर्त्तैं हैं प्रत्ययकूं 'कहिये सत्य करो अर कहूं कारणमें प्रवर्त्तै है कि मिथ्यादर्शनादिविरतिप्रमादकपाययोगा प्रत्यय कहिये मिथ्यादर्शन, अविरत, प्रमाद, कषाय, योग जे हैं ते बंधके कारण हैं तिनमें सूं इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रत्यय शब्द कारण पर्यायवाची जानने योग्य है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—तपोविशेषर्द्धि प्राप्तिर्लब्धिः ॥ २ ॥ अर्थ—तप विशेषतैं ऋद्धिकी प्राप्ति जो है सो लब्धि है। ऐसैं कहिये है। अर लब्धि है प्रत्यय कहिये कारण जाको सो लब्धि प्रत्यय है। प्रश्न, लब्धिमें अर उपपादमें कहा विशेष है? उत्तररूप वार्त्तिक—निश्चयकादाचित्कीकृतो विशेषोपलब्ध्युपपादयो. ॥३॥ अर्थ-निश्चय करि उपपाद जो है सो तो नियमकरि है, क्योंकि उपपादके जन्म :निमित्तपणौं है यातैं अर लब्धि जो है सो कादाचित्की है कि कोऊके कदाचित् होय है, क्योंकि उत्पन्न भयो अर विद्यमान जो है ताके उत्तर कालमें तप विशेषकी अपेक्षापणातैं होय है यातैं इनि दोऊनिमें यो विशेष है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—सर्व शरीराणां विनाशित्वाद्वैक्रियक विशेषानुपपत्तिरितिचेन्न विवक्षितो परिज्ञानात् ॥ ४ ॥ अर्थ—विक्रिया नाम विनाशका अर वा विनाशरूप विक्रिया सर्व शरीरनिकैं साधारणी है, क्योंकि सर्व शरीरनिके वारं वार उपचय अर अपचय धर्मवान् पणौं है यातैं, अथवा सर्व शरीरनिको उच्छेद है यातैं तातैं वैक्रियकके विषैं कोऊ विशेष नहीं है। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, विवक्षितका अपरिज्ञानतैं, क्योंकि इहां विक्रिया नाम विनाशको विवक्षित नहीं है। प्रश्न, तो कहा विवक्षित है? उत्तर, विविध करणा जो है सो विक्रिया है। अर

वा विक्रिया दोय प्रकार है। तहां एक एकत्व विक्रिया है। दूसरी पृथक्त्व विक्रिया है, तिनमें एकत्व विक्रिया तो अपना शरीरतैं अपृथग्भूत भाव करि, सिंह, व्याघ्र, कुरर, हंस आदि भाव करि विविध करणा है। अर पृथक् विक्रिया जो है सो अपना शरीरतैं अन्य पणां करि प्रासाद, मंडप आदि विविध करणा सो दोऊ विक्रिया भवनवासी व्यन्तर, ज्योतिषी, कल्पवासीनिकै है अर सोलमा स्वर्गतैं ऊपरिके वैमानिक सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जे है तिनके प्रशस्त रूप एकत्व विक्रिया ही है। अर नारकीनिके त्रिशूल, चक्र, खड्ग, मुद्गर, परशु, भिंडिपाल कीट आदि अनेक आयुधरूप षष्ठम नरक पर्यन्त है अर पृथक्त्व विक्रिया नहीं है। अर सप्तम नरकमें महा गो कीटक प्रमाण लाल वरण कुंथुरूप एकत्व विक्रिया है। अर अनेक आयुधरूप विक्रिया नहीं है। अर पृथक्त्व विक्रिया भी नहीं है। अर तिर्यंचनिमें मथुरादिकनिकै कुमारादि भावरूप प्रतिविशिष्ट कहिये निज जाति प्रमान विक्रिया है अर पृथक्त्व विक्रिया नहीं है, अर मनुष्यनिके तप विद्या आदिकी प्रधानतातैं प्रति विशिष्ट एकत्व तथा पृथक्त्व विक्रिया है ॥ ४ ॥ अबै अड़तालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है कि यो वैक्रियक शरीर ही लब्धिकी अपेक्षावान है या और भी है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहे है ॥ सूत्रम्—

तैजसमपि ॥४८॥

अर्थ- लब्धिप्रत्यय तैजस शरीर भी है। प्रश्न, वैक्रियकके अनन्तर आहारक कहने योग्य है, और अकाल प्राप्त तैजस इहां कहा निमित्त कहिये है? उत्तररूप वार्तिक—लब्धि प्रत्ययापेक्षार्थं तैजसग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्थ—लब्धि है कारण जानैं ऐसो इहां अनुवर्त्तै है तातै देखिकरि इहां तैजसको ग्रहण करिये है ॥ १ ॥ अबै गुणचासमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि वैक्रियकके अनन्तर जो उपदेश कियो है ताका स्वरूपका निर्द्धारणके अर्थि अर स्वामीके दिखावने निमित्त कहै है। सूत्रम्—

शुभं विशुद्धमव्याघति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥

अर्थ—शुभ, विशुद्ध, अव्याघाती, आहारक शरीर है सो प्रमत्त संयतीके ही होय है। वार्त्तिक—शुभकारणत्वाच्छुभव्यपदेशोनुप्राणवत् ॥ १ ॥ अर्थ— अन्न है कारण जिननैं ऐसैं प्राणनिमें होत संतैं अन्नको नाम प्राण है कि अन्नं वै प्राणः ऐसैं कहिये है, तैसैं शुभ है कर्म जाको ऐसौ आहारक काय योग जो है ताकूं कारण पणांतैं आहारक शरीर शुभ है, ऐसैं कहिये है। वार्त्तिक—विशुद्धकार्यत्वात् विशुद्धाभिधानं कार्पासतन्तुवत् ॥२॥ अर्थ—जसैं कार्पासका कार्य तन्तु जे हैं तिनके विषैं कार्पास नाम है कि कार्पासास्तं तव ऐसैं कहिये है। तैसैं निर्मल निरवद्य, विशुद्ध पुण्य कर्मका कार्यपणांतैं विशुद्ध ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—उभयतो व्याघाताभावादव्याघाती ॥ ३ ॥ अर्थ—नश्चय करि आहारक शरीर करि अन्यको व्याघात नहीं होय है, अर अन्य करि आहारक शरीरको भी व्याघात नहीं होय है। यातैं दोऊ तरै व्याघातका अभावतै अव्याघाती है ऐसैं कहिये है। वार्त्तिक—च शब्दस्तत्प्रयोजनसमुच्चयार्थः—अर्थ—आहारक शरीरको जो प्रयोजन ताका समुच्चयके अर्थ च शब्द करिये है सो ऐसै है कि कोउ समय लब्ध विशेषको जो सद्भाव ताका जाननके अर्थ है। अर कोऊ समय सूक्ष्म पदार्थका निर्द्धारके अर्थि अर संयमका परिपालन अर्थ भरतैरावत क्षेत्रके विषैं केवलीका विरहनैं होतां संता उत्पन्न भयो है संशय जाकै ऐसो हुवो संतो वा संशयको निर्णयके अर्थि महाविदेह क्षेत्रके विषैं केवलीका निकटमें जनावनेंको इच्छकतैं जो हूं ताके औदारिक शरीर करि महान् असंयम होय या हेतुतैं ज्ञानवान मुनीश्वर आहारक शरीरतैं रचै है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—आहारकमिति प्रागुक्तस्य प्रत्याम्नायः ॥ ५ ॥ अर्थ—या प्रकार आहारक है या अर्थको जनावनें निमित्त बहुरि आहारक शब्दको पाठ करिये है ॥ ५ ॥ वार्तिक—प्रमत्तसंयतग्रहणं स्वामिविशेषप्रतिपत्त्यर्थम् ॥ ६ ॥ अर्थ—जो मुनि आहारक शरीरनें

रचनेको आरम्भ करै है ता समय प्रमत्त गुणस्थानी होय है तातैं प्रमत्तसंयतस्य ऐसैं कहिये है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—इष्टतोवधारणार्थमेवकारोपादानम् ॥ ७ ॥ अर्थ—जैसै या प्रकार जानिये है कि प्रमत्तसंयतकै ही आहारक होय है, अन्यकैं नहीं होय है अर ऐसैं नहीं जानै कि प्रमत्त संयतकै आहारक ही है, ऐसैं औदारिकादिकनिकी निवृत्ति मति होय या अर्थके अवधारणके अर्थ एवकार है ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—एषां शरीराणां परस्परतः संज्ञास्वलक्षणस्वकारणास्वमित्वसामर्थ्य—प्रमाणक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरसंख्याप्रदेशभावाल्पबहुत्वादिभिर्विशेषोवसेयः ॥ ८ ॥ अर्थ—उक्त तथा अनुक्त अर्थ जे हैं तिनका संग्रहके अर्थि दो वार्त्तिक कह्यौ है तिनमें संज्ञातै अन्यपणौं ऐसे है कि औदारिक वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण नामके धारक पांच शरीर घट पटके समान भिन्न भिन्न नामके धारक है ॥ १ ॥ बहुरि निज लक्षणतैं नाना पणौं ऐसैं है कि स्थूल पणौं है लक्षण जाको सो औदारिक है अर विविध ऋद्धि गुण युक्त फैलनो है लक्षण जाको सो वैक्रियक है अर कष्ट करि जाननेमें आवै ऐसा सूक्ष्म पदार्थका तत्व निर्णय करनवारो है लक्षण जाको अहारक है। अर संख समान धवल प्रभा है लक्षण जाको सो तैजस है अर सो तैजस दोय प्रकार है। तहां एक निःशरणात्मक है अर दूसरो अनिशरणात्मक है। तिनमें औदारिक वैक्रियक आहारक देहके अभ्यन्तर तिष्ठतौ देहकी दीप्तिको कारण जो है सो अनिशरणात्मक है, अर उग्र चारित्रको धारक अति क्रोधित यती जो है ताके जीव प्रदेशनि करि संयुक्त बाहर निकसि दहन करने योग्यनै वेष्टित करि तिष्टतो निःपावक जो धान्यकी राशि अर हरित वस्तुता करि परिपूर्ण स्थानी कहिये हांडी जो है ताहि अग्निके समान पकावे है। अर दाह्यनै पकाय करि निमड़ै है अर यावत् अग्नि रूप दाह्य पदार्थ होय तावत् चिरकाल तिष्टै है सो यो निःसरणात्मक है। बहुरि सर्व कर्म अर सर्व शरीर उत्पन्न कारक है लक्षण जाको सो कार्मण है ॥ २ ॥ बहुरि निज कारणतैं अन्य पणौं ऐसैं है कि औदारिक शरीर नामा नाम कर्म

है कारण जानैं सो औदारिक है अर वैक्रियक शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानैं सो वैक्रियक है। अर आहारक शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानै सो आहारक है, अर तैजस शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानैं सो तैजस है। अर कार्मण शरीर नामा नामकर्म है कारण जानैं सो कार्मण है ॥३॥ बहुरि स्वामिभेदतैं अन्यपणौं ऐसो है कि औदारिक शरीर तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै है अर वैक्रियक शरीर शरीर देवनिकै है तथा नारकीनिकै तथा कोई कोई तेजकायनिकै तथा वायुकायनिकै तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चनिकैं तथा मनुष्यनिकैं होय है। प्रश्न, जीवस्थानमें योगनिका भंग वर्णनमें सप्तविध काय योगका स्वामीनिकी प्ररूपणांके विषैं औदारिक काय योग अर औदारिक मिश्रयोग तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै कहे हैं। अर देव नारकीनिकै वैक्रियक काययोग तथा वैक्रियक मिश्र काययोग कह्यौ है अर इहां तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै एक ही काययोग कहिये सो यो आर्ष विरोध है? उत्तर, यहां कहिये है कि यो विरोध नहीं है क्योंकि या ग्रन्थमें अन्य स्थलके विषैं उपदेश है यातैं, प्रश्न, व्याख्याप्रज्ञप्तीके दंडकविषैं शरीर भंगका वर्णनमें वायुकायनिकै औदारिक वैक्रियक तैजस कार्मण ये चार शरीर कहैं है, अर मनुष्यनिकै भी चार ही कहे हैं अर सूत्र पाठमें वैक्रियक शरीर औपपादिक तथा लब्धि प्रत्यय ही कह्यौ अर वायुकायकै नहीं कह्यौ है ऐसैं भी तिन दोऊ आर्षनिकै विरोध है? उत्तर, सो विरोध नहीं है, क्योंकि दोऊ आर्षनिकैं अभिप्राय युक्तपणौं है यातैं सो ऐसैं है कि जीवस्थानके विषैं सर्व देव नारकीनिकै सर्व कालमें वैक्रियक शरीरका दर्शनतैं ताका योगकी विधि है। अर तिर्यंचनिकै तथा मनुष्यनिकै लब्धि वैक्रियक है सो समस्तनिकै कादाचित्क पणातैं सर्व काल नहीं है ऐसो अभिप्राय तौ सूत्रकारको है अर व्याख्याप्रज्ञप्तिके विषैं अस्तित्वमात्रतैं अभिप्रायसें करि कह्यो है। अर आहारक शरीर प्रमत्त संयतीकै है अर तैजस कार्मण शरीर सर्व प्राणनिकै है ॥ ४ ॥ बहुरि सामर्थ्यतैं अन्य पणौं ऐसैं है कि औदारिककी सामर्थ्य भव

प्रत्यय तथा गुण प्रत्ययरूप दोय प्रकार है तिनमैं तिर्यक् मनुष्यनिकै भव प्रत्यय सामर्थ्य है सो सिंह अष्टापद आदिकनिकै अर चक्रवर्त्ती वासुदेव आदिकनिकै प्रकृष्ट अवकृष्ट वीर्यका दर्शनतैं है अर प्रकृष्ट तपो वलवान ऋषीश्वरनिकै जो शरीरकी विवध करण सामर्थ्य है सो गुण प्रत्यय है। प्रश्न, यो सामर्थ्य तपको है, औदारिक शरीरको नहीं है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि औदारिक शरीर विना केवल तपकै शरीरका विविधकरणकी सामर्थ्यको अभाव है यातैं, अर वैक्रियककी सामर्थ्य को मेरुको प्रचलन तथा सकल पृथिवी मंडलको उद्वर्त्तन आदि करनैं रूप है, अर आहारको सामर्थ्य अप्रतिहत वीर्य पणौ है। प्रश्न, वैक्रियकके भी अप्रतिहत सामर्थ्य है क्योंकि वज्रपटल आदिके विषैं अप्रतिघातको दर्शन है यातैं? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि इन्द्र-सामानादिकनिकै प्रकर्ष अप्रकर्षरूप सामर्थ्यको दर्शन है यातैं अर अनन्तवीर्य यति करि इन्द्रका वीर्यको प्रतिघात सुनिये हैं यातैं विक्रिया सम्बन्धी सामर्थ्य प्रतिघात रूप है अर आहारक शरीर जे हैं ते तुल्य वीर्य पणांतैं अप्रतिघात वीर्य रूप है। अर तैजसको सामर्थ्य कोप प्रसादकी अपेक्षा सहित दाह अर अनुग्रहरूप है। अर कार्मणकी सामर्थ्य सर्व कर्मनिकूं अवकाशदानरूप है ॥५॥ वहुरि प्रमाणतैं कहिये परिमाणतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि सर्व जघन्य करि अंगुलका असंख्यातमा भाग प्रमाण सूक्ष्म निगोत याको औदारिक शरीर है। अर उत्कर्षकरि किंचित् अधिक एक हजार योजन प्रमाण नंदीश्वर द्वीपकी वावड़ीमें कमलको औदारिक शरीर है। अर वैक्रियक शरीर मूल शरीरतैं तो जघन्य करि एक हाथ प्रमाण सर्वार्थसिद्ध देव जे हैं तिनके है। अर अनुत्कर्षकरि पांचसौ धनुष प्रमाण तमस्तमः प्रभा नामा सातमी प्रथ्वीमें नारकीनिको है। अर विक्रियाकरि देव उत्कर्षकरि जम्बूद्वीप प्रमाण शरीर वनावै है। अर आहारक शरीर एक हाथ प्रमाण है अर तैजस कार्मण शरीर जे हैं ते जघन्य करि जा समय ग्रहण किया औदारिक शरीर है ता समय ता प्रमाण है, अर उत्कर्ष केवलि समुद्घातमैं सर्वलोक प्रमाण है ॥६॥ वहुरि क्षेत्रतैं अन्य पणौं एक जीव अपेक्षा

ऐसें हैं कि औदारिक, वैक्रियक, आहाराक शरीर जे हैं ते तो लोकका असंख्यातमा भागका असंख्यतमाभाग मात्र क्षेत्रमे है, अर तैजस कार्माण जे हैं ते एक जीव की अपेक्षा लोकका असंख्यातमा भागका असंख्यातमा भागमें है। अथवा प्रतर तथा लोकपूर्ण समयमें सर्व लोकमें है ॥७॥ बहुरि स्पर्शतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि औदारिकादिकनिको एक जीवप्रति तो आगे कहैंगे। अर सर्व जीवनि प्रति कहिये है कि औदारिक शरीर करि तिर्यञ्चनि करि सर्वलोक स्पृष्ट है अर मनुष्यनि करि लोकको असंख्यातमूं भाग स्पृष्ट है, अर मूल वैक्रियक शरीर करि लोकको असंख्यातमूं भाग स्पृष्ट है, अर उत्तर वैक्रियक करि आठ राजू अर किंचित् घाटि चौदह भाग प्रमाण स्पृष्ट है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, सौधर्म स्वर्ग निवासी देव आय अन्य देवकी प्रधानतातैं आरण अच्युत स्वर्गमें विहार करवातैं षट् रज्जू जाय है, अर अपनी प्रधानतातैं वालुका प्रभा नाम तीसरी पृथ्वी पर्यन्त दोय रज्जू विहार करै है यातैं अष्ट रज्जू स्पृष्ट है, अर आहारक शरीर लोकका असंख्यातमा भागनैं स्पर्शै है अर तैजस कार्माणनि करि सर्व लोकनै स्पर्शै है ॥८॥ बहुरि कालतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि एक जीव प्रति तौ आगानें कहैंगे। अर सर्व जीवनि प्रति कहै है कि, मिश्रनै वर्जि करि औदारिकको तिर्यञ्च मनुष्यनिकै जघन्य करि अन्तमुहूर्त्त काल है, अर उत्कर्ष करि तीन पल्योपम अन्तर्मूहूर्त्त घाटि है सो अन्तर्मूहूर्त्त पर्याप्तिको काल जाननूं क्योंकि अपर्याप्ति अवस्थामें मिश्रपणौं है यातैं अर वैक्रियककै देवनिप्रति मूल वैक्रियक देहकै जघन्य करि दश हजार वर्ष है सो भी पर्याप्तको काल अन्तर्मूहूर्त्त जो है ता करि न्यून है। अर उत्कर्षकरि तेतीस सागरोपम है सो भी अपर्याप्तको काल अन्तमूहूर्त्त जो है ताकरि न्यून है। अर उत्तर वैक्रियकको जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मूहूर्त्त है। ऐसैं ही नारकीनिकूं जाननूं। प्रश्न, तीर्थंकरका जन्ममें तथा नंदीश्वर द्वीप सम्बन्धीअर्हदायन आदिका पूजनकै विषैं विशेष कैसैं है? उत्तर, पुनः पुनः विक्रियाका करवातैं संततिको व्यवच्छेद है अर आहारकको काल जघन्य तथा उत्कर्ष अन्तर्मूहूर्त्त है, अर तैजस

कार्मण दोऊ जे हैं तिनकौ काल संततिका उपदेशतैं अभव्यनिप्रति अनादि अनन्त है अर जे भव्य अनन्ता काल करि भी नहीं सिद्ध होहिंगे तिन कितनेक भव्यनिप्रति अनादि अनन्त काल है अर जे भव्य सिद्ध होहिंगे तिन प्रति अनादि सान्त है, अर निषेधनि प्रति एक समय है अर तैजसको छाछठि सागरोपम है, अर कार्मणाका कर्मको स्थिति सत्तर कोटा कोटि सागरोपम है ॥ ६ ॥ बहुरि अन्तरमें अन्यपणौं ऐसैं हैं कि औदारिकादिकनिकै एक जीव प्रति आगे कहैंगे। सो ऐसैं है कि मिश्रनैं वर्जिकरि औदारिककै जघन्य तो अन्तमूहूर्त्तको अन्तर है। प्रश्न, कौनसो अन्तर्मूहूर्त्त है? उत्तर, औदारिक मिश्रको काल है सो अन्तर्मूहूर्त्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, चतुरगतिमें भ्रमण करनवारो जीव तिर्यञ्चनिमें तथा मनुष्यनिमें उत्पन्न भयो तहां अन्तर्मुहूर्त्त पर्याप्त कह्यौ पर्याप्तक पणानैं पाय अन्तर्मुहूर्त्त जीवित रहिकरि मर्‌यौं। बहुरि तिर्यञ्चनिमेंसूं कोऊ एकके विषैं उत्पन्न भयो तहां अन्तर्मूहूर्त्तकी अपर्याप्तनैं अनुभव करि पर्याप्तक भयो। ऐसैं औदारिकको अन्तर लब्ध भयो। भावार्थ—पर्याप्तक भयो तहां ही औदारिक नाम पायौ अर उत्कर्ष करि तेतीस सागरोपम किंचित् अधिक है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, जो मनुष्य तेतीस सागरोपम देवायुकै विषैं उत्पन्न होय स्थितिनैं होतां संतां चय करि बहुरि मनुष्यनिमें उत्पन्न होय ताके योग्य अपर्याप्तक काल है। ताकरि अधिक तेतीस सागरोपम होय है, अर वैक्रियककै जघन्य अन्तर अन्तर्मूहूर्त्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, मनुष्य अथवा तिर्यञ्च मरि करि दश हजार वर्षकी है आयु जिनमैं तिनमैं उत्पन्न होय चयौ अर मनुष्यनिमें तथा तिर्यंचनिमें उत्पन्न होय अपर्याप्तकालनैं अनुभव करि बहुरि देव आयु बांधि देवनिमें उत्पन्न होय ताकै अन्तर्मूहूर्त्तको अन्तर लब्ध होय है और वैक्रियकको उत्कर्ष करि अन्तर अनन्तकाल प्रमाण है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, देव होय करि चयो अर तिर्यंच मनुष्यनिमें अनन्त काल परिभ्रमण करि देव उत्पन्न भयो सो अपर्याप्त कालमें अनुभव करि वैक्रियक शरीरनैं प्राप्त होय है। ताकै अनन्त कालको

अन्तर लब्ध होय है। अर आहारकको जघन्य अन्तर्मूहूर्त्त प्रमाण है। प्रश्न कैसैं? उत्तर, प्रमत्त संयत जो है सो आहारक शरीरनैं रचि अन्तरमूहूर्त्त आहारक शरीर सहित स्थिति रहि करि प्रकरणमें आया आहारक शरीरका कार्यनैं समेट करि लब्धिकी निकटतातैं अन्तर्मूहूर्त्त स्थिति रहि करि बहुरि रचै है ऐसैं अन्तर अन्तर्मुहूर्त्तको लब्ध होय है, अर उत्कर्ष करि अर्द्धपुद्गल परिवर्त्तनके अन्तमूहूर्त्त घाटि अन्तर है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, जो अनादि मिथ्यादर्शन मोहनैं उपशमाय उपशम सम्यक्त्वनैं अर संयमनैं युगपत् प्राप्त भयो बहुरि उपशम सम्यक्त्वतैं च्युत भयो संतो वेदक सम्यक्त्व करि सहित उत्पन्न होय अर्थात् वेदक सम्यक्त्वी होय। अन्तर्मुहूर्त्त स्थिति रहितो होतो संयत अप्रमत्त समत स्थानके विषैं आहारक शरीर सम्बन्धी नो कर्मनैं बांधि ता पीछे प्रमत्त संयत होत संतैं आहारकनै रचि मूलशरीरमें प्रवेश करि मिथ्यात्वनैं प्राप्त होय सो अर्द्ध पुद्गल परिवर्त्तन किंचित् घाटि संसारमें परि भ्रमण करि मनुष्यनिमें उत्पन्न होय। पूर्व विधि सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करि असंयत सम्यग्दृष्टि तथा संयतासंयत सम्यग्दृष्टी गुणस्थान जे हैं तिनमें सूं कोऊ एक कै विषैं दर्शनमोहनैं क्षपाय संयमनै प्राप्त होय। अप्रमत्त आहारकको बंध करने वारो प्रमत्त होत संतैं आहारकनैं रचे है। ऐसैं केई अन्तमुहूर्त्त घाटि अर्द्ध पुद्गल परिवर्त्तन प्रमाण अन्तर लब्ध होय है। प्रश्न, इहां जे प्रथमका च्यार अन्तर्मुहूर्त्त कहे ते कोनसे हैं? उत्तर, प्रथम तो दर्शन मोहोपशम सम्यत्क्व समान काल संयम कह्यो सो अन्तमुहूर्त्त है। अर दूसरा वेदक सम्यक्त्वको अन्तमुहूर्त्त है, अर तीसरो आहारक बंध कह्यो सो अन्तर्मुहूर्त्त है, अर चौथो आहारकको रचन कह्यौ सो अन्तर मुहूर्त्त है, अर उत्तर कालमें आहारक शरीरका कार्यको अन्तर्मुहूर्त्त पंचम है। अर मूल शरीरमें वेश करि प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थाननि करि अनेक वार उतार चढ़ावनै अनुभव करतां बहुत अन्तमुहूर्त्त होय है। यातैं परें अधःप्रवृत्तिकरणकी विशुद्धिकरि विशुद्ध हुवो संतौ विश्रामनैं प्राप्त होय है। अर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म साम्पराय-

णीय कषाय, संयोग केवली अयोगकेवली इनिमें एक एक अन्तर्मुहूर्त्त होय है। तातैं इतना काल करि हीन अर्द्ध पुद्गल परिवर्त्तन प्रमाण अन्तर लब्ध है, अर तैजस कार्माण जे हैं तिनमें अन्तर नहीं है क्योंकि सर्व संसारीनिकै विषैं सर्व काल निकट रहे है यातैं ॥ १० ॥ बहुरि संख्यातैं अन्यपणौं ऐसैं है कि औदारिक शरीर असंख्यात लोक प्रमाण है। अर वैक्रियक असंख्यात श्रेणी प्रमाण है। प्रश्न, असंख्यात श्रेणी किसकूं कहौ हो। उत्तर, लोकप्रतरको असंख्यातमूं भाग है अर आहारक संख्याते हैं। प्रश्न, इहां संख्यात कौनसौ है, उत्तर, चौवन प्रमाण है, अर तैजस, कार्मण अनन्ते हैं। प्रश्न, इहां अन्तर कौनसो है? उत्तर, अनन्तानन्त लोक प्रमाण है ॥ ११ ॥ बहुरि प्रदेशतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि औदारिकका अनन्त प्रदेश है। प्रश्न, इहां अनन्त कौनसा है? उत्तर, अभव्यनितैं अनन्तगुणा तथा सिद्धनिके अनन्तमें भाग है। या ही प्रकार अवशेष चार शरीर जे हैं तिनके उत्तरोत्तर अधिक है क्योंकि अनन्तके अनन्त विकल्प पणौं है यातैं अर अधिकपणांको प्रमाण पूर्वैं कह्यो है ॥ १२ ॥ बहुरि भावतैं अन्यपणौं ऐसो है कि औदारिकादि शरीर नाम कर्मका उदयतैं सर्व ही औदयिक भाव है ॥ १३ ॥ बहुरि अल्प बहुत्वतैं अन्य पणौं ऐसैं है कि सर्वतैं स्तोक तो आहारक है अर वैक्रियक असंख्यातगुणे है। प्रश्न, इहां कौनसा असंख्यातको गुणकार है? उत्तर, असंख्यात श्रेणी जो लोक प्रतरको असंख्यातमूं भाग है सो गुणकार है तातैं औदारिक शरीर जे हैं ते असंख्यात गुणा है। प्रश्न, इहां गुणकार कौनसो है? उत्तर, असंख्यात लोक प्रमाण है अर तैजस कार्माण जे हैं ते अनन्तगुणे है। प्रश्न, इहां गुणकार कौनसो है? उत्तर, सिद्धनितैं अनन्त गुण प्रमाण है ॥ १४ ॥ ४६ ॥ अवैं पचासमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि आत्माके आश्रित कार्मण जो है ताका निमित्त करि कैसैं जे शरीर तिनने धारण करने अर इन्द्रियनिका सम्बन्ध प्रति विकल्पकूं भजन वारे चतुर्गतिका विकल्प रूप संसारी जे हैं तिनके प्राणी प्राणी प्रति तीनू

लिंगनिको निकट पणौं है यां कछू लिंगको नियम है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है। यातै उत्तर कहे है। सूत्रम्—

नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥

अर्थ—नारक अर सम्मूर्छन जे हैं ते नपुंसक हैं। वार्त्तिक—धर्मार्थकाममोक्ष कार्यनरणान्नराः ॥ १ ॥ अर्थ—धर्म, अर्थ, काम मोक्ष है जिनके ऐसैं कार्य जे हैं तिननैं नृणन्ति कहिये प्राप्त होय ते नर हैं॥ १॥ वार्त्तिक—नरान् कायंतीति नरकाणि॥२॥ अर्थ—शीत, उष्ण रूप असाता वेदनीय जो है ताका उदय करि ग्रहण करी जो वेदना ताकरि नर जे हैं तिननैं कायंति कहिये शब्द करावै ते नरक हैं। अर्थात् इहां नर नाम मनुष्यको नहीं जानना ॥ २ ॥ वार्त्तिक—नृणंनीति वा ॥ ३ ॥ अर्थ—अथवा पाप करनेवाले प्राणीनिनैं आत्यन्तिक दुःखनैं प्राप्त करै ते नरक है। इहां कर्त्ता अर्थमें उणादिक अक् प्रत्यय होय नरक शब्द सिद्ध भयौ ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—नरकेषु भवा नारका ॥ ४ ॥ अर्थ—नरकके विषैं होय ते नारक कहिये ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—सम्मूर्छनं सम्मूर्छस्त एषामस्तीति सम्मूर्छिन ॥५॥ अर्थ—सर्व तरफतैं होना जो है सो सम्मूर्छन है अर जाकै सम्मूर्छ है सो संमूर्छिन है अर नारक तथा सम्मूर्छिन जे हैं ते नारकसंमूर्छिन है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक—नपुंसकवेदाशुभनामोदयान्नपुंसकानि ॥ ६ ॥ अर्थ—चरित्र मोहको विकल्प जो नो कपाय ताको भेद नपुंसक वेद जो है ताका अर अशुभ नाम कर्मका उदयतैं नहीं स्त्री तथा नहीं पुरुष ऐसैं नपुंसक हैं यातैं नारक अर सम्मूर्छिन जे है ते नपुंसक ही हैं यो नियम है अर वा नपुंसक भवके विषैं स्त्री पुरुष विषय मनोज्ञ शब्द, गन्ध, रूप, रस, स्पर्श बंध है निमित्त जानैं ऐसी अल्प भी सुख मात्रा नहीं है ॥ ६ ॥ अबैं इक्यावनमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है कि जो ऐसैं अवधारण करिये है तो अर्थापत्ति प्रमाणतैं ये कहे जे दोय तिननैं अन्य जे संसारी है तिन तीनके लिंग

पणौं है यातैं जहां नपुंसक लिंगको अत्यन्त अभाव है ताका प्रतिपादनिके अर्थि कहै है। सूत्रम्---

न देवाः ॥ ५१ ॥

अथ---देव जे हैं ते नपुंसक नहीं है। वार्त्तिक---स्त्रीपुरुषविषयनिरतिशयसुखानुभवनाद्देवेषु नपुंसकाभावः ॥ १ ॥ अर्थ---स्त्री सम्बन्धी तथा पुरुष सम्बन्धी जो निरतिशय कहिये व्यवच्छेद रहित शुभ गतिका अर शुभ नाम कर्मका उदय की है अपेक्षा जा विषैं ऐसा सुखनैं अनुभवै है, यातैं तिनके विषैं नपुंसक नहीं है सो आगानैं कहैंगे अवैं वावनमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि और संसारी कितने लिंगवान हैं ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है। सूत्रम्---

शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥

अर्थ—नारकी तथा नपुंसक तथा देव जे है तिनतैं अवशेष जे हैं ते तीनूं वेदवान हैं वेद है तीन जिनकै ते त्रिवेदा हैं। प्रश्न, वे तीन वेद कौनसे हैं? उत्तर, स्त्रीपणौं पुरुषपणौं नपुंसकपणौं है। प्रश्न, तिनकी सिद्धि कैसैं है? उत्तर रूप वार्त्तिक—नामकर्मचारित्रमोहनोकषायोदयाद्वेदत्रयसिद्धिः ॥ १ ॥ अर्थ—नाम कर्मका अर चारित्रमोहको विकल्प नो कषाय जो है ताका उदयतैं वेदत्रयकी सिद्धि है अर वेद शब्दकी निरुक्ति ऐसी है कि वेद्यत इति वेद.याको अर्थ ऐसो है कि अनुभव करिये सो वेद है। अर्थात् लिंग है सो लिंग दोय प्रकार है, तहां एक द्रव्य लिंग है। दूसरो भावलिंग है, तिनमें नामकर्मका उदयतैं योनि, मेहन, आदि जो है सो द्रव्यलिग है। अर नो कषायका उदयतैं भावलिंग है। तहां स्त्री वेदका उदयतैं जाकैं विषै गर्भ तिष्ठै सो स्त्री है, अर पुरुषवेदका उदयतैं सूते कहिये संतानिनैं उत्पत्ति करै सो पुरुष है। अर नपुंसक वेदका

उदयतैं दोऊ शक्ति करि विफल नपुंसक है। अथवा ये तीनूं रूढ़ि शब्द है अर रूढ़ि शब्दनिके विषैं क्रिया व्युत्पत्तिके अर्थ ही है सो जैसैं गच्छतीति गौ है अर जो निश्चय करि ऐसैं नहीं मानिये तो गर्भधारण आदि क्रियाकी प्रधानता होत संतैं तिर्यञ्च तथा मनुष्य बालक वृद्ध जे हैं तिनके विषैं तथा देवनिके विषैं तथा कार्मण योगमें तिष्ठते जे हैं तिनकैं विषैं गर्भ धारण आदिका अभावतैं स्त्रीपणां आदि नाम नहीं होय अर निश्चय करि तिन वेदनिमें स्त्री वेद तो अंगाराके समान है। अर पुरुष वेद तृणकी अग्निके समान है। अर नपुंसक वेद ईंटकी अग्निके समान है। अर ये तीनूं ही वेद अवशेष जो गर्भज तिनके हैं॥१॥५२॥ अबैं त्रेपनमा सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं कि जो ये जन्म योनि शरीर लिंगका सम्बन्धकरि ग्रहण कियो है विशेष जिननैं ऐसैं प्राणी देवादिक दिखाये ते विचित्र धर्म अधर्मके वशीकृत हुआ संतां चारूं गतिनिके विषैं शरीरनिनैं धारण करते संते यथाकाल उपभुक्त कियो है आयु कर्म जिननैं ऐसे हुये संतैं मूर्त्यन्तरनैं ग्रहण करे है, या अथवा काल भी ग्रहण करैं है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं उत्तर कहे है। सूत्रम्—

औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

अर्थ—उपपाद जन्म धारे तथा चरमोत्तम देहधारे तथा असंख्यात वर्षकी आयुके धारक अनपवर्त्यायुष हैं कि नहीं है आयुको अपवर्त्तन जिनके ऐसैं हैं। वार्त्तिक—औपपादिका उक्ताः॥ अर्थ—देव नारकी जे हैं ते औपपादिक हैं ऐसे पूर्वें कहे हैं॥ १॥ वार्त्तिक—चरमशब्दस्यान्तवाचित्वात्तज्जन्मनि निर्वाणार्हग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—चरम शब्द अन्त्यपर्यायवाची है यातैं चरम है देह जिनके ते ये चरम देहा कहिये कि पूर्ण भयो है संसार जिनके ऐसैं वाही जन्ममें निर्वाणके योग्य है जे ते चरम देह शब्द करि ग्रहण करिये है॥ २॥ वार्त्तिक—उत्तमशब्दस्योत्कृष्टवाचित्वा

च्चक्रधरादिग्रहणम् ॥ ३ ॥ अथ--यो उत्तम शब्द उत्कृष्ट वाची है यातैं उत्तम है देह जिनकै ते उत्तम देहा कहिये यातैं चक्रधरादिकको ग्रहण जानने योग्य है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—उपमाप्रमाणगम्यायुषोऽसंख्येयवर्षायुषः ॥ ४ ॥ अर्थ—गई है लौकिक संख्या जा विषैं अर उपमा प्रमाण जो पल्यादिक तिनकरि जानने योग्य ऐसौ आयु जिनके ते ये असंख्येय वर्षायुष तिर्यंच मनुष्यगतिमें उत्तर कुरू आदिमें उत्पन्न भये हैं ते हैं ॥४॥ वार्त्तिक—बाह्यप्रत्ययवशादायुषो ह्रासोऽपवर्त्तः ॥५॥ अर्थ—उपघातका निमित्त विष शस्त्र आदि जे हैं तिनकी निकटतानैं होतां संता ह्रास जो है सो अपवर्त्त है। ऐसैं कहिये है अर अपवर्त्तन करने योग्य है आयु तिनके ते ये अपवर्त्यायुष हैं। अर नहीं जे अपवर्त्यायुष ते अनपवर्त्यायुष है। अर ऐसैं औपपादिक कह्या अनपवर्त्यायुष अर निश्चयकरि तिनका आयुष बाह्य निमित्तका वशतैं अपवर्त्तरूप नहीं है ॥५॥ प्रश्न रूप वार्त्तिक—अन्त्यचक्रधरवासुदेवादीनामायुषोपवर्त्तदर्शनादव्याप्तिः ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, उत्तम देहके धारी चक्र धारादिक जे हैं ते अनपवर्त्यायुष है यो लक्षण अव्याप्ति है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अन्तको चक्रधर ब्रह्मदत्त जो है ताके तथा अन्तको वासुदेव कृष्ण जो है ताकै तथा इनके समान उत्तम देहने धारी और जे हैं तिनके बाह्य निमित्तका वशतैं आयुको अपवर्त्तन देखिये है ॥ ६ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—न वा चरमशब्दस्योत्तमविशेषणत्वात् ॥ ७ ॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, चरम शब्दके उत्तम विशेषण पणौं है यातैं चरम उत्तम है देह जिनके ते चरमोत्तम देहके धारी है यातैं ॥७॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—उत्तमग्रहणमेवेति चेन्न तदनिवृत्ते. ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें उत्तम पदको ही ग्रहण हो कि उत्तम देहा ऐसैं। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न कहा कारण ? उत्तर, वा पूर्वोक्त दोषकी अनिवृत्ति है यातैं यो कह्यो जो अव्याप्ति दोष सो वैसैं हो तिष्ठै है क्योंकि तिनकै भी उत्तम देहपणां है यातैं। तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—चरमग्रहणमेवेति चेन्न तस्योत्तमत्वप्रतिपादनार्थत्वात् ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न,

चरम पदको ही ग्रहण हो कि चरमदेहा ऐसैं ही सूत्र पाठ हो उत्तम पदका ग्रहण करि कहा प्रयोजन है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, वा चरम देहकै उत्तम पणांको प्रतिपादनार्थ पणौं है यातैं। अर्थात् वो चरम देह ही सब में उत्तम है सो अर्थ कहिये है अर कितनेकनिके चरम देहा ऐसो भी पाठ है, अर एक है जे हैं तिनकै नियम करि आयु अनपवर्त्य है, अर औरनिकै अनियम करि है ॥ ९ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अप्राप्तकालस्यमारणानुपलब्धेरपर्वताभाव इति चेन्न दृष्टत्वादाम्रफलादिवत् ॥ १० ॥ अर्थ—प्रश्न, अप्राप्त काल जो है ताका मरणकी अनुपलब्धि है यातैं-अपवर्त्तनके अभाव है ? अर, सो नहीं है क्योंकि आम्रफल आदिके समान दृष्टपणौं है कि जैसैं धारण कियो जो पाकको काल तातैं पहिली उपाय सहित उपक्रमको जो रचना विशेष तानैं होतां संता आम्रफल आदिके पकवो देखिये है तैसैं प्रमाणीक मरण कालतैं पहिली उदीरणा है कारण जानैं ऐसा आयुका अपवर्त्तन हैं ॥१०॥ वार्त्तिक—आयुर्वेदसामर्थ्याच्च ॥ ११ ॥ अर्थ—अथवा जैसैं अष्टांग आयुर्वेदकूं जाननेवारो वैद्य प्रयोगमें अति निपुण जो है सो यथाकाल वातादिका उदयतैं पहिली वमन विरेचन आदि करि नहीं उदीरणानैं प्राप्त भयौ श्लेष्मादिकनैं दूर करै है, अर अकालमृत्युका दूर हो वा निमित्त रसायननैं उपदेश करै है, अर जो ऐसैं नहीं है तो रसायनका उपदेशकै व्यर्थपणौं होय सो व्यर्थपणौं नहीं है यातैं आयुर्वेदको सामर्थ्यतैं अकाल मृत्यु है ॥ ११ ॥ वार्त्तिक—दुःखप्रतीकारार्थ इति चेन्नोभयथा दर्शनात ॥ १२ ॥ अर्थ—प्रश्न, दुःखका प्रतीकारके अर्थि अयुर्वेदकै सामर्थ्यक पणौं है, उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, दोऊ प्रकार देखवातैं निश्चयकरि उत्पन्न भया तथा अनुत्पन्नभया वेदनानैं होतां संतां भी चिकित्साका दर्शनतैं ॥ १२ ॥ वार्त्तिक—कृतप्रणाशप्रसङ्ग इति चेन्न दत्वैवफलं निवृत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, जो आकाल मृत्यु है तो कृत प्रणाश होयगो कि किया कर्मको फल दिया विना ही विनाशको प्रसंग आवेगो ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा

कारण ? कियो कर्म फल देयकरि ही निर्जरै है और विना किया कर्मको फल नहीं भोगैं है अर किया कर्मका फलको विनाश भी नहीं है क्योंकि विना किया कर्मको फल भी भोगे तो अनिर्मोक्षको प्रसंग आवै यातैं। अर किया कर्मका फलको विनाश होय तो दान, तप, संयम आदि क्रियाका आरम्भको विनाश होय यातैं। प्रश्न, तो कहा है ? उत्तर, कर्म जो है सो कर्त्ताके अर्थि फल देय करि ही निर्जरै है अर विततार्द्र पटशोषवत् कहिये फैल्यो जो आलो वस्त्र ताका सूकवाकै समान कियो कर्म यथा कालमें फल देय निजरै हैं। या प्रकार यो फल विशेष है ॥१३॥५३॥

इति श्रीमदकलङ्कदेवप्रणीते तत्त्वार्थ वार्त्तिके व्याख्यानालङ्कारे

तदपर नाम राजवार्त्तिक सागरोद्धृत तत्त्वकौस्तुभे

द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

या अध्यायके विषैं सूत्र त्रेपन हैं अर वार्त्तिक ३७० हैं तिनमें प्रथम सूत्र पर वार्त्तिक पच्चीस हैं अर दूसरा सूत्र पर वार्त्तिक तीन हैं अर तीसरा सूत्र पर वार्त्तिक चार हैं अर चौथा सूत्रपर वार्त्तिक सात हैं अर पांचमां सूत्र पर वार्त्तिक आठ हैं, अर छठा सूत्रपर वार्त्तिक ग्यारह हैं अर सातमा सूत्रपर वार्त्तिक गुणतालीस है, अर आठमा सूत्रपर वार्त्तिक चौवीस हैं, अर नवमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन हैं, अर दशमा सूत्रपर वार्त्तिक सात हैं। अर ग्यारमा सूत्रपर वार्त्तिक आठ हैं, और वारमा सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं। अर तेरमा सूत्र पर वार्त्तिक छै हैं, और चौदमा सूत्रपर वार्त्तिक चार हैं। अर परनमा सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं, और सोलमा सूत्रपर वार्त्तिक एक है अर सतरमा सूत्रपर वार्तिक सात हैं। अर अठारमा सूत्रपर वार्तिक चार है। अर उगणीशमा सूत्रपर वार्तिक दश है अर वीसमा सूत्रपर वार्तिक छै हैं। अर इकवीसमा सूत्रपर वार्तिक एक है। अर बाईसमा सूत्रपर वार्तिक पांच है। अर तेईसमा सूत्रपर वार्तिक पांच है। अर

चौबीसमा सूत्रपर वार्त्तिक पांच है। और पचीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं। और छब्बीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। अर सत्ताईसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है और अट्ठाईसमां सूत्रपर वार्त्तिक चार हैं। और गुणतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक दोय है और तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक ८ हैं। और इकतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक ग्यारा है, और बत्तीसमां सूत्रपर सत्ताइस है। और तेतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक बारा है। और चौतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। अर पैंतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और छत्तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक वीस है। और सेतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक दोय है। और अड़तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। अर गुणतालीसमां सूत्रपर वार्त्तिक पांच है अर चालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन है। और इकतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक पांच है। और ब्यालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक दोय है। और तितालीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। और चवालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन है और पैंतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक नहीं है। और छियालीसमा सूत्रपर वार्तिक नहीं है। और सैंतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक चार है। और अड़तालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और गुणचास सूत्रपर वार्त्तिक आठ है। और पचासमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। और इक्यावनमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और बावनमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और तिरेपनमा सूत्रपर वार्त्तिक तेरा हैं। तिनकी भाषामय वचनिका रूप अर्थ पंडित फतैलालजीकी सम्मतितैं श्रीमज्जिनवच प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवाल ज्ञानावरण कर्मका क्षय निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है और या अध्याय दूसरीमें संख्या श्लोक ४८०० है।

ग्राहक है तातैं जा समय यो उदीच्य है ऐसैं अवाय करै है वा समय यो दक्षिण दिशा निवासी नहीं है ऐसैं अपाय शब्द अर्थ करि ग्रहण कियो होय है। इहां कोऊ कहै है कि तुम जैनिनिनें कह्यो कि विषयका अर विषयीका मिलापनें होतां संता दर्शन होय है अर दर्शनके अनंतर ही अवग्रह होय है सो अयुक्त है क्योंकि दोउनिके विलक्ष पणौं नहीं है यातैं अर्थात् अवग्रहतैं विलक्षण दर्शन नहीं है। इहां उत्तर कहिये हैं कि तुमने कह्यो सो नहीं है क्योंकि दोउनिके विलक्षण पणौं है यातैं। प्रश्न, कैसैं? उत्तर,या विचारमें चक्षु दर्शनावरणका अर वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं अर अंगोपांग नामा नाक कर्मका लाभतैं नहीं प्रगट भई है विशेष सामर्थ्य जाकी ऐसा नेत्रकरि कछुयेक या वस्तु है ऐसैं अनाकार आलोकन जो है सो दर्शन कहिये है सो बालकका उन्मेषके समान है कि जैसैं जन्मता बालकके यो प्रथम भयो अवलोकन जो है सो नहीं प्रगट भया रूप द्रव्य विशेषका आलोचनतैं दर्शन कहिये है तैसैं ही सर्वके जाननो ता पीछे दोय तीन समयमें भया अवलोकनके विषैं चक्षु अवग्रह नामा मतिज्ञानावरणका तथा वीर्यान्तरायका क्षयोपशमतैं तथा अंगोपांग नामा नाम कर्मका लाभतैं यो रूप है ऐसैं निर्णय रूप भयो विशेष जो है सो अवग्रह है कि चक्षु अवग्रह है। बहुरि और सुनूं कि जो प्रथम समयमें अवलोकन करता बालकके जो दर्शन भयो है सो तिहारे अभिप्रायमें अवग्रहका जातिपणांतैं ज्ञान इष्ट है तो कहो हो कि वो ज्ञान मिथ्याज्ञान है कि सम्यग्ज्ञान है जो मिथ्याज्ञान है तो वाके मिथ्याज्ञान पणांनैं होतां संता भी संशय विपर्यय अनध्यवसाय स्वरूप पणौं होय तिनमें प्रथम ही संशय विपर्यय स्वरूप तो नहीं है क्योंकि च ष्ठित जो दर्शन ताकै सम्यग्ज्ञान कारण पणांतैं तथा प्रथम समयमें होवा पणांतैं वो संशय विपर्यय नहीं है। भावार्थ—दर्शन सम्यक्ज्ञानका हेतुतैं तातैं संशय विपर्यय रूप नहीं है तथा दर्शन तो प्रथम समयमें होय है अर संशय तथा विपर्यय दर्शनके भये पीछे पीछे वाके सदृश द्रव्यको स्मरण भये पीछे होय है तातैं संशय विपर्यय स्वरूप दर्शन नहीं है अर अनध्यवसाय रूप भी नहीं है क्योंकि अर्थका आकार जे हैं तिनका आलंबनको अभाव है यातैं ॥ १३ ॥

किंच, वार्तिक—कारणानानात्वात्कार्यनानात्वसिद्धेः ॥ १४ ॥ अर्थ—कारणका नाना पणातैं कार्यके नाना पणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—जैसैं मृत्तिका रूप तथा तंतुरूप कारणका भेदतैं घट रूप तथा पट रूप कार्यमें भेद है तैसैं दर्शनावरणका अर ज्ञानावरणका क्षयोपशमरूप कारणका भेदतैं उनके कार्य दर्शन जे हैं तिनके भी भेद है अर अवग्रहतैं पूर्व दर्शन होय है तातैं शुक्ल कृष्ण आदि रूप विज्ञानकी सामर्थ्य सहित आत्मा जो है ताकै यो शुक्ल है कि कृष्ण है इत्यादि विशेषकी अप्रतिपत्तितैं संशय होय है ता पीछैं शुक्ल कृष्णका विशेष जाननेकी वांछा प्रति उद्यम जो है सो ईहा है ता पीछे यो शुक्ल ही है कृष्ण ही है ऐसैं निश्चय होना जो है सो अवाय है अर निश्चय भया अर्थका अविस्मरण जो है सो धारणा है ऐसैं श्रोत्रादिकनिके विषैं तथा मनके विषैं भी जोड़ने योग्य है क्योंकि, तिन तिनका आवरण रूप कर्मका क्षयोपशम स्वरूप विकल्पतैं भिन्न भिन्न अवग्रहादि ज्ञानावरणका भेद इष्ट करिये है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, ज्ञानावरण मूल प्रकृति है ताकी पांच उत्तर प्रकृति है तिनकी भी उत्तरोत्तर प्रकृति विशेष है सो ही प्राचीन आगम है कि ज्ञानावरणस्योत्तरप्रकृतय असंख्येयालोकाः, याको अर्थ ऐसो है कि ज्ञानावरण की उत्तर प्रकृति असंख्यात लोक प्रमाण है या वचनतैं। प्रश्न, ईहादिकनिकै अमतिज्ञानको प्रसंग आवै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, उत्तरोत्तर कार्य पणातैं सो ऐसैं है कि अवग्रह तो कारण है अर ईहा कार्य है। बहुरि ईहा कारण है अर अवाय कार्य है। बहुरि अवाय कारण है अर धारणा कार्य है अर ईहादिकनिके इंद्रिय अनिंद्रिय निमित्त पणौं नहीं है? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि ईहादिकनिके अनिंद्रिय निमित्त पणौं है यातैं मतिज्ञान नाम है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो श्रुतज्ञानकै भी मतिज्ञानको प्रसंग प्राप्त होय है क्योंकि श्रुतज्ञान भी अनिंद्रिय निमित्त है यातैं उत्तर, इंद्रिय करि ग्रहण किया पदार्थकै ही ईहादिकनिको विषय पणौं है यातैं ईहादिकनिकै इंद्रिय निमित्त पणानैं भी उपचार रूप करिये है अर श्रुतज्ञानकै या विधि नहीं है क्योंकि वाकै

अनिंद्रिय विषय मात्र पणों है यातैं। श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। प्रश्न, जैसैं चक्षु आदि इंद्रियनितैं अवग्रह आदि भये पीछे ईहादिक होय हैं तैसैं ही चक्षु आदि इंद्रियनितैं एक घट आदि पदार्थनें जाणि अनेक देशकाल संबधी वाके सजातीय तथा विजातीय घट आदि पदार्थनें जाणै सो श्रुतज्ञान है यातैं श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग आवै है? उत्तर, ईहादिकनिके तो विषय वो ही है कि जो नेत्र आदिके गोचर भयो अर श्रुत ज्ञानके विषय वो ही है जो चक्षु आदिके गोचर नहीं भयो तातैं श्रुतज्ञानके मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। प्रश्न, जो अनिंद्रिय निमित्त ईहादिक है ऐसैं है तो चक्षु इंद्रिय ईहा आदि नामको अभाव होयगो क्योंकि मतिज्ञानके तीनसै छत्तीस भेद कहेंगे तहां बहु आदि पदार्थ विषय चक्षु इन्द्रिय निमित्त ईहादिक आलाप होय है सो अनिंद्रिय निमित मानेतैं नहीं बनेंगे? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इंद्रिय शक्ति रूप परिणम्यूं जीव जो है ताकै भावेंद्रिय पणानें होतां संता वाका व्यापार रूप चतुरिंद्रिय ईहादि स्वरूपके कार्य पणौं है, यातैं अर इंद्रियभाव परिणम्यों ही जीव भावेंद्रिय इष्ट करिये है ता आत्माके विषयाकार रूप परिणति जो है सो ईहादिक है ऐसैं चक्षु इंद्रिय ईहा आदि आलाप होय है ॥१४॥१५॥ अबैं शोडषमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो वे अवग्रहादिक मतिज्ञानका भेदज्ञानावरण क्षयोपशम निमित्त कह्या ते कौन विषयके होय है ऐसा प्रश्ननें होतां सतां सूत्रकार कहै है। सूत्रम्---

बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥

अर्थ—बहुत १ बहुतप्रकार २ शीघ्र ३ नहीं निकस्यो ४ नहीं कह्यो ५ निश्चल ६ अर इनिके प्रतिपक्षी एक १ एक प्रकार २ मंद ३ निकस्यो ४ कह्यो ५ चलाचल ६ ऐसैं द्वादश भेद रूप विषय जे हैं तिनका अवग्रहादिक होय है। वार्तिक--संख्यावैपुल्यवाचिनो बहुशब्दस्य ग्रहणमविशेषात् ॥१॥ अर्थ—संख्याको अर विपुलताको वाचक बहु शब्द जो है ताको ग्रहण अविशेषतैं है। अर्थ—निश्चय

करि वहु शब्द संख्या वाची तथा विपुलता वाची है तातैं दोऊ अर्थको ही ग्रहण है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, इहां अविशेष रूप कह्यो है यातैं तहां संख्याके विषैं तो एक दोय वहुत ऐसैं है अर विपुल पणामें वहुत तंदुल है वहुत दाल है ऐसैं है ॥ १ ॥ प्रश्नोतररूप वार्तिक—वह्ववग्रहाद्यभावः प्रत्यर्थवशवर्तित्वादिति चेन्नसर्वदैकप्रत्ययप्रसंगात् ॥ २॥ अर्थ-वहुतका अवग्रहादिकनिको अभाव है क्योंकि प्रत्यर्थ वशवर्ती पणौं ज्ञानके हैं यातैं। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सदा काल एककी प्रतीतिको प्रसङ्ग आवे है। टीकार्थ—प्रश्न, प्रत्यर्थ वशवर्ती विज्ञान जो है सो अनेक अर्थनिनैं ग्रहण करनेंकूं समर्थ नहीं हैं यातैं। वहुतका अवग्रहादिकको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सर्वदा एककी प्रतीतिको प्रसङ्ग आवे है यातैं सो ऐसैं है कि जैसैं अरण्य जो वृक्ष रहित प्रदेश तथा अटवी जो वहुत वृक्षवान प्रदेश ताकैं विषैं कोऊ एक ही पुरुषनैं देखतां सतां अनेक पुरुष नहीं है ऐसैं जाणैं है अर जो और तरह है कि एकनैं देखतां संतां अनेक नहीं है ऐसी प्रतीत नहीं होय है तो एकके विषैं अनेक पणांकी बुद्धि होय सो मिथ्याज्ञान है तथा नगर वन स्कंधावारकूं जाननेवारेके भी सर्वकालमें एककी प्रतीति होय यातैं तिहारे अनेकार्थ ग्राही विज्ञान-का अत्यंत असम्भवतैं नगर वन स्कंधावारकी प्रतीतिकी निवृत्ति होय हैं अर ये नगर वन आदि संज्ञा निश्चय करि एक ही अर्थमें रहनेवारी नहीं है अर प्रत्यर्थ वशवर्ती ज्ञानका अङ्गीकार कर-वातैं हम नगर वन आदिनैं जाने है ऐसा लोकका भला व्यवहारकी निवृत्ति होय है ॥२॥ किच, वार्तिक—नानात्वप्रत्ययाभावात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, और सुनूं कि नाना पणांकी प्रतीतिको अभाव होय है यातैं। अर्थ—प्रश्न, जाकै नियमतैं एकार्थ ग्राही ज्ञान है ताकै पूर्व ज्ञानको निवृत्तिनैं होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति है अथवा पूर्व ज्ञानकी निवृतिनैं नहीं होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति है ऐसैं दोऊ तरैं ही दोष उत्पन्न होय है सो ऐसै है कि जो पूर्व ज्ञान उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति समयमें है तो जो कह्यो हुतो कि एक मन पणांतैं एकार्थ ग्राहो ज्ञान है सो यो कहनों विरोधनैं

प्राप्त होय है अर पूर्व ज्ञान उत्तर ज्ञानकी उत्पत्तिमें अङ्गीकार करतां संतां जैसैं एक मन अनेक प्रतीतिको उत्पन्न करनेंवारो है तैसैं एक प्रतीति अनेक अर्थनिमें प्रवर्त्तनवारी होयगी क्योंकि अनेक अर्थनिकी प्रतीतिको एक कालमें संभव है यातैं अर ऐसैं अनेक अर्थकी उपलब्धिकी उत्पत्ति होयगी तहां जो तिहारे अभिमत है कि एकको ज्ञान एक अर्थनें ही ग्रहण करै है या वचनको व्याघात होय है अर जो पूर्व ज्ञानको निवृत्तिनें होतां संतां उत्तर ज्ञानकी उत्पत्ति प्रतिज्ञा करिये हैं कि सर्वथा एक अर्थनें एक ही ज्ञान ग्रहण करै है तो यो यातैं अन्य है व्यवहार नहीं होय है अर यो व्यवहार है ही तातैं यो पूर्वैं कह्यो कि एकार्थ ग्राही ज्ञान है तातैं बहुतको अवग्रह नहीं करै है सो कुछ नहीं है ॥३॥ किंच वार्त्तिक—आपेक्षिकसंव्यवहारनिवृत्तेः ॥४॥ अर्थ—और सुनूं कि आपेक्षिक भला व्यवहारकी निवृत्ति होय है यातैं। टीकार्थ—जाकै एक ज्ञान अनेक अर्थको ग्राहक नहीं विद्यमान है ताकै मध्यमा अर प्रदेशनी दोऊ अंगुलीको युगपत् अनुपलंभ होवातैं उन विषय दीर्घ वा ह्रस्व व्यवहार विनष्ट होय है क्योंकि यो व्यवहार अपेक्षा सहित है अर तिहारे अपेक्षा नहीं है यातैं ॥ ४ ॥ किंच, वार्त्तिक—संशयाभावप्रसंगात् ॥ ५ ॥ अर्थ—और सुनूं कि संशय ज्ञानका अभावको प्रसंग आवै है यातैं। टीकार्थ—एकार्थ विषयवर्ती विज्ञाननें होतां संतां प्रतीतिको जन्म स्थाणुमें तथा पुरुषमें प्रथम एकमें होय है दोउनिमें नहीं होय है क्योंकि दोउनिमें प्रतीतिको होनों प्रतिज्ञातैं विरुद्ध है यातैं, अर्थात् ज्ञानके क्षणस्थाई पणों मान्य है यातैं बहुरि जो स्थाणुमें पुरुषको अभाव है यातैं स्थाणुके अर बंध्या पुत्रके समान संशयको अभाव है भावार्थ—बंध्या पुत्रको संदेह स्थाणुमें कदाचित् ही नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि बंध्या पुत्र अवस्तु है यातैं तैसैं ही एकार्थ ग्राही ज्ञानमें पुरुषका अभावतैं स्थाणुनें अनेक कोटिकू ग्रहण करनेंवारो संशय कदाचित् ही नहीं उत्पन्न होय है। बहुरि तैसैं ही पुरुषके विषैं स्थाणु द्रव्यका अनपेक्षपणातैं संशय नहीं होय है क्योंकि इहां भी तैसैं ही पूर्ववत् मनुष्यपणांको भाव इष्ट है

याते एकार्थ ग्राही विज्ञानकी कल्पना कल्याणकारी नहीं है ॥ ५ ॥ किंच, वार्त्तिक—इप्सितनिष्पत्त्यनियमात् ॥ ६ ॥ अर्थ—और सुनूं कि वांछित अर्थकी उत्पत्तिका नियमको अभाव होय है यातें। टीकार्थ—विज्ञानके एकार्थावलंबी पणानें होतां संतां चित्र कर्ममें प्रवीण चैत्रपुरुष पूर्ण कलशकूं लिखतो जो है ताकै चित्र कर्मकी क्रियाका प्रकारका ज्ञानकै अर कलशका प्रकार ग्रहण करनें रूप विज्ञानके भेदतैं परस्पर विषयका मिलापका अभावतैं अनेक विज्ञानको जो उत्पादताका रुकवाका क्रमनें होतां संतां कार्यकी अनियम करि उत्पत्ति होय, अर वा उत्पत्ति नियमकरि देखिये है सो एकार्थ ग्राही विज्ञानके विषैं विरोधनैं प्राप्त होय है तातैं नानार्थ ग्राही विज्ञानकी प्रतीति ही अङ्गीकार करने योग्य है ॥ ६ ॥ तथा वार्त्तिक—द्वित्र्यादिप्रत्ययाभावाच्च ॥७॥ अर्थ—अथवा दोय तीन आदिको प्रतीतिको अभाव होय है यातैं। टीकार्थ—अथवा एकार्थ विषयवर्ती विज्ञाननें होतां संतां ये दोय है ये तीन है इत्यादि प्रतीतिको अभाव होय है क्योंकि तिहारे एक विज्ञान दोय तीन आदि पदार्थनिको ग्राहक नहीं है यातैं ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—संतानसंस्कारकल्पनायां च विकल्पनानुपपत्तिः ॥ ८ ॥ अर्थ—संतानकी अर संस्कारकी कल्पनानें होतां संतां भी विकल्पकी अनुपपत्ति है यातैं। टीकार्थ—अथवा संतानको कल्पनानें अर संस्कारकी कल्पनानें करतां संता भी विकल्पकी अनुपपत्ति है क्योंकि इहां प्रश्न उपजै है कि संतान अर संस्कार जो है सो ज्ञान जातीय है कि अज्ञान जातीय है जो अज्ञान जातीय है तो वातैं कछू प्रयोजन नहीं है अर ज्ञान जातीय पणांनें होतां संतां भी एकार्थ ग्राही पणौं है कि अनेकार्थ ग्राही पणौं है जो एकार्थ ग्राही पणौं है जो वाही दोषनिकी विधि तिष्ठै है अर अनेकार्थ ग्राही पणौं है तो प्रतिज्ञाकी हानि प्राप्त होय है ॥८॥ वार्तिक—विधग्रहणं प्रकारार्थम्॥९॥ अर्थ—विधि शब्दको ग्रहण प्रकारके अर्थ है। टीकार्थ—विध १ युक्त २ गत ३ प्रकार ४ ये च्यार शब्द समान अर्थ कूं कहन वारे हैं याते इहां प्रकार अर्थमें विध शब्द जानना अर्थात् बहुविधं कहिये बहुत प्रकार है ॥९॥

वार्तिक—क्षिप्रग्रहणमचिरप्रतिपत्यर्थम् ॥१०॥ अर्थ—क्षिप्र शब्दको ग्रहण अचिरकी प्रतीतिके अर्थ है। टीकार्थ—पदार्थकी प्रतीति कैसें होय ऐसें प्रश्नतें होतां संतां क्षिप्रको ग्रहण करिये है। भावार्थ—अचिर पदार्थकी प्रतीतिके अर्थि क्षिप्र शब्दको ग्रहण है ॥१०॥ वार्तिक—अनिःसृतग्रहणमसकलपुद्गलोद्गमार्थम् ॥ ११ ॥ अर्थ—अनिसृत पदको ग्रहण असमस्त पुद्गलका उदयके अर्थ है। टीकार्थ—समस्त पुद्गलको है प्रकाश जा विषें ऐसा पदार्थका ग्रहण होवाके अर्थि अनिसृत पदको ग्रहण करिये हैं। भावार्थ—पदार्थका एक देशके देखनेतें भी पदार्थको ज्ञान होय है ऐसा जनावनें निमित्त अनिःसृत शब्दको ग्रहण है ॥ ११ ॥ वार्तिक—अनुक्तमभिप्रायेण प्रतिपत्तेः॥१२॥ अर्थ—अनुक्त पदको ग्रहण अभिप्राय करि प्रतीति होवातें है। टीकार्थ—अभिप्राय करि ज्ञान होय है यातें अनुक्त पदको ग्रहण करिये है ॥ १२ ॥ वार्तिक—ध्रुवं यथार्थग्रहणात् ॥१३॥ अर्थ—ध्रुव शब्द यथार्थका ग्रहणतें है। टीकार्थ—यथार्थको ग्रहण होय है यातें ध्रुवको ग्रहण करिये है ॥१३॥ वार्तिक—सेतरग्रहणात्विपर्ययनिरोधः ॥१४॥ अर्थ—सेतर पदका ग्रहणतें उक्ततें विपरीतको ग्रहण होय है। टीकार्थ—सेतरका ग्रहणतें अल्प १ अल्प विध २ चिर ३ निःसृत ४ उक्त ५ अध्रुव ६ इनिको संग्रह होय है ॥ १४ ॥ वार्तिक—अवग्रहादिसंबंधात्कर्मनिर्देशः ॥ १५ ॥ अर्थ—अवग्रहादिकका संबंधतें कर्म निर्देश है। टीकार्थ—बह्वादिकनिके कर्मको निर्देश है सो अवग्रहादिककी अपेक्षा जानवे योग्य है। भावार्थ—बहु आदिकनिके षष्ठी विभक्ति है तातें ऐसा जनाया है कि बहु आदिनिका अवग्रहादि होय है ॥ १५ ॥ वार्तिक—बह्वादीनामादौ वचनं विशुद्धिप्रकर्षयोगात् ॥१६॥ अर्थ—बहु आदिकनिका आदिके विषें वचन है सो विशुद्धिका अधिक योगतें है। टीकार्थ—ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशमको जो विशुद्धि ताका प्रकर्ष योगनें होतां संतां बहु आदिकनिके अवग्रहादिक होय है यातें तिनको ग्रहण आदिमें करिये है ॥ १६ ॥ वर्तिक—ते च प्रत्येकमिंद्रियानिन्द्रियेपुद्वादशविकल्पा नेयाः ॥१७॥ अर्थ-वे अवग्रहा-

दिक प्रत्येक इंद्रिय अर अनिंद्रियनिके विषैं द्वादश द्वादश भेद रूप होय है, अर्थात् दोय से अठ्यासी भेद होय है। टीकार्थ—वे बहु आदिका अवग्रहादिक इंद्रिय अनिंद्रिय जे हैं तिनके विषैं एक एक प्रति द्वादश द्वदश विकल्प जानने, सो ऐसैं है कि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका अर वीर्यान्तरायका चयोपशमतैं अर आगोपांग नामा नामकार्मका लाभतैं संभिन्न श्रोत्रनामा ऋद्धि धारक तथा अन्य पुरुष एकै काल तत कहिये तांतिका अर वितत कहिये ढंका तथा तालका अर घन कहिये कांसीकी ताल आदिका अर सुषिर कहिये फूंकका तथा औरका शब्द जे हैं तिनका श्रवणतैं बहु शब्दनें अवग्रह रूप करै है कि सबैका शब्दनें भिन्न भिन्न करै है सो करण इंद्रिय निमित्तक बहुको अवग्रह है। प्रश्न, अवग्रह तो सामान्यको ग्राहक है ताके तत आदिका शब्द भिन्न भिन्न ग्रहण करना कह्या सो वैसैं संभवै है? उत्तर, तत आदिका समुदाय रूप शब्दका सामान्य मात्र करि ग्रहण करै है तहां तत वितत आदिकी ईहा उत्तर कालमें करैगा ऐसैं बहु आदि द्वादश भेदनिमें ही जानना। प्रश्न, इहां संभिन्न श्रोत्र नामा ऋद्धि धारीके भी अवग्रह होना कह्या अर संभिन्न श्रोत्र जो है सो तत् आदिका भिन्न भिन्न शब्द विशेषको जाननें वारो है तातैं याकै अवग्रहादिक कैसे संभवै है? उत्तर, ऋद्धिधारीनिके भी ज्ञान अनुक्रमतैं ही प्रवर्तै है तातैं अवग्रहादिक संभवै है अर ऋद्धिकै धारनेतैं ज्ञानकी सूक्ष्मता है ही अर अल्प श्रोत्रेन्द्रियावरणका चयोपशम रूप परिणम्यूं आतमा ततआदि शब्दनिके विषैं कोऊ एकना अल्प शब्दनें ग्रहण करैं है सो करणेंद्रिय निमित्तक अलपको अवग्रह है। बहुरि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका चयोपशम आदिको निकटतानैं होतां संता एक दोय तीन च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुणौं तथा आदि शब्दको जो विकल्प ताका भिन्न भिन्न अवग्राहक पणातैं बहुविधनें अवग्रह रूप करै है कि जानैं है। भावार्थ, एक वाद्यके जे बहु भेद तिनका सामान्य शब्दकूं ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक बहु विधको अवग्रह है अर अल्प है विशुद्धि जा विषैं ऐसो श्रोत्रेंद्रिय आदि परिणमनको

कारण आत्मा जो है सो तत आदि शब्दनिका एक प्रकारका अवग्रहणतैं एक प्रकारनें ग्रहण करै है सो कर्णेंद्रिय निमित्तक एक विधको अवग्रह है। बहुरि उत्कृष्ट श्रोत्रेंद्रियावरणका क्षयोपशम आदिका परिणामी पणातैं शीघ्र शब्दनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक शीघ्रको अवग्रह है अर अल्प श्रोत्रेंद्रियावरणका क्षयोपशम आदिका परिणामी पणातैं बहुत काल करि शब्दनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक विलम्बितको अवग्रह है। बहुरि भले प्रकार विशुद्ध रूप श्रोत्र आदिका परिणामतैं समस्तपणां करि नहीं उच्चारण कियाका ग्रहण करवातैं अनिःसृतनें ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक अनिःसृतको अवग्रह है अर प्रतीतिमें आयानें कि प्रत्यक्षमें सुण्यानें ग्रहण करै है सो कर्णेन्द्रिय निमित्तक निःसृतको अवग्रह है। बहुरि प्रकृष्ट विशुद्धि रूप श्रोत्रेंद्रियादि परिणामका कारण पणातैं एक अक्षरका उच्चारणनें होतां संतां अभिप्राय करि ही विना उच्चारण किया समस्त शब्दनें ग्रहण करै है कि तू यो शब्द कहेगो ऐसैं कहै सो करणेंद्रिय निमित्तक अनुक्तको अवग्रह है अथवा स्वरका संचारणतैं पूर्व ही तंत्री द्रव्यका तथा मृदंगादिकनिका मिलावना करि ही वादित्रमें प्राप्त भया ऐसा विना कह्या ही शब्दनें अभिप्राय करि ग्रहण करिके कहै कि तू यो शब्द बजावेगो ऐसैं कहै सो भी करणेन्द्रिय निमित्तक अनुक्तको अवग्रह है अर प्रतीतमें आवै सो करणेंद्रिय निमित्तक उक्तको अवग्रह है अर्थात् सकल शब्दका उच्चारणतै जानें सो उक्तको अवग्रह है। बहुरि संक्लेश परिणामको त्यागी जो है ताकै यथा योग्य श्रोत्रेन्द्रियावरणका क्षयोपशमादिक परिणाम कारण जे हैं तिनका यथावस्थित पणातैं जैसैं प्रथम उत्पन्न भया शब्दको ग्रहण होय है तैसैं ही अवस्थित शब्दनें ग्रहण करै है नहीं न्यून ग्रहण करै नही अधिक ग्रहण करै है सो करणेंद्रिय निमित्तक ध्रुवको अवग्रह है अर फेरफेर होवा पणां करि संक्लेशरूप तथा विशुद्धि परिणाम स्वरूप कारणकी है अपेक्षा जाकै ऐसा आत्माकै यथायोग्य परिणामकरि ग्रहण किया श्रोत्रेन्द्रियकी निकटतानें होतां संतां भी श्रोत्रेंद्रियावरणका

आत्माकै लब्ध्यक्षररूप षट् प्रकार श्रुतज्ञान है तातैं अनिःसृत अनुक्तका भी अवग्रहादिक करै है ॥ १६ ॥ अबै सत्तरमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो अवग्रहादिक बहु आदि कर्मनिका संग्रह करनेवारे है तो बहु आदि विशेषण काहेकौ है ऐसा प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है।

सूत्रम्—

अर्थस्य ॥१७॥

अर्थ—बहु आदिकनिकै अवग्रहादिक होय है ते अर्थके होय है अर चक्षु आदिको जो विषय सो अर्थ है अर बह्वादिक विशेषणनि करि विशिष्ट अर्थ जो है ताका अवग्रहादिक होय है ॥ १७ ॥ वार्त्तिक—इयर्ति पर्यायानर्यते वा तैरित्यर्थोद्रव्यम् ॥ १ ॥ अर्थ—अपनी पर्यायनिनैं प्राप्त होय अथवा तिन पर्यायनि करि प्राप्त हूजिये सो अर्थ है सो ही द्रव्य है अर्थ—अपनें अपनें संबंधी अर अन्तरंग बाह्य रूप निमित्तका वशतैं उत्पत्ति प्रति सन्मुख भये पर्याय जे हैं तिननैं प्राप्त होय है अथवा तिन पर्यायनि करि प्राप्त हूजिये है कि जानिये है सो अर्थ है। प्रश्न, सो अर्थ कहा है? उत्तर, द्रव्य है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है? उत्तर रूप वार्त्तिक—अर्थवचनं गुणग्रहणनिवृत्यर्थम् ॥ २ ॥ अर्थ—ऐसो वचन है सो गुणका ग्रहणकी निवृत्तिके अर्थ है कितनेक पुरुष रूपादिक गुण ही इन्द्रियनि करि सन्निकर्ष रूप होय है तातै गुणको ग्रहण होय है ऐसैं माने है वा मतकी निवृत्तिके अर्थ अर्थस्य ऐसौ सूत्र कह्यो है अर वे रूपादिक गुण अमूर्त्तिक है तातैं इन्द्रियनिका सन्निकर्षने नहीं प्राप्त होय है। प्रश्न, गुणनिका प्रचय विशेपनें होतां संतां सन्निकर्ष संभवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि गुणादिकनिके प्रचयकी अनुपपत्ति हैं यातैं अथवा प्रचयनें होतां संता भी अर्थान्तर रूप होनेका अभाव है यातैं सूक्ष्म अवस्थाका नहीं उलंघनतैं गुणनिको अग्रहण ही होय है। प्रश्न, ऐसैं होत संतैं यो व्यवहार

नहीं होय कि मैं रूप देख्यो गंध सूंघ्यो उत्तर, अर्थका ग्रहणतैं होत है क्योंकि गुणनिके अर्थतैं अभिन्न पणौं है यातैं गुणनिका भी ग्रहणकी उपपत्ति है ॥२॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—तेषु सत्सु मतिज्ञानात्मलाभात् सप्तमीप्रसंगः ॥ ३ ॥ अर्थ—तिन विषयनिनैं होत संतै मतिज्ञानका स्वरूपको लाभ है यातैं सप्तमीको प्रसंग होय है टीकार्थ—जातैं विषयनिनैं विद्यमान होत संतै मतिज्ञान प्रकट होय है तातैं अर्थ ऐसो सप्तम्यंत सूत्र कहनें योग्य है ॥ ३ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—नानेकांतात् ॥ ४ ॥ अर्थ—उत्तर सो नहीं है क्योंकि अनेकान्त है यातैं टीकार्थ—तुमने कह्या सो नहीं है क्योंकि यो एकांत नहीं है कि अर्थनैं होत संतै मतिज्ञान होयही है क्योंकि अर्थनैं होत संतै भी पृथिवी तलका भवनमें उत्पन्न भयो अर वहांसे निकस्यो कुमार जो है ताके घट रूप आदिका मतिज्ञानको अभाव है यातैं अथवा यो भी एकांत नहीं है कि अधिकरणका सत्वतैं सप्तमी प्रसंग आवे। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अधिकरणका विवक्षित पणातैं अर विवक्षाका वशतैं ही कारक होय है ॥ ४ तथा वार्त्तिक—क्रियाकारकसम्बन्धस्य विवक्षितत्वात् ॥ ५ ॥ अर्थ—क्रिया कारक संबन्धके विवक्षित पणौं है यातैं। टीकार्थ—अवग्रहादिक क्रिया विशेष कह्या है तिनके अवश्य कोऊ कर्मनैं होनौं योग्य हैं यातैं वहु आदि है विकल्प जाके ऐसा अर्थका अवग्रहादिक होय है ऐसे कहिये है ॥ ५ ॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—बह्वादि समानाधिकरण्याद्बहुत्व प्रसंगः ॥ ६ ॥ अर्थ-प्रश्न, वहु आदिका समानाधिकरणपणातैं वहुवचन पणाको प्रसंग आवे है। टीकार्थ—यातैं वहु आदि ही अर्थ है अर अर्थतैं अन्य वहु आदि नहीं है तातैं वहु आदिका समान अधिकरण पणातैं अर्थानां ऐसे सूत्र है बहुवचन पणौं प्राप्त होय है ॥ ६ ॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—न वानभिसंबंधात् ॥ ७ ॥ अर्थ—उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अर्थको वहु आदि करि संबंध नहीं हैं यातैं टीकार्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहाकारण उत्तर, अनभिसबंध है यातैं क्योंकि निश्चय करि अर्थके बहु पणां आदि करि अभिसंबंध नहीं करिये है। प्रश्न, तो कौन करि अभिसम्बन्ध

करिये है, उत्तर, अवग्रहादिकनि करि सम्बन्ध करिये है, प्रश्न, कौनको ? ऐसा प्रश्न होतां संता कहिये है कि इहां अर्थको संबंध करिये है अर उन अवग्रहादिकनिका विशेष रूप बहु आदिको ग्रहण है ॥८॥ तथा वार्तिक-सर्वस्य वार्यमाणत्वात् ॥९॥ अर्थ--अथवा जाति प्रधान पणातैं सर्वके एक वचन योग्य है। टीकार्थ—अथवा सर्व ही जानने योग्य पदार्थ जे हैं तिनके अर्थ पणौं है अर एक वचन योग्य है। टीकार्थ—अथवा सर्व ही जानने योग्य पदार्थ जे हैं तिनके अर्थ पणौं है अर निर्देशकै जाति प्रधान पणौं है यातैं अर्थस्य ऐसैं एक वचन पणांको निर्देशयुक्त है ॥९॥ तथा-वार्तिक--प्रत्येकमभिसंबंधाद्वा ॥१०॥ अर्थ—अथवा प्रत्येक अभि संबंध है यातैं। टीकार्थ--अथवा प्रत्येक अभि संबंध करिये है कि बहु-अर्थका तथा बहुविध अर्थका अवग्रहादिक होय है ऐसैं ॥१०॥ अवैं अठारमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि ये अवग्रहादिक सर्व इंद्रिय अनिंद्रियका विषय रूप अर्थका होय है कि कुछ विषयमें विशेष है ऐसैं प्रश्न होत संतै सूत्रकारक है है ॥ सूत्रम्—

व्यंजनस्यावग्रह : ॥१८॥

अर्थ—अप्रगटको अवग्रह ही होय है अर अप्रकट शब्द आदि समूह जो है सो व्यंजन है अर वाकै अवग्रह ही होय है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कियो है? उत्तर, नियमके अर्थ कीयो है कि अवग्रह होय है ईहा नही होय है। प्रश्न, ऐसैं है तौ एवकार और करनों योग्य हो, उत्तर रूप वार्तिक-नवा सामर्थ्यादव धारण प्रतीतेरबूभक्षवत् ।१। अर्थ-एवकार करनों योग्य नहीं है क्योंकि अपभक्ष शब्दके समान सामर्थ्यतैं अवधारणकी प्रतीति है यातैं। टीकार्थ-एवकारकरनों योग्य नहीं है। प्रश्न कहाकारण ? उत्तर, सामर्थ्यतैं एवकारको अर्थ जो नियम ताकी प्रतीति है यातैं। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, अपभक्षणवत् है कि जैसैं जल भक्षण नहीं करै ऐसो कोऊ नहीं है ऐसी सामर्थ्यतैं नियमकी प्रतीति है तथापि जलभक्षण करै है ऐसैं कहतां संता ऐसा अर्थकी प्रतीति होय है कि जल ही पान करै है और कछू भी नहीं भक्षण करै है ऐसा नियम की प्रतीति होय है तैसैं ही पूर्व सूत्रमें सर्व

विषयका अवग्रहादिक होनेकी प्रसिद्धता होत संतै इहां अवग्रह शब्द है सो नियमके अर्थ जानिये है ॥१॥ प्रश्नोतर रूप वार्तिक—तयोरभेदो ग्रहणाविशेषादिति चेन्न व्यक्ताव्यक्तभेदादभिनव शरावबत् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, अर्थमें अर व्यंजनमें अभेद है क्योंकि दोउनिका ग्रहणमें अविशेष है यातें। उत्तर, सो नहीं, नवीन सरावाके समान व्यक्त अव्यक्तमें भेद है यातें। टीकार्थ—प्रश्न, अर्थावग्रह अर व्यंजनावग्रह ये दोऊ जे हैं तिनके विषै भेद नहीं है क्योंकि ग्रहणमें अविशेष है यातैं शब्दादिकनिका ग्रहण प्रति विशेष नहीं है। उत्तर। सो नहीं है, प्रश्न, कहाकारण? उत्तर। व्यक्त अव्यक्तका भेदतैं व्यक्तको ग्रहण तो अर्थावग्रह है अर अव्यक्तको ग्रहण व्यंजनावग्रह है। प्रश्न, कैसे है? उत्तर, नवीन सरावाके समान है कि जैसैं सूक्ष्म जलका कणनि करि दोय तीनवार सींच्यो नवीन सरावो आर्द्र नहीं होय। वहुरि वोही सरावो वारवार सींच्यो थको शनैं शनै आर्द्र होय है तैसैं ही आत्माके शब्दादिकनिका प्रगट ग्रहणतैं पूर्व व्यंजनावग्रह है अर प्रकटको ग्रहण जो है सो अर्थावग्रह है ॥२॥ अबैं उगणीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि सर्व इंद्रियनिके अवशेष करि व्यंजनावग्रहका प्रसंगनैं होतां संता जहां असंभव है ताकै अर्थ निषेधरूप सूत्रकार कहै है। सूत्र—

न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥

अर्थ—नेत्रकरि तथा अनिंद्रिय करि व्यंजनावग्रह नहीं होय है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर रूप वार्तिक—व्यंजनावग्रहाभावश्चक्षुर्मनसोरप्राप्यकारित्वात् ॥१॥ अर्थ—नेत्रके अर मनके व्यंजनावग्रहको अभाव है क्योंकि अप्राप्यकारी पणौं है यातें। टीकाअर्थ—यातें अप्राप्य कहिये नहीं भिड्यो अर अविदिक् कहिये सन्मुख अर युक्त कहिये योग्य अर सन्निकर्षका विषयमें अवस्थित अर वाह्य प्रकाश करि अभिव्यक्त कहिये प्रगट ऐसा अर्थमें नेत्र प्राप्त होय है अर मन भी अप्राप्त

किंचित् किंचित् प्रगट होवातैं फेर फेर हुवो जो उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट श्रोत्रेन्द्रियावरण आदिको क्षयोपशमरूप परिणाम पर्यों तातैं अध्रुव शब्दनें ग्रहण करै है कि कहूं बहुतनें कहूं अल्पनें कहूं बहुविधनें कहूं एक विधने कहूं शीघ्रनें कहूं विलंबितनें कहूं अनिःसृतनें कहूं नि सृतनै कहूं उक्तनें कहूं अनुक्तनें ग्रहण करै है सो कर्णेंद्रिय निमित्तक अध्रुवको अवग्रह है। प्रश्न, इहां अध्रुव अवग्रह दश भेद रूप कह्यो सो ही दसों भेद पृथक् पृथक् पूर्वें कहे हैं तातैं द्वादशमा भेद भिन्न रूप नहीं बनि सकै हैं ? उत्तर, वहां तो बहु आदिका हेतुरूप परिणामनिकी विशुद्धता उत्कृष्ट अनुत्कृष्टरूप जहां जैसा है तैसा ही अवस्थित है अर इहां वारम्वार उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट रूप हेतुके होनेतैं एक ही विषयमैं द्वादशभेद रूप अवग्रह होय है तातैं द्वादशमा भेद भिन्न रूप बने है। प्रश्न, बहुमें अर बहुविधिमें कहा विशेष है क्योंकि दोउनिमें ही तत आदिका शब्दको ग्रहण अविशेष रूप है यातैं ? उत्तर, कहिये है कि तुमनें कह्यो सो नहीं है क्योंकि दोऊनिमें विशेषको दर्शन है यातैं सो ऐसैं है कि कोउ तो अति वाचालतादि रहित हुवो संतो नहीं विशेषणरूप सामान्य अर्थ करि बहुत शास्त्रनिनें कहै है अर बहुत विशेषण रूप अर्थ करि नहीं कहै है अर कोऊ वै ही बहुत शास्त्र जे हैं तिनके विषैं बहुत अर्थनि करि परस्पर अतिशय युक्त बहुत विकल्पन करि व्याख्यान करै है तैसैं ही तत् आदि शब्दको ग्रहण अविशेष रूप होतां सतां भी जो भिन्न भिन्न तत् आदिका शब्द एक, दोय, तीन, च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुण कार करि परिणति रूप भया जे है तिनको ग्रहण जो है सो तो बहु विधि ग्रहण है अर जो तत् आदिका शब्दनिको सामान्य ग्रहण है सो बहु ग्रहण है। प्रश्न, उक्तमें अर निःसृतमें कहा विशेष है ? सकल शब्दनिका निकसवातैं निःसृत है अर उक्त भी ऐसो ही है। उत्तर कहिये हैं कि अन्यका उपदेश पूर्वक शब्दको ग्रहण जो है सो तो उक्त है कि यो जोको शब्द है ऐसे कह्याको ग्रहण जो है सो तो उक्त है अर अन्यका विना कह्या ही ग्रहण करै कि यो गोको शब्द है सो निः-

सूत है ऐसें तो श्रोत्र इंद्रियकैं आश्रित वहु आदि द्वादश विषयका अवग्रहको स्वरूप उदाहरण सहित कह्यो अबैं चक्षु इंद्रिय करि अवग्रह होय है सो कहिये है कि चक्षु करि विशुद्ध चक्षु-इंद्रियावरणका क्षयोपशम परिणाम रूप कारण पणातैं शुक्ल, कृष्ण, रक्त, नील, पीत, रूप, पर्याय स्वरूप जो वहुतनें ग्रहण करे है सो चक्षु इंद्रिय जनित वहुको अवग्रह है अर पूर्वे श्रोत्र इंद्रिय-कह्यो है तैसैं ही चक्षु करि अल्पनें ग्रहण करे है सो चक्षु इंद्रिय जनित अल्पको अवग्रह है। वहुरि उत्कृष्ट विशुद्ध जो चक्षु इंद्रिय आदि आवरणको क्षयोपशम रूप परिणाम ता कारण-पणातैं एक एक प्रति एक दोय तीन च्यार संख्यात असंख्यात अनंत गुणं परिणम्यूं जो शुक्ल आदि पांच प्रकार रूप गुण ताका अवग्राहक पणांकी सामर्थ्यतैं वहुविध रूपनें अवग्रह रूप करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित वहुविधको अवग्रह है अर पूर्ववत् एक विधनें अवग्रह रूप करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित एक विधको अवग्रह है अर क्षिप्रको तथा चिरको भी कह्यो सो ही क्रम है। वहुरि पंचवर्णके जे वस्त्र तथा कंवल तथा चित्र पट आदि जे हैं तिनका एक वार एक देश विषय जे पंच वर्ण तिनका ग्रहणातैं समस्त पंच वर्ण अदृष्ट तथा अनिसृत जे हैं तिनके विषें भी तत् वर्णका प्रगट करवाकी सामार्थ्यतैं अनिसृतनें ग्रहण करे है सो चक्षुरिंद्रिय जनित अनिसृतको अवग्रह है अथवा देशांतरमें तिष्ठतो पंचवर्ण रूप परिणम्यूं एक वस्त्र आदि जो है ताका कथनतैं समस्त देशनिमें व्यापी पणां करि नहीं कह्यो ताको भी एकदेश संबंधी कथन करि ही वाकै समस्त पंचवर्णका ग्रहणातैं अनिसृत है सो चक्षुरिंद्रिय जनित अनिःसृतको अवग्रह है अर प्रतीतिमें आवे सो निःसृत है अर्थात् समस्त प्रगट पणानें ग्रहण करे सो चक्षुरिन्द्रिय जनित निःसृतको अवग्रह है। वहुरि सुविशुद्धि रूप चक्षु इन्द्रिय आदिका क्षायोपशानें होत संते आत्मा शुक्ल कृष्ण आदि वरणको जो मिलाप ताका दर्शनतैं अन्य करि अकथित भी वर्णनें अभिप्राय करि ही जाणै है अर कहै है कि तू यो वर्ण इन वर्णद्वयका मिलापतैं करेगो ऐसें ग्रहण करवात विना कह्या रूपनें

ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय जनित अनुक्तको अवग्रह है अथवा देशांतरमें तिष्ठतां पंच वर्णरूप एक द्रव्यका कथनकैं विषैं ताल्वादि करणका मिलापतैं प्रथम ही एक बार भी नहीं कह्या द्रव्यनें कहै है कि तू या प्रकार हमारा वस्तुनें पंचवर्णमेंसूं कोऊ एक वर्ण रूप करेगो ऐसैं विना कह्या रूपनें ग्रहण करै है सो भी चक्षुरिंद्रिय जनित अनुक्तको अवग्रह है अर पराया अभिप्रायकी अपेक्षा रहित अपना चक्षुरिंद्रियरूप परिणामकी सामर्थ्यतैं ही कह्यो जो रूप तानें ग्रहण करै है सो चक्षुरिंद्रिय जनित उक्तको अवग्रह है। बहुरि संक्लेशरूप परिणामको त्यागी जो है ताके यथा योग चक्षुरिंद्रियावरणका क्षयोपशम रूप परिणाम स्वरूप कारणका अवस्थित पणातैं जैसो प्रथम समयमें रूप ग्रहण करै है तैसो ही अवस्थितरूप जो है तानें ग्रहण करै है नहीं न्यूननैं ग्रहण करै है नहीं अधिकनें ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय जनित ध्रुवको अवग्रह है अर वारंवार संक्लेशरूप तथा विशुद्धरूप परिणामकी हैं अपेक्षा जाकै ऐसा आत्माकै यथायोग्य परिणामकरि ग्रहण कीया चक्षुरिंद्रियकी निकटतानैं होतां संतां भी चक्षुरिंद्रियावरणका किंचित् किंचित् प्रगट होवातैं वारंवार उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट चक्षुरिन्द्रियावरणका क्षयोपशम रूप परिणामका कारणपणातैं अध्रुव रूपनें ग्रहण करै है सो कहूं तो बहुनें, कहूं अल्पनें, कहूं बहुविधिनें, कहूं एक विधनें, कहूं शीघ्रने, कहूं विलंबितने, कहूं अनिःसृतनें, कहूं निःसृतने, कहूं अनुक्तनें, कहूं उक्तनें, ग्रहण करै है सो चक्षुरिन्द्रिय निमित्तके अध्रुवको अवग्रह है ऐसैं ही घ्राण आदि इन्द्रिय निमित्तक अवग्रह जे हैं तिनके विषैं जोड़नें योग्य है तथा ईहा अवाय धारणा भी बहु आदिकनि करि तथा इनके प्रतिपक्षीनि करि जोड़नें योग्य है, इहां कोऊ कहै कि श्रोत्र, घ्राण, स्पर्शन, रसन स्वरूप इन्द्रियनिको चतुष्क जो है ताका प्राप्यकारीपणातैं अनिःसृत अनुक्त शब्द आदिका अवग्रह ईहा अवाय धारणा होना युक्त नहीं है याको उत्तर कहिये है कि अनिःसृत अनुक्तके भी प्राप्त पणौं है यातैं युक्त है। प्रश्न, कैसैं उत्तर, पिपीलिकादिकके समान है - सो ऐसैं है कि जैसैं पिपी-

लिकादिकनिकै घ्राण रसन इन्द्रियनिका स्थानमें अप्राप्त गुरु आदि द्रव्यनैं होतां संता भी गंधको तथा रसको ज्ञान होय है सो जितना अस्मदादिकनिकै अप्रत्यक्ष, सूक्ष्म, गुरु आदिका अवयव है तिन करि पिपीलिका आदिका घ्राण रसन इंद्रिय जे हैं तिनके परस्पर अनपेक्ष वृत्ति है तातैं दोष नहीं है अर्थात् गुड़ादिकनिका सूक्ष्म अवयवनिकै अर पिपीलिकादिकनिका घ्राण रसन इन्द्रियनिकै अर पर संयोगरूप होनेकी वृत्ति ऐसी है जामें अन्य किसीकी अपेक्षा नहीं है अर अपन सारसेनिके अप्रत्यक्ष है तैसैं ही अनिसृत अनुक्तका अवग्रहादिककैं विषैं भी शब्दादिकनिका सूक्ष्म अवयवनिकै प्राप्त पणौं है ॥ १७ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अस्मदादीनां तदभाव इति चेन्न श्रुतापेक्षत्वात् ॥ १८ ॥ अर्थ—प्रश्न, अस्मदादिकनिकै अनिसृतको अर अनुक्तका सूक्ष्म अवयव स्पर्शको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि श्रुतापेक्ष पणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, अस्मदादिकनिकै तो अनिसृत अनुक्तका सूक्ष्म अवयव स्पर्शको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि जैसैं भूमिग्रहके विषैं भले प्रकार वृद्धिनैं प्राप्त भयो अर वहांतैं वारै निकस्यो ऐसो पुरुष जो है ताकै चक्षु आदि करि अवभासित घट आदि द्रव्य जे हैं तिनके विषैं यो घट है यो रूप है इत्यादि जो विशेष परिज्ञान होय है सो श्रुत ज्ञानकी अपेक्षा सहित है क्योंकि वा ज्ञानकै परका उपदेशकी अपेक्षा सहित पणौं है यातैं तैसैं ही अस्मदादिकनिकैं निश्चय करि अनिःसृत अनुक्त भी ज्ञान विकल्प जो शब्दादिकनिको अवग्रहादिक स्वरूप ज्ञान सो श्रुतज्ञानकी अपेक्षा सहित है ॥ १८ ॥ किंच वार्त्तिक—लब्ध्यक्षरत्वात् ॥ १९ ॥ अर्थ—आत्माके लब्ध्यक्षर रूप श्रुतज्ञानपणौं है यातैं। टीकाअर्थ—श्रुतज्ञानका प्रभेदका प्ररूपणाके विषैं लब्ध्यक्षर श्रुतज्ञानको कथन षट् प्रकार भेद रूप कियो है सो ऐसैं है कि चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसन, स्पर्शन मनोरूप लब्ध्यक्षर है ऐसैं आर्ष उपदेश है यातैं चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसन, स्पर्शन, इन्द्रिय मनोरूप लब्ध्यक्षरकी निकटतातैं या सिद्धि है कि अनिःसृत अनुक्त शब्दादिकनिको अवग्रहादिक रूप ज्ञान होय है। भावार्थ--

है कि अर्थमें नहीं प्राप्त होय करि ही ग्रहण करे है तातै इन दोउनिके व्यंजनावग्रह नहीं होय है। प्रश्नोतर रूप वार्तिक—इच्छामात्र मिति चेन्न सामर्थ्यात् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, यो कहनों इच्छा मात्र है ? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि सामर्थ्य है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, अप्राप्त अर्थको ग्रहण करने वारो चक्षु है यो कहनों इच्छा मात्र है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सामर्थ्यतैं है। प्रश्न, कैसें सामर्थ्य है ? उत्तर रूप वार्तिक— आगमतो युक्तितश्च ॥३॥ अर्थ—उत्तर, आगमतैं अर युक्तितैं सामर्थ्य है। टीकार्थ---आगमतैं अर युक्तितैं नेत्रके अर अनिंद्रियके अप्राप्यकारी पणौं सिद्ध है तिनमें प्रथम तो आगम सुनों। गाथा—

पुट्ठं सुणोदि सद्दं अपुट्ठं पुणवि पस्सदे रूवं।
गंधं रसं च फासं पुट्ठं पुट्ठं वियाणादि ॥१॥

अर्थ—स्पर्श्या शब्दनें तो सुणैं है अर स्पर्श्या ही रूपनें देखे है अर स्पर्श्या अस्पर्श्या गन्धनें रसनें स्पशनें जाने है ॥१॥ टीकार्थ—और युक्ति तैं भी अप्राप्यकारी चक्षु है। इहां अनुमानको प्रयोग करिये है कि नेत्र अप्राप्यकारी है क्योंकि स्पर्श्याको अवग्रह नेत्रनिके नहीं होय है यातैं, अर जो स्पर्श इन्द्रियकै समान प्राप्यकारी है तो स्पर्श्या अंजननें भी ग्रहण करै सो नहीं ग्रहण करै है यातैं मनके समान नेत्र अप्राप्यकारी जानवे योग्य है। इहां कोउ कहैं है कि नेत्र प्राप्यकारी है क्योंकि आवृतानवग्रहात् कहिये आवरणित पदार्थको स्पर्श इंद्रियके समान अवग्रह नहीं होय है यातै। इहां जैनी कहै है कि काच भोडल स्फाटिक जे हैं तिनकरि आच्छादित पदार्थको अवग्रह होत संतै अव्यापक पणातैं तिहारो हेतु असिद्ध है ताको दृष्टांत ऐसो है कि वनस्पतीका चैतन्यके विषैं स्वप्नके समान है। भावार्थ—वनस्पती कूं अचेतन मानने वारे ऐसो हेतु देवै कि बुद्धिपूर्वक क्रियाका अभावतैं वनस्पती अचेतन है ताकूं कहिये है कि सूता हुआ पुरुषके भी चैतन्य तो देखिये है अर रूप हेतु अव्यापक पणातैं असिद्ध है, तैसैं ही इहां

आवरणितका नहीं। ग्रहण करना रूप हेतु नेत्रके अप्राप्यकारीपणामें दियो है सो असिद्ध है तथापि तिहारो हेतु संशय रूप है कि व्यभिचारी है क्योंकि तिहारे इहां साध्य नेत्रके प्राप्यकारीपणौ है तातैं विपक्ष जो अप्राप्यकारी अयस्कान्तोपल ताके विषैं भी आवृतानवग्रह हेतुको दर्शन है कि दृढ़तर आवरणितको अवग्रह नहीं देखिये है तातै व्यभिचारी है इहां वादी कहै है कि नेत्र भौतिक है कि तैजस आदि भूतनिकरि बनै है यातै अग्निके समान प्राप्यकारी हो है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि याके भी अयस्कांतोपल करि भी प्रत्युतर पणौ है यातैं, क्योंकि अयस्कांतोपल लोहने नहीं प्राप्त होय करि ही लोहने आकर्षण करतो संतो भी दृढ़तर आवरणितनें नहीं आकर्षण करै है अर अति विप्रकृष्टनें भी नहीं आकर्षण करे है, यातै यो अयस्कांतोपल हेतु संशयावरण है यातै। तथा प्रश्न. नेत्र बाह्य इन्द्रिय पणातैं प्राप्यकारी है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि द्रव्येंद्रिय है उपकारी जाको ऐसो जो भावेंद्रिय ताके पदार्थके जानने विषैं प्रधानपणौं है यातैं। प्रश्न, अप्राप्यकारी पणानें होतां संता आवर्णित पदार्थका तथा दूरवर्ती पदार्थका ग्रहणको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि याके भी अयस्कांतोपलकरि ही प्रत्युत्तरपणों है यातैं क्योंकि अयस्कांतोपल लोहमें नहीं प्राप्त होय करि ही लोहनें आकर्षण करतो संतो भी दृढ़तर आवर्णितनें नहीं आकर्षण करै है अर अति विप्रकृष्टनें भी नहीं आकर्षण करै है। चक्षुरिंद्रियके अप्राप्यकारी पणानें होतां सता संशयको अर विपर्ययको अभाव होय है ? उत्तर, सो चक्षुरिंद्रियके प्राप्यकारी पणानें होतां संतां भी अविशेष है कि जो युक्ति करि अप्राप्यकारी पणामें संशय विपर्ययको अभाव कहै है ता युक्ति करि प्राप्यकारी पणामे भी संशय विपर्ययको अभाव संभवै है तातें विशेष नहीं है। इहां कोऊ कहै है कि नेत्र तैजस पणातैं किरणवान है तातै प्राप्यकारी अग्निके समान है या भी अयोग्य है क्योकि या वचनको हमारे अंगीकार नही है कि तैजस चक्षु है ऐसै हम निश्चय करि नहीं अङ्गीकार करैं है क्योकि तेजको लक्षण उष्ण-

पणौं है यातैं है या कारण करि चक्षुरिंद्रिका स्थान उष्ण होय सो चक्षुका देश प्रति स्पर्शन करि इंद्रिय प्रवर्नतो उष्ण स्पर्शको अवलंबन करन वारो नहीं देखिये है यातै ही नेत्र अतैजस है अर भासुर पणांकी भी अनुपलब्धि है यातै भी अतैजस है। प्रश्न, अदृष्टका वशतैं अनुष्ण पणौं तथा अभासुरपणौं है ? उत्तर, सो नहीं क्योंकि अक्रिय ऐसा अदृष्टके गुणपणौं है यातैं। गुण अदृष्ट अक्रिय है अर अक्रियके पदार्थका भाव स्वभावका निग्रह करनेको सामर्थ्य नहीं है। प्रश्न, रात्रिचर बिलाव आदि जो है ताके नेत्रनिके किरण रूप भासुर पणांका दर्शनतैं नेत्र किरणवान है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अतैजस मणि आदि पार्थिव पुद्गल द्रव्य जे हैं तिनके भी भासुरपणां रूप परिणामकी उपपत्ति है यातैं और सुनूं कि नेत्र जो है सो गतिमानतैं विपरीत धर्मवान है यातै क्योंकि या लोकमें जो गति मान है सो निकट वर्त्तीनं तथा दूरवर्तीनिं एकै काल नहीं प्राप्त होय है अर नेत्र वैसा नहीं है क्योंकि नेत्र शाखानं अर चंद्रमानें एकै काल ग्रहण करै है कि जितना काल करि शाखानें प्राप्त होय है तितनां ही काल करि चंद्रमानें प्राप्त होय है यातैं गतिमान द्रव्यतै विधर्मपणौं स्पष्ट है तातैं गतिमान चक्षु नही है अर जो प्राप्यकारी चक्षु है तो अन्धकार युक्त रात्रिके विषै दूरवर्ती क्षेत्रमे अग्निनें प्रज्वलित होतां संता वाकै समीप प्राप्त भया द्रव्यका ग्रहण होय है अर अन्तरालमें प्राप्त भया द्रव्यको जानन काहेनैं नहीं होय है। इहां वादी कहै है कि अन्तरालमें प्रकाशका अभावतें जानन नही होय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि नेत्र तैजस पणांतै अग्नि आदिके समान अन्य प्रकाश कूं नहीं चाहे है अर नेत्र तैजस रूप होत संतैं भी प्रकाशादिकूं चाहे है तो अग्निके भी सहायांतरकी अपेक्षाका प्रसंग आवेगा यातै अर और सुनूं कि जो चक्षु रश्मिवान पणांनें ही प्राप्यकारी है तो सांतरको कि अन्य द्रव्य करि आच्छादित द्रव्यको अर अधिकको ग्रहण नही प्राप्त होय क्योंकि स्पर्शादिक इन्द्रियनिका अन्तर सहित गंधादिक विषय होत संते सांतरको ग्रहण नहीं

देखिये है अर अधिकको भी ग्रहण नहीं देखिये है या विषयमें श्लोक वार्तिकमें ऐसैं लिख है। श्लोक—

संतोपि रस्मयो नेत्रे मनसाधिष्टता यदि, विज्ञान हेतवोर्थेषु प्राप्तेष्वेवेति मन्यते ॥१॥
मनसोणुत्वतश्चक्षुर्मयूखेष्वनधिष्टितेः, भिन्नदेशेषु भूयस्त्वपरमाणुवदेकशः ॥२॥
महीयसो महीध्रस्य परिच्छित्तिर्न युज्यते, क्रमेणाधिष्टतौ तस्य तदंशेष्वेव संविदः ॥३॥
निरंशोवयवी शैलो महीयानपि रोचिषा नयनेन परिच्छेद्यो मनसाधिष्टितेन चेत् ॥४॥
नस्यान्मेचकविज्ञानं नानावयवगोचरं तदंशिविषयं चास्य मनो हीनैर्दृगंशुभिः ॥५॥

अर्थ—नेत्रनिके विषैं विद्यमान भी किरण जे हैं ते जा समय मन करि व्याप्त होय है ता समय ही प्राप्त भया ही अर्थके विषैं विज्ञानके हेतु है ऐसैं माने है तिन प्रति कहिये है। मनके अणुपणौं है यातैं भिन्न भिन्न प्रदेशवान नेत्रनिकी किरण जे हैं तिनमें मनका नहीं व्याप्त हो वातैं प्रचुर परमाणुमान महान पर्वत जो है ताकी परिच्छित्ति नहीं योग्य होय है अर वा मनकी अनुक्रम करि व्याप्त होत संतै वा अंशके विषैं ही ज्ञान होय है अर्थात् जा समय जा किरणमें मन व्यापै है वा समय वा ही किरण द्वारा ज्ञान होय है। इहां वादी कहै है कि निरंश कहिये अखंड रूप अर अवयवी कहिये बहु प्रदेशी माहान पर्वत जो है सो भी मनकरि व्याप्त किरणवान नेत्र करि जाननें योग्य है इहां जैनी कहै है कि ऐसें है तो नाना प्रकार अवयव गोचर मेचक जो है ताको ज्ञान नहीं होय। भावार्थ—मेचक भी अखंड अवयवी बहु प्रदेशी एक द्रव्य है अर वामें एके काल पंचवरणात्मक ज्ञान होय है सो नहीं होनों चाहिये क्योंकि दोउनिके समानता है यातै अर मन करि हीन नेत्रनिकी किरणनि करि नेत्रके अपने प्राप्त होनें योग्य देशको ज्ञान होनों चाहिये क्योंकि नेत्रनिके प्राप्यकारी पणौं तुमारे अङ्गीकार है यातै अर ऐसा मानिये कि वाह्य प्रधिष्ठानतैं इंद्रियकी प्रवृत्ति है यातैं इंद्रिय विषयके सांतर तथा अधिक

जो है ताको ग्रहण होय है। भावार्थ—ऐसो जिनको मत है सो भी अयुक्त है क्योंकि वाह्य अधिष्ठानतैं इंद्रियनिकी प्रवृत्ति नहीं है क्योंकि इंद्रियनिमें चिकित्सा आदि मथावत् ग्रहणको दर्शन है यातैं अर वाह्य अधिष्ठानतैं हो इंद्रियनकी वृत्ति मानिये तो तो अधिष्ठानका आच्छादन होत संतैं भी विषयका ग्रहणको प्रसंग होय अर मन भी वाह्य अधिष्ठान रूप नहीं है यातैं, अर मन करि आश्रित इन्द्रिय जो है सो ही अपना विषयके विषैं व्यापार करै है अर मनके वाह्य अधिष्ठान नहीं है यातैं मनको वहिर अधिष्ठान जो है ताका अभावतैं विषयका अग्रहणको प्रसंग आवै अर मनके अनुकूल इंद्रिय वृत्ति होत संते संभवको अभाव है यातैं सो ऐसैं है कि विप्रकीर्ण कहिये फैल्यो हुवो नेत्रनिका किरणनिको समूह जो है सो अणुरूप मन जो है तानैं कैसैं अधिष्ठान करेगो। इहां कोऊ कहै है कि—श्रोत्र इंद्रिय अप्राप्यकारी है क्योंकि श्रोत्रके विप्रकृष्ट कहिये दूरवर्त्ती विषयको ग्रहण होय है यातैं, उत्तर, या भी अयुक्त है क्योंकि या वचनके असिद्ध पणौं है यातैं। इहां प्रथम तो यो साध्य है कि श्रोत्र जो है सो विप्रकृष्ट शब्दनैं ग्रहण करै है कि घ्राणेंद्रियके समान अत्यंत मिला हुआ अपना विषय भावरूप परिणम्यां पुद्गल द्रव्यनैं ग्रहण करै है तहां विप्रकृष्ट शब्दका ग्रहणनैं होतां संतां अपना कर्णका मध्य छिद्रमें प्राप्त भया माछरका शब्दनैं नहीं ग्रहण कियो चाहिये क्योंकि कोऊ एक इन्द्रिय दूरवर्ती तथा स्पर्श रूप निकटवर्त्ती दोऊ विषयको ग्रहण करनकरो नहीं देख्यो है यातैं। प्रश्न, शब्दकै आकाशका गुण पणातैं स्पर्शवान गुण पणांको अभाव है अर्थात् यातैं ही प्राप्यकारी पणों नहीं संभवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अमूर्त्तिक आतमाका गुणकै समान इंद्रियका विषयपणांको अदर्शन है यातैं तथा शब्दको स्पर्श भी अनुभवमें आवै है क्योंकि अग्नि यंत्रका शब्दतैं महान मंदिर आदिको खंडन होतो देखिये है यातै। शब्द स्पर्श गुणवान है अर स्पर्श गुणवान है यातैं आकाशको गुण नहीं है। प्रश्न, आप्तका अवग्रहनैं होतां संतां श्रोत्र

इंद्रियके दिशा संबंधी देशका भेद करि सहित विषयका ग्रहणको अभाव होय? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि शब्द रूप परिणम्या अर फैलता पुद्गल जे हैं तिनका वेग रूप शक्ति विशेषके दिशा संबंधी भेद सहित विषयपणांकी उपपत्ति है यातैं अर्थात् जा दिशामें शब्द उत्पन्न भयो ता दिशातैं अनुक्रम करि सामान्य विशेष रूप ग्रहण करिये है यातें दिशा विशिष्ट शब्दको ग्रहण होय है अथवा तिन शब्दनिके सूक्ष्मपणातें अप्रतिघात है यातें सर्व तरफतैं प्रवेश करवातैं प्राप्तको अवग्रह होय है ऐसैं शंका समाधान होनेतें यो सिद्ध भयो कि चक्षु अर मन जे हैं तिननैं वर्जि करि अवशेष इंद्रियनिकैं व्यंजन जो अप्रकृष्ट विषय ताकौ अवग्रह होय है अर सर्व इन्द्रियनिके अर्थको अवग्रह होय है ॥ ३ ॥ और या विषयमें श्लोक वार्तिकके विषैं ऐसा लिखिये है। श्लोक—

दूरे शब्दं शृणोमीति व्यवहारस्य दर्शनात्। श्रोत्रमप्राप्यकारीति केचिदाहुस्तदप्यसत् ॥१॥
दूरे जिनाघ्राम्यहं गधमितिव्यवहृतीक्षणात्। घ्राणस्याप्राप्यकारित्वप्रशक्तेरिष्टहानित ॥२॥
गंधाधिष्ठानभूतस्य द्रव्यप्राप्तस्य कस्यचित्। दूरत्वेन तथा वृत्तौ व्यवहारोत्र चेन्नृणाम् ॥३॥
समं शब्देन समाधानमिति यत् किंचने दृशं। चोद्यमीमांसकादीनामप्रतीति कुवादिनाम् ॥४॥
कुड्यादिव्यवधानेपि शब्दस्य श्रवणाद्यदि। श्रोत्रमप्राप्यकारीष्टं तथा घ्राणं तथेष्यताम् ॥५॥
द्रव्यांतरितगंधस्य घ्रात सूक्ष्मस्य तस्य चेत्। घ्राण प्राप्तस्य संवित्ति श्रोत्रप्राप्तस्य नोध्वने ॥६॥
यथा गंधाणवकेचिच्छक्ताकुड्यादिभेदने। सूक्ष्मास्तथैव नः सिद्धः प्रमाणध्वनिपुद्गला ॥७॥

अर्थ—दूरमें तिष्टता शब्दनें में सुणूं हूं ऐसा व्यवहारका दर्शन है यातें श्रोत्र अप्राप्यकारी है ऐसैं कितनेक कहै है सो भी असत् है क्योंकि दूरमें तिष्ठता गंधने में सूंघूं हूं ऐसा व्यवहारका दर्शनतें घ्राणेंद्रियकै अप्राप्यकारी पणांका प्रसंगतैं इष्ट जो निहारे घ्राणेंद्रियके प्राप्यकारी पणौं ताकी हानि होय है यातैं। प्रश्न, गंधको आधार भूत कोऊ प्राप्तरूप जो

द्रव्य ताका दूर पणां करि तैसे वृत्ति होतसंते कि दूरमे तिष्टता द्रव्यनें हम सूंघे है ऐसा इहां कोई मनुष्यनिके व्यवहार देखिये है यातै घ्राणेंद्रियके प्राप्तकारी पणौ ही सिद्ध होय है ? उत्तर, ऐसैं है तो शब्द करि समाधान है यातै शब्दकी अप्राप्ति है ऐसो कुवादी मीमांसकनिको कहनों कछू भी नहीं है अर जो भींति आदिका अंतरनें होतासंता भी शब्दका श्रवणतै श्रोत्रेंद्रिय अप्राप्यकारी पणांको इष्ट है तो तैसैं ही घ्राणेंद्रिय भी तैसैं ही इष्ट करो अर अन्य द्रव्यकरि आच्छादित गंध जो है ताका सूक्ष्म अंश कूं सूंघे है यातै घ्राणेंद्रियके प्राप्त भया गंधको ज्ञान होय है अर श्रोत्रेंद्रिय कूं प्राप्त भया शब्दको ज्ञान नहीं होय है ऐसे है तो जैसे कितने सूक्ष्म गंधके परमाणु भींति आदिके भेदनेमें समर्थ है तैसै ही हमारे अनुमान प्रमाणतें शब्दके सूक्ष्म पुद्गल भी भींति आदिके भेदनेमें समर्थ है सो अनुमानको प्रयोग ऐसें है कि शब्द जो है सो पुद्गल परिणाम है क्योंकि शब्दके बाह्य इंद्रियको विषय पणौं है यातै गंधादिकके समान है इत्यादि प्रमाण करि-सिद्ध शब्द परिणत पुद्गल है ऐसैं आगैं समर्थन करेंगे अर वे शब्द परिणत पुद्गल जे हैं ते गंध पुद्गल परिणतिके समान भींति आदिनें भेद करि इंद्रियने प्राप्त होनसंते जानने योग्य है ऐसै नहीं प्राप्तभया शब्दनिको इंद्रियनि करि ग्रहण नही होय है अर्थात् प्राप्त भयेनिको ही इंद्रियनि करि ग्रहण होय है। प्रश्न, श्रोत्र इंद्रिय गोचर है स्वभाव जिनको ऐसैं मूर्त्तिको स्कन्ध जे हैं ते मूर्त्तिमान भींति आदि करि कैसै नही हते जाय हैं ? उत्तर, ऐसै हैं तो सुनूं कि तिहारे शब्दके व्यंजक वायु जनित ध्वनि जे हैं ते कैसैं नहीं हने जाय हैं ऐसैं समान कहने योग्य है। प्रश्न, ध्वनिका भींति आदिकरि प्रतिघातनें होतां सतां जहां शब्दका प्रगटताका अयोगतै अर अप्रगट शब्दका श्रवणका असंभवतै वाका भींति आदि करि अप्रतिघात सिद्ध है क्योकि भींति करि अन्तरित शब्दका श्रवणकी अन्यथा अनुपत्ति है यातैं। उत्तर, ऐसै कहो हो तो सुनूं कि तातैं ही कहिये शब्द श्रवणतैं ही शब्दादिकनिका पुद्गल जे हैं जिनको अप्रतिघात है क्योंकि

देख्यो हुवो परिहार है यातैं जा परिहारतै अंतरित शब्दका श्रवण सिद्ध होय है ताहीतै गंधात्म पुद्गलनिको अप्रतिघात देखिये है तैसैं ही शब्दनिको अप्रतिघात विरोधनें नहीं प्राप्त होय है। बहुरि जो अमूर्त्तिक सर्वगत शब्दकी कल्पनातैं वाके व्यंजक कहिये प्रगट करन वारो वायु संबंधी ध्वनि जे हैं तिनका ही अप्रतिघाततैं शब्दनिका श्रवण है ऐसो तिहारो अभिधान है तो सुनूं कि तैसैं ही अमूर्त्तिक गंन्धका कस्तूरिकादि द्रव्य विशेषका संयोग जनित अवयव जे हैं ते व्यंजक है अर ते ही मूर्त्त द्रव्यांतर करि अप्रतिहत होत संतैं घ्राण हेतु है कि घ्राण इन्द्रियका विषय है ऐसी कल्पना करी संती कैसैं दूर करनेमें आवेगी। प्रश्न, ऐसैं मानेतैं गंधके पृथिवी गुणपणांको विरोध है कि प्रथिवी गुण नहीं वणि सके है? उत्तर, ऐसैं हैं तो शब्दके भी पुद्गल पणांको विरोध होय है। बहुरि तैसैं ही अन्य पुरुषनि करि शब्दनें द्रव्यांतरपणांकरि अङ्गीकार करवातै दोष नहीं है। उत्तर, ऐसैं है तो तैसैं ही गंधके भी द्रव्यांतर पणौं अङ्गीकार करो क्योंकि प्रमाण-का बल करि आया अर्थनें निवारण करनेकूं असमर्थ पणौं है॥ ३॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—मनसोऽनिंद्रियव्यपदेशाभाव स्वविषयग्रहणे करणांतरानपेक्षत्वाच्चक्षुर्वत्॥ ४॥ अर्थ—मनके अनिं-द्रिय नामको अभाव है क्योंकि अपना विषयका ग्रहणके विषै अन्य करणकी अपेक्षा रहित पणातै चक्षुके समान है। टीकार्थ—जैसैं चक्षु रूपका ग्रहणके विषै करणांतरनै नहीं अपेक्षा करै है यातै इन्द्रिय नामनें प्राप्त होय है तैसैं ही मन भी गुण दोषका विचार आदि अपना व्यापारके विषैं करणांतरमें नही अपेक्षा करै है यातै इंद्रिय पणानें प्राप्त होय है अर अनिंद्रियपणानें नहीं प्राप्त होय है॥४॥ उत्तर रूप-वार्तिक—न वा प्रत्यक्षत्वात्॥५॥ अर्थ—उत्तर, अथवा अप्रत्यक्ष पणौं है यातै। टीकार्थ—यो दोष नहीं है। प्रश्न-कहा, कारण? उत्तर, अप्रत्यक्ष पणातै सो ऐसैं है कि चक्षु आदि इंद्रिय परस्पर जीवनिके इंद्रियणातैं प्रत्यक्ष है तैसै मन नहीं है काहेतैं? उत्तर, याकै सूक्ष्म द्रव्य रूप परिणाम है यातैं तातैं अनिंद्रिय है ऐसैं कहिये है॥५॥ इहां वादी कहै है कि मन है

ऐसैं अप्रत्यत्तनें कैसैं जानिये है ? उत्तररूप वार्तिक—अनुमानात्तस्याधिगमः ॥६॥ अर्थ—उत्तर, अनुमानतैं वा मनको जानन है। टीकार्थ—उत्तर, लोकके विषैं अप्रत्यत्त अर्थ जे हैं तिनको भी अनुमानतैं जाननों देखिये है कि जैसैं सूर्यकी गति तथा वनस्पतीको वृद्धि ह्रास अनुमानतैं जानिये हैं तैंसैं ही अनुमानतैं मनको भी अस्तित्व ग्रहण करिये है सो हेतु कहा है ? उत्तर रूप वार्तिक—युगपज्ज्ञानक्रियानुत्पत्तिर्मनसो हेतुः ॥७॥ अर्थ—उत्तर, एकै काल ज्ञान रूप क्रियाकी अनुपपत्ति है सो मनका अस्तित्वको हेतु है। टीकार्थ, उत्तर, शक्तिमान चत्तू आदि करणनिनें विद्यमान होत संतै अर रूपादिक वाह्य विषयनें भी विद्यमान होत संतै अर अनेक प्रयोजननैं भी होत संतै जातैं ज्ञाननिकी अर क्रियानिकी युगपत् अनुत्पत्ति है तातैं मन है ऐसैं अनुमानतैं मनको अस्तित्व ग्रहण करिये है अर्थात् पांचू इंद्रियनिनैं प्रवर्त्तन करावनें वारो कोऊ है ऐसा अनुमानतैं मनको अस्तित्व ग्रहण करिये है ॥७॥ तथा हेतुरूप वार्तिक—अनुस्मरणदर्शनाच्च ॥८॥ अर्थ—अथवा अनुस्मरणका दर्शनतैं मनको अस्तित्व है। टीकार्थ—अथवा जातैं एक वार देख्यो तथा सुण्यूं जो है तानैं अनुस्मरण करिये हैं यातैं अनुस्मरणका दर्शनतैं वा मनके अस्तित्व निश्चय करवो योग्य है। इहां वादी कहै है कि एक आत्माकै कारण भेद काहेतैं है ॥ ८ ॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—ज्ञस्वभावस्यापि करणभेदोऽनेककलाकुशलदेवदत्तवत् ॥ ९ ॥ अर्थ—उत्तर, ज्ञान स्वभाव आत्माके भी करण भेद है सो अनेक क्रियामें कुशल देवदत्तके समान है। टीकार्थ—उत्तर, जैसैं अनेक ज्ञान क्रिया शक्ति युक्त देवदत्तके भी करण भेद देखिये है अर चित्र कर्ममें वर्त्तमानके वर्त्तिका कहिये सलाई अर लेखनी कहिये कलम कुर्चिका कहिये कूंची आदि उपकरणनिकी अपेत्ता देखिये है तथा काष्टका कर्ममें वर्त्तमान जो है ताकै वासी कहिये वसोलो अर घटमुख कहिये हतोड़ो अर वृत्तादन कहिये करोत आदि उपकरणकी अपेत्ता देखिये है। तैंसैं ही त्तयोपशमका भेदतैं ज्ञान-क्रिया परिणाम रूप शक्ति युक्त आत्माकै भी चत्तु आदि अनेक करणकी अपेत्ता नहीं विरोधनें

प्राप्त होय है ॥ ६ ॥ वार्तिक—स नामकर्मसामर्थ्यात् ॥१०॥ अर्थ—सो करण भेद नाम कर्मकी सामर्थ्यतैं है। टीकार्थ—सो यो करण भेद नाम कर्मकी सामर्थ्यतैं जानवो योग्य है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, इहां जो यो शरीर नाम कर्मका उदयादिक करि ग्रहण किया कि यवकी नालीका संस्थान रूप श्रोत्रेंद्रिय है सो ही शब्दकी उपलब्धिमें समर्थ है और नहीं है तथा जो यो घ्राणेंद्रिय अति मुक्तकको चंद्रक जो है ताका संस्थानके समान है संस्थान जाको ऐसो यो ही गंधका जाननेंमें समर्थ है और नहीं है तथा जो यो जिह्वा इंद्रिय क्षुरप्र जो करणी जातिको खुरपो ताकी आकृतिको धारक है सो ही रसका जाननमें समर्थ हैं और नहीं है तथा जो यो स्पर्शनेंद्रिय अनेक आकृतिको धारक है सो ही स्पर्शको ग्रहण करनवारो है और नहीं है तथा जो यो चक्षु-इंद्रिय मसूरके आकार कृष्ण तारा रूप अधिष्ठानवान है सो ही रूपका ग्रहणमें समर्थ है और नहीं है ऐसैं आभिनिबोधिक ज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि जाननें योग्य है सो ऐसैं है कि द्रव्यतैं मतिज्ञानी सर्व द्रव्यनिनें अर असर्व पर्यायनिनें उपदेश करि जानें है अर क्षेत्रतैं उपदेश करि सर्व क्षेत्रनें जानैं है अथवा क्षेत्र नाम विषयको है तातैं चक्षुको क्षेत्र सैंतालीस हजार दोय-सै तिरेसठ अर एक योजनका साठि भागमें सूं इकतीस भाग प्रमाण है अर श्रोत्रको विषय क्षेत्र द्वादश योजन है अर घ्राण रसन स्पर्शन जे हैं तिनको विषय नव योजन क्षेत्र है अर काल-तैं उपदेश करि सर्व कालनें जाने है अर भावतैं उपदेश करि जीवादिकनिका औदयिकादिक भावनिनें जानैं है। वहुरि मतिज्ञान सामान्यतैं तो एक है अर इन्द्रिय अनिंन्द्रिय भेदतैं दोय प्रकार है अर अवग्रहादि भेदतैं च्यार प्रकार है सो च्यार प्रकारको मतिज्ञान तिन इन्द्रियनि करि तथा अनिंद्रिय करि गुणित चतुर्विंशति प्रकार है अर वै ही व्यंजनावग्रह जे हैं तिन करि अधिक अष्टाविशति प्रकार है अर वै ही मूल भंग अवग्रहादिक जे हैं तिन करि अधिक तथा द्रव्य क्षेत्र काल भाव सहित बत्तीस प्रकार है। वहुरि वे तीनूं ही विकल्प अलप बहु आदि प्रति

पत्नीनिकी अपेक्षा रहित बहु आदि षट् भेदनि करि गुणित एक सो चवालीस तथा एक सौ अड़सठि तथा एक सौ बाणवै प्रकार है। बहुरि वै ही चौबीस तथा अट्ठाईस तथा बत्तीस भेद बहु आदि द्वादश भेदनि करि गुणित दोयसै अठ्यासी तथा तीनसै छत्तीस तथा तीनसै चौरासी प्रकार है। प्रश्न, व्यंजनावग्रहके विषैं बहु आदि विकल्पनिको अभाव है। प्रश्न, काहेतैं। उत्तर, अप्रकट पणातैं। इहां जैनी कहै है कि व्यंजनका अवग्रहकै समान व्यंजनावग्रहके विषैं बहु आदिकी सिद्धि है सो ऐसैं है कि जैसैं अव्यक्तका ग्रहणरूप अवग्रह है तैसैं ही बहु आदि विकल्प भी अप्रकट रूप करि ही जानवे योग्य है। प्रश्न, अनिःसृतके विषैं व्यंजनावग्रह कैसैं है क्योंकि अनिःसृतके विषैं भी जे जितनेक पुद्गल सूक्ष्म निःसृत है ते सूक्ष्म पुद्गल साधारण पुरुषनि करि नहीं ग्रहण करिये है? उत्तर, जितनेक पुद्गल निःसृत है तिनके इन्द्रियनिके स्थानको अवगाहन है क्योंकि नेत्रके अर मनके तो व्यंजनावग्रह है ही नहीं अर अवशेष च्यार इन्द्रिय जे हैं तिनकै प्राप्यकारी पणौं ही है तातैं सूक्ष्म निःसृत पुद्गलनिके इन्द्रिय स्थानको अवगाहन होय ही है यातैं अनिःसृतके विषैं व्यंजनावग्रह होय ही है ॥ १० ॥ १९ ॥ अवैं बीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि परोक्ष ज्ञानके द्विविध पणानैं होतां संता कह्या है लक्षण अर विकल्प जाकै ऐसा मतिज्ञानतैं विधर्मी जो उपदेशरूप कियो दूसरो ज्ञान सो कहा निमित्तक है, अर कितनेक प्रकारको है। ऐसो प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥

अर्थ—श्रुतज्ञान मतिज्ञान पूर्वक होय है अर दोय भेद रूप तथा अनेक भेद रूप तथा द्वादश भेद रूप है। वार्त्तिक—श्रुतशब्दोजहत्स्वार्थवृत्ति रूढिवशात् कुशल शब्दवत् ॥ १ ॥ अर्थ—श्रुत शब्द अजहत् स्वार्थ वृत्ति है सो रूढिका वशतैं कुशल शब्दके

समान है। अर्थ—श्रुत शब्द रूढ़िका वशतैं नहीं छोड़ी है स्वार्थ वृत्ति जानें ऐसो हुवो संतो कुशल शब्दके समान है कि जैसैं कुशल शब्द कुशल जोडाव ताकी लवन कहिये काटने रूप क्रियानें प्रतीति करि उत्पन्न भयो है तो हू रूढिका वशतैं कोऊ ज्ञान विशेषके विषैं प्रवर्तै है। ॥ १ ॥ वार्तिक—कार्यप्रतिपालनात् पूरणाद्वापूर्वं कारणम् ॥ २ ॥ अर्थ—कार्यका प्रतिपालनतैं तथा पूरणतैं पूर्वकारण है। टीकार्थ—कार्यनैं पालै है अथवा पूरै है सो पूर्व कहिये अर पूर्व कारण लिंग निमित्त ये च्यार शब्द अनर्थान्तर रूप है अर मतिज्ञान व्याख्यान कियो सो है पूर्व जाकै सो मति पूर्व है कि मतिज्ञान है कारण जानैं ऐसो श्रुतज्ञान है ॥ २ ॥ वार्तिक—मतिपूर्वकत्वे श्रुतस्य तदात्मकत्व प्रसंगो घटवदतदात्मकत्वे वा तत्पूर्वकत्वाभावः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, मति पूर्वक पणानें होतां संता श्रुतकै मतिज्ञानात्मक पणांको प्रसंग घटके समान है अर मतिज्ञानात्मक पणानें नहीं होतां संता मतिपूर्वक पणांको अभाव होय है। टीकार्थ—प्रश्न, इहां वादी कहै है कि मतिज्ञान पूर्वक श्रुतज्ञान है सो भी मतिज्ञानात्मक पणातैं प्राप्त होय है क्योंकि निश्चय करि कारणका गुणके अनुविधायी कार्य देखिये हैं कि जैसैं मृत्तिका है निमित्त जानैं ऐसो घट मृत्तिका स्वरूप है अर जो मृत्तिका स्वरूपपणौं नहीं इष्ट करिये है तो वा घटके मृत्तिका पूर्वक पणौं नष्ट होय है ॥ ३ ॥ उत्तररूप वार्तिक—न वा निमित्तमात्रत्वाद्दंडादिवत् ॥ ४ ॥ अर्थ-सो नहीं है क्योंकि दंडादिकके समान निमित्त मात्रपणौं है यातैं। टीकार्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है प्रश्न, कहा-कारण? उत्तर, निमित्तमात्रपणातैं दंडादिकके समान है सो ऐसैं है कि मृत्तिकानें अपना अंतःकरण में कि अपना निजस्वरूपमें घटहोने रूप परिणाम के सन्मुख होतां संता दंड चक्र तथा कुलाल पुरुषका प्रयत्न आदि निमित्त मात्र है जातै दंडादिक निमित्तनिकूं विद्यमान होतसंतै भी शर्करादिकका समूह रूप मृत्तिकाको पिंड आप अपना स्वरूपमें घट होने रूपपरिणामका निरुत्सुक-पणातैं घट नहीं होय है यातैं मृत्तिकाको पिंड ही बाह्य दंडादिक निमित्तको अपेक्षा हुवो संतो आभ्यं-

तर परिणामकी शक्तिकी निकटतातैं घट होय हैं दंडदिक घट नहीं होय है यातैं दंडादिकनिकै निमित्त मात्रपणौं है तैसैं ही पर्यायीके अर पर्यायके कथंचित् अन्य पणातै आत्माकै अपना निज-स्वरूपमें श्रुत होने रूप परिणामकै सन्मुखपणौं होत संतै मतिज्ञान निमित्त मात्र है जातैं श्रोत्रेंद्रिय-का बलाधाननैं होतां संता अर बाह्य आचार्य कृत पदार्थका उपदेशकी निकटतानैं होतां संतां भी श्रुतज्ञानावरणका उदयकै वशीकृत सम्यग्दृष्टी जो है ताकै अपना स्वरूपमें श्रुत होनेका निरुत्सुक पणातैं आत्माकै श्रुतरूप परिणमन नहीं होय है तातैं बाह्य मतिज्ञानादि निमित्तकी अपेक्षा सहित हुवो संतो आत्मा ही आभ्यंतर श्रुत ज्ञानावरणका क्षयोपशम आदि करि ग्रहण कीयो जो श्रुत होने रूप परिणाम ताकै सन्मुखपणातैं श्रुती होय है अर मतिज्ञानकै श्रुतरूप होनों नहीं है क्योंकि मति-ज्ञानकै निमित्त मात्रपणौं है यातैं॥ ४ ॥ तथा वार्तिक—अनेकांताच्च ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा अनेकांत है यातैं भी श्रुतज्ञानकै मतिज्ञानात्मक पणौं ही नहीं है। टीकार्थ—यो एकांत नहीं है कि कारण-सदृशही कार्यहोय है। प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,तहां भी सप्तभंगी संभवै है यातैं। प्रश्न,कैसैं ? उत्तर,घटके समान सो ऐसै है कि जैसै यह मृत्तिकाका पिंडरूप कारण करि कथंचित् सदृश है कथंचित् सदृश नहीं है इत्यादि जानने क्योंकि मृत्तिका द्रव्य अजीव अनुपयोग आदिका उपदेशतैं सदृश है अर पिंड घट संस्थान आदि पर्यायिका उपदेशतैं सदृश नहीं है अर और भंग पूर्ववत् जानने योग्य है। बहुरि जाकै एकांत करि कारणकै अनुरूप कार्य है ताकै घट पिंड शिविक आदि पर्याय एक रूप करि प्राप्त होय है सो एक रूप नहीं है अर और सुनूं कि कारणके समान ही कार्य अंगीकार करिये तो जल धारण आदि व्यापार नहीं करिये क्योंकि जल धारण रूप व्यापारको मृत्तिकाका पिंडके विषैं अदर्शन है यातैं। बहुरि और सुनूं कि मृत्तिकाका पिंडके घटपणां करि परिणाम है तैसै ही एकांत सदृश पणां करि घटकै भी घटपणां करि परिणाम होय सो नहीं है। भावार्थ-मृत्तिकाका पिंडके तो परिणमन घट रूप है अर घटके घट रूप परिणमन नहीं है कपालादि रूप परिणाम

है तातैं एकांत करि कारण सदृश कार्य नहीं है यातैं एकांत करि कारण सदृश पणौं कार्य के नहीं है तैसैं ही श्रुत भी सामान्य उपदेशतैं कथंचित् कारण सदृश है क्योंकि मति भी ज्ञान है श्रुत भी ज्ञान है अर अव्यवहित कहिये निरंतर अर सन्मुख ऐसा विषयका ग्रहणरूप अर नाना प्रकार अर्थ जो है ताका प्ररूपणमें समर्थपणां आदि पर्यायका उपदेशतैं कथंचित् कारण सदृश नहीं है अर्थात् अव्यवहितको तथा सन्मुखको ग्रहण तो मतिज्ञानके होय है अर नाना प्रकार अर्थका प्ररूपण रूप सामर्थ्य श्रुतज्ञानकै होय है यातैं कारण कार्य के सदृशपणौं नहीं है अर और भंग-पूर्ववत् जाननें योग्य है ॥ ५ ॥ वार्तिक—श्रोत्रमतिपूर्वस्यैव श्रुतत्वप्रसगस्तदर्थत्वादितिचेन्नोक्तत्वात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, श्रोत्र अर मतिपूर्वकके ही श्रुतपणांको प्रसंग आवै है क्योंकि श्रोत्रको विषय है यातैं। उत्तर,सो नहीं है क्योंकि याका उत्तरके पूर्व कथित पणौं प्राप्त होय है ? प्रश्न,काहेतैं ? उत्तर,श्रोत्र-का अर्थपणातैं क्योंकि सुणि करि अवधारणतैं श्रुत है ऐसैं कहिये है ता कारण करि चक्षु आदि मति-ज्ञान पूर्वककै श्रुतज्ञान पणौं नहीं प्राप्त होय है ? उत्तर,सो नही है। प्रश्न,कहा कारण ? उत्तर, याको उत्तरकै पूर्वं कथित पणौं है यातैं सो ऐसैं है कि यो श्रुतशब्द रूढ़िशब्द है क्योंकि रूढिशब्द जे है ते अपनी उत्पत्तिकी तथा क्रियाकी अपेक्षा रहित प्रवर्त्तैं है यातैं सर्व इंद्रिय जनित मतिज्ञान पूर्वककै श्रुतपणांकी सिद्धि है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आदिमतोऽन्तवत्वाच्छ्रुतस्यानादि-निधनत्वानुपपत्तिरितिचेन्न द्रव्यादिसामान्यापेक्षयातत्सिद्धेः ॥ ७ ॥ अर्थ—आदिमानके अंतवान पणौं है यातैं श्रुतके अनादि निधन पणांकी अनुपपत्ति है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि द्रव्यादिसामान्यकी अपेक्षा करिके आदिमान पणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न,मतिपूर्व या वचनतैं श्रुतके आदिमान पणौं अंगीकार कियो अर लोकके विषैं आदिमान जो है सो अंतवान देखिये है तातैं आदि अंतका संभवतैं अनादि निधन श्रुत है, ऐसैं वचन हत्यो जाय है तातैं पुरुष कृतपणातैं अप्रमाण है ? उत्तर,यो दोष नहीं है क्योंकि द्रव्यादि सामान्य की अपेक्षा करि

अनादि निधनताकी अर अप्रमाणताकी सिद्धि है सो ऐसैं है कि द्रव्य क्षेत्र काल भाव जे हैं तिनका विशेष कहनेकी नहीं इच्छा होत संतै श्रुत अनादि निधन है ऐसैं कहिये है क्योंकि कोऊ पुरुष करि कहूं कदाचित् कथंचित् उत्प्रेक्षा रूप नहीं कीयो है यातैं। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावकी ही विशेष अपेक्षाकरि आदि अंत संभवै है यातैं मति पूर्वक श्रुत है ऐसैं कहिये है कि जैसैं अंकुर वीज पूर्वक है सो संतानकी अपेक्षा करि अनादि निधन है। बहुरि पुरुष कृत पणौं अप्रमाण ताको कारण नहीं है क्योंकि नहीं स्मरण कीयो है कर्त्ता जाको ऐसा चोरी आदिका उपदेशकै प्रमाणताको प्रसंग आवै है यातैं अर अनित्यकै प्रत्यक्षादिकतैं प्रमाणता होत संतै कहा विरोध है॥ ७॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—सम्यक्त्वोत्पत्तौ युगपन्मतिश्रुतोत्पत्तेर्मतिपूर्वकत्वाभाव इति चेन्न सम्यक्त्वस्यतदपेक्षत्वात्॥ ८॥ अर्थ—प्रश्न, सम्यकत्वकी उत्पत्तिकै विषैं युगपत् मति श्रुतकी उत्पत्ति है यातैं मतिपूर्वक पणांको अभाव है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सम्यक्त्वके तदपेक्षपणौं है कि मति श्रुतकी अपेक्षावानपणौं है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न—मति अज्ञानके प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिनैं होतां संतां युगपत् मति श्रुत ज्ञान परिणाम होय है यातैं मतिपूर्वक पणौं श्रुतकै नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न—कहा कारण? उत्तर, सम्यक् पणांके ताकी अपेक्षापणौं है यातैं सो ऐसैं है कि मति अज्ञानके अर श्रुत अज्ञानके सम्यक् पणौं तो सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिमैं एकै काल ही है परन्तु आत्म लाभ तो क्रमवान नहीं है यातैं मतिपूर्वक पणौं श्रुतकै पिता पुत्रकै समान योग्य है अर्थात् पिता अर पुत्र ये दोऊ शब्द सापेक्ष है तातैं प्रमाणता एकै काल ही है तथापि आत्मलाभ अनुक्रमतैं ही है॥८॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—मतिपूर्वकत्वाविशेषाच्छ्रुताविशेष इति चेन्न कारणभेदात्तद्भेद सिद्धेः॥६॥ अर्थ—मति पूर्वक पणांका अविशेषतैं श्रुतमें अविशेष प्राप्त होय है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि कारणमें भेद है यातैं मति श्रुतमें भेदकी सिद्धि है। टीकार्थ—प्रश्न, सर्व प्राणीनिकै श्रुत अविशेष रूप प्राप्त होय है

प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, कारणका अविशेषतैं क्योंकि मतिपूर्वक पणौं कारण इष्ट है सो मतिज्ञान सर्वकै अविशेष रूप है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, कारणमैं भेद है यातैं मतिज्ञानकै तथा श्रुत ज्ञानकै भेदकी सिद्धि है क्योंकि पुरुष प्रति मतिज्ञानावरण श्रुतज्ञानावरण-को क्षयोपशम रूप कारण बहुत प्रकार भिन्न भिन्न है अर वाकी भेदतैं तथा बाह्य निमित्तका भेदतैं मतिपूर्वक पणांमें अविशेष होतां संतां भी श्रुतके प्रकर्ष अप्रकर्षको योग है ॥९॥ तथा प्रश्नो-त्तर रूप वार्तिक—श्रुताच्छ्रुतप्रतिपत्तेर्लक्षणाव्याप्तिरिति चेन्न तस्योपचारतोमतित्वसिद्धेः ॥१०॥ अर्थ—प्रश्न, श्रुततैं श्रुतकी प्रतीति होय है यातैं लक्षणकै अव्याप्ति है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पूर्वश्रुतके उपचारतैं मतिज्ञानपणांकी सिद्धि है यातैं। टीकार्थ—जा समय कृत संगति पुरुष जो हैं सो शब्द परिणत पुद्गल स्कन्धतैं ग्रहण किया है वर्णपद वाक्य आदि भाव जानैं ऐसा अर चक्षु आदिका विषयतैं अविनाभावी ऐसो अर प्रथम श्रुत विषय भावनैं प्राप्त भयो ऐसो घट जो है तातैं जल धारणादि कार्य रूप संबंधांतरनैं धूमादिकतैं अग्न्यादिकके समान प्राप्त होय है ता समय श्रुततैं श्रुतकी प्रतीति है या हेतु करि मति पूर्वक लक्षण श्रुतको कह्यो सो अव्यापी है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा प्रथम श्रुतके उपचारतैं मतिपणांकी सिद्धि है यातैं मतिपूर्वक श्रुत जो है सो ही कहूं मति है ऐसै उपचार रूप करिये है अथवा व्यवधानमें पूर्व शब्द वर्तै है सो ऐसै है कि मथुरातैं पूर्व पाटलीपुत्र नगर है इहां ऐसा भाव है कि जैसैं मथुरातैं पूर्व और ग्राम नगर केई जे हैं तिनको व्यवधान है कि तो हू पूर्वकी तरफ पाटलीपुत्र है तातैं ऐसा कहिये है कि मथुरातैं पूर्व पाटलीपुत्र है तैसैं ही मतिज्ञानतैं श्रुतज्ञान होय है अर वा श्रुत ज्ञानतैं अन्य श्रुतज्ञान होय है तो हू मतिज्ञान पूर्व श्रुतज्ञान होय है ऐसैं कहनेमें दोष नहीं है क्योंकि कहूं साक्षात् मति पूर्व है कहूं परंपरा मति पूर्व है तो हू मतिपूर्व ग्रहण करि ग्रहण करिये है ॥१०॥ वार्तिक—भेदशब्दस्य प्रत्येकं परिसमाप्तिर्भुजिवत् ॥११॥ अर्थ—भेदशब्दकी प्रत्येक

समाप्ति भुजिशब्दके समान है। टीकार्थ—जैसैं देवदत्त जिनदत्त गुरुदत्त जे हैं ते भोजन करो इहां भोजन करो यो एक शब्द है सो प्रत्येक लगाइये है तेसैं ही इहां भी भेद शब्द प्रत्येक संबंधरूप करिये है कि दोय भेद तथा अनेक भेद तथा द्वादश भेदरूप श्रुतज्ञान है ॥ ११ ॥ वार्तिक—तत्रांगप्रविष्टमंगवाह्यंचेति द्विविधमंगप्रविष्टमाचारादि द्वादशभेदं वुद्ध्यातिशयर्द्धियुक्तगणधरानुस्मृत ग्रंथरचना ॥ १२ ॥ अर्थ—तिनमें अंग प्रविष्ट तथा अंगवाह्यरूप दोयप्रकार है तिनमें अंग प्रविष्ट तो आचारादि द्वादश भेदरूप है सो बुद्धिका अतिशय रूप ऋद्धि करियुक्त गणधर जे हैं तिनकरि स्मरणरूप कीयो ग्रंथ रचन जो है सो अंगप्रविष्ट है। टीकार्थ—भगवत् अर्हत्सर्वज्ञरूप हिमवन गिरितैं निकसी वचनरूप गंगा जो है ताका अर्थरूप विमल जल करि प्रक्षालित है अंतःकरण जिनके ऐसैं बुद्धिका अतिशयरूप ऋद्धिकरि युक्त गणधर जे हैं तिनकरि अनुस्मरणरूप है ग्रंथरचना जिन विषैं ऐसैं आचारादि द्वादश प्रकार अंगप्रविष्ट श्रुत है सो ऐसैं कहिये है सो ऐसैं है कि आचारांग १ सूत्र कृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग ५ ज्ञातृधर्म कथांग ६ उपासकाध्ययनांग ७ अंतकृदशांग ८ अनुत्तरोपपादादिक दशांग ९ प्रश्न व्याकरणांग १० विपाक सूत्रांग ११ दृष्टिवादांग १२ ऐसा नामको धारक द्वादश अंगरूप श्रुत है। वहुरि और सुनूं कि आचारांगके विषैं शुद्धिका अष्टकरूप तथा पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति आदि विकल्परूप चर्याको विधान है। वहुरि सूत्रकृत अंगके विषैं ज्ञान विनय प्रज्ञापना कल्प्य अकल्प्य छेद उपस्थापना व्यवहार धर्मरूप क्रिया प्ररूपण करिये है। वहुरि स्थान अंगके विषैं अनेक धर्मनिको है आश्रय जिन विषैं ऐसैं पदार्थनिको निर्णय करिये है। वहुरि समवाय अंगके विषैं सर्वपदार्थनिकै समवाय चिंतवन करिये है सो द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप विकल्पकरि समवाय च्यार प्रकार है तिनमें धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय लोकाकाश एक जीव ये च्यारूं पदार्थ जे हैं तिनके तुल्य असंख्यात प्रदेशीपणातैं एक प्रमाणकरि द्रव्यनिका

एक रूप होनेतैं द्रव्य समवाय है अर जंबूद्वीप सर्वार्थसिद्धि अप्रतिष्ठान नरक नन्दीश्वर द्वीपकी एक वावड़ी ये च्यारू क्षेत्र तुल्य योजन एक लक्षयोजन चौड़ाईका प्रमाणकरि क्षेत्रका एक रूप होनैतैं क्षेत्र समवाय है अर उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालके तुल्य दश कोटाकोटी सागरोपम प्रमाण है यातैं काल एक रूप होवातैं काल समवाय है अर क्षायिक सम्यक्त्व केवलज्ञान केवल दर्शन यथाख्यात चारित्र इन च्यारनिका जो भाव ताको जो अनुभव ताका तुल्य अनंत प्रमाण पणातैं भावका एक रूप होवातैं भाव समवाय है। वहुरि व्याख्या प्रज्ञप्ती अंगके विषैं जाकरि व्युत्पत्ति रूप करिये कि व्याख्यान करिये सो व्याकरण करिये हैं ती व्याकरण संबंधी साठि हजार प्रश्न ऐसैं हैं कि जीव है या जीव नहीं है इत्यादि निरूपण करिये है। वहुरि ज्ञातृधर्म कथा अंगके विषैं आख्यान कहिये दिव्यध्वनि अर उपाख्यान कहिये गणधरादिकृत उपदेश तिनका बहुत प्रकार जे हैं तिनको कथन है। वहुरि उपासकाध्ययन अंगमें श्रावक धर्मको लक्षण है। बहुरि अंतकृत्-दशांगके विषैं जिननें संसारको अंत कियो ते अंतकृत कहिये ते नमि १ मतंग २ सोमिल ३ रामपुत्र ४ सुदर्शन ५ यमलीक ६ वलीक ७ निष्कंवल परलांवष्ट ६ पुत्र १० ए दश बर्द्धमान तीर्थंकरका तीर्थके विषैं होत भये अर ऐसैं ही ऋषभादिक तेईस तीर्थंकरनिके तीर्थके विषैं और और दश दश मुनीश्वर दश दश दारुण उपसर्गनें जीति समस्त कर्मका क्षयतैं अंतकृत कहिये है अर अंतकृत दश दश जामें वर्णन करिये सो अंतकृद्दशांग है अथवा अंतकृत् जे हैं तिनकी जो व्यवस्था सो अंतकृद्दशांग है कहिये है अर याके विषैं ही अर्हत् आचार्यनिकी विधि तथा साधुनिकी विधि वर्णन करिये है। वहुरि औपपादिक दशांगके विषैं उपपाद जन्म है प्रयोजन जिनके ते ये औपपादिक कहिये है अर विजय वैजयंत अपराजित सर्वार्थसिद्धि नामा पांच अनुत्तर विमान है और अनुत्तरनिके विषैं औपपादिक जे हैं ते अनुत्तरोपपादिक कहिये है ते ऋषिदास १ धन्य २ सुनक्षत्र ३ कार्तिक ४ नंद ५ नंदन ६ शालिभद्र ७ अभय ८ वारिषेण ९ चिलातपुत्र १०

ये दश वर्द्धमान तीर्थंकरका तीर्थके विषैं होत भये अर ऐसैं ही ऋषभादिक त्रयोविंशति तीर्थंकरनिका तीर्थके विषैं और और दश दश मुनीश्वर दश दश दारुण उपसर्गनिनें जीति विजयादिक अनुत्तर विमाननिके विषैं उत्पन्न होय है ऐसैं याके विषैं भी अनुत्तरोपपादिक दश वर्णन करिये है सो अनुत्तरोपपादिक दशांग है अथवा अनुत्तरोपपादिक जे हैं तिनकी जो दशा सो अनुत्तरोपपादिक दशा कहिये ऐसा अनुत्तरोपपादिक दशांगके विषैं तिनकी आयु तथा विक्रिया संबंधी अनुबंध विशेष वर्णन करिये है। बहुरि प्रश्न व्याकरण अंगके विषैं आक्षेप जो स्थापन अर विक्षेप जो खंडन तिन करि हेतु नयके आश्रित प्रश्न जे हैं। तिनको व्याख्यान है सो प्रश्न व्याकरण है ता विषैं लौकिक वैदिक अर्थनिको निर्णय है। बहुरि विपाक सूत्र अंगके विषैं सुकृतदुःकृत जे हैं तिनको विपाक चिंतवन करिये है। बहुरि द्वादशमूं अङ्ग इष्टिवाद है ताके विषैं कौत्कल १ कांठे विद्धि २ कौशिक ३ हरि ४ श्मश्रु ५ मांछ ६ पिक ७ रोमश ८ हारीत ६ मुंडशालायन १० आदि क्रियावाद दृष्टिनिके एक सौ अस्सी भेद वर्णन करिये है अर मारीच १ कुमार २ कपिल ३ उलूक ४ गार्ग्य ५ व्याघ्र ६ भूति ७ वाठलि ८ माठर ६ मौद्गलायन १० आदि अक्रियावाद दृष्टिनिकै चौरासी भेद वर्णन करिये है अर शकल्य १ वाल्कल २ कुथुमे ३ सात्यमुद्रि ४ नारायण ५ कठ ६ माध्यंदिन ७ मौद ८ पैपलाद ६ वादरायण १० आवष्टीकृत १० ऐरिकायन ११ वसु १२ जैमनि १३ आदि अज्ञान कुदृष्टीनिकै सड़सठि भेद वर्णन करिये है। अर वशिष्ट १ पाराशर २ जतुकर्णि ३ वाल्मीकि ४ रोमार्षि ५ सत्य ६ दत्त ७ व्यास ८ एलापुत्र ६ उपमन्यव १० इंद्रदत्त ११ अयस्थून १२ आदि वैनयिक दृष्टीनिके वत्तीस भेद वर्णन करिये है ये तीनसै तिरेसठि ३६३ मिथ्यावादी जे हैं तिनको प्ररूपण तथा खंडन दृष्टिवाद अंगमें करिये है। सो दृष्टिवाद पांच प्रकार है कि परिकर्म १ सूत्र २ प्रथमानुयोग ३ पूर्वगत ४ चूलिका पांच हैं, तिनमें पूर्वगत चतुर्दश प्रकार है कि उत्पाद पूर्व १

अग्रायणी पूर्व २ वीर्यप्रवाद पूर्व ३ अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व ४ ज्ञान प्रवाद पूर्व ५ सत्य प्रवाद पूर्व ६ आत्मप्रवाद पूर्व ७ कर्म प्रवादपूर्व ८ प्रत्याख्यानामधेय पूर्व ९ विद्यानुवादपूर्व १० कल्याणनामधेय पूर्व ११ प्राणावाय पूर्व १२ क्रिया विशालपूर्व १३ लोकविंदुसार पूर्व १४ तिनमें काल पुद्गल जीव आदिकै जा समय जहां जैसैं पर्यायकरि उत्पाद होय है सो तहां वर्णन करिये है सो उत्पादपूर्व है। बहुरि क्रियावादादिकनिकी प्रक्रिया जा विषैं वर्णन करिये है सो अग्रायणी है अर अङ्गादिकनिका स्व समवाय तथा विषय जहां कह्यो है सो अग्रायणी पूर्व है। बहुरि छद्मस्थनिको वीर्य तथा केवलीनिको वीर्य वहुरि सुरेंद्रनिकी तथा दैत्यनिकै अधिपतिनिकी ऋद्धि अर नरेंद्र चक्रधर वलदेव आदि जे हैं तिनकी ऋद्धि अर द्रव्यनिको वीर्यलाभ अर सम्यक्त्वको लक्षण जहां कह्यो है सो वीर्य प्रवाद नाम पूर्व है। बहुरि पंच अस्तिकायनिको अर्थ और नय जे हैं तिनको अर्थ अर अनेक पर्यायनि करि यो है यो नहीं है इत्यादि समस्तपणां करि जहां प्रकाशित है सो अस्तिनास्तिप्रवाद है अथवा जहां छहूं ही द्रव्यनिको भाव अभाव पर्याय विधि करि तथा उभय नय करि वशीकृत अर अर्पित अनर्पितकरि सिद्ध ऐसैं जे स्व पर पर्याय तिनकरि जहां निरूपण करिये सो अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व है। बहुरि पंच ज्ञाननिको जो प्रादुर्भाव ताको जो विषय ताकै आयतनरूप ज्ञानी तिनका तथा अज्ञानीनिका इंद्रियनिकी प्रधानता करि जहां ज्ञानको विभाग वर्णन कीयो है सो ज्ञानप्रवादपूर्व है। बहुरि जहां वचन गुप्ति तथा वचनका जे संस्कार तिनका कारण तथा वचनको प्रयोग तथा द्वादश भाषा तथा वक्ता तथा अनेक प्रकार मृषाभिधान दश प्रकार सत्यको सद्भाव प्ररूपित है सो सत्य प्रवाद है। तिनमें वचन गुप्ति तो आगे कहैंगे अर वचन संस्कारका कारण शिर कंठ आदि अष्ट स्थान है अर वचन प्रयोग शुभ अशुभ लक्षण रूप आगे कहैंगे अर अभ्याख्यान १ कलह २ पैशुन्य ३ असंवद्ध प्रलाप ४ रति ५ अरति ६ उपधि ७ निकृति ८ अप्रणति ९ मोष १० सम्यग् ११ मिथ्यादर्शन स्वरूपिका १२ ऐसैं भाषा द्वादश प्रकार है। तिनमें यो या हिंसादिक

कर्मको कर्त्ता है अर यो या विरता विरतको कर्त्ता है ऐसैं कहना जो है सो अभ्याख्यान भाषा है। अर कलह भाषा प्रसिद्ध है ही। अर पीछेतैं दोपका प्रकट करना जो है सो पैशून्य भाषा है। अर धर्म काम मोक्ष रूप प्रयोजनतैं नहीं मिलावनी जो है सो असंबद्ध प्रलाप भाषा है। अर शब्द आदि विषयके विषैं तथा देश आदिके विषैं प्रतीति की उत्पन्न करन वारी वाणी जो है सो रति भाषा है अर तिनके विषैं ही द्वेषकूं उपजावनें वाली वाणी जो है सो अरति भाषा है। अर जा वाणीनें सुणिकरि ग्रहका उपार्जन रक्षण आदिकैं विषैं उद्यमी होय सो उपधि भाषा है जा वाणीनें सुणिकरि वणिक् व्यवहारके विषैं निवृत्तिमें प्रवीण आत्मा होय सो निकृति भाषा है। अर जा वाणीनें सुणि करि तपविज्ञान करि अधिक जे हैं तिनमें भी नहीं प्रणाम करै सो अप्रणति भाषा है। अर जा भाषानें सुणिकरि चौरोके विषैं प्रवर्तै सो मोष भाषा है। अर जो वाणी सम्यग् उपदेश कूं देनेवारी है सो सम्यग्दर्शन भाषा है। अर जो मिथ्या उपदेशकूं देनेवारी है सो मिथ्यादर्शन भाषा है, ऐसैं द्वादश भेदरूप भाषा जाननी अर अप्रगट है वक्ता पणांकी पर्याय जिनके ऐसैं वक्ता द्वीन्द्रियादिक है। अर द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय अनेक प्रकार अनृत है अर दश प्रकार सत्यको सद्भाव है सो नाम १ रूप २ स्थापना ३ प्रतीति ४ संवृत्ति ५ संयोजना ६ जनपद ७ देश ८ भाव ९ समय १० ऐसैं सत्यका भेद करिये है। तिनमें सचेतन अचेतन द्रव्यका अर्थनैं नहीं होत संतै भी जो व्यवहारके निमित्त संज्ञा करना है सो नाम सत्य है जैसैं इन्द्र इत्यादि संज्ञा जो है सो व्यवहारमें सत्य है। अर जो पदार्थकूं नहीं निकट होतसंतै भी रूप मात्र करि कहिये सो रूप सत्य है सो जैसैं चित्र पुरुष आदिकै विषैं चैतन्योपयोगादिक प्रयोजननें नहीं विद्यमान होतसंतै भी पुरुष है इत्यादिक है। अर अर्थनैं नहीं विद्यमान होत संतै भी द्यूत कर्ममें अक्ष निक्षेपादिककै विषैं कार्यके निमित्त स्थापन कियो सो स्थापना है। अर आदिमान अनादिमान जे औपशमिकादिक भाव तिननें प्रतीतकरि जो वचन प्रवर्तै सो प्रतीति सत्य है याकै उदाहरण

सांनिपातिक भाव कहेंगे तहांतैं जानना अर जो लोकके विषैं संकोच रूप करि ग्रहण कियो वचन है सो संवृत्ति सत्य है सो जैसैं पृथ्वी आदि अनेक कारण पणांनें होतां संता भी पंकमें उत्पन्न भयो सो पंकज है इत्यादि अर धूम चूर्ण वास अनुलेपन प्रघर्षणके विषैं तथा पद्माकर हंस सर्वतोभद्र क्रौंचव्यूह आदिके विषैं तथा सचेतन अचेतन द्रव्यनिका यथा भाग विधि रचनाको प्रगट करनें वारो जो वचन है सो संयोजना सत्य है। अर बत्तीस हजार देश आर्य अनार्य भेद रूप जे हैं तिनके विषैं धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप च्यारूं पुरुषार्थनिकूं प्राप्त करनें वारो जो वचन है सो जनपद सत्य है। अर ग्राम नगर राज गण पाखंड जाति कुल आदिके जे धर्मनिको उपदेशक वचन है सो देश सत्य है। अर छद्मस्थ ज्ञानीके द्रव्यका याथात्म्यको अदर्शन है तो हू संयमीके तथा संयतासंयतके निज गुणका परिपालनके अर्थि यो प्राशुक है यो अप्राशुक है इत्यादि जो वचन है सो भाव सत्य है अर आगम गम्य भिन्न भिन्न नियम रूप षट् प्रकार द्रव्य जे हैं तिनको पर्यायनिको यथावत् प्रकाश करनवारो जो वचन सो समय सत्य है ऐसैं दश प्रकार सत्य है। बहुरि जहां आत्माका अस्तित्व पणां नास्तिपणां नित्यत्वपणां अनित्यपणां कर्त्ता पणां भोक्ता पणां आदि धर्म अर षट् जीवनिकायके भेद युक्तितैं दिखाया है सो आत्मप्रवाद पूर्व है। बहुरि जहां कर्मनिका बंध उदय उपशम निर्जरा जे हैं तिनके पर्याय अर विपाक तथा प्रदेश तथा अधिकरण तथा जघन्य मध्यम उत्कृष्ट स्थिति दिखाये हैं सो कर्म प्रवाद पूर्व है। बहुरि जहां व्रत नियम प्रतिक्रमण प्रति लेखना तप कल्प उपसर्ग अचार प्रतिक्रमा विराधना आराधना तथा आराधनकी विशुद्धिको उपक्रम तथा मुनिपणांको कारण तथा परिमित अपरिमित द्रव्य भाव जे हैं तिनको प्रत्याख्यान वर्णन कियो है सो प्रत्याख्यान नामधेय पूर्व है। बहुरि जहां समस्त विद्या अर अष्ट महा निमित्त अर तिनको विषय अर रज्जु राशिकी विधि तथा क्षेत्र श्रेणी तथा लोकको प्रतिष्ठा कहिये आधार तथा संस्थान तथा समुद्घात आदि कहिये है सो

विद्यानुवाद पूर्व है। ताकै विषैं अंगुष्ट प्रसेना नामानें आदि लेय सातसै तो अल्प विद्यानिको अर रोहिणीनें आदिलेय पांचसै महा विद्यानिको विषय अर अंतरिक्ष १ भौम २ अंग ३ स्वर ४ स्वप्न ५ लक्षण ६ व्यंजन ७ छिन्न ८ ये आठ महा निमित्त ज्ञान जे हैं तिनको विषय जो है सो लोक है। अर जहां वस्त्रका सूतकै समान अथवा चर्मका अवयवके समान आनुपूर्वी करि ऊर्ध्व अध तिर्यक् व्यवस्थित असंख्यात आकाशका प्रदेशकी भूमि है ते श्रेणी कहिये। अर अलो-काकाश अनंतो जो है ताका बहु मध्यके विषैं सुप्रतिष्ठक कहिये ठौणा जो है ताका संस्थानके समान संस्थान वान लोक है तामैं ऊर्ध्वलोक तो मृदंगकी आकृति है अर अधोलोक वेत्रासन जो कुरसी ताकी आकृति है अर मध्यलोक झालरिके आकृति है। सो तनुवातलय करि वेष्टित ऊर्ध्व अधः तिर्यक्के विषै चहूं तरफ वेष्टित है अर चतुर्दश रज्जू प्रमाण लंबो है अर मेरु १ प्रतिष्ट २ वज्र ३ वैडूर्य ४ पटल ५ अन्तर ६ रुचक ७ सांस्थित ८ इन नामके धारक अष्ट आकाशके प्रदेश हैं सो लोकको मध्य है। अर लोकका मध्यतैं यावत् ऐशान स्वर्गको अंत है तावत् ड्योढ़ रज्जू है। अर माहेंद्र स्वर्गका अन्तमें तीन रज्जू है। अर ब्रह्म लोकका अन्तमें साढ़ा तीन रज्जू है। अर कापिष्ट स्वर्गका अन्तमें च्यार रज्जू है। अर महाशुक्र स्वर्गका अन्तमें साढ़ी च्यार रज्जू है। अर सहस्रार स्वर्गको अन्तमें पांच रज्जु है। अर प्राणत स्वर्गका अन्तमें साढ़े पांच रज्जू है। अर अच्युत स्वर्गका अन्तमें छह रज्जु है। अर लोकका अन्तमें सात रज्जु है। बहुरि तैसैं ही लोकका मध्यतैं नीचे यावत् शर्करा पृथिवीको अन्त है तावत् एक रज्जू है तातैं नीचे पांच पृथिवीनिके प्रत्येक एक एकका अन्त अन्तमें एक एक रज्जु वृद्धिनें प्राप्त भई है तातैं नीचैं तमस्तम प्रभा पृथिवीतैं लोक पर्यंत एक रज्जु है ऐसैं नीचे सात रज्जु है। बहुरि या लोकके घनोदधि घनवात तनुवातका वलय तीन है इन करि यो सर्व लोक सर्व तरफतैं वेष्टित है। अर लोकके नीचे तथा लोककी दिग विदिग् पार्श्ववर्ती कलंकल नामा सातमी पृथ्वी

पर्यंत तीनूं ही वातवलयनिको प्रत्येक विस्तार वीस वीस हजार योजन है। अर ताकै उपरि अनुक्रमतैं हानिका वशतैं तिर्यग्लोक वर्ती आठ दिशा विदिशा संबंधी पार्श्वके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय पंच च्यार तीन योजन विस्तीर्ण है। बाहुरि वाकै उपरि वृद्धिका वशतैं ब्रह्मलोकमें आठूं ही दिशा विदिशाके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय सात पांच च्यार योजन विस्तीर्ण है। वहुरि वाके ऊपरि हानिका वशतैं लोकका अग्रके विषैं आठूं ही दिशा विदिशा संबंधी पार्श्वके विषैं प्रत्येक तीनूं ही वलय पांच च्यार तीन योजन विस्तीर्ण दंड वलय है। वहुरि नीचैं तीनूं ही वलय ऐसें है कि ऊपरि लोकका अग्रके विषैं घनोदधिको तो विस्तार दोयकोश अर तनुवातको विस्तार किंचित् घाटि एक कोश प्रमाण है। वहुरि नीचे कलंकल नामा सातमी पृथ्वीका पर्यंतके समीप घनोदधिको तो विस्तार सात योजनको है अर घनवातको विस्तार पांच योजनको अर तनुवातको विस्तार च्यार योजनको है। भावार्थ—लोकका मूलतैं कलंकल नामा सातमी पृथ्वी पर्यंत तो वीस वीस हजार योजनको प्रत्येक विस्तार पूर्वै कह्यो है अर वा पर्यंततैं उपरि सात पांच च्यार योजनको इहां कह्यो है। अर अधो लोक मूलके विषैं दिशा विदिशामें चौड़ो सात रज्जु है अर तिर्यक् लोकके विषैं एक रज्जु चौड़ो है अर ब्रह्मलोकके विषैं पांच रज्जु चौड़ो है अर लोकका अग्रके विषैं एक रज्जु चौड़ो है। वहुरि लोकके विषैं चौड़ो एक रज्जु अर षट् रज्जुका सातसा भाग है ता पीछें एक राजू नीचे जाय बालुका पृथ्वीका अन्तके विषैं दोय राजू अर पांच रज्जूका अन्तमें सात भाग चौड़े है ता पीछें एक रज्जु नीचे अवगाहन करि पंक प्रभाका अन्तके विषैं तीन रज्जू अर च्यार रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछें एक राजू नीचे अवगाहन करि धूम प्रभाका अन्तमें च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है। ता पीछे एक रज्जू नीचे अवगाहन करि तम प्रभाका अन्तमें पांच रज्जू अर दोय रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है ता पीछें एक रज्जू नीचे अवगाहन करि तमस्तम प्रभाका अन्तमें षट्

रज्जू अर एक रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू नीचे अवगाहन करि कलंकलका अन्तमें सात रज्जू चौड़ो है। वहुरि वज्र तल जो लोकको मध्य तातैं ऊपरि एक रज्जू उल्लंघन करि दोय रज्जू अर एक रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि तीन रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं ऊर्ध्व रज्जू उपरि उल्लंघन करि पांच रज्जू चौड़ो है ता पीछैं ऊर्ध्व रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि च्यार रज्जू अर तीन रज्जूका सप्त भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि तीन रज्जू अ रदोय रज्जूका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू ऊपरि उल्लंघन करि दोय रज्जू अर एक रज्जुका सात भाग चौड़ो है ता पीछैं एक रज्जू उपरि उल्लंघन करि लोकका अन्तके विषैं एक रज्जू चौड़ो है या रज्जू विधि है। वहुरि हंति धातुके गमन क्रियावान पणातैं आत्म प्रदेशनिको एकत्र होय वाहिर उद्गमन होय सो समुद्घात है सो सात प्रकार है तिनके नाम वेदना १ कषाय २ मारणांतिक ३ तेजो ४ विक्रिया ५ आहारक ६ केवली सात विषयनिका भेदत ये नाम है। तिनमें वात आदितैं उत्पन्न भया रोगका तथा विष आदि द्रव्यका संबंधतैं उत्पन्न भया संताप करि ग्रहण करी वेदनाको कियो वेदना समुद्घात होय है। अर वाह्य अभ्यंतर कारणकी उत्कर्षता करि उत्पन्न भया क्रोधादिकको कीयो कषाय समुद्घात होय है। अर उपक्रम अनुक्रम रूप आयुका क्षय करि प्रगट भयो है मरणांत प्रयोजन जा विषैं सो मारणांतिक समुद्घात होय है। अर जीवनिका अनुग्रह तथा उपघात करनेमें समर्थ एसो तैजस शरीर जो है ताका रचवा निमित्त जो है सो तैजस समुद्घात है। अर एकत्व तथा पृथक्त्व रूप नाना प्रकार विक्रिया मई शरीरका तथा वचनका प्रचार ग्रहण आदि विक्रियाको है प्रयोजन जा विषैं सो वैक्रियक समुद्घात है। अर उक्त विधिकरि अल्प सावद्य पूर्वक सूक्ष्म अर्थको ग्रहण है प्रयोजन जा-विषैं ऐसा आहारक शरीरकी रचनाके अर्थि

आहारक समुद्घात है। अर वेदनीय कर्मका बहुपणातैं तथा आयु कर्मका अल्प पणातैं अनाभोग पूर्वक कहिये विना भोग कीया ही वेदनीय कर्मकी स्थितिनैं आयु कर्मकी स्थितिकै समान करवा निमित्त द्रव्य स्वभाव पणातैं सुरा द्रव्यको झाग वेग बुद्बुदानिका प्रगट होना तथा उपशम होनाके समान देहनैं तिष्ठता आत्म प्रदेशनिको वाहिर निष्कासन जो है सो केवलिसमुद्घात है। अर आहारक समुद्घात तथा मारणांतिक समुद्घात तो एक दिशामें ही प्रवर्त्तनें वारे हैं क्योंकि आत्मा आहारक शरीरनें रचतो संतो श्रेणी गति पणातैं एक दिशा संबंधी असंख्यात आत्म प्रदेशनिनें वाहिर निकासि करि एक हाथ प्रमाण आहारक शरीरनें रचै है क्योंकि अन्य क्षेत्रमें समुद्घात करनेंका कारणको अभाव है यातैं। अर यानै जहां नरकादिक क्षेत्रमें उत्पन्न होनों है तहां ही मारणांतिक समुद्घात करि आत्म प्रदेश एक दिशावर्ती निकसै है अन्य क्षेत्रमें नहीं निकसै है यातैं दोऊ एक दिशावर्त्ती है अर्थात् आहारक तो निकट वर्ती जा क्षेत्रमें केवली भगवान विद्यमान है ता ही क्षेत्रके सन्मुख जाय है अर मारणांतिक जा क्षेत्रमें उत्पन्न होनों है ताही क्षेत्रके सन्मुख जाय है तातैं अन्य क्षेत्रमें जावनेंका कारणको अभाव कह्यो है। अर अवशेष पाचूं समुद्घात छहूं दिशावर्ती है। यातैं वेदनादिक समुद्घातका वशतैं वाहिर निकस्या आत्म प्रदेशनिको पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर ऊर्ध्व अधः ये ही छहूं दिशा जे हैं तिनकै विषैं गमन इष्ट है क्योंकि आत्म प्रदेशनिकै श्रेणी गति पणौं है यातैं। वेदना १ कषाय २ मारणांतिक ३ तेजः ४ वैक्रियिक ५ आहारक ६ ये षट् समुद्घात तो संख्यात समय वर्ती है अर केवलि समुद्घात अष्ट समयवर्ती है सो दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूर्ण ये च्यार कर्म तो च्यार समयमें करै है। बहुरि प्रतर कपाट दंड स्व शरीरमें पीछो प्रवेश ये च्यार कर्म च्यार समयमें करै है। ऐसैं समुद्घात जानना। बहुरि जहां रवि शशि ग्रह नक्षत्र तारा गण जे हैं तिनको चार उपपादि गति तथा विपर्यय गति फल जे हैं तिननें तथा

शकुनको कथन तथा अर्हत् बलदेव वासुदेव चक्रधर आदिके गर्भावतार आदि महा कल्याणनिनें कहे हैं सो कल्याण नामधेय पूर्व है। बहुरि जहां काय चिकित्सा आदि अष्टांग आयर्वेद तथा प्रथ्वी आदि भूतनिका कर्मको अनुक्रम तथा सर्प आदि जंगम जीवनिका कर्मको अनुक्रम तथा प्राणापान कहिये श्वासोछ्वासको विभाग शुभाशुभ रूप विस्तार करि वर्णन कियो है सो प्राणवाय पूर्व है। बहुरि जहां बहत्तरि संख्या प्रमाण लेखन आदि कला अर स्त्रियांका चौसठि संख्या प्रमाण गुण अर समस्त शिल्प कर्म अर काव्यके गुण दोष क्रिया तथा छंदकी रचना अर क्रिया अक्रियाका फलका उपभोक्ता वर्णन कियो है सो क्रिया विशाल पूर्व है। बहुरि जहां अष्ट तो व्यवहार अर च्यार बीज अर परिकर्म राशिकी क्रियाको विभाग अर और सर्व श्रुतकी संपत्ति कही है सो लोक विंदुसार पूर्व है। ऐसैं द्वादश अंगनिको स्वरूप जाननों अर अङ्गनिके पदनिकी संख्या तथा पदका प्रमाण गोमट्टसारकी वचनिका तैं तथा अन्य ग्रंथतैं जानना। वार्तिक—आरातीयाचार्यकृतांगार्थप्रत्यासन्नरूपमंगबाह्यम् ॥ १३ ॥ अर्थ—अङ्गधारीनितैं पीछे भये जे आरातीय अचार्य तिनके बनाये अङ्गनिके अर्थनिका संक्षेप रूप जे हैं ते अङ्गबाह्य है। टीकार्थ—जो गणधरनिके शिष्य प्रति शिष्य भये तथा जान्यूं है श्रुतार्थको तत्व जिननें ऐसैं आरातीय जे हैं तिननें काल दोषतैं अल्प बुद्धि अल्प आयु अल्प बलवान जे हैं तिन प्राणीनिका अनुग्रहके निमित्त संक्षेप रूप अङ्गनिका अर्थको तथा वचनको है स्थापन जामें ऐसो जो उपनिबद्ध कहिये रचना रूप कियो सो अङ्गबाह्य है ॥ १३ ॥ वार्तिक—तदनेकविधं कालिकोत्कालिकादिविकल्पात् ॥ १४ ॥ अर्थ—सो अङ्गबाह्य कालिक उत्कालिक विकल्पतैं अनेक विकल्प रूप है। टीकार्थ— सो अङ्गबाह्य कालिक उत्कालिक रूप अनेक प्रकार है तिनमें कितनेक तो स्वाध्यायके समयमें नियत काल रूप कालिक है कि समयके समयमें ही पठन पाठनके योग्य है अर कितनेंक अनियत काल रूप उत्कालिक है कि सर्व समयमें ही

पठन पाठनके योग्य है इत्यादिक विकल्प है यातैं अर तिनके भेद उत्तराध्ययन आदि अनेक प्रकारके हैं ॥ १४ ॥ इहां वादी कहै है कि सूत्रकारनें अनुमानादिकनिको भिन्न उपदेश नहीं कियो ताको कहा प्रयोजन है ? उत्तर रूप वार्तिक—अनुमानादीनां पृथगनुपदेशः श्रुतावरोधात् ॥ १५ ॥ अर्थ—अनुमानादिकनिको भिन्न उपदेश नहीं है सो श्रुतज्ञानमें अंतरभूत है यातैं नहीं है। टीकार्थ—जातैं ये अनुमानादिक जे हैं ते श्रुतज्ञानमें अन्तरगत होय है तातैं तिनको पृथक् उपदेश सूत्रकार नहीं कीयो है सो ऐसै है कि प्रत्यक्षपूर्वक तीन प्रकार अनुमान है तिनके नाम ये है कि पूर्ववत् १ शेषवत् २ सामान्यतोद्रष्ट ३ तिनमें जानैं अग्नितैं निकसतो धूम पूर्वै देख्यो सो प्रसिद्ध अग्नि धूमका संबंध करि ग्रहण कीयो है संस्कार जानें ऐसो पुरुष पीछें धूमका दर्शनतैं इहां अग्नि है ऐसैं पूर्ववत् अग्निनें ग्रहण करै है यातैं पूर्ववत् अनुमान है। बहुरि तैसैं ही जानें पूर्वै विषाण विषाणीको संबंध जान्यो है ताके विषाणको रूप देखियातैं विषाणीके विषैं अनुमान होय सो शेषवत् अनुमान है। बहुरि तैसैं ही देवदत्तकी देशांतरमें प्राप्ति गति पूर्वक देखि संबंध्यंतर कहिये गतिको संबंधी जो देवदत्त तातैं अन्य सूर्य जो है ताके विषैं देशांतर प्राप्तिका दर्शनतैं अत्यन्त परोक्ष जो गति ताको अनुमान है सो सामान्यतो दृष्ट अनुमान है सो ये तीनूं ही अनुमान अपनें प्रतीति उत्पन्न करनेके समयमें तो अनक्षर श्रुत रूप है अर परके प्रतीति उत्पन्न करनेके समयमें अक्षर श्रुत रूप है। बहुरि जैसैं गौ है तैसैं ही गवय है केवल सास्ना जो गलकंबल ता करि रहित ही है ऐसैं उपमान प्रमाण जो सो भी स्व परकी प्रतीति रूप विषय पणातैं अक्षर अनक्षर स्वरूप श्रुतके विषैं अन्तरगत होय हे। बहुरि शब्द प्रमाण भी श्रुत ही है क्योंकि भगवान ऋषभ देव ऐसैं कहै है या प्रकार परंपरातैं आया पुरुपागमतैं या समय वर्तीनिको वचन भी ग्रहण करिये है यातैं श्रुतमें अन्तरभाव होय है। बहुरि प्रकृतितैं पुष्ट पुरुष दिवसमें नहीं भोजन करै है अर जीवै है ऐसा वचनमें

अर्थनें प्राप्त होय है कि रात्रिमें भोजन करै है ऐसैं अर्थापत्ति प्रमाण है अर चार प्रस्थको एक आढक होय है ऐसो ज्ञान होत संतै आढकनें देखि कहै है कि अर्द्ध आढकको कोद्रव संभवैं है ऐसैं प्रतिपत्ति प्रमाण संभवै है। बहुरि तृण गुल्म आदिकै सचिक्कण पत्रफल आदिको अभाव देखि अनुमान करिये है कि इहां निश्चय करि मेघ नहीं वर्ष्यो है ऐसैं अभाव प्रमाण है। ये अर्थापत्ति आदि सूत्रमें नहीं कहे जे हैं तिनको भी अनुमानके समान पूर्ववत् श्रुतमें अतंरभाव होय है ऐसैं परोक्ष प्रमाण तो व्याख्यान कीयो अबैं प्रत्यक्ष ज्ञान कहने योग्य है सो दोय प्रकार है तिनमें प्रथम देश प्रत्यक्ष है दूसरो सकल प्रत्यक्ष है, तहां अवधिज्ञान मनःपर्यय ज्ञान तो देश प्रत्यक्ष है अर केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष है ॥ १५ ॥ २० ॥ अबैं इकवीसमा सूत्र की उत्थानिका लिखिये है कि ऐसैं ही है तो तीन प्रकारका प्रत्यक्ष की आदिमें प्रथम यो अवधिज्ञान है सो ही व्याख्यान करने योग्य है। इहां उत्तर कहिये है कि याको लक्षण कह्यो है कि आत्माके प्रशाद विशेषनैं होतां सतां सार्थक संज्ञा करवातैं अवधीयते कहिये मर्याद करिये है सो अवधिज्ञान है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो वाके भेद कहनो योग्य है? उत्तर कहिये है कि भवप्रत्यय अर गुण प्रत्यय भेदतैं तथा देशावधि सर्वावधिभेदतैं अवधिज्ञान दोय प्रकार है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि रूप त्रिविध पणौं नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि सर्व शब्दकै निरवशेष वाची पणौं है यातैं सर्वावधिनैं अपेक्षा करि परमावधिकै देशाविधि पणौं ही कहै है तिनमें जो यो भव प्रत्यय है ताका प्रतिपादनके आर्थि सूत्रकार कहै है।

सूत्रम्—

भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥

अर्थ—भव है कारण जानें ऐसो अवधि देव और नारकीनिकै होय है। प्रश्न, भव ऐसैं कहिये

है सो भव नाम कहा है? उत्तर रूप वार्तिक—आयुर्नामकर्मोदयविशेषा पादितपर्यायो भवः ॥ १ ॥ अर्थ—आयु कर्म अर नाम कर्मका उदय विशेष ग्रहण कीयो पर्याय जो है सो भव है ॥ टीकार्थ—आत्माके पर्याय है सो आयुका अर नामका उदय विशेषतैं तथा अवशेष कारण की अपेक्षातैं प्रकट होय है सो साधारण लक्षण भव है ऐसैं कहिये है ॥ १ ॥ वार्तिक—प्रत्ययशब्दस्यानेकार्थसंभवे विवक्षातो निमित्तार्थगतिः ॥ २ ॥ अर्थ—प्रत्यय शब्दका अनेक अर्थ संवभवतां संता भी वक्ताकी इच्छातैं निमित्त अर्थकी प्राप्ति है। टीकार्थ—यो प्रत्यय शब्द अनेकार्थ रूप है कि कहूं ज्ञान अर्थ में प्रवर्तै है सो जैसैं "अर्थाभिधानप्रत्ययः" याको अर्थ ऐसो है कि अर्थ अभिधान अर प्रत्यय कहिये ज्ञान है। बहुरि कहूं शपथ अर्थमें प्रवर्तै है सो जैसैं "पर द्रव्यहरणादिषु सत्सु पालंभे प्रत्ययोऽनेन कृतः" याको अर्थ ऐसो है कि पर द्रव्यहरण आदिके विषैं उपालभनें होतां संता यानैं शपथ कियो है। बहुरि कहूं हेतु अर्थमें प्रवर्तै है सो जैसैं "अविद्या प्रत्ययाः संस्काराः" याको अर्थ ऐसो है कि अविद्या है कारण जिननैं ऐसैं संस्कार है तिनमें वक्ताकी इच्छातैं इहां निमित्त अर्थ जानने योग्य है यातैं भव है प्रत्यय कहिये निमित्त जानैं सो भव प्रत्यय है ॥ २ ॥ वार्तिक—क्षयोपशमाभाव इति चेन्न तस्मिन्सति सद्भावात् खे पतत्रिगतिवत् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, भवनें निमित्त होत संतै क्षयोपशमके निमित्त पणांको अभाव होय है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि क्षयोपशमनें होतां संता भवको सद्भाव होय है यातैं आकाशमें पक्षीकी गतिके समान है। टीकार्थ—जो वहां भव निमित्त अवधि है तो कर्मको क्षयोपशम निमित्त है ऐसैं कहनो अनर्थक है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, क्षयोपशमनें होतां संतां भवका सद्भावतै भव निमित्त कहिये है सो आकाशनें पक्षीका गमनके समान है सो ऐसैं है कि जैसे आकाशनें होतां संता पक्षीकी गति है तैसैं अवधिज्ञानावरणका क्षयोपशमरूप अंतरंग हेतुनें विद्यमान

होत संतैं पक्षीके समान भव प्रत्यय अवधिको होनों है अर भव जो है सो वाह्य निमित्त है ॥ ३ ॥ वार्तिक—इतरथा ह्यविशेषप्रसंगः ॥ ४ ॥ अर्थ—भव वाह्य निमित्त नहीं है तो निश्चय करि अवधिकै अवशेष रूप होनेको प्रसंग आवै। टीकार्थ—निश्चय करि जो भव हेतु होय तो सर्व देव नारकीनिकै भवरूप हेतु तुल्य है यातैं अवधिकै अविशेपको प्रसंग होय अर प्रकर्ष अप्रकर्ष भाव करि अवधिकी प्रवृत्ति इष्ट है। प्रश्न, तो फेर भव हेतु कैसैं है? उत्तर, ऐसैं कहो-हो तो सुनू कि व्रत नियम आदिका अभावतैं भव हेतु है कि जैसैं तिर्यंचनिकै तथा मनुष्यनिकै अहिंसा व्रत नियम पूर्वक अवधि होय है तैसैं देव नारकीनिकै अहिंसादि व्रतनियमको योग नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर भवनें प्रतीति करि कर्मका उदयको तैसैं होनों है यातैं तातैं वहां भव ही वाह्य साधन है ऐसैं कहिये है ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—अविशेषात्सर्वप्रसंग इति चेन्न सम्यगधिकारात् ॥ ५ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें विशेष नहीं है यातैं सर्व देवनारकीनिकै अवधिको प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि सम्यक्को अधिकार है यातैं। टीकार्थ—देव नारकीनिकै ऐसा अविशेष रूप वचनतैं मिथ्यादृष्टीनिके भी अवधिको प्रसंग होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर सम्यक्का अधिकारतैं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान ऐसा अनुवर्तै है ताका संवंधतै सम्यग्दृष्टीनिके तो अवधि है अर मिथ्यादृष्टीनिके विभंग ज्ञान है ऐसैं जानवे योग्य है अथवा आगानें कहेंगे ताका अभिसंबंधतैं सर्वके अवधिको प्रसंग नहीं आवै है सो निश्चय करि ऐसैं कहेंगे कि मतिश्रुतावधयोर्विपर्ययश्च याको अर्थ ऐसो है कि मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान विपर्यय भी है अर सम्यक् भी है अथवा व्यख्यानतै कि शास्त्रतैं विशेषकी प्रतीति है ॥ ५ ॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—आगमे प्रसिद्धे नारकशब्दस्य पूर्वनिपात इति चेन्नोभयलक्षणप्राप्तत्वाद्देवशब्दस्य ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, आगममें नारक शब्द की प्रसिद्ध है यातैं पूर्व निपात होनों योग्य है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि देव शब्दके उभय लक्षण

प्राप्तपणौं है यातैं। टीकार्थ—नारक शब्दको पूर्व निपात करि होनों योग्य है। क्योंकि आगममें प्रसिद्ध है यातैं सो ऐसैं हैं कि निश्चय करि आगममें जीव स्थान आदिमें तथा सत् संख्या आदिका विवर्णमें अनुयोग द्वार करि आदेश वचनमें नारकीनिकी ही आदिमें सत् आदि प्ररूपणा करी है तातैं नरक शब्दको पूर्व निपात करि होनों योग्य है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, देव शब्दके उभय लक्षण प्राप्त पणातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि देव शब्द ही अल्प स्वरवान है अर उत्तम है यातैं सूत्रमें पूर्व प्रयोगके योग्य है अथवा आगममें वाच्य है विषय जाको ऐसो ही निर्देश करनों सो ऐसो नियम नहीं है। प्रश्न, तुमनें कह्यो है कि प्रकर्ष अप्रकर्ष भाव करि अवधिकी प्रवृत्ति इष्ट है यातैं वा प्रवृत्ति कैसैं है ऐसैं कहा हो तो कहिये है कि देवनिमें प्रथम भवन वासीनिकै विषैं दश प्रकारकेनिकै ही जघन्य अवधि तो पचीस योजन प्रमाण है अर उत्कृष्ट अधो भागमें तो असुर कुमारनिमें असंख्याता योजन कोटाकोटि पर्यंत है अर ऊर्ध्वभागमे ऋजुविमान प्रथम स्वर्गको जो है ताका उपरिम भाग पर्यंत है अर नागकुमार आदि नव प्रकार जे हैं तिनमें भी उत्कृष्ट अवधि अधो भागमें तो असंख्यात योजन सहस्र पर्यन्त है अर ऊर्ध्व भागमें मंदर मेरुकी चूलिका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यग् असंख्यात सहस्र योजन सर्व भवन वासीनिकै अवधि है। बहुरि अष्ट प्रकार व्यंतर जे हैं तिनकै जघन्य अवधि तो पचीस योजन प्रमाण है अर उत्कृष्ट भी अधो भागमें असंख्याता योजन सहस्र प्रमाण है अर ऊर्ध्वभागमें अपना विमानका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यक् असंख्याता कोटाकोटी योजन प्रमाण है। बहुरि वैमानिकनिकै विषैं सौधर्म ऐशान स्वर्ग निवासीनिकै जघन्य अवधि ज्योतिषीनिके उत्कृष्ट है सो है अर उत्कृष्ट अधो भागमें रत्न प्रभाका अंत पर्यंत है अर सानत्कुमार माहेंद्र निवासीनिकै अधोभागमें जघन्य अवधि तो रत्न प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें शर्करा प्रभाका अन्त पर्यन्त है अर ब्रह्म

ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्ट स्वर्ग निवासीनिकै अधो भागमें जघन्य शर्करा प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें वालुका प्रभाका अंत पर्यंत है। अर शुक्र महा शुक्र सतार सहस्रार निवासीनिकै अधो भागमें जघन्य अवधि वालुका प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधोभागमें पंक प्रभाका अंत पर्यन्त है। अर आनत प्राणत आरण अच्युत निवासीनिकै अधोभागमें जघन्य अवधि पंक प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधो भागमें धूम प्रभाका अंत पर्यंत है अर नव ग्रैवेयिक निवासीनिके अधोभागमें जघन्य अवधि धूम प्रभाका अंत पर्यंत है अर उत्कृष्ट अधोभागमें तम प्रभाका अंत पर्यंत है अर नव अनुदिश निवासीनिकै तथा पंच अनुत्तर विमान निवासीनिकै अधोभागमें लोक नाली पर्यंत है अर सौधर्मादि अनुत्तर निवासीनिकै ऊर्ध्व भागमें अपना विमानका उपरिम भाग पर्यंत है अर तिर्यग् असंख्याता योजन कोटाकोटी है। प्रश्न, अथानंतर इनि सब देवनिकै काल द्रव्य भाव जे हैं तिनके विषैं कितनी अवधि है? उत्तर, इहां कहिये है कि जाकै यावत् क्षेत्रको अवधि है ताकै तावत् आकाशका प्रदेशनिका परिज्ञाननैं होनां संता कालके विषैं अर द्रव्यके विषैं भी परिज्ञान होय है अर्थात् उतना ही अतीत अनागत समयमें अवधिज्ञान प्रवर्तै है अर उतना ही असंख्यात भेद रूप अनंत प्रदेशात्मक पुद्गल स्कंध जे हैं तिनके विषैं तथा कर्म सहित जीवनिके विषैं अवधिज्ञान प्रवर्तै है। वहुरि भावतैं ऐसैं जाननां कि अपना विषय पुद्गल स्कंधनिकै जे रूपादिक विकल्प है तिनके विषैं तथा औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक जीवके परिणाम जे हैं तिनके विषैं अवधिज्ञान प्रवर्तै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, इनिके पौद्गलिक पणौं है यातैं। अथानंतर नारकीनिकै विषैं ऐसैं है कि एक योजन प्रमाण है सो अर्द्ध कोश हीन यावत् हैं कि एक कोश प्रमाण है सो ऐसैं है कि रत्न प्रभाके विषैं अधोभागमें एक योजन अवधि है अर दूसरी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें साढ़ा तीन कोश प्रवर्तै है अर तीसरी पृथ्वीके विषैं अधोभागमें अवधिज्ञान तीन कोश प्रवर्तै है

अर चौथी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें ढाई कोश प्रवर्तै है अर पांचमी पृथ्वीके विषैं-अवधि ज्ञान अधोभागमें दोय कोश प्रवर्तै है अर छठी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभाग ड्योढ़ कोश प्रवर्तै है अर सातमी पृथ्वीके विषैं अवधिज्ञान अधोभागमें एक कोश प्रवर्तै है अर सातूं ही पृथ्वीके विषैं नारकीनिकै अवधि उपरिम भागके विषैं अपना नरकरूप आवासका अंत पर्यंत प्रवर्तै है अर तिर्यग् असंख्याता कोटा कोटी योजन पर्यंत प्रवर्तै है अर कालतैं तथा द्रव्यतैं तथा भावतैं परिमाण पूर्ववत् जाननें योग्य है॥ ६ ॥ २१ ॥ अबैं बाईसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो भव प्रत्यय अवधि देवनारकीनिकै है तो क्षयोपशम निमित्त कौनकै है ऐसा प्रश्न होतां संता सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

क्षयोपशमनिमित्तः षड् विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥

अर्थ—क्षयोपशम निमित्त अवधि मनुष्य तिर्यंचनिकै है सो षट् भेद रूप है। टीकार्थ—क्षयोपशम निमित्त अवधि षट् भेद रूप देव नारकीनितैं अन्य मनुष्य तिर्यंच जे हैं तिनकै होय है सो अवधिज्ञानावरणका देशघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयनें होतां संता सर्व घाती स्पर्द्धकनिको उदयाभाव जो है सो क्षय है अर उदयनें नहीं प्राप्त भया वे ही जे हैं तिनकी सद् अवस्था जो है सो उपशम है अर ये दोऊ है निमित्त जाकूं ऐसो क्षयोपशम निमित्त अवधि जो है सो अवशेष जे हैं तिनके जानवे योग्य है? प्रश्न, वे अवशेष कौन है? उत्तर, मनुष्य अर तिर्यंच है प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—शेषग्रहणादविशेषप्रसंग इति चेन्न तत्सामर्थ्यविरहात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, शेष पदका ग्रहणतैं विशेष रहित मनुष्य तिर्यंचनिके अवधिके होनेको प्रसंग आवै है उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अवधि होनेकी सामर्थ्यको विरह है यातैं। टीकार्थ—देव नारकीनितैं अन्य है ते शेष है तातैं तिन सर्व तिर्यंचनिकै तथा सर्व मनुष्यनिकै अविशेषतैं अवधिको

प्रसंग आवे है कि सर्व तिर्यंच मनुष्यनिकै अवधि होवै ऐसो प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा सामर्थ्यको विरह है यातैं असंज्ञीनिकै तथा अपर्याप्तनिकै वा अवधिज्ञानके उत्पन्न करनेको सामर्थ्य नहीं है अर सर्व ही संज्ञीनिकै तथा सर्व ही पर्याप्तनिकै भी वा अवधिज्ञानकै उत्पन्न करनेको सामर्थ्य नहीं है ॥१॥ प्रश्न, तो अवधिज्ञानकै उत्पन्न करनेको सामर्थ्य कौनकै है? उत्तररूप वार्तिक— यथोक्तनिमित्तसंनिधाने सति शांतक्षीणकर्मणां तस्योपलब्धेः ॥२॥ अर्थ—यथोक्त सम्यक्त्वके निमित्तनिके होनेकी निकटतानें होता संता उपशम रूप तथा क्षीण रूप भयो है कर्म जिनकै तिनकै अवधिकी प्राप्ति होय है यातैं। टीकार्थ—यथोक्त सम्यग्दर्शन आदि निमित्तकी निकटतानें होतां संता शांत भयो है तथा क्षीण भयो है अवधिज्ञानावरण कर्म जिनके तिनके अवधिज्ञानकी प्राप्ति होय है। सर्व मनुष्य तिर्यंचनिकै क्षयोपशम निमित्त नहीं होय है ॥२॥ प्रश्न, क्षयोपशमनिमित्तः शेषाणां, ऐसैं कह्यो है। उत्तर रूप वार्तिक—सर्वस्य क्षयोपशम निमित्तत्वे तद्वचनं नियमार्थं अब्भक्षवत् ॥३॥ अर्थ—उत्तर, सर्वके क्षयोपशम निमित्त पणानें होतां संता क्षयोपशम निमित्त वचन जो है सो नियमके अर्थि अप् भक्ष समान है। टीकार्थ—जैसैं कोउ जल ही भक्षण करै है सो नहीं है अर्थात् जल सर्व ही भक्षण करै है तो हू यो जल भक्षण करै है ऐसो कहनों जो है सो नियमके अर्थि कहिये है कि जल ही भक्षण करै है तैसैं ही सर्वके क्षयोपशम निमित्त पणानें होतां संता भी क्षयोपशम पदको ग्रहण नियमके अर्थि है कि मनुष्यनिके तथा तिर्यंचनिके क्षयोपशम निमित्त ही है भव निमित्त नहीं है सो या अवधि षट् विकल्प रूप है ॥३॥ प्रश्न, काहेतैं? उतररूप वार्तिक—अनुगाम्यननुगामिऽवर्धमानहीयमानावस्थिताऽनवस्थितभेदात् षड्विधः ॥४॥ अर्थ—उत्तर, अनुगामी अननुगामी वर्धमान हीयमान अवस्थित अनवस्थित भेदतैं षट् प्रकार है। टीकार्थ—उत्तर, अनुगामी १ अननुगामी २ वर्धमान ३ हीयमान ४ अवस्थित ५ अनवास्थित ६ ऐसा भेदतैं अवधिज्ञान षट् प्रकार है तिनमें कोई अवधि सूर्यका

प्रकाशके समान गमन करताके साथि गमन करै है सो अनुगामी है। अर कोऊ अवधि सन्मुख-प्रश्नको उत्तर देनेवारो पुरुष जो है ताका वचनके समान साथि गमन नहीं करे है। उत्पत्ति स्थानमें ही अत्यंत छूटि जाय है सो अननुगामी है अर और अवधी अरणीका मथनतैं उत्पन्न भयो अर शुष्क पत्रनिका संचय रूप ईंधनका समूहमें प्रज्वलित भयो अग्नि जो है ताके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी विशुद्धिरूप परिणामका निकट होवातैं जा परिणाम उत्पन्न रूप भयो तातैं असंख्यात लोक पर्यंत वृद्धिनें प्राप्त होय है सो वर्द्धमान है अर और अवधि विछेदनें प्राप्त भई है उपादान कारणकी संतति जाके ऐसा अग्निकी शिखाके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी हानि तथा संक्लेश परिणामकी वृद्धिका योगतैं जा परिणामरूप उत्पन्न भयो तातैं अंगुलका असंख्यातवां भाग पर्यन्त घटै है सो हीयमान है अर और अवधि लिंगके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिका अवस्थानतैं जा परिणामरूप उत्पन्न भयो तातैं वा परिमाण ही वा भवका चय पर्यंत तथा केवलज्ञानकी उत्पत्ति पर्यंत तिष्ठै है नहीं घटै है नहीं वधे है सो अवस्थित है अर और अवधि वायुका वेग करि प्रेरित जलकी तरंगके समान सम्यग्दर्शन आदि गुणनिकी वृद्धि तथा हानिका योगतैं जा परिमाण उत्पन्न होय है तातैं यानैं यावत् वृद्धिनैं प्राप्त होनों है तावत् वधे हैं अर यानैं यावत् घटनों है यावत् घटै हैं सो अनवस्थित है ऐसैं षट् विकल्परूप अवधि है॥४॥

वार्तिक—पुनरपरेऽवधेस्त्रयो भेदाः देशावधिःपरमावधिःसर्वावधिश्चेति ॥ ५ ॥ अर्थ—अथवा अवधिका और तीन भेद है कि देशावधि परमावधि सर्वावधि रूप हैं। टीकार्थ—बहुरि और अवधि देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ६ रूप तीन है तिनमें देशावधि जघन्य उत्कृष्ट मध्यम भेद रूप तीन प्रकार है तैसैं ही परमावधि भी जघन्य उत्कृष्ट मध्यम भेद रूप तीन प्रकार है अर सर्वावधि निर्विकल्प पणातैं एक रूप ही है तिनमें जघन्य देशावधि जो है सो उत्सेधांगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्र पर्यंत है अर उत्कृष्ट देशावधि सर्व लोक पर्यंत है,

अर इन दोऊनिका मध्यमें प्रवर्तनें वारो अनेक विकल्परूप मध्यम देशावधि है। बहुरि जघन्य परमावधि एक प्रदेश अधिक लोकक्षेत्र प्रमाण है और उत्कृष्ट असंख्यात लोक क्षेत्र प्रमाण है अर मध्यमको मध्यम क्षेत्र है कि नहीं जघन्य है कि नहीं उत्कृष्ट है, अर सर्वावधि उत्कृष्ट परमावधिका क्षेत्रतैं वाहिर असंख्यातक्षेत्र प्रमाण है अर वर्धमान १ हीयमान २ अवस्थित ३ अनवस्थित ४ अनुगामी ५ अननुगामी ६ प्रतिपाती ७ अप्रतिपाती ८ ये आठ भेद देशावधिका होय है। प्रश्न, सूत्रमें छै भेद कहे हैं अर तुम आठ भेद कैसैं कहो हो ? उत्तर, प्रतिपाती अप्रतिपाती भेद जे हैं ते उन ही छहूं भेदनिमें अंतर्गत होय है अर हीयमान तथा प्रतिपाती इनि दोउ भेदनि विना और छहूं भेद परमावधिको होय है अर अवस्थित १ अनुगामी २ वर्धमान ३ अप्रतिपाती ४ ये च्यार भेद सर्वावधिका होय है। तिनमें छै भेद तो उक्त लक्षण है अर वीजलीका प्रकाशके समान विनाशीक प्रतिपाती है अर यातैं विपरीत अविनाशी अप्रतिपाती है अवैं इनको द्रव्य क्षेत्र काल भाव कहे है तिनमें सर्व जघन्य देशावधिको क्षेत्र उत्सेधांगुलका असंख्यातमा भाग मात्र है अर आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र काल है अर अंगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्रका प्रदेश प्रमाण द्रव्य है अर ता प्रमाण क्षेत्रमें व्याप्त असंख्यात स्कंधके विषैं अनंत प्रदेश जे हैं तिनमें ज्ञान प्रवर्तै है अर अपना विषय रूप जो स्कंध तामैं प्राप्त भया जे अनंत वर्ण आदि विकल्प सो भाव है तिनमें ज्ञान प्रवर्तै है। अवैं ताकी वृद्धिकी वृद्धि कहिये है कि एक जीवकै प्रदेशोत्तरा क्षेत्र वृद्धि नहीं है परंतु नाना जीवनिकै प्रदेशोत्तर क्षेत्र वृद्धि है सो सर्व लोक पर्यंत है अर एक जीवके तो अंगुलका असंख्यातमा भाग मूलतैं ऊर्ध्व विशुद्धिका वशतैं मीडककी गति करि अंगुलका असंख्यातमा भाग मात्र क्षेत्र वृद्धि है सो सर्व लोक पर्यन्त है अर नाना जीव भी प्रदेशोत्तर वृद्धि करि तितनों वधै है कि जितनों अंगुलको असंख्यातमो भाग है अर कालकी वृद्धि एक जीवकै तथा नाना जीवनिकै मूल रूप आवलीका असंख्यात-

मा भाग प्रमाण कालतैं कहूं एक समय अधिक वृद्धि होय है सो यावत् आवलीको असंख्यातमो भाग होय अर्थात् विशेष वृद्धि होय तो आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र होय। प्रश्न, सो या क्षेत्र वृद्धि तथा काल वृद्धि कौनसी वृद्धि करि है? उत्तर, च्यार प्रकार करि है कि असंख्यात भाग वृद्धि करि, संख्यात गुण वृद्धि करि, असंख्यात गुण वृद्ध करि वृद्ध होय है ऐसैं ही द्रव्य भी वृद्धनें प्राप्त होतो च्यार प्रकार वृद्धि करि वधै है अर भाव वृद्धि छै प्रकार है कि अनंत भाग वृद्धि, असंख्यात भाग वृद्धि, संख्यात गुण वृद्धि, असंख्यात गुण वृद्धि, अनंत गुण वृद्धि या कही जो क्षेत्र काल द्रव्य भाव वृद्धिता करि सर्वलोक पर्यन्त वृद्धि जानने योग्य है। वहुरि ऐसैं ही हानि भी जानने योग्य है। वहुरि जो अंगुलके असंख्यातमा भाग अवधि क्षेत्र है ताकै आवलीका असंख्यातमा भाग मात्र काल है अर अंगुलके असंख्यातवैं भाग क्षेत्र संबंध आकाशका प्रदेश प्रमाण द्रव्य है अर पूर्व भावतैं कोऊके अनंत गुणा, कोऊके असंख्यात गुणा प्रमाण भाव होय हैं। वहुरि जो अवधि अंगुल मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् न्यून आवली प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है अर जो अवधिका एक कोश मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् अधिक उच्छ्वास प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अवधि जंबूद्वीप मात्र क्षेत्रको है ताकै किंचित् अधिक एक मास प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अवधि मनुष्य लोक मात्र क्षेत्रको है ताकै एक संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अवधि रुचक नामा तेरमूं द्वीप जो है ताका अन्त प्रमाण क्षेत्रको है ताकै प्रथक्त्व संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है। वहुरि जो अधिक संख्यात द्वीप समुद्र प्रमाण क्षेत्रको है ताकै असंख्यात संवत्सर प्रमाण काल है अर द्रव्य भाव पूर्ववत् है ऐसैं जघन्य तथा उत्कृष्ट तिर्यग् क्षेत्र संवन्धी मनुष्यनिको देशावधि कह्यो। अवै तिर्यंचनिको उत्कृष्ट देशावधि कहिये है कि क्षेत्र तो असंख्यात द्वीप समुद्र है अर काल असंख्यात

संवत्सर है अर तैजस शरीर प्रमाण द्रव्य है। प्रश्न, सो तैजस शरीर कितनों है? उत्तर, असंख्यात द्वीप समुद्र संबन्धी आकाशका प्रदेशांके प्रमाण असंख्याता तैजस शरीरकै योग्य द्रव्य वर्गणा जे हैं तिन करि रच्यो है तितना असंख्याता स्कंधनिनैं तथा अनंत प्रदेशनिनैं जानैं है सो भाव है ऐसैं पूर्ववत् तिर्यंचनिको तथा मनुष्यनिको जघन्य देशावधि है। वहुरि तिर्यंचनिकै देशावधि ही होय है, परमावधि सर्वावधि नहीं होय है तथा अनन्तर मनुष्यनिकै उत्कृष्ट देशावधि कहिये है कि असंख्याता द्वीप समुद्र प्रमाण तो चेत्र है अर असंख्याता संवत्सर प्रमाण ही काल है अर कार्माण द्रव्य परिमाण द्रव्य है। प्रश्न, वो कार्माण द्रव्य कितनोंक है? उत्तर, असंख्यात द्वीप समुद्र संबंधी आकाशकै प्रदेशनिकै प्रमाण असंख्याता ज्ञानावर्णादि कार्मण द्रव्य वर्गणा है सो कार्मण द्रव्य है अर भाव पूर्ववत् जाननें कि उतना ही असंख्याता स्कंधनिनैं तथा अनंत प्रदेशनिनें जानै है सो भाव है या देशावधि उत्कृष्ट मनुष्यनिमें संयतीनिकै होय है। अवैं परमावधि कहिये है कि जघन्य परमावधिको चेत्र एक प्रदेशादिक लोक प्रमाण है अर प्रदेशादिक लोक लोकाकाशका प्रदेशांको धारण कियो है प्रमाण जानें ऐसैं अविभागी समय है ते असंख्याता संवत्सर है अर प्रदेशादिक लोकाकाशका प्रदेशांको धारण कियो है प्रमाण जानैं सो द्रव्य है अर भाव पूर्ववत् है या उपरांति चेत्र वृद्धि कहिये है कि नाना जीवनिकै तथा एक जीवकै अवशेष करि विशुद्धिका वशतैं असंख्याता लोक प्रमाण वृद्धि है सो यावत् उत्कृष्ट परमावधिको चेत्र है तावत् असंख्याता लोक प्रमाण वृद्धि है। प्रश्न, वो असंख्यात कितनोंक है? उत्तर, आवलीका असंख्यातमा भाग प्रमाण है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् है अर लोक सहित अलोकाकाशका प्रमाण असंख्याल लोक उत्कृष्ट परमावधिको चेत्र है। प्रश्न, वे असंख्यात लोक कितनें है! उत्तर, अग्निकायका जीवांके तुल्य है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् जाननें सो यो तीनूं

प्रकारको ही परमावधि उत्कृष्ट चारित्रके ही होय है औरके नहीं होय है अर वर्द्धमान ही है, हीयमान नहीं है अर अप्रतिपाती है प्रति पाती नहीं है अर जाके लोक सहित अलोक प्रमाण असंख्यात लोकमें यावत् उत्पन्न भयो है ताके तावत् अवस्थित रहवातें अवस्थित है, अर्थात् उतना प्रमाणतें घटै नहीं है अर अनवस्थित भी है परन्तु वृद्धि प्रति है हानि प्रति नहीं है अर या लौकिक देशांतर गमनतें अनुगामी है अर्थात देशांतरमें जावते नहीं छूटै है यातें अननुगामी है अर्थात् या उत्कृष्ट परमावधि चरम शरीरीके ही होय है यातें अनुगामी है अर्थ सर्वावधि कहिये है कि असंख्यातनिके असंख्यात भेद पर्गा है यातें उत्कृष्ट परमावधिको क्षेत्र जो है सो असंख्यात लोक गुणित होय सो याको क्षेत्र है अर काल तथा द्रव्य तथा भाव पूर्ववत् है। सो यो वर्द्धमान भी नहीं है अर हीयमान भी नहीं है प्रतिपाती भी नहीं है क्योंकि संयमरूप भवका क्षेत्रतें पूर्ववत् अवस्थित है यातें अप्रतिपाती है अर भवांतर प्रति अनुगामी है कि याके अन्य जन्म नहीं है अर देशांतर प्रति अनुगामी है अर सर्व शब्दके सकलार्थवाची पणातें द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि सर्वावधिके अंतरगत परमावधि है यातें परमावधि भी देशावधि ही है तातें अवधि दोय प्रकार ही है कि एक सर्वावधि दूसरी देशावधि है अर और सुनूं कि कही वृद्धिके विषै जा समय काल वृद्धि है ता समय च्यारनिकी वृद्धि नियम रूप है अर क्षेत्र वृद्धितें होतां संतां काल वृद्धि भाज्य है कि होय है अथवा नहीं होय है अर द्रव्यकी तथा भावकी वृद्धि नियम रूपा है अर द्रव्यको वृद्धितें होतां संता भाव वृद्धि नियमरूपा है अर क्षेत्रकी वृद्धि तथा कालकी वृद्धि भाज्य है कि होय अथवा नहीं होय अर भाव वृद्धितें होतां संता भी द्रव्यकी वृद्धि नियम रूप है अर क्षेत्रकी तथा कालकी वृद्धि भाज्य है कि होय अथवा नहीं होय सो यो अवधि ज्ञानोपयोग दोय प्रकार है कि एक तो एक क्षेत्र रूप है दूसरो अनेक क्षेत्र रूप है तिनमें श्री ऋषभ स्वस्तिक नंद्यावर्त आदि चिह्न जे है तिनमें कोऊ उपयोगको

बाह्य उपकरण है विद्यमान जाकै ऐसो अवधि है सो एक क्षेत्र है अर वे ही अनेक बाह्य उपकरण जे हैं तिनमें उपयोग है विद्यमान जाकै ऐसो अवधि जो है सो एक क्षेत्र है। भावार्थ—जा पुरुषकै पूर्वोक्त चिह्नमेंसूं एक चिन्ह होय ताकै एक क्षेत्ररूप अवधि होय है अर सर्व चिन्ह होय ताकै अनेक क्षेत्ररूप अवधि होय है अर्थात् ये बाह्य चिन्ह हैं तिनमें आत्म प्रदेशनिके उपरिका आवरणको ही क्षयोपशम भयो है तातैं तहांतैं ही जानैं है सो गोमट्टसारमें कह्यो है। गाथा—

भवपच्चयिगो सुरणिरयाणं तित्थेवि सव्व अंगुत्थो।
गुणपच्चगौणरतिरियाणं संखादिचिन्हभवो ॥

संस्कृत—भवप्रत्ययोवधिज्ञानं सुरनारकाणां तीर्थंकरेपि सर्वांगोत्थं।
गुणप्रत्ययावधिज्ञानं नरतिरश्चां संखादिचिन्हभवः ॥

अर्थ—तहां भव प्रत्यय अवधिज्ञान देवनिकै अर नारकीनिकै तथा अंतको है शरीर जिनकै ऐसैं तीर्थंकरनिकै संभवै है सो अवधि तिनकै सर्व अंगतैं उत्पन्न भयो है अर्थात् सर्व आत्म प्रदेशनिके उपरि तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यांतराय ये ही जे दोय कर्म तिनका क्षयोपशमतैं उत्पन्न भयो है अर गुण प्रत्यय अवधि ज्ञान जो है सो पर्याप्त मनुष्यनिकै अर तिर्यंचनिकै होय है तिनमें भी संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यंच मनुष्यनिकै संभवै है सो अवधि तिनकै शंखादि चिन्होद्भव है अर्थात् नाभिकै उपरि शंख पद्म वज्र स्वस्तिक मीन कलश आदि शुभ चिन्ह करि व्याप्त आत्म प्रदेशनिकै उपरि तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय ये ही जे दोय कर्म तिनका क्षयोपशमतैं उत्पन्न भयो है अर भव प्रत्यय अवधि ज्ञानकै विषैं दर्शन विशुद्ध्यादि गुणका सद्भावनैं होतां संता भी दर्शन विशुद्ध्यादि गुण की अपेक्षाविना ही भव प्रत्ययपणौं जानने योग्य है। अर गुण प्रत्यय अवधिज्ञानकै विषैं तिर्यग्मनुष्यभवका सद्भावनैं होतां सता भी तिर्यग्मनुष्य भवकी अपेक्षा विना ही गुण प्रत्ययपणौं जानवे

योग्य है। प्रश्न, ऐसैं है तो पराधीन पणांतैं अवधिकै भी परोक्ष पणांको प्रसंग आवे है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इन्द्रियनिकै विषैं ही परपणां की रूढि है यातैं सो ही कहै है। श्लोक—इन्द्रियाणि पराण्याहुरिंद्रियेभ्यः परं मनो। मनसस्तु परावुद्धिर्वुद्धेः परतरो हि सः ॥१॥ अर्थ—इन्द्रिय जे हैं ते पर है अर इंद्रियनितैं परे मन है अर मनतैं परे इन्द्रिय जनित ज्ञानरूपा वुद्धि है अर वुद्धितैं परे जो है सो आत्मा है ॥१॥ ऐसैं वहुत प्रकार अवधिज्ञान व्याख्यान कियो है ॥५॥२२॥ अवै तेईसमा सूत्र की उत्थानिका कहै है कि अवसर प्राप्त मनःपर्यय जो है ताके भेद पुरःसर लक्षण कहनेको इच्छुक सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥

अर्थ—ऋजुमति अर विपुलमति भेदरूप मनःपर्यय दोय प्रकार है। वार्तिक—ऋज्वी निर्वर्तिता प्रगुणा च ॥१॥ अर्थ—रच्या हुवा सरल अर्थनें जानें सो ऋजुमति है। टीकार्थ—कोऊ कारणतैं रच्यौ अर सरल जो वचन काय मनकृत अर्थ अर पराया मनमें प्राप्त भयो ताका जाननतैं ऋज्वी कहिये सरल है वुद्धि जाकी सो ऋजुमति कहिये ॥१॥ वार्तिक—अनिर्वर्तिता कुटिला च विपुला ॥२॥ अर्थ—नहीं रच्या कुटिल अर्थनें जानें सो विपुलमति है। टीकार्थ—कोऊ कारणतैं नहीं रच्यो जो वचन मन काय कृत अर्थ अर पराया मनमें प्राप्त भयो ताका जाननतैं विपुल है मति जाकी सो विपुलमति है अर ऋजुमति तथा विपुलमती जो है सो ऋजुविपुलमती है या सूत्रमें एक मति शब्दकै गतार्थपणांतैं दूसरा मति शब्दको अप्रयोग है अर्थात् एक मति शब्द ही दोउनिकै साथ लगानेतैं अर्थकी प्राप्ति होय है अथवा ऋजु अर विपुल सो ऋजुविपुल है अर ऋजु विपुल ऐसी है मति कहिये वुद्धि जिनकी ते ऋजुविपुलमती है सो यो मनःपयय दोय प्रकार है कि एक ऋजुमती है दूसरो विपुलमती है। प्रश्न, इहां वक्तव्य ज्ञानकै भेद है अर ऋजुमती

विपुलमती शब्द ज्ञानकै वाचक है सो कैसैं है ? उत्तर, ज्ञान ज्ञानीकै आधार है तातैं आधारकै भेदतैं आधेयमें भेद जानना तथा अनेकांततैं कथंचित् ज्ञानी अर ज्ञान एक ही है तातैं दोष नहीं है। प्रश्न, ऐसैं इहां भेद तो कहे अवैं याको लक्षण कहने योग्य है। उत्तर कहिये है। वार्तिक—मनःसंबंधेन लब्धवृत्तिर्मनःपर्ययः ॥३॥ अर्थ—मनका सम्बन्ध करि पाई है प्रवृत्ति जानैं सो मनःपर्यय ज्ञान है। टीकार्थ—वीर्यान्तरायका तथा मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं अर आंगोपांग नामा नामकर्मको जो लाभ ताका प्राप्त होवातैं अपना अर परका मनका संबंध करि प्राप्त भई है वृत्ति जानैं ऐसो उपयोग जो है सो मनःपर्यय है। प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—मतिज्ञानप्रसंग इति चेन्नाऽन्यदीयमनोऽपेक्षामात्रत्वादभ्रे चंद्रव्यपदेशवत् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, मनका संबंध होनेतैं मतिज्ञानको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि पराया मनकी अपेक्षा मात्र पणौं है यातैं बादलमें चंद्रमाका नामकै समान है। टीकार्थ—जैसैं मन अर चक्षु आदि इंद्रिय जे हैं तिनका संबन्धतैं चक्षु आदि ज्ञान प्रगट होय है सो मतिज्ञान है तैसैं ही मनःपर्यय भी मन संबन्धतैं पाई है वृत्ति जानैं ऐसो है यातैं मतिज्ञान नामनैं प्राप्त होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, पराया मनको अपेक्षा मात्र पणातैं। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अभ्रके विषैं चन्द्रका उपदेशकै समान है सो ऐसैं है कि जैसैं अभ्रमें चन्द्रमाने देखो यामें अभ्र अपेक्षारूप कारण मात्र है अर चक्षु आदिकै समान चंद्र ज्ञानको उत्पन्न करनवारो नहीं है तैसैं ही परायो मन भी अपेक्षा रूप कारण मात्र है कि पराया मनमैं तिष्ठता अर्थनैं मनःपर्यायकै जानै है तातैं या मनःपर्ययकै पराया मनकै आधीन उत्पन्न होनौं नहीं है यातैं मतिज्ञानको प्रसंग नहीं है। वार्तिक—स्वमनो देशे वा तदावरणकर्मक्षयोपशमव्यपदेशाच्चक्षुष्यवधिज्ञाननिर्देशवत् ॥५॥ अर्थ—अपना मनोदेशमैं वा स्थानका आवरणका क्षयोपशम नामतैं नेत्रनिकैं विषैं अवधिज्ञानका नामकै समान है। टीकार्थ—अथवा जैसैं चक्षुदेशस्थ आतम प्रदेशनिकै अवधिज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं चक्षुकै विषैं अवधिज्ञानको

नाम इष्ट है अर अवधिज्ञान मतिज्ञान नहीं है तैसैं ही मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं अपना मनोदेशस्थ आत्मप्रदेशनिके मनः पर्यय नाम है अर या मनःपर्ययकै मतिज्ञान पणौं नहीं है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—मनःप्रतिबंधज्ञानादनुमानप्रसंग ; इति चेन्न प्रत्यक्षलक्षणाऽविरोधात् ॥६॥ अर्थ—पराया मनका संबधतैं भयो ज्ञान है यातैं अनुमानको प्रसंग आवै है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रत्यक्ष लक्षणतैं याके अविरोध है यातैं। टीकार्थ—जैसैं धूमतैं मिल्या अग्निकै विषैं धूमका बंधतैं अनुमान होय है तैसैं ही पराया मनका संबन्धतैं वा मनतैं मिल्या पदार्थनिनैं जानतो संतो मन पर्यय ज्ञान अनुमान है? उत्तर, सो नहीं। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर, प्रत्यक्ष लक्षणतैं अविरोध है यातैं क्योंकि जो प्रत्यक्ष लक्षण कह्यो है कि इंद्रिय अनिंद्रियको अपेक्षा रहित अर व्यभिचार रहित अर साकारको ग्रहण जामैं होय सो प्रत्यक्ष है ऐसा प्रत्यक्ष लक्षणकरि मनःपर्ययके अविरोध है यातैं मनःपर्यय अनुमान नहीं हैं अर अनुमान प्रत्यक्ष लक्षणकरि विरोधनैं प्राप्त होय सो ऐसैं है कि ॥ ६ ॥ उपदेशपूर्वकत्वाच्चक्षुरादिकरणनिमित्तत्वाद्वानुमानस्य ॥ ७ ॥ वार्तिक—अथवा अनुमानकै उपदेशपूर्वक पणांतैं अर चक्षु आदि करणका निमित्त पणांतैं प्रत्यक्ष लक्षणतैं विरोध है यातैं। टीकार्थ—अथवा निश्चय करि उपदेशतैं ही यो अग्नि है यो धूम है ऐसैं जानिकरि पीछे चक्षु आदि करणका संबन्धतैं धूमका दर्शनतैं अग्निकै विषैं अनुमान करे है तातैं या अनुमानकै कह्यो प्रत्यक्ष लक्षण विरोधतैं प्राप्त होय है। तैसैं मनःपर्यय उपदेश चक्षु आदि करणका संबंधनैं नहीं अपेक्षा करै है ॥७॥ वार्तिक—स द्वेधा सूत्रोक्तविकल्पात् ॥ ८ ॥ अर्थ— सो सूत्रोक्त विकल्पतैं दोय प्रकार है। टीकार्थ—वो मनःपर्यय दोय प्रकार है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, सूत्रोक्त विकल्पतैं ऋजुमति विपुलमति है ॥८॥ वार्तिक—आद्यस्त्रेधार्जुमनोवाक्कायविषयभेदात् ॥ ९ ॥ अर्थ—सरल मन वचन कायरूप विषयका भेदतैं ऋजुमति तीन प्रकार है। टीकार्थ—आदिको

ऋजुमति मन पर्यय तीन प्रकार है। प्रश्न, काहेत ? उत्तर, सरल मन वचन कायरूप विषय भेदतैं ऋजुमन कृत अर्थको जाननें वारो ऋजु वचन कृत अर्थ जानने वारो अर ऋजु काय कृत अर्थको जाननें वारो है सो ऐसैं है कि मन करि प्रगट अर्थनैं चिन्तवन करि अथवा धर्मादि युक्त असंकीर्ण वचननैं उच्चारण करि अथवा उभय लोक संबंधी फलका निष्पादनकै अर्थ अंगोपांगका तथा प्रत्यंगका निपातन संकोचन प्रसारण आदि लक्षण काय प्रयोग करि बहुरि लगता ही समयमें अथवा कालांतरमें वा ही अर्थनैं मन करि चिंतवन कियो वचन करि कह्यो काय करि कियो है तौ हू विस्मरण पणांतैं चिंतवन करनेंकूं समर्थ नहीं होय है या प्रकारको वो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति मन पर्यय ज्ञानको धारक प्रश्न करतां संता तथा नहीं प्रश्न करतां संता जानै है कि जो यो अर्थ या विधि करि तुमनैं चिंतवन कियो है तथा यो अर्थ या विधिकरि कह्यो है तथा यो अर्थ या विधिकरि कियो है। प्रश्न, यो अर्थ कैसैं प्राप्त होय है ? उत्तर, आगमका अविरोधतैं निश्चय करि आगममें कहै है कि मन करि मननैं प्राप्त होय परका चिंतादिकनिनैं जानैं है। इहां मन शब्द है सो आत्मना ऐसा अर्थको वाचक है तातैं वा करि पराया मननैं सर्व तरफतैं प्राप्त होय जानैं है अर मन करि चिंतित सचेतन अचेतन अर्थ जो है ताको मनमें तिष्ठनेंतैं मन नाम है ताको दृष्टांत ऐसो है कि मंचमें तिष्टते पुरुषनिको मंच नाम होय है तैसैं जाननों अर्थात् वा पराया मनमें तिष्ठता अर्थनैं आत्मा जो है सो आप करि जांणि अपनी तथा परकी चिंता जीवित मरण सुख दुःख लाभ अलाभ आदिनैं जानैं हैं सो व्यक्त मनवान जीवनिका अर्थनैं जानैं है अव्यक्त मनवाननिका अर्थनैं नहीं जानैं है। इहां व्यक्त नाम प्रगट कीया अर्थको है अर जिननैं चिंतवन करि भले प्रकार रच्यो है ते जीव व्यक्त मन हैं तिन करि चिंतवन कियो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति जानैं है और अव्यक्त मनवाननिकरि चिंतवन कीयो अर्थ जो है ताहि ऋजुमति नहीं जानै है अर यो मनःपर्यय ज्ञानका-

लतैं जघन्य करि अन्य जीवनिका तथा अपना दोय तीन भव ग्रहणनैं गति आगतिकरि प्ररूपण करै है अर उत्कृष्ट करि अन्यका तथा अपना सात आठ भव ग्रहणनैं गति आगतिकरि प्ररूपण करै है अर क्षेत्रमैं जघन्य करि पृथक्त्व कोशकै मध्यवर्तीनैं जानैं है वाहिर कानैं नहीं जानैं है अर उत्कृष्ट करि पृथक्त्व योजनकै मध्यवर्तीनैं जानैं है वाहिर कानैं नहीं जानैं है ॥ ९ ॥ वार्तिक—द्वितीयः षोढा ऋजुवक्रमनोवक्कायविषयभेदात् ॥ १० ॥ अर्थ—ऋजु अर वक्र मन वचन काय रूप विषयका भेदतैं दूसरो छै प्रकार है। टीकार्थ—दूसरो विपुलमती नामा मनःपर्यय छै प्रकार भेदतैं प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, ऋजु अर वक्र जे मन वचन काय रूप विषय तिनका भेदतैं तिनमैं ऋजुमतिका विकल्प तौ पूर्वोक्त जानना अर वक्रका विकल्प उनतैं विपरीत जोड़ने योग्य है तथा अपना अर परका चिंता जीवित मरण सुख दुःख लाभ अलाभ आदि अव्यक्त मनवाननि करि तथा व्यक्त मनवाननिकरि चिंतित अचिंतित जे हैं तिननैं विपुलमती जानैं है अर कालतैं जघन्य करि सात आठ भव ग्रहणनैं प्ररूपण करै है अर उत्कृष्ट करि असंख्याता भव ग्रहणनैं गति आगति करि प्ररूपण करै है अर क्षेत्रतैं जघन्य करि पृथक्त्व योजन वर्तीनैं अर उत्कृष्ट करि मानुषोत्तर पर्वतके मध्य वर्तीनैं प्ररूपण करै है वाहिर कानैं नहीं प्ररूपण करै है ॥ १० । २३ ॥ अवैं चौवीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि ऐसैं दोय प्रकार मनः पर्यय ज्ञाननैं वर्णन कियो ताकै परस्परतैं और भी विशेष है या नहीं है ऐसा प्रश्न होत संतै सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

विशुद्धि प्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥

अर्थ—विशुद्धि अर अप्रतिपात जे हैं तिन करि तिन दोउनिमैं विशेष है। अर्थ—विशुद्धि अर अप्रतिपात इनि दोऊ गुणनितैं दोऊनिमैं विशेष है तहां मनःपर्यय ज्ञानावरणका क्षयो

पशमनैं होतां संता आत्माकै जो उज्वलता है सो विशुद्धि है अर पीछा पड़ना जो है सो प्रतिपात है सो उपशांत कषायकै चारित्र मोहका उत्कट पणांतैं प्रच्युत भयो है संयमको शिखर जाकै ताकैं प्रतिपात होय है अर क्षीण कषायकै प्रतिपातका कारण जे हैं तिनका अभावतैं अप्रतिपात होय है इनको समास पूर्वक अर्थ ऐसो होय है कि विशुद्धि अर अप्रतिपात जो है विशुद्ध प्रतिपातो कहिये अर ये विशुद्धि अर अप्रतिपात जे हैं तिन करि तिन दोऊनिमैं विशेष है सो तद्विशेष है। प्रश्न, पूर्व सूत्रकै विषैं ही तिनको विशेष भलै प्रकार जानिये है। वहुरि यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है। उत्तररूपवार्त्तिक—विशेषान्तरप्रतिपत्यर्थं पुनर्वचनम् ॥१॥ अर्थ—विशेषकी प्रतीतिकै अर्थ पुनः सूत्र कियो है। टीकार्थ—जो सूत्रमें विशेष कह्यो तितना करि ही या शिष्यकै संतोष नहीं होय है तातैं और विशेष जनावनें निमित्त वहुरि यो सूत्र कहिये है। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—च शब्दप्रसंग इति चेन्न प्राथमिकल्पिकभेदाभावात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, च शब्दको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रथम सूत्रमैं कह्यो जो मनःपर्यय ताकै भेदनिको अभाव है यातैं। टीकार्थ—प्रश्न, ऐसैं है तो सूत्र मैं च शब्द कहनेंको प्रसंग आवै है? उत्तर, सो नहीं है जैसैं मनःपर्यय ज्ञानका ऋजुमती अर विपुलमती भेद है तैसैं ही विशुद्धि अर अप्रतिपात भी वा ही मनःपर्ययका भेद होय तौ च शब्द सूत्रमैं कहनों योग्य होय यातैं विशुद्ध तथा अप्रतिपात ये दोऊ ऋजुमति विपुलमतिका विशेष है, भेद नहीं है तातैं च शब्दको अप्रयोग है तिनमैं विशुद्धकरि प्रथम ऋजुमति जो है तातैं विपुलमति द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि विशुद्धतर है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, इहां कार्मण द्रव्यका अनंत भाग जे हैं तिनकै विषैं अन्त्यको भाग सर्वावधि ज्ञान करि जानिये है। वहुरि वा अनंत भाग रूप कियाको अनंतमू भाग ऋजुमति मनःपर्ययकै जाननें योग्य है। प्रश्न, अनंतमा भागका भी अनंतमा भाग कह्या सो कैसैं है ? उत्तर, अनंतकै अनंत भेद पणौं है यातैं अर ऋजुमतिका विषय रूप कार्मण द्रव्यका अनंत भागतैं दूर विप्रकृष्ट

अति अल्प स्वरूप अनन्तमूं भाग जो है सो विपुल मतिको विषय है ऐसैं द्रव्य क्षेत्र कालकी विशुद्धितो कही, अर भावतैं विशद्ध सूक्ष्मतर द्रव्यका विषय पणातैं ही जानवे योग्य है अर प्रकृष्ट क्षयोपशम विशुद्धि रूप भावका योगतैं अप्रतिपात जो हैं ताकरि भी विपुलमति विशेष है क्योंकि विपुलमतिका स्वामीकै कषायका उत्कृष्ट क्षयोपशम विशुद्धिरूप भावका योगतैं अप्र-ति पाति जो हैं ताकरि भी विपुलमति विशेष हैं क्योंकि विपुलमतिका स्वामीकैं कषायका उत्कट पणांतैं हीयमान चरित्रको उदय पणौं है यातैं ॥ २ ॥ २४ ॥ अवैं पच्चोसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि या मनःपर्ययकै अपना स्वरूप प्रति यो विशेष है तो ये अवधिमनःपर्ययकै अपना स्वरूप प्रति यो विशेष है तो ये अवधि मनःपर्यय जे हैं तिनकै विषैं काहेतैं विशेष है ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥२५॥

अर्थ—विशुद्धि क्षेत्र स्वामी विषय जे हैं तिन करि अवधिमैं अर मनः पर्ययमैं विशेष है। टीकार्थ—उज्वलता जो है सो तो विशुद्धि है अर जहां तिष्ठता भावनिनैं प्राप्त हूजिये सो क्षेत्र है अर प्रेरक जो है सो स्वामी है अर ज्ञेय जो है सो विषय है। प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अवधि-ज्ञानान्मनःपर्ययस्य विशुद्ध्यभावोऽल्पद्रव्यविषयत्वादिति चेन्न भूयेः पर्यायज्ञानात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, अवधिज्ञानतैं मनःपर्यय ज्ञानकै विशुद्धिको अभाव है क्योंकि मनःपर्ययकै अल्प द्रव्य विषय पणौं है यातैं? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रचुर पर्यायनिकौ ज्ञान है तातैं। अर्थ—प्रश्न, अवधि-ज्ञानतैं मनःपर्ययज्ञान अविशुद्धतर है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अल्प द्रव्य विषय पणातैं जातैं सर्वावधिका विषय रूप रूपी द्रव्य जो है ताको अनंतमो भाग मनःपर्ययको विषय रूप द्रव्य है सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वाहुल्यता करि पर्यायको ज्ञान है यातैं सो जैसैं कोऊ

पुरुष तो बहुत शास्त्रनिनैं एक देश करि व्याख्यान करै है परन्तु समस्त पणां करि उनमें प्राप्त भया अर्थनिनै कहनेंकूं समर्थ नहीं होय है अर दूसरो पुरुष एक शास्त्रनैं समस्त पणां करि व्याख्यान करै है सो वाकै जितनें अर्थ हैं तितनें सर्व अर्थनिनैं कहनेंकूं समर्थ होय है तातै यो पूर्व वक्तातैं विशुद्धतर विज्ञानवान है तैसैं अवधिज्ञानको विषय रूप द्रव्य जो है ताका अनंतमां भागकूं जाननै वारो है तौ हू मनःपर्यय ज्ञान विशुद्धतर है यातैं वा अनंतमा भाग रूपादिक बहु पर्यायनि करि प्ररूपण करै है ऐसैं विशुद्धि कही अर क्षेत्र पूर्वैं कह्यो अर विषय आगै कहैंगे अर स्वामित्व प्रति कहिये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—विशिष्टसंयमगुणैकार्थसमवायी मनःपर्ययः ॥२॥ अर्थ—विशेषरूप संयम गुणकरि एकार्थ समवायी मनःपर्यय ज्ञान है कि जाकै विशुद्धि संयम होय ताही कै मनःपर्यय होय है। टीकार्थ—जहां विशेष संयम गुण विद्यमान है तहां मनःपर्यय प्रवर्तै है तैसैं ही है कि मनुष्यनिकै विषैं मनःपर्यय प्रकट होय है अर देव नारकी तिर्यञ्चनिकैं विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर मनुष्यनिमैं उत्पन्न हो तो संतो गर्भजनिकै विषैं उत्पन्न होय है परन्तु सम्मूर्छनकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर गर्भजनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो. कर्मभूमिजनिकै विषैं उत्पन्न होय है। भोगभूमिजनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर कर्म भूमिजनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो पर्याप्तनिकै विषैं उत्पन्न होय है अपर्याप्तनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर पर्याप्तनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं ही उत्पन्न होय है। मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यग्दृष्टी सम्यग्मिथ्यादृष्टीनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है। अर सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो संयमीनिकै विषैं उत्पन्न होय है अर संयत सम्यग्दृष्टी संयतासंयत सम्यग्दृष्टीनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर संयतीनिकै विषैं उत्पन्न होतो संतो प्रमत्त आदि क्षीण कषाय पर्यंत गुण स्थाननिकै विषैं उत्पन्न होय है औरनिमैं नहीं उत्पन्न होय है अर तिन गुण स्थाननिमैं भी उत्पन्न होतो संतो वर्द्धमान चारित्र वानकै विषैं उत्पन्न होय है। हीयमान

चरित्र वानके विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर वर्द्धमान चारित्रवानकै भी उत्पन्न होतो संतो सप्त विधि ऋद्धिमैंसूं कोऊ ऋद्धि प्राप्तकै विषैं उत्पन्न होय है औरनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है अर ऋद्धिप्राप्तनिकै विषैं भी कोउसाकै उत्पन्न होय है सर्वकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है यातैं विशिष्ट संयम पदको ग्रहण वाक्यमैं है। बहुरि अवधिज्ञान च्यारूं गतिवाननिकै विषैं उत्पन्न होय है। ऐसैं स्वामीका भेदतैं भी इनमैं विशेष है ॥ २ ॥ २५ ॥ अवैं छव्वीसमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि अवैं केवलज्ञानको लक्षण कहनेंको अवसर है तानें उल्लंघन करि ज्ञाननिका विषयको नियम परीक्षा करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, केवलज्ञानकै "मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतरायक्षयाच्च केवलम्" ऐसैं सूत्रकार करि ही वक्ष्यमाण पणौं है यातैं प्रश्न, जो ऐसैं है तो आदिके मति श्रुत जे हैं तिनका विषयनिको नियम कहौ ? उत्तर, ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥

अर्थ—मतिज्ञानका अर श्रुतज्ञानका विषयको नियम असर्व पर्यायवान छहूं द्रव्यनिकै विषैं है। टीकार्थ—निबंधन कहिये नियम जो है सो निबंध है। प्रश्न, कौनको ? उत्तर, मति श्रुतका विषयको। प्रश्न, ऐसैं है तो सूत्रमैं विषय शब्दको ग्रहण करनें योग्य है ? उत्तर, नहीं कर्तव्य है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूपवार्तिक—प्रत्यासत्तेः प्रकृतविषयग्रहणाभिसंबंधः ॥ १ ॥ अर्थ—निकटतातैं प्रकरणमैं आया विषयांका ग्रहणको अभिसंबंध है। टीकार्थ—विषयको ग्रहण प्रकरण प्राप्त है। प्रश्न, प्रकरण प्राप्त कहां है ? उत्तर, विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्यः या सूत्रमैं विषय शब्द है तहांतैं निकटपणांतैं विषयको ग्रहण इहां भलेप्रकार संबंधनैं प्राप्त करिये है। प्रश्न, यो विषयशब्द विभक्त्यन्तकरि दिखायो है तातैं इहां संबंध होनेंकूं समर्थ नहीं है ? उत्तर, अर्थका वशतैं

विभक्तिको विपरिणाम होय है जैसैं देवदत्तस्योच्चानि गृहाणि आमंत्रयस्वैनं देवदत्तमिति, याको अर्थ ऐसो है कि देवदत्तका ग्रह उच्च है या देवदत्तनैं आमन्त्रण करहु यामैं देवदत्त शब्द षष्ठ्यन्त है ताकूं ही दूसरां द्वितीयांतकरि ग्रहण कीयो है देवदत्तका गाय अश्व हिरण है अर यो धनवान है, विधवाको पुत्र है। इहां षष्ठ्यन्तकूं प्रथमांत करि कह्यौ है इहां भी ऐसैं ही नियम है। प्रश्न, कौनको ? उत्तर, विषयको अभिसंबंध षष्ठचन्त करि करिये है ॥ १ ॥ प्रश्न, द्रव्येषु ऐसो बहु वचन कहा निमित्त है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—द्रव्येष्विति बहुत्वनिर्देशः सर्वद्रव्यसंग्रहार्थः ॥ २ ॥ अर्थ—उत्तर, द्रव्येषु ऐसो बहु वचन रूप निर्देश सर्व द्रव्यनिका संग्रहके अर्थि है। टीकार्थ—जीव, धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल है नाम जिनकै ऐसैं षट् द्रव्य है तिन सर्वनिका संग्रहकै निमित्त द्रव्येषु ऐसैं बहु वचनको निर्देश करिये है। वार्त्तिक—तद्विशेषणार्थमसर्वपर्यायग्रहणम् ॥ ३ ॥ अर्थ—मतिज्ञान श्रुतज्ञानका विशेषणकै अर्थ असर्व पर्याय पदको ग्रहण कियो है। टीकार्थ—तिन द्रव्यनिको अवशेष करि मति श्रुतकै विषय भावको प्रसंग होत संतै द्रव्यनिका विशेषणकै अर्थ असर्वपर्याय शब्दको ग्रहण करिये है अर मति श्रुतका विषय भावनैं प्राप्त भया जे वै द्रव्य ते कितनेंक पर्यायनि करि विषय भावनैं प्राप्त होय है। अनंती सर्व पर्यायनिकरि विषय भावनैं नहीं प्राप्त होय है। इहां मति है सो चक्षु आदि इंद्रिय निमित्त जानैं ऐसी है अर वा मति जो रूपादिकनिको आलंबन करनैं वाली है सो जा द्रव्यकै विषैं रूपादिक है ता द्रव्यकै विषैं प्रवर्तै है परंतु तहां सर्व पर्यायनिनैं नहीं ग्रहण करै है। चक्षु आदिका विषयनिनैं ही आलंबन करै है अर श्रुत भी शब्द लिंग है कि शब्द है निमित्त जानैं ऐसो है अर सर्व शब्द संख्याते ही हैं अर द्रव्य पर्याय जे हैं ते संख्याते अनंत भेद रूप है। भावार्थ—द्रव्य करि तो संख्यात भेद रूप है अर पर्यायनि करि अनंत भेद रूप है ते सर्व विशेषाकार करि तिन शब्दनि करि विषय

रूप नहीं करिये है अनभिलाप्यानां कहिये नहीं कहनेमें आवै अर्थात् केवलज्ञानके गोचर ऐसैं जीवादि पदार्थनिकै अनंत भागनिमैं एक भाग मात्र जीवादिक पदार्थ जे हैं ते प्रज्ञापनीय कहिये है अर वै प्रज्ञापनीय भाव हैं ते श्रीमत्तीर्थंकरका सातिशय दिव्यध्वनि करि प्रतिपादन करनें योग्य होय है अर वा सातिशय दिव्यध्वनि करि प्रतिपादित प्रज्ञापनीय भाव जे जीवादिक पदार्थ तिनका अनंत भागनिमें एक भाग मात्र द्वादशांग श्रुत स्कंधको निबंध कहिये विषय पणां करि नियम रूप होय है अर्थात् श्रुत केवलीनिके भी अगोचर अर्थ जे है ताकै प्रतिपादनकी है शक्ति जा विषैं ऐसी दिव्यध्वनि अर वा दिव्यध्वनिके भी अगोचर जीवाद्यर्थनिका ग्रहणकी शक्ति केवलज्ञानमें है। भावार्थ—केवलज्ञान गोचर जीवादिक पदार्थनिको स्वरूप जो है ताका अनंतमां भागनैं दिव्यध्वनि जनावै है अर ता दिव्यध्वनिका जनाया अर्थ को अनंतमूं भाग श्रुतको विषय है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—अतिन्द्रियेषुमतेरभावात्सर्वद्रव्यासंप्रत्यय इति चेन्न नोइंद्रियविषयत्वात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, इंद्रिय पादार्थनिकै विषैं मतिज्ञानका अभावतैं सर्व द्रव्यकी अप्रतीति है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि उन द्रव्यनिके नो इंद्रियको विषय पणौं है यातैं। अर्थ—प्रश्न, धर्मास्थि कायादिकनिकै विषैं मतिज्ञानको अभाव है क्योंकि तिनकै अतींद्रिय पणौं है यातैं तातैं सर्व द्रव्य विषय निबंधा मतिज्ञान है ऐसो लक्षण अयुक्त है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, तिनकै नो इंद्रिय विषय पणौं है यातैं नो इंद्रियावरणका क्षयोपशम विशेषकी उपलब्धि जो है ताकी है अपेक्षा जाकै ऐसो नो इंद्रिय तिन धर्मास्तिकायादिकनिकै विषैं प्रवर्तै है अर जो निश्चय करि तिनकै विषैं नो इंद्रिय नहीं वर्ततो तौ अवधिके साथि ही श्रुतज्ञाननैं भी उपदेश करता कि यो भी रूप द्रव्यकै विषैं ही प्रवर्तै है यातैं तथा सर्वार्थ सिद्धिमें पूज्यपाद स्वामी ऐसैं लिख्या है। तिन धर्मास्तिकायादिकनिको आलंवन करनवारो अनिंद्रय नामा करण है सो नो

इंद्रियावरणका क्षयोपशमकी उपलब्धि पूर्वक उपयोग आत्मप्रदेशनिका परिस्पंद रूप अवग्रह रूप है सो अतींद्रिय पदार्थनिकै विषैं प्रवर्तनैं का समय मैं इंद्रियनिमैं प्राप्त होय श्रुतज्ञान रूप होनेका अनुक्रमनैं उल्लंघन करि इंद्रिय संनिकर्षकी प्राप्तिकै पूर्वैं ही आपनां विषयका ग्रहण करवा कै विषैं पाई है उत्कर्षता जानें ऐसो हुवो संतो अवग्रहादि चतुष्टय रूप परिणम्यूं होय मतिज्ञान का कार्यनैं देनेवालो आप होय श्रुतज्ञानका विषयभूत धर्मास्तिकायादिक जे हैं तिननैं कितनीक पर्यायनि करि सहित जानैं है ॥ ४ ॥ २६ ॥ अवैं सत्ताईसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि मति श्रुतकै अनंतर निर्देश करनें योग्य अवधिज्ञान जो है ताको कहा विषय निवंध है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय हैं यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥

अर्थ—रूपी द्रव्यकै विषैं अवधिज्ञानका विषयको निवंध है। वार्तिक—रूपस्यानेकार्थत्वे सामर्थ्याच्छुक्लादिग्रहणं ॥ १ ॥ अर्थ—रूप शब्दकै अनेकार्थपणानैं होतां संता भी प्रकरण की सामर्थ्यतैं शुक्ल आदिको ग्रहण करिये है। ;टीकार्थ—यो रूप शब्द अनेकार्थवाची है कि कहूं तो चाक्षुष कहिये चक्षुरिंद्रियका विषयकै विषैं प्रवर्तै है सो जैसैं रूप रस गंध स्पर्शा कहिये चक्षुरिंद्रियको विषय रूप है, रसना इंद्रियको विषय रस है, नासिका इंद्रियको विषय गंध है, त्वचा-इंद्रियको विषय स्पर्श है बहुरि कहूं स्वभाव अर्थकै विषै प्रवर्तै है सो जैसैं अनंत रूप है कि अनंत स्वभाव है तिनमैं सूं इहां या सूत्रकी सामर्थ्यतैं शुक्लादि चक्षु विषयकै विषैं प्रवर्त्ततो संतो ग्रहण करिये है अर जो रूप शब्दनैं स्वभाववाची ग्रहण करिये तौ यो सूत्र ही अनर्थक होय क्योंकि कोउकै स्वभाव नहीं है ऐसो कोउ ही नहीं है यातैं ॥ १ ॥ वार्तिक—भूमाद्यनेकार्थ—संभवे नित्ययोगोऽभिधानवशात् ॥ २ ॥ अर्थ—रूपी शब्दमें इन प्रत्यय भयो है ताको भूमि

आदि अनेक अर्थ संभवतां संतां भी अभिधानका वशतैं नित्य योग अर्थ ग्रहण करिये है। टीकार्थ—रूप है वियमान जिनकै ते रूपी कहिये। इहां नित्य विद्यमान अर्थमैं इन प्रत्यय हुवो है तातैं इन प्रत्यय वाननिकै प्रचुर आदि वहुत अर्थ संभवै है तौ हू इहां कथनका वशतैं नित्य योग अर्थ जानवो योग्य है कि नित्य ही पुद्गल जे हैं ते रूप करि युक्त है सो जैसैं वृक्ष चीर जो रसता-करि युक्त है तैसैं है। प्रश्न, जो ऐसैं है तौ अवधिज्ञानकै रूप मुख करि ही पुद्गल विषय भावनैं प्राप्त होय रसादि मुख करि नहीं होय? उत्तर, यो दोष नहीं है। वार्तिक—तदुपलक्षणार्थ त्वात्तदविनाभाव रसादिग्रहणं ॥ ३ ॥ अर्थ— रूपकै उपलक्षणार्थ पणांतैं रूपतैं अविनाभावी रसादिकको ग्रहण है। टीकार्थ—वो रूप गुण जो है सो द्रव्यकै उपलक्षण पणां करि कहिये यातैं रूपतैं अविनाभावी रसादिक भी ग्रहण करिये है। प्रश्न, जो ऐसैं है तौ वा पुद्गलमैं प्राप्त भया सर्व अनंतगुण पर्याय जे हैं तिनकैं विषैं अवधिका विषयको निवंध प्राप्त होय है यातैं कहै है। वार्तिक—असर्वपर्यायग्रहणानुवृत्तेर्न सर्वगतिः ॥ ४ ॥ अर्थ—असर्व पर्याय पदका ग्रहण अनुवर्तै है तातैं सर्वगत नहीं है। टीकार्थ—असर्व पर्यायेषु ऐसैं पूर्व सूत्र मैं पठित है सो इहां ग्रहण मैं अनुवर्तै है सो जैसैं देवदत्तकै अर्थि गौ देवो अर जिनदत्तकै अर्थ कंवल देवो ऐसैं ही इहां भी असर्व पर्यायेषु ऐसा संवंधतैं सर्वपर्यायनिमैं अवधिकी गति नहीं है तातैं पूर्वोक्त द्रव्य क्षेत्र आदि परिमाण रूपी पुद्गल द्रव्यकै विषैं अर औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक जीवकै पर्याय जे हैं तिनकै विषैं अवधिज्ञान उत्पन्न होय है क्योंकि इनकै रूपी द्रव्यको संबंध है यातैं अर क्षायिक पारिणामिक भावनिकै विषैं तथा धर्मास्तिकायादिकनिकै विषैं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि रूपादिका संवंधको अभाव है यातैं ॥ ४ ॥ २७ ॥ अवैं अट्ठाईसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि मनःपर्ययका विषयको नियम कहा है ऐसा प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥

अर्थ—जो रूपी द्रव्य सर्वावधिज्ञानका विषय पणां करि समर्थित कियो है ताका अनंत भाग किया जो एक भाग होय है ताकै विषैं मनः पर्यय ज्ञान प्रवर्तै है ॥ २८ ॥ अवैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि जो अंतकै विषैं दिखायो केवलज्ञान है ताका विषयको निबंध कहा है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥

अर्थ—सर्व द्रव्य अर सर्व पर्याय जे हैं तिनकै विषैं केवलज्ञानका विषयको निबन्ध है। टीकार्थ—इहां प्रश्न है कि द्रव्य कहा है। उत्तररूपवार्तिक—स्वपर्यायान् द्रवति द्रूयते वा तैरिति द्रव्यम् ॥ १ ॥ अर्थ—अपनी पर्यायनिनैं प्राप्त होय अथवा पर्यायनि करि प्राप्त होय सो द्रव्य है। टीकार्थ—अपनी पर्यायनिनैं द्रवै है कि प्राप्त होय है सो द्रव्य है इहां वहुलकी अपेक्षा करि कर्त्ता अर्थ मैं प्रत्यय है अथवा तिन पर्यायनिकरि प्राप्त हूजिये कि जानिये सो द्रव्य है। वार्तिक—कथंचिद्भेदसिद्धौ तत्कर्तृकर्मव्यपदेशसिद्धिः ॥ २ ॥ अर्थ—कथंचित् भेदकी सिद्धि होत संतैं वा कर्त्ता कर्मका उपदेशकी सिद्धिनैं होतां संता कह्यौ कर्तृकर्मको उपदेश सिद्ध होय है ॥ २ ॥ वार्तिक—इतरथा हि तदप्रसिद्धे रत्यंताव्यतिरेकात् ॥ ३ ॥ अर्थ—जो कथंचित् भी भेद नहीं मानिये तौ कर्त्ता कर्मकी अप्रसिद्धितैं अत्यन्त एक पणौं होय है यातैं। टीकार्थ—जो एकांत करि एकत्व ही अवधारण करिये है ताकै कर्तृकर्मको उपदेश अप्रसिद्ध है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अत्यंत अव्यतिरेकतैं सो ही एक वस्तु निर्विशेष निश्चय करि शक्त्यंतरकी अपेक्षा विना कर्तृकर्म होनेकूं समर्थ नहीं है ॥ ३ ॥ प्रश्न, पर्याय कहा है? उत्तररूप वार्तिक—तस्य मिथोभवनं प्रतिविरोध्यविरोधिनां धर्माणामुपात्तानुपात्तहेतुकानां शब्दांतरात्मलाभनमित्तत्वादर्पितव्यवहारविषयोऽवस्थाविशेषः

पर्यायः ॥ ४ ॥ अर्थ—द्रव्यकै परस्पर होनें प्रति उपात्तानुपात्त हेतुकै जे विरोधी अविरोधी धर्म तिनक शब्दांतर रूप आत्मलाभका निमित्तपणांतैं अर्पणा कीयो जो व्यवहार विशेष रूप अवस्था विशेष सो पर्याय है। अर्थात् द्रव्यकै अवस्था विशेष जो है सो पर्याय है। टीकार्थ—परस्पर सामिल होनें प्रति कितनेंक तौ अविरोधी धर्म है अर कितनेंक विरोधी धर्म है तिनमैं प्रथम जीवकै अनादि पारिणामिक चैतन्य जीवत्व, द्रव्यत्व, भव्यत्व तथा अभव्यत्व ऊर्ध्वगति स्वभावत्व अस्तित्व आदि करि औदयिकादिक भाव यथा संभव एकैं काल होवातैं अविरोधी है अर नारक तैर्यग् देव मनुष्य स्त्री पुरुष नपुंसक एकेंद्रिय द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय बाल पणौं कुमार पणौं कोप प्रसाद आदि भाव जे हैं ते साथि अनवस्थानतैं विरोधी है तैसैं ही पुद्गलका अनादि पारिणामिक रूप रस, गंध, स्पर्श, शब्द, सामान्य, अस्तित्वादिक जे हैं ते शुक्लादि पंचक तथा तिक्तादि पंचक गंध द्वय स्पर्शको अष्टक रूप पर्यायनि करि प्रत्येक एक दोय तीन च्यार पांच आदि संख्यात अनंत गुण रूप परिणामनि करि यथा संभव युगपत् होवातैं अविरोधी है अर शुक्ल कृष्ण नील तौ वर्ण अर तिक्त कटुक रस अर शुभ अशुभ गंध इत्यादि विरोधी है अर सहानवस्थानतैं परमाणुमैं अर स्कंधमैं प्रायोगिक तथा वैश्रिसिक जे हैं ते विरोधी हैं। भावार्थ—परमाणुमैं तौ प्रायोगिक कहिये प्रयोग जनित गुण तथा पर्याय नहीं है अर वैश्रिसिक जो स्वाभावोत्पन्न गुण तथा पर्याय ही है अर स्कंधमैं प्रायोगिक ही गुण पर्याय है, वैश्रिसिक नहीं है ऐसैं ही धर्मास्तिकायादिकनिमैं भी अमूर्त्तत्व अचेतनत्व असंख्येय प्रदेशत्व गति कारण स्वभावत्व अस्तित्व आदि धर्म जे हैं ते अनंत भेदवान जे अगुरु लघु गुण जनित हानि वृद्धि रूप विकार तिन करि निज स्वभाव रूप कारण करि तथा पर स्वभाव रूप कारण करि गतिका कारण पणां रूप विशेष आदि करि अविरोधी तथा परस्पर विरोधी जानवे योग्य है तिनमैं कितनेंक तौ उपात्त हेतुक है कि द्रव्य क्षेत्र काल भाव है निमित्त जिननैं ऐसैं औदयिकादिक

हैं अर कितनेंक अनुपात्त हेतुक है ते तीनूं कालमैं अविकारी पारिणामिक चैतन्यादिक है ते विरोधी अविरोधी उपात्त हेतुक अनुपात्त हेतुक धर्म जे हैं तिनको शब्दांतर रूप आत्म लाभका निमित्त पणांतै चेतन नारक बालक ऐसैं आरोपण कीया व्यवहारको विषय है सो व्यवहार नय ऋजु सूत्रनय शब्द नय ऐसैं त्रिविध नयात्मक है अर द्रव्यार्थिकनयका अर्पणातैं पर्यायार्थिक करि अर्पित कियो वा पर्यायार्थिकको विषय ऐसो वा द्रव्यको व्यवस्था विशेष जो है सो पर्याय है ऐसैं कहिये है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—तयोरितरेतरयोगलत्तणो द्वंद्वः ॥ ५ ॥ अर्थ—तिनके इतरेतर योग लत्तण द्वंद्व समास होय है। टीकार्थ—तिन द्रव्य पर्यायनिकै परस्पर योग लत्तण द्वंद्व समास जानवे योग्य हैं सो ऐसैं है कि द्रव्य और पर्याय जे हैं ते द्रव्य अर पर्याय है ॥ ५ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—द्वंद्वेऽन्यत्वं प्लत्तन्यग्रोधवदिति चेन्न तस्य कथंचिद्भेदेऽपि दर्शनाद्गोत्वगोपिंडवत् ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, द्वंद्व समासनैं होतां संतां पीपल बड़कै समान अन्य पणों होय है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि तिनकै कथंचित् भेदनैं होतां संतां भी गोपणां कै अर गो शरीरकै समान देखिये है यातैं। टीकार्थ—जो द्वंद्व समास है तौ प्लत्त जो पीपल अर न्यग्रोध जो बड़ तिनकैं समान द्रव्य पर्यायनिकै अन्यपणौं प्राप्त होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा द्वंद्व समासको कथंचित् भेदनैं होतां संता भी गौ पणां कै अर गो पिंडकै समान दर्शन है यातैं सो जैसैं गोपणौं अर गो पिंड जो है सो गोत्व पिंड है ऐसैं अनन्यपणांनैं होतां संता भी द्वंद्व समास होय है तैसैं ही द्रव्य पर्यायकै विषैं भी द्वंद्व समास होय है। प्रश्न, समान्य विशेषकै अन्यपणांतैं यो कथन साध्य सम है। अर्थात् सामान्य तौ द्रव्य है अर विशेष पर्याय है अर इन दोउनिकै अन्यपणांनैं होतां संतां दोऊ ही साध्य भया साधन कोऊ नहीं रह्या? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि यो समान्य विशेषको अनन्यपणौं पूर्वैं कह्यो है यातैं अर्थात् कथंचित् अन्य है, कथंचित् अनन्य है ॥ ६ ॥ वार्तिक—द्रव्यग्रहणं पर्यायविशेषणं

चेन्नानर्थक्यात् ॥ ७ ॥ अथ—प्रश्न, द्रव्यनिकै पर्याय जे हैं ते द्रव्य पर्याय है ऐसैं तत्पुरुष समास होत संतैं द्रव्यको ग्रहण जो है सो पर्यायको विशेषण है? उत्तर, सो नहीं है ऐसैं किये द्रव्यपदको ग्रहण अनर्थक होय। टीकार्थ—प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अनर्थक पणांतैं सो ऐसैं है कि ऐसैं समास होत संतैं द्रव्यको ग्रहण अनर्थक है क्योंकि निश्चय करि अद्रव्यकै पर्याय नहीं है अर्थात् पर्याय द्रव्यकै ही होय हैं तातैं द्रव्य शब्द सूत्रमें अनर्थक हो तो ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—द्रव्याज्ञानप्रसंगाच्च ॥ ८ ॥ अर्थ—अर पर्याय ही कहते अर द्रव्य नहीं कहते तौ केवल द्रव्यका अज्ञानको प्रसंग आवतो यातैं। टीकार्थ—केवलज्ञान करि पर्याय ही जानिये है द्रव्य नहीं जानिये है ऐसैं द्रव्यका अज्ञानको प्रसंग आवै है क्योंकि तत्पुरुष समासकै उत्तर पदको प्रधान पणौं है यातैं। प्रश्न, ऐसैं मान्य है कि सर्व पर्यायनिनैं जानतां संता कछू भी अज्ञान नहीं है तातैं पर्यायनितैं भिन्न द्रव्यको अभाव है यातैं? उत्तर, जो ऐसैं है तौ द्रव्यको ग्रहण अनर्थक होय ऐसैं पूर्वैं कह्यो ही है तातैं यो द्वंद्व समास उत्तम कह्यो है क्योंकि यानैं होत संतैं द्रव्य शब्दकैं अनर्थक पणौं नहीं आवै है। प्रश्न, द्वंद्व समासनैं होत संतैं भी द्रव्यको ग्रहण अनर्थक है क्योंकि पर्यायनितैं भिन्न करि द्रव्यकी अनुपलब्धि है यातैं? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि संज्ञा अर निज लक्षण पणां आदि जानित भेदतैं भेदकी उपपत्ति है यातैं ॥८॥ प्रश्न, सर्व शब्दको ग्रहण कहा निमित्त है, बहु वचनका निर्देशतैं ही बहु पणांकी प्रतीत सिद्ध होय है यातैं? उत्तर रूपवार्तिक—सर्वग्रहणं निर्विशेषप्रतिपत्यर्थम् ॥ ९ ॥ अर्थ—सर्व पदको ग्रहण निर्विशेषकी प्रतीतिकै अर्थ कियो है। टीकार्थ—जे लोकालोकका भेद करि भिन्न भये ऐसैं त्रिकाल विषय द्रव्य पर्याय अनंत जे हैं तिन समस्तनिकै विषैं केवलज्ञानका विषयको निबंध है ऐसैं प्रतीति उत्पन्न करनें निमित्त सर्व शब्दको ग्रहण है, अर्थात् जितना लोकालोकका स्वभाव है तितना अनंतानंत भी जो होय तौ तिन सबनिनैं जानने कूं याको सामर्थ्य है,

ऐसौ अपरिमित महात्म्य है सो केवलज्ञान जानवे योग्य है ॥ ९ ॥ अवैं तीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि मत्यादिकनिका विषयको निर्वध तौ अवधारण भयौ परंतु या नहीं जानी कि एक आत्माकै विषैं अपना निमित्त की निकटता जनित हैं वृत्ति जिनकी ऐसें ज्ञान युगपत् पणां करि कितनें होय है ? उत्तर, ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥

अर्थ—प्रश्न, एक यो शब्द कहा वाची है ? उत्तर रूप वार्तिक—अनेकार्थसंभवे विवक्षातः प्राथम्यवचन एकशब्दः ॥ १ ॥ अर्थ—एक शब्दका अनेक अर्थ संभवतां संतां भी वक्ताकी इच्छातैं प्रथमको वाचक एक शब्द है। टीकार्थ—यो एक शब्द अनेक अर्थनिमैं दृष्ट प्रयोग है सो ऐसैं है कि कहूं संख्या अर्थमैं प्रवर्तै है कि एक दोय वहुत इत्यादि अर कहूं अन्य पणां मैं प्रवर्तै है कि एक आचार्या कहिये अन्य आचार्य है अर कहूं असहाय अर्थमैं प्रवर्तै है कि जे वीर हैं ते एकाकी विचारै हैं अर कहूं प्रथम अर्थमैं वर्तै है कि एक आगमन है अर कहूं प्राधान्य अर्थमैं प्रवर्तै है कि एक हत सेनानैं करूंगो कि प्रधान हत सेनानैं करूंगो ऐसो अर्थ होय है तिनमैं सूं इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रथम अर्थ को वाचक एक शब्द जानवे योग्य है ॥ १॥ वार्तिक—आदिशब्दश्चावयववचनः ॥ २ ॥ अर्थ-आदि शब्द अवयवको वाचक है। टीकार्थ— यो आदि शब्द अनेक अर्थमैं संभवता वक्ताकी इच्छातैं इहां अवयव को वाचक जाननें योग्य है अर कहूं व्यवस्था अर्थमैं प्रवर्तै है कि ब्राह्मणादिक च्यार वर्ण है कि ब्राह्मणतैं व्यवस्था है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र है ऐसो अर्थ है अर कहूं प्रकार अर्थमैं प्रवर्तै है कि भुजंगादिक परिहार करनें योग्य है कि भुजंगका प्रकार कहिये भुजंग सदृश विषवान परिहार करनें योग्य है ऐसा अर्थ है अर कहूं समीप पणामैं प्रवर्तै है कि नद्यादि क्षेत्र है कि नदीकै समीप क्षेत्र है ऐसो अर्थ है

अर कहूं अबयव अर्थमैं प्रवर्तै है कि ऋगादि अध्ययन करै है कि ऋग्वेद के अवयव पढ़ै है ऐसो अर्थ है ता कारण करि यो कह्यो होय है कि एक को आदि सो एकादि अर्थात् प्रथम को अबयव, प्रश्न, कौनसा प्रथम को ? उत्तर, परोक्षको प्रश्न, कौनसो अवयव है? उत्तर, मतिज्ञान अर्थात् एकादि कहिये मतिज्ञान आदि। वार्तिक— सामीप्य बचनो वा ॥ ३ ॥ अर्थ— अथवा आदि शब्द सामीप वाचक है। टीकार्थ—अथवा यो आदिशब्द सामीप्यको वाचक देखवे योग्य है ता कारण करि प्रथम मतिज्ञान जो है ताकै समीप श्रुतज्ञान है ऐसैं कह्यो होय है अर्थात् एक जो मति ताकै आदि कहिये समीप सो श्रुत है ॥३॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक— मतेर्वहिर्भावप्रसंग- इति चेन्नानयोः सदा व्यभिचारात् ॥ ४ ॥ अर्थ—आदि शब्द सामीप वाची होत संतैं मति शब्दकै वहिर्भावको प्रसंग आवै है ? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इनि दोउनिकै सदा अव्यभिचार है यातैं। टीकार्थ—ऐसैं होत संतैं मतिकै बहिर्भाव प्राप्त होय है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, इन दोऊनिकै सदा अव्यभिचार है यातैं ये मति श्रुत जे हैं ते सर्वकाल नारद पर्वतकै समान अव्यभिचारी है तातैं इनिमैंसूं कोऊ एकका ग्रहणनैं संतां होतां दूसराको ग्रहण निकट होय है। प्रश्न, एकादि शब्द करि तौ मति श्रुत ग्रहण किया तातैं इहां आदि शब्द और ग्रहण कीया चाहिये ॥ ४ ॥ उत्तररूपवार्तिक—ततोन्यपदार्थवृत्तावेकस्यादिशब्दस्य निवृत्ति- रुष्ट्रमुखवत् ॥ ५ ॥ अर्थ—तातैं अन्य पदार्थवृत्तिकै एक आदि शब्दको निवृत्ति उष्ट्र मुख प्रयोगकै समान होय है। टीकार्थ—जैंसैं उष्ट्रको जो मुख सो उष्ट्र है अर उष्ट्र मुखकै समान है मुख याको सो उष्ट्रमुख है ऐसा समासकै विषैं एक मुख शब्द की निवृत्ति है कि लोप होय है ऐकों ही इहां भी एकादि है आदि जिनकै ते एकादि कहिये ऐसैं समासकै विषैं एकादि शब्दकी निवृत्ति होय है ॥५॥ वार्त्तिक—अवयवेन विग्रहः समुदायो वृत्त्यर्थः ॥६॥ अर्थ—अवयव करि समास करिये है सो समासको अर्थ समुदाय होय है। टीकार्थ—अवयवकरि विग्रह कहिये है कि समास करिये है

अर समासको अर्थ समुदाय होय है ता कारण करि एकादि ज्ञानकैं आभ्यंतरवर्ती करि भाज्यानि
कहिये अर्पण करनें योग्य है। भावार्थ—एकादि जो मतिज्ञान श्रुतज्ञान तानैं अभ्यंतर करि यथा
संभव उत्तर ज्ञान भाज्य होय है। प्रश्न, सर्व ही अर्पण करनें योग्य है। कहा कारण? उत्तर,
नहीं, च्यार पर्यंत ही अर्पण करनें योग्य है। प्रश्न, या काहेतैं? ॥ ६ ॥ उत्तररूप वार्तिक—
केवलस्यासहायत्वादितरेषां च क्षयोपशमनिमित्तत्वाद्यौगपद्याभावः ॥ ७ ॥ अर्थ—केवलके
असहाई पणांतैं अर अन्यकै क्षयोपशम निमित्त पणांतैं एकैं काल होनेंको अभाव है।
टीकार्थ—जो क्षायिक केवलज्ञान है सो असहाय है अर और ज्ञान जे हैं ते क्षयोपशम निमित्त
है यातैं केवलतैं इनकै विरोध है तातैं युगपत् असंभव हैं तातैं च्यार पर्यंत ही होय है
ऐसैं कहिये है॥ ७ ॥ प्रश्नोत्तर रूपवार्तिक—नाभावोऽभिभूतत्वाद् हनि नक्षत्रवदिति चेन्न
क्षायिकत्वात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, केवलके होतैं अन्यको अभाव नहीं है दिवसकै विषैं
नक्षत्रनिकै समान तिरस्कृतपणौं है यातैं? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि केवलके क्षायिक पणौं
है यातैं। टीकार्थ—केवलनैं होतां संतां क्षायोपशमिक ज्ञाननिको अभाव नहीं है तो कहा
है कि महान् केवलज्ञानकरि तिरस्कार रूप किया अपना प्रयोजनकै विषैं भास्करको प्रभाकरि
तिरस्कार रूप भया नक्षत्रनिकै सम व्यापार नहीं करै है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा—
कारण? उत्तर, क्षणिकपणांतैं क्षीण भयो है समस्त ज्ञानावरण जाकै ऐसो भगवान अर्हंत जो है
ताकै विषैं क्षायोपशमिक ज्ञाननिको संभव कैसैं होय क्योंकि निश्चय करि परिपूर्ण प्राप्त भई है
सर्व शुद्धि जा विषैं ऐसा स्थानकै विषैं एक प्रदेशकी अशुद्धि नहीं रहै हैं ॥८॥ तथा प्रश्नोत्तर
रूप वार्तिक—इंद्रियत्वादिति चेन्नार्षार्थानवबोधात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, इंद्रियवान पणांतैं केवलीकै
भी मत्यादिक संभवै है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि आर्षका अर्थको अवबोध तिहारै नहीं है यातैं।
टीकार्थ—प्रश्न, ऐसैं ही आगम प्रवर्तै है कि पंचेंद्रिय जे हैं ते असंज्ञी पंचेंद्रियनैं आदि लेय अयो-

गकेवली पर्यंत है यातैं इंद्रियवान पणातैं इंद्रियको कार्य ज्ञान जो है तानैं होवो योग्य है? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आर्ष वचनका अर्थको अनवबोध है, यातैं क्योंकि निश्चय करि आर्ष वचनमैं संयोगकेवली अर अयोगकेवलीकै पंचेंद्रियपणौं है सो द्रव्येंद्रिय प्रति कह्यो है भावेंद्रिय प्रति नहीं कह्यो है अर जो निश्चय करि भावेंद्रिय प्रति ही यो वचन होय तो नहीं क्षीण भया सकलावरण पणातैं सर्वज्ञ पणांको निवृत्ति होय तातैं यो कह्यो होय है कि कोऊ एक आत्माकै विषैं मति श्रुत ये दोय होय है अर कोऊ आत्माकै विषैं तीन होय है कि मति श्रुत अवधि होय है अथवा मति श्रुत मनःपर्यय होय है अर कोऊ आत्माकै विषैं च्यार होय है कि मति श्रुत अवधि मनःपर्यय होय है परंतु एक आत्माके विषैं युगपत् पांच नहीं संभवै है ॥ ९ ॥ वार्तिक—संख्यावचनो वैकशब्दः ॥ १० ॥ अर्थ—अथवा संख्या वाची एक शब्द है। टीकार्थ—अथवा यो एक शब्द संख्यावाची है एक है आदि जिनकै ते एकादि कहिये। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, एक आत्माकै विषैं एक मतिज्ञान होय है अर जो अक्षर श्रुत है सो दोय अनेक द्वादश भेदरूप उपदेशपूर्वक होय है सो भजनीय है कि होय अथवा नहीं होय और पूर्ववत् होय है। वहुरि और कहै है कि असंख्य पणां असहायपणां प्रधान पणांको वाचक एक शब्दनैं होतां संता एकादीनि कहिये केवल आदि होय है कि एक आत्माकै विषैं क्षायिक पणातैं एक केवलज्ञान होय है अर दोय होय है तहां मति श्रुत होय है इत्यादि पूर्ववत् जानना ॥१०॥ अवैं इकतीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि कह्या मत्यादिक ज्ञान नामनैं ही प्राप्त होय है कि अन्यथा नामनैं प्राप्त होय है ऐसो प्रश्न होत संतैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

मतिश्रुतावधयोर्विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥

अर्थ—मति श्रुत अवधि जे हैं ते विपर्यय स्वरूप भी होय हैं कि कुमति कुश्रुत कुअवधि

स्वरूप होय है। अर्थ—मति श्रुत अवधि जे हैं ते विपर्यय स्वरूप भी है अर चकारतैं सम्यक् स्वरूप भी है। इहां विपर्यय नाम अन्यथाका है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, सम्यक्का अधिकारतैं अर च शब्द जो है सो समुच्चयकै अर्थि है कि विपर्यय भी है अर सम्यग् भी है। प्रश्न, इनिकै विपरीतता काहेतैं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—मिथ्यादर्शनपरिग्रहान्मत्यादिविपर्ययः ॥ १ ॥ अर्थ—मिथ्यादर्शनका परिग्रहतैं मत्यादिकनिकै विपरीतता है। अर्थ—जो यो दर्शनमोहनीयका उदयनैं होतां संता मिथ्यादर्शन रूप परिणाम होय है ताकरि सहित एकार्थ समवायतैं मत्यादिकनिकै विपरीतता होय है। प्रश्न, भ्रष्टाका गृहमें प्राप्त भया भी मणि कनक आदि जे हैं तिनकै स्वभावको विनाश नहीं होय है तैसैं ही मत्यादिकनिकै भी स्वभावको विनाश नहीं होय है ? उत्तर, यो दोष नहीं है। वार्त्तिक—सरजसकटुकालाबूगतदुग्धवत्स्वगुणविनाशः ॥ २ ॥ अर्थ—रज सहित कड़वी तूंबड़ी जो है ताकै विषैं प्राप्त भया दुग्धकै समान निज गुणको विनाश होय है। टीकार्थ—जैसैं रज सहित कटुक आलावू जो तूंवो ताका भाजनकै विषैं स्थापन कियो दुग्ध अपना गुणनैं परित्याग करै है तैसैं ही मत्यादिक भी मिथ्यादृष्टि रूप भाजनमें प्राप्त भया दोषनैं प्राप्त होय है क्योंकि आधारका दोषतैं आधेयमैं दोष उत्पन्न होय है। प्रश्न, और सुनूं कि निश्चय करि यो एकांत नहीं है कि ये मणि कनक आदि भ्रष्टाका गृहमें प्राप्त भया भी स्वभावनैं नहीं तजै है ऐसैं कह्यो सो एकांत नहीं है। प्रश्न, तहां या कैसैं अवधारण करिये है कि मत्यादिक आलावू दुग्धवत् दोषनैं प्राप्त होय है अर मत्यादिक मणि कनक आदिवत् दोषनैं नहीं प्राप्त होय है ॥ २ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—पारिणामिकशक्तिविशेषात् ॥ ३ ॥ अर्थ—उत्तर, परिणामन करावनैंवाला वस्तुका शक्ति विशेषतैं परिणामन होय है। टीकार्थ—परिणाम वस्तुको परिणामन करावनैंवारा वस्तुका शक्ति विशेषतैं अन्यथा भाव होय है सो जैसैं आलावू द्रव्य दुग्धनैं विपरीत परिणामायवे कूं समर्थ है तैसैं ही मिथ्यादर्शन भी मत्यादिकनिकूं अन्य-

था पणांनैं करनेकूं समर्थ है क्योंकि मिथ्यादर्शनका उदयनैं होतां संता अन्यथा निरूपणाको दर्शन है यातैं अर भ्रष्टाको गृह मणि कनक आदिकै विकार उत्पन्न करनेकूं समर्थ नहीं है अर उनकूं विशेष परिणाम करावनेवारा द्रव्यकी निकटतानैं होतां संता तिनकै भी अन्यथा परिणाम होय ही है। बहुरि जा समय सम्यग्दर्शन उत्पन्न होय है ता समय मिथ्या परिणामका दर्शनको अभाव है यातैं तिन मत्यादिकनिकै सम्यक्त्व पणौं है यातैं सम्यग्दर्शन मिथ्या-दर्शनका उदय विशेषतैं तिन तीननिकै दोय प्रकार कल्पना होय है कि मतिज्ञान मत्यज्ञान श्रुताज्ञान अवधिज्ञान विभंगज्ञान ऐसैं ॥ २ ॥ ३१ ॥ अबैं वत्तीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि इहां वादी कहै है कि रूपादि विषयकी उपलब्धिकै व्यभिचारका अभावतैं विपर्यय ज्ञानको अभाव है क्योंकि जैसैं मतिज्ञान करि सम्यग्दृष्टी रूपादिकनिनैं ग्रहण करै है तैसैं ही मिथ्यादृष्टि भी मत्यज्ञान करि ग्रहण करै है अर जैसैं घटादिकनिकै विषैं रूपा-दिकनिनैं श्रुतज्ञान करि सम्यग्दृष्टी निश्चय करै है अर अन्य जे हैं तिनकै अर्थ उपदेश करै है तैसैं ही श्रुतज्ञान करि मिथ्यादृष्टी भी निश्चय करै है अर अन्य जे हैं तिनकै अर्थ उपदेश करै है ऐसैं ही अवधिज्ञान करि रूपी अर्थनैं ग्रहण करै है तैसैं ही विभंगज्ञान करि रूपी अर्थनैं ग्रहण करै है तातैं ये तीनूं विपर्यय नहीं है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है तातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥

अर्थ—सत् असत्का अविशेषतैं अपनी इच्छापूर्वक उपलब्धितैं उन्मत्तकै समान है। वार्तिक--सच्छब्दस्यानेकार्थसंभवे विवक्षातः प्रशंसार्थग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्थ--सत् शब्दका अनेक अर्थ संभवतां संतां वक्ताकी इच्छातैं प्रशंसा अर्थको ग्रहण है। टीकार्थ—यो सत् शब्द अनेकार्थ वाची

है ऐसैं व्याख्यान कियो है, ता सत् शब्दको इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रशंसा अर्थको ग्रहण जानवे योग्य है कि प्रशस्त तत्त्व ज्ञान है ऐसो सत् शब्दको अर्थ है अर असत् है सो अज्ञान है। सत् असत् जे हैं तिनको अविशेष करि अपनी इच्छाकरि उपलब्धितैं है कि ग्रहण करवातैं विपर्यय है प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, उन्मत्तवत् सो जैसैं उन्मत्त दोषका उदयतैं उपहत भई है इंद्रिय अर मति जाको ऐसो जीव जो है सो विपरीत ग्राही होय है सो अश्वनैं गो अंगीकार करै है अर गौनैं अश्व निश्चय करै है अथवा लोष्टनैं सुवर्ण अर सुवर्णनैं लोष्ट अथवा लोष्टनैं लोष्ट अर सुवर्णनैं सुवर्ण जानै है कि निश्चय करै है अर अविशेष करि निश्चय करतो जो है ताकै अज्ञान ही है तैसैं ही मिथ्यादर्शन करि उपहत हैं इंद्रिय अर मति जाकी ताकै मति श्रुति अवधि भी अज्ञान ही है ॥ १ ॥ वार्तिक—भवत्यर्थग्रहणं वा ॥ २ ॥ अर्थ—अथवा सत् शब्दको विद्यमान अर्थ ग्रहण है। टीकार्थ—अथवा यो सत् शब्द भवति अर्थमें जाननें योग्य है अर्थात् सत् कहिये विद्यमान ऐसो अर्थ है अर असत् कहिये अविद्यमान ऐसो अर्थ है तिन दोउनिको अविशेष करि अपनी इच्छा करि उपलब्धितैं विपर्यय है। कदाचित् रूपादि सत् भी असत् ऐसैं अंगीकार करै है अर असत् भी सत् ऐसैं अंगीकार करै है अर कदाचित् सत् असत् ही अर असत् असत् ही ऐसैं अंगीकार करै है ॥ २ ॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर रूपवार्तिक—प्रवादिपरिकल्पनाभेदाद्विपर्ययग्रहः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रतिवादीकी कल्पनाका भेदतैं विपरीत ग्रहण होय है टीकार्थ—प्रतिवादीनिका कल्पनाका भेदतैं विपर्यय ग्रहण होय है सो ऐसैं है कि प्रथम तौ कितनेक कहै है कि द्रव्य ही हैं रूपादिक नहीं है अर और कहै है कि रूपादिक ही है द्रव्य नहीं है अर औरनिको मत ऐसो है कि अन्य द्रव्य हैं अन्य रूपादिक हैं। प्रश्न, इनकै विपर्यय ग्रहण कैसैं है ? उत्तर कहिये है कि जो द्रव्य ही है अर रूपादिक नहीं है तो लक्षणका अभावतैं लक्ष्यका अनवधारणको प्रसंग आवै है अर और सुनूं कि इंद्रिय करि सन्निकर्ष रूप कीयो

द्रव्य रूपादिकका अभावनैं होतां संता सर्वात्मा करि सन्निकर्ष करिये तातैं सर्वात्मा करि ग्रहणको प्रसंग आवै है अर करण भेदका अभावको प्रसंग आवै है सो यो नहीं तौ प्रत्यक्षगम्य है अर नहीं अनुमान गम्य है अर रूपादिक ही द्रव्य नहीं है ऐसैं भी निराधारपणातैं रूपादिकनिका अभावको प्रसंग आवै है अर और सुनूं कि परस्पर विलक्षण रूपादिकनिका समुदायनैं होतां संतां भी समुदायकै एक अर्थांतर भावतैं कि एक रूप भावतैं सर्वको अभाव होयगो अर्थात् एक रूप होतैं रूपादिक भिन्न भिन्न है तिन सबनिको अभाव होयगो क्योंकि उनकै परस्परतैं अर्थांतर पणौं है यातैं अर निश्चय करि द्रव्य अन्य है अर रूपादिक गुण अन्य है ऐसैं होत संतैं भी तिनकै लक्ष्य लक्षण भावको अभाव होय है क्योंकि परस्परतैं अर्थांतर पणौं है यातैं अर्थात् जे भिन्न भिन्न हैं तिनक लक्ष्य लक्षण भाव नहीं होय है। इहां वादी कहै है कि दंड दंडीके समान भिन्न भिन्न होतैं भी लक्ष्य लक्षण भाव होय है ? उत्तर, ऐसैं कहो हो सो नहीं है क्योंकि दृष्टांतकै विषम पणौं हैं यातैं सो ऐसैं है कि भिन्न भिन्न विद्यमाननिकै लक्ष्य लक्षण युक्त होय है अर अविद्यमाननिकै लक्ष्य लक्षण भाव युक्त नहीं होय अर्थात् द्रव्य अर गुण उपलब्ध नहीं है तातैं लक्ष्य लक्षण भाव युक्त नहीं है अर और सुनूं कि द्रव्यतैं अर्थान्तर भूत रूपादिक गुण जे है तिननैं अमूर्त्तिक होत संते इंद्रिय संनिकर्ष युक्त नहीं होय है तातैं रूपादिकनिका ज्ञान को अभाव होयगो अर अरर्थान्तरभूत द्रव्य रूपादिकनिका ज्ञानको कारण होनें कूं योग्य नहीं होय है ॥ ३ ॥ वार्तिक—मूलकारणविप्रतिपत्तेः ॥ ४ ॥ अथ—मूल कारणमें विवाद है यातैं। टीकार्थ— इनि वादीनिकै घटादिकनिका मूल कारणकै विषैं विवाद है सो ऐसैं है कि कितनेंक तो कहै है कि अव्यक्त जो प्रधान तातैं महत् अर महत् तैं अहंकार अर अहंकारतैं तन्मात्रा अर तन्मात्रातैं इन्द्रिय अर इंद्रियतैं महाभूत अर महाभूततैं मृत्पिंडादिकनिकी रचना ऐसैं अनुक्रम करि घटादिक जो विश्व रूप जगत् ताको उत्पाद होय है सो

अयुक्त है क्योंकि अमूर्त्त पणां निरवयवपणां निःक्रिय पणां अतींद्रियपणां अनंत पणां नित्यपणां अपर प्रयोज्यपणां आदि विशेषणनि करि संयुक्त प्रधान जो है ताकै वातैं विलक्षण घटादि कार्य होनेंकूं योग्य नहीं होय है क्योंकि कारणतैं विलक्षण कार्यके अदृष्टपणौं है यातैं अथवा और सुनूं कि अपर प्रयोज्य कहिये पर कर नहीं प्रेरित अर आप अभिप्राय रहित प्रधान जो है ताकै अभिप्राय पूर्वक उत्पत्तिको अनुक्रम युक्त नहीं होय है अर और सुनूं कि प्रथम तौ पुरुष जो है सो निःक्रिय पणां तैं महत् आदिकै उत्पन्न करनें निमित्त प्रधाननैं नहीं प्रयुक्त करै है कि नहीं प्रेरणा करै है अर प्रधान आप निःक्रय पणां तैं अपना प्रधान स्वरूपनैं महत् आदिका उत्पन्न करवा निमित्त प्रयुक्त करनेंकूं नहीं योग्य है क्योंकि आप गमन करनेमैं विकल पांगलो पुरुष आपनैं सावधान करि उठाय गमन करतौ नहीं देख्यो है यातैं अर और सुनूं कि प्रयोजन रहित प्रधान जो है ताकै महत् आदिको उत्पन्न करनौं युक्तिमान् नहीं है। इहां वादी कहै है कि प्रधानकै तो प्रयोजन नहीं है तथापि पुरुषको भोग है सो प्रयोजन है? उत्तर, ऐसैं कहो हो सो नहीं है क्योंकि स्वारथका अभावतैं कि प्रथम तौ प्रधानकै अपनौं प्रयोजन नहीं है यातैं अर ता सिवाय पुरुष विभू नित्य आत्मा जो है ताकै भोग परिणामको अभाव है यातैं अर और सुनूं कि अचेतन पणातैं भी उत्पत्ति क्रम नहीं संभवै है क्योंकि या लोकमैं चेतन चैत्र नामा पुरुष ओदनको अर्थी क्रियाफल साधन जे हैं तिनको जानने वारो ओदनकै अर्थ अग्नि संधुक्षण आदिकै विषैं प्रवर्तन करतो देख्यो है तैसो प्रधान चैतन्य नहीं है यातैं याक महत् आदि क्रियाका उत्पतिको क्रम जो है ताको अभाव है अर पुरुष भी महत् आदिका अनुक्रमको प्रेरक नहीं है क्योंकि पुरुषकै निःक्रिय पणौं है यातैं। वहुरि और वादी कहै है कि भिन्न भिन्न नियम रूप पार्थिव आदि जाति करि विशेष रूप परमाणू प्राणीनिका अदृष्ट आदिकी निकटतानैं होतां संतां संग रूप भये तिनतैं अर्थान्तर भूत घटादि कार्यको आतम लाभ होय है कि अपना स्वरूपको [प्रगट पणौं

होय है याको उत्तर आचार्य कहै है कि ऐसौं कह्यौ सो भी अयुक्त है कि अणु जे है तिनकै नित्य पणांतैं कार्यका आरम्भ करने रूप शक्तिको अभाव है यातैं अर आरम्भ करत संतैं नित्य पणांकी हानि है यातैं अर नित्यकै अर्थान्तरभूत कार्यको आरम्भ युक्त नहीं है क्योंकि कारणतैं भिन्न कार्यकी अनुपलब्धि है यातैं अर कारणतैं भिन्न कार्यकी उपलब्धिनैं होतां संतां अणुके सहित पणांको अभाव कहो हो सो भी युक्त नहीं होवैगो। भावार्थ—अर और सुनूं कि परमाणूनिकै जाति प्रति भिन्न होनेको नियम भी नहीं संभवे क्योंकि भिन्न जातिमाननिकै उननें भिन्न कार्यका आरम्भको दर्शन है यातैं। प्रश्न, भिन्न जाति माननिकै विषैं समुदाय मात्र है? उत्तर, तुल्य जातिमाननिकै विषैं भी समुदायके विषैं कर्तापणौं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि आत्माके तथा घटात्मा जो मृत्तिका द्रव्य ताकै निःक्रियपणां तथा नित्यपणौं है यातैं अर अदृष्ट आदि आत्म गुण जो है ताकै भिन्न क्रिया पणांतैं ही कर्तापणौं नहीं उत्पन्न होय है क्योंकि निःक्रिय है सो अर्थान्तरमैं क्रियाको हेतु नहीं देख्यो है यातैं अर और वादी ऐसा मानै है कि वर्णादि परमाणूंका समुदायात्मक रूप परमाणूं अतीन्द्रिय विषय जे हैं ते एकत्र भया संतां इन्द्रिय ग्राही समुदायात्मक रूप परमाणू अतीन्द्रिय विषय जे हैं ते एकत्र भया संता इन्द्रिय ग्राही पणांनै अनुभव करि घटादि कार्यका आत्मलाभको हेतुपणौं जो है तानैं प्राप्त होय है? उत्तर, सो अयुक्त है क्योंकि प्रत्येक रूप परमाणूंनिकै अतीन्द्रिय पणांतैं अर तातैं अन्य घटादि कार्यकै भी अतीन्द्रिय पणांको प्रसंग आवै है यातैं अर तातैं ही कि अतीन्द्रिय पणांतैं ही दृश्य विषय-में प्रमाण प्रमाणाभासकै विकल्पको अभाव होय है अर कार्यका अभावतैं कार्यको लिंग रूप कारण जो है ताकौ भी अभाव होय है। बहुरि और सुनूं कि क्षणिक पणांतैं तथा निःक्रिय पणां-तैं कार्यका आरम्भको अभाव है। अभिन्न शक्तिवाननिकै परस्पर अभिसंबंधको अभाव है अर और अन्य चेतन अर्थ नहीं है जो तिनकै सम्बन्धको कर्त्ता होय है अर अन्य चेतन कर्त्ताका अभा-

वतैं क्षणिक परमाणूके संबंधको अभाव है ऐसैं अन्य भी प्रवादी जे हैं तिनके विषैं विद्यमानमें अविद्यमान अर अविद्यमानमें विद्यमान विपर्यय है सो मिथ्यादर्शनको जो उदय ताका वशतैं पित्तका उदय करि आकुलित रसना इन्द्रिय विपर्ययग्राही होय है ताके समान जानवे योग्य है, तातैं जो कह्यो कि रूपादि विषयको उपलब्धिके व्यभिचारका अभावतैं मिथ्यादृष्टिको ज्ञान अय अज्ञान रूप नहीं है सो असम्यक् है ॥ ४ । ३२ ॥ अबै तेतीसका सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि लक्षण आदि करि ज्ञान तौ व्याख्यान कियो अर चारित्र व्याख्यान करने योग्य है। तानैं उल्लंघनि करि नय कहिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, मोक्षका विधानकै विषैं चारित्रके वक्ष्यमाण पणों है यातैं। प्रश्न, मोक्षकी विधिके विषैं काहेतैं कहिये है ? उत्तर, ऐसैं कहौ हो तौ सुनूं कि मोक्ष प्रति चारित्रके प्रधान कारण पणों है यातैं। प्रश्न, कहाकृत प्रधानता है ? उत्तर, सर्व कर्म रूप इंधनका निःशेष दहनकृत प्रधानता है क्योंकि जातैं आत्मा व्युपरत क्रिया नामा चतुर्थ शुक्ल ध्यानसैं प्रगट भयो है आतमबल जाकै एसो हुवो संतो समस्त कर्म रूप इंधनका निःशेष दहन करनेमें समर्थ होय है। इहां आशंका है कि जो क्षायिक सम्यक्त्व और क्षायिक केवलज्ञान सहित आत्मा ही समस्त कर्मरूप इंधनका निःशेष दहन करनेमें समर्थ होय तो क्षायिक केवल ज्ञानकी उत्पत्तिके अनन्तर ही समस्त कर्मको क्षय होय कि मोक्ष होय ? उत्तर, व्युपरतक्रिया ध्यानकी उपत्पत्तिके अनन्तर ही समस्त कर्मको क्षय होय है। तातैं व्युपरतक्रिया ध्यानको उत्पत्तिके अनन्तर ही उत्तम परिपूर्ण चारित्र होय है सो कर्मादानका हेतुरूप क्रियाकी निवृत्तिरूप चारित्र है एसैं वचन है यातैं, जो ऐसैं है तो इहां वो ही चारित्र कहो ? उत्तर, मोक्षका विधानकै विषैं भी वो कहने योग्य है। यातैं इहां काहेतैं गौरव होय तातैं वहां ही कहेंगे। प्रश्न, ऐसैं सम्यग्दर्शन ज्ञानका प्रतिपादन करि जीवादि व्याख्यान करने योग्य कहिये है अर प्रमाण तो व्याख्यान कियो अर प्रमाण भाषित अर्थकै एक देश कहने वारे नय हैं क्योंकि प्रमाणनयैरधिगमः ऐसो वचन है यातैं

प्रमाणके अनन्तर कहने योग्य नय हैं । प्रश्न, ऐसैं है तो वे कितने हैं ऐसो प्रश्न होय है यातैं सूत्रकार कहै है। सूत्रम्—

नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवम्भूता नयाः॥ ३३ ॥

अर्थ—नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवम्भूत ये सात नय हैं ते नय शब्दकी अपेक्षा करि एक आदि असंख्यात विकल्परूप है तहां अति संक्षेपतैं प्रतिपत्ति कहिये ज्ञान नहीं होय, अर अति विस्तारकै विषैं अल्प बुद्धिमाननिकैं अनुग्रह नहीं होय यातैं मध्य वृत्ति करि सप्त नय इहां कहिये है तिनका सामान्य लक्षण कहने योग्य है, तहां प्रथम सामान्य लक्षण कहिये हैं। वार्त्तिक—प्रमाणप्रकाशितार्थविशेषप्ररूपको नयः ॥१॥ अर्थ—प्रमाण करि प्रकाशरूप किया अर्थको विशेष प्ररूपण करनवारो जो ज्ञान है सो नय है। टीकार्थ—प्रकर्ष करि जो मान सो प्रमाण है, अर्थात् सकलदेश जो है सो प्रमाण है ता प्रमाण करि प्रकाशित अर्थात् प्रमाणाभास करि परिग्रहीत नहीं ऐसैं अस्तित्व, नास्तित्व, नित्यत्व, अनित्यत्व, आदि धर्मात्मक जीवादिक अर्थ जे हैं तिनकै जे विशेष रूप पर्याय तिनको प्रकर्ष करि प्ररूपक है। अर्थात् निरुद्ध कहिये रुक्यो है दोषका आगमको द्वार जाकै ऐसा दोषको जो प्रकर्ष ता करि प्ररूपण करनवारो है लक्षण जाको सो नय है। ताकै मूल भेद दोय है तहां एक द्रव्यास्तिक है दूसरो पर्यायास्तिक है इनकी निरुक्ति ऐसी ह कि द्रव्य है ऐसी है बुद्धि जाकी सो द्रव्यस्तिक है। अर्थात् द्रव्यको होनों ही है क्योंकि या द्रव्यतैं अन्य भावकै विकार कहिये पर्याय सो यहीं है यातैं ऐसैं द्रव्यास्तिक है अर पर्याय ही हैं ऐसी है मति जाकी सो पर्यायास्तिक है कि जन्मादि भाव विकार मात्र ही होनो है। अर तातैं अन्य द्रव्य नहीं है क्योंकि पर्याय विना द्रव्यकी अनुपलब्धि है। यातैं ऐसैं पर्यायास्तिक है अथवा द्रव्य ही है अर्थ कहिये प्रयोजन याको अर तुण कर्म जे है ते

प्रयोजन रूप नहीं हैं, क्योंकि वे तो द्रव्यकी अवस्था रूप हैं यातैं, ऐसो द्रव्यार्थिक है अर रूपादि गुण तथा उत्क्षेपण आदि कर्म रूप पर्याय ही है प्रयोजन याको सो पर्यायार्थिक है। अर पर्यायतैं अन्य द्रव्य नहीं है, ऐसैं पर्यायार्थिक है अथवा अर्थतैं कहिये प्राप्त हूजिये अथवा गम्यते कहिये जानिये अथवा निष्पादिते कहिये उत्पन्न कहिये सो अर्थ है अर कार्यनैं द्रवति कहिये प्राप्त होय सो द्रव्य है अर्थात् कारण है, अर द्रव्य ही है अर्थ जाको अर्थात् कारणरूप ही कार्य है। अर्थान्तर नहीं है क्योंकि कार्य कारणमें कछू स्वरूप भेद नहीं है पर्वके अर अंगुलीकै समान दोऊ एकाकार ही है ऐसैं द्रव्यार्थिक नय कहिये है, अर सर्वतरफतैं प्राप्त हूजिये सो पर्याय है, अर पर्याय ही है प्रयोजन कहिये कार्य याको अर्थात् द्रव्य प्रयोजन नहीं है क्योंकि अतीत अनागतमें विनष्ट अनुत्पन्न पणां करि व्यवहारको अभाव है यातैं सो ही वर्त्तमान कालवर्त्ती पर्याय कार्य कारण नामको भजनेवारो है। ऐसैं पर्यायार्थिक अथवा अर्थन जो है सो अर्थ है कि प्रयोजन है सो अर्थ है। अर द्रव्य ही है प्रयोजन जाको सो द्रव्यार्थिक है क्योंकि प्रत्यय कहिये प्रतीत अभिधान कहिये नाम अनुवृत्ति कहिये ताकै अनुकूल प्रवर्त्तन अर लिंग कहिये चिन्ह इनका दर्शनकूं छिपावनेंमैं असमर्थ पणौं है यातैं अर पर्याय ही प्रयोजन जाको सो पर्यायार्थिक है क्योंकि वाक् कहिये शब्द अर विज्ञान कहिये जाननभाव इनकी निवृत्तिको तथा प्रवृत्तिको कारण भूत व्यवहार जो है ताकी प्रसिद्धतैं अर्थात् मृत्पिंडके घट पर्याय होय है तहां मृत शब्दकी निवृत्ति है, अर मृत ज्ञानकी निवृत्ति है, अर घट शब्दकी तथा घट ज्ञानकी प्रवृत्ति है अर या है कारण जानैं ऐसा व्यवहारकी प्रसिद्धि है यातैं ॥१॥ ऐसैं इनि दोऊ नयकै भेद नैगमादिक है तिनके विशेष लक्षण कहिये। वार्त्तिक—संकल्पमात्रग्राही नैगमः ॥२॥ अर्थ—पदार्थका संकल्प मात्रको ग्रहण करणवारो जो है सो नैगमनय है। टीकार्थ—याकै विषैं प्राप्त होय सो निगम अथवा प्राप्त होना मात्र जो है सो निगम है अर निगममैं कुशल होय सो नैगम है,अथवा

निगममें होय सो नैगम है ताको लोकमें व्यवहार अर्थका सकल्प मात्र ग्रहण है। प्रस्थ, इन्द्र ग्रह गमी आदिके विषैं है सो ऐसैं हैं कि कोऊ पुरुष परसूनें ग्रहण करि गमन करतो जो है तानैं देखि कहै कि कहा निमित्त जावै है ऐसौ प्रश्न होत संतै वो वाके अर्थ कहै कि, प्रस्थ लेने निमित्त जाऊं हूं ऐसैं ही इन्द्रके अर्थ तथा ग्रहादिकके विषैं तथा गमीके विषैं जानना सो ऐसैं है कि इहां कोऊ प्रश्न करै है कि कौनसौ गमी है कि गांव जाय है ऐसैं कहत संतै सो कहै कि मैं गमी हूं। इहां वर्त्तमान कालमें नहीं गमन करतो संतो भी कहै है कि मैं गमी हूं, ऐसैं व्यवहार है या प्रकार और भी अनेक नैगम नयके विषय जाननें ॥२॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक— भाविसंज्ञाव्यवहार इति चेन्न भूतद्रव्यसन्निधानात् ॥ ३ ॥ अर्थ—यो भाविसंज्ञा व्यवहार है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि भूत द्रव्यके असन्निधान है यातें। टीकार्थ—यो नैगम नयको विषय नहीं है यो तो भाविसंज्ञा व्यवहार है कि जैसे भूत संज्ञा व्यवहार है। वर्त्तमान संज्ञा व्यवहार है तैसें ही ये उदाहरण भाविसंज्ञा व्यवहारके है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, भूतद्रव्यका असन्निधानतें क्योंकि निश्चय करि कुमार तथा तंडुल आदि द्रव्यमें आश्रयकरि राजा तथा ऊदन आदि भावनि संज्ञा प्रवर्तै है तैसें नैगम नयका विषयमें किंचित् भूत द्रव्य नहीं है जाका आश्रयकरि भाविनी संज्ञा जानिये ॥ ३ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—उपकारानुपलम्भात्सम्व्यवहारानुपपत्तिरिति चेन्नानुप्रतिज्ञानात्। अर्थ—प्रश्न, उपकारका अनुपलम्भतैं व्यवहारको अनुपत्ति है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रतिज्ञा नहीं करी है यातैं। टीकार्थ—नैगम नयके वक्तव्य विषय जो है ताके विषैं उपकार नहीं प्राप्त होय है, अर भावि संज्ञा विषय राजादिकके विषैं उपकार प्राप्त होय है। तातें यो नैगम नय युक्त नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अप्रतिज्ञानतैं क्योंकि हमने या प्रतिज्ञा नहीं करी है कि उपकारतैं नहीं होतां संता ही नैगम नय होय। प्रश्न, तो कहा है? उत्तर, या नयको विषय-

दिखाइये है अथवा उपकार प्रति सन्मुख पणांतैं उपकारवान नहीं है ॥ ४ ॥ वात्तिक—स्वजात्य-
विरोधेनैकत्वोपनयात्समस्त ग्रहणं संग्रहः ॥५॥ अर्थ-अपनी जातिका अविरोध करि एक पणांनैं प्राप्त
करवातैं समस्तको ग्रहण जो है सो संग्रह नय है। टीकार्थ—वुद्धि नामा अनुकूल प्रवृत्ति लिंग
इनको सदृशपणौं जो है सो जाति है, अथवा निज रूपको ग्रहण जो है सो जाति है, सो चेतन
अचेतन स्वरूपात्मक है। अर शब्दकी प्रवृत्तिका निमित्तपणां करि प्रति नियमतैं अपना
नामकी भजने वारी होय है। अर अपनी जाति है सो स्व जाति है। अर नहीं प्रच्यवन है सो
अविरोध है अर अपनी जातितैं नहीं प्रच्यवन जो है सो स्व जात्यविरोध है। अर वा अपनी जाति-
का अविरोध करि एक पणांका प्राप्त होवातैं एक पणांकी प्राप्ति होवातैं। प्रश्न, कौनको ग्रहण
होय है। उत्तर, भेदनको ग्रहण होय है अर्थात् समस्त भेदनिको ग्रहण जो है सो संग्रह है।
याको उदाहरण ऐसो है कि जैसैं सत् तथा द्रव्यं तथा घट इत्यादि सत् ऐसैं कहतां संतां सत्ताका
सम्बन्धकै योग्य द्रव्य पर्याय तथा तिनकै भेद तथा प्रभेदनिकै तिनतैं अव्यतिरेक पणांतैं ता एक पणां
करि संग्रह होय है। अर द्रव्यं ऐसा कहतां संता जीव अजीव तिनकै भेद तथा प्रभेदनिकै द्रव्य-
पणांका अविरोधतैं वै एकत्व पणांकरि संग्रह होय है। अर घट ऐसैं कहतां संता नामादिक
भेदतैं तथा मृत्तिका सुवर्ण आदि कारण विशेषतैं तथा वर्ण संस्थान विकारतैं भिन्न जे घट शब्द-
के वाच्य सर्व घट तिनका वाच्यपणांका अव्यतिरेक पणातैं एक पणांकरि संग्रह होय है। ऐसैं
औरनिकै विषैं भी जानना तिनमें नाम अर प्रतीत जे हैं ते सामान्य है अर्थात् जाति है क्योंकि दूर भयो
विशेष भाव है यातैं। प्रश्न, सत्तादिक अर्थान्तर भूत है तिनका अभिसम्बन्धतैं सत् आदि नाम
है ? उत्तर, सो नहीं ? क्योंकि दोऊ तरैं करि ही अनुपपत्ति है यातैं। इहां यो विचार करने योग्य है
कि सत्ताका सम्बन्धतैं पूर्व द्रव्यादिकनिकै विषैं सत् ऐसो नाम अर प्रतीत है या नहीं है जो है
तो प्रकाशितको प्रकाशन व्यर्थ है तैसैं सत्ताको सम्बन्ध व्यर्थ है। पर सत्ताकै दोय पणांको

प्रसंग आवे है कि अभ्यन्तर रहन वारी है, दूसरी बाह्य रहन वारी है, यातैं सिद्धान्त विरोध होय है सो सिद्धान्त सत् रूप लिंगका अविशेषतैं अर शेष लिंगका अभावतैं एक भाव है ऐसो है यातैं खर विषाणादिकनिमैं अति प्रसंग नहीं है। प्रश्न, यो द्रव्यके अर सत्ताके विशेष है सो समवाय कृत है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि समवायके पूर्वै निषेध पणौं है यातैं, अर औरसुनूं कि सत्ताकै सत् ऐसौं नाम जो है ताके सत्तान्तर हेतुपणातैं तथा अहेतु पणांनैं होतां संता अनवस्था तथा प्रतिज्ञा हानि दोषको प्रसंग आवे। इहां वादी कहै है कि पदार्थके शक्ति प्रति नियमतैं कि पदार्थ पदार्थ प्रति भिन्न भिन्न शक्तिका नियमतैं द्रव्यादिकनिके विषैं सत् ऐसो नाम जो है सो तो निमित्तान्तर हेतुक है अर सत्ताके विषैं सत् ऐसो नाम है सो स्वतै ही है? उत्तर, जो ऐसैं है तो संसर्गवादको त्याग होय कि सत्ताके सत्तान्तरका सम्बन्धको त्याग होय, अर इच्छा मात्र कल्पनाको प्रसंग आवै, अर और सुनूं कि पदार्थान्तर सत्तादिक जे हैं तिनकी द्रव्यादिकनिके विषैं प्रवृत्ति जो है सो याकी है ऐसैं बहुव्रीहि समास रूप है कि सो या है, ऐसैं कर्मधारय समास रूप है जो सो याकी है ऐसौ समास है तो मत्वर्थीय पणांकरि सत्तावान् द्रव्य है ऐसौ होनो योग्य है। जैसैं गोमान् यवमान् है तैसैं है यातैं मत्वर्थकै भावार्थकी निवृत्ति कहने योग्य है। अथवा सो यो है ऐसा अभिसम्बन्ध करि समास करिये तो सत्ता द्रव्य है। ऐसौ अर्थ प्राप्त होय है कि जैसैं दंड पुरुष है यातैं सत् द्रव्य है ऐसैं कहो हो सो नहीं है क्योंकि यामें भावरूप अर्थको निवृत्ति कहने योग्य है। अर और सुनूं कि दृष्टान्तका अभावतैं क्योंकि निश्चय करि कोऊ एक अनेकको सम्बन्धी नहीं देख्यो है। अर्थात् ऐसौ कोऊ ही नहीं है कि जानैं देखि एक सत्ता अनेक सम्बन्धिनी निश्चय करिये। प्रश्न, नीली द्रव्यके समान एक सत्ता अनेक सम्बन्धिनी है? उत्तर, सो नहीं है। क्योंकि नीली द्रव्यके भी अनेक पणौं है यातैं। प्रश्न, नीलीपणांके समान सत्ता अनेक सम्बन्धिनी है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा नीली पणांके

असिद्ध पणौं है यातैं। वार्तिक—अतो विधिपूर्वकमवहरणं व्यवहारः। ॥६॥ अर्थ—संग्रह-नयतै ग्रहण किया अर्थको आनुपूर्वी करि ग्रहण करणु जो है सो व्यवहार है। टीकार्थ—अतः कहिये यातैं, प्रश्न, काहेतैं, उत्तर, संग्रहतैं सो ऐसो है कि संग्रह नय करि ग्रहण किया अर्थनिको विधि पूर्वक अवहरण जो है सो व्यवहार है। प्रश्न, कौनसा विधि है? उत्तर, संग्रहनय करि ग्रहण कियौ अर्थ जो है ताको आनुपूर्वी करि ही व्यवहार प्रवर्त्तै है सो यो विधि है सो ऐसैं हैं कि सर्वका संग्रह करि सत्को ग्रहण है सो अनपेक्षित विशेष है सो भला व्यवहारके अर्थ समर्थ नहीं है यातैं व्यवहार नय आश्रय करिये है अथवा जो सार है सो द्रव्य है अथवा गुण है इहां जीव अजीवकी अपेक्षा रहित संग्रह नय ग्रहण किया द्रव्य करि भी व्यवहार करने कूं समर्थ नहीं होय है यातैं जीव द्रव्य है, तथा अजीव द्रव्य है ऐसा व्यवहारनै आश्रय करै है, अथवा संग्रह नय कै विषैं प्राप्त भया जीव अजीव भी भला व्यवहारकै अर्थि समर्थ नहीं है यातैं देव नारक आदि तथा घट पट आदि व्यवहार करि आश्रय करिये है। याको उदाहरण ऐसो है कि कषायलो द्रव्य जो है सो औषधि है। ऐसैं कहतां संता सामान्यकै विशेषात्मक पणांतैं न्यग्रोध आदिका विशेष सामार्थ्यनैं आश्रय करिये है क्योंकि प्रभु चक्रवर्ती भी सर्व कषायला द्रव्यनैं एकत्र करनेकूं समर्थ नहीं है यातैं अर संग्रह नय करि ग्रहण किया नाम स्थापन द्रव्य जे हैं ते भी भला व्यवहारके अर्थ समर्थ नहीं है यातैं भाव रूप वर्त्तमानपर्यायही ग्रहण करिये है ऐसैं यो नय तावत् प्रवर्त्तै है कि यावत् फेर विभाग नहीं होय ॥ ६ ॥ वार्तिक—सूत्रपातवत् ऋजुसूत्रः ॥७॥ अर्थ—सूत्रका पतनकै समान सरल कहै सो ऋजुसूत्र नय है ॥ टीकार्थ—जैंसैं सरल सूत्रको पतन है तैसैं ऋजुसूत्र कहिये सरलसूत्रयति कहिये व्याख्यान करै सो ऋजुसूत्र है सो सर्व त्रिकाल विषय पर्यायनिनैं उल्लंघन करि वर्त्तमान विषयनैं ग्रहण करैं है। क्योंकि अतीत अनागतकै विनष्ट अनुत्पन्न पणां करि व्यवहारको

अभाव है यातैं याको विषय वर्त्तमान कालवर्त्ती पर्याय मात्र ही दिखायो है। याको उदाहरण ऐसो है कि कशायो भैषज्यं कहिये क्वाथ जो है औषधि है। इहां परिपूर्ण प्राप्त भयो है रस जा विषैं ऐसो कषाय जो है सो भैषज है अर प्राथमिक कषाय अल्प रसवान जो है सो नहीं है क्योंकि वाकै अनभिव्यक्त इस पणौं है यातैं अर याको विषय विपच्यमान अर पक्व है अर पक्व जो है सो कदाचित् पच्यमान है कि वो पकतो हुओ है, अर कदाचित् उपरत पाक है कि पक्व है। प्रश्न, या असत् है क्योंकि तिनकै विरोध है यातैं सो ऐसैं हैं कि पच्यमान तो वर्त्तमान विषय है, अर पक्व अतीत विषय है तिन दोऊनिको एककै विषैं अवस्थित रहनो जो है सो विरोधी है ? उत्तर, यो दोष नहीं है। क्योंकि इहां ऐसो उत्तर उपजै है कि पचनकी आदिमें अविभाग समय जो है ताकै विषैं कोऊ असं पक्यो हुवो है कि नहीं है जो पक्व नहीं है तौ द्वितियादि समयकै विषैं भी नहीं पकवातैं पाकको अभाव होय है तातैं पाकका होवाते वाकी अपेक्षा करि पच्यमान है सो पक्व है अर जो अपेक्षा अंगीकार नहीं करिये तौ सम कै त्रिविधिको अप्रसंग होवै क्योंकि वै ही ओदन पच्यमान जो है सो कथंचित् पक्व है कथंचित् पच्यमान है। ऐसैं कहिये है क्योंकि पाक करनवारेका अभिप्राय की अतिवृत्ति है। यातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि कोऊ पाकको कर्त्ता जो है ताकै तो भले प्रकार विशद पक्या हुआ ओदनकै विषैं पक्वको अभिप्राय है सो उपरित पाक है ऐसैं कहिये है अर कोउ पाकको कर्त्ता जो है ताकै किंचित् पक्याकै विषैं ही कृतार्थ पणौं है यातैं पच्यमान भी पक्व कहिये हैं। ऐसैं क्रियमाण अर कृत तथा भुज्यमान अर भुक्त तथा वध्यमान अर वद्ध तथा सिद्ध्यत् अर सिद्ध आदि जे हैं ते जोड़ने योग्य है, तथा याको उदाहरण प्रस्थ ऐसैं हौय है कि याकै विषैं तिष्ठै है यातैं प्रस्थ है सो जा समयमें प्रमाण करिये ता समयमें है। अतीत अनागत ध्यान जो है ताका मानको अभाव है यातैं, तथा उदाहरण कुम्भकारका अभावको ऐसैं है कि शिवकादि पर्यायका करण समयमें

तो वा कुंभका अभावतैं कुंभकार नामको अभाव है यातैं और कुम्भ पर्यायका समयमें कुम्भकार अपना अवयवनिका प्रचारतैं ही निवृत्ति करै है कि कुम्भनैं करैं है यातैं भी कुम्भकारका नामको अभाव है तथा उदाहरण ऐसैं है कि तिष्ठता पुरुष प्रति प्रश्न करै है या समय कहांसे आवत हो, ऐसैं पूछतां संतां कहै है कि कहांतै भी नहीं आयो क्योंकि या समय यो ऐसैं मानैं है कि या काल गमन क्रिया परिणामको अभाव है यातैं, तथा कोऊनै प्रश्न कियो कि तुम कहां वसौ हौ तहां यो कहै है कि याही आकाश प्रदेशतैं अवगाढ़ रूप करनेको कूं हम समर्थ हैं अथवा आत्म परिणामनैं ही अवगाढ़ रूप करने कूं हम समर्थ हैं क्योंकि याको वांही वास है यातैं, अथवा काक कृष्ण है ऐसौ कहनौ भी याकौ विषय नहीं है। क्योंकि दोऊनिकै ही निज स्वरूपात्मकपणौं है यातैं कृष्ण तो कृष्णात्मक है काकात्मक नहीं है अर जो कृष्ण भी काकात्मक होय तो भ्रमरादिकनिकैं भी काकपणांको प्रसंग आवै, अर काक काकात्मक हैं कृष्णात्मक नहीं है अर जो काक भी कृष्णात्मक है तो शुक्ल काकको अभाव होय है क्योंकि काकनिकै पंचवर्णात्मक पणौं है यातैं, अथवा पित्तकै तथा अस्थिकै तथा रुधिर आदिकै पीला पणां शुक्लपणां रक्तपणां आदि वर्णवान पणौं है यातैं इनतैं भिन्नकरि काकको अभाव है यातैं क्योंकि एककै समान अधिकरण पणौं नहीं होय है, क्योंकि द्रव्यकै पर्यायनितैं अनन्यपणौं है यातैं अर पर्याय ही भिन्न भिन्न शक्तिमान है, कछु द्रव्य नाम नहीं है। ऐसैं या ऋजुसूत्र नयकै अभिप्रायतैं काक कृष्ण नहीं है। प्रश्न, कृष्ण गुणका प्रधानपणांतैं काक कृष्ण है? उत्तर,सो नहीं है क्योंकि ऐसैं मानैं अस्थि रक्तादिकनिकै विषैं कृष्णगुणको अतिप्रसङ्ग आवै है यातैं अथवा सहतकै विषैं कषाय मधुर पणांनैं होतां संता विरोध है यातैं सो ऐसैं हैं कि कोऊ काकका अर कृष्णका विशेषको जानने वारो जो है, तातैं द्वीपान्तर निवासी अर नहीं प्राप्त भयो है कृष्णको अर काकको विशेष जाकै ता प्रति कृष्ण काक है ऐसैं कहता संता संशय उत्पन्न होय है कि यो काक कृष्णपणांतैं गुणका प्रधान

पणांतैं कहै है कि द्रव्यकाही तैंसा परिणाम भया है यातैं कहै है अथवा यातैं ही पलाल आदिका दाहको अभाव है, क्योंकि पलालके अर दाहके भिन्न भिन्न कालको परिग्रहण है यातैं क्योकि या नयको अविभाग रूप वर्त्तमान समय है सो विषय है यातैं अर अग्निको सम्बन्धन दीपन, ज्वलन, दहन ये जे हैं ते असंख्यात समयके अन्तरालवान हैं। यातैं याके दहनको अभाव है। अर ओर सुनूं कि जा समय दाह है ता समय पलाल नहीं है क्योंकि दाह समय भस्म पणांकी रचना है यातैं, अर जा समय पलाल है ता समय दाह नहीं है। प्रश्न, जा पलाल है सो ही दहै है, उत्तर, सो नहीं है क्योंकि अवशेष सहित है यातैं। प्रश्न, समुदायकूं कहनवारे शब्दनिकी अवयवनिके विषें भी वृत्तिको दर्शन है यातैं दोष नहीं है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि एक देशके दाह रहित वैसाका वैसा अवस्थितपणां है यातैं एक देशके दाहका अभावके उक्तपणां है, यातैं। प्रश्न, दाहका असम्भवतैं पलालदाह कहनां सम्भवै है? उत्तर, सों नहीं है क्योंकि वचन विरोध है यातैं अर वैसाका वैसा अवस्थित पणां है यातैं तिनमें प्रथम ही वचन विरोध तो ऐसो है कि जो निरवशेष पलालका दाहको असंभव है यातैं एक देश दाहतैं पलालको दाह जो है सो अदाह नहीं है, ऐसैं तू कहै है तौ तिहारा वचनके निरविशेष पर पक्ष दूषण पणांका अभावतैं पर पक्षको एक देश जो है ताके दूपक पणौं है यातैं एक देश रूप दूपक पणांतैं यो वचन समस्त भी दूपक ही है ऐसैं या वचनके साधक पणांकी सामर्थ्यको अभाव है, अर वैसाको वैसौ स्थित रहणौ भी एक समयमें दाहको अभाव है। ऐसा उक्त पणांतैं अवयवनिके अनेक पणानें होतां संतां जो अवयव दाहतैं सर्वत्र दाह है तो अवयवान्तरका अदाहतैं सर्व दाहको अभाव है। अर जो अवयवका दाहतैं सर्वत्र दाह है तो अवयवान्तरका अदाहतैं अदाह काहेतैं नहीं है, यातैं दाह नहीं है। ऐसैं पान भोजनादि व्यवहारको अभाव है अथवा या नयकी अपेक्षा करि शुक्ल वस्त्र आदि द्रव्य कृष्ण नहीं होय है क्योंकि दोउनिके भिन्न कालमें अवस्थित पणौं है

यातैं अर प्रत्युत्पन्न विषयनैं होतां संता भी निवृत्त पर्यायका अनभिसम्बन्धतैं शुक्ल कृष्ण नहीं है। प्रश्न, ऐसैं होत संतैं सर्व व्यवहारका लोप होय हैं? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि इहां तो विषय मात्रको प्रदर्शन है यातैं। अर पूर्व नयके वक्ता पणातैं व्यवहारकी सिद्धि है ॥ ७ ॥ वार्तिक—आयत्यर्थमाह्वयति प्रत्यायतीति शब्दः ॥ ८ ॥ अर्थ—उच्चारण कियो शब्द अर्थनैं कहै, बुलावैं, प्रतीति करावै सो शब्दनय है। टीकार्थ—उच्चारण कियो शब्द जो है सो कृत संगत पुरुषकै अपना अभिधेयके विषैं प्रतीतिनै धारण करै है सो शब्दनय है ऐसैं कहिये है ॥ ८ ॥ वार्तिक—स च लिंगसंख्यासाधनादिकाव्यभिचारनिवृत्तिपरः ॥ ९ ॥ अर्थ—सो लिंग संख्या साधन आदिका व्यभिचारकी निवृत्तिमें तत्पर है। टीकार्थ—लिंग तो स्त्री लिंग, पुरुष लिंग, नपुंसक लिंग, है अर संख्या एक वचन पणौं, द्विवचन पणौं, बहु वचन पणौं है अर साधन अस्मद युष्मद आदि शब्द हैं, इत्यादिकनिको व्यभिचार नहीं होनो जो है सो न्याय है अर वा न्यायकी निवृत्तिमें तत्पर यो नय है सो ऐसैं है कि तिनमें प्रथम तो लिंग व्यभिचार है कि स्त्रीलिंगकै विषैं पुरुष लिंगको कहनौ कि तारका है सो स्वाति है, अर पुरुष लिंगके विषैं स्त्री लिंग कहनौ कि अवगम है सो विद्या है, अर स्त्री लिंगके विषैं नपुंसक लिंग कहनौ कि वाणी है सो आतोद्य है, अर नपुंसक लिंगके विषैं स्त्री लिंग कहनौ कि आयुध है सो शक्ति है। अर पुरुष लिंगकै विषैं नपुंसक लिंग कहनौ कि पट है सो वस्त्र है। अर नपुंसक लिंगके विषैं पुरुष लिंग कहनौ कि द्रव्य है सो परशु है। बहुरि संख्या व्यभिचार ऐसैं है कि एक वचनकै विषैं द्विवचन कहनौ कि नक्षत्र है सो पुनर्वसु है। अर एक वचनकै विषैं बहुवचन कहनौ कि नक्षत्र है सो शतभिषज है, अर द्विवचनकै विषैं एक वचन कहनौ कि गायनिको देनेवारो सो ग्राम हैं, अर द्विवचनकै विषैं बहु वचन कहनौ कि पुनर्वसु है ते पंच तारका है, अर बहुवचनकै विषैं एक वचन कहनौं कि आम्र है ते वन है, अर बहु वचनकै विषैं द्विवचन कहनौं कि देव अर मनुष्य है ते दोय

राशि है। वहुरि साधन व्यभिचार ऐसें हैं कि एहि मनोरथेन यास्यति नहि यास्यसि यातस्ते पितेति। अर्थ— एहि कहिये तू आहू मन्ये कहिये में मानूं हूं रथेन यास्यसि कहिये रथ करि गमन करूंगो सो नहीं जायगो तिहारो पिता गयो। इहां मन्यसे रथेन यास्यामि ऐसा चाहिये था ताकी ऐवज मन्ये रथेन यास्यसि ऐसा कह्या सो मन्यसे ऐसा मध्यम पुरुपका मन्ये ऐसा उत्तम पुरुष था ताकी एवज यास्यसि ऐसा मध्यम पुरुप किया, इत्यादि है सो साधन व्यभिचार है। वहुरि आदि शब्द करि कालादि व्यभिचार ग्रहण करिये कि विश्व दृश्वास्य पुत्रो भविता कहिये समस्तकूं देखत भयो ऐसो याके पुत्र होनहार है। इहां भावी कार्यमें होत भयो ऐसें भूत रूप कह्यो है ऐसें काल व्यभिचार है, अर संतिष्ठते की एवज प्रतिष्ठते कहे तथा विरमतिकी एवज उपरमति कहे सो उपग्रह कहिये उपसर्ग व्यभिचार है। इहां शाब्दी कहे है कि इत्यादिक व्यभिचार युक्त है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, अन्य अर्थको अन्य अर्थ करि सम्बन्ध होनेको अभाव है यातें अर जो होय तो घट पट होउ पट प्रसाद होउ तातें यथालिंग यथा संख्या साधन आदि कहनौं न्याय है। प्रश्न, ऐसें शब्द नयके मानेतें लोकमें अर समयमें विरोध होय है ? उत्तर, ऐसें हैं तो भला ही विरोध हो इहां तौ हमनें तत्व निर्णय करिये है। अर सुहृद पुरुपनिके विषें उपचार है कि ज्ञानवाननिनें कहनौ उपचार है। वार्त्तिक—नानार्थ समभिरोहणात्समभिरूढः ॥ १० ॥ अर्थ—इहां नानार्थ समभिरोहणात् पद पंचम्यन्त है सो कौमुदीका मततें ल्यप प्रत्ययका लोपमें पंचमी है तातें नाना अर्थनिनें छोड़ि करि ऐसा अर्थ होय है। तातें नाना अर्थनिनें छाड़ि करि एक अर्थनें ग्रहण करे है सो समभिरूढ़नय है। टीकार्थ—जातें नाना अर्थनिनें उलंघनि करि एक अर्थनें सन्मुख पणां करि रूढ़ होय है कि अर्थनें ग्रहण करनें वारो होय है तातें समभिरूढ़ है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, वस्त्वन्तरका असंक्रमण करि वा एकमें ही तिष्ठवापणातें। प्रश्न, कैसें ? उत्तर, अवितर्क्य ध्यानके समान सो जैसें तीसरो शुक्ल ध्यान सूक्ष्म क्रिया रूप

अवितर्क अर अवीचार ऐसो ध्यान है सो अर्थका तथा व्यंजनका तथा योगनिका पलटनका अभावतैं सूक्ष्म काय योगमें तिष्ठवापणातैं है तथा गौ यो शब्द वाक् आदि अनेक अर्थनिमें प्रवर्त्तै है तथापि पशु विशेष गौ जो है ताकैं विषैं रूढ़ है। ऐसैं औरनिकै विषैं भी रूढ़ि शब्द है सो या नयको विषय है। अथवा अर्थकी प्राप्तिकै अर्थ शब्दको प्रयोग है। तहां एक अर्थको एक शब्द करि गतपणौं है यातैं पर्याय शब्दको प्रयोग अनर्थक होय। अर जो शब्द भेद है सो जैसैं इन्दन क्रिया वान पणातैं इन्द्र है और समर्थ पणातैं शक्र है, अर पुर नगर आदिका भेदन करवातैं पुरन्दर है। ऐसैं ही सर्वत्र जाननैं अथवा जो जहां अधिरूढ़ है सो तहां प्राप्त होय करि सन्मुख पणांकरि प्राप्त होवातैं समभिरूढ़ है। सो जैसैं कोऊ प्रश्न करै कि तुम कहां तिष्ठो हो तदि वो कहै कि निज स्वरूपमें तिष्ठै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, वस्त्वन्तरमें प्रवृत्तिका अभावतैं। अर जो अन्यकी अन्यमें प्रवृत्ति होय तो ज्ञानादिक आत्मगुण जे हैं तिनकी तथा रूपादिक पुद्गल जे है तिनकी आकाशमें प्रवृत्ति होय ॥१०॥ वार्तिक—*येनात्मना भूतस्तेनैवाध्यवसायतीत्येवंभूतः॥ ११॥* अर्थ—जा समय जा स्वरूप करि भयो ता समय ता स्वरूप करि ही प्रतीति करावै है यातैं एवम्भूत नय है। टीकार्थ-जा स्वरूप करि तथा जा नाम करि शब्द उत्पन्न भयो है ताकरि ही जा स्वरूप करि तथा जा नाम करि शब्द उत्पन्न भयो है ताकरि ही निश्चय करावै सो एवम्भूत नय है। सो जैसैं इन्द्र शब्द परमेश्वरपणांको कहन वारो है सो परिणाम जामें जा समय प्रवर्त्तै है तामें ता समय ही युक्त है। नाम स्थापना द्रव्य जे हैं तिनकै विषैं युक्त नहीं है, क्योंकि नामादिकनिमें परमेश्वर रूप परिणामको अभाव है यातैं ऐसैं ही और भी शब्दनिकै विषैं अपना अभिधेय रूप क्रिया को परणतिका क्षणमें ही वा नाम की युक्त है अर क्षणमें नहीं युक्त है, अथवा स्वरूप करि भयो अर्थ ता स्वरूप करि ही निश्चय करावै कि जैसैं गमन करती गौ है कि जा समय गमन करै है ता ही समय गौ है तिष्ठती तथा सोवती गौ नहीं है, क्योंकि पूर्वकालमें तथा उत्तर

कालमें गमन करनरूप अर्थका अभावतैं दंडीकै समान है ऐसैं ही औरनिकैं विषैं भी जानना। अथवा जा स्वरूपकरि जा ज्ञान करि भयो कि परिणम्यो ता स्वरूप करि ही निश्चय करावै सो एवम्भूत है सो जैसैं इन्द्रका तथा अग्निका ज्ञान करि परिणति आत्मा ही इन्द्र है, अग्नि है ऐसैं एवम्भूत अर्थका प्रतीति उत्पन्न करावतैं शब्द एवम्भूत है। इहां वा कार्यतैं वा शब्दपणां-की प्रसिद्धि है यातैं, प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—दाहकत्वाद्यतिप्रसंग इति चेत्तदव्यतिरेका-दप्रसंगः इति ॥ अर्थ—दाहकपणांतैं अति प्रसङ्ग है ऐसैं है तो अव्यतिरेकतैं अप्रसङ्ग है। टीकार्थ—अग्नि आदि नाम जो आत्माकै विषैं करिये है तो दाहक पणां आदि अति प्रसङ्ग हूजिये है ऐसैं कहिये है? उत्तर, वातैं अभिन्न है यातैं अति प्रसङ्ग नहीं होय है सो ऐसैं है कि वे नामादिक जा स्वरूप करि कहिये है ता स्वरूपतैं तिन नामादिकनिको अव्यतिरेक है। अर धर्मनिके प्रति नियत अर्थमें वृत्तिपणौं है यातैं तातैं नो आगम भावरूप अग्निकै विषैं वर्त्तमान दाहकपणौं है सो आगमभावरूप अग्निक विषैं प्रवर्त्तैं, ऐसैं नैगमादिक नय कह्या अर इनकै उत्तरोत्तर सूक्ष्म विषय पणौं है और पूर्व पूर्व हेतु पणातैं अनुक्रम है ऐसैं ये नय पूर्व पूर्व विरुद्ध महा विषमरूप हैं अर उत्तर उत्तर अनुकूल अल्प विषय रूप है, क्योंकि द्रव्यकी अनन्त शक्ति है यातैं शक्ति शक्ति प्रति भेदनैं प्राप्त भया नय बहु विकल्प-रूप उत्पन्न होय है। ये पूर्वोक्त गुण प्रधान पणांकरि परस्पर सापेक्ष हुआ संता सम्यग्दर्शनका कारण होय है क्योंकि पुरुषार्थ रूप क्रियाका साधन स्वरूप सामर्थ्यतैं तत्वादिकके समान यथा योग्य उपाय करि स्थापन किया पट आदि संज्ञानैं प्राप्त होय है। अर स्वतन्त्र हुआ संता तत्वा-दिकके समान असमर्थ होय है। प्रश्न, ऐसो दृष्टान्त विषम उपन्यास रूप है। प्रश्न, तत्वादिक निरपेक्ष भी कोऊ अर्थ मात्रनैं तो उत्पन्न करै है कि कोऊ प्रत्येक तंतु तो त्वकूत्राणमें समर्थ है। अर कोऊ एक वृक्षकी छालित उत्पन्न भयो तंतु वंधनमें समर्थ है अर ये नय निरपेक्ष हुआ

संता कछू भी सम्यग्दर्शन मात्रनैं नहीं प्रगट करे है ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि तिहारे कहनेका अभिप्रायको अनवबोध है यातैं परका कह्या अर्थ नैं नहीं जाणिकरि यो उपालम्भ करै है जो कह्यौ कि निरपेक्ष तन्तुआदिकनिकै विषैं पटादि कार्य नहीं है अर जो वानैं कार्य दिखायो सो पटादि कार्य नहीं है। प्रश्न, तो कहा है ? उत्तर, तन्तुआदि कार्य है अर तन्तुआदि कार्य भी निरपेक्ष तन्तुआदि अवयनिकैं विषैं नहीं है ऐसैं भी हमारी पक्ष सिद्धि ही है। प्रश्न, निरपेक्ष तन्तुकै अवयवनि के विषैं भी तन्तु आदि कार्य शक्तिकी अपेक्षा करि है ऐसैं कहिये है ? उत्तर, वुद्धि अभिधान रूप कि ज्ञान ऐसा नाम रूप निरपेक्ष नयकै विषैं भी कारणका वशतैं सम्यग्दर्शनका कारणपणां रूप विपरिणतिका सद्भावतैं शक्ति स्वरूप करि अस्तित्व है ऐसैं कहेतैं दृष्टान्त कह्यो हुतो ताका उपन्यासकै समपर्णौं ही है ॥ १२ ॥ १३ ॥

श्लोक—ज्ञानदर्शनयोस्तत्वं नयानां चैव लक्षणम् ।
ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥ १॥

अर्थ—या अध्यायके विषैं ज्ञानको तथा दर्शनको स्वरूप अर नयनिका लक्षण अर ज्ञानकै प्रमाणता निरूपण कियो ॥ १ ॥

इति श्रीमदकलंकदेव प्रणीते तत्वार्थ वार्त्तिके व्याख्यानालंकारे प्रथमेऽध्याये तदपरनाम राजवार्त्तिक सागरोद्धृत तत्व कौस्तुभे षष्ठ आह्निकं परिसमाप्तम् ।

। आन्हिकमैं मूल ग्रन्थ संख्या अर्थ ताकै मध्य सूत्र २५ हैं अर वात्तिक एकसौ वाणवै हैं। तिनमें नवम सूत्र परि चौतीस हैं, दशम सूत्रपर तेईस हैं। ग्यारमा सूत्र पर सात हैं। वारमा सूत्रपर सोला। तेरमा पर चौदा। चौदमापर चार। पनरमापर चौदा। सोलमापर

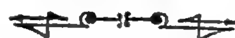
उगणीस। सतरा पर नव। अठारमा पर दोय। उगणीसमा पर दश। वीसमा पर पनरा। ईकवीसमा पर छै। वाईसमा पर पांच। तेईसमा पर दश। चौवीसमा पर दोय। पच्चीसमा पर दोय। छवीसमा पर च्यार। सत्ताईसमा पर चार। अट्ठाईसमा पर नही है। गुणतीसमा पर नव। तीसमा पर दश। इकतीसमा पर तीन वत्तीसमापर चार। तेतीसमा सूत्र पर वारा वार्त्तिक हैं। तिनकी देश भाषा मयी वचनिका रूप अर्थ पण्डित फतैलाल जी की सम्मतितैं श्रीमज्जिन वचन प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवालने कर्मका क्षय निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यौ है। तामैं ग्रन्थप्रमाण श्लोक संख्या ६२६० है।



श्रीमद्भट्टाकलंकदेव विरचित

तत्वार्थ राजवार्तिक

द्वितीय अध्याय।



टीकाकार—

स्वर्गीय पं० मन्नालालजी दूनीवाले

प्रकाशक—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, पोष्ट बक्स ६७४८ कलकत्ता



नमः सिद्धेभ्यः।

तत्वार्थ राजवार्तिक



भाषा वचनिका समेत ॥



द्वितीय अध्याय।

तहां ग्रंथकार इष्टदेवकी जयात्मक स्तुति करता संता मंगलाचरण करै है।

श्लोक—जीयाच्चिरमकलंकब्रह्मा लघुहव्वनृपतिवरतनयः ।
अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः प्रशस्तजनहृद्यः ॥१॥

अर्थ—नहीं है अष्टादश दोष विशेष रूप कलंक जाके अर प्रजाने बधावे सो ब्रह्मा कहिये। अर अकलंक ऐसो जो ब्रह्मा सो अकलंक ब्रह्मा कहिये अर्थात् ऋषभदेव अर याके ब्रह्म पणों तौ कर्म भूमिको जो प्रयोग ताका प्रदर्शकपणां करि जाणिवे योग्य है। अर्थात्-आदि ब्रह्मा है सो चिरकाल सर्वोत्कर्षपणां करि वर्तो। क्योंकि धर्मके अनादि निधनपणांनैं होतां संतां भी प्राप्त

भया अवसर्पिणी कालका प्रारंभके विषैं प्रथम रत्नत्रय स्वरूपका धारण पणौं करि तथा प्रवर्त्तक पणां करि असाधारण उपकार कर्तापणौं विशेष पण कह्यो है। यातैं ही चिरकाल जयवंतो रहो या पदकी समीचीन गति है। बहुरि वो अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, लघु हव्व नृपति वर तनय है याको अर्थ ऐसो है कि हव्व शब्द प्राकृत रूप है सो कोऊ नृपति विशेषको वाचक है सो तौ द्वितीय अर्थमें ग्रहण करने योग्य है। अर इहां तौ प्रकृति भूत पणांतैं कि प्राकृतमें हव्य शब्दनैं हव्व आदेश भयो है यातैं हव्व शब्दको ग्रहण है तातैं ही लघु हव्व नृपति वर तनयः ऐसो भयो है। अर याको अर्थ ऐसो है कि हव्व शब्दके भोजन वाचकता है। क्योंकि हुदानादनयोः या धातु करि उत्पन्न पणौं है यातैं तथा हव्य कव्ये दैव पैत्र्ये अन्ने ऐसा लिंगानुशासन है यातैं तातैं ही लघु कहिये सूक्ष्म है हव्य कहिये भोजन जाकै सो लघु हव्व कहिये क्योंकि अन्तिम भोग भूमिमें उत्पन्न भया कल्पवृक्षतैं है उत्पत्ति जाकी ऐसा भोजनका करवातैं भोजनमें लघु पणौं है। अर्थात्-जघन्य भोग भूमिमें वोर प्रमाण भोजन है यातैं लघु पणौं कह्यो है। इहां लघु शब्द है सो अपेक्षा सहित है यातैं कह्यो कि कौनतैं लघु है ऐसी आशंकाने होतां संतां कहिये है कि कर्म भूमिज मनुष्यनितैं लघु भोजन है सो लघु हव्व नृपति है अर्थात्-नाभि राजा है। ताको वर पुत्र ऋषभदेव है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः। याको अर्थ ऐसो है कि निखिल जे विद्वज्जन ते निखिल विद्वज्जना कहिये अथवा विद्वांस तौ देव है क्योंकि विवुध पर्यायका वाचक पणांतैं है। अर जन जे हैं ते मनुष्य हैं तिनकरि निरंतर नुत है कि प्रकर्षपणौं स्तुति रूप है विद्या कहिये केवल ज्ञान जाको अथवा विद्वान् कहिये वित् जो अवधिज्ञान सो है विद्यमान जाके सो विद्वान् सौधर्मेन्द्र है। अर जना कहिये भरतादि भक्त जन तिन करि नुत है कि आदर करि ग्रहण करी है विद्या कहिये हेयोपादेयरूप उपदेश जाको ऐसो है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, प्रशस्तजनहृद्यः।

याको अर्थ ऐसो है कि प्रशस्ता कहिये प्रशंसानैं प्राप्त भया कि सप्त प्रकार ऋद्धिनैं प्राप्त भया ऐसा वृषभसैन आदि गणेश है अर जना कहिये द्वादश सभा निवासी प्राणी है तिनका हृदय गत अर्थका प्रकाशपणा तैं हृद है कि मनोहर है। ऐसैं तौ ऋषभदेवकी जयात्मक स्तुति रूप अर्थ जाननूं। बहुरि दूसरो अर्थ यो है कि अकलंक नामक आचार्य जो ब्रह्मा है या अर्थमें ब्रह्मा शब्दको निरुक्ति ऐसी है कि वधायो है चरित्र जानैं अथवा वधायो है सूत्रार्थ जानैं ऐसो ब्रह्मा है। अर अकलंक ऐसो जो ब्रह्मा कहिये या पदकरि शास्त्र कर्त्ता अपना नामनैं प्रगट करे है सो चिरकाल जयवंतो रहो। याको अर्थ पूर्ववत् जानौं। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर—लघुहव्वनृपतिवरतनयः याको अर्थ ऐसो है कि हव्व नामा नृपति जो है सो हव्व नृपति कहिये। अर हव्व नृपतिको जो उत्तम पुत्र सो हव्व नृपति वर तनय कहिये अर लघु ऐसो जो हव्व नृपतिको उत्तम पुत्र सो लघु हव्व नृपति वर तनय कहिये। अर्थात् हव्व नृपतिको कनिष्ठ पुत्र है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, अनवरतनिखिलविद्वज्जननुतविद्यः याको अर्थ ऐसो है कि निखिल कहिये समस्त विद्वज्जन आगमदर्शी जे हैं तिनकरि निरंतर नुत है कि प्रस्तुत है स्याद्वाद विद्या जाकी ऐसो है। बहुरि अकलंक ब्रह्मा कैसोक है? उत्तर, प्रशस्तजनहृद्यः। याको अर्थ ऐसो है कि प्रशस्त जना कहिये सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त भव्य जे हैं तिनका मनको हरन वारो है। क्योंकि वाकै अपना वचनरूप अमृत करि मिथ्यादर्शनरूप संशयादिक हालाहलका दूरि करिवा पणांतैं ॥ १ ॥ अवैं प्रथम सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है। कि इहां कहैं हैं कि मोक्षमार्गकी व्याख्याका प्रसंग करि सम्यग्दर्शनादिक जे हैं ते उप[illegible] विषय होय हैं, अर तिनका लक्षण तथा उत्पत्ति कारण तथा विषयका नियम आदि प्रथम [illegible] विषैं व्याख्यान किये तहां तत्वार्थका श्रद्धाननैं सम्यग्दर्शन कह्यो। अर तत्वार्थ [illegible] तहां आदिमें कह्यो जो जीव ताको कहा श्रद्धान करने योग्य है

ऐसा प्रश्न होत संतैं कहे हैं कि जाका अवधारणतैं तथा ज्ञानतैं तथा उपासनानैं जो उत्पन्न होय सो श्रद्धान करने योग्य है। यातैं तत्व कहिये है सो तत्व आत्माको स्वभाव है यातैं श्रद्धान करने योग्य है। प्रश्न, ऐसैं है तो आत्माको तत्व कहा है सो कहो? ऐसैं कहतां संतां उत्तर रूप सूत्र कहे हैं तथा उत्थानिका लिखिये हैं कि अथवा प्रमाण नयके अनन्तर ही दिखाये हैं ते प्रमेयके जनावनें रूप हैं कि प्रमेय इनतैं जाने जांय हैं। अर प्रमेय जीवादिक पदार्थ हैं ते अवैं दिखायवे योग्य है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो या प्रथम कहा हुवा जीवको तत्व कहा है ऐसा प्रश्न होत संतैं सूत्रकार कहे हैं। सूत्रम्—

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥१॥

अर्थ—औपशमिक अर क्षायिक ये दोय भाव हैं तथा मिश्र भी भाव है, ये तीन भाव जीवके निज तत्व हैं। बहुरि औदयिक अर पारिणामिक भाव हैं ते भी निज तत्व हैं ॥१॥ प्रश्न, औपशमिकादिकनिके लक्षण भी कहौ। उत्तररूप वार्तिक—कर्म्मणोनुद्भूतस्ववीर्यवृत्तितोपशमोधः प्रापितपंकवत् ॥१॥ अर्थ—कर्म कै नहीं प्रगट भई जो अपना वीर्यकी प्रवृत्तिता तीं स्वरूप आत्माकी विशुद्धि जो है सो उपशम है सो जैसैं नीचे बैठि गयो है कादो जाको ऐसा जलके समान उज्वलता है। जैसैं कतकादिक द्रव्यानिका मिलापतैं अधोभाग मैं प्राप्त भयो है मल द्रव्य जाको ऐसो कालिमा सहित जल जो है ताकै वा मल कृत कालिमाको जो उदय ताका अभावतैं उज्वलता पाइये हैं। तैसैं सम्यग्दर्शन आदि कारणका वशतैं कर्मके नहीं प्रगट भई जो अपना वीर्यकी प्रवृत्तिता तीं रूप आत्माकी विशुद्धि जो है सो उपशम है। अर्थात् आत्माका स्वभावनें मलिन करनवारे कर्म सत्तामें विद्यमान हैं। तथापि सम्यग्दर्शनादिककी निकटतातैं शक्तिका नहीं प्रगट होना जो है सो उपशम है ॥१॥ वार्तिक—क्षयो निवृत्तिरात्यंतिकी ॥२॥ अर्थ—प्रथम तो अधोभागमें प्राप्त भयो है पंक जाको बहुरि दूसरा उज्वल पात्रमें प्राप्त भयो

ऐसो जो जल ताके अत्यंत उज्वलता जो है सो क्षय है तैसैं आत्माकै भी कर्मकी अत्यंत निवृत्ति—नैं होतां संतां अत्यंत विशुद्धि जो है सो क्षय है। इहां कारणको कार्यके विषैं उपचार करि कह्यो है क्योंकि विशुद्धताको कारण कर्मको क्षय है ताकूं ही विशुद्धि कही है सो योग्य ही है ॥२॥ वार्तिक—उभयात्मको मिश्रः क्षीणाक्षीणमदशक्तिकोद्रववत् ॥३॥ अर्थ—जैसैं प्रक्षालन विशेषतैं कुछ क्षीण भई अर कुछ नहीं क्षीण भई है मद शक्ति जिनकी ऐसे जे कोद्रव तिनकी दोय भेद रूप प्रवृत्ति है। तैसैं यथोक्त सम्यग्दर्शनादिक जे कर्म क्षयका कारण तिननैं निकट होतां संता कर्मका एकोदेश क्षय होवातैं अर एकोदेश शक्तिका उपशम होवातैं आत्माके जो भाव होय सो उभयात्मक मिश्रभाव हैं। ऐसैं उपदेश करिये है ॥३॥ वार्तिक—द्रव्यादिनिमित्तवशात्कर्मणः फलप्राप्तिरुदयः ॥४॥ अर्थ-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, रूप निमित्तनैं प्रतीति करि पक्या जो कर्म ताका फलकी जो प्राप्ति सो उदय नामनैं पावै है ॥४॥ वार्तिक-द्रव्यात्मलाभमात्रहेतुकः परिणामः ॥५॥ अर्थ—द्रव्यका स्वरूपको लाभ मात्र ही जाको हेतु है अर और हेतु नहीं है सो परिणाम है ऐसैं कहिये है। भावार्थ-अपना स्वरूपको जनावनेवारो जो भाव है सो परिणाम हैं ॥५॥ वार्तिक--तत्प्रयोजनत्वाद्वृत्तिवचनम् ॥६॥ अर्थ—ते उपशमादिक हैं प्रयोजन जिनके ऐसी वृति करिये हैं अर्थात् कर्म्मनिको उपशम है प्रयोजन जाको सो औपशमिक भाव है अरकर्मनिको क्षय है प्रयोजन जाको सो क्षायिक भाव है। अर कर्मनिको क्षयोपशम है प्रयोजन जाको सो क्षयोपशमिक भाव है सो ही मिश्रभाव है। अर कर्मनिको उदय है प्रयोजन जाको सो औदयिक भाव है। अर पारिणाम है प्रयोजन जाको सो परिणामिक भाव है। ऐसैं ए पांच भाव आत्माका स्वतत्व है कि निज तत्व है अर्थात् असाधारण भाव है ॥६॥ अबै इनि भावनिका अनुक्रम जनावनैं निमित्त कहे हैं। वार्तिक—व्याप्तेरौदयिकपारिणामिकग्रहणमादावितिचेन्न भव्यजोवधर्मविशेषख्यापनार्थत्वादादावौपशमिकादिभाववचनम् ॥७॥ अर्थ—प्रश्न, सर्व जीवनिमैं

साधारणपणाकी व्याप्तितें औदयिक परिणामिक भावनिको ग्रहण आदिमें न्याय्य है ? उत्तर, ऐसें नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, भव्य जीवनिका धर्म विशेष जनावनेंका प्रयोजनपणांतें क्योंकि निश्चय करि भव्यकूं मोक्षका प्रतिपादनके अर्थ ही यो प्रयास है, यातें आत्माका धर्म विशेष औपशामिकादि भाव जे हैं ते आदिमें कहिये है ॥७॥ वार्त्तिक—तत्र चादावौपशमिकवचनं तदादित्वात्सम्यग्दर्शनस्य ॥८॥ अर्थ—वहुरि तिनभावनिमें सम्यग्दर्शनकी आदिमैं औपशमिकभाव है। ता पीछें चायिकभाव है। ता पीछें चायोपशमिक भाव है। यातें आदिमें औपशमिक भाव ग्रहण करिये है ॥८॥ वार्त्तिक—अल्पात्वाच्च ॥९॥ अर्थ—औपशमिक भावनिकें अल्पपणौं है यातें भी आदिमें ही योग्य है। अथवा चायिकतें अर चायोपशमिकतें औपशमिक भाव अल्प है सो ऐसें हैं कि उपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त्त है सो अन्तर-मुहूर्त्त असंख्यात समय प्रमाण है। तहां समय २ निरन्तर संचय रूप किया उपशम सम्यग्दृष्टी अन्तरमुहूर्त्तकी समाप्ति पर्यन्त पल्योपम असंख्यात भाग प्रमाण है यातें सर्वतें अल्प है। भावार्थ-उपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त्त प्रमाण कह्यो ताका समय असंख्यात कह्या ते समय पल्यका जे असंख्यात समय तिन प्रमाण है अर वाकी कालका समय २ प्रति भिन्न २ सम्यग्दृष्टी तिष्ठे है। तातैं ते हू तावत्प्रमाण है। तातें अल्प है ॥९॥ वार्तिक—ततो विशुद्धिप्रकर्षयुक्तत्वात् चायिकः ॥१०॥ अर्थ-निश्चय करि औपशमिकतें चायिक भाव जो है सो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति इनका समस्त पणांकरि चय होवातें अत्यन्त शुद्ध युक्त है। तातैं औपशमिकतें परै चायिक वचन है ॥१०॥ वार्तिक-वहुत्वाच्च ॥११॥ अर्थ-औपशमिक सम्यग्दृष्टीनितें चायिक सम्यग्दृष्टी वहुत हैं। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, गुणाकार विशेषतें प्रश्न, कौनसा गुणाकार है ? उत्तर, आवलीको असंख्यातमो भाग जो है सो भी असंख्यात समय प्रमाण है। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, आवलीको असंख्यातको रासिका असंख्यात ही भेद है। तातैं आवलीका असंख्यात भाग करि गुण्या उपशम

सम्यग्दृष्टी क्षायिक सम्यग्दृष्टिकी संख्यानै प्राप्त होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, संचय कालका महत्पणांतैं इहां क्षायिकसम्यग्दृष्टीको तेतीस सागरोपम किंचित् अधिक काल है। ताका प्रथम समयतैं आरम्भ करि समय समयके विषैं संचय किया वाका कालकी परिसमाप्त पर्यन्त बहुत होत हैं भावार्थ—क्षायिक सम्यक्त्वको काल आठ वर्ष घाटि दोय कोटि पूर्व अधिक तेतीस सागरको है ताकै समय प्रति भिन्न भिन्न तिष्ठते क्षायिक सम्यग्दृष्टी तावत् प्रमाण होय है। यातैं उपशम सम्यग्दृष्टीतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी बहुत हैं ॥११॥ वार्त्तिक—तदसंख्येयगुणत्वात्तदनन्तरं मिश्रवचनम् ॥१२॥ टीकार्थ—क्षायिकतैं असंख्यात गुणौं क्षायोपशमिक है सो द्रव्यतैं हैं। भावतैं नहीं है अर निश्चय करि भावतैं विशुद्धताकी प्रकर्षताका योगतैं क्षायोपशमिकतैं क्षायिक अनन्तगुणौं है। तातैं द्रव्यतैं क्षायिकतैं क्षायोपशमिक असंख्यातगुणौं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, गुणकार विशेषतैं है प्रश्न, वो गुणकार कौनसो है ? उत्तर, आवलीका असंख्यात भाग प्रमाण है। प्रश्न, काहेतैं है ? उत्तर, संचयकालका महत् पणातैं है इहां क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टी कै छ्यासठि सागर प्रमाण पूर्व पूर्णकाल है। ताका प्रथम समयतैं आरम्भ करि समय समयके विषैं संचय किया क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टी वा कालकी समाप्ति पर्यन्त बहुत होय है ॥१२॥ वार्त्तिक- तदनन्तगुणत्वादन्तेद्वयवचनम् ॥१३॥ अर्थ—तिन सबनिके विषैं ही अनन्त गुण औदयिक अर पारिणामिक भाव हैं। तातैं अन्तके विषैं तिनको वचन कियो है ॥१३॥ वार्तिक—तैरेव चात्मनः समधिमात् ॥१४॥ अर्थ—अतीन्द्रियपणातैं आत्माको जाननौ मनुष्य तिर्यंच योनि आदि तौ औदयिक भावनिकरि तथा चैतन्य जीवत्व आदि पारिणामिक भावनिकरि होय है यातैं भी दोऊनिको वचन अन्तमैं ही योग्य है ॥१४॥ वार्तिक—सर्वजीवतुल्यत्वाच्च ॥१५॥ अर्थ--अथवा सर्व जीवनिकै औदयिक अर पारिणामिक भाव तुल्य हैं तातैं भी तिनको अन्तके विषैं वचन कहनौ न्याय है ॥१५॥ इहां प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—तत्वमिति बहुवचनप्रसङ्ग इति चेन्न भावस्यैकत्वात्॥१६॥

अर्थ—प्रश्न, औदयिकादि पंच भावनिका समान अधिकरण पणातैं तत्वके बहुवचनकी प्राप्ति होय है? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, भावके एक पणातैं तत्व ऐसैं कह्यौ है, क्योंकि यो एक भाव है ॥१६॥ वार्त्तिक--फलभेदान्नानात्वमिति चेन्न स्वात्मभावभेदस्थाविवक्षितत्वाद्गावोधनमिति यथा॥१७॥ अर्थ—प्रश्न, इनि औपशमिकादि भावनिकै पांच पणौं है यातैं फल भेदतैं भावनि कै नाना पणूं है। उत्तर-ऐसैं, नहीं है। प्रश्न-कह्या कारण? उत्तर, अपने निज भावनिके भेदनिको कहनेकी इच्छा नहीं है यातैं बहुरि याको दृष्टान्त कहै है कि जैसैं गावो धनं कहिये गऊ जे हैं ते धन हैं। भावार्थ--गावः धनं इहां गावः शब्द बहुवचनांत होत संतैं भी धनं ऐसैं एक वचन कहतैं भी समानाधिकरण पणौं होय है क्योंकि गऊ प्रत्येक प्रत्येक धन है। तथापि गो गति भेदनकी अविवक्षाकरि गावो धनं ऐसा होय है। तैसैं ही औपशमिकादयः भावाः तत्वं इहां औपशमिकादिकनिकै बहुवचनांतपणौं होत संतैं भी तत्व ऐसा एक वचन कहनेतैं भी समानाधिकरणपणौं होय है। क्योंकि औपशमिकादिक प्रत्येक प्रत्येक तत्व हैं। तथापि औपशमिकादि गत भेदनकी अविवक्षाकरि तत्वं ऐसो एक वचन कह्यो है ऐसे जानना ॥१७॥ वार्त्तिक-प्रत्येकमभिसम्बन्धाच्च ॥१८॥ अर्थ--अथवा भावनिकै तत्व शब्दका अभिसंबंध करवातैं एक पणौं उत्पन्न होय है सो ऐसे औपशमिक भाव निज तत्व है। क्षायिक भाव निज तत्व है। मिश्र भाव निज तत्व है, औदयिक भाव निज तत्व है, पारिणामिक भाव निज तत्व है। ऐसैं पांच भाव निज तत्व हैं ॥१८॥ वार्तिक—द्वंद्वनिर्देशो युक्त इति चेन्नोभयधर्म्मव्यतिरेकेणान्यभावप्रसंगात् ॥१९॥ अर्थ—प्रश्न, तत्व शब्दको औपशमकादिक शब्दनिकै प्रत्येक संबंध करो हो तो इहां द्वन्द्व समासको निर्देश करवो योग्य है, तहां यो भी अर्थ होय है अर दोय च शब्द नहीं कर्तव्य होय है? उत्तर, तुमनैं कह्यौ तैसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, उभय धर्म विना और भावकी प्राप्ति होवाको प्रसंग आवै है यातैं। भावार्थ—ऐसैं द्वन्द्व समास करवातैं उपशम अर क्षायिक दोऊ भावनिका

मिलाप रूप मिश्र भाव है तातैं भिन्न और मिश्र भावकी प्रतीत होवै तातैं द्वन्द्व समास करना योग्य नहीं है। अर च शब्दके होतैं पूर्वोक्त दोऊ भावनिका आकर्षणको अर्थ युक्त होय है ॥१६॥ वार्तिक—क्षायोपशमिक ग्रहणमिति चेन्न गौरवात् ॥२०॥ अर्थ- ऐसैं है तो अन्य भावकी निवृत्ति के अर्थ मिश्र शब्दकी एवज क्षायोपशमिक शब्दको ग्रहण करवो ही योग्य है। उत्तर, तुमने कह्यौ तैसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, ऐसैं करनेतैं सूत्रमें गौरव होय है यातैं ॥२०॥ वार्तिक—मध्ये मिश्रवचनं क्रियते पूर्वोत्तरापेक्षार्थम् ॥२१॥ अर्थ—सूत्रके मध्यमें मिश्र वचन करिये है सो पूर्व उत्तर भावनिके ग्रहण करनेकी अपेक्षाके अर्थि हैं। प्रश्न, दोऊ भावनिकी अपेक्षाको कहा प्रयोजन है ? उत्तर, भव्यनिकैं औपशमिक अर क्षायिक सम्यक्त्व चारित्र भी भाव है। अर औदयिक परिणामिक ज्ञान दर्शन, चारित्र रूप भी भाव है। भावार्थ—भव्यनके औपशमिक सम्यम्यक्त्व अर औपशमिक चारित्र तथा क्षायिक सम्यम्यत्व अर क्षायिक चरित्र तथा क्षायोपशमिक सम्यम्यक्त्व अर क्षायोपशमिक चारित्र तथा औदयिक परिणामिक भी भाव है। अर भव्यनिके भी औदयिक परिणामिक तथा क्षायोपशमिक भी भाव है। तहां अभव्यनिके तथा भव्य मिथ्यादृष्टीनिकै चारित्र विना ज्ञान दर्शनके विकल्प हैं ते क्षायोपशमिक हैं। प्रश्न, सम्यक्दर्शन विना क्षायोपशमिक दर्शन ज्ञान कैसैं संभवै ? उत्तर, घुणाक्षरन्यायकरि स्वयमेव कर्मकी चालतैं ज्ञान दर्शनके विकल्प क्षयोपशमरूप होय है ते ज्ञान दर्शनके विकल्प है। अर ये सम्यक्रूप ज्ञान दर्शनके विकल्प रूप नहीं है। प्रश्न, ऐसे हैं तो सूत्रमें छैः भेद कहे चाहिये ? उत्तर, नहीं कहे चाहिये क्योंकि क्षायोपशम दोय प्रकार है कि एक सम्यक् क्षयोपशम है दूसरो असम्यक्क्षायोपशम है यातैं ॥२१॥ वार्तिक--जीवस्येति वचनमन्यद्रव्यनिवृत्त्यर्थम् ॥२२॥ अर्थ,--सूत्रमें जीवस्य ऐसो वचनहै सो यो स्वतत्त्व-जीवको है अन्यद्रव्यको नहीं है ऐसैं जनावने निमित्त है ॥२२॥ वार्त्तिक--स्वभावपरित्यागापरित्याग-योः शून्यता निर्मोक्षप्रसंग इति चेन्नादेशवचनात् ॥२३॥ अर्थ--प्रश्न, इहां यो विचार करनौं योग्य है कि

आत्मा औपशमकादि भावनिको परित्यागी है कि अपरित्यागी है जो परित्यागकरे है तो स्वभावका अभावका आत्माके शून्यता प्राप्त होयगी याको दृष्टांत कहे हैं कि जैसे अग्निके उष्ण स्वभावका परित्यागनै होतां संता अभाव होय है तैसैं अभाव होयगा। अर जो आत्मा क्रोधादि स्वभावको ।A अपरित्यागी है तो क्रोधादि स्वभावका अपरित्यागतैं आत्माके मोक्षको अभाव प्राप्त होयगो ।८ उत्तर, ऐसे कह्यौ हो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, आदेशका वचनतैं ऐसैं है कि अनादि पारिणामिक चैतन्य रूप स्वभाव है आत्मानैं कहने वारा जो द्रव्यार्थिक नय ताका आदेशतैं कथंचित् स्वभावको अपरित्यागी है। अर आदिमान औदयिकादि पर्याय स्वभाव रूप आत्मानैं ''-कहनेवारो जो पर्यायार्थिक नय ताका आदेशतैं कथंचित् स्वभावको परित्यागी है। इत्यादि पूर्ववत् सप्तभंगी जानवो योग्य है अर जाके एकांत करि स्वभावको परित्याग अथवा अपरित्याग है ताकैं यथोक्त दोष होय है अर स्याद्वादीनिकैं नहीं होय है ॥२३॥ वार्तिक—अप्रतिज्ञानात् ॥२४॥ अर्थ—अर या हम नहीं प्रतिज्ञा करैं हैं कि स्वभावका परित्यागतैं तथा अपरित्यागतैं मोक्ष है। प्रश्न, तो काहेतैं मोक्ष है? उत्तर, अष्ट प्रकारके कर्मनिका जो परिणमन ताकरि वशीकृत जो आत्मा ताकै द्रव्य क्षेत्र काल भाव रूप वाह्य निमित्तकी निकटतानैं होतां संता अर आभ्यंतर सम्यग्दर्शन, ज्ञान चरित्र मोक्षमार्गकी प्रवलताकी प्राप्तिनै होतां संता सर्वकर्मका क्षयतैं मोक्ष होनो कह्यो है। तातैं तुमने कह्यो सो दोष नहीं है। अर तुमने अग्निको दृष्टांत कह्यो सो भी योग्य नहीं है क्योंकि अग्निके उष्ण स्वभावका परित्यागनैं होतां संता भी द्रव्यको अभाव नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, द्रव्यरूप पदार्थका अवस्थानतैं। भावार्थ—पुद्गल द्रव्यको ही पर्याय उष्ण भाव है ताका अभावनै होतां संता भी विद्यमान अचेतनपणां आदि गुणानि करि संयुक्त द्रव्यको अवस्थान है यातैं अर्थात् जैसैं जीव द्रव्यके मनुष्य पर्याय है तैसैं पुद्गलके अग्नि-पर्याय है। अर पर्यायका नाश होनेतैं द्रव्यको नाश नहीं होय है। अर जीव द्रव्य अपने योग्य

अन्य पर्यायनैं प्राप्त होय है तैसैं ही पुद्गल द्रव्य अपने योग्य अन्य पर्यायनैं प्राप्त होय है तथापि दोऊ ही द्रव्य अपना नित्य ध्रौव्य गुणनैं नहीं छांडै है तातैं अभाव नहीं है। प्रश्न, अग्नि पर्यायको तो अभाव होय है। उत्तर, पर्याय तो क्षणस्थाई ही होय है ताको कहा कहनो है ॥२४॥ वार्तिक—कर्मसंन्निधाने तदभावे चोभयभावविशेषोपलब्धेर्नेत्रवत् ॥ २५ ॥ अर्थ—बहुरि जैसैं नेत्र है सो रूप ग्राहक स्वभाव रूप है सो जा समय रूप नहीं ग्रहण करै ता समय रूपग्राहक स्वभावका परित्यागतैं भी अभावरूप नहीं है अथवा क्षायोपशमिकपणांतैं होतां संता रूप ग्राहक स्वभावी जे नेत्र हैं तिनको समस्तपणैं क्षीण भये हैं सकल आवरण जा विषैं ऐसा केवल ज्ञानकै विषैं मतिज्ञानका अभावतैं नेत्रात्मक रूप ग्राहकका स्वभावनैं परित्यागनै होतां संता भी द्रव्यनेत्रका सद्भावतैं नेत्रको अभाव नहीं मानिये है। तैसैं कर्मके निमित्ततैं भये जे औदयिकादिक भाव तिनका अभावनैं होतां संता भी क्षायिक भावका सद्भावतैं आत्माको अभाव नहीं है। विशेष उपलब्धि है इहां कोऊ प्रश्न करै है कि कर्मका निमित्ततैं भये जे भाव तिनकूं स्वभाव कैसे कहे ? उत्तर, क्रोधादिक विभाव कर्मके निमित्ततैं होय है। तथापि क्रोधादिरूप आत्मा ही होय है। तातैं उपचारतैं स्वभाव कह्या है॥२५॥ अवै दूसरा सूत्रकी उत्थानिका कहैं है कि इहां कोऊ प्रश्न करै है कि आत्माके औपशमकादिक भाव हैं ते भेदवान हैं कि अभेदरूप हैं। इहां उत्तर कहै हैं कि भेदवान हैं। प्रश्न, जो ऐसे हैं तो वे भेद कहो कि कितनेक हैं ? यातैं उत्तर रूप सूत्र कहैं हैं ॥ सूत्रम्—

द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥३॥

अर्थ—दोय नव अष्टादश एकविंशति तीन भेद यथाक्रम हैं। भावार्थ—औपशमिकभाव दोय प्रकार है। क्षायिकभाव नव प्रकार हैं। मिश्रभाव अष्टादश प्रकार है। औदयिकभाव एकविंशति प्रकार हैं। पारिणामिकभाव तीन प्रकार है। ऐसैं तिरेपनभाव आत्माके निज तत्व

हैं। प्रश्न, यो कहा निर्देश है। उत्तररूपवार्त्तिक—द्वयादीनांक्तद्वन्द्वानां भेदशब्दे न वृत्तिः ॥ अर्थ--दोय, नव अष्टादश, एकविंशति, तीन होय ते द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रय कहिये ऐसें द्वंद समास करि पीछे भेद शब्दके साथ यो सामास जानवे योग्य है। प्रश्न, इहां इतरेतर योगमें द्वंद्व समास कियो सो तुल्य योगमें होय है कि समानाधिकरणमें होय है? अर इहां तुल्ययोग नहीं हैं। प्रश्न, कैसैं उत्तर, द्वयादिकशब्द जे हैं ते संख्येय प्रधान हैं कि संख्या जाकी कीजिये ता अर्थनैं कहे है। एकविंशति शब्द संख्यान अप्रधान है कि संख्याकूं कहैं हैं तातैं द्वन्द्वसमास नहीं वन सकै है यहां ग्रन्थकार कहैं हैं कि यो दोप नहीं है क्योंकि इनि द्वयादिक संख्या शब्दनिकूं संख्येय प्रधान पणां होत संते भी कारणान्तरका आश्रयतैं संख्या वाची शब्दनिके विषैं भी समास होय हैं सो ऐसे हैं कि जैसे प्रधान हैं सो किंचित् निमित्तनैं अपेक्षाकरि गौणनैं आश्रय करे है जैसैं प्रधान भूत भी राजा गौणभूतजो मंत्री तानैं आश्रय करैं है अर वा मंत्री करि प्रयोग रूप कियो जो कियाको फल ताका प्रयोजनवानपणांतैं ता मंत्रीको ता अर्थमें प्रधानपणों भी जाने है। भावार्थ—द्वयादिक शब्द संख्येय प्रधान है तौ हू गौणभूत जो संख्यान प्रधान ताको योग होत संतैं अपना संख्येय प्रधान अर्थनैं गौणकरि संख्या प्रधानरूप होय तुल्य योग करैं हैं। तातैं इतरेतरयोग द्वंद्व समास होय हैं। इहां वादी कहै है कि यो समाधान तो युक्तिके आश्रय है। अर व्याकरण शास्त्र करि तो विरुद्ध ही है। उत्तर, ऐसे ही व्याकरण शास्त्रमें कह्यो है। एकादय. प्र.विंशतेः संख्येयप्रधाना विंशत्यादयस्तु कदाचित्संख्यानप्रधानाः—कदाचित्संख्येयप्रधाना है। इति याकौ अर्थ ऐसो है कि एकादिक शब्द जे हैं ते वीसतैं पूर्व उगणींस पर्यंत तो संख्येय प्रधान हैं। विंशत्यादिक जे हैं ते कदाचित् संख्यान प्रधान हैं कदाचित् संख्येय प्रधान हैं अरद्वयादिक शब्द भी संख्यान अर्थ प्रवर्त्तें तो अर विंशत्यादिक शब्दनिकरि तुल्य होय तहां कहा दोष होय। सो कहिये है कि अपने सम्बन्धी शब्दनिकी विभक्ति

जो है ताने अपनी विभक्तिकरि द्वयादिक शब्दनिकी विभक्तिको भिन्न पणांकरि श्रवण होय। अर संख्याकूं स्वतैं एकपणांतै एकवचन सुनिये है सो जैसैं विंशतिर्गवां। इहां गो ने है तिनकी विंशति संख्या है ऐसो अर्थ होय है। तहां विंशति शब्दको सम्बन्धो जो गो शब्द ताके षष्टी विभक्ति अर बहुवचन सुनिये है। अर विंशति संख्या प्रधान शब्दके प्रथमा विभक्ति अर एक वचन ही सुनिये है। भावार्थ—पंच घटा, दश घटा इहां पंचन् शब्दकूं संख्यातप्रधान मानिये तौ विंशति गवां प्रयोगके समान घटाना पंच ऐसा प्रयोग होना चाहिये। तथा पंचशब्दके बहुवचनान्त पणां भी नहीं होना चाहिये क्योंकि संख्या वाची शब्दकूं स्वतैं एक पणौं है यातैं। प्रश्न, व्याकरण शास्त्रमें ही द्वेकयोर्द्विवचनैकवचने या सूत्रमें संख्यावाची जो द्वि शब्द तथा एक शब्द है तिनकी प्रवृत्ति देखिये है। अर प्रग्विंशतेः संख्येयप्रधानाः या सूत्रमें संख्येय प्रधान कहे हैं सो दोऊनिकी संगति कैसैं है? उत्तर, ऐसैं है कि द्वेकयोः इहां संख्या वाचीका प्रयोग नहीं है। प्रश्न, तौ काहेका प्रयोग है। उत्तर, दो संख्याविशिष्ट जो समुदाय ताके गौणभूत जे दोय अवयव तिनकौ वाची द्वि शब्द जो है ताको प्रयोग है। भावार्थ—समुदायके अवयव जे हैं ते तो संख्येय ही हैं संख्या नहीं है। अर जो संख्या ही मानिये तौ द्वि शब्द करि दोय संख्याका ग्रहण अर एक शब्द करि एक संख्याको ग्रहणमें ऐसैं दोऊनिका संयोगतैं तीन संख्याको बोध होय तातैं द्वेकयो या शब्द-की एवज द्वेकेषां ऐसा बहुवचनांत प्रयोग होय। तातैं समुदायवाची ही शब्द है संख्यावाची नहीं है। याको दृष्टान्त ऐसो है कि बहु शक्तिकीटकं याको इहां ऐसा अर्थ जाननौ कि बहुत हैं शक्ति जाकी ऐसो कीटक है। इहां बहु शब्दके संख्यावाची पणांतैं बहुवचन होय है। तथापि बहु शिष्ट समुदाय रूप हैं शक्ति जाकी ऐसो अर्थ करनेतैं बहु शब्दके संख्येय पणौं ही है। भावार्थ—संख्या पणौं मानिये तो बहुशक्तयः कीटकं ऐसो बहुवचन विशिष्ट प्रयोग होय तातैं संख्येय प्रधान ही माननौं योग्य है। इहां प्रश्न ऐसो उपजे है कि कीटकं या एक वचनांत शब्दका सामानाधिकरण

पणातैं वहुशक्तयः ऐसा वहुवचनांतका अभाव होगा कि एक वचनांत ही होगा। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, नयका आश्रयतैं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः या प्रयोगके समानाधिकरण संभवै है। प्रश्न, भाव प्रत्यय विना कि द्वित्व, एकत्व ऐसा शब्द विना गौण रूप अर्थ कैसै संभवै है ? उत्तर, भाव प्रत्यय विना भी गुण प्रधान निर्देश होय है कि जैसैं व्याकरणका सूत्रकारनैं द्वेकयो ऐसा सूत्रप्रभाव प्रत्यय रहित कियो है यातैं ऐसैं वादीकी शंका होतसंतैं आचार्य उत्तर कहै है कि ऐसैं तो द्वयादिक शब्द संख्येय प्रधान ही है। अर एक विंशति शब्द भी संख्येय वृत्ति ही ग्रहण करिये है। यातैं तुल्य योगकी उत्पत्तितैं भेदशब्दके साथ द्वन्द्व समास युक्त है। वहुरि प्रश्नभेद शब्द करि सहित समास हो तौ परन्तु इहां स्वपदार्थ प्रधान वृत्ति है कि अन्य पदार्थ प्रधान वृत्ति है। भावार्थ—केई समास तो पूर्व पदार्थ प्रधान होय है कि दोय पद होय तहां दूसरा पदको अर्थ तौ गौणरूप होय अर पूर्व पदको अर्थ प्रधानरूप होय है। जैसैं अव्ययीभाव समास है। अर केई समास स्वपदार्थ प्रधान होय है कि जिन पदनिका समास करिये तिन सर्व पदनिका ही अर्थ प्रधानता करि भापै सो स्वपदार्थ प्रधान होय है जैसैं कर्मधारय समास है। अर केई समास अन्य पदार्थ प्रधान होय है कि जिन पदार्थका समास करिये तिन पदनिका अर्थ तौ गौणरूप भासै अर अन्यपदार्थको अर्थ प्रधानरूप भासै सो जैसैं वहुव्रीही समास है तातैं इहां कर्मधारय समास है कि वहुव्रीहि समास है ? उत्तर, इहां स्वपदार्थ प्रधानवृत्ति है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, "विशेषणं विशेष्येण वहुलम्" या सूत्रकरि समास होय है सो ऐसै कि दोय, नव, अष्टादश, एकविंशति तीन रूप ही भेद होय द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रिभेदा कहिये ऐसैं है। वहुरि प्रश्न, द्वियमुनं याका समास ऐसा है कि द्वे यमुने समाहृते इति याको अर्थ ऐसो है कि दोय मुनी एकत्र होय सो द्वि यमुन कहिये, इत्यादिक शब्दनिमें पूर्व प्रधान वृत्ति है कि अव्ययी भाव समास होय है। अर पूर्वपद जो द्वि शब्द सो तो विशेष्य है, अर यमुना

उत्तरपद है सो विशेषण है। तैसैं ही इहां द्वादिक शब्दनिकूं विशेष पणां उक्त है। ता कारण करि भेद शब्दकूं विशेषणपणां होतां संता या भेद शब्दको पूर्व निपात प्राप्त होय है कि भेदाद्विनवाष्टादशैकविंशतित्रयः ऐसा सूत्र प्राप्त होय है। उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, जो द्वि यमुनं या पदमैं द्वि शब्दकूं विशेष्यपणा कह्या था सो तौ सामान्य कथन होतां संतां विशेष अभिधान कहिये। विशेष कथन जाका करिये ता अर्थ की प्राप्तिमें कह्या था सो ऐसे है के द्वे कि कौन दोय है ऐसा सामान्य अर्थका प्रतिभास होत संते कहिये है कि यमुने कि यमुना नामा नदी है, ऐसा विशेषका अभिधान कहिये है। अर जो प्रथम ही यमुने ऐसा प्रथमाका द्विवचन रूप प्रयोग उक्त होत संते पीछे द्वि शब्दको प्रयोग कियो अनर्थ होय है। भावार्थ—यमुने ऐसैं कहतां संता प्रथमाका द्विवचनका योगतैं दोय यमुना है। ऐसा अर्थका प्रतिभास होय है तातैं वहुरि द्वे ऐसा कहना व्यर्थ होता। तातैं द्वे ऐसा कहना प्रथम ही भया, तहां आकांचा होय है कि वे दोय कौन हैं, तब कहिये है कि यमुना है। ऐसैं दोऊ पदनिका कहनां संगत होय है अर इहां तो वहुवचनतैं संदेह होय है कि भेदाः ऐसैं कहत संतैं संदेह होय है कि कितने भेद हैं तातैं कहिये है कि द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय इति अर्थात् ये भेद हैं। अर द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय ऐसा ही प्रथम कहना होय तौ संदेह होय है कि ये कौन है, तब भेद है ऐसा कहना ही पड़ेगा। यातैं द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रय दया पदमें अर भेदाः या पदमैं दोऊ ही स्थलमैं विशेष्य विशेषणका व्यभिचार है कि दोऊ ही के विशेष्य विशेषण पणांका यथेच्छपणातैं भेद शब्दका पूर्वनिपात नहीं बणौं है अर जो कदाचित् भेदकूं विशेषण ही मानिये तौ भेद शब्दका पूर्व निपात ही होना योग्य होय है। परन्तु सो नहीं सम्भवै है क्योंकि द्व्यादिक शब्दनिकै गुणवाची पणौं है, यातैं विशेषण पणौं ही विवचित है। तातैं द्व्यादिक शब्दका ही पूर्व निपात

होय है। भेद शब्दका नहीं होय है। इहां प्रश्न उपजै है कि द्व्यादिकनिकूं गुणवाचकता कैसै है। उत्तर, द्व्यादिक शब्द संख्याप्रधान है अर संख्या है सो गुण है यातैं अर व्याकरणमें ऐसा सिद्धपद है कि जातिवाचक शब्दसमभिव्याहारे गुणवाचस्य शब्दस्य विशेषणत्वमेव नीलघटवत् इति याका अर्थ शब्द चार प्रकारके हैं कि जातिवाची १ संज्ञावाची २ क्रियावाची ३ गुणवाची ४ तहां जातिवाचीकै गुणवाचीकै समास होत संतैं गुणवाचक है सो विशेषण ही होय है जैसैं नील-घट, इहां नील शब्द तौ नीलरूपका बोधक पणातैं गुणवाची है। अर घटशब्दत्व जातिविशिष्ट पृथु बुध्नोदराकारवान जो मृत्तिकाको पर्याय है ताको वाची है तहां जो प्रथम नीलः ऐसा कहता संतै नीलरूपवानका बोध होय है। तहां बहुरि आकांक्षा उपजे है कि नील रूपवान कौन है तहां कहिये है कि घट इति कि घट है। इहां नीलपद तौ विशेषण भया है अर घट पदका विशेष्य भया है। अर जहां घटः ऐसा कहनां होय है तहां आकांक्षा उपजे है कि कौनसा घट है, तहां कहिये है कि नीलः इति कि नीलरूपवान है सो घट है, इहां घटपद तौ विशेष्य है। अर नीलपद विशेषण है। इहां विशेषण नाम तौ अन्य पदार्थनितैं भिन्न जनावनैं वारे लक्षणका है अर वा लक्षण करि अन्य पदार्थनितैं भिन्न होय सो विशेष्य है सो यथा सम्भव इहां लगवनां परन्तु ये दोऊ सम्भव पणां जहां होय है कि दोऊ शब्द भिन्न भिन्न होय अर एक विभक्तिमान होय अर जहां समास होय तहां नहीं होय, क्योंकि जातिवाचीकै समास होत संतैं गुणवाची शब्दको विशेषण पणां ही सिद्धान्त पठित है। यातैं ऐसैं ही द्विनवाष्टा दशैक विंशतित्रय अर भेद ऐसैं जुदे जुदे शब्द होते तौ विशेष्य विशेषण दोऊ सम्भव था परन्तु इहां समास है यातैं द्व्यादिक गुण-वाची शब्दनिकूं विशेषणपणां ही विवक्षित है। तातैं इनहीका पूर्वनिपात कियो है। ऐसैं तो स्व पदार्थ प्रधान वृत्ति समर्थन करी। बहुरि कहैं है कि अन्यपदार्थ प्रधान वृत्ति भी हो। अर्थात्। बहुव्रीही समास भी हो सो ऐसैं होय है कि दोय, नव अष्टादश एकविंशति त्रिभेदा कहिये ऐसा

समासमें संख्या प्रधान जे द्व्यादिक तिनकै विशेष्यपणातैं होत संतैं भी सर्वनामसंख्ययो रुप संख्यानं याका अर्थ ऐसा है कि बहुव्रीही समासकै विषैं सर्वनाम वाची शब्दनिकूं अर संख्यावाची शब्दनिकूं पूर्वनिपातको [उपसंख्यान है कि होनो है या सूत्र करि संख्यावाची द्व्यादिक शब्दको पूर्वनिपात भयो है। ऐसैं अन्य पदार्थ वृत्ति समर्थन करी। अवैं इहां ऐसा विचार करना कि प्रथम कह्यो जो कर्मधारय समास ताकै विषैं तो अर्थका वशतैं विभक्तिको विपरिणाम करनों कि भेदाः या सूत्रमैं भेदाः कहनेतैं भेद होय है। ऐसा अर्थमें आकांक्षा होय है कि किनके भेद होय है तहां पूर्वसूत्रतैं औपशमिकादिकनिकी अनुवृत्ति करि षष्ट्यन्तवणाय तिनके भेद है ऐसा अर्थका सम्वन्ध करना अर दूसरो जो बहुव्रीही समास तामैं पठित क्रम करि ही अर्थात् प्रथमांत सूत्र पठित है ता क्रम करि ही औपशमिकादिकनिका सम्वन्ध करना ॥१॥ वार्त्तिक—भेदशब्दस्य प्रत्येकं परिसमाप्तिर्भुजिवत् ॥२॥ अर्थ—यथा देवदत्तजिनदत्तगुरुदत्ता भोज्यंतां जैसैं देवदत्त, जिनदत्त, गुरुदत्त ये तीन शब्द जे हैं तिनमें एक एक प्रति भोज्यंतां या क्रिया शब्दमैं लगाइये है तैसैं ही भेद शब्द एक एक प्रति लगावनां योग्य है सो ऐसैं दोय भेद, नव भेद इत्यादि बहुरि याही अर्थकूं स्पष्ट करनें निमित्त कहै हैं ॥२॥ वार्त्तिक—यथा निर्दिष्टौपशमिकादिभावाभिसम्बन्धार्थं द्व्यादिक्रम वचनं ॥३॥ अर्थ--इहां क्रम शब्द आनुपूर्वी वाचक है तातैं जो क्रम है सो यथाक्रम है। तातैं ऐसा अर्थ भया कि जैसा अनुक्रमि करि औपशमिकादिभाव कह्या, तैसा अनुक्रमि करि ही द्व्यादिक शब्दनि करि अभिसम्बन्ध कर्त्तव्य है। अवैं तीसरा सूत्र की उत्थानिका कहै है। प्रश्न, यो यथाक्रम कैसैं है। ऐसैं प्रश्न होत संतै कहिये है कि नहीं निर्द्धार कियो है जिनको ऐसे जे संख्येय तिनका सम्बन्धी जो द्व्यादिक संख्यावाची शब्द तिनकै प्रति विशिष्ट जे अभिधेय तिनके कहनेका प्राप्त भया अवसरमें युगपत् कहनेंका असम्भवतैं जो यो आदिमें कह्यो औपशमिक भाव ताके भेद दिखावनेंकूं कहै हैं ॥२॥ सूत्रम्—

अर्थ—औपशमिक भाव दोय प्रकार कह्या ते सम्यक्त्व रूप और चारित्र रूप है। ऐसें व्याख्यान कियो है लक्षण जिनको ऐसें जो सम्यक्त्व अर चारित्र तिनके औपशमिक पणा कैसें है ऐसो प्रश्न होतें संतें कहें है। वार्तिक- सप्तप्रकृत्युपशमादौपशमिकं सम्यक्त्वं ॥१॥ अर्थ-अनन्तानुबन्धी, चारित्र मोह सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार तो कषाय अर दर्शन मोह सम्बन्धी मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व ऐसें तीन ये। इनि सप्त प्रकृतिनिका उपशमतें औपशमिक सम्यक्त्व होय है सो अनादि मिथ्यादृष्टी भव्यकै कर्मका उदय करि ग्रहण करी कलुषतानै होतां संतां तिन सप्त प्रकृतिनको उपशम काहेतें होय है? ऐसा प्रश्न होत संतें कहे हैं ॥१॥ वार्तिक--काललब्ध्याद्यपेक्षयातदुपशमः ॥२॥ टीकार्थ—काल लब्धि आदि कारणनिनैं अपेक्षा करि तिन सप्त प्रकृतिनको उपशम होय है। तहां प्रथम तो या काल लब्धि है कि कर्माविष्ट आत्मा भव्य जो है सो संसारमें परिभ्रमणरूप अर्द्ध पुद्गलपरिवर्त्तन नामा कालनै अवशेष रहतां संतां प्रथम सम्यक्त्वका ग्रहणके योग्य होय है। अधिक कालनैं रहतां संतां सम्यक्त्वके योग्य नहीं होय है। या प्रकार एक काल लब्धि है। अर दूसरी कर्म स्थितिका नामा काल लब्धि है कि उत्कृष्ट स्थितिमान तथा जघन्य स्थितिमान कर्मनिनैं विद्यमान होतां संतां प्रथम सम्यक्त्वको लाभ नहीं होय है। प्रश्न, तो कब होय है? उत्तर, घुणाक्षर न्याय करि समस्त कर्मनिकें विषें आयु कर्म विना अन्तः कोटाकोटि सागरोपम स्थितिमान कर्मबंधनै प्राप्त होतां संतां विशुद्ध रूप परिणामका वशतें विद्यमान कर्मनिनैं एक हजार संख्यात सागरोपम घाटि अन्तः कोटाकोटी सागरोपम स्थितिकै विषें स्थापित होतां संतां प्रथम सम्यक्त्वके योग्य होय है। बहुरि तैसें ही और काल लब्धि भावनिकी अपेक्षा है सो आगानैं कहसी। अर आदि शब्द करि जाति स्मरणादिक ग्रहण करिये है। बहुरि

भव्य पंचेन्द्रिय संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, पर्याप्तक जो हैं सो सर्व विशुद्ध कहिये, अनिवृत्ति करणका चरम समयवर्त्ती होत संतैं प्रथम सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करै है श्न, अनुवत्ति करण गुणस्थान तो आठमां है अर इहां अनिवृत्तिकरणका चरम समय वर्तीकै प्रथम सम्यक्त्व होनां कैसैं कह्या है? उत्तर, वे अनिवृतिकरण स्थान तौ भिन्न है। अर ये तीन करण रूप परिणाम सदा काल परिवर्त्तन रूप हुआ करै हैं, तिन मैं अनिवृत्ति करणके समयमैं प्रथम सम्यक्त्व होना कह्या है। अर उत्पन्न करतो संतो जीव अन्तर्मुहूर्त ही प्रवर्त्तावै है। भावार्थ—प्रथमोपशम सम्यक्त्वको काल अन्तर मुहूर्त मात्र ही है। ता पीछे वहांतैं मिथ्यात्व कर्मनैं तीन प्रकार भेद नें प्राप्त करै है सो भेद सम्यक्त्व मिथ्यात्व २ सम्याग्मिथ्यात्व ३ रूप जानना। इहां भाव ऐसा भाव जानना कि सम्यक्त्व प्रकृतिका उदय-तैं तो वेदक सम्यक्त्व होय है सो चलमलिन आगम रूप होय है। अर मिथ्यात्व प्रकृतिका उदय-तैं सासादन गुण स्थानके मार्ग होय अतत्व श्रद्धान रूप मिथ्यात्वी होय है। अर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उदयतैं दधि गुड़ मिश्रित द्रव्यके समान पारणामी मिश्र गुणस्थानी होय है। प्रश्न, दर्शन मोहनीय कर्मकी प्रकृतिनैं उपशमावतो संतो कहा उपशमावे है। उत्तर, चारों ही गतिमें उपशमावे है। तहां नारकी प्रथम सम्यक्त्वनैं उपजावतो कहां उपशमावै है। उत्तर, चारो ही गतिमें उपशमावै है तहां नारकी प्रथम सम्यक्त्वनै ;उपजावते संतैं पर्याप्तक उपजावै है। अपर्याप्तक नहीं उपजावै है अर पर्याप्तक भी अन्तर मुहूर्त उपरान्त उपजावै है। अन्तर मुहूर्त पहली नहीं उपजावे है ऐसैं सातूं ही पृथ्वीनिकै विषैं उपजावे है। तहां भी उपरली तीनूं प्रथ्वीनिके विषैं तो नारकी तीन कारणनि करि सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करै है। तिनमें कितनेक तो पूर्व जन्मनैं स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक धर्म-नैं श्रवण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक वेदनाका अनुभम करि उत्पन्न करै है। वहुरि नीचे चारूं पृथ्वीमें दोय कारण करि ही सम्यक्त्वनै उत्पन्न करै है। तहां कितनेक तो पूव जन्मनैं

स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक वेदना करि त्रासित होय करि सम्यक्त्व नै उत्पन्न करै है। अर तिर्यंच सम्यक्त्व नै उत्पन्न करतां संतां पर्याप्तक ही उत्पन्न करै है। अपर्याप्तक नहीं करै है। अर पर्याप्तकनिमें भी सात आठ दिन उपरान्त करै है पहली नहीं करै है। ऐसैं सर्व द्वीप समुद्रनिके विषैं तिर्यंचनिके तीन कारणनि करि सम्यक्त्वकी उत्पत्ति है। तिनमें कितनेक तो पूर्व जन्मनैं स्मरण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक धर्म श्रवण करि उत्पन्न करै है। अर कितनेक जिन बिंबनैं देखि करि उत्पन्न करै है। प्रश्न, सर्व द्वीप समुद्रनिमें जिनबिंब तो है ही नहीं, कारणनिमें कैसै कहो हो? उत्तर, यहां सामान्य वर्णन है तातैं जहां जहां है तहां तहां ही जानना। अर मनुष्य सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करतां संतां पर्याप्तक सैनी ही उत्पन्न करै है अपर्याप्तक नहीं करै है। अर पर्याप्तकनि में भी अष्ट वर्षकी स्थिति उपरांत करै है, पहली नहीं करै है। तहां तिनके ढाई द्वीपनिमें तथा दोय समुद्रनिके विषैं तीन कारणनि करि सम्यक्त्वकी उत्पत्ति है तिनमें कितनेक तो जाति स्मरणतैं अर और धर्म श्रवणतैं अर और जिन बिंबका दर्शनतैं उत्पन्न करै है। अर देव सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करतां संता पर्याप्तक ही उत्पन्न करै है। अर अपर्याप्तक नहीं करै है। अर अपर्याप्तकनिमें भी अन्तरमुहूर्त्तके उपरांत ही उत्पन्न करै है। पहिली नहीं करै है ते देव भवनवासीनैं आदि लेय उपरिम ग्रैवेयिक पर्यंतका ही उत्पन्न करै है। तिनमें सहस्रार कल्प पर्यंतका देव तो चार कारणनि करि प्रथम सम्यक्त्वनैं प्राप्त होय है तिनमें कितनेक तो जातिस्मरण करि अर और धर्म श्रवण करि, अर और जिन महिमाका देखवा करि अर देवनिकी ऋद्धिका देखवा करि सम्यक्त्व उत्पन्न करै है। अर आनत, प्राणत, आरण, अच्युत स्वर्गनिके विषैं अन्य देवनिकी ऋद्धिका देखवा विना पूर्वोक्त तीन कारणनि करि ही उत्पन्न करै है, अर नव ग्रैवेयिकनिके विषैं जातिस्मरण तथा धर्म श्रवण रूप दोय कारणनितैं ही उत्पन्न करै है। अर ऊपरिके देव नियम करि सम्यग्दृष्टी ही होय है ॥२॥ अबै औपशमिक चारित्रके भेद जनावनैं निमित्त कहैं है। वार्त्तिक—

अष्टाविंशतिमोहविकल्पोपशमादौपशमिकं चारित्रम् ॥ ३ ॥ अर्थ—अनन्तानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ इनि विकल्पनिरूप षोडश तो कषाय अर हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ स्त्री वेद ७ पुरुष वेद ८ नपुंसक वेद ९ इनि विकल्पनिरूप नव नो कषाय ऐसैं चरित्र मोहके तो पच्चीस विकल्प, अर मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्त्व २ सम्यक्त्व ३ इनि विकल्पनिरूप तीन दर्शन मोहके विकल्प इनि दोऊनिके जोड़ रूप अष्टाविंशति मोह-विकल्पनिके उपशमतैं औपशमिक चारित्र होय है ॥३॥ वार्त्तिक—सम्यक्त्वस्यादौ वचनं तत्पूर्व-कत्वाच्चारित्रस्य ॥४॥ अर्थ—निश्चय करि आत्माको प्रथम सम्यक्त्व पर्याय करि आविर्भाव होय है। ता पीछे अनुक्रमतैं चारित्र पर्याय रूप प्रगट होय है। या कारणतैं सम्यक्त्वकूं आदि-के विषैं ग्रहण करिये है॥४॥ अवै चौथा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो क्षायिक भाव नव प्रकार कह्यो ताके भेदनिका स्वरूप दिखावने निमित्त कहै है। सूत्रम्—

ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥

अर्थ—ज्ञान १ दर्शन २ दान ३ लाभ ४ भोग ५ उपभोग ६ वीर्य ७ अर च शब्दतैं सम्यक्त्व ८ चारित्र ९ समुच्चय करिये है। वार्त्तिक—ज्ञानदर्शनावरणक्षयात्केवले ज्ञानदर्शने क्षायिके ॥१॥ अर्थ—समस्त ज्ञानारण दर्शनारण कर्मका क्षयतैं केवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिक होय है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—अनन्तप्राणिगणानुग्रहकरं सकलदानान्तरायक्षयादभयदानम् ॥२॥ अर्थ—दानांतराय कर्मका अत्यन्त समीचीनपणैं क्षय होवातैं प्रगट भयो त्रिकाल गोचर अनंत प्राणिगणको अनुग्रह करनवारो क्षायिक अभयदान है ॥२॥ वार्त्तिक—अशेषलाभांतराय-निरासात्परमशुभपुद्गलानामादानं लाभः ॥ ३ ॥ अर्थ—समस्त लाभान्तरायका अवशेष निरास

होनेतें परित्यक्त है कवलाहार रूपक्रिया जिनकै ऐसें केवलीनिकैं जानें शरीरका अर बलका आधारका कारण अर अन्य मनुष्यनितें असाधारण अर परम शुभ सूक्ष्म अनन्ता पुद्गल समय समय प्रति संबंधनें प्राप्त होय है सो क्षायिक लाभ है, तातें औदारिककी किंचित् न्यून पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण स्थिति कवलाहार विना कैसें संभवै या प्रकार जो वचन है सो अशिक्षितको कियो जनाइये है ॥३॥ वार्त्तिक-कृत्स्नभोगांतरायतिरोभावात्परमप्रकृष्टो भोगः ॥४॥ अर्थ—समस्त भोगांतराय कर्मका नाशतें प्रगट भयो अतिशयवान अनंतो भोग क्षायिक है। जाका किया पंचवर्णरूप सुगंधित पुष्पवृष्टि अर नाना प्रकारका दिव्यगंधकी वृष्टि अर चरणनिक्षेप स्थानमें सप्त पद्मपंक्ति अर सुगंधित धूप अर सुखरूप शीतल पवन आदि भाव हैं ॥४॥ वार्तिक-निरवशेषोपभोगांतरायप्रलयात्प्रादुर्भूतोऽनन्तोपभोगः क्षायिकः ॥५॥ अर्थ—निरवशेष उपभोगांतराय कर्मका प्रलयतें प्रगटभयो उपभोग क्षायिक है। जाका किया सिंहासन, बाल, व्यजन, अशोक वृक्ष, छत्रत्रय, प्रभामंडल, गंभीर स्निग्धस्वरूप परिणम्यं, दिव्यध्वनि अर देवदुंदुभी आदि भाव हैं ॥५॥ वार्तिक—वीर्यान्तरायात्यंतसंक्षयादनंतवीर्यम् ॥६॥ अर्थ—आत्माकी सामर्थ्यकूं रोकनेवारो वीर्यांतराय कर्म जो है ताका अत्यंत क्षयतें उत्पन्न भई जो प्रवृत्ति सो क्षायिक अनंतो वीर्य है। ॥६॥ वार्तिक—पूर्वोक्तमोहप्रकृतिनिरवशेषक्षयात्सम्यक्त्वचारित्रे ॥७॥ अर्थ---पूर्वोक्त दर्शनमोहके त्रिकल्प अर चारित्र मोहके पंचविंशति विकल्पनिका निरवशेष क्षय होवातें क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र है। प्रश्न, ऐसें कहे जे अनन्त दान लब्धि आदि ते दानांतरायादि कर्मका क्षयतें अभयदानादिका कारण हैं तिनको प्रसंग सिद्धनिके विषै भी हो ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि शरीर नामकर्म अर तीर्थंकर नामकर्म आदिकी अपेक्षापणातें सिद्धनिके विषै शरीर नामकर्म आदिका अभावतें होतां संतां दानादिकको प्रसंग नहीं है। अर परम अनंत अव्याबाधरूप करि ही तिनकी तहां प्रवृत्ति है सो केवल ज्ञानरूपकरि अनंतवीर्यकी प्रवृत्तिके समान है। प्रश्न, सिद्धपणों भी क्षायिक

आगममें कह्यो हैं तातैं ताको भी कथन या सूत्रमें करवो योग्य है ? उत्तर, नहीं करवो योग्य है क्योंकि विशेषनिनैं दिखावता संतां उनको विषयरूप सामान्य विना कह्यो ही सिद्ध है। याको दृष्टान्त ऐसैं जाननूं कि पर्व आदि अंगुलके अवयवनिका निर्देशनैं होतां संता अंगुलकी सिद्धि है। तैसैं ही सिद्धपणौं विना कह्यो ही सिद्ध है। क्योंकि सर्व क्षायिक भावनिकैं विषैं साधारणपणौं है यातैं ॥७॥ अवै पांचवा सूत्रकी उत्थानिका कहैं है कि कह्यो जो अष्टादश विकलपरूप क्षायोपशमिक भाव ताकै भेद निरूपण करनैकै अर्थि कहै है ॥ सूत्रम्—

ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥

अर्थ—ज्ञान चार, अज्ञान तीन, दर्शन तीन, लब्धि पांच अर सम्यक्त्व अर चारित्र अर संयमासंयम ऐसैं अष्टादश भेदरूप क्षायोपशमिक भाव है ॥५॥ इहां व्याकरणरूप वार्तिक--चतुरादीनां कृतद्वंद्वानां भेदशब्देन वृत्तिः ॥१॥ अर्थ—च्यार तीन तीन पांच होय ते चतुस्त्रित्रिपंच कहिये अर ये है भेद जिनके ते चतुस्त्रित्रिपंचभेदा कहिये। ऐसैं द्वंद्व समास गर्भित वृत्ति है। प्रश्न, त्रि शब्दको इहां द्वंद्वापवादरूप एक शेष समास काहेतैं नहीं होय हैं ? उत्तर, संख्याकरि पदार्थकी अप्रतीति होवातैं तथा अन्य पदार्थ प्रधानपणांतै तथा भिन्न दूसरा त्रिशब्दका कहवामें प्रयोजनको सद्भाव है कि अनुक्रमको स्पष्ट दर्शन है यातैं एक शेष नहीं होय है। प्रश्न ? या सूत्रमें यथाक्रम वचन ज्ञानादिकनि करि आनुपूर्वीका सम्बन्धकै अर्थि कहनो योग्य है ? वादी प्रति प्रश्नरूप उत्तर, कहा प्रयोजन ? वादीको उत्तर, चार प्रकार ज्ञान तीन प्रकार अज्ञान इत्यादि अभिसम्बन्धके अर्थि यथाक्रम वचन कहनौ योग्य है। याको उत्तर ग्रन्थकार कहै हैं कि यथाक्रम वचनसूत्रमें कहनौ योग्य नहीं क्योंकि यथाक्रम ऐसो शब्द इहां कह्यो सो अनुवर्तै है। प्रश्न, कहां कह्यो है ? उत्तर, द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् या सूत्रमें कह्यो सो अनुवर्त्तै है ॥१॥ प्रश्न, कौनका क्षयतैं

अर कौनका उपशमतैं चायोपशमिकभाव होय है। उत्तररूप वार्तिक—सर्वघातिस्पर्द्धकानामुदयक्षयात्तेषामेव सदुपशमाद्देशघातिस्पर्द्धकानामुदये चायोपशमिको भावः ॥२॥ अर्थ--स्पर्द्धक दोय प्रकार है तहां एक तो देशघाति स्पर्द्धक है। दूसरा सर्वघातिस्पर्द्धक है। तिनमैंसूं जा समय सर्वघाति स्पर्द्धकनि को उदय होय है ता समय तो किंचित् भी आत्माके गुणनिकी प्रगटता नहीं होय है। तातैं सर्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयको अभाव जो है सो क्षय है ऐसैं कहिये है। अर नहीं उदयनैं प्राप्त भया जे वे ही सर्वघाती स्पर्द्धक तिनका सत्तामें स्थिति रहना जो है सो उपशम है ऐसैं कहिये है, अर नहीं प्रकट भयो जो निज वीर्यतारूप प्रवृत्तिपणातैं अङ्गीकार किया जे सर्वघाति स्पर्द्धक तिनको उदयाभावरूप क्षय होतां संतां अर देशघाती स्पर्द्धकको उदय होतां संता सर्वघातिका अभावतै प्राप्त भयो जो भाव सो चायोपशमिक भाव है ऐसैं कहिये हैं ॥२॥ प्रश्न, स्पर्द्धक कहा है? उत्तररूप वार्तिक-अविभागपरिछिन्नकर्मप्रदेशरसभागप्रचयपंक्तिक्रमवृद्धिः क्रमहानिः स्पर्द्धकम् ॥३॥ अर्थ—उदय प्राप्त जो कर्म ताकै प्रदेश अभव्य राशितैं अनंतगुणा अर सिद्धराशिके अनंतमें भाग प्रमाण है। तिनमें सूं सर्वतैं जघन्य गुणवान एक प्रदेश ग्रहण कियो ताको अनुभाग जो है सो बुद्धितैं अर्धच्छेद करि तितनी वार परिछिन्न कियो कि अर्द्धच्छेदरूप विभाग स्वरूप कियो कि फेर विभाग नहीं होय ते अविभाग परिच्छेद कहिये ते अविभाग परिच्छेद सर्व जीवराशितैं अनंतगुणे हैं ऐसैं एक राशि तो Aया[करि अर वैसैं ही अवशेष सर्व जघन्य गुणवान प्रदेश जे हैं ते तैसैं ही परिच्छेद रूप किये, अर Aपंक्ति रूप किये अर वर्ग रूप किये। भावार्थ—जघन्य गुणवान प्रदेश भी अनंते हैं तिनमैं सूं Aएक एक नैं ग्रहण किये अर पूर्वोक्त प्रकार अर्धच्छेद किये अर पंक्ति रूप स्थापन करि वर्ग रूप किये ऐसैं सर्व जघन्य गुणवाननिकी राशि वर्गरूप करि स्थापन करी। बहुरि वातैं एक अविभाग परिच्छेदाधिक प्रदेश ग्रहण कियो अर तैसैं ही ताके अविभाग परिच्छेद किये अर वर्गरूप किये

सो भी एक राशि और भई। बहुरि तैसैं ही एक अविभाग परिच्छेदाधिक सम गुणवान सर्वराशि जो है तानैं अर्धच्छेद रूप करि वर्ग रूप करी ऐसैं यावत् एक अविभाग परिच्छेदको अधिक लाभ होय तावत् पर्यंत पंक्ति करी अर ता अधिक विभाग परिच्छेदको अलाभ होत संते ताकै अनंतर हो विशेष हीन अर क्रम वृद्धि अर क्रम हानि युक्त जे ये पंक्ति तिनको समुदाय भयो सो स्पर्द्धक कहिये है। ता उपरांत प्रदेश रहे ते दोय, तीन, चार तथा सख्यात असंख्यात गुणां रसवान नहीं पाइये है। अनंत गुणा रसवान ही पाइये है तिनमैंसूं एक प्रदेश जघन्य गुणवान ग्रहण कियो ताका अनुभागका अविभाग परिच्छेद पूर्ववत् किये। अर्थात् अर्धच्छेद करि वर्गात्मक करि पंक्ति रूप किये एसैं ताकै सम गुणवान प्रदेश भी अविभाग अर्द्धच्छेद रूप करि वर्गात्मक करि पंक्ति रूप किये एसैं करत संतैं सर्व वर्ग भये ते एकत्र किये वर्गणा होय है। अर्थात् एक अविभाग परिच्छेदाधिक राशि जो है सो पूर्ववत् विरलन करि पंक्तिरूप करी जो राशि तानैं विरलन देयकरि एकत्र करी ते वर्गणा है। तानैं तिन सकल राशनि प्रमाण वर्गणा भी अनंत होय है। यहां ग्रंथकार संकोचनैं करि अर्थनैं जनावे है कि यावत् इन राशनिके परस्पर अंतर होय है तावत् एक स्पर्द्धक होय है ऐसैं या क्रम करि विभाग करत संतैं सर्व स्पर्द्धक होय है ते अभव्य राशितैं अनंत गुणे अर सिद्धराशितैं अनंत भाग प्रमाण होय है सो यो समुदाय रूप एक उदय स्थान होय है ॥३॥ वार्तिक—तत्र ज्ञानं चतुर्विधं क्षायोपशमिकं आभिनिवोधिकज्ञानं श्रुतज्ञानमवधिज्ञानं मनःपर्ययज्ञानं चेति ॥४॥ अर्थ—वीर्यान्तराय अर मति ज्ञानावरणका तथा श्रुत ज्ञानावरणका सर्वघाती स्पर्धक जे हैं तिनका जो उदय ताका क्षय तैं अर सत्तामैं उपशम होवातैं। अर देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां मतिज्ञान श्रुतज्ञान होय है। अर देशघाती स्पर्द्धकनिका जो रस ताका प्रकर्ष अप्रकर्षका योगतैं गुणघातका अतिशय अनतिशय पणांतैं वे ज्ञानके भेद हैं। भावार्थ—आत्मगुणका विशेषघातनैं होतां संतां तो मतिज्ञान ही होय है। अर न्यून घात होतां संतां श्रुतज्ञान होय है इनि मैं

इतनों ही भेद है ऐसें ही अवधि मनः पर्यायके भी निज आवरणका क्षयोपशमरूप भेदतें क्षायोपशमिक पणों जानने योग्य है ॥४॥ वार्तिक—अज्ञानं त्रिविधं मत्यज्ञानं श्रुताज्ञानं विभङ्गं चेति ॥५॥ अर्थ—अज्ञान तीन प्रकार है तिनमैं एक मतिअज्ञान एक श्रुतअज्ञान एक विभंगज्ञान है, तिनके क्षायोपशमिकपणों तो पूर्ववत् जाननूं कि द्वितीय अध्यायका प्रथम सूत्र संबंधी इकवोशमा वार्तिकमें कह्यो है तैसे जाननूं । अर ज्ञान अज्ञानको भेद मिथ्यात्व कर्मका उदय अनुदयकी अपेक्षा सहित है ॥५॥ वार्तिक—दर्शनं त्रिविधं क्षायोपशमिकं चक्षुर्दर्शनमचक्षुर्दर्शनमवधिदर्शनं चेति ॥६॥ अर्थ—क्षायोपशमिक दर्शन तीन प्रकार है तिनमैं एक चक्षुदर्शन एक अचक्षुदर्शन एक अवधिदर्शन है। ये तीनूं ही पूर्ववत् अपना आवरणका क्षयोपशमकी अपेक्षा सहित जानवो योग्य है ॥६॥ वार्तिक—लब्धयः पंच क्षायोपशमिकाः दानलब्धिर्लाभलब्धिर्भोगलब्धिरुपभोगलब्धिर्वीर्यलब्धिश्चेति ॥७॥ अर्थ—दानांतराय आदि सर्व घातिस्पर्द्धकानिका क्षयोपशमनैं होतां संतां अर देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयका सद्भावनैं होतां संतां दानलब्धि, लाभलब्धि, भोगलब्धि, उपभोगलब्धि वीर्यलब्धि, ये पांच लब्धि क्षायोपशमिक रूपा होय है । सूत्रमें सम्यक्त्व पद ग्रहण है ता करि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व ग्रहण करिये है सो अनंतानुवंधी कषाय चतुष्टयका तथा मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्वका उदयाभावरूप क्षय होवातैं अर सम्यक्त्व प्रकृतिका देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां तत्वार्थका श्रद्धानरूप क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होय है । अनंतानुवंधी अप्रत्याख्यानावरणी, प्रत्याख्यानावरणी रूप द्वादश कषाय जे हैं तिनका उदयाभावरूप क्षय होवातैं तथा सत्तामें उपशम होवातैं अर संज्वलन कषाय चतुष्टयनि में सूं कोऊ एक देशघाती स्पर्द्धकनिका उदयनैं होतां संतां अर नो कषायको जो नवक ताका यथा संभव उदयनैं होतां संता जो आत्माके निवृत्ति परिणाम होय है सो क्षायोपशमिक चारित्र है । अनन्तानुवंधी अर अप्रत्याख्यानी कषायको जो अष्टक ताका उदयाभाव रूप क्षयका

होपातैं तथा सत्तामें उपशम होवा तैं अर प्रत्याख्यानी कषायका उदयनैं होतां संतां तथा संज्वलन कषायका देशघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयनैं होतां संतां अर नो कषायको जो नवक ताका यथा संभव उदयनैं होतां संतां विरताविरत परिणाम जो है सो क्षायोपशमिक संयमासंयम है ॥७॥ वार्त्तिक—संज्ञित्वसम्यग्मिथ्यात्वयोगोपसंख्यानमिति चेन्न ज्ञानसम्यक्त्वलब्धिग्रहणेन गृहीतत्वात् ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें संज्ञी पणांको अर सम्यग्मिथ्यात्वको अर योगको नाम ग्रहण करवो योग्य है, क्योंकि ये भी निश्चय करि क्षायोपशमिक है यातैं? उत्तर, ऐसैं कहो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, ज्ञानका अर सम्यत्वका अर लब्धिका ग्रहण करनें करि उनका भी ग्रहणपणां है यातैं सो ऐसे हैं कि संज्ञी पणांतैं तो नो इन्द्रियावरणका क्षयोपशमकी अपेक्षावान पणांतैं मतिज्ञान करि ग्रहण कियो अर सम्यग्मिथ्यात्वनैं सम्यक्त्वका ग्रहण करवा करि ग्रहण कियो क्योंकि उभयात्मकको एकात्मक रूप परिग्रह करवातैं उदक मिश्रित दुग्धका नामके समान ग्रहण कियो जाननो अर योग जो है सो वीर्यलब्धिका ग्रहण करि ग्रहण कियो अथवा सूत्रमें च शब्दका ग्रहण करने करि समुच्चयको ग्रहण जानने योग्य है। प्रश्न, पंचेन्द्रिय पणांनैं समान होतां संतां नो इन्द्रियावरणको क्षयोपशम कोई जीवके भवके विषै है। अर कोई जीवके भवके विषैं नहीं है यो भेद काहेतैं है? उत्तर कहिये है कि संज्ञी जाति नाम कर्मका विशेषको जो उदय ताका बलका लाभनैं होतां संतां नो इन्द्रियावरणको क्षयोपशम होय है। अर वाका अभाव होते नहीं होय है। ऐसैं यो भेद है। याको दृष्टान्त कहै हैं कि एकेन्द्रिय जाति नाम कर्म आदिको जो उदय विशेष ताकी अपेक्षा करि एकेन्द्रिय आदिका क्षयोपशमका भेदके समान संज्ञी असंज्ञीपणांमें भेद है ॥८॥ अबै छठा सूत्रको उत्थानिका कहै हैं कि जो एकविंशति भेद रूप औदयिक भाव कहे ताके भेद अर नाम कहनेके अर्थि यो आरम्भ करिये है। सूत्रम्—

गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड् भेदाः ॥६॥

अर्थ—गति चार, कषाय चार, लिङ्ग तीन, मिथ्या दर्शन एक, अज्ञान एक, असंयत एक, असिद्ध एक, लेश्या छै ऐसैं एक विंशति भेद रूप औदयिक भाव हैं। यहां गत्यादिकनिकै इतरेतरयोगके विषैं द्वन्द्व समास होय है, अर चतुरादिकनिके द्वन्द्व गर्भो अन्य पदार्थ प्रधाना-वृत्ति होय है। प्रश्न, इहां एक शेष समास होना चाहिये? उत्तर, याको समाधान पूर्वै ज्ञाना-ज्ञानदर्शनलब्धय इत्यादिक सूत्रकी व्याख्यामें कह्यो सो ही जाननूं। वार्त्तिक—गति-नामकर्मोदयादात्मनस्तद्भावपरिणामाद्गतिरौदयिको ॥ १ ॥ अर्थ—जा कर्म करि आत्माकै नारक आदि भावकी प्राप्ति होय सो गति नाम कर्म चार प्रकारका है सो ऐसैं है कि नरक गति नाम, तिर्यंग्गति नाम, मनुष्य गति नाम, देव गति नाम तिनमैं नरक गति नाम कर्मका उदय करि नारक भाव होय है सो औदयिक है। ऐसैं ही तिर्यग्गति नाम कर्मका उदयतैं तिर्यग्भाव औदयिक है, अर मनुष्य गति नाम कर्मका उदयतैं मनुष्य भाव औदयिक है। अर देव गति नाम कर्मका उदयतैं देव भाव औदयिक है ॥१॥ वार्त्तिक--चारित्रमोहोदयात्क-लुषभावः कषाय औदयिकः ॥२॥ अर्थ—चारित्र मोहकी प्रकृति कषाय वेदनीय जो है ताका उदयतैं आत्माकै क्रोधादि रूप कलुषपणौं उत्पन्न भयो सो औदयिक है। इहां कषाय शब्दकी निरुक्ति ऐसैं है कि आत्मानं कषति हिनस्तीति कषायः याको अर्थ ऐसो जाननूं कि आत्मानैं कषैं कि हणैं सो कषाय है सो कषाय क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार प्रकार है तिनके भेद अनन्तानुबंधी अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी, संज्वलन विकल्प रूप हैं ॥२॥ वार्त्तिक—वेदोदया-पादितोभिलाषविशेषो लिंगम् ॥ ३ ॥ अर्थ—वेदका उदयतैं ग्रहण कियो जो अभिलाष

विशेष सो लिंग है, सो लिंग दोय प्रकार है तहां एक द्रव्य लिंग, दूसरो भावलिंग तहां जो नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो द्रव्य लिंग है सो तौ इहां नहीं अङ्गीकार कृत है, क्योंकि इहां आत्मपरिणामको प्रकरण है यातैं अर भावलिंग आत्माको परिणाम है सो स्त्री, पुरुष, नपुंसकनिकै परस्पर अभिलाप लक्षण है सो चारित्र मोहको विकल्प जो नो कषाय स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसक वेद रूप ताका उदयतैं होय है तातैं औदयिक है ॥३॥ वार्त्तिक—दर्शनमोहोदय।त्तत्वार्थाश्रद्धानपरिणामो मिथ्यादर्शनम् ॥४॥ अर्थ—तत्वार्थनिकी रुचि स्वभाव आत्मा है ताकै वा स्वभावका रोकवाको कारण जो दर्शन मोह है ताका उदयमैं निरूपण किया भी तत्वार्थनिकै विषैं श्रद्धान नहीं उत्पन्न होय। तातैं मिथ्यादर्शन औदयिक है ऐसैं कहिये है ॥४॥ वार्त्तिक—ज्ञानावरणोदयादज्ञानम् ॥५॥ अर्थ—जानन स्वभाव आत्माकै ज्ञानावरण कर्मका उदयनैं होतां संतां ज्ञान नहीं होय है। तातैं अज्ञान भाव औदयिक है। सो मेघ समूह करि ढक गया सूर्यका तेजकी अप्रगटताके समान है सो ऐसैं है कि जैसैं-एकेन्द्रिय जीवकै रसना, घ्राण, श्रोत्र, चक्षु इन चारो इन्द्रियनिका प्रतिनियत जो मति ज्ञानावरण ताका सर्व घाती स्पर्द्धकनिका उदयतैं रस गंध शब्द रूपको अज्ञान जो है सो औदयिक है। ऐसैं ही द्वे इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चतुरिन्द्रियवान जीवनकै विषैं बाकीकी इन्द्रियनका विषयको अज्ञान कहने योग्य है। अर शुक सारिकादिक विना और पंचेन्द्रिय तिर्यंचनिके विषैं अर कितनेक मनुष्यनिके विषैं अक्षर श्रुतावरणका सर्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयतैं अक्षर श्रुतकी रचनाका अभावतैं अक्षर श्रुताज्ञान औदयिक है अर नो इन्द्रियावरणका सर्वघाती स्पर्द्धकनिका उदयतैं हिताहितकी परीक्षा प्रति असामर्थ्यरूप असंज्ञिपणौं औदयिक है सो भी इहां अज्ञानभावकै विषैं ही अन्तरभाव होय है। ऐसैं ही अवधि मनः पर्याय केवल ज्ञानावरणका उदय तैं प्रत्येक अज्ञानभाव है सो भी औदयिक कहने योग्य है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक—चारित्रमोहोदयादनिवृत्तिपरिणामोऽसंयतः ॥ ६ ॥ अर्थ—चारित्र

मोहका सर्वघाती स्पर्द्धक जे हैं तिनका उदयतैं प्राणीनिका उपघात अर इन्द्रियनके विषय जे हैं तिनके विषैं द्वेषका अरि अभिलाषका निवृत्ति रूप परिणाम रहित असंयत भाव है सो औदयिक है ॥६॥ वार्त्तिक—कर्मोदयसामान्यापेक्षोऽसिद्धः ॥ ७ ॥ अर्थ—अनादि कर्म संबंधका संतान करि परतंत्र आत्मा जो है ताकै कर्मोदय सामान्य होतां संतां असिद्धपणांकी पर्याय है सो औदयिक है। बहुरि सो असिद्ध पणौं मिथ्यादृष्टी आदि सूक्ष्मसांपरायका अन्त पर्यंतके विषैं तौ कर्माष्टकका उदयकी अपेक्षा सहित है अर शांति भई है कषाय जाकै तथा क्षीण भई है कषाय जाकै ताकै सप्त कर्मका उदयकी अपेक्षा सहित है, अर संयोगकेवली के तथा अयोग, केवलीकै अघातिया कर्मनिका उदयकी अपेक्षा सहित है ॥७॥ वार्त्तिक—कषायोदयरंजितायोगप्रवृत्तिर्लेश्या ॥८॥ अर्थ—कषायनिका उदय करि रंजित योगनिकी प्रवृत्ति जो है सो लेश्या है, सो लेश्या दोय प्रकार है। तिन में एक द्रव्य लेश्या दूसरी भाव लेश्या है, तहां द्रव्य लेश्या तो पुद्गल विपाकी कर्मका उदय करि ग्रहण करी है सो इहां नहीं ग्रहण करिये है क्योंकि आत्माका भावनिको प्रकरण है यातैं अर भाव लेश्या जो है सो कषायका उदय करि रंजित योगनिकी प्रवृत्ति रूप है ऐसैं करि औदयकी है ऐसैं कहिये है। प्रश्न---आत्म प्रदेशनिका परिस्पंद रूप क्रिया है सो योग प्रवृत्ति है। अर जा योगनैं प्राप्त होय आत्माको परिस्पंद होय है वा योगकै योग्य वीर्यकी उपलब्धि जो है सो क्षायोपशमिकी है। ऐसैं व्याख्यान करी अर कषायनैं औदयिको व्याख्यान करी तातैं लेश्या अनर्थांतर भूत है ? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि कषाय कै अर लेश्या के तीव्र मंद रूप अवस्थाका भेदतैं अर्थांतर पणौं ही है। बहुरि वा लेश्या छै प्रकार है सो ऐसैं है कि कृष्ण लेश्या, नील लेश्या, कापोत लेश्या, तेजो लेश्या, पद्म लेश्या, शुक्ल लेश्या है अर वा लेश्याके आत्म परिणामको अशुद्धताका अधिक पणांकी अपेक्षा करि कृष्ण आदि शब्दको उपचार करिये है। प्रश्न---उप शांत कषायमें अर क्षीण कषायमें अर सयोगकेवलीमें शुक्ल

लेश्या है। ऐसैं आगम कहैं है तहां कषाय करि अनुरंजित पणांका अभावतैं लेश्याके औदयिक पणौं नहीं उत्पन्न होय है उत्तर, पूर्वभाव प्रज्ञापन नयकी अपेक्षा करि यो दोष नहीं है क्योंकि पूर्वकालमें जो कषाय करि अनुरंजित योगनिकी प्रवृत्ति हुती सो ही या है ऐसा उपचारतैं औदयिकी कहिये है। अर उन योगनका अभावतैं अयोगि केवली अलेश्य है ऐसैं निश्चय करिये हैं बहुरि इहां प्रश्न करै हैं कि जैसैं अज्ञान औदयिक है तैसैं ही अदर्शन भी दर्शनावरणका उदयतैं औदयिक है अर निद्रा निद्रादिक भी औदयिक है। अर वेदनाय कर्मका उदयतैं सुख दुःख भी औदयिक है। अर हास्य रति अरति आदि छे नो कषाय भी औदयिक है अर आयु कर्मका उदय तैं भव धारण भी औदयिक है, अर ऊंच नीच कर्मका उदयतैं उच्च नीच गोत्र परिणाम होय है, यातैं इनिका नहीं ग्रहण करवातैं औदयिक भावको लक्षण सूत्रकार कियो सो न्यून है? उत्तर, यहां आत्मपरिणामका अधिकृत पणांतैं शरीरादिकनिकै विषैं औदयिक पणानैं होतां संतां भी पुद्गल विपाकी पणांतैं तिनको असंग्रह है ऐसैं मानिये हैं प्रश्न, ऐसै है तोऊ जे जीव विपाकी जात्यादिक है तिनको तौ ग्रहण करनौं योग्य है। यातैं उत्तर कहै है। वार्तिक—मिथ्यादर्शने दर्शनावरोधः ॥९॥ अर्थ—सूत्रमें मिथ्यादर्शन पद कह्यो है ताके विषैं अदर्शनको अवरोध है कि अन्तर्भाव है अर निद्रा निद्रादिकनिको भी दर्शन सामान्यावरणपणांतैं वाहीमें अन्तर्भाव है। बहुरि प्रश्न, तत्वार्थनिको श्रद्धान जो है सो मिथ्यादर्शन है ऐसे कह्यो है। भावार्थ - वहां तो अश्रद्धाननैं अदर्शन कह्यो है अर इहां हम अदर्शन नहीं देखनकूं कहै है? उत्तर, तुमने कहा सो सत्य है तथापि सामान्य निर्देशके विषैं विशेषको अन्तर्भाव है यातैं श्रद्धान भी एक विशेष है। अर यो नहीं देखने रूप भी एक विशेष है। यातैं अदर्शन अप्रतिपत्ति मिथ्यादर्शन ये सामान्य अदर्शनका ही विशेष है ॥९॥ वार्तिक—लिंगग्रहणे हास्यरत्याद्यंतर्भावः सहचारित्वात् ॥१०॥ अर्थ—

लिंग शब्दका ग्रहणके विषैं हास्य, रति, अरति, आदिको अन्तरभाव है। प्रश्न, काहेत ? उत्तर, सहचारीपणातैं, पर्वतका ग्रहणकरि नारदका ग्रहणकी नाईं अथवा लिंग विना हास्यादिकनिकी उत्पत्ति नहीं है। यातैं भी लिंगके कहनेतैं हास्यादिकको ग्रहण होय है ॥१०॥ वार्त्तिक—गति-ग्रहणमघात्युपलक्षणम् ॥११॥ अर्थ—अघातिया कर्मनिका उदयतैं अंगीकार किया जे भाव तिन सवनिको गतिशब्दनिको ग्रहण जो है सो उपलक्षण है ताको दृष्टान्त ऐसौ है कि जैसैं काकनितैं घृतकी रक्षा करो। इहां काक शब्द जो है सो घृतके घातक सर्व जीवनिको उपलक्षण शब्द है तैसैं ही इहां गति शब्द सर्व अघातियानिको उपलक्षण जाननूं ता कारण करि नाम कर्मका विशेषका उदय करि ग्रहण किया जे जाति, शरीर, अंगोपांग, वर्ण, संस्थानादिक तथा वेदनीय आयु, नाम, गोत्रका उदय करि किया जो सुख दुःख आयु शरीर उच्च नीच गोत्र ते गति शब्दका ग्रहण करि ग्रहण करिये है। प्रश्न, गति चार प्रकार है इत्यादिक आनुपूर्वीका जनावने निमित्त यथाक्रम वचन या सूत्रमें कहनौं योग्य है ? उत्तर, नहीं कहने योग्य है क्योंकि यथाक्रम शब्द इहां अनुवर्त्तै कि पूर्व सूत्रमें यथाक्रम वचन है ताको इहां अनुवृत्ति है ॥११॥ अवैं सातमां सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं कि जो पारणामिक भाव तीन भेदरूप कह्यौ ताके जो विकल्प तिनका स्वरूप प्रतिपादनके अर्थि कहे है। सूत्रम्—

जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥

अर्थ—जीवत्व १ भव्यत्व २ अभव्यत्व ३ ये तीन भाव पारणामिक हैं ॥७॥ वार्त्तिक—अन्यद्रव्यासाधारणास्त्रयः पारणामिकाः ॥१॥ अर्थ—जीवत्व १ भव्यत्व २ अभव्यत्व ३ ये तीनभाव आत्माका अन्य द्रव्यतैं असाधारण पारिणामिक जाननैं योग्य है ॥१॥ प्रश्न, इनिकै पारिणामिक पणौं काहेतैं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—कर्मोदयक्षयक्षयोपशमानपेक्षत्वात् ॥२॥ अर्थ—कर्मका उदय क्षय क्षयोप-

शमकी अपेक्षा रहित पणातैं तीनूं भाव पारिणामिक हैं। भावार्थ—निश्चय करि या प्रकारको कर्म है ही नहीं जाका उदयतैं, क्षयतैं क्षयोपशमतैं जीव, भव्य, अभव्य कहिये है, तातैं अनादि कर्मके कर्मोदयादिकका अभावतैं स्वरूप संम्बन्धरूप परिणामका निमित्त पणातैं पारिणामिक है ऐसैं कहिये है। वार्त्तिक—आयुद्रव्यापेक्षं जीवत्वं न पारिणामिकमिति चेन्न पुद्गलद्रव्यसम्बन्धे सत्यन्य-द्रव्यसामर्थ्याभावात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, आयु द्रव्यकी अपेक्षा सहित जीवपणौं है। अर जीवपणौं पारिणामिक नहीं है। उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि पुद्गलका सम्बन्धनैं होतां संतां अन्य द्रव्यके सामर्थ्यको अभाव होय है यातैं। भावार्थ—इहां प्रश्न करै है कि आयु कर्मरूप द्रव्यका उदयतैं जीवै है सो जीव है, अर अनादि पारिणामिकपणांतैं जीव नहीं है। याको उत्तर कहै है कि तुमनैं कह्यो तैसैं नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, आयु कर्मरूप पुद्गल द्रव्यका सम्बन्धनैं होतां संतां ही जीवपणौं होय तौ और धर्मादिक द्रव्यनिकी सामर्थ्यको अभाव होय यातैं क्योंकि आयु जो है सो तौ पुद्गल द्रव्य है अर जो वा आयुका सम्बन्धतैं जीवपणौं है तो जीवतैं अन्य द्रव्य धर्मिक जे हैं तिनकै भी आयुका सम्बन्धतैं ही जीवपणौं होयगो। अर्थात् उनकै भी आयुकर्मतैं ही अपने स्वरूपमें स्थितिपणौं ठहरैगो सो है नहीं तातैं जीवपणौं पारिणामिक ही है ॥३॥ तथा और सुनूं कि वार्त्तिक—सिद्धस्याजीवत्वप्रसङ्गात् ॥४॥ अर्थ—जो आयुकर्मका सम्बन्धकी अपेक्षा सहित जीवपणां है सिद्धनिकै आयुकर्मका अभाव है। अजीवपणौं प्राप्त होय है। तातैं आयुकर्म अपेक्षा रहित पणांतैं जीवपणौं पारिणामिक है ॥४॥ वार्त्तिक—जीवे त्रिकालविषयविग्रहदर्शनादिति चेन्न रूढिशब्दस्य निष्पत्यर्थत्वात् ॥५॥ अर्थ—प्रश्न, जीवै है जीवतभयो जीवैगो ऐसैं त्रिकालविषय निरुक्ति देखिये है। तातैं प्राणधारणार्थपणातैं कर्मनिकी अपेक्षा पणांकरि सहित पारिणामिक पणौं है उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, काहेतैं उत्तर, रूढि शब्दकै स्वयं सिद्धपणौं है यातैं अर रूढिके शब्दके विषैं उपात्त काला क्रिया जो है सो व्युत्पत्यर्था ही है। अर्थात् अपनैं स्वाधीन धातुका अर्थकूं कहनें-

वारी नहीं है। याको दृष्टान्त ऐसो जानन् कि जैसें गच्छतीति गौ याको निरुक्त अर्थ ऐसो है कि गमन करै सो गौ तथापि रूढ़ितैं नहीं गमन करती भी सास्नादिमान पशु विशेष जो है ताहि जनावै ही है। अर गमन करती महिषी आदिसैं नहीं जनावै है तैसें ही जीव शब्द प्राणधारणादि अर्थको वाचक निरुक्त अर्थतैं है। तथापि रूढ़ितैं चेतनगुण युक्त पदार्थनैं ही जनावै है ऐसा जाननां ॥५॥ वार्त्तिक--चैतन्यमेव वा जीवशब्दस्यार्थः ॥६॥ अर्थ—अथवा जीव शब्द करि चैतन्य कहिये है सो अनादि द्रव्य भवनका निमित्त पणांतैं पारिणामिक है ॥६॥ वार्त्तिक—सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपरिणामेन भविष्यतीति भव्यः ॥७॥ अर्थ—भव्यादिकनिकै बाहुल्यता करि भविष्यत्कालका विषय पणांतैं जो आत्मा सम्यग्दर्शनादि पर्याय करि होयगो सो भव्य है। या प्रकार यो नाम पावै है ॥७॥ वार्त्तिक—तद्विपरीतोऽभव्यः ॥८॥ टीकार्थ—जो पूर्वोक्त सम्यग्दर्शनादि पर्याय करि नहीं होयगो सो अभव्य है ऐसैं कहिये है। प्रश्न, यो भेद कौनको कियो है? उत्तर, द्रव्यका स्वभावको कियो भेद है यातैं दोऊनिकै ही पारिणामिक पणौं है ॥८॥ इहां प्रश्नोत्तरूप वार्तिक-योऽनंतेनापि कालेन न सेत्स्यत्यसावभव्य एवेति चेन्न भव्यराश्यंतर्भावात्॥९॥ अर्थ---प्रश्न, जो अनन्त काल करि भी नहीं सिद्ध होयगो सो अभव्य तुल्यपणांतैं अभव्य ही है। अथवा सर्व भव्य सिद्ध होहिंगे ता पिछला कालमें जगत् भव्य शून्य होहिगो? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर--जे अनन्त कालमें भी सिद्ध नहीं होहिंगे तिनको भी भव्य राशिमें ही अन्तरभाव है यातैं याको दृष्टांत ऐसो, है कि जैसें कनक पाषाण अनंत काल करि भी कनक नहीं होयगो तोहू वाके कनक पाषाणरूप शक्तिका योगतैं अंध पाषाणपणौं नहीं है। अथवा जो आगामी काल अनंत कालके विषैं भी नहीं आवेगो तौ हू ताके आगामी पणौं नहीं नष्ट होय है। तैसें ही भव्यके भी स्व शक्तिका योगतैं भव्यपणौं नही प्रगट होत संतैं भी भव्यपणांकी हानि नहीं है ॥९॥ वार्त्तिक---भावस्यैकत्वनिर्देशोयुक्त इति चेन्न द्रव्यभेदाद्भावभेदसिद्धेः ॥१०॥

अर्थ-प्रश्न, जीव भव्य अभव्य इहां द्वंद्व समास करतां संतां तिनका भावनैं कहनेकी इच्छाके विषैं भाव शब्दकै एक वचन कहनौ योग्य हैं क्योंकि जीव भव्य अभव्य जे हैं तिनको भाव है तातैं जीव भव्याभव्यत्वं ऐसैं कहनौ योग्य है। उत्तर--ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, द्रव्यका भेदतैं भावके भेदपणांकी सिद्धि है यातैं भाव एक पणां ही करि नहीं कहने योग्य है या प्रकार नियम है। तातैं द्रव्य भेदतैं भावनिमें भेद होत संतैं बहुवचन पणांको उपदेश योग्य है क्योंकि जीव भव्य अभव्य जे हैं तिनके भाव हैं। तातैं जीव भव्याभव्यत्वानि ऐसैं ही योग्य है। बहुरि भावशब्दको प्रत्येक अभिसंबंध होय है तातैं जीवपणौं भव्यपणौं अभव्यपणौं जो है सो पारिणामिक भाव है ॥१०॥ वार्त्तिक---द्वितीयगुणग्रहणमार्षोक्तत्वादितिचेन्न तस्य नयापेक्षत्वात् ॥११॥ अर्थ--प्रश्न, इहां ऐसैं मान्य है कि या सूत्रमें द्वितीय गुणग्रहण करने योग्य हैं ? उत्तर---सो द्वितीय गुण कौनसो हैं, प्रश्न, सासादन सम्यग्दृष्टी गुणस्थान है सो भी जीवको साधारण पारिणामिक भाव है। अर ऐसैं ही आर्ष ग्रंथनिमें कह्यो है कि सासादन सम्यग्दृष्टी यो कौनसो भाव है। ऐसैं प्रश्न करतां संतां कहै है कि पारिणामिक भाव है। उत्तर, पारिणामिक भावनिकी गणनामें सासादन गुणस्थान नहीं कर्तव्य है। प्रश्न, काहेतैं। उत्तर, आर्षोक्त बचन कै नयकी अपेक्षा पणौं है यातैं सो ऐसैं जाननो कि सासादन भाव मिथ्यात्व कर्मको उदय क्षय उपशम जो है तानैं अपेक्षा नहीं करै है। या कारणतैं तो आर्ष ग्रंथनिमें याकू पारिणामिक कह्यो है। प्रश्न, सासादन किस कूं कहो हो ? उत्तर, आसादना नाम विराधनाका है तातैं विराधना सहित जो परिणामकूं कहो हो। उत्तर, आहै सो सासादन है सो अनंतानुबंधी कषायनिमें सूं कोई एकका उदयतैं सम्यक्त्वतैं चिगि मिथ्यात्वके सन्मुख भयौ ताकै यावत् मिथ्यात्व नहीं प्राप्त भयो ताकै तावत् मध्यकाल सासादन परिणाम रहै हैं। प्रश्न, ऐसैं हैं तो ये परिणाम अनंतानुबंधाके उदयतैं भये इनकूं पारिणामिक आर्ष ग्रंथनिमें कैसैं कहे ? उत्तर, अनंतानुबंधीको कार्य

तौ मिथ्यात्व है, सासादन तौ प्रासंगिक है। अर जो सासादन ही अनंतानुवंधीको कार्य मानिये तौ मिथ्यात्वको कारण अन्य ठहरै है सो नहीं। या नयतैं सासादननैं पारिणामिक आर्षमें कह्यो है। याको दृष्टान्त ऐसो है कि जैसैं वृत्ततैं फलका टूटना रूप कारणको फल भूमिमैं फलको प्राप्त होनौ है अर मध्य मैं गमन रूप क्रिया है सो प्रासंगिक है तैसैं ही सासादन भी प्रासंगिक है तातैं कर्मोदयाद्यपेक्ष नहीं है पारिणामिक ही है। अर यहां सासादन औदयिक है ऐसैं ग्रहण करिये है। क्योंकि अनंतानुवंधी कषायका उदयतैं सासादनकी रचना होय है या नयतैं औदयिक है ॥११॥ प्रश्न, सूत्रमैं च शब्द कहा प्रयोजन निमित्त है? उत्तररूप वार्तिक—अस्तित्वान्यत्व कर्तृत्व भो क्तृत्व पर्यायवत्वासर्वगतत्वानादिसंतितिवंधनवद्धत्वप्रदेशवत्वारूपत्वनित्यत्वादिसमुच्चयार्थश्च शब्दः ॥१२॥ अर्थ-अस्तित्व, अन्यत्व कर्त्तृत्व, भोक्तृत्व, पर्यायवत्व, असर्वगत्व अनादिसंततिवंधन वंधत्व, प्रदेशत्व, अरूपत्व, नित्यत्व आदि भाव भी पारिणामिक हैं तिन सबनिका समुच्चयकै अथ च शब्द सूत्रमैं है ॥१२॥ प्रश्न—जो ये अस्तित्वादिक भाव भी पारिणामिक है तौ इनको सूत्रकै विषैं ग्रहण काहेतैं नहीं कियो? उत्तररूप वार्तिक—अन्यद्रव्यसाधारणत्वादसूत्रिताः ॥१३॥ अर्थ—अस्तित्वादिक धर्म निश्चय करि और द्रव्यनि मैं साधारण है तातैं वै सूत्रमैं नहीं कह्या है सो ऐसैं जानना कि प्रथम तौ अस्तित्व साधारण है क्योंकि याकै षट् द्रव्य विषप पणौं है यातै। अर वा अस्तित्वकै कर्मका उदय, क्षय, क्षयोपशमकी अपेक्षा रहित पणौं है यातै पारिणामिक है वहुरि अन्यत्व भी साधारण है क्योंकि सर्व द्रव्यनिकै परस्पर अन्य पणौं है यातैं अर वो अन्यत्व भी कर्मका उदयादिककी अपेक्षाका अभाव तैं पारिणामिक है। वहुरि कर्तृत्व भी साधारण है। क्योंकि स्वाभाविक अपनी क्रियाकी उत्पत्तिकै विषैं सर्व द्रव्यनिकै स्वतंत्र पणौं है यातै। प्रश्न—क्रिया परिणाम युक्त जीव पुद्गल जे हैं तिनकै तौ कर्त्तापणौं कहनौं योग्य है परंतु धर्मादिक द्रव्यनि कैसैं कहिये है? उत्तर—धर्मादिकनिकै भी अपना अस्तित्व

आदि क्रिया विषय कर्तृत्वपणौं है अर वो कर्तृत्वपणौं कर्मका उदयादिककी अपेक्षाका अभाव-
तैं पारिणामिक है इहां और प्रश्न करै है कि योग है नाम जाको ऐसा आत्म प्रदेशनिका परि-
स्पंदकै जो कर्त्तापणौं है सो साधारण नहीं है। या कारणतैं जीवकै असाधारण भावनिके विषैं
योग गणना करने योग्य है। उत्तर, ऐसैं नहीं है, क्योंकि योग कै क्षायोपशमनिमित्त पणौं है यातैं
असाधारण भावनिमैं गणना करनो योग्य नहीं है अर जो या जीवकै पुण्य पापको कर्त्ता पणौं है सो
अन्य द्रव्यनिकै मध्य जीव द्रव्यकै ही असाधारण रूप होत संतै भी परिणामिक पणौं नहीं प्रश्न,
काहेतैं उत्तर, या कर्त्तापणाकै भी कर्मनिको उदय क्षयोपशम निमित्तपणौं है यातैं। प्रश्न, मिथ्या
दर्शन तौ निश्चय करि दर्शन मोहको उदय है निमित्त जिननैं ऐसैं है। अर योग जो है सो क्षायो-
पशमिक है निमित्त जानैं ऐसो है या कारणतैं अन्य द्रव्यनितैं असाधारण अनादि पारिणामिक
चैतन्य जो है। ताकी निकटतानैं होतां संतां पुण्य पापको कर्तापणौं होय है यातैं कर्तापणौं पारि-
णामिक है। उत्तर, ऐसैं नहीं है,क्योंकि ऐसैं भये सर्व कालमैं कर्तापणांको प्रसङ्ग आवै है कि मुक्ति
जीवनकै भी चैतन्य है तातैं पुण्य पापको कर्तापणौं होय है ऐसैं ठहरे, अर संसारीनिकै तीव्र
मंदादि भेद रहित पुण्य पाप ठहरै। क्योंकि चैतन्य कारणको अभेद है यातैं। भावार्थ—चैतन्य-
की निकटतातैं पुण्य पापको कर्तापणौं पारिणामिक मानिये तो चैतन्य सर्व कालमैं समान है
तातैं सिद्धनिकै भी पुण्य पापको कर्तापणौं ठहरै। अर सर्व जीवनकै पुण्य पाप समान ठहरैं तातैं
चैतन्यकी निकटतानैं होतां संतां भी कर्तापणौं पारिणामिक नहीं है। बहुरि भोक्तापणौं भी सा-
धारण ही है। प्रश्न, काहेतैं भोक्तापणांका लक्षणकी ऐसैं उत्पत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि वीर्यका
प्रकर्ष तैं पर द्रव्यका वीर्यका ग्रहण कर वाकी सामर्थ्य जो है सो भोक्तापणांको लक्षण है। ताको
उदाहरण ऐसैं है कि जैसैं आत्मा आहारादिक पर द्रव्यनिका वीर्यनैं अपनो करवातैं भोक्ता है।
तैसैं अचेतन विष जो है ताकै वीर्य प्रकर्षतैं कोद्रव द्रव्य आदिकका सार संग्रह करवातैं भोक्ता

पणों है। तथा लवण आदि द्रव्यनिकै वीर्यका प्रकर्षतैं काष्टादिक द्रव्यनिकूं लवण करवातैं भोक्तापणौं है सो कर्मका उदय आदि अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। बहुरि जो आत्माकै शुभाशुभ कर्मका फलको उपभोक्तापणौं है सो साधारण भी नहीं है। अर पारिणामिक भी नहीं है क्योंकि वा उपभोक्तापणांकै क्षयोपशम निमित्त पणौं है। यातैं सो ऐसैं हैं कि वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं अर आंगोपांगनामा नामकर्मका लाभका प्राप्त होवातैं आत्माके शुभाशुभ कर्म फलका उपभोगके विषैं सामर्थ्य प्रगट होय है। प्रश्न, आहार आदिका वीर्यको अङ्गीकार करण लक्षण भोग है सो तो भोगांतरायका क्षयोपशमतैं है। अर ग्रहण कियाको जीर्ण होनो सो है तो वीर्यान्तरायका क्षयोपशमतैं है। परन्तु कर्मका सम्बन्ध विना विषादिक अचेतन द्रव्यनिकै भोक्तापणों कैसैं है? उत्तर, ऐसैं कहो तो सुनूं कि द्रव्यनिकै प्रति नियत कहिये अपने अपने योग्य नियमरूप शक्ति पणांतैं भास्करका प्रतापकै समान भोक्ता पणौं है। बहुरि पर्यायवान पणौं भी साधारण ही है, क्योंकि सर्व द्रव्यनिकै अपने अपने योग्य नियमरूप पर्यायनिकी उत्पत्ति है। यातैं कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं वो पर्यायवान पणौं पारिणामिक है। बहुरि असर्वगत पणों भी साधारण है क्योंकि परमाणु आदिकै तो अव्यापक पणौं है यातैं। अर धर्मास्तिकायादिकनिकैं प्रमाणीक असंख्यात प्रदेश पणौंवान पणौं है यातैं। भावार्थ—सर्व गत सर्वव्यापी कूं कहिये है अर धर्मास्तिकायादिक प्रमाणीक असंख्यात प्रदेशी है, यातैं सर्व लोकमैं व्यापी है। परन्तु आकाशादिकनिमैं नहीं व्यापै है। तातैं सर्वगत नहीं है। प्रश्न, असंख्यातमें भी प्रमानीक कैसैं कहो हो? उत्तर, इहां प्रमाणीक कहना केवल ज्ञान अपेक्षा है, छद्मस्थ ज्ञान अपेक्षा नहीं है। अर यो असर्वगत पणौं कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। अर जो आत्माकै कर्म करि ग्रहण किया शरीरकै समान होवा पणौं जो है सो असाधारण होतैं संतैं भी पारिणामिक नहीं है। क्योंकि यो शरीर प्रमाण होनो कर्म निमित्त पणांतैं हैं यातैं। बहुरि अनादि संतति बंधन बद्धपना भी

साधारण है। प्रश्न—काहेतैं उत्तर, सर्व द्रव्यनिकै अपना संतानका बंधन करि बद्ध पणां प्रति अना-
दिपणौं है यातैं सर्वही द्रव्य जीव, धर्म,अधर्म,आकाश, काल पुद्गल, जे हैं ते अपने अपने योग्य पारि-
णामिक चैतन्योपयोग स्थिति अवकाशदान वर्त्तना परिणाम वर्ण रस गंध स्पर्श आदि पर्यायका संतान
रूप बन्धन करि बद्ध है। भावार्थ—जीवकै चैतन्योपयोगपणौं अर आकाशकै अवकाश दानपणौं
अर कालकै वर्तना परिणाम पणौं अर पुद्गलकै वर्ण, रस, गंध, स्पर्शवान पणौं अनादि संतानरूप
वन्धन करि बद्ध है सो भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। अर जो याकै
अनादि कर्म संतति बंधन करि बद्ध पणौं है सो असाधारण होत संतैं भी पारिणामिक नहीं है।
क्योंकि यो कर्म बंधनबद्ध पणौं कर्मको उदय है निमित्त जानैं ऐसो है सो आगानैं सूत्रकार ऐसैं
कहेंगे कि अनादिसंबंधे च सर्वस्य। भावार्थ—तैजस अर कार्माण ये दोऊ शरीर सर्व जीवनिकै
अनादितैं संबंध रूप है। बहुरि प्रदेशवानपणौं भी साधारण है क्योंकि सर्व द्रव्यनिकै विषैं कोई
कै तो संख्यात प्रदेशवान पणौं है। कोईकै असंख्यात प्रदेशवान पणौं कोईकै अनंत प्रदेशवान पणौं
है यातैं अर यो प्रदेशवान पणौं भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारिणामिक है। बहुरि
अरूपी पणौं भी साधारण ही है क्योंकि जीव, धर्म,अधर्म, काल, आकाश जे हैं तिनकै रूप योगको
अभाव है। अर वो अरूपी पणौं भी कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावसैं पारिणामिक है। बहुरि
नित्यपणौं भी साधारण ही है क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका उपदेशतैं सर्व द्रव्यनिकै नाशका अर
उत्पादका उपयोगको अभाव है यातैं अर वो नित्यपणौं कर्मोदयादिककी अपेक्षाका अभावतैं पारि-
णामिक है बहुरि ऊर्ध्वगति पणौं भी साधारण ही कर्मोदयादिककी अपेक्षाकाअभावतैं पारिणामिक
है क्योंकि अग्न्यादिकनिकै ऊर्ध्वगति पारिणामिक है अर वो ऊर्ध्वगति पणौं भी साधारण
है। ऐसैं ही और भी आत्माकै साधारण पारिणामिक गुण जोड़ने योग्य है ॥१३॥ इहां प्रश्नोत्तर
रूप वार्त्तिक—अनंतरसूत्रनिर्दिष्टोपसंग्रहार्थश्च शब्द इति चेन्नानिष्टत्वात् ॥ १४ ॥ अर्थ— प्रश्न,

पिछला सूत्रमें कहे गत्यादिकनिका उपसंग्रहके अर्थ नहीं है। उत्तर, ऐसें नहीं है, क्योंकि पारिणामिक लक्षणका अभावतें। भावार्थ---गत्यादिक औदयिक है पारिणामिक नहीं है यातें ॥१४॥ वार्त्तिक--त्रिभेदपारिणामिकभावप्रतिज्ञानाच्च ॥१५॥ अर्थ—वहुरि औपशमकादिक भावनिकी संख्याका जनावनेवारा सूत्रके विषें तीन भेद रूप ही पारिणामिक है। या प्रकार प्रतिज्ञा कियो है यातें तातें गत्यादिकनिका संग्रहके अर्थ च शब्द नहीं है ॥१५॥ वार्त्तिक---गत्यादीनामुभयवत्वं क्षायोपशमिकभाववदिति चेन्नान्वर्थसंज्ञाकरणात् ॥१६॥ अर्थ--प्रश्न, जेसें क्षायोपशमिक भावके क्षय अर उपशम स्वरूप पणांतें उभयवान पणों हैं तैसें गत्यादिकनिके उभयवानपणांतें औदयिक पारिणामिक पणों है। ऐसें माननेतें औदयिक भाव एक विंशति भेद रूप है। अर पारणामिक तीन भेद रूप है सो भी सिद्ध रहे ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, पारिणामिक भावके सान्वर्थक संज्ञा करी है। यातें सो ऐसें हैं कि परिणाम जो स्वभाव सो है प्रयोजन जाको सो पारिणामिक है ऐसै सार्थक संज्ञा है। अर यो परिणाम स्वभाव गत्यादिकनिमें नहीं विद्यमान है क्योंकि गत्यादिकनिके कर्मोदय निमित्त पणौं है यातें ॥१६॥ वहुरि सुनूं वार्त्तिक—तथानभिधानात् ॥ १७ ॥ अर्थ— जेसें उभयवानपणांतें ज्ञानादिक क्षायोपशमिक है ऐसें कहिये है तैसें गत्यादिक औदयिक पारिणामिक है। ऐसें भी कहना सो नहीं कहिये है अर तैसें नहीं कहनेतें क्षयोपशमिकके समान गत्यादिक उभयवान नहीं है ॥१७॥ वहुरि और सुनूं कि वार्त्तिक—अनिर्मोक्षप्रसङ्गात् ॥१८॥ अर्थ—गत्यादिकनिकेउभयवानपणांतें पारिणामिकपणां होतां संतां निरन्तर अवस्थानतें मोक्ष रहितपणांको प्रसंग आवे है यातें सिद्ध या भाई कि च शब्द अास्तत्वादिकनिका समुच्चयके अर्थि ही है ॥१८॥ वार्त्तिक—आदिग्रहणमात्रन्याय्यमिति चेन्न त्रिविधपारणामिकभावप्रतिज्ञाहानेः ॥१९॥ अर्थ--ऐसें है तो जीवभव्याभयत्वानि च या सूत्रमें च शब्दकी येवज आदि शब्द ग्रहण करनौ न्याय्य है क्योंकि अस्तित्वादिकनिकै भी इष्ट

पणौं ह यातैं। उत्तर, सो नहीं न्याय है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, त्रिविध पारिणामिकभावकी प्रतिज्ञा पूर्व सूत्रमें करी है ताकी हानि होय है यातैं, क्योंकि आदि शब्दका ग्रहणनैं करतां संतां निश्चय करि 'जीवपणां, भव्यपणां, अभव्यपणां, अस्तित्वपणां आदिकै पारिणामिकभाव पणांकी प्राप्ति होवातैं पारिणामिकभाव तीन प्रकार ही है। ऐसी जो प्रतिज्ञा पूर्व सूत्रमें करी हुती ताकी हानि होय यातैं ॥१९॥ वार्तिक— समुच्चयार्थेऽपि च शब्दे तुल्यमितिचेन्न प्रधानापेक्षत्वात् ॥२०॥ अर्थ-प्रश्न, ऐसैं है तो अस्तित्वादिकनिका समुच्चयकै अर्थ च शब्दनैं होतां संतां अस्तित्वादिकनिकै पारिणामिक पणांकरि समुच्चय होवातैं तीन भेदका प्रतिज्ञाकी हानि तौ तुल्य ही है? उत्तर, तुल्य नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, प्रधान पणांकी अपेक्षा पणांतैं क्योंकि कंठतैं तीन प्रकार ही कहे हैं, तौं अपेक्षा त्रिभेदकी प्रतिज्ञा है। ऐसैं विरोध नहीं है क्योंकि च शब्दकरि अस्तित्वादिकनिनैं साधारणपणांतैं द्योतित किये हैं यातैं तिनकै गौणभाव है। अर आदि शब्दकरि अस्तित्वादिकनिकौ अंगीकार करतां संतां अस्तित्वादिकनिकै प्रधानभाव प्रकट होय यातैं च शब्दकरि अस्तित्वादिकनिको द्योतित करतां संता विरोध नहीं है, अर जीवत्वादिकनिकै उपलक्षणार्थपणांतैं अस्तित्वादिकनिकै प्रधानता है। अर तद्गुणसंविज्ञान नामा बहुव्रीही समासनैं होतां संतां दोऊनिकै प्रधानता आवै तातैं आदि शब्द सूत्रमें कहनौं योग्य नहीं ॥२०॥ वार्त्तिक—सान्निपातिकभावोपसंख्यानमितिचेन्नाभावात् ॥२१॥ अर्थ—प्रश्न, सान्निपातिक भाव आर्ष ग्रन्थनिमें कह्यो है सो इहां कहनौं योग्य है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, प्रथम तौ सान्निपातिकभावको अभाव है यातैं क्योंकि छठो भाव है ही नहीं ॥२१॥ वार्त्तिक—मिश्रशब्देनाक्षिप्तत्वाच्च ॥२२॥ अर्थ—अर जो यो सान्निपातिक भाव विद्यमान है तौ हू मिश्रशब्दकरि यो आगयो। प्रश्न, मिश्र शब्द क्षायोपशमिकका संग्रहकै अर्थ है सान्निपातिकका ग्रहणकै अर्थि नहीं है ऐसैं कहिये है ॥२२॥ वार्त्तिक—च शब्दवचनात् ॥२३॥ अर्थ—

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौ च। ऐसैं सिद्ध होत संतैं जो मिश्रशब्दका समीपकै विषैं च शब्द कियो है ता करि जानिये है कि मिश्र शब्द करि दोऊ कहिये है। प्रश्न, मिश्रश्च यो कहा कहै है? उत्तर, क्षायोपशमिक भाव है अर सान्निपातिक भाव है। ऐसैं कहै है। भावार्थ--औपशमिक अर क्षायिक दोऊ शब्दनिकैं निकटमें मिश्र शब्द कियो है। तातैं तो क्षायोपशमिककूं जनाया है। अर मिश्र शब्दके निकट च शब्द है तातैं सान्निपातिककूं जनाया है। प्रश्न, यो अयोग्य वर्त्तै है। उत्तर, यामैं कहा अयोग्य है, प्रश्न, जो सान्निपातिक भाव है तो तुमनें अभावात् वार्त्तिक कह्यो है। तातैं विरोधनैं प्राप्त होय है। वहुरि नहीं है तो आर्ष ग्रन्थनिमें सान्निपातिकभाव कैसैं कह्यो है अर मिश्रशब्द करि कौनको आक्षेप होय है? उत्तर, यो दोष नहीं है, क्योंकि सान्निपातिकभाव नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, उन-पंच भावनितैं अन्यभावको अभाव है यातैं ऐसैं कहिये है। अर संयोग भंगकी अपेक्षा करि सान्निपातिकभाव है या कारणतैं आर्ष वचनमें है अर उन पंच भावनितैं अन्यभाव छठो नहीं है ऐसा अभाव पक्षके विषैं तो आदि सूत्रके विषैं च शब्द है सो पूर्वोक्त भावनिका अनुकर्षणकै अर्थ है। अर भावपक्षमैं सान्निपातिक भावका प्रतिपादनकै अर्थ च शब्द है सो पूर्वोक्तका अनु-कर्षणकी अपेक्षा करि जानवे योग्य है। प्रश्न, आर्पोक्त सान्निपातिकभाव कितना प्रकार है। इहां उत्तर कहिये है ॥२३॥ वार्त्तिक—षड्विंशतिविधः षड्त्रिंशद्विधः एकचत्वारिंशद्विध इत्येव-मादिरागमे उक्तः ॥२४॥ अर्थ—छव्वीस प्रकार तथा छत्तीस प्रकार तथा इकतालीस प्रकार है इत्यादिक आगमके विषैं कहे है इहां उक्तं च गाथा—

दुग तिग चदु पंचे वय संजोगा होंति सन्निवादेसु।

दस दस पंचय एक्कय भावा छव्वीस पिंडेण ॥१॥

अथ—दोय भावनिका संयोग करि तौ दश भेद होय है अर तीन भावनिका संयोग करि भी दश ही होय है अर इनका जोड़ कर छब्बीस भेद होय है। सो ही दिखाइये है कि दोय भावनिका संयोग करि दश भाव होय है तहां औदयिकनैं ग्रहण करि औपशमिकादि चतुष्टयका एक एकका त्याग करि प्रथमके विषैं दोय भेदका संयोगनैं होतां संतां चार भंग होय है तहां एक तौ औदयिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत क्रोध है अर दूसरो औदयिक चायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्यणी कषाय है अर तीसरो औदयिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य पंचेन्द्रिय है अर चौथो औदयिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य जीव है। बहुरि दूसरा द्विभाव संयोगके विषैं औदयिकनैं छोड़ि औपशमिकका ग्रहण करवातैं चायिकादि भावत्रयका एक एकका त्याग करि तीन भंग होय है, तहां एक तौ औपशमिक चायिक सान्निपातिक जीव नामा उपशान्त लोभ चीण दर्शन मोहवान पणातैं चायिक सम्यग्दृष्टी है अर दूसरो औपशमिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांत मान आभिनिबोधक ज्ञानी है, अर तीसरो औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांत मायावान भव्य है। बहुरि तृतीय द्विभाव संयोगकै विषैं औपशमिकनैं छोड़ि चायिकका ग्रहण करवातैं अर चायोपशमिक पारिणामिकका एक एकका त्यागतैं दोय भंग होय है, तहां एक तौ चायिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा चायिक सम्यग्दृष्टी श्रुतज्ञानी है अर दूसरो चायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा चीण कषायी भव्य है। बहुरि चौथा द्विभावका संयोगकै विषैं चायिकका परित्यागतैं एक भंग होय है सो चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा अवधिज्ञानी जीव है सो ए द्विभाव संयोग भंग एकत्र किया संता दश होय है। बहुरि त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिक औपशमिकनैं ग्रहण करि चायिकादि भावत्रयका एक एक भावका ग्रहण करवातैं तीन

भाव होय है तहां एक तौ औदयिक औपशमिक चायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत मोह चायिक सम्यग्दृष्टी है, अर दूसरो औदयिक औपशमिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य उपशांत क्रोध बचन योगी है, अर तीसरो औदयिक औपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांतमानी जीव है। बहुरि द्वितीय त्रिभाग संयोगके विषैं औपशमिकनैं छोड़ि औदयिक चायिकनैं ग्रहण करि चायोपशमिक पारिणामिकका एक एकका ग्रहणतैं दोय भंग होय है, तहां एक तौ औदयिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य चीण कशायी श्रुतज्ञानी है अर दूसरो औदयिक चायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य चीण दर्शन मोही जीव है। बहुरि तृतीय त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिकका ग्रहण करवातैं औपशमिक चायिकका त्यागतैं एक भंग होय है सो औदयिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य मनो योगी जीव है। बहुरि चतुर्थ त्रिभाव संयोगकै विषैं औदयिकनैं छोड़ि करि औपशमिकादि भाव चतुष्टयका एक एकका त्यागनैं करतां संतां चार भंग होय है तहां एक तो औपशमिक चायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा उपशांतमान चीण दर्शन मोह काय योगी है, अर दूसरो औपशमिक चायिक पारिणामिक सान्निपातिकजीव भाव नामा उपशांत वेदी चायिक सम्यग्दृष्टी भव्य है, अर तीसरो औपशमिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांतमान मतिज्ञानी जीव है अर चौथो चायिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावभावनामा चीण मोह पंचेंद्रिय भव्य है। ये त्रिभाव संयोगरूप भंग कह्या ते जोड़रूप किया संतां दश प्रकार है। बहुरि चतुर्थ भाव संयोग करि औदयिकादिकनिकै विषैं एक एकका त्यागतैं पंच भंग होय है तहां एक तौ औपशमिक चायिक चायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत लोभी चीण दर्शन मोही पंचेंद्रिय जीव हैं, अर दूसरो

औदयिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्षीण कषायी मति ज्ञानी भव्य है अर तीसरो औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत वेदी श्रुत ज्ञानी जीव है अर चौथो औदयिक औपशमिक क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत रागी क्षीण दर्शन मोही जीव है अर पांचमूं औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत मोही क्षायिक सम्यग्दृष्टी अवधिज्ञानी है। बहुरि पंच भाव संयोग एक होय है सो औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य उपशांत मोही क्षायिक सम्यग्दृष्टी पंचेंद्रिय जीव है। ऐसैं छब्वीस प्रकार सान्निपातिक भाव है। अवै छत्तीस प्रकार कहिये है सो ऐसैं दोय औदयिक सान्निपातिकतैं अर औदयिककै औपशमिकादि चार जे हैं तिन करि एक एक का सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां प्रथम तौ औदयिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्रोधी है, अर दूसरो औदयिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य उपशांत क्रोधी है अर तीसरो औदयिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा मनुष्य क्षीण कषायी है अर चौथो औदयिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्रोधी मतिज्ञानी है अर पांचमां औदयिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा मनुष्य भव्य है अर दोय औपशमिकका सन्निपाततैं अर औपशमिककै औदयिकादि करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां एक तौ औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशम सम्यग्दृष्टी उपशांत कषायी है अर दूसरो औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत कषायी मनुष्य है अर तीसरो औपशमिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत क्रोधी क्षायिक सम्यग्दृष्टी है अर चौथो औपशमिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत कषायी अवधि ज्ञानी है अर पांचमो औपशमिक पारिणामिक

सान्निपातिक जीव भावनामा उपशांत दर्शन मोही जीव है अर दोय क्षायिकका सन्निपाततैं अर क्षायिककै औदयिकादिक चार जे हैं तिन करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है, तहां एक तौ क्षायिक सान्निपातिक जीव भाव नामा क्षायिक सम्यग्दृष्टी क्षीण कषायी है अर दूसरो क्षायिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण कषायी मनुष्य है अर तीसरो क्षायिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षायिक सम्यग्दृष्टी उपशांत वेद है अर चौथो क्षायिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण कषायी मतिज्ञानी है अर पांचमूं क्षायिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा क्षीण मोही भव्य है। बहुरि दोय क्षायोपशमिकका सन्निपाततैं अर क्षायोपशमिककै औदयिकादिक चारनि करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है तहां एक तो क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती अवधिज्ञानी है अर दूसरो क्षायोपशमिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती उपशांत कषायी है अर चौथो क्षायोपशमिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयतासंयत क्षायिक सम्यग्दृष्टी है अर पांचमूं क्षायोपशमिक पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा अप्रमत्त संयमी जीव है। बहुरि दोय पारिणामिकका सन्निपाततैं अर पारिणामिककै औदयिकादि चार करि एक एकका सन्निपाततैं पांच भंग होय है, तहां एक तौ पारिणामिक, पारिणामिक सान्निपातिक जीव भावनामा जीव भव्य है अर दूसरो पारिणामिक औदयिक सान्निपातिक जीव भावनामा जीव क्रोधी है अर तीसरो पारिणामिक औपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा भव्य उपशांत कषायो है अर चौथो पारिणामिक क्षायिक सान्निपातिक जीव भावनामा भव्य क्षीण कषायी है अर पांचमूं पारिणामिक क्षायोपशमिक सान्निपातिक जीव भावनामा संयती है ऐसैं ये द्विभाव संयोगी जे हैं ते पच्चीस है। बहुरि पूर्वोक्त त्रिभाव संयोगी भंग दश हैं अर पूर्वोक्त पंच भाव संयोग करि एक भंग है। ऐसैं सर्व एकत्र किया छत्तीस भंग होय है अर पूर्वैं उत्पन्न भये

चतुर्भाव संयोगतैं पांच भंग है तिनका मिलापतैं ये ही छत्तीस भंग इकतालीस भंग रूप होय है ऐसैं इनिनैं आदि लेय और भी भंग आगमका अविरोध करि जानवे योग्य है ॥२४॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—औपशमिकाद्यात्मतत्त्वानुपपत्तिरतद्भावादितिचेन्न तत्परिणामात् ॥२५॥ अर्थ—प्रश्न, जो वै औपशमिकादिक भाव कह्या तिनकै आत्म तत्व नाम नहीं उपजै है ? उत्तर, काहेतैं ? प्रश्न, वै आत्माके भाव नहीं है यातैं ? क्योंकि वै सर्व ही कर्मका बंध उदय निर्जराकी अपेक्षा पणांतैं पौद्गलिक है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, औपशमिकादि रूप आत्माका परिणमनतैं। भावार्थ—पुद्गल द्रव्यका शक्ति विशेष करि वशीकृत आत्मा वा पुद्गल द्रव्य करि रंजित हुवो संतो जा समवाय निमित्ततैं जा जा परिणामनैं अंगीकार करै है ता समय तन्मय पणांतैं वा लक्षण रूप ही होय है। इहां उक्तं च गाथा—

परिणमदि जेन दव्वं तक्कालं तम्मयत्ति पण्णत्तं।
तह्माधम्म परिणदो आदा धम्मो मुणेयव्वो ॥१॥

संस्कृत—परिणमतियेनद्रव्यं तत्कालं तन्मय अस्ति प्रज्ञप्तं। तस्मात् धर्म परिणत आत्मा धर्म्म ज्ञातव्यः ॥१॥ अर्थ—जा समय द्रव्य जीं भाव करि परिणमें है ता समय तन्मय कह्यो है, तातैं धर्म्म करि परिणम्यूं जीव धर्म्म है ऐसैं जानवो योग्य है। सो परिणाम अन्य द्रव्यनितैं असाधारण पणांतैं आत्मतत्व है ऐसैं कहिये है ॥ २६ ॥ वार्तिक—अमूर्त्तत्वादभिभवानुपपत्तिरिति चेन्न तद्विशेषसामर्थ्योपलब्धेश्चैतन्यवत् ॥२६॥ अर्थ—प्रश्न, यो अमूर्तिक आत्मा कर्म्म पुद्गलनि करि नहीं तिरस्कार हूजिये है। तातैं औपशमिकादि भावरूप परिणामको अभाव है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, तैसा विशेष सामर्थ्यकी उपलब्धि है यातैं सो याकै अनादि कर्म बंध संतान है यातैं यो जीव अनादि कर्मबंध संतानवान है अर तीं वानकै विशेष सामर्थ्यकी प्राप्ति

है। प्रश्न, सो कैसैं ? उत्तर, चैतन्यवत् है जैसैं अनादि पारिणामिक चैतन्य वशीकृत आत्मा तींवान है कि चैतन्यवान है ताकै नारकादि अर मत्यादि पर्यायकी विशेषकी प्रवृत्ति भी चेतन रूप ही है तथा अनादि कार्मण शरीर करि आशक्त पणांतैं कर्म आत्मके मूर्तमान पणांतैं गत्यादि पर्याय विशेष करि सामर्थ्यकी उपलब्धि भी मूर्तिमान है ऐसैं होतां संतां आत्मा अमूर्त्तिक नहीं है। मूर्तिमान है। प्रश्न, ऐसैं होतांसंतां आत्मा अमूर्तिक नहीं है। उत्तर, और सुनूं, वार्तिक—अनेकांतात् ॥२७॥ अर्थ—अनादि कर्म बंधका संतान करि परतंत्र आत्मा जो है ताकै अमूर्ति पणांप्रति अनेकांत है सो ऐसैं बंध पर्याय प्रति एक पणांतैं कथंचित् मूर्तिक है तथापि ज्ञानादि निज लक्षणका अपरित्यागतैं कथंचित् अमूर्तिक है इत्यादि पूर्ववत् जाननौं अर जाकै एकांत करि अमूर्तिक ही आत्मा है ताकै यो दोष है अर अरिहंतकी आज्ञा प्रमाण माननैंवारेकै नहीं है ॥२८॥ और सूनूं वार्तिक-सुराभिभवदर्शनात् ॥२८॥ अर्थ—मदकूं, मोहकूं, विभ्रमकूं करन वारी सुरानैं पान करि नष्ट भई है स्मृति जाकी ऐसो जन काष्ट समान हलन चलन क्रिया रहित देखिये है तैसैं कर्मेन्द्रियका नष्ट होवातैं नहीं प्रगट होय है निज लक्षण जाको ऐसो आत्मा अमूर्तिक है। ऐसैं निश्चय करिये है ॥२८॥ वार्तिक—करणमोहकरं मद्यमितिचेन्नतद्विधिकल्पनायां दोषोपपत्तेः ॥ २६॥ अर्थ—इहां प्रश्न उपजै है कि चक्षु आदि इंद्रियनिकै व्यामोहको कारण मद्य है क्योंकि पृथ्वी आदितैं उत्पन्न भया प्रसाद स्वरूप पणांतैं इंद्रियनिकै ही व्यामोहको कारण है आत्मगुणकै व्यामोह करनें वारो नहीं है क्योंकि आत्माकै अमूर्तिक पणौं है यातैं। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? तिन इंद्रियनिकै दो विध कल्पना करतां संतां दोषकी उत्पत्ति है यातैं तातैं इहां यो विचार करनें योग्य है कि वै इंद्रियां चेतन हैं कि अचेतन हैं जो अचेतन हैं तो अचेतन पणांतैं तिनकै मद करनवारो मद्य नहीं है अर जो अचेतनकै भी मद करनवारो मद्य है तो प्रथम ही अपनें पात्रकै मद करन वारो हो अर अचेतन है तो भिन्न नहीं प्राप्त होय है चेतन स्वभाव जिनतै एसैं

पणातैं ही चैतन्य नाम है। भावार्थ—
चक्षुरादि पृथ्वी आदि द्रव्यनिकै चेतना द्रव्यका सम्बन्ध पणातैं ही चैतन्य नाम है। भावार्थ— जे हैं तिनकै
इंद्रिय पृथिव्यादि रूप है, तातैं कहिये है कि इंद्रियनितैं भिन्न प्रथिवी आदि जे हैं तिनकै
चेतना नहीं देखिये है तातैं चेतनके संबंधतैं ही चेतना है या कारणतैं आत्मा गुणकै ही मोहकर
पणौं सिद्ध है। इहां चारवाकको प्रश्न है कि पृथिवी आदिकै ही संयोग विशेषनैं होतां
संता पिष्ट किण्व आदिका एक पणांकै विषैं मदशक्तिकी प्रगटताके समान सुख दुःख आदिकी
प्रगटता है। भावार्थ—जैसैं पिष्ट किण्व उदक आदिका मिलापकै विषैं मद शक्ति उत्पन्न होय है
तैसैं ही पृथिवी आदिका मिलाप विशेषकै विषैं सुख दुःखका अनुभव रूप शक्ति उत्पन्न होय है
उत्तर, सुख दुखका अनुभव रूप शक्तिकै रूपादिकतैं विधर्म्म पणौं है यातैं यो प्रश्न योग्य नहीं
है क्योंकि पृथिवी आदिका रूप आदि गुण जे हैं ते अवयवीनितैं भिन्न होत संतैं तथा अभिन्न
होत संते क्रमकरिकैं ही हानिनैं प्राप्त होय है तैसैं भिन्न तथा अभिन्न शरीरके अवयव जे हैं तिनकै
विषैं सुख दुख आदिकी क्रमकरि हानि नहीं देखिये है, युगपत ही हानि देखिये है तातैं सुख दुःख
आदि पृथिवी आदिका गुण नहीं है अर और सुनूं कि जो सुखादिक पृथिवी आदिका ही गुण है
तौ नवीन मृतक और शरीर अवस्थाकै विषैं भी रूपादिककी नांई प्राप्त हुआ चाहिये। इहां भी चा-
रवाक कहे है कि सूक्ष्मभूत पृथिवी आदिका विनाशतैं सुखादिकनिकी प्राप्ति नहीं है? उत्तर,
ऐसैं है तो भौतसे स्थूल पृथिवी आदिका विद्यमान रहवातैं सुखादिकनिकी प्राप्ति होवै अर
और सुनूं कि सूक्ष्म पृथिवी आदिका विनाशतैं ही सुखादिकी अप्राप्ति है तौ तिनकै विषैं ही वे
गुण है यातैं समुदाय धर्मपणांका अभावतैं मद्यका दृष्टांतकी अयुक्त है अर और सुनूं कि भूत
सूक्ष्मनिका अस्तित्वकी सिद्धिके समान आत्मत्वकी भी सिद्धि है अथवा जिन इंद्रियनिकै व्यामोह
होय सो अंतःकरण है कि बहिःकरण है जो बहिष्करण है तौ तिनकै अचेतन पणातैं व्यामो-
हको अभाव है अर जो अंतः करण है तौ तिनकै चेतनपणूं है कि अचेतन पणूं है सो अचेतन

पणूं होत संतै तो पूर्व वत् व्यामोहको अभाव है अर चेतन पणांनैं होतां संतां विज्ञान रूप पणांतैं व्यामोह युक्त है अर अमूर्तिक पणांतैं ज्ञानका नष्ट होवाको अभाव जो तुमनैं कह्यो सुवो सो युक्त नहीं है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो कर्मका उदय अर मद्यका आवेश करि वशी कृत आत्माको अस्तित्व दुरुपलक्ष्य है। उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, कर्मोदयनैं तथा मद्यका आवेशतैं होतां संतां भी निज लक्षण करि आत्माकी उपलब्धि है सो ही प्राचीन आगम कहै है। गाथा—

बंधं पड़ि एयत्तं लक्खणदो होदि तस्स णाणत्तं।
तम्हा अमुत्ति भावो णेयंतो होदि जीवस्स ॥१॥

अर्थ—बंध प्रति एकत्व है तथापि लक्षणतैं ताकै ज्ञान पणों है तातैं जीवकै अमूर्तिक भाव अनेकांततैं है ॥१७॥ अवैं आठमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो ऐसैं है तो प्रथम वो ही लक्षण कहो जाका समीचीन पणैं धारण करवातैं बंध परिणाम प्रति अभेदनैं होतां संतां भी दोऊनिको विभाग भलै प्रकार ग्रहण करिये, ऐसैं प्रश्न होत संतैं जीवको लक्षण कहै है। सूत्रम्--

उपयोगो लक्षणम्

अर्थ—जीवको उपयोग लक्षण है ॥ ८ ॥ प्रश्न, उपयोग नाम कहा है? उत्तर रूप वार्तिक—वाह्याभ्यंतरहेतुद्वयसंन्निधाने यथा संभवमुपलब्धुश्चैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोगः॥ १ अर्थ--वाह्य अभ्यंतर रूप हेतुद्वयकी निकटतानैं होतां संतां यथा संभव उपलब्धिका करता को चैतन्यानुविधायी परिणाम जो है सो उपयोग है। भावार्थ--वाह्य अभ्यंतर रूप हेतु दोय प्रकार है अर द्वय शब्द वार्त्तिकमैं है ताकी निरुक्ति ऐसी है कि दोय है अवयव जाकै सो दोय है अर्थात् उपयोगके हेतु वाह्य अर अभ्यंतर भेद रूप दोय प्रकार है। प्रश्न, स्वरूपका कथनतैं ही दोय होने पणांकी प्रतीति होनेतैं वात्तिकमैं द्वय शब्द

कह्यो सो अनर्थक है ? उत्तर, अनर्थक नहीं है क्योंकि दोऊ भेदनिकै ही दोय पणांकी प्रतीतिकै अर्थि द्वय शब्द है तातैं वाह्य हेतु दोय प्रकार है अर आभ्यंतर हेतु भी दोय प्रकार ही है ऐसा जनाया है तहां आत्मभूत अर अनात्मभूत नाम वाह्य हेतु दोय प्रकार है तिनमैं आत्मा करि संबंधनैं प्राप्त भयो अर अविशेष रूप नाम कर्म करि ग्रहण कियो है भिन्न भिन्न रूप स्थान परिमाणको निर्माण जानैं ऐसौ चक्षु आदि इंद्रिय समूह जो है सो तौ आत्मभूत वाह्यहेतु है अर प्रदीपादि जो है सो अनात्मभूत वाह्य हेतु है अर अभ्यन्तर हेतु भी अत्मभूत आनात्मभूत नामक दोय प्रकार है तिन मैं मन, बचन, कायरूप पुद्गल वर्गणा है लक्षण जाको ऐसौ द्रव्ययोग चितवन आदिको अवलंवनभूत अंतरंगमैं रचनां विशेषपणांतैं आत्भ्यंतर हेतु है, ऐसौ नाम पावतो संतौ आत्मातैं अन्यपणांते अनात्मभूत है, ऐसैं कहिये है। भावार्थ—मन वचन काय रूप पुद्गल वर्गणा अंतरंग रचना विशेष जो है सो अभ्यंतर अनात्मभूत हेतु है अर सो है निमित्त जाको ऐसौ भावयोग है सो वीर्यान्तरायका अर ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षय तथा क्षयोपशम निमित्ततैं आत्माकै प्रसन्नता है सो आत्मभूत आभ्यंतर हेतु है ऐसा नामकै योग्य होय है अर सो यो हेतु विकल्प जो है ताको निकट पणौं यथा संभव उपलब्धिका कर्ताकै होय है सो ऐसैं जाननें, तहां प्रथम कोऊ प्राणीकै तो प्रदीपादि वाह्य हेतुकी निकटता है सो विज्ञानकी प्रवृत्तिनैं वाह्य कारण है क्योंकि प्रदीपाद्रिक विना चक्षु आदिकै विज्ञानकी अप्रवृत्ति है यानैं अर कितनेक व्याघ्र मार्जार आदिकनिकै तौ वाह्य प्रदीपादिक कारण विना भी विज्ञानकी प्रवृत्ति होनेतैं पूर्वोक्त हेतुनिकै होतैं ही होय ऐसौ नियम नहीं है अर चक्षु आदिको भी पंचेद्रिय विकलेंद्रिय एकेंद्रिय विषयपणां करि निकटता प्रति नियत नहीं है अर मन वचन काय रूप अंतःकरण भी असंज्ञीनिकै मन विना होय है अर संज्ञीनिकै तीन है अर एकेंद्रियनिकै तथा विग्रहगतिनैं प्राप्तभयेनिकै तथा समुद्घातनैं प्राप्त भये संयोग केवलीनिकै एक काय

योग ही है तातैं योग भी यथा संभव ही है। बहुरि भाव योग क्षयोपशमादि कृत पंचेंद्रिय, विकलेंद्रिय, एकेंद्रिय, असंज्ञी, संज्ञी तथा विग्रह गतिवान तथा समुद्घात करनवारे संयोग केवलीनिकै विषैं नियमरूप है। भावार्थ—भावयोग अपने अपने योग्य सबनिकै है, तहां क्षयोपशमभाव तौ क्षीणकषाय पहली है अर याकै उपरान्त क्षायिक भाव है ऐसैं यथा संभव हेतुकी निकटतानैं होतां संतां चैतन्य आत्म स्वभाव अनादि जो है ताहि अनुकूल करै ऐसो है स्वभाव जाको सो चैतन्यानुविधायी परिणाम है सो उपयोग है ऐसैं कहिये हैं याको दृष्टान्त कहै कि जैसैं सुवर्णकै अनुकूल होनेवाले कड़ा, भुजबंध, कुंडल आदि विकार है तैसैं आत्माकै अनुकूल दर्शन ज्ञानरूप परिणमन होनों योग्य है अर आगानैं याही उपयोगका प्रकार दर्शन ज्ञानका भेद कहैंगे तातैं यो वचन पूर्वापर विरुद्ध देखिये है? उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि चैतन्य नाम आत्माको सामान्यरूप स्वभाव है अर याका नहीं मिलापतैं और द्रव्यनिकै विषैं जीव नाम नहीं है अर या चैतन्यके भेद ज्ञान दर्शनादिक है तिनका समुदायकै विषैं वर्तमान चैतन्य शब्द है अर कहूं चैतन्य शब्द सुखादिक अवयव जे हैं तिनकै विषैं भी प्रवर्तै है क्योंकि समुदायमैं प्रवर्तनवारे शब्द अवयवनिकै विषैं भी प्रवर्तै है ऐसा न्याय है अर इहां समुदायमैं ही प्रवर्तमान चैतन्य शब्द ग्रहण कियो है अर आगानैं याही उपयोगका भेद ज्ञान दर्शनरूप विकल्प कहैंगे या हेतुतैं विरोध नहीं है। प्रश्न, लक्षण कहा है? उत्तररूपवार्तिक—परस्परव्यतिकरे सति येनान्यत्वं लक्ष्यते तल्लक्षणम् ॥२॥ अर्थ—बंध परिणामका कथनतैं परस्पर मिलान स्वभाव पणांनैं होतां संतां भी अन्यपणांका ज्ञानको कारण जो है सो लक्षण है। ऐसैं भलैप्रकार कहिये है याको दृष्टांत कहै है कि सुवर्णकै अर रजतकै बंध करि एकत्वनैं होतां संता भी वर्ण प्रमाण आदि असाधारण धर्म जो है सो लक्षण है ॥ २ ॥ वार्तिक—अलक्षणमुपयोगोगुणगुणिनोरन्यत्त्वमिति चेन्नोक्तत्वात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, जैसैं उष्ण पणौं तो गुण है अर अग्नि गुणी है तैसैं आत्मा तो गुणी है अर तिन दोउनिकै

लक्षण भेदतैं अन्य पणौं है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, याको उत्तर पूर्वै कह्यो है यातैं सो ऐसैं कह्यो है कि लक्षणनैं असत्स्वभाव होतां संतां लक्षणका नहीं जाननको प्रसंग आवै है ॥३॥ वार्तिक—लक्ष्यलक्षणभेदादिति चेन्नाऽनवस्थानात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, याकै अनंतर यो मत है कि लक्ष्य तौ गुणी है अर लक्षण गुण है तातैं लक्ष्यतैं लक्षणनैं भिन्नरूप करि होनों योग्य है यातैं इनि दोऊनिकै अन्य पणौं है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अनवस्थान है यातैंसो ऐसैं जा लक्षण करि लक्ष्यनैं देखिये सो लक्षण लक्षण सहित है कि लक्षण रहित है जो लक्षण रहित है तो मींडककी चोटीकै समान अभावनैं प्राप्त होय है क्योंकि लक्षणनैं नहीं होतां संतां लक्ष्यको जानन नहीं होय है अर जो वो लक्षण सहित है तो वो भी वातैं अन्य है अर वाको लक्षण और करिये तौ वाको लक्षण अन्य ठहिरेगो, ऐसैं कहूं ही नहीं ठहिरनेतैं अनवस्था आवै है ॥४॥ अर और सुनूं वार्तिक—आदेशवचनात् ॥५॥ अर्थ—लक्ष्य लक्षणके अभेदतैं कथंचित् एक पणौं है अर संज्ञा, संख्या लक्षण आदिका भेदपणांतैं कथंचित् नाना पणौं है ऐसा आदेशका वचनतैं एकांतरूप दोषका मिलापको अभाव है ॥५॥ इहां कोऊ कहै है कि वार्तिक—नोपयोगलक्षणोजीवस्तदात्मकत्वात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, जीवको उपयोग लक्षण नहीं है क्योंकि दोउनिकै एकात्मक पणौं है यातैं। भावार्थ—या लोककै विषैं जो जा-स्वरूप है सो चीरस्वरूपकरि नहीं उपयुक्त हूजिये है याको दृष्टांत ऐसो है कि चीर चीर-स्वरूप है सो चीर स्वरूपकरि नहीं युक्त हूजिये है ऐसैं आत्माकै भी ज्ञानात्मक पणांतैं ज्ञान करि ही युक्त होनौं नहीं संभवै है यातैं जीवकै उपयोग लक्षणको अभाव है ॥६॥ प्रश्न, काहेतैं ? उत्तररूपवार्त्तिक—विपर्ययप्रसंगात् ॥७॥ अर्थ—अनन्य पणांनैं होतां संतां उपयोगनैं इच्छताकै तथा नहीं इच्छताकै कोईकै विपरीतता प्राप्त होय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, अविपर्ययकै समान विपरीतता प्राप्त होय है सो ऐसैं जीव ही ज्ञानतैं अनन्य पणांनैं होतां संतां ज्ञानात्मा करि उपयुक्त होय है ऐसैं मानिये है

सो नहीं है जैसैं क्षीरादिककी क्षीरादि आत्मस्वरूपकरि नहीं उपयुक्त होय है अर कदाचित् क्षीरादिक ही क्षीरादि आत्मस्वरूप करि परिणम्यूं परंतु जीव तौ ज्ञानस्वरूप करि उपयुक्त नहीं हूजिये है क्योंकि यो अनिष्ट है यातैं। भावार्थ—योग शब्द वहां प्रवर्तै है कि जहां दोय वस्तु प्रथक् ग्रहण होय अर उनको योग करनौं होय अर इहां ज्ञान अर आत्मा पृथक् ग्रहण नहीं होय है दोऊ एकात्मक है तातैं उपयोग कहना अनिष्ट है ॥७॥ उत्तर रूप वार्तिक—नातस्तत्सिद्धेः ॥८॥ अर्थ—यो कहनौं योग्य नहीं है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, या अनन्यपणांतैं ही उपयोगकी सिद्धि है यातैं। भावार्थ—जा कारण करि अनन्यपणौं है ता कारण करि ही उपयोग सिद्ध होय है क्योंकि सर्वथा अन्यत्व होत संते उपयोग नहीं सिद्ध होय है जैसैं आकाशकै रूपादिकतैं सर्वथा अन्यपणौं होत संतैं रूपादिक को उपयोग कहनौं नहीं वनै है अर जो पूर्वै क्षीरको दृष्टांत कह्यो हो कि क्षीर जो है सो क्षीरात्मक है तातैं क्षीरात्माकरि उपयुक्त नहीं होय है सो भी नहीं है क्योंकि क्षीरात्मक पणांतैं ही क्षीरात्मक करि उपयुक्त होनेकी सिद्धि है सौ ऐसैं जैसैं तृण जल आदि कारणके वशतैं क्षीरभावकी प्राप्तिकै सन्मुख भयो जो पुद्गलस्कंध सो नैगम नयका आदेशतैं क्षीरनामको भजने वारो होय है क्योंकि क्षीरपणांकी शक्तिको सद्भाव है यातैं क्षीरात्माकरिकै ही परिणमननैं प्राप्त होय है ऐसैं कहिये है तैसैं आत्म भी ज्ञानादिस्वभाव शक्तिरूप कारणका वशतैं घट पटाद्याकारका अवग्रहादिरूप करि परिणमै है। यातैं, उपयोग आत्माकै सिद्ध होय है अर जो ऐसैं परिणमनरूप उपयोग कूं नहीं मानिये तौ उपयोगकै आत्मभाव नहीं होत संतै आत्मापणांकौ अभाव होय अर आत्मापणांकौ अभाव होय तदि उपयोगकौ भी अभाव ही होय। भावार्थ—सर्व द्रव्य अपने अपने स्वभावमैं परणमन करते संते ही द्रव्य नाम पावै है तातैं इहां आत्माकै घटपटाद्याकार रूप परिणामन है सो ही उपयोग है अर वो उपयोग ही आत्माकै द्रव्यपणौं जनावै है सो जैसैं अग्नि द्रव्यकै उष्णत्वादि रूप परिणमन है सो ही अग्निकै द्रव्यपणौं जनावै है तातैं

उपयोगनैं आत्मस्वरूप नहीं होत संतैं जैसैं उष्णताका अभावनैं होत संतै अग्निकौ अभाव होय तैसैं आत्मा हीकौ अभाव होय ॥८॥ वार्तिक—उभयथापि त्वद्वचनासिद्धेः ॥९॥ अर्थ—उपयोगनैं भिन्न मानतां संतां तथा अभिन्न मानतां संतां तिहारा वचनकी असिद्धि है यातैं। भावार्थ—अनेकांत करि वस्तु तत्वनैं निरूपण करणवारो जो अरिहंत संबंधी न्याय तातैं नहीं जानिकरि जो तैं प्रश्न कियौ कि जो वस्तु जा स्वरूपकरि विद्यमान है ताको ता स्वरूपकरि परिणामन नहीं होय है ताको उत्तर कहिये है कि दोउतरैं तिहारा वचनकी असिद्धि है सो ऐसैं तदात्मक अनुपयोग कहनेंवारो जो तू ताको स्व पर पक्ष साधन दूषणात्मक जो निज वचन ताकै स्वपक्ष साधक पणांरूप तथा पर पक्षबाधक पणांरूप परिणामनका अभावतैं जिस विषयमैं उपदेश कियौ तिस विषयमैं ही यो पूर्वोक्त-हेतु असाधक होय है जैसैं क्षीरकै दधिरूपपणां करि परिणामन तौ इष्ट करिये है अर क्षीरपणां करि नहीं इष्ट करिये है तैसैं ही स्वपक्षको साधक स्वरूप जो वो तिहारो वचन ताकै रूप करि अपरि-णामतैं ही साधक पणां इष्ट करिये है। दूषणपणां करि नहीं इष्ट करिये है, यातैं तदात्मक होत संतैं अनुपयोग है ऐसा तिहारा वचनकी असिद्धि है अथवा तिहारो वचन स्व परपक्ष साधक दूषात्म-क होत संतै स्वपक्ष साधक अर परपक्ष दूषक रूप पर्यायनि करि परिणामै है तौ हू जो तू कहत भयो कि तदात्ममैं अनुपयोग है तातैं ताको तीं रूप करि परिणामन नहीं है ऐसौ यो वचन अयोग होय है ॥९॥ किंच, वार्तिक—स्वसमयविरोधात् ॥१०॥ अर्थ—और सुनूं कि जो तदात्मकमैं अनुपयोग है तौ तिहारा निज सिद्धांतमैं विरोध आवै है। भावार्थ—जो जीं रूप है सो तीं रूप करि नहीं परिणामन वारो है ऐसौ तुम्हारो इष्ट है तौ सुनूं कि पृथ्वी, अप, तेज, वायु ये चार महाभूत जे हैं ते रूपाद्यात्मक हैं ते रूपाद्यात्मक पणां करि नहीं परिणामन पावैंगे अर उन महाभूतनिको परि-णामन रूपाद्यात्मक पणां करि तिहारै इष्ट है अर शुक्लादिरूप आदि परिणामन विशेष पृथिव्या-दिकनिमैं देखिये है यातैं तिहारै स्व समयमैं विरोध होय है ॥१०॥ किंच, वार्तिक--केनचिद्विज्ञाना-

त्मकत्वात् ॥११॥ अर्थ—और सुनूं कि जाकै आत्मा एकांतकरि ज्ञानात्मक है ताकै ज्ञानात्मा करि परिणामन न होय क्योंकि आप पूर्वैं ही परिणामन रूप है यातैं अनेकान्तवादी आर्हत जो है ताकै तौ कथंचित् ज्ञानरूपपर्यायका उपदेशतैं आत्मा विज्ञानात्मक है अर कथंचित् अन्य पर्यायका उपदेशतैं अन्यात्मक है यातैं कथंचित् तदात्मक पणांतैं कथंचित् अतदात्मकपणांतैं परिणामनकी सिद्धि है अर जो एकांत करि ज्ञानात्मक ही होय तथा इतरात्मक ही होय तौ वाका परिणामनको अभाव होय अर परिणामनको अभाव होतसंतै आत्माको भी अभाव होय ॥११॥ वार्तिक—तदात्मकस्य तेनैवपरिणामदर्शनात् क्षीरवत् ॥१२॥ अर्थ—जैसैं क्षीर जो है सो द्रव्यपणांनैं तथा मधुरादि अपनां स्वभावनैं नहीं छांड़तो गुड़ादिद्रव्यका संबंधतैं गुड़ क्षीर मिश्रित परिणामांतरनैं आश्रय करै है अरगवादिका स्तनतैं निकसत मात्र तौ उष्ण होय है वहुरि कालांतर करि शीतल होय है। वहुरि वै ही क्षीर अग्निका संबंधकरि उष्ण तथा घन होय है। वहुरि अग्नि संबंधका अभावमैं शीतल होय है तथापि क्षीर जातिनैं नहीं छांड़तो उष्ण क्षीरादि नामको भजनैं वारो होय है सो इहां क्षीर क्षीरात्मा करि ही परिणाम्यू है अर जो क्षीर क्षीरात्मा करि नहीं परिणामैं तौ तहां क्षीर नामको अभाव होय है तैसैं ही उपयोगात्मक आत्मा जो है सो अपना उपयोग स्वभावनैं नहीं छोड़तो ज्ञान दर्शनादि स्वभाव करि परिणामननैं प्राप्त होय है यातैं तत्व स्वरूपकूं उपयोग कहनेमैं विरोध नहीं है ॥१॥ वहुरि या उपरांत यो उपयोग जो ऐसैं तत्स्वरूप नहीं होय तौ दूषण आवै है सा सुनूं। वार्त्तिक—अतैश्चैतदेवं यदि हिनस्यान्निःपरिणामत्वप्रसङ्गोऽर्थस्वभावसंकरो वा ॥१२॥ अर्थ—जो जीं स्वरूप है ताकौ तीं स्वरूप करि परिणामन नहीं है तो यदर्थ मात्रकै निःपरिणामी पणांको प्रसङ्ग आवै अर निःपरिणामी पणांतैं सर्वथा नित्य पणांनैं होतां संतां क्रिया कारक रूप व्यवहारको लोप होय वहुरि परिणामी पणांनैं होतां संतां पर स्वरूप करि परिणाम वातैं सर्व पदार्थनिका

स्वभावकै संकर पणांको प्रसङ्ग आवै अर परिणमन दोऊ रीतितैं ही इष्ट है तातैं निज स्वभाव करि परिणमन सिद्ध भयो। इहां कोऊ और कहै है। वार्त्तिक—उपयोगलक्षणानुपपत्तिर्लक्ष्याभावात् ॥१२॥ अर्थ---या लोककै विषैं विद्यमान लक्ष्य पदार्थको लक्षण होय है ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं विमान देवदत्तको दंडादिक लक्षण होय है अर अविद्यमान शशाका सींग आदिको कछू भी लक्षण नहीं होय है तैसैं सो ही आत्मा दुःख करि स्थापन करने योग्य है तातैं आत्माका अभावतैं उपयोगकै लक्षण पणौं काहेतैं होय ॥१२॥ प्रश्न, यो आत्माको अभाव कैसैं है? उत्तर, ऐसैं है सो कहिये है। वार्त्तिक--तदभावश्चाकारणादिभिः ॥१३॥ अर्थ--वा लक्ष्य रूप आत्माको अभाव है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अकारणपणां आदितैं मींडककी शिखाके समान अभाव है ॥१३॥ अर और सुनूं वार्त्तिक---सत्यपि लक्षणत्वानुपपत्तिरनवस्थानात् ॥१४॥ अर्थ---अर लक्ष्य रूप आत्मानैं होतां संतां भी उपयोगकै तो लक्षणपणौं नहीं उपजै है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अनवस्थानतैं क्योंकि उपयोग जो है सो ज्ञान दर्शन स्वभाव है सो ज्ञान दर्शन क्षणिक पणांतैं अवस्थित नहीं है अर अवस्थित नहीं होय सो लक्षण नहीं होय क्योंकि वा अनवस्थित लक्षणका नाशनैं होतां संतां लक्ष्यको अप्राप्ति है यातैं याकौ दृष्टांत ऐसौ है कि कोऊ प्रश्न करै कि देवदत्तको गृह कैसोक है तदि कोऊ कहै कि जहां यो नीचैं काक है। बहुरि वा काकनैं उड़ जातां संतां वो घर भी नष्ट होय तैसैं ज्ञानादि लक्षण आत्माको होत संतैं क्षणिक स्वभावी पणांतैं ज्ञानादिकका अभावनैं होतां संतां आत्माको अभाव प्राप्त होय है ऐसा प्रश्नकै विषैं आचार्य कहै है ॥१४॥ वार्त्तिक---आत्मनिन्हवो न युक्तः साधनदोषदर्शनात् ॥१५॥ अर्थ---इहां आत्माको छिपाव करनौं युक्त नहीं है क्योंकि साधनमैं दोषका दर्शन है यातैं सुनूं कि पूर्वैं कह्यौ हुतौ कि आत्मा नहीं है अकारण पणांतैं मींडककी शिखाकै समान है ॥१५॥ याका उत्तर रूप वार्त्तिक--हेतुरयमसिद्धो विरुद्धोऽनैकांतिकश्च ॥१६॥अर्थ--यो हेतु असिद्ध विरुद्ध अनैकांतिक स्वरूप है भवार्थ--

आत्मा कारणवान ही है हमारे ऐसो निश्चय है क्योंकि नारकादिभवतैं भिन्न ऐसी द्रव्यार्थिक नयका अभावतैं नारक स्वरूप आत्माके मिथ्यादर्शनादि कारण पणांतैं तिहारा कह्या अकारण हेतुके असिद्धता है। वहुरि सकारण पणांतैं ही तिहारा मतमें द्रव्यार्थिक पणां करि उपदेशका अभावतैं अर पर्यायके पर्यायांतरका अनाश्रयतैं आश्रयका अभावतैं भी तिहारा कह्या अकारण हेतुके असिद्धता है। वहुरि तिहारा कह्या अकारण हेतुके विरुद्धता है सो ऐसैं है कि सर्व घटपटादि पदार्थ अकारण ही है ता कारण करि यो हेतु द्रव्यार्थिक नयके विरुद्ध ही है क्योंकि विद्यमानके अकारण पणौं है यातैं अर जो है सो नियम करि ही अकारण है अर विद्यमान है अर कारण-मान है ऐसो कोऊ पदार्थ है ही नहीं क्योंकि जो यो है ही तो याके विद्यमान रचना पणांतैं का-रण करि कहा प्रयोजन है अर जो अविद्यमान है ताके ही कारणवान पणौं है क्योंकि कारणके कार्यार्थपणौं है यातैं ऐसैं हेतुके विरुद्धार्थता है। वहुरि मींडक शिखादिकनिके अविद्यमानकी प्रती-तिका हेतु पणां करि कल्पित सात् पणांका अङ्गीकारतैं ही तिन मींडक शिखादिकनिके कारणको अभाव है ऐसैं सत्में तथा असत्में प्रवर्तवातैं अकारण हेतुके अनेकांतिक पणौं है अर दृष्टांत भी साध्य साधन रूप उभय धर्म करि विकल है सो ऐसौं है कि कर्म वंधका वशतैं नाना जाति स-म्वन्धनैं प्राप्त होतो नित्य स्वरूप जीव जो है ताके मींडक भवकी प्राप्ति होत संतैं मींडक नामको धारक जो है सो ही फेर मनुष्यणीका जन्मनैं प्राप्त होतां संतां जो मींडक हुतो सो ही यो शिखा-वान है ऐसौं एक जीव संवंध पणांतैं मींडकके शिखा है अर अनादि अनंत है परिणमन जाकै ऐसा पुद्गल द्रव्यके भी मनुष्यणीका भोग्या आहारादिक जे हैं तिनके केश भावका परिणमनतैं शिखाकी उत्पत्ति होनैंतैं कारण पणौं है यातैं हेतुके नास्तित्व अर अकारणत्वधर्मका अभावतैं साध्य अर साधन रूप दोउ ही धर्म करि विकल्प पणौं है अर ऐसैं ही वंध्यापुत्र शशाका सींग आदिकैं विषैं भी जोड़ने योग्य है। प्रश्न, इनिकै तो पूर्व जन्मकी कल्पना करि अस्तित्व

पणौं सिद्ध कियो परंतु आकाश कुसुमकै विषैं कैसैं सिद्ध होयगो ? उत्तर, तहां भी सिद्धि है ताको दृष्टांत सुनौ कि जैसैं वनस्पति नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो है विशेषरूप जानैं ऐसौ जो जीव पुद्गलको समुदायरूप वृक्ष ताकै पुष्प है ऐसैं कहिये है अर और भी पुद्गलद्रव्यपुष्प भावकरि परिणम्यौ सो तीं वृक्ष करि व्याप्तभाव करि व्याप्य भाव करि संबंधपणांतैं वा वृक्षका पुष्प कहिये है तैसैं ही आकाश करि भी व्याप्य भाव करि संबंधपणां करि व्याप्तपणौं समान है तातैं आकाशको पुष्प नाम कहनौं युक्त है। प्रश्न, वृक्षकृत उपकारकी अपेक्षाकरि वृक्षको पुष्प है ऐसैं कहिये है ? उत्तर, आकाशकृत अवगाहन उपकारकी अपेक्षा वा पुष्प कैसैं नहीं है अर इतनौ अधिक है कि वृक्षतैं च्युत भयो भी आकाशतैं च्युत नहीं होय है। प्रश्न, आकाश नित्य है तातैं पुष्पको संबंधी नहीं है क्योंकि आकाशकै अर पुष्पकै अर्थान्तर भाव है। यातैं उत्तर, ऐसैं मान्य है तौ वृक्षकै भी पुष्प नहीं है क्योंकि या लोकमैं सर्वत्र ही नाम संख्या विशेष स्वलक्षण आदिकी अपेक्षा करि संबंध जोड़िये है। भावार्थ—आकाशकै अर पुष्पकै तथा वृक्षकै अर पुष्पकै व्याप्य व्यापक भावकरि संबंध नित्य है। इहां तात्पर्य ऐसैं है कि जा समय वृक्षकै व्यापकपणां है ता समय पुष्पकै भी व्यापकपणौं है तातैं नित्य कहिये अथवा बाह्य अर्थकै अकारण परिणम्यो जो विज्ञान ताका विषयपणांकी अपेक्षाकरि मींडक को शिखा वंध्यापुत्र आकाशपुष्प आदिमैं भी नास्तित्व अकारणत्व नहीं है यातैं तिहारी युक्तमैं क्षेपको उद्भावन चिंतवन करनौं योग्य है। भावार्थ—विज्ञानवादी तू जो है ताकै मींडक शिखादिक विज्ञानका विषय है तातैं आत्माका अभाव करनेंमैं मींडक शिखाको दृष्टांत कह्यो हुतौ तामैं नास्तित्व अकारणत्व हेतु-दियो हुतो सौ नहीं वनै है। बहुरि इहां नास्तिक प्रश्न करै है कि ऐसैं कहो हौ तो सुनूं कि आत्मा नहीं है अप्रत्यक्ष पणांतैं शशाका सींगकै समान है ? उत्तर, यो हेतु भी योग्य नहीं है क्योंकि या हेतुकै भी असिद्ध विरुद्ध अनैकांतिकता नहीं छूटै है यातैं सो ऐसैं सकल लोकालोक है

विषय जाको ऐसा केवल ज्ञानकै प्रत्यक्ष पणांतैं शुद्धात्मा प्रत्यक्ष है अर कर्म नोकर्मरूप वंध करि पराधीन पिंड्यात्मा अवधि मन पर्यय ज्ञानकै भी प्रत्यक्ष है ऐसैं प्रत्यक्ष पणांतैं तुमारा कह्या हेतु असिद्ध है। वहुरि प्रश्न करै हैं कि इंद्रिय प्रत्यक्ष पणांका अभावतैं अप्रत्यक्ष है ? उत्तर, ऐसैं नहीं है क्योंकि इंद्रिय प्रत्यक्षकै परोक्ष पणांका अंगीकार है यातैं सो ऐसैं है कि घटादिक अप्रत्यक्ष है क्योंकि अग्राहक जे इंद्रिय ते है निमित्त जाकौ ऐसा ग्राह्य पणांतैं धूमादि करि अनुमित अग्निकै समान है सो ऐसैं है कि इंद्रिय अग्राहक है क्योंकि इंद्रियका विनाशनैं होतां संतां भी पूर्वकालमैं ग्रहण कीयाका स्मरणतैं गवाक्ष जो मंदिर ताकै समान घटादिक है। भावार्थ—नेत्रादिक इंद्रियनिकूं नष्ट होत संतैं भी पूर्वकालमैं अनुभव कीया गवाक्षादिकको स्मरण होय है तातैं इंद्रिय ग्राहक नहीं है क्योंकि जो इंद्रिय ही ग्राहक होती तौ स्मरण भी इंद्रियकै साथ ही नष्ट हो जातौ यातैं जानिये है कि इंद्रिय ग्राहक नहीं है। ग्राहक आत्मा है यातैं इंद्रिय प्रत्यक्ष जिसकूं कहो हौ सौ अप्रत्यक्ष ही है अर और सुनूं कि प्रत्यक्षतैं अन्य जो है सो अप्रत्यक्ष है ऐसैं कहै:सो तौ पर्युदास है अर प्रत्यक्ष नहीं है सो अप्रत्यक्ष है ऐसैं कहै सौ प्रसज्यप्रतिषेध है तातैं जो अप्रत्यक्ष हेतुतैं पर्युदास रूप कहौ हौ तौ अन्य पणांकै दोय पदार्थनिकी स्थितिपणांतैं वस्तुपणांकी सिद्धि है। भावार्थ---दोय पदार्थ हुवा विना यातैं अन्य है ऐसो कहनों नहीं वनै है यातैं तिहारो कह्यो हेतु नास्तिपणांको तौ विरोधो है अर अस्तित्व साधनतैं अविरुद्ध है अर जो प्रसज्य प्रतिषेध रूप अप्रत्यक्ष हेतुनैं कहो हौ तौ प्रतिषेध करनें योग्य पदार्थनैं विद्यमान होतां संतां प्रतिषेधकी सिद्धि है यातैं विधि विषय सिद्धि है ऐसैं कथंचित्प्रत्यक्ष पणांको उत्पत्ति है यातैं भी हेतु असिद्ध है वहुरि अविद्यमान---शशाका सींगनैं इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं होतां संतां तथा विद्यमान विज्ञानादिकनिनैं भी इंद्रिय प्रत्यक्ष नहीं होतां संतां अप्रत्यक्ष पणांकी प्रतीतितैं हेतुकै अनेकांतिकता है ऐसैं कहतां संतां वादी कहै है कि विज्ञानादिकनिकै स्व संवेद्यपणांतैं तथा योग प्रत्यक्ष पणांतैं अप्रत्यक्ष

हेतुकै अनेकांतिक पणांको अभाव है। इहां जैनी कहै है कि विज्ञानादिकनिनैं स्वसंवेद्य योगि प्रत्यक्ष मानिये है तौ आत्मा भी स्वसंवेद योगी प्रत्यक्ष है याकै माननेमैं कहा असंतोष है। वहुरि दृष्टांत भी साध्य साधन रूप दोऊ धर्मनि करि विकल है क्योंकि पूर्वोक्त विधि करि अप्रत्यक्ष पणांको अर नास्तित्वपणांकी असिद्धि है यातैं वहुरि और सुनूं कि सर्व वाक्यार्थके विधि प्रतिषेधात्मक-पणांतैं कोऊ ही पदार्थ सर्वथा निषेधकै गम्य नहीं है अर अस्तित्वनैं होतां संतां वो पदार्थ उभयात्मक है ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं कुरव जातिके वृक्षनिकैं रक्त श्वेत पणांका निषेधनैं होतां संता भी रक्त श्वेत नहीं है तौ हू वर्ण रहित नहीं है अर प्रतिषेध पणांतैं रक्त श्वेत नहीं है ऐसैं विद्यमान वस्तु भी पर स्वरूप करि नहीं है अर प्रतिषेधनैं होतां संतां भी निज स्वरूप करि है, ऐसैं सिद्ध है वहुरि तैसैं ही प्राचीन सिद्धांत है। श्लोक--अस्तित्वमुपलब्धिश्च कथंचिदसतःस्मृतेर्नास्तितानुपलब्धिश्च कथंचित्सत एव ते ॥१॥ सर्वथैव सतो नेमौ धर्मौ सर्वात्मदोषतः सर्वथैवाऽसतो नेमौ वाचां गोचरताऽत्ययात् ॥२॥ अर्थ--अस्तित्व अर उपलब्धि कथंचित् असत्कै भी है क्योंकि असत्की भी स्मृति होय है। वहुरि नास्तिता अर अनुपलब्धि भी कथंचित् सत्कै ही होय है। वहुरि वै ये अस्तित्व अर उपलब्धि दोऊ धर्म सर्वथा ही सत्कै भी नहीं होय है क्योंकि सर्वात्म नामा दोष आवै है यातैं। वहुरि नास्तिता अर अनुपलब्धि ये दोऊ धर्म्म सर्वथा ही असत्कै भी नहीं होय है क्योंकि वाणीकै गोचरपणांका उल्लंघनतैं ॥२॥ नास्तिपणां करि अर असत्प्रत्यक्षपणां करि भी रहित वस्तु जो है सो कथंचित् अवस्तु है ऐसैं धर्मो असिद्ध है या प्रकार और भी एकांतवादीनि करि प्राप्त किया हेतु जे हैं ते दोषवांन पणां करि त्याज्य है ॥१६॥ अबैं आत्माका अस्तित्वनैं सिद्ध करिये है। वार्तिक--ग्रहणविज्ञानासंभवफलदर्शनाद् गृहीतृसिद्धिः ॥१७॥ अर्थ--जो ये पूर्वकृत कर्म करि रचे अर सहकृत तथा पृथक् कृत स्वभावकी सामर्थ्यतैं उत्पन्न भयो है भेद जिनमैं अर रूप रस गंध स्पर्श शब्दके ग्राहक ऐसैं चक्षु रसना घ्राण त्वचा कर्ण

नामके धारक इन्द्रिय जे हैं ते अर इन्द्रिय सनिकर्ष जनित विज्ञान जे हैं ते हैं तथापि तिनकै विषैं नहीं संभवै ऐसो विशेष रूप फल प्राप्त होय है प्रश्न, सो कहा है? उत्तर, आत्म स्वभावका स्थानको ज्ञान है सो यो विषयकी भलै प्रकार प्रतीति रूप है सो इन्द्रियनिकै तो अचेतन पणांतैं नहीं संभवै है अर इन्द्रिय संनिकर्ष रूप विज्ञाननिकै चणिक पणांतैं नहीं संभवै है अर एकार्थग्राही पणांतैं तथा उत्पत्तिकै अनंतर रुकवातैं भी नहीं संभवै है अर विषयकी भलै प्रकार प्राप्ति रूप फल देखिये है सो यो अकस्मात् नहीं देखिये है यातैं विषयकी प्रतिपत्तिमें चतुर इंद्रियनितैं तथा इंद्रिय संनिकर्ष ज्ञानतैं भिन्न ऐसो कोऊनैं होनों योग्य है यातैं विषयनैं ग्रहण करन वारा आत्माकी सिद्धि है ॥१७॥ किंच वार्तिक---अस्मदात्मास्तित्वप्रत्ययस्य सर्वविकल्पेष्विष्टसिद्धेः ॥१८॥ अर्थ---और सुनूं कि जो यो हमारो आत्मा है ऐसी प्रतीति जो है सो संशय अनध्यवसाय विपर्यय अर सम्यक प्रत्यय रूप जे सर्व विकल्प तिनकै विषैं इष्टनैं सिद्ध करै है तिनमें प्रथम ही संशय तौ नहीं है क्योंकि आत्माकै निर्णयात्मक पणों है यातैं अर संशयनैं होतां संतां भी संशयका आलंबन पणांतैं आत्माकी सिद्धि है यातैं क्योंकि अवस्तु विषय संशय नहीं होय है अर अनध्यवसाय भी नहीं है क्योंकि जात्यंधकै अर वधिरेकै रूपकै अर शब्दकै समान अनादितैं भले प्रकार प्रतीति है यातैं अर ऐसैं ही विपर्यय भी नहीं है क्योंकि पुरुषमें स्थाणुकी प्रतीतिनैं होतां संतां स्थाणुकी सिद्धिकै समान आत्माका अस्तित्वकी सिद्धि है अर सम्यक प्रतीत तौ विसंवाद रहित ही है यो आत्माको अस्तित्व है ऐसैं हमारो पक्ष सिद्ध है ॥१८॥ इहां भी प्रश्नोत्तररूप वार्तिक---संतानादिति चेन्न तस्य संवृति सत्वाद् द्रव्यसत्वे वा संज्ञाभेदमात्रम् ॥१९॥ अर्थ--प्रश्न, संतान नामा कोऊ एक पदार्थ है सो इंद्रिय सन्निकर्ष रूप विज्ञानका आत्म स्वभावका स्थानादिको भलै प्रकार प्रतिपादन करनेवारो है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा संतानकै संवृति स्वरूप पणों है कि उपचार स्वरूप पणों है यातैं सो ऐसैं है कि आत्मानैं नहीं होतां संतां

वो संतान निश्चय करि उपचार स्वरूप होतो संतो अपनैं कल्पित स्वरूप जो है ताके विषैं विशेष प्रतीति रूप कैसैं होय। अर्थात् संतानकूं उपचार स्वरूप माननेंतैं सामान्य ज्ञान होनां संभवै है तथापि विशेष ज्ञान होना नाहीं संभवै है अर संतानके द्रव्यत्व अंगीकार करिये तो संज्ञामात्र भेद है अर्थात् आत्माको ही नाम संतान है यातैं अर्थमैं विवाद नहीं है। बहुरि वादीनैं जो कह्यो हुतौकि आत्मा है तोहू उपयोगकै लक्षण पणांकी उत्पत्ति नहीं है क्योंकि उपयोगकै अनवस्थान पणो है यातैं याको उत्तर ग्रंथकार कहै है कि कथंचित् अवस्थानतैं उपयोगकै लक्षण पणांकी उपपत्ति है क्योंकि उपयोगको सर्वथा विनाश तथा सर्वथा अवस्थान नहीं अंगीकार करिये है। प्रश्न, तो कहा अङ्गीकार करिये है? उत्तर कथंचित् विनाश है कथंचित् अवस्थान है सो पर्यायका आदेशतैं विद्यमान अर्थकी अनुपलब्धितैं विनाश है अर द्रव्यार्थका आदेशतैं अवस्थान है ऐसैं केई वेर परीक्षा कीयो है तातैं उपयोगकै लक्षण पणौं उत्पन्न होय है ॥१९॥ तथा वार्तिक—तदुपरमाभावाच्च ॥२०॥ अर्थ—और सुनूं कि कोउ उपयोगको विनाश है ऐसैं उपयोगकी परंपरा नहीं विश्राम लेवै है यातैं उपयोगके लक्षण पणौं निश्चय करनौं योग्य है ॥२०॥ तथा वार्तिक—सर्वथा विनाशे पुनरनुस्मरणाभावः ॥२१॥ तथा और सुनूं कि जो सर्वथा उपयोगको विनाश होय है तौ अनुस्मरणको अभाव होय है अर निश्चय करि यो अनुस्मरण अपना अनुभव किया अर्थको देखिये है अर नहीं तौ नहीं अनुभव कीयाको अनुस्मरण देखिये है अर नहीं अन्यकरि अनुभव कियाको अनुस्मरण देखिये है अर अनुस्मरणका अभावतैं अनुस्मरण है मूल जाको ऐसो सर्वलोक व्यवहार विनाशनैं प्राप्त होय है ॥२१॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—उपयोगसंबंधो लक्षणमिति चेन्नान्यत्वे संबंधाभावात् ॥२२॥ अर्थ—प्रश्न, उपयोग लक्षण आत्माको नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहे तैं? उत्तर, अन्यपणांतैं प्रश्न, तौ कहा है? उत्तर, उपयोगको संबंध लक्षण है याको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं देवदत्तको लक्षण दंड नहीं है। प्रश्न, तौ कहा है उत्तर, दंडको संबंध

लक्षण है अर जो दंड ही लक्षण है तौ असंबद्ध दंड भी लक्षण होय ऐसैं करि कह्यो है कि क्रियावान गुणवान समवाय है कारण जानैं ऐसो द्रव्यको लक्षण है। इहां आचार्य कहै है कि सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अन्यपणांनैं होतां संता संबंधका अभाव है यातैं अर जो द्रव्यतैं गुण अर्थान्तर भूत है ताकै संबंधको अभाव है ऐसैं पूर्वै कह्यो है तातैं आत्मभूत लक्षण उपयोग है ऐसैं कोऊ दोष नहीं है ॥ २२ ॥ अबैं नवमां सूत्रकी उत्थानिका कहिये है कि जो उपयोग कह्यो ताके भेद दिखावनैं निमित्त कहै है। सूत्रम्—

स द्विविधोऽष्ट चतुर्भेदः ॥९॥

अर्थ—सो उपयोग दोय प्रकार है। सो अष्ट भेद अर च्यार भेद रूप है। प्रश्न, कैसैं दोय प्रकार है? उत्तररूप वार्तिक—साकारानाकारभेदाद्द्विविधः ॥ १ ॥ अर्थ—एक तौ साकार उपयोग दूसरो अनाकार उपयोग ऐसैं दोय प्रकार हैं तिनमें साकार तौ ज्ञान है अर अनाकार दर्शन है ॥१॥ वार्तिक—अभ्यर्हितत्वाज्ज्ञानग्रहणमादौ ॥२॥ अर्थ—निश्चय करि ज्ञान पूजनीक है क्योकि पदार्थनिका प्रकाशपणातैं अर दर्शन पदार्थनिको आलोकन मात्र है यातैं तातैं पूर्वकाल भावी भी दर्शन जो है तातैं ज्ञान प्रथम ग्रहण करिये है। प्रश्न, ज्ञानको ग्रहण आदिमैं करिये है ऐसैं कैसैं जानिये है ॥२॥ उत्तररूप वार्तिक—संख्याविशेषनिर्देशात्तन्निश्चयः ॥३॥ अर्थ—जातैं संख्या विशेषको निर्देश करिये है कि अष्ट भेद अर च्यार भेद है तातैं ज्ञानको निश्चय जानने योग्य है प्रश्न, चतुर शब्दको पूर्वनिपात करि होवो योग्य है क्योंकि संख्याया अल्पीयस्यादिवचनात् यो व्याकरणको सूत्र है ताको ऐसो अर्थ है कि संख्यावाची शब्द अल्प प्रमाणवान जो है ताको स्थापन आदिमैं होय ऐसा वचनतैं ताको दृष्टांत ऐसो है कि जैसैं चतुर्दश, उत्तर यो दोष नहीं है क्योंकि पूर्वै ऐसैं कह्यो है कि ज्ञानकै अभ्यर्हित पणों है यातैं पूर्वनिपात है तिनमैं ज्ञानोपयोग अष्ट प्रकार है सो एसैं है कि मतिज्ञान १ श्रुतज्ञान

२ अवधिज्ञान ३ मनःपर्ययज्ञान ४ केवलज्ञान ५ मत्यज्ञान ६ श्रुताज्ञान ७ विभंगज्ञान ८ अर दर्शनोपयोग चार प्रकार है सो ऐसैं है कि चक्षु दर्शन १ अचक्षु दर्शन २ अवधि दर्शन ३ केवल दर्शन ४ अर इनके लक्षणादिक पूर्वै व्याख्यान किये। प्रश्न, अवग्रहतैं अन्य दर्शन नहीं है? उत्तर, ऐसैं कहौ तो सुनूं कि इनकै अन्य पणौं पूर्वै कह्यो है कि छद्मस्थनिकै विषैं तौ तिन दोउनिकै क्रम करि वृत्ति है अर निरावरण केवल ज्ञान जो है ताकै विषैं एकै कालवृत्ति है। प्रश्न, दर्शनको अर ज्ञानको स्वभाव तौ एक जाननरूप अर केवलीकै दोऊ एकै काल कहे तो इन दोउनिनैं केवलीकै विषैं भी न माननेको हेतु कहा है? उत्तर, पदार्थ मात्रको स्वरूप सामान्य विशेषात्मक है अर केवली यथावत ग्रहण करै है तातैं एकै काल ग्रहण करै है तौ हू सामान्य विशेषरूप ही ग्रहण करै है यातैं केवलीकै भी दोऊ भेद संभवै है ॥९॥ अबै दशमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ग्रहण कियो है परिणाम जानैं अर सर्व आत्मामैं साधारण ऐसो यथोक्त उपयोग जो है ताकरि उपलक्षित उपयोगी आत्मा जे हैं ते दोय प्रकार है ऐसैं जनावता संता कहै है। सूत्रम्---

संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥

अर्थ--सो आत्मा संसारी अर मुक्त ऐसैं दोय प्रकार है। वार्त्तिक--आत्मोपचितकर्मवशादात्मनो भवान्तरावाप्तिः संसारः ॥१॥ अर्थ---आत्मा करि संचय कियो कर्म अष्ट प्रकार है सो प्रकृति, स्थिति, अनुभाग बन्ध रूप भेद करि भेदनैं प्राप्त भयो जो है ताका वशतैं आत्माकै भवान्तरकी प्राप्ति जो है सो संसार है। ऐसा कहिये है। प्रश्न, या वार्त्तिकमें दोय आत्मपदनिको ग्रहण कहा निमित्त है? उत्तर, आत्मा ही कर्मनिको कर्त्ता है। अर कर्मका फलको भोक्ता भी सो ही आत्मा है। या प्रकारकूं दिखावनें निमित्त दोय आत्मपद कहे हैं, अर और ऐसें मानैं है कि जो गुण सतो गुण, तमागुण रूप त्रैगुण जे हैं सो तो कर्त्ता है, अर परमात्मा भोक्ता है? उत्तर, सो

अयुक्त है क्योंकि अचेतनके पुण्य पापका विषयमें कर्त्तापणांकी घटादिकके समान अनुपपत्ति है यातैं अर परकृतका फलको भोक्ता अन्यनैं होतां संतां अनिर्मोक्षको प्रसङ्ग आवे है। अर अपना कियाको नाश होय है तातैं जो कर्त्ता है सो ही भोक्ता है या युक्त है। अर द्रव्यतैं तथा क्षेत्रतैं तथा कालतैं तथा भावतैं तथा भवतैं संसार पांच प्रकार है ॥१॥ वार्त्तिक—स येपामस्ति ते संसारिणः ॥२॥ अर्थ—अर वो संसार जिनके है ते संसारी है ॥२॥ वार्त्तिक—निरस्तद्रव्यभावबंधा मुक्ताः ॥३॥ अर्थ—बंध दोय प्रकार है, तहां एक द्रव्य बंध है अर एक भाव बन्ध है तिनमें कर्म नोकर्म रूप परिणत पुद्गल द्रव्य विषय जो है सो तो द्रव्य बंध है अर या द्रव्यबन्ध कृत क्रोधादि परिणाम जो है ता करि वशीकृत आत्मा जो है सो ही भावबन्ध है सो दोऊ ही बन्ध जिननें दूर किये ते मुक्त जीव हैं ॥३॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक---द्वंद्वनिर्देशो लघुत्वादिति चेन्नार्थान्तरप्रतीतेः ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, इहां द्वन्द्व समास युक्त निर्देश करनौं योग्य है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, लघु पणांतैं, अर निश्चय करि द्वंद्व समासनैं होतां संतां कह्या अर्थको सिद्ध पणों है यातैं अर च शब्दका अप्रयोगनैं होनां संतां लाघव होय है। इहां ग्रंथकार कहै है कि सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण। उत्तर, अर्थान्तरकी प्रतीति होय है यातैं सो ऐसैं है कि संसारी अर मुक्त ऐसैं द्वंद्व समासनैं होतां संतां अल्पस्वरपणांतैं तथा अभ्यर्हित पणांतैं मुक्त शब्दके पूर्व निपातनैं होतां संतां मुक्त संसारिणः ऐसा प्राप्त होय है। अर ऐसां होत संतैं अर्थान्तर प्रतीति होय कि जा भाव करि संसार छुट्यो सो मुक्त संसार है अर भाववान है ते मुक्ति संसारी है कि छुट्यो है संसार जिनके ऐसा अर्थकी प्रतीति होय है अर ऐसैं होत संतैं मुक्ति जीवनिकै ही उपयोग पणों कह्यो होय अर संसारीनिकै उपयोग पणों नहीं कह्यो होय यातैं वाक्य ही करिये है कि भिन्न भिन्न ही पद करिये है, द्वंद्व समास रूप नहीं करिये है ॥४॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक---समुच्चयाभिव्यक्त्यर्थं च शब्दोऽनर्थक इति चेन्नोपयोगस्य गुणभावप्रदर्श-

नार्थत्वात् ॥५॥ अर्थ---प्रश्न, सूत्रमें च शब्द है सो अनर्थक है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अर्थभेद-तैं समुच्चय सिद्धि है कि द्वि प्रकारकी सिद्धि है यातैं क्योंकि निश्चय करि संसारी अर मुक्त भिन्न ही है। तातैं विशेषण विशेष पणांकी अनुपपत्ति है यातैं समुच्चय सिद्धि है सो जैसैं पृथिवी अप तेज वायु ये भिन्न भिन्न है। तैसैं ही संसारी अर मुक्त भिन्न भिन्न ही है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उपयोगकै गुणभावका प्रदर्शनार्थ पणांतैं अर यो च शब्द समुच्चयके अर्थि नहीं है। प्रश्न, तौ काहेकै अर्थि है ? उत्तर, अन्वाचयके अर्थि है। प्रश्न, अन्वाचय किसको कहौ हौ ? उत्तर, जहां निश्चय करि एक तो प्रधानभूत होय अर और गौणभूत होय सो अन्वाचय कहिये है। ताको दृष्टान्त ऐसौ है कि भेद्त्यं चर देवदत्तं चानयेति, याको अर्थ ऐसौ है कि भिक्षा करो, अर देवदत्तनें भी लाओ, या वाक्यमें प्रधानभूत तो भिक्षाको करनौं है अर देवदत्तको लावनौं अप्रधानभूत है। तैसैं संसारी तो प्रधानपणां करि उपयोगवान है, और मुक्त जीव गुणभाव करि उपयोगवान है ऐसैं अन्वाचय रूप उपयोगकूं दिखावनेकै अर्थि च शब्द है। प्रश्न, संसारीनिकै विषैं मुख्य उपयोग कैसैं है ? अर मुक्त जीवनिके विषैं गौण कैसैं है ? उत्तर रूप वार्तिक--परिणामान्तरसंक्रमाभावाद्ध्यानवत् ॥६॥ अर्थ-- जैसैं एकाग्र चिन्ता निरोधो ध्यान है सो ध्यान शब्दको अर्थ छद्मस्थनिके विषैं मुख्य है, क्योंकि चिन्ता जनित विक्षेपवान जे हैं तिनके ही चिन्ताका निरोधकी उपपत्ति है यातैं अर चिन्ताका अभावतैं केव-लीकै विषैं ध्यानको फल कर्मनिको झड़नौं जो है ताका दर्शनतैं उपचरित रूप ध्यान है। तैसैं ही उपयोग शब्दको अर्थ भी संसारीनिके विषैं मुख्य है क्योंकि परिणामान्तरका संक्रमणतै कि पलटनैंतैं अर मुक्त जीवनिकै विषैं परिणामका जो संक्रमण ताका अभावतै उपयोग गौण कल्पना करिये है क्योंकि उनकै उपलब्धि सामान्य है कि जैसा अनन्तरूप ज्ञानवर्त्तै है तैसा ही वर्तै है यातैं ॥६॥ वार्तिक---संसारिग्रहणमादौ बहुविकल्पत्वात्तत्पूर्वकत्वाच्च स्वसंवेद्यत्वाच्च ॥७॥

अर्थ-- संसारी पदको ग्रहण आदिके विषैं करिये है क्योंकि बहु विकल्पपणातैं कि संसारीनिकै गत्यादिक बहुत्व विकल्प है तथा तत्पूर्वकपणातैं कि ससारी पूर्वक ही मुक्त है, क्योंकि पूर्व संसारी है यातैं अर स्वसंवेद्यपणातैं कि संसारी स्वसंवेद्य है। क्योंकि गत्यादि परिणामनिकै अनुभूत पणौं है यातैं, अर मुक्तजीव जे हैं ते अत्यन्त परोक्ष हैं क्योंकि मुक्त जीवका अनुभवके अप्राप्तपणौं है यातैं ॥७॥१०॥ अब ग्यारमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है कि तिन भेदनिके विषै जानें ये शुभाशुभकर्मको जो फल ताका अनुभवनको जो सम्बन्ध ता करि वशीकृत हैं स्वभाव जिनको अर नहीं छूट्यो परिभ्रमण जिनके अर पूर्वकृत नाम कर्म रूप जो निमित्त ताकरि उत्पन्न भये हैं भेद जिनके ते प्राणी निश्चय करि जैसें होय तैसें वे जनावनैं निमित्त कहे है। सूत्रम्---

समनस्काऽमनस्काः ॥११॥

अर्थ---पंचेन्द्रिय पर्यन्त संसारी मनस्का अर अमनस्का भेद रूप दोय प्रकार है। ते मनकी निकटता थकी तथा नहीं निकटता थकी अपेक्षा करि संसारी दोय प्रकार है अर मन भी दोय प्रकार है। तहां एक द्रव्य मन है। दूसरो भावमन है। तिनमें पुद्गलविपाकी कर्मका उदयकी है अपेक्षा जाकै ऐसौ तो द्रव्यमन है। अर वीर्यान्तराय तथा नो इन्द्रियावरण कर्मका क्षयोपशम करि आत्माकै विशुद्धि जो सो भावमन है। अर या मन करि सहित प्रवर्तै यातैं समनस्क है। अर नहीं है मन विद्यमान जिनके ते अमनस्क है। ऐसें दोय प्रकार संसारी है। इहां वादी कहे है कि वार्त्तिक-- द्विविधजीवप्रकरणाद्यथासंख्यप्रसङ्गः ॥१॥ अर्थ --निश्चय करि प्रकरणमें आये जीव दोय प्रकार है अर तहां एक तों संसारी है अर दूसरा मुक्त जीव है, तिनमें संसारी समनस्क है, अर मुक्त जीव अमनस्क है ऐ। यथासंख्य अर्थ प्राप्त होय है, वार्त्तिक-- इष्टमिति चेन्न सर्वं संसारिणां समनस्कत्वप्रसंगात्---अर्थ--- प्रश्न, अर यो अर्थ इष्ट है

कि---संसारी समनस्क है अर मुक्त अमनस्क है, क्योंकि सिद्ध मन रहित ही है यातैं ऐसो कहो हो सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण, उत्तर सर्व संसारीनिकै समनस्क पणांको प्रसंग आवै है, यातैं क्योंकि एक दोय तीन, चार इन्द्रिय वाननिकै अर पंचेन्द्रियनिमें भी केइनिकै मन विषय विशेष व्यवहारका अभावतैं अमनस्कता इष्ट है, ताको वा अर्थ कूं इष्ट किये व्याघात होय अर यहां यथासंख्यको उत्तर और कहिये है ॥२॥ वार्त्तिक--प्रथक्‌योगप्रक्रमे संसारी संप्रत्ययः ॥३॥ अर्थ – जो यो प्रथक् योग करण है कि भिन्न सूत्र कियो है ता करि जानिये है कि इहां संसारी ही सम्बन्धनें प्राप्त होय है। अर निश्चय करि और तरह होतो एक ही होतौ एक ही योग करता कि संसारिणोमुक्ताश्च, समनस्कामनस्का इति ॥३॥ तथा उत्तर रूप वार्त्तिक–उपरिष्ट-संसारिवचनप्रत्यासत्तेश्च ॥४॥ अर्थ--संसारी ऐसो वचन उपरिष्ट है कि आगला सूत्रमें है ताका निकट पणातैं अर अभिसम्बन्ध होवातैं संसारोकी प्रतीति होय है ॥४॥ यहां वादी कहै है। वार्त्तिक---तदभिसम्बन्धे यथासंख्यप्रसङ्गः ॥५॥ अर्थ—जो उपरिष्ट संसारी वचन है ताको सम्बन्ध करिये तौ तहां त्रस स्थावर शब्दको ग्रहण है ता शब्द करि यथा संख्या प्राप्त होय है कि समनस्क त्रस हैं। अमनस्क स्थावर हैं ॥५॥ प्रश्नोत्तर रूपवार्त्तिक -- इष्ट-मेवेति चेन्न सर्वत्रसानां समनस्कत्वप्रसङ्गात् ॥६॥ अर्थ- -यो अर्थ इष्ट है ही कि त्रस समनस्क हैं अर स्थावर अमनस्क है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, सर्व त्रसनिकै समनस्क पणांका प्रसंगतैं द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रियवाननिकै अर असंज्ञी पंचेन्द्रि वाननिकै भी समनस्कपणौं प्राप्त होय, अर इनकै यो समनस्क पणौं अनिष्ट है। इहां उत्तर कहिये है कि यथासंख्य नहीं होय है, क्योंकि त्रस स्थावरको अनभिसम्बन्ध है यातैं सो ऐसो है कि संसारीको ग्रहण मात्र ही सम्बन्ध रूप करिये है, अर त्रस स्थावरको ग्रहण नहीं सम्बन्ध रूप करिये है, क्योंकि निश्चय करि सम्बन्ध इच्छाका वस करि होय अर एक योगका नहीं कर

वातैं त्रस स्थावरको सम्बन्ध नहीं करिये है। अर जो त्रस स्थावरका ग्रहण कर भी सम्बन्ध इष्ट होय तौ एक योग ही करिये कि समनस्कामनस्का संसारिणस्त्रसस्थावरा इति सो ऐसैं नहीं कियो ता कारणकरि जानिये है कि त्रस स्थावरको ग्रहण नहीं सम्बन्धरूप करिये है। अथवा एक योगका नहीं करवातैं मानिये है कि अनीततो संसारिणो मुक्ताश्च या वाक्यका ग्रहणको अर वक्ष्यमाण त्रस स्थावरा या वाक्यका ग्रहणको समनस्कामनस्का या वाक्यका ग्रहणकरि सम्बन्ध नहीं हैं ॥६॥ उत्तरका असमर्थनरूप वार्त्तिक—इतरथान्यतरत्र संसारिग्रहणे सतीष्टार्थत्वादुपरि संसारिग्रहणमनर्थकम् ॥७॥ अर्थ—और प्रकारकरि होय सो इतरथा कहिये। प्रश्न, कैसैं? उत्तर जो संसारि मुक्तका ग्रहणकरि तथा त्रस स्थावरका ग्रहण करि याकै सम्बन्ध होय तो एक ही योग्य करिये कि संसारिणः मुक्ताः समनस्कामनस्कास्त्रसस्थावराश्चेति। अर ऐसैं होत संतैं दोऊनिमैंसूं एक सूत्रमें संसारी पदकौ ग्रहण करने योग्य होय। प्रश्न, एक सूत्र में भी कौनसे में होय? उत्तर—समनस्कामनस्का सूत्रकी आदिमें तथा अन्तमैं करने योग्य होय। अर ऐसैं होतसंतैं इष्ट अर्थका सिद्धपणातैं संसारिणस्त्रसस्थावरा या सूत्रमें संसारीपदको ग्रहण अनर्थक होय ॥७॥ वार्त्तिक—आदौ समनस्कग्रहणमभ्यर्हितत्वात् ॥८॥ अर्थ—आदिकै विषैं समनस्क पदको ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं? अभ्यर्हितपणातैं, प्रश्न, कैसैं अभ्यर्हितपणो है? उत्तर, समनस्कके विषैं समस्त इन्द्रिय हैं यातैं अभ्यर्हित पणो है ॥८॥११ अवे द्वादशमां सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं कि जो ये निज कृतकर्मफलकी अपेक्षाकरि परिपूर्ण तथा अपरिपूर्ण इन्द्रियग्रामकरि ग्रहण किया द्विविधपणांकरि संयुक्त अर कार्मण शरीरकी प्रणालिकानैं ग्रहण करायो है नियमरूप अवस्था विशेष जिनको ते निश्चय करि जैसैं होय है तैसैंके जनावनैं निमित्त कहे हैं॥ सूत्रम्—

संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥

अर्थ—संसारी जीव त्रस अर स्थावर भेदरूप दोय प्रकार हैं। इहां कोऊ कहै है कि त्रस कहा कहिये है अर स्थावर कहा कहिये है? उत्तररूप वार्त्तिक-त्रसनामकर्मोदयापादितवृत्तयस्त्रसाः ॥१॥ अर्थ—जीवविपाको त्रस नाम कर्म जो है ताका उदयकरि ग्रहण करी है वृत्ति जिननैं ते त्रस हैं, ऐसैं कहिये है ॥१॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—त्रसेरुद्वेजनक्रियस्यत्रसा इति चेन्न गर्भादिषु तदभावादत्र सत्वप्रसङ्गात् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, उद्वेजनार्थ त्रस धातुको त्रस शब्द बनैं है, तातैं ऐसी निरुक्ति होय है कि त्रस्यन्तीति त्रसा याको अर्थ ऐसो होय है कि भय कारण प्राप्त होत संतैं त्रास युक्त होय सो त्रस है। उत्तर, सो नहीं हैं, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गर्भादिकनिकैविषैं त्रसित पणांको अभाव है यातैं अत्रसपणांको प्रसंग आवै हैं यातैं गर्भस्थित तथा अंडस्थ, मूर्च्छित, सुषुप्त, आदि त्रस जे हैं तिनकै वाह्यभयका निमित्तको निकट पणौं होत संतैं भी चलनका अभावतैं त्रसपणौं होय। प्रश्न, तौ या शब्दकी उत्पत्ति त्रस्यन्तीति त्रसा ऐसी कैसे है? उत्तर, या निरुक्ति व्युत्पत्तिमात्र है अर अर्थ है सो प्रधानताकरि गो शब्दकी प्रवृत्तिकै समान नहीं आश्रय करिये है ॥२॥ वार्त्तिक—स्थावरनामकर्मोदयोपजनितविशेषाः स्थावराः ॥३॥ अर्थ—जीव विपाकी जो स्थावर नामकर्म ताका उदयकरि उत्पन्न भयो है विशेष जिनके ते स्थावर हैं, ऐसैं कहिये है ॥३॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—स्थानशीला स्थावरा इति चेन्न वाय्वादीनामस्थावरत्वप्रसङ्गात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, तिष्ठन्तीत्येवंशीलाः स्थावराः या निरुक्तिको अर्थ ऐसो है कि तिष्ठनेको है स्वभाव जिनको ते स्थावर है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वायु आदिकनिकै अस्थावरपणांको प्रसङ्ग आवै है यातैं वायु, तेज, जल, जे हैं तिनकै निश्चय करि देशान्तरकी प्राप्तिका दर्शनतैं अस्थावरपणौं होय। प्रश्न, तौ या

निरुक्ति होय है कि स्थानशील हैं ते स्थावर है सो कैसें हैं ? उत्तर, या प्रकार ही रूढ़ि विशेष जो है ताका बलका लाभतैं कहूं वर्त्तै है ॥४॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—इष्टमेवेतिचेन्नसमयार्थानवबोधात् ॥५॥ अर्थ—प्रश्न, यो मत इष्ट ही है कि वायु आदिकनिकैं अस्थावर पणौं है ? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सिद्धान्तका जो अर्थ ताका अनवबोधतैं क्योंकि निश्चय-करि सिद्धान्त एसैं अवस्थित है कि सत्की प्ररूपणांकैं विषैं कायका अनुवादमें त्रसनिको द्वीन्द्रियतें आरम्भकरि अयोगिकेवली पर्यन्त अवस्थान है, तातैं चलन अचलनकी अपेक्षा त्रस स्थावरपणौ नहीं है। कर्मोदयकी अपेक्षा ही है। ऐसैं स्थित है कि सिद्ध है ॥५॥ वार्त्तिक—त्रसग्रहणमादावल्पाच्तरत्वादभ्यर्हितत्वाच्च ॥६॥ अर्थ—त्रसको ग्रहण आदिकै विषैं करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर अल्प स्वरवानपणातैं तथा अभ्यर्हितपणांतैं क्योंकि त्रसनिमें सर्व उपयोगनिका सम्भव है यातैं अभ्यर्हितपणौं है ॥६।१२॥ आगैं तेरमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि सामान्य विशेष संज्ञाकरि ग्रहण किया भेदमात्रका विज्ञाननैं होतां संतां विशेषकरि अविज्ञात त्रस स्थावर जे हैं तिनको निर्णय कर्त्तव्य होत संतैं एकेन्द्रियनिकै अत्यन्त बहुभेद वक्तव्यपणांका अभावतैं आनुपूर्वीमैं भेद करि स्थावर भेदनिकी प्रतिपत्तिके अर्थि कहै हैं। सूत्रम्—

पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥

अर्थ—पृथिवी १ अप २ तेज ३ वायु ४ वनस्पती ५ इन पांच भेदनि रूप स्थावर हैं वार्त्तिक—नामकर्मोदयनिमित्ताः पृथिव्यादयः संज्ञाः ॥१॥ अर्थ—स्थावरनाम कर्मका भेद पृथिवी कायिक है अर जीवनिकैं विषैं पृथिव्यादि कर्मका उदयको है निमित्त जिननैं ऐसा पृथिवी आदि संज्ञा जानवे योग्य है। अर प्रथन आदि धातुतैं उत्पन्न है तो हू रूढ़िका वशतैं कथनादिककी अनपेक्षा करि वर्त्तैं । अर इनि पृथिवी आदिकै आर्षकै विषैं प्रत्येक प्रत्येक चार

प्रकार पणौं कह्यौ है। प्रश्न, सो कैसैं ? उत्तर, सो कहिये है कि पृथिवी १ पृथिवीकाय २ पृथिवी कायिक ३ पृथिवी जीव ४ इत्यादि पांचूं स्थावर भेदनिके नाम जाननैं तहां अचेतन वैश्रिसिक परिणाम करि रची- काठिन्यादि गुणात्मिका जो है सो पृथिवी है। अर अचेतन पणातैं पृथिवी कायिक नाम कर्मका उदयनैं अविद्यमान होतां संता भी प्रथन क्रिया करि उपलक्षिता ही या है। अथवा पृथिवी सामान्य नाम है-क्योंकि उत्तरके तीनूं भेद जो है तिनकै विषैं सम्भवै है यातैं, अर काय नाम शरीरका है तातैं पृथिवी कायिक जीवकरि परित्यक्त मृतक मनुष्य आदिकी कायकै समान जो है सो पृथिवी काय है ॥३॥ अर्थात् निर्जीव पुद्गल स्कंध मेरु जम्बू वृक्ष्या जो है सो पृथिवी काय है। इहां प्रश्न उपजै है कि निर अवयव पृथिवी परमाणूमैं पृथिवी काय नाम कैसै प्रवर्तेगा ? उत्तर, अपेक्षा पृथिवी काय रूप बहुप्रदेशी होनेकी शक्ति अपेक्षा पृथिवी काय यह कहना सम्भव है। अर पृथिवी नाम जाकै है सो पृथिवी कायिक है सो वा कायका सम्बन्ध करि वशीकृत आत्मा है, अर ग्रहण कियो है पृथिवी कायिक नाम कर्मको उदय जानै ऐसौ हुवो संतौ कार्मणका योग मैं तिष्ठतौ विग्रह गतिमैं आत्मा यावत् पृथिवीनैं कायपणां करि नहीं ग्रहण करै तावत् सो पृथिवी जीव है। बहुरि अप १ अपकाय २ अपकायिक ३ अपजीव ४ तेज १ तेजस्कायः २ तेजस्कायिक ३ तेजोजीवा ४ वायु १ वायुकाय २ वायुकायिक ३ वायुजीवः ४ वनस्पति १ वनस्पतिकाय २ वनस्पतिकायिक ३ वनस्पतिजीव ४ ऐसो जोड़ने योग्य है ॥१॥

वार्त्तिक—सुखग्रहणहेतुत्वात् स्थूलमूर्त्तित्वादुपकारभूयस्त्वाच्चादौ पृथिवी ग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—पृथिवीनैं होतां संतां जलको कुंभ करि अर अग्निकौं शारावादिकन करि वायुको कर्म घटादिकरि ग्रहण करिये है। तथा पृथिवी, विमान, भवन प्रस्तार आदि भावरूप परिणामनैं स्थूल मूर्त्ति है। अर स्नान पान आदि उपकार जलको है। अर पाक शोक प्रकाशन आदि उपकार अग्निको है, अर खेद स्वेदका दूर करना आदि उपकार वायुको है, अर तिन सवनिका उपकारतैं पृथिवीका

उपकार प्रचुर है. अर आसन, आच्छादन, वसन आदि भावरूप उपकार वनस्पतिका है। ऐसैं अप आदिकका जो उपकार भिन्न भिन्न कह्या सो पृथिवीके होतां संतां सम्भवे है। अर जो पृथिवीका उपकार नहीं होय तो वो उपकार कहां अवस्थित रहनें वाके होय यातैं पृथिवीको ग्रहण आदिमैं करिये है ॥२॥ वार्त्तिक—तदनन्तरमपां वचनं भूमितेजसोर्विरोधादाधेयत्वाच्च ॥३॥ अर्थ—पृथिवीके अनन्तर अपको वचन करिये है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, भूमिकं अर तेजके विरोध है यातैं, अर आधेय है यातैं सो ऐसैं है कि निश्चय करि भूमिको विरोधी तेज है, क्योंकि तेजके विनाशकपणौं है यातैं अप करि व्यवधान करिये है ओर भूमि जलको आधार है, अर जल आधेय है यातैं ॥३॥ वार्त्तिक—ततस्तेजोग्रहणं तत्परिपाकहेतुत्वात् ॥४॥ अर्थ—पृथिवीका अर अपका परिपाकका हेतु तेज है। तातैं तिनके अनन्तर तेजको ग्रहण करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—तेजानन्तरं वायुग्रहणं तदुपकारकत्वात् ॥५॥ अर्थ—निश्चयकरि वायु तिर्यक् प्रवचन कर्मा है अर तेजको प्रेरणा करि उपकार करे है। यातैं तेजके अनन्तर वायुको ग्रहण करिये है ॥५॥ वार्त्तिक—अन्ते वनस्पतिग्रहणं सर्वेषां तत्प्रादुर्भावे निमित्तत्वादनंन्तरगुणत्वाच्च ॥६॥ अर्थ—निश्चयकरि वनस्पतिका या प्रादुर्भावके विषै पृथिवी आदि सर्व निमित्तपणांनैं प्राप्त होय है। अर तिन सर्वनिकै मध्य वनस्पति कायिक अनन्तगुणा है। तातैं अनन्तके विषै ग्रहण करिये है सो पांच प्रकार प्राणी स्थावर है। प्रश्न, इनकै प्राण कितने है? उत्तर, चार हैं। प्रश्न, ते कौनसे हैं, उत्तर, स्पर्शन इन्द्रिय प्राण १ काय वल प्राण २ उच्छ्वास निश्वास प्राण ३ आयु प्राण ४ ऐसैं चार हैं ॥६॥१३॥ अबै चतुर्दशमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। वे त्रस कौन हैं, ऐसौ प्रश्न होत संतैं इहां कहै है। सूत्रम्—

द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥

अर्थ—द्वीन्द्रियादिक त्रस हैं, वार्त्तिक—आदि शब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातो व्यवस्था ॥१॥

अर्थ—आदि शब्दकै प्रकार सामीप्यादि वचन पणातैं तिनमैं वक्ताकी इच्छातैं इहां व्यवस्था अर्थमें आदि शब्द ग्रहण करिये है अर आगमके विषैं निश्चयकरि ते व्यवस्था रूप है। सो ऐसैं हैं कि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय ऐसैं चार प्रकार त्रस हैं। प्रश्न, याको समास कौनसो हैं। उत्तर, दोय है इन्द्रिय जाके सो द्वीन्द्रिय है, अर द्वीन्द्रिय है आदि विषय जिनके ते द्वीन्द्रियादय है। ऐसैं बहुव्रीही समास होय है ॥१॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—अन्यपदार्थनिर्देश-द्वीन्द्रियाग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—इहां प्रधान पणांकरि अन्य पदार्थको आश्रय है तातैं द्वीन्द्रियको ग्रहण उपलक्षण रूप है। यातैं त्रसका ग्रहणमैं द्वीन्द्रियको ग्रहण नहीं प्राप्त होय है। याको दृष्टान्त ऐसो है:कि जैसैं पर्वत आदि क्षेत्र हैं। यामैं क्षेत्रका ग्रहण करि पर्वत नहीं ग्रहण करिये है। उत्तररूप वार्त्तिक—न वा तद्गुणसंविज्ञानात् ॥३॥ अर्थ-यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, तद्गुण संविज्ञान नाम समासतैं सो जैसैं शुक्लवाससं आनय ऐसैं कहतां संता शुक्ल वास्त्रवाननैं लाइये है, तैसैं यहां भी द्वीन्द्रियको अन्तरभाव है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—अवयवेन विग्रहे सति समुदायस्यवृत्यर्थत्वद्वा ॥ ४ ॥ अर्थ—अथवा अवयवनि करि समास करिये है अर वृत्तको अर्थ समुदायरूप करिये है। यातैं उपलक्षणरूप द्वीन्द्रियको भी त्रसपणाकैं विषैं अन्तर्भाव है सो जैसैं सर्वादिः सर्वनाम ऐसा सूत्रमें सर्वादिकहनैंतैं सर्व शब्दको भी सर्वनाम में अन्तर्भाव होय है। प्रश्न, ऐसैं है तो पर्वतादीनि क्षेत्राणि या वाक्यमें पर्वतको बहिर्भाव कैसैं है? उत्तर, पर्वतके क्षेत्रपणांका सम्भवको अभाव है यातैं बहिर्भाव है ॥ प्रश्न, वे ये च्यारि प्रकारके प्राणी त्रस है तिनके प्राण कितने हैं? उत्तर, प्रथम ही द्विन्द्रियकै षट् प्राण हैं ते ऐसैं हैं कि स्पर्शन अर रसन ये दोय तो इन्द्रिय प्राण हैं, तथा बचन काय बल अर एक आयु उच्छ्वास निश्वास प्राण है अर त्रीन्द्रियकै वे ही षट् प्राण घ्राणेन्द्रिय करि अधिक सात होय है, अर चतुरिन्द्रियके वे ही सात प्राण चक्षुः इन्द्रिय करि अधिक आठ होय है, अर पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य असंज्ञी ये

हैं तिनके वै ही आठ प्राण श्रोत्र इन्द्रिय करि अधिक नव होय है। अर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य, देव, नारकनिकै वै ही नौ प्राण मनो इन्द्रिय करि अधिक दश होय हैं॥ १४॥ अवैं पंनरमा सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं। आदि शब्द करि दिखाये अर नहीं जानी है संख्या जिनकी ऐसैं इन्द्रिय जे हैं ते इतने ही हैं ऐसा अवधारणकै अर्थ कहैं हैं। सूत्रम्—

पंचेन्द्रियाणि ॥१५॥

अर्थ—इन्द्रिय पांच ही हैं। अथवा या सूत्रकी उत्थानिका ऐसैं भी है कि मिथ्यात्वीजन अपनी प्रक्रिया प्रगटि करनेके इच्छक हैं तिनमें कोऊ तो पांच इन्द्रिय निश्चय करैं हैं अर कोऊ षट् इन्द्रिय निश्चय करै हैं। अर कोऊ एकादश इन्द्रिय निश्चय करै हैं। तिनमें अनिष्ट संख्याकी निवृत्तिकै अर्थ नियम करता संता सूत्र कहैं है कि इन्द्रियां पांच ही हैं अधिक नहीं हैं। वार्त्तिक-इन्द्रस्यात्मनो लिंगमिन्द्रियम्॥ १॥ अर्थ—नहीं निवृत्त भयो है कर्म बन्ध जाकै ऐसौ हो तो हू परमेश्वरपणांकी शक्तिका योगतैं इन्द्र नामकै योग हो तो संतो भी आप पदार्थनितैं ग्रहण करनेकूं असमर्थ उपभोक्ता आत्मा जो है ताकै उपयोगको उपकरण स्वरूप लिंग जो है सो इन्द्रिय है ऐसैं कहिये हैं। वार्त्तिक—इन्द्रेण कर्मणा स्टष्टमिति वा॥ २॥ अर्थ—अथवा निज कृत कर्मको जो विपाक ताका वशतैं आत्मा देवेन्द्रादिकनिके विषैं तथा तिर्यंचनिके विषैं इष्ट अनिष्टनैं अनुभव करै है तातैं वा विषयमैं कर्म ही इन्द्रय है ताकरि रची जो है ऐसैं कहिये हैं ताके भेद स्पर्शनादिक पांच कहैंगे॥ २॥ वार्त्तिक—मनोपीन्द्रियमितिचेन्नानवस्थानात्॥ ३॥ अर्थ—प्रश्न, मन भी इन्द्रिय है? यातैं इन्द्रियनिकी गणनामें ग्रहण करने योग्य है, क्योंकि कर्मकरि मलिन अर असहायी अर स्वयमेव अर्थका चिन्तयन प्रति असमर्थ ऐसौ आत्मा जो है ताकै मनकी क्रिया कृत बलाधान है, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अनवस्थान

तैं सो जैसैं चक्षु आदि भिन्न भिन्न नियम रूप वाह्य देशमें अवस्थान रूप है तैसैं वाह्य देशमें अवस्थान रूप मन नहीं है यातैं मन अनिन्द्रिय है ॥३॥ वार्तिक—इन्द्रियपरिणामाच्च प्राक्तद्व्यापारात् ॥४॥ अर्थ—चक्षु आदिकनिकै रूपादि विषय उपयोग परिणामतैं पूर्व मनको व्यापार होय है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, शुक्लादिरूपनैं देखनैंको इच्छुक आत्मा प्रथम मन करि उपयोगनैं करै है कि या प्रकारका रूपनैं देखूं या प्रकारका रसनैं आस्वादूं तातैं मननैं वलाधानी करि कहिये मननैं अग्रेसर करि चक्षु आदि इन्द्रियनिके विषैं व्यापार करै है। तातैं या मनके अनिन्द्रियपणौं है ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—कर्मेन्द्रियोपसंख्यानमितिचेन्नोपयोगप्रकरणात् ॥ ५ ॥ अर्थ—प्रश्न, कर्मेन्द्रिय वाक्, पाद,पाणि, उपस्थ, गुदा जे हैं ते भी वचन आदिकी क्रिया निमित्त है तातैं तिनको इहां ग्रहण करने योग्य है। उत्तर सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उपयोगका प्रकणतैं, उपयोग इहां प्रकरण प्राप्त है। अर उपयोगके उपकरण इन्द्रिय है ते इहां ग्रहण करिये है ता कारण करि कर्मेन्द्रियनिको अप्रसंग है ॥ ५ ॥ तथा वार्त्तिक—अनिन्द्रियत्वं वा तेषामनवस्थानात् ॥ ६ ॥ अर्थ—अथवा वाक् आदिकैं इन्द्रियणौं नहीं है। अर उपयोगका साधन जे हैं तिनके विषैं निश्चय करि इन्द्रियनिको उपदेश युक्त है अर क्रिया साधनकै विषै युक्त नहीं है अर जो क्रिया साधनकै विषैं भी इन्द्रियपणौं युक्त है तौ अनवस्था प्रसंग आवै है क्योंकि सर्व ही आंगोपांग मस्तकादि क्रियाका साधन है ॥ ६ ॥ १५ ॥ अवैं सोलमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है, कि जो इन्द्रिय भोक्ता आत्मा जो है ताकै इष्ट अनिष्ट विषयनिकै विषै उपलब्ध हैं प्रयोजन जिनके ऐसैं हैं अर कहीं सामर्थ्य विशेष जो है तातैं व्याप्त भये हैं भेद जिनके ऐसैं इन्द्रिय जे हैं तिनके प्रत्येक भेद जतावनैंके अर्थ कहै है। सूत्रम्—

द्विविधानि ॥ १६ ॥

अर्थ---वे पांचूं इन्द्रिय जे हैं ते भिन्न भिन्न दोय भेद रूप हैं। वार्त्तिक—विध शब्दस्य

प्रकारवाचिनो ग्रहणम् ॥१॥ अर्थ—यो विध शब्द प्रकारवाची ग्रहण करिये है क्योंकि विध, युक्त, गत, प्रकार ये चार शब्द समान वाची हैं यातैं दोय हैं विध जाके ते द्विविध कहिये अर्थात् दोय प्रकार है। प्रश्न, वे दोय प्रकार कौनसे हैं? उत्तर, एक द्रव्येन्द्रिय अर दूसरो भावेन्द्रिय है ॥१६॥ अबैं सत्तरमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है, तिनमें द्रव्येन्द्रियको स्वरूप जनावने निमित्त कहे हैं। सूत्रम्—

निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥

अर्थ—निवृत्ति अर उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय हैं। वार्तिक—निर्वर्त्यत इति निर्वृत्तिः। अर्थ—जो कर्म करि रचिये कि उत्पन्न करिये सो निर्वृत्ति है। ऐसैं उपदेश करिये है ॥१॥ वार्त्तिक—सा द्वेधा वाह्याभ्यन्तरभेदात् ॥२॥ अर्थ—वा निर्वृत्ति दोय प्रकार है। प्रश्न, काहैतैं? उत्तर, वाह्य अर आभ्यन्तर भेदतैं ॥ २ ॥ तत्र वार्त्तिक विशुद्धात्मप्रदेशवृत्तिराभ्यन्तरा ॥३॥ अर्थ—तिनमें उत्सेधांगुलका असंख्यातमां भाग प्रमाण विशुद्ध अर भिन्न भिन्न नियमरूप चक्षु आदि इन्द्रियनिका संस्थान मान अवमानरूप अवस्थित आत्मप्रदेश जे हैं तिनकी वृत्ति जो है सो अभ्यन्तर निर्वृत्ति है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—तत्र नामकर्मोदयापादितावस्थाविशेषः पुद्गलप्रचयो वाह्या ॥ ४ ॥ अर्थ—तिन आत्मप्रदेशनिकै विषैं इन्द्रिय नामकूं भजनेवारो जो भिन्न भिन्न नियम रूप संस्थान नाम कर्मका उदय करि ग्रहण कियो अवस्था विशेष पुद्गलनिको समूह है सो वाह्य निवृत्ति है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—उपक्रियतेऽनेनेत्युपकरणम् ॥५॥ अर्थ—जा निर्वृत्तिको उपकार करिये है सो उपकरण है ॥ ५ ॥ तद्द्विविधं पूर्ववत् ॥६॥ अर्थ—सो उपकरण पूर्ववत् वाह्याभ्यान्तरभेदतैं दोय प्रकार है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—तत्राभ्यन्तरशुक्लकृष्णमंडलं वाह्यमक्षिपत्रपक्ष्मद्वयादिः ॥ ७ ॥ अर्थ—तिनमैं शुक्ल कृष्ण मंडल तौ आभ्यन्तर है अर अक्षि पत्र जो नीचे ऊपरि डोला अर

पद्मद्वय कहिये वाफनीको युगल जो है सो वाह्य उपकरण है। ऐसैं ही अवशेष पंचेन्द्रिय जे हैं तिनके विषैं जाननैं ॥ ७ । १७॥ अबै अठारमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि भावेन्द्रियनैं कहिये है ऐसैं करि कहै हैं। सूत्रम्—

लब्ध्युपयोगो भावेन्द्रियम् ॥१८॥

अर्थ—लब्धि अर उपयोगरूप भाव इन्द्रिय है। अर्थ—प्रश्न, लब्धि यो शब्द कहा वाची है? उत्तर, लब्धि है सो लाभ है। प्रश्न, जो ऐसैं हैं तो षित् पणांतैं अङ् प्रत्यय प्राप्त होय है? उत्तर, अनुवन्धकृत नियोग अनित्य है, विकल्प रूप है, यातैं नहीं होय, ताकौ दृष्टांत ऐसौं है कि "वर्णानुपलब्धौ वातदर्थगते" या व्याकरणका सूत्रमें भी लब्धि शब्द है। ऐसैं और भी प्रयोगनिमें लब्धि शब्द है। अथवा "स्त्रियां क्तिःलभादिभ्यश्चेति क्तिर्भवति" या सूत्रतैं भी लब्धि शब्द सिद्ध होय है। अर लभादिक इष्ट है यातैं। प्रश्न, लब्धि या शब्दको अर्थ कहा है? उत्तर, रूप वार्त्तिक–इन्द्रियनिर्वृत्तिहेतुःक्षयोपशमविशेषोपलब्धि ॥१॥ अर्थ--जाकी निकटतातैं आत्मा द्रव्येन्द्रियकी निवृत्ति प्रति व्यापार करै है सो ज्ञानावरणको क्षयोपशम विशेष है सो लब्धि है ऐसैं जनाइये हैं ॥१॥ वार्त्तिक—तन्निमित्तः परिणामविशेष उपयोगः ॥२॥ अर्थ—जो ज्ञानावरणको क्षयोपशम निमित्त कह्यौ ताहि प्रतीति करि उत्पन्न भयो आत्माको परिणाम है सो उपयोग है। ऐसैं उपदेश करिये हैं सो ये लब्धि अर उपयोग दोऊ ही भावेन्द्रिय है ॥२॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—उपयोगस्य फलत्वादिन्द्रियव्यपदेशानुपत्तिरिति चेन्न कारणधर्मस्यकार्यानुवृत्तेः ॥३॥ अर्थ—ऐसैं कहिये है कि इन्द्रियका फल उपयोग है प्रश्न, सो कैसैं? इहां इन्द्रिय नामनै प्राप्त होय है यातैं प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, कारण धर्मकै कार्यपणांकी अनुवृत्ति है यातैं इन्द्रिय नामनैं प्राप्त होय है। अर निश्चय करि कारण जो है सो कार्यरूप वर्त्ततो लोककै विषैं देखिये है

सो जैसें घटाकार परिणत विज्ञान है सो घट है। ऐसें कहिये है तैसें इन्द्रिय निमित्त उपयोग जे है सो इन्द्रिय है ऐसें कहिये ॥३॥ वार्त्तिक—शब्दार्थसम्भवाच्च ॥४॥ अर्थ—जो शब्दार्थ इन्द्रको लिंग है अथवा इन्द्र करि रचित है सो उपयोगके विषें प्रधानपणां करि विद्यमान है यातें इंद्रिय व्यपदेश युक्त है ॥४॥१८॥ अब उगणीसमा सूत्रको उत्थानिका कहैं हैं कि कहा जे पांच इन्द्रिय तिनके संज्ञा अर आनुपूर्वी को विशेष जो है ताका प्रतिपादनके अर्थ कहै हैं। सूत्रम्—

स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥

अर्थ-स्पर्शन १ रसन २ घ्राण ३ चक्षु ४ श्रोत्र ५ ये पांच इंद्रिय हैं। वार्त्तिक-स्पर्शनादीनां करणसाधनत्वं पारतंत्र्यात्कर्तृसाधनत्वं च स्वातंत्र्यात्बहुलवचनात् ॥१॥ अर्थ—ये स्पर्शनादिक करण साधन रूप हैं। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, परतन्त्र पणांतें, क्योंकि निश्चय करि इंद्रियनिके परतन्त्र पणां करि लोकके विषें विवक्षा विद्यमान है। अर आत्माके स्वतन्त्रपणांकी विवक्षानें होतां संतां जैसें या नेत्र करि मैं भले प्रकार देखूं हूं तथा करण करि मैं भले प्रकार सुनूं हूं। तातें वीर्यान्तरायको तथा भिन्न भिन्न नियम रूप इन्द्रियावरणको क्षयोपशम अर आङ्गोपाङ्गनामा नाम कर्मको लाभ ताका अवष्टम्भतें कि प्राप्त होवातें या करि आत्मा स्पर्शे है तातें स्पर्शन है अर या करि आत्मा रसयति कहिये आस्वादन करे है तातें रसन है। अर या करि आत्मा जिघ्रति कहिये सूंघे है तातें घ्राण है। चष्टे धातुके अनेकार्थ पणांतें, अर ताकी दर्शन अर्थकी विवक्षाके विषें पदार्थनिनें या करि आत्मा चष्टे कहिये देखे है तातें चक्षु है। अर या करि आत्मा शृणोति कहिये सुणे है तातें श्रोत्र है। वहुरि इंद्रियनिके स्वतन्त्रपणांकी विवक्षानें होतां संतां कर्तृ साधन पणों होय है। सो लोकके विषें स्वतन्त्र करि विवक्षा ऐसें है कि जैसें यो मेरो अक्षि भले प्रकार देखे है। अर यो मेरो कर्ण भले प्रकार सुणे है, ता कारण करि पूर्वोक्त क्षयोपशमादि

कारणनिकी निकटतानैं होतां संतां आत्मा ही स्पर्शै है तातैं स्पर्शन है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, बहुवचनतैं कर्त्ता अर्थमैं युट् प्रत्यय होय है यातैं रसयति कहिये स्वाद लेवे सो रसन है। जिघ्रति कहिये सूंघे सो घ्राण है। अर चष्टे कहिये देखै सो चक्षु है। अर शृणोति कहिये सुणैं सो श्रोत्र है ॥१॥ बहुरि या सूत्रमैं इंद्रियाणि ऐसैं कितनेकनिकै पाठ है सो यो पाठ युक्त नहीं है। कैसैं? उत्तररूप वार्त्तिक—अधिकृतत्वादिन्द्रियाणीति वचनमनर्थकम् ॥२॥ अर्थ—पंचेन्द्रियाणि ऐसैं पूर्व सूत्रमें हैं यातैं इन्द्रियपदको ग्रहण अनुवर्त्तै है, ता कारण करि इहां इन्द्रियाणि ऐसो वचन अनर्थक है ॥२॥ वार्त्तिक—स्पर्शनग्रहणमादौ शरीरव्यापित्वात् ॥३॥ अर्थ—जातैं शरीरनैं फैलाय तिष्ठै सो स्पर्शन है यातैं याको ग्रहण आदिमैं करिये है क्योंकि "वनस्पत्यन्तानामेकं" या सूत्रके विषैं स्पर्शनको व्यापार है यातैं अर वनस्पत्यन्तनामेकं ऐसैं आगे सूत्र कहैंगे तहां स्पर्शनका ग्रहणके अर्थ आदिमैं वचन है ॥३॥ वार्त्तिक—सर्वसंसारिषूपलब्धेश्च ॥४॥ अर्थ—अथवा सर्व संसारीनिकै स्पर्शन है यातैं नाना जीवनिकी अपेक्षा करि व्यापी पणांतैं आदिमैं ग्रहण करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—ततो रसनघ्राणचक्षुषां क्रमवचनमुत्तरोत्तराल्पत्वात् ॥५॥ अर्थ—तातैं परे रसनादिक तीन जे हैं तिनकैं विषैं क्रमरूप वचन करिये हैं। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, उत्तरोत्तर अल्पपणांतैं सो ऐसैं हैं कि सबतैं जघन्य चक्षु इन्द्रियके प्रदेश है, अर यातैं संख्यात गुणे श्रोत्र इन्द्रियके प्रदेश हैं। अर यातै विशेषाधिक घ्राणेन्द्रियकै विषैं प्रदेश है अर यातैं असंख्यात गुणां जिह्वा इन्द्रिय के विषै प्रदेश हैं अर यातैं अनन्तगुणा स्पर्शन इन्द्रियकै विषैं प्रदेश है। प्रश्न, जो ऐसैं है तो चक्षुको ग्रहण अन्तमैं करनैं योग्य है, क्योंकि सबतैं अल्प प्रदेश पणातैं? उत्तर, यो प्रश्न सत्य है तथापि सुनूं कि ॥५॥ वार्त्तिक—श्रोत्रस्यान्ते वचनं बहूपकारत्वात् ॥६॥ अर्थ—जातै सूत्रका बलाधानतैं उपदेशनें सुणि हितकी प्राप्ति अर अहितको परिहार जो है ताकै अर्थ आदर करिये है। यातै श्रोत्र बहुत उपकारी है; तातैं अन्तमैं

ग्रहण करिये है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—रसनमपि वक्तृत्वेनेति चेन्नाभ्युपगमात् ॥ ७ ॥ अर्थ—प्रश्न, रसन भी बहुत उपकारी है। प्रश्न, कैसै? उत्तर, जातैं वक्तापणांकरि रसन जो है सो अभ्युदय निःश्रेयसके अर्थ उच्चारण अध्ययनकै विषैं प्रमाण है, यातैं रसन ही अन्तमैं कहने योग्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अभ्युपगम्यतैं, सो ऐसैं है कि श्रोत्रकै बहु उपकारीपणांनैं अंगीकारकरि रसनाके भी बहु उपकारीपणौं वरणन करता तुम जो हौ तिनमैं श्रोत्रके बहु उपकारी पणौं अंगीकार कियो यातैं हमारो वांछित वचन श्रुतके बहु उपकारी पणौं है सो अत्रसितः कहिये सिद्ध भयौ। अर नहीं अङ्गीकार करतां संता रसन बहु उपकारी-है ऐसा प्रसंगकी निवृत्ति है ॥ ७ ॥ किंच वार्त्तिक—श्रोत्रप्रणालिकापादितोपदेशात् ॥ ८ ॥ अर्थ—और सूनूं कि श्रोत्रकी प्रणालिका करि उपदेशनैं सुणि रसन वक्तापणां प्रति व्यापार करै है यातैं श्रोत्र ही बहु उपकारी है ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—सर्वज्ञे तदभाव इतिचेन्नेन्द्रियाधिकारात् ॥९॥ अर्थ—प्रश्न, सर्वज्ञ जो है सो श्रोत्रेन्द्रियका बलाधानतैं परतैं सुणिकरि वक्तापणांनैं नहीं अंगीकार करै है। प्रश्न, तो कैसे कहे है? उत्तर, सकल ज्ञानावरणका संक्षेपतैं प्रकट भयौ अतीन्द्रिय केवल ज्ञान रसनका लाभ मात्रतैं ही वक्तापणाकरि परिणत सकल श्रुत विषय अर्थनिनैं उपदेश करै है यातैं रसना ही बहु उपकारी है। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, इन्द्रियका अधिकारतैं यो इन्द्रियको अधिकार है यातैं जिनके विषैं इन्द्रियकृत हिताहितका उपदेश समस्तपणांकरि है तिन प्रति यो कहनौं है सर्वज्ञ प्रति नहीं है यातैं दोष नहीं है ॥ ९ ॥ वार्त्तिक—एकैकवृद्धिक्रमज्ञापनार्थं च स्पर्शनादिवचनम् ॥ १० ॥ अर्थ—कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैक वृद्धानि ऐसे आगैं कहैंगे तहां वृद्धिको क्रम जनावनैं निमित्त स्पर्शनादिकनिके अनुपूर्वी जाननैं योग्य है ॥ १० ॥ वार्त्तिक—एषां च स्वतस्तद्वतश्चैकत्वपृथक्त्वं प्रत्यनेकान्तः ॥११॥ अर्थ—इन स्पर्शनादि इन्द्रियनिके स्वत कहिये आपनै कि आपसमैं अर तद्वतः

कहिये इन्द्रियवान आत्मा जो है तातैं एकत्व प्रति तथा पृथक्त्व प्रति अनेकान्त जानवे योग्य है कि कथंचित् एक रूप है, अर कथंचित् भिन्न रूप है, इत्यादि सप्तभङ्ग जाननां सो ऐसैं है कि प्रथम तौ स्वतः कहिये स्पर्शनादिकनिके आपसमें एक पणौ ऐसैं है कि ज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं उत्पन्न भई जो शक्ति ताकी अभेद कहनेकी इच्छानैं होता संतां स्पर्शनादिकनिके कथंचित् एक पणौं है, क्योंकि समुदायीनिकैं भिन्न पणांको अभाव है यातैं, अथवा समुदायका एक पणांतैं अवयविनकै भी एक पणौं है। ऐसैं कथंचित् एक पणौं है। बहुरि भिन्न भिन्न नियमरूप क्षयोपशमकी उपलब्धि विशेषकी अपेक्षा करि कथंचित् नाना पणौं है। अर इन्द्रियकी बुद्धि अर इन्द्रियका नाम, अर प्रवृत्ति निवृत्तिका जो अर्पण ताका भेदतैं कथंचित् एक पणौं है, कथंचित् भिन्न पणौं है। अर्थात् इन्द्रियपणांकी बुद्धितैं तथा नामतैं तो एक पणौं है अर प्रवृत्ति निवृत्तितैं भिन्न पणौं है कि अपने २ विषय प्रति प्रवृत्ति करणैंतैं भिन्न पणांतैं, अर इन्द्रियवानकै भी इन्द्रियनितैं कथंचित् एक पणौं है। अर कथंचित् नानापणौं है सो ऐसैं है कि चैतन्यका अपरित्याग करि, उभय परिणाम कारणकी है अपेक्षा जाकै ऐसौ इन्द्रियवान जो है ताकै इन्द्रिय पर्यायात्मक पर्यायका लाभनैं होतां संता इन्द्रियरूप परिणामनितैं तप्त लोहका पिंडके समान है कि तप्त भयो लोहको पिंड अग्नि नामको भजनेंवारो होय है। तैसैं परिणामतैं कि इन्द्रियरूप परिणमन करवातैं आत्मानैं भिन्न करि इन्द्रियकी अनुपलब्धि है यातैं कथंचित् इन्द्रियकै अर इन्द्रियवानकै एक पणौं है, अर औरतरैं एकान्त करि, अन्य पणानैं होतां संता आत्मा घटकै समान इन्द्रिय रहित ठहरै। तथा पांचू इन्द्रियनिमैंसूं कोऊ एककी निवृत्तिनैं होतां संता इन्द्रियवान आत्माका अवस्थानतैं भी कथंचित् नाना पणौं है। अथवा पर्यायीकै अर पर्यायकै भेद है यातैं भी कथंचित् नाना पणौं है। अर संज्ञाकै भेद अर अभेदकी विवक्षाकी उत्पत्ति है यातैं कथंचित् एक पणौं, कथंचित् नाना पणौं जानवे योग्य है ॥ ११ ॥ १९ ॥ अवैं बीसवां सूत्रकी उत्थानिका कहै हैं कि तिन

इन्द्रियनिका विषयनिकूं दिखावनै निमित्त कहै हैं। सूत्रम्—

स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥

अर्थ—स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, शब्द ये पांचूं अनुक्रमि करि पांचूं इन्द्रियनिके विषय हैं। वार्तिक—स्पर्शादीनां कर्मभावसाधनत्वं द्रव्यपर्यायविवक्षोपपत्तेः ॥ १ ॥ अर्थ—स्पर्शादिकनकै कर्मसाधन पणौं तथा भाव साधनपणौं है। प्रश्न, काहेतें? उत्तर द्रव्य पर्यायके कहनेकी इच्छा उत्पन्न होय है यातैं सो तहां जा समय द्रव्यनै प्रधान पणांकरि कहै है ता समय इन्द्रिय जो है तानै द्रव्य ही सन्निकर्ष करिये है। तातैं द्रव्यतै भिन्न स्पर्शादिक कछु भी नहीं है। ऐसी विवक्षानैं होतां संता स्पर्शादिकनिके कर्मसाधनपणौं निश्चय करिये है कि स्पर्शन करिये सो स्पर्श, अर आस्वादन करिये सो रस, सूंघिये सो गन्ध, अर वर्णन करिये सो वर्ण, और सुनिये सो शब्द। बहुरि जा समय पर्याय प्रधान पणांकरि विवक्षित होय ता समय भेदकी उत्पत्ति है यातैं, उदासीनपणांकरि अवस्थितभावका कथनतैं भावसाधन पणौं स्पर्शादिकनिके संभवै है कि स्पर्शन जो है सो स्पर्श है। अर आस्वादन जो है सो रस है। अर सूंघनौं जो है सो गन्ध है। अर वर्णन जो है सो वर्ण है, अर सुननौं जो है सो शब्द है। प्रश्न, ऐसें है तो सूक्ष्मपरमाणु आदि जे हैं तिनके विषैं स्पर्शादि व्यवहार नहीं प्राप्त होय है? उत्तर यो दोष नहीं है, क्योंकि सूक्ष्म जे हैं तिनके विषै भी वे स्पर्शादिक है क्योंकि सूक्ष्म परमाणूं आदिका कार्य स्थूल जे हैं तिनके विषैं स्पर्शादिकनिको दर्शन है यातैं अनुमान किया संता है। क्योकि सर्वथा असत् जे हैं तिनको प्रादुर्भाव नहीं होय है। प्रश्न, तो कहा होय है उत्तर, इन्द्रियग्रहण योग्य नहीं है। अर उनके इन्द्रियग्रहणके अयोग्यपणांनैं होतां संता भी उनके विषैं रूढ़िका वशतैं स्पर्शादिकनिको व्यवहार है। प्रश्न, तदर्था यो कहा वाची शब्द है, उत्तर, तिनका जो अर्थ सो तदर्थ है। प्रश्न,

वे कौन हैं तिनको अर्थ है ? उत्तर, इन्द्रियनिके अर्थ है कि विषय है प्रश्न, ऐसैं है तो सुनूं, प्रश्नरूप वार्तिक—तदर्था इति वृत्यनुपपत्तिरसमर्थत्वात ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, तदर्था ऐसी वृत्ति कहिये समास नहीं उत्पन्न होय है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, असमर्थपणांतैं क्योंकि निश्चयकरि समर्थ अवयवनिकूं वृत्ति करि होनौं योग्य है अर वा सामर्थ्य इहां नहीं है। प्रश्न, काहेतैं, उत्तर, सापेक्ष जो होय है सो असमर्थ होय है। अर इहां निश्चयकरि इन्द्रियनिनैं अपेक्षा करैं है तातैं असमर्थ है ॥२॥ उत्तररूप वार्तिक—नवागमकत्वान्नित्यसापेक्षेषुसम्बन्धिशब्दवत् ॥ ३ ॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, गमकपणांतैं इहां वृत्ति होय है, अर गमकपणूं सम्बन्धि शब्द के समान नित्य सापेक्षके विषैं होय है सो ऐसैं हैं कि तैसैं सम्बन्ध शब्द जे देवदत्तको गुरुकुल तथा देवदत्तको गुरुपुत्र इत्यादिकनिके विषैं वृत्ति होय है, क्योंकि गुरु शब्द नित्य ही शिष्यनैं अपेक्षा करै है। ऐसैं ही इहां भी तत्शब्द सामान्य विशेष वचनरूप आकांक्षा करनवारो हुवो संतो प्रकरणमें आई इन्द्रियनिनैं अपेक्षा करतो भी वृत्तिने प्राप्त होय है ॥३॥ वार्तिक—स्पर्शादीनामानुपुर्व्येण निर्देश इन्द्रियक्रमाभिसम्बन्धार्थः ॥ ४ ॥ अर्थ—स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, शब्द ये जे हैं ते स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दा कहिये ऐसैं अनुपूर्वीकरि निर्देश है सो स्पर्शादिक इन्द्रियनिकरि अनुक्रमि करि अभिसम्बन्ध होय ताकै अर्थ है, ऐसैं ये स्पर्शनादिक पुद्गल द्रव्यके गुण अविशेष करि जानने योग्य है, अर या विषयमैं कितनेक वादी तिन स्पर्शादिकनिनैं विशेष कल्पना करै है। अर कहै है कि रूप रसगन्ध स्पर्शवान् पृथिवी है अर रूप रस स्पर्शवान् जल है, तथा द्रव्व स्निग्ध गुणवान भी जल है अर रूप रस स्पर्शवान तेज है। अर स्पर्शवान, वायु है। इहां आचार्य कहै है कि ऐसैं कहैं है सो अयुक्त है क्योंकि वायु घटके समान स्पर्शवान है। अर तेज भी रूपवान पणांतैं गुड़कै समान रसवान और गंधवान है जल भी रसवान पणातैं आम्रफलके समान गन्धवान है। अर और सुनूं कि जलादिकके विषैं

अर गन्धादिककी साक्षात् उपलब्धि है यातैं। प्रश्न, पार्थिवी परमाणूका संयोगतैं, गंधादिकनिकी उपलब्धितैं? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि विशेष हेतुका अभाव है यातैं सो ऐसैं है कि पार्थिव परमाणूंका ये गंधादिक गुण है। अर संसर्गतैं अन्यजलादिकनिमैं प्राप्त होय है। ऐसा दर्शनतैं अर निश्चयकरि देखिये है कि पृथिवीके परमाणूंनिकै कारणका वशतैं द्रव्यपणौं है। अर द्रव्यरूप जल जो है ताकै करकात्म भाव कहिये कठोर गाढ़ा पणांकरि घन भाव देखिये है। अर घनको द्रव भाव देखिये है अर तेजको मषी भाव देखिये है अर वायुको भी रूपादिक देखिये हैं। इहां वादी कहै है; कि कैसैं जानिये? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो सुनूं कि पुद्गल परमाणुके विषैं तिन रूपादिकनिकी कैसैं गति हैं, इहां वादी फेर कहै है कि पुद्गल परमाणुको कार्य जो स्कंध ताके विषैं रूपादिकका दर्शननैं अनुमान परमाणुमैं करिये है। उत्तर, ऐसैं है तो इहां भी तैसैं ही जानने योग्य है ॥४॥ वार्त्तिक---तेषां च स्वतस्तद्वतश्चैकत्वपृथक्त्वं प्रत्येनकांतः ॥५॥ अर्थ---तिन स्पर्शादिकनिकै स्वतः कहिये परस्परतैं तथा द्रव्यतैं एक पणां प्रति तथा भिन्न पणां प्रति अनेकांत जानने योग्य है कि कथंचित् एक है, कथंचित् भिन्न है इत्यादि अर या विषयमैं और वादी एक पणांनैं तथा भिन्न पणांनैं एकांत करि अङ्गीकार करै है सो अयुक्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, जो एकान्त करि स्पर्शादिकनिकै एक पणौं है तो स्पर्शन इन्द्रिय करि स्पर्शगुणकी प्राप्ति होत संतै रसादिकनिकी भी उपलब्धि होय। अर स्पर्शादिमान द्रव्यतैं भी स्पर्शादिकनिकै अभिन्न पणांनैं होतां संतां प्रश्न करिये है कि तत एव कहिये द्रव्य ही है, अथवा स्पर्शादिक ही है, ऐसैं द्वोय पक्ष उपजै हैं। तहां जो द्रव्य ही है तो लक्षणका अभावतैं लक्ष्यको अभाव होवेगो। अर जो स्पर्शादिक ही है तो निराधार पणांतैं स्पर्शादिकनिको भी अभाव होवैगो। बहुरि एकान्त करि भिन्न पणौं ही है तो घटका पीतादिरूपकी उपलब्धितैं होतां संतां घटका आकारकी अनुपलब्धि के समान स्पर्शकी उपलब्धिनैं होतां संतां रूपादिककी अनुपलब्धितैं यो घट स्पर्शित है। ऐसैं

नहीं जानिये है क्योंकि वा घटके स्पर्शादिक स्वरूप पणांको अभाव है यातैं। अर स्पर्शादिमान द्रव्यतैं भी अत्यन्त भिन्न स्पर्शादिकनिनैं होतां संतां दोऊनिको ही अभाव होवेगो। प्रश्न, ग्रहण भेदतैं स्पर्शादिकनिकै भिन्न पणौं है? उत्तर-जो ऐसैं कहो तो सुनूं कि ग्रहणका अभेदनैं होतां संतां दोऊनिको ही अभाव होवैगो। प्रश्न, ग्रहण भेदतैं स्पर्शादिकनिकै भिन्न पणौं है? उत्तर जो ऐसैं कहौ हौ तो सुनूं कि ग्रहणका अभेदनै होतां संतां भी नाना पणांकी उपलब्धि है सो ऐसैं है कि शुक्ल कृष्णादिके विषैं संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग विभाग परत्व, अपरत्व, कर्मसत्तादि गुणत्व जे हैं तिनके रूप समवायतैं कि रूपका ग्रहणमें ही इनका ग्रहण होवातैं चाक्षुष कहिये चक्षुरिन्द्रिय रूप जे ये तिनकै नाना पणांकी उपलब्धि है यातैं ग्रहणका अभेदनैं होतां संतां भी नाना पणांकी उपलब्धि है। प्रश्न, संज्ञा जो है सो निज तत्व है यातैं लक्षण भेदतैं नांनां पणौं है? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि संज्ञाका अभेदनैं होतां संतां भी द्रव्य गुण कर्म जे हैं तिनकै नाना पणांकी उपलब्धि है यातैं, अर्थात् द्रव्य नाम एक है तौ हू द्रव्य अनेक है तथा गुण नाम एक है तो हू गुण अनेक हैं। तथा कर्म नाम एक है तो हू कर्म अनेक है यातैं नाना पणांकी उपलब्धि है ॥५॥ प्रश्न, द्रव्य गुण कर्मनिकै नाना पणौं नहीं है? उत्तर, सो नहीं है क्योंकि प्रतिज्ञाका विरोधतैं कि जो निश्चय करि द्रव्य गुण कर्मनिकै एकपणौं ही है। तो महत् आदि करि परिणत अर भिन्न पणां करि अनुपलभ्यमान जे सत्व रजस्तम तिनकैं अन्यपणौं प्रतिज्ञा कियो हुतौ सो हानि रूप होय है। अर जो सत्व रजस्तम जे है तिनके विषैं भी अनन्य पणौं ही है तौ वक्तव्य स्वरूप भेदकी कल्पनां अनर्थक कहा होयगी। तातैं कथंचित् एक पणौं कथंचित् भिन्न पणौं अङ्गीकार करने योग्य है। सो द्रव्यका अर्प्पणतैं एक पणौं है अर पर्यायका अर्प्पणतैं नाना पणौं है ॥५।२०॥ अवैं इकवीसमा सूत्रकी उत्थानिका लिखिये है कि इहां कोऊ कहै है जो मन अनवस्थानतैं इन्द्रिय नहीं होय है ऐसैं कहि करि निराकरण कि सो यो मन उपयोगको

उपकारी है या नहीं है ? उत्तर, उपकारी ही है, क्योंकि मन विना इन्द्रियनिकै अपनें विषयकै विषैं अपना प्रयोजन रूप वृत्तिको अभाव हैं यातैं। प्रश्न, मनके इन्द्रियनिका सहकारीपणां मात्र ही प्रयोजन है या और भी प्रयोजन है ? ऐसा प्रश्न होतां संतां कहै है। सूत्रम्—

श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥

अर्थ—श्रुत ज्ञान मनको विषय है। अर परि प्राप्त भयो है श्रुत ज्ञानावरणको क्षयोपशम जाकै ऐसो आत्मा जो है ताकै श्रुत रूप अर्थकै विषैं अनिन्द्रियको है आलम्बन जा विषैं ऐसो ज्ञान जो है ताकी प्रवृत्ति होय है यातैं अथवा श्रुतज्ञान जो है सो श्रुत है सो अनिन्द्रियको विषय है, क्योंकि श्रुत ज्ञानकै मनपूर्वक पणौं है यातैं, अर अतिन्द्रियको विषय रूप पदार्थ जो है सो इन्द्रिय व्यापारतैं रहित है कि वा विषयकै विषैं इन्द्रियको प्रचार नहीं है। प्रश्नोत्तररूप वार्तिक--- श्रुतं श्रोत्रेन्द्रियस्य विषय इति चेन्न श्रोत्रेन्द्रियग्रहणे श्रुतस्य मतिज्ञानव्यपदेशात् ॥१॥ अर्थ— प्रश्न, श्रुत अनिन्द्रियको विषय नहीं है, प्रश्न, तौ कौनको विषय है ? उत्तर, श्रोत्रेन्द्रियको विषय है। अर निश्चय करि जा समय श्रोत्र इन्द्रिय करि ग्रहण करिये है ता समय वो अवग्रहादि रूप मति-ज्ञान है। ऐसैं पूर्वें व्याख्यान कियो है तातैं उत्तर कालमें जो मतिपूर्वक जीवादि पदार्थ स्वरूप विषय है सो श्रुत अनिन्द्रियको विषय है। ऐसैं निश्चय करने योग्य है ॥१।२॥ अवैं वाईसमा सूत्र-की उत्थानिका कहै है कि भिन्न भिन्न है नियम रूप विषय जिनकै ऐसैं कहे जे इन्द्रिय तिनकै स्वामी पणांको निर्देश कर्त्तव्य होत संतैं प्रथम ग्रहण कियो जो स्पर्शन इद्रिय ताका प्रथम स्वामीपणांका निश्चय करावनें निमित्त कहै है। सूत्रम्—

वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥

अर्थ—वनस्पती है अन्त विषैं जिनकै ऐसैं पृथिवी, जल, तेज, वायु, वनस्पति कायके जीव जे

हैं तिनके एक स्पर्शन इन्द्रिय है। वार्तिक—अन्तशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातोऽवसानगतिः ॥१॥ अर्थ—यो अंत शब्द अनेकार्थ रूप है, तहां कहूं तो अवयव अर्थके विषैं प्रवर्तै है कि जैसैं वस्त्रांतः कहिये वस्त्रको अवयव है अर कहूं सामीप्य अर्थके विषैं प्रवृत्तै है कि उदकांतंगतः कहिये उदकके समीप प्राप्त भयो है अर कहूं अवसान अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं संसारांतं गतः कहिये संसारका अंतनैं प्राप्त भयो है तिननैं इहां वक्ताकी इच्छातैं अवसान अर्थमैं अंत शब्दकी गति जानवे-योग्य है। अर्थात्—वनस्पत्यन्तानां कहिये वनस्पती है अवसानमें जिनके तिनकै एकेन्द्रिय है ॥१॥ वार्तिक—सामीप्यवचनेहि वायुत्रससंप्रत्ययप्रसङ्गः ॥ २ ॥ अर्थ—वनस्पत्यन्तानां या शब्दको अर्थ वनस्पतिकै समीप जे हैं तिनकै ऐसो ग्रहण करतां संता वायु कायिक जे हैं तिनकै तथा त्रस-निकै एकेन्द्रिय पणांकी प्रतीति प्राप्त होय है ॥२॥ प्रश्नरूप वार्त्तिक—अन्तशब्दस्य सम्बन्धिशब्द-त्वादादिसंप्रत्ययः ॥३॥ अर्थ—यो अन्त शब्द सम्बन्धी शब्द पणांतैं कोऊ पूर्वनै अपेक्षा करि प्रवर्तै है तातैं ता अर्थतैं आदिकी प्रतीति होय है। ता कारणतैं यो अर्थ जानिये है कि पृथ्वी आदि वनस्पति पर्यंतनिकै एकेन्द्रिय है ॥३॥ इहां कोऊ कहै है कि प्रश्न रूप वार्तिक—अवशिष्टै-केन्द्रियप्रसङ्गो विशेषात् ॥४॥ अर्थ—पृथिवी आदि वनस्पती पर्यंतनिकै स्पर्शन आदि जे हैं तिनकै विषैं सूं कोऊ अविशेष रूप एक इंन्द्रिय प्राप्त होय है। प्रश्न—काहेतैं? उत्तर, अविशेषतैं सो ऐसैं है कि याकी एकनैं होनौं योग्य है, ऐसे कोऊ विशेष नहीं है, क्योंकि यो संख्यावाची एक शब्द है ॥४॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—न वा प्राथम्यवचने स्पर्शनसंप्रत्ययात् ॥५॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर—प्राथम्यवचनमैं होतां संतां स्पर्शनकी प्रतीत है यातैं यो एक शब्द प्राथम्य वचन है अर प्राथम्य वचननैं ही सूत्र पाठमैं आश्रय कियो है तातैं स्पर्शनकी प्रतीति होय है। अर एक शब्द लोकके विषैं भी प्राथम्य वचन है कि वीर्यान्तरायका अर स्पर्शनेन्द्रि-यावरणका क्षायोपशमनैं होतां संतां अर अवशेष इन्द्रियनिके जे सर्वघाती स्पर्द्धक तिनका उद-

यनैं होतां संतां अर शरीर अंगोपांग नामा नाम कर्मका लाभकी प्राप्तिनैं होतां संतां अर एके-न्द्रिय जाति नामानाम कर्मका उदयकै वशवर्त्ती होतां संतां स्पर्श नामा एक इन्द्रिय प्रगट होय है ॥५।२२॥ अव तेईसमां सूत्रकी उत्थानिका कहैं हैं—कि और इन्द्रियनिका स्वामी पणांतैं दिखावनैं निमित्त कहै हैं। सूत्रम्—

कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३ ॥

अर्थ—कृमि, पिपीलिका, भ्रमर, मनुष्य आदिनिकै एक एक इन्द्रियकी वृद्धि है। वात्तिक—ऐकैकमिति वीप्सा निर्देशः ॥१॥ अर्थ—एक एक शब्द दोय वेर है सो वीप्सामैं जानवे योग्य है। ऐसो व्याकरणको मत है ॥१॥ वार्त्तिक—वहुत्वनिर्देशः सर्वेन्द्रियापेक्षः ॥ अर्थ—सर्व इन्द्रिनिनैं अपेक्षा करि बहु वचन पणांको निर्देश है कि बहु वचन कियो है। अर एक एक की है वृद्धि रूप जिनकै ते एकैक वृद्धनि कहिये है ॥१॥ प्रश्न, तिनमैं एक एक की वृद्धि है सो पूर्वतैं है कि उत्तरतैं है, अर्थात् क्रमतैं है कि मनुष्यतैं है ? उत्तर रूप वार्त्तिक—असंदिग्धं स्पर्शमेकैकेन वृद्धिमित्यादि विशेषणात् ॥३॥ अर्थ—स्पर्शन ऐसो इहां शब्द अनुवर्त्त है, तानैं आरम्भ करि एक एक करि वृद्धिनैं प्राप्त होय है इत्यादि विशेषणतैं सन्देह नहीं है ॥२॥ प्रश्न, सो कैसैं ? उत्तर रूप वार्तिक—वाक्यान्तरोपप्लवात् ॥४॥ अर्थ—या निवन्धनस्थान रूप वाक्यतैं कि निर्णय रूप भयो जो वनस्पत्यन्तनिकै स्पर्शन रूप एकेन्द्रिय पणौं तातैं वाक्यांतर प्राप्त होय है जो जैसैं अक्षयाः वाक्यतैं ? उत्तर, भक्ष्यतां, भज्यतां, दीव्यतां ये वाक्यान्तर जे हैं तिनको उपप्लव करिये है अर्थात् अक्षो भक्ष्यतां कहिये वैहड़ो भक्षण करो ऐसैं वाक्यान्तरको उपप्लव करिये है। ऐसैं ही इहां भी कृम्यादिकनिकै रसन वृद्धि स्पर्शन है कि रसना करि अधिक स्पर्शन है। अर पिपीलिकादिकनिकै घ्राणकरि अधिक स्पर्शन रसन है अर भ्रमरादिकनिकैं चक्षु करि अधिक स्पर्शन रसन घ्राण

है। अर मनुष्यादिकनिकं कर्ण करि अधिक स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु है, ऐसैं वाक्यान्तर जे हैं ते उपप्लवन्ते कहिये संयुक्त करिये है ॥४॥ वार्त्तिक—आदि शब्दः प्रकारे व्यवस्थायां वा वेदितव्यः ॥५॥ अर्थ—जा समय आगम अनपेक्षित है कि आगम नहीं अपेक्षा करिये है। ता समय आदि शब्द प्रकार अर्थको विषैं जाननूं कि कृम्यादय कहिये कृमि प्रकार है कि कृमि सदृश है अर जा समय आगमनैं अपेक्षा करिये ता समय आदि शब्द व्यवस्था अर्थमैं है कि वे कृमि आदि आगममें प्रसिद्ध है अर तिन इन्द्रियनिकी उत्पत्ति स्पर्शन इन्द्रियकी उत्पत्तितैं उत्तरोत्तर सर्व घाती स्पर्द्धकनिका उदय करि व्याख्यान करी ॥२३॥ अवैं चौवीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहे है। अर्थ—कि दोय भेदरूप वे संसारी जे हैं तिनके विषैं इन्द्रिय भेदतैं पांच प्रकार जे हैं तिनमैं नहीं कहे हैं भेद जिनके ऐसैं जे पंचेन्द्रिय तिनके जनावनैं निमित्त कहे है। सूत्रम्—

संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥

अर्थ—मन सहित जे हैं ते संज्ञी हैं। अर मनको लक्षण पूर्वैं व्याख्यान कीयो है, ता मनकरि सहित हैं ते संज्ञी हैं। इहां वादी कहै है। वार्त्तिक—समनस्कविशेषणमनर्थकं संज्ञिशब्देन गतत्वात् ॥१॥ अर्थ-संज्ञिनः या विशेषण करि ही जानन पणौं होय है यातैं समनस्का ऐसौ विशेषण सूत्रमें अनर्थक है ॥ १ ॥ प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तातैं कहिये है वार्त्तिक----हिताहितप्राप्तिपरिहारयोर्गुणदोषविचारणात्मिका संज्ञा ॥ २ ॥ अर्थ—निश्चय करि यो हित है यो अहित है याकी प्राप्तिमें यो गुण है तथा याका परिहारमैं यो गुण है अथवा याकी प्राप्तिमें यो दोष है, तथा याका परिहारमें यो गुण है ऐसा विचार स्वरूप संज्ञा है ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—व्रीह्यादिपाठादिनिसिद्धिः ॥३॥ अर्थ—जातैं संज्ञा शब्दतैं व्रीह्यादि पाठतैं इनि प्रत्ययनैं होतां संता संज्ञिनः ऐसौ शब्द सिद्ध होय है। ऐसैं शब्दतैं सिद्ध करि उत्तररूप वार्त्तिक कहे है।

न वा शब्दार्थव्यभिचारात् ॥ ४ ॥ अर्थ—समनस्क विशेषण बिना केवल संज्ञा शब्द अर्थनैं व्यभिचार है। प्रश्न, अर्थके व्यभिचारनैंमें कहा दोष है? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो सुनूं कि जो संज्ञानैं नाम कहिये हैं तो निवर्त्यको अभाव होय है कि व्यावर्त्तन करने योग्य कोऊ नहीं करैं है, क्योंकि नाम सर्व पदार्थको है यातैं अमनस्क संज्ञी नहीं है। ऐसा इष्ट अर्थका अभाव होय है। अर जो संज्ञाके रूढ़ि पणौं है ऐसैं कहिये तौ वा संज्ञा सर्व प्राणीनि प्रति नियमरूपा है यातैं भी संज्ञीनिका अभावतैं निवर्त्यको अभाव होय है। अर संज्ञानं संज्ञा ऐसी निरुक्तितैं जो संज्ञा नाम मतिज्ञानका मानिये तो ज्ञान सर्वकै है यातैं भी निबर्त्यको अभाव तुल्य है क्योंकि सर्व प्राणीनिकै ज्ञानात्मक पणौं है यातैं ॥ ४ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—आहारादिसंज्ञेति चेन्नानिष्टत्वात् ॥ ५ ॥ अर्थ—या संज्ञा आहार भय मैथुन परिग्रह विषया है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अनिष्ट पणातैं क्योंकि निश्चय करि सर्व संसारीनिकै आहार, भय, मैथुन, परिग्रह संज्ञाका संनिधानतैं संज्ञी होय। अर यो सर्व होनों अनिष्ट है तातैं समनस्का ऐमो विशेषण अर्थवान है ऐसैं करतां गर्भमें तथा मूर्छामें तथा सुषुप्त आदि अवस्थामें तिष्टतां संतां हित आहितकी परीक्षाका अभावनैं भी होतां संतां मनका सन्निधानतैं संज्ञी पणौं उत्पन्न होय है ॥ ५।२४ ॥ अबैं पचीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है कि जो या संसारीकै हिताहितकी प्राप्ति निवृत्तिको कारण मनरूप करणकी निकटतानैं होतां संतां आत्म प्रदेशनिको परिस्पंद होय है। अर छोड्यो है पूर्व शरीर जानैं अर नवीन शरीर प्रति उद्यमवान भयौ ऐसौ मन रहित आत्मा जो है ताकै जो कर्म है सो काहेतैं है ऐसौ प्रश्न होत संतै कहे है। सूत्रम्—

विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥

अर्थ—विग्रह गतिकै विषैं कर्म योग है, अथवा जो समनस्क प्राणी विचारि करि क्रियानैं

प्रारम्भ करै है तो भिन्न भई है देह जिनकै तिनकै मननैं नहीं होतां संतां उपपाद क्षेत्र प्रति संन्मुखपणांकरि जो प्रवृत्ति विग्रहकै अर्थि है सा काहेतैं है ? ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै हैं कि विग्रहगतिकै विषैं कर्म योग है। वार्त्तिक—विग्रहो देहस्तदर्थाविगतिर्विग्रहगतिः। अर्थ—औदारिकादि शरीर नाम कर्मका उदयतैं औदारिकादि शरीरका रचवामैं समर्थ विविध पुद्गल जे हैं तिननैं ग्रहण करे। अथवा संसारी जीव जो हे तानैं ग्रहण करिये है सो विग्रह कहिये अर विग्रह नाम देहकी है अर निग्रहके अर्थि जो गति सो विग्रह गति है। प्रश्न, प्रकृति विकृति भाव सम्बन्धनै होतां सतां अर्थ मैं प्रवृत्ति होय हे कि चतुर्थीमें समास होय हे। अर इहां प्रकृति विकृतिका अभिसम्बन्धको जो अभाव तातैं समास नहीं प्राप्त होय हे। उत्तर, यो दोष नहीं है क्योंकि अश्व घासादिकके समान समास जाननैं योग्य है। अर्थात् अश्व घासादि या पदको ऐसो अर्थ होय है कि अश्वके अर्थि घास आदि द्रव्य हैं। इहां प्रकृतिकी विकृति नहीं है। घास अश्वतैं अन्य द्रव्य हे। तथापि तादर्थ्य चतुर्थीका वाक्यमैं देखिये हे ॥१॥ वार्त्तिक—विरुद्धो ग्रहो विग्रहो व्याघात इति वा ॥ अर्थ—अथवा विरुद्ध जो ग्रहण सो विग्रह है कि व्याघात है। अर्थात् पुद्गलको आदान जो ग्रहण ताको निरोध है कि वार्त्तिक—विग्रहेण गतिर्विग्रहगतिः ॥३॥ अर्थ—आदानका निरोध करि गति होय है ऐसो अर्थ है ॥३॥ वार्त्तिक—कर्मेति सर्वशरीरप्ररोहणसमर्थं कार्मणम् ॥४ अर्थ—सर्वशरीर जातैं उत्पन्न होय है सो बीजभूत कार्मण शरीर है सो कर्म है ऐसैं कहिये हे ॥४॥ वार्त्तिक—योग आत्मप्रदेश परिस्पन्दः ॥५॥ अर्थ—कायादि वर्गणा है निमित्त जानैं ऐसो आत्मप्रदेशनिको परिस्पंद जो है सो योग है। अथवा कायादि वर्गणाको निमित्तभूत आत्म प्रदेश जो हे सो योग है ऐसैं कहिये हे ॥५॥ कर्मनिमित्तो योगः कर्मयोगः ॥६॥ अर्थ—या विग्रहगतिके विषैं कार्माणशरीरकृत योग है, अर जा योग करि कर्मनिको ग्रहण होय हे अर जा करि उत्पन्न करि हो अमनस्क जीवकै भी विग्रहकै अर्थिगति होय है ॥६॥ अवै

छव्वीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है, कि परमाणूंकी स्थितिका सम्बन्ध करि उपचाररूप जे आकाशके प्रदेश तिनकै आधेय जीव अर पुद्गल हैं ते देशान्तर प्रति सन्मुख हुआ संतां दूर कियो है प्रदेशांको क्रम जा विषैं ऐसी गतिनैं रचै है। या ग्रहण कियो है प्रदेशनिको क्रम जा विषैं ऐसी गतिनैं रचै है। ऐसा विचारनैं होतां संतां याका निर्धारकै अर्थि कहै है। सूत्रम्—

अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥

अर्थ—जीव अर पुद्गल जे हैं तिनकी गति अनुश्रेणि रूप है। वार्त्तिक—आकाशप्रदेशपंक्तिःश्रेणिः ॥१॥ अर्थ—लोकका मध्यमें आरम्भ करि ऊर्ध्व तथा अधः तिर्यक् क्रमरूप आकाशका प्रदेश अनुक्रमि करि रचना रूप भये तिनकी जो पङ्क्ति सो श्रेणी है ऐसैं कहिये है ॥१॥ वार्त्तिक—अनोरानुपूर्व्ये वृत्तिः ॥२॥ अर्थ—अनु शब्दको अनुपूर्वी अर्थमें समास होय है अर्थात् आनुपूर्वी करि जो श्रेणि सो अनुश्रेणि है ॥२॥ वार्त्तिक—जीवाधिकारात् पुद्गलासंप्रत्ययः इति चेन्न गतिग्रहणात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, जीवाधिकारतैं पुद्गलनिकै अनुश्रेणि गति है ऐसी प्रतीत नहीं होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गति शब्दका ग्रहणतैं सो ऐसैं हैं कि जो निश्चय करि इहां जीवकै ही गति इष्ट है तो गतिका अधिकारमें फेर गति शब्दको ग्रहण अनर्थ होय तातैं जानिये है कि सर्व गतिमाननिकी गति ग्रहण करिये है ॥३॥ वार्त्तिक—क्रियान्तरनिवृत्त्यर्थं गतिग्रहणमिति चेन्नावस्थानाद्यसम्भवात् ॥४॥ अर्थ—गति शब्दको ग्रहण क्रियान्तरिकी निवृत्तिके अर्थ है कि गति ही है और क्रिया नहीं है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अवस्थान आदिको अभाव है यातैं कि विग्रह गतिनैं ग्रहण करी ऐसा जीवका अवस्थान शयन आदि क्रिया नहीं सम्भवै है यातैं स्वतैं ही गति अर्थकी प्रतीति होय है तातैं गति शब्द या सूत्रमें अनर्थक ही ठहरै है सो नहीं तातैं या गति शब्दका सर्व गति-

माननिकी गति जनावनेका ही प्रयोजन सूत्रकारका जानना ॥४॥ वार्तिक—उत्तरसूत्रे जीवग्रहणाच्च ॥५॥ अर्थ—अथवा अविग्रहाजीवस्य ऐसौ सूत्र आगैं कहैंगे तामें जीवका ग्रहणतैं हम ऐसैं मानैं है कि इहां दोऊनिकै ही गति आश्रित करी है ॥५॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—विश्रेणिगतिदर्शनान्नियमायुक्तिरिति चेन्न कालदेशनियमात् ॥६॥ अर्थ—प्रश्न, चक्रादिकनिकै तथा मेरुकी प्रदक्षिणा करता ज्योतिषनिकै तथा मंडलिक वायुनिकै तथा मेरु आदिकी प्रदक्षिणाका समयमें विद्याधरनिकै विश्रेणि गति भी देखिये है। तातैं अनुश्रेणि ही गति है। ऐसैं नियम नहीं उत्पन्न होय है? उत्तर, सो नहीं होय है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, कालको तथा देशको नियम है यातैं तहां प्रथम काल नियम तौ ऐसैं हैं कि जीवनिकै मरण कालमें भवान्तरको मिलाप होत संतै तथा मुक्त जीवनिकै उर्ध्वगमन कालमें अनुश्रेणी ही गति है। अर देशको नियम ऐसौ है कि ऊर्ध्वलोकतैं अधोगति अर अधोलोकतैं ऊर्ध्वगति तथा तिर्यग्लोकतैं अधोगति अथवा ऊर्द्ध्व गति जो है सो अनुश्रेणी रूप है। अर पुद्गलनिके भी जो लोकान्तर प्रापणी गति है सो अनुश्रेणी गति ही है अर जो और गति है सो भजनीय है। तातैं भ्रमण रेचक आदि गति भी सिद्ध है ॥६।२६॥ अबैं सत्ताईसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है। पूर्वभाव प्रज्ञापक नय करि अवभासित व्यवहारनैं अन्तर नीति करि तथा रूढ़िका वशतैं विनिर्मुक्त कर्म बन्धन जीव जो है ताकै भी जीवपणांनैं अवधारण करि यो सूत्र अपदिक्षत कहिये उपदेश करत भयो। सूत्रम्—

अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥

अथ—अविग्रहा गति मुक्ति जीवकै है। क्योंकि विग्रह, व्याघात, कुटिलपणौं ये तीनू शब्द अनर्थान्तर है कि एक अर्थकूं कहनवारे हैं, अर सो विग्रह जाकै नहीं विद्यमान है सो या

अविग्रहा गति है। प्रश्न, कौनकैं? उत्तर, जीवके प्रश्न कैसेकनिकैं है? उत्तर, मुक्तके है। प्रश्न कैसैं जानिये है? उत्तर रूप वार्तिक—उत्तरत्रसंसारिग्रहणादिहमुक्तगतिः ॥१॥ अर्थ—उत्तर सूत्रके विषैं संसारी पदका ग्रहणतैं इहां मुक्ति जीवनिकी गति है ऐसौ जानिये है। प्रश्न, यो सूत्र कहा निमित्त कहिये है कि श्रेण्यन्तरको संग्रह जो है सो विग्रह है। अर वाको जो अभाव है सो अनुश्रेणि गति है। या सूत्र करि ही सिद्ध होय है। यातैं या सूत्र करि प्रयोजन नहीं है। उत्तर, इहां प्रयोजन है कि अनुश्रेणि गति या पूर्व सूत्रमें जीव पुद्गलनिकी कह्रं विश्रेणि भी गति है। या प्रयोजनके जनावनैं निमित्त अविग्रहाजीवस्य यो सूत्र है। बहुरि तहां ही कही है कि कालदेशका निमित्ततैं अनुश्रेणि गति है अर सर्वत्र अनुश्रेणि गति नहीं है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि वा अर्थकी सिद्धि भी याही सूत्रका अर्थतैं है ॥१२७॥ अबै अट्ठाईसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो कर्म संग रहित आत्माकै अप्रतिबन्ध करि लोक पर्यंत एक समय मात्र कालवान गति प्रतिज्ञा रूप करिये है तौ कार्मण देह सहित की गति प्रतिबन्धिनी है। या मुक्त जीवकै अप्रतिबंध करि ही है। ऐसैं प्रश्न होत संतैं यो सूत्र कहैं है। सूत्रम्—

विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥२८॥

अर्थ—विग्रहवान गति संसारिनकै चारि समय पहिली है। वार्तिक—कालपरिच्छेदार्थं प्राक्चतुर्भ्य इति वचनम्। अर्थ—समयका लक्षण जो है सो आगानै कहैंगे। अर चार समयतैं पहिली विग्रहवान गति है। ऐसा कालका परिज्ञानकै अर्थि प्राक्चतुर्भ्यः ऐसैं कहिये हैं। प्रश्न चार समय उपरान्त गति काहेतैं नहीं है? उत्तर, विग्रहका जो निमित्त ताका अभावतैं कि सर्वोत्कृष्ट जो विग्रह है सो निमित्त जानैं ऐसा तिर्यक् क्षेत्रके विषैं उत्पन्न होनेको इच्छुक प्राणी तिर्यक् क्षेत्रसम्बन्धा अनुपूर्वीमें सरल श्रेणीका अभावतैं इषुगतिका अभावतैं होतां संतां तिर्यक् क्षेत्र प्रति

प्राप्त करनवारी जो निमित्तरूप तीन विग्रहवान जो गति तानैं आरम्भ करै है। अर तीन उपरांत है विग्रह जा विषैं ऐसी गतिनैं नाहीं आरम्भ करै है। क्योंकि जा विषैं तीन सिवाय विग्रह होय वैसा उत्पादका चेत्रको अभाव है यातैं उतना ही काल करि साठी चावल आदिका स्वरूप लाभकै समान उत्पाद चेत्रनै प्राप्त होय है यातैं सो जैसैं साठी आदि चावलनिकै प्रमाणीक कालकी अवधिकरि परिपाक होय है नहीं न्यूनकरि होय, नहीं अधिककरि होय है तैसैं ही अन्तर भव जो विग्रहगति ताकैं विषैं कालको नियम जाननै योग्य है ॥१॥ वार्त्तिक—च शब्दः समुच्चयार्थः ॥२॥ अर्थ—च शब्द उपपाद चेत्र प्रति ऋज्वी गति कहिये अविग्रहागति अर कुटिलागति कहिये विग्रहवती गति जे है तिनका समुच्चयकै अर्थि है। अर्थात् सर्व गतिका ग्रहणकै अर्थि च शब्द है ॥२॥ वार्त्तिक-आङ्ग्रहणं लघ्वर्थमितिचेन्नाभिविधिप्रसंगात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, लघु होनेकै निमित्त सूत्रमें आङ्पदको ग्रहण करने योग्य है कि आचतुर्भ्यः ऐसा कहनै योग्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारणतैं ? उत्तर, अभिविधिका प्रसंगतै कि जाकरि चतुर्थ समयनैं व्याप्य करि विग्रह प्रवर्त्तै ऐसो अर्थ होय सो अनिष्ट हैं यातैं ॥३॥ वार्त्तिक—उभयसम्भवे व्याख्यानान्मर्यादासंप्रत्ययः इति चेन्न प्रतिपत्तेर्गौरवात् ॥४॥ अर्थ—प्रश्न, मर्यादा अर्थमैं अर अभि विधि अर्थमैं आङ् शब्द प्रवर्त्तै है, तिनमैं व्याख्यानतैं विशेष जो इष्ट है ताकी प्रतीति होय है। यातैं मर्यादाकी भलैप्रकार प्रतीति होयगी यातैं आङ् शब्दनैं होतां संतां भी दोष नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, अर्थकी प्रतितिमैं गौरव होय है यातैं कि आङ् शब्दनैं होतां संतां दोऊ अर्थकी प्रतीतिमैं गौरव होय है यातैं कि आङ् शब्दनैं करतां संतां दोऊ अर्थकी प्रतीति होय तिनमैं एकको त्याग अर एककी प्रतीति होनेमैं गौरव होय है। यातैं स्पष्ट अर्थकी प्रतीतिके अर्थ सूत्रमैं प्राक्पदको ग्रहण करिये है अर ये चार गति जे हैं तिनकै आर्षोक्त संज्ञा ऐसी है तिनके नाम ऐसैं हैं कि इषुगति १ पाणिमुक्तागति २ लांगलिकागति ३ गौमूत्रिकागति ४ है। तहां प्रथम-

की इषुगति जो है सो तो अविग्रहा है कि मोड़ा रहित इषु जो वाण ताके समान सरल है अर अब शेष तीन गति है सो विग्रहवान है कि मोड़ा सहित है। तिनमें इषुगतिके समान जो है सो इषुगति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें वाणकी गति लक्ष्यदेश पर्यन्त सरल है। तैसें संसारीनिकै तथा सिद्ध भये जीवनिकै सरल गति है सो एक समयकी है। अर पाणिमुक्ताके समान गति जो है सो पाणिमुक्तागति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है, उत्तर, जैसें पाणिकरि तिर्यक् दिशा सन्मुख फैंक्या द्रव्यकी गति एक विग्रहा है कि मोड़ा सहित है। तैसें संसारीनिकै एक विग्रहगति पाणिमुक्ता है सो दोय समयकी है। अर लांगलिके समान लांगलिका गति है। प्रश्न, इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें लांगल दोय वक्रतावान है तैसें दोय विग्रहवान् गति लांगलिकी है सो तीन समयकी है। अर गोमूत्रिकाके समान गोमूत्रिका गति है। इहां उपमा अर्थ कहा है? उत्तर, जैसें गोमूत्रिका बहुवक्रतावान है तैसें तीन विग्रहवान गति है सो गोमूत्रिका है सो चार समयकी है ॥४॥ अवैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो या विग्रहवान क्रिया है सो चार समयकी अवस्थारूप निश्चय करिये है तो परित्यक्त है व्याघात जा विषैं ऐसी गति कितनां समयकी है ऐसो प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

एकसमयाविग्रहा ॥२९॥

अर्थ—विग्रह रहित जो गति है सो एक समयकी है। वार्त्तिक—अधिकृतगतिसमानाधिकरणत्वात् स्त्रीलिङ्गनिर्देशः॥ अर्थ—गतिको अधिकार है। अर वा गतिका समानाधिकरणपणातैं इहां स्त्रीलिङ्गको निर्देश जानवे योग्य है। अर एक है समय जाके सो एक समया है। अर नहीं विद्यमान है विग्रह जाकै सो अविग्रहा है, अरं निश्चय करि ऐसी गतिमान जीव अर पुद्गल जे हैं तिनकै नहीं व्याघात करि लोक पर्य्यन्त भी एक समयकी है ॥१॥ वार्त्तिक—

आत्मनो क्रियावत्त्वसिद्धेरयुक्तमिति चेन्न क्रियापरिणामहेतुसद्भावाल्लोष्टवत् ॥२॥ अर्थ—प्रश्न, सर्व गतपणातैं निष्क्रिय आत्माकै क्रियावानपणौं नहीं है तातैं गतिको कल्पन अयुक्त है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? क्रिया परिणाम रूप हेतुका सद्भावतैं। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, लोष्टकै समान सो जैसैं लोष्ट आप क्रिया परिणाम पणातैं वाह्य आभ्यन्तर कारणकी अपेक्षा सहित हुवो संतो देशान्तरमें प्राप्त होनैं समर्थ क्रियानैं अंगीकार करै है। अर कर्मका अभावनैं होतां संता प्रदीपककी शिखाके समान स्वभावकी ऊर्ध्वगमन रूप क्रियानैं अंगीकार करै है यातैं दोष नहीं है। अर सर्वगत पणानैं होतां संता संसारको अभाव होय कि जो सर्वगत आत्मा है तो क्रियाका अभावतैं संसारको अभाव होय ॥२॥ अवैं तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि बंधकी संतति प्रति अनादि अर कर्मको जो संचय ताकी जो वृत्ति ताका सम्बन्ध करि आदिमान द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भावरूप पंच प्रकार संसार पणानैं होतां संतां तथा मिथ्या दर्शन आदि कारणनिकी निकटतानैं होतां संता उपयोगात्मक यो आत्मा निरन्तर पणां करि कर्मनैं ग्रहण करै है। ऐसा उपदेशतैं विग्रह गतिके विषैं भी आहारक पणौं प्राप्त होय है। तातैं नियमके अर्थ यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥

अर्थ—एक तथा दोय तथा तीन समय अनाहारक है। वार्त्तिक—समयसंप्रत्ययः प्रत्यासत्तेः। अर्थ—एक समया विग्रहा या सूत्रमें समय कह्यो है ताकरि इहां निकटतातैं अभिसम्बन्ध जानवे योग्य है कि एक समय दोय समय तीन समय अनाहारक है। ऐसौ अर्थ होय है। प्रश्न, तहां समय शब्द उपसर्जनी भूत है कि गौण रूप है सो कैसैं इहां सम्बन्ध रूप होय? उत्तर, अन्यका अभावतैं अर्थकी सामर्थ्यतैं सम्बन्ध देखने योग्य है ॥१॥ वार्त्तिक—

वा शब्दोत्र विकल्पार्थो ज्ञेयः ॥२॥ अर्थ—या सूत्रमें वा शब्द है सो विकल्पार्थ जानवे योग्य है। अर विकल्प जो है सो यथेच्छ अर्थनैं कहै है एक अथवा दोय अथवा तीन समय अनाहारक है ॥२॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—सप्तमीप्रसंगः इति चेन्नात्यन्तसंयोगस्य विवक्षितत्वात् ॥३॥ अर्थ—प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, अत्यन्त संयोगका विवक्षित पणातैं, क्योंकि निश्चय करि अत्यन्त संयोगतैं होतां संतां सप्तमीका अपवादतैं द्वितिया करिये है। ऐसौ व्याकरणकौ मत है ॥३॥ वार्त्तिक—त्रयाणां शरीराणां षण्णां पर्याप्तीनां योग्यपुद्गलग्रहणमाहार ॥४॥ अर्थ—निश्चय करि तैजस कार्मण शरीर यावत् संसारका अन्त पर्यन्त नित्य उपचीयमान स्वयोग्य पुद्गल है कि नित्य अपने योग्य पुद्गलनिनैं ग्रहण करै है। यातैं आहारादि अभिलाषके कारण जे अवशेष औदारिक, वैक्रियिक, आहारक ये तीन शरीर तिनकै योग्य अर आहार १ शरीर २ इन्द्रिय ३ श्वासोछ्वास ४ भाषा ५ मन ६ ये षट् पर्याप्ति जे हैं तिनके योग्य पुद्गलनिको गहण जो है सो आहार है ऐसैं कहिये है ॥४॥ वार्त्तिक—विग्रहगतावसंभवादाहारकशरीरनिवृत्तिः ॥ ५ ॥ अर्थ—ऋद्धि प्राप्त ऋषीश्वर जे हैं तिनकै आहारक शरीर प्रगट योय है। यातैं विग्रहगतिके विषैं आहारक शरीरका असम्भवतैं निवृत्ति है कि निषेध है ॥५॥ वार्त्तिक—शेषाहाराभावो व्याघातात् ॥६॥ अर्थ—विग्रह गतिके विषैं औदारिक, वैक्रियक अर षट् पर्याप्ति ऐ ही जे आहार तिनकौ अभाव है। प्रश्न, काहे तैं है उत्तर, व्याघाततैं कि अष्ट विध कर्म पुद्गल सूक्ष्मरूप परिणम्या जे हैं तिनका संचयरूप मूर्त्ति कार्मण शरीर जो है ताका वशतैं प्रावृट् काल करि परिणत जो जलधर तातैं निकस्यो जो जल ताका ग्रहणमें सममें अर क्षेप्यो ऐसो तप्त लोहको वाण जो है ताकै समान पूर्व देहकी निवृत्ति अर समुद्घात रूप दुःख करि उष्णपणातैं गमन करतो भी आहारक है। तथापि वक्र गतिका वशतैं एक दोय समयनै व्याप्य करि अनाहारक है। तिनमैं एक समयकी इषु गतिके विषैं कह्यौ है लक्षण जाको ऐसा आहारनैं अनुभव करतो संतौ ही गमन करै है। अर एक विग्रह वान

दोयं समयकी पाणिमुक्ता गति जो है ताकैं विषैं प्रथम समयमें अनाहारक है। अर दूसरा समयमें आहारक है। अर दोय विग्रहवान तीन समयकी लांगलिका गति जो है ताकैं विषैं प्रथम अर द्वितीय समयमें अनाहारक है, अर तृतीय समयमें आहारक है। अर तीन विग्रहवान चार समयकी गोमूत्रिका गति जो है ताकैं विषैं चतुर्थ समयमें तो आहारक है अर और प्रथमके तीन समय जो है तिनकैं विषैं अनाहारक है ॥६॥ इहां तीन विग्रह अर चार समयके स्पष्ट जनावनें निमित्त संस्थान लिखिये है। अबैं इकईसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। कि निश्चय करि शुभाशुभ फलको देनेवारो कार्मण शरीर यो है ताकरि अनुग्रहीत है क्रिया याकै अर अनुश्रेणीनैं ग्रहण करतो संतो पूर्वोपार्जित कर्म फलनैं अनुभवन करने प्रति कर्म करि परिपूर्ण अर अविग्रहवान तथा विग्रहवान जो गमन द्वय ता करि प्राप्त होय है देशान्तर जाकै एसो संसारी जो है ताकैं नवीन मूर्त्यन्तरकी रचनाका प्रकार जनावनैं निमित्त यो सूत्र कहै है। सूत्रम्—

सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥३१॥

अर्थ—संसारी जीवकै सम्मूर्च्छन १ गर्भ २ उपपाद ये तीन प्रकार जन्म हैं। वार्त्तिक--समन्ततो मूर्च्छनं सम्मूर्च्छनम् ॥१॥ अर्थ---तीन लोकके विषैं ऊपर नीचैं तथा बगलमैं देहको सर्व तरफतैं मूर्च्छन कहिये अवयवनिको प्रकलपनौ जो है सो सम्मूर्च्छन है ॥१॥ वार्त्तिक---शुक्रशोणितगरणात् गर्भः ॥२॥ अर्थ—जहां शुक्रको अर श्रोणितको गरणं कहिये मिलन जो है सो गर्भ है ॥२॥ वार्त्तिक---मात्रोपयुक्ताहारात्मसात्करणाद्वा ॥३॥ अर्थ---अथवा माता करि उपयुक्त किया आहारका अंगीकार करवा रूप गरणतैं गर्भ है ॥३॥ वार्त्तिक---उपेत्य पद्यतेऽस्मिन्नित्युपपादः ॥४॥ अर्थ---हल या सूत्रतैं अधिकरण साधनरूप घञ् प्रत्यय होय है। तातैं उपपाद पद सिद्ध होय है। अर यो देव नारकीनिका उत्पत्ति स्थान विशेषको नाम है। ऐसैं ये तीन

संसारी जीवनिके जन्म हैं तिनके प्रकार हैं ॥४॥ वार्त्तिक-सम्मूर्च्छनग्रहणमादावतिस्थूलत्वात् ॥५॥ अर्थ---निश्चय करि सम्मूर्च्छनितैं उत्पन्न भयो शरीर जो है सो अति स्थूल है यातैं याको ग्रहण आदिमें करिये है। प्रश्न, वैक्रियक शरीरतैं अति स्थूल गर्भज शरीर है। तातैं सम्मूर्च्छन अर गर्भज ये दोऊ जे हैं तिनके विषैं आदिमें कौनको वचन करनौं न्याय है। ऐसैं प्रश्न होत संतैं कहे है ॥५॥ वार्त्तिक---अल्पकालजीवित्वात् सम्मूर्च्छनम् ॥६॥ अर्थ---गर्भज उपपादक जे हैं तिनतैं सम्मूर्छन प्राणी अल्पजीवी हैं। तातैं सम्मूर्च्छनको आदिके विषैं करनौं न्याय है ॥६॥ किंच, वार्त्तिक---तत्कार्यकारणप्रत्यक्षत्वात् ॥७॥ अर्थ---गर्भ अर उपपाद है जन्म जिनके तिनके कार्य अर कारणका अप्रत्यक्ष है। अर्थात् अनुमान गम्य है। अर जे सम्मूर्च्छन जन्म है ताकौ कारण मांसादिक अर वाको कार्य शरीर ये दोऊ ही लोकके विषैं प्रत्यक्ष है। तातैं याको ग्रहण आदिके विषैं करिये है ॥७॥ वार्त्तिक—तदनन्तरं गर्भग्रहणं कालप्रकर्षनिष्पत्तेः ॥ ८ ॥ अर्थ—निश्चय करि गर्भ जन्म जो है सो सम्मूर्छन जन्मतैं कालकी अधिकता करि उत्पन्न होय है तातैं सम्मूर्छनिके अनन्तर गर्भ जन्मको ग्रहण करनौ न्याय है ॥८॥ वार्त्तिक—उपपाद ग्रहणमन्ते दीर्घजीवित्वात् ॥९॥ अर्थ---सम्मूर्छनज जे हैं तिनतैं उपपाद जन्म वारे दीर्घ जीवी हैं यातैं अंतमें ग्रहण करिये है ॥९॥ प्रश्न, यो जन्म विकल्प कौनको कियो है ? उत्तर, कहिये है ॥ वार्त्तिक—अध्यवसायविशेषात् कर्मभेदे तत्कृतो जन्मविकल्पः ॥१०॥ अर्थ—अध्यवसाय जो है सो परिणाम है सो असंख्यात लोक प्रमाण विकल्प रूप है ताके भेदतैं वाके कार्य कर्म बन्ध जे हैं तिनमें विकल्प है। तातैं कर्मबंधके फल जन्म विकल्प जाननें योग्य है। क्योंकि निश्चय करि कारणके अनुकूल कार्य देखिये है। अर शुभाशुभ लक्षणरूप कर्म जो हैं सो शुभाशुभ रूप ही जन्मनैं उत्पन्न करे है ॥१०॥ वार्तिक—प्रकारभेदाज्जन्मभेद इति चेन्न तद्विषयसामान्योपदानात् ॥११॥ अर्थ—प्रश्न, जन्मके प्रकार बहुत हैं अर वाका समानाधिकरण पणातैं जन्मके भी

बहुबचन पणौं प्राप्त होय है सो जैसैं जीवादयः पदार्थ ऐसो वाक्य है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, वा संसारीको विषय सामान्य जो है ताका ग्रहणतैं कि वा जन्मका प्रकार विषय रूप जो है ताहि इहां सामान्य जन्म शब्द करि ग्रहण करिये है तातैं एकत्व निर्देश है सो जैसैं जीवाद्यस्तत्वं ऐसो वाक्य है ॥१२॥ अवैं बत्तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहे है। कि अधिकार रूप कियो अर संसार विषय है जाको ऐसो जो उपभोग ताकी जो लब्धि ताको जो अधिष्ठान कहिये स्थिति तामैं प्रवीण ऐसो जन्म जो है ताको यो विकल्प कहनें योग्य है यातैं कहे हैं। सूत्रम्—

सचित्तशीतसंवृताः सेतरामिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥

अर्थ—सचित्त, शीत, संवृत, सेतर, मिश्र ये एक एक जन्मकी योनि है कि उत्पत्ति कारण है। वार्तिक—आत्मनः परिणामविशेषश्चित्तम् ॥१॥ अर्थ—चैतन्य स्वरूप आत्मा जो है ताकौ परिणाम विशेष जो है सो चित्त है। अर वा चित्त करि सहित प्रवर्त्तैं सो सचित्त है ॥१॥ वार्तिक—शीत इति स्पर्शविशेषः ॥२॥ अर्थ—शीत या शब्द करि स्पर्श विशेष ग्रहण करिये है, अर शुक्लादि शब्दकै समान उभय वचन पणातैं शीत गुण युक्त द्रव्य भी शीत कहिये है ॥२॥ वार्तिक—संवृतो दुरुपलक्ष्यः ॥३॥ सम्यक्वृत रूप है सो संवृत है। यातैं दुरुपलक्ष्य प्रदेशकूं संवृत कहिये है ॥३॥ वार्तिक—सेतराः सप्रतिपक्षाः ॥ ४ ॥ अर्थ—इतर जे प्रतिपक्षी तिन करि सहित जो हैं सो सेतर है। अर्थात् सप्रतिपक्षी है। प्रश्न, वे कौन है ? उत्तर, अचित्त है, उष्ण है, विवृत है ॥४॥ वार्तिक—मिश्रग्रहणमुभयात्मकसंग्रहार्थम् ॥५॥ अर्थ—उभयात्मकका संग्रहणकै अर्थि मिश्रपदको ग्रहण करिये है सो ऐसैं है कि सचित्ता चित्तशीतोष्ण, संवृत विवृत ऐसे होय ॥५॥ वार्तिक—च शब्द प्रत्येकसमुच्चयार्थः ॥६॥ अर्थ—मिश्राश्च ऐसैं च शब्द है सो प्रत्येकका समुच्चयके अर्थि करिये

है अर जो शब्द नहीं करिये तो तौ मिश्र शब्द पूर्वोक्तनिको ही विशेषण ठहरै ताकरि सचित्त शीत संवृत अर सेतर जा समय मिश्र होय ता समय ही योनि होय यो अर्थ प्राप्त होय। अर चा शब्दनैं होतां संतां सचित्तादिक प्रत्येक योनि है। अर मिश्र भी योनि है यो अर्थ लब्धि होय है। प्रश्न, च शब्द विना भी वैसा अर्थ की प्रतीति होय है। यातैं पूर्वोक्त अर्थ रूप प्रयोजन नहीं है, क्योंकि अन्तरेणापि तत्प्रतीतेः, याकौ अर्थ ऐसौं है कि च शब्द विना भी समुच्चय अर्थ प्रतीतिमें आवै है यातैं सो जैसैं पृथिव्यप्तेजोवायुरिति ऐसा वाक्य में च शब्द नहीं है। तथापि भिन्न भिन्न समुच्चय ग्रहण करिये है। इहां प्रश्न उपजै है कि जो कह्यौ है कि निश्चय करि च शब्द विना पूर्वोक्तनिके ही विशेषण होय सो यो दोष नहीं है। क्योंकि विशेषण अर्थका संभवनै होतां संतां समुच्चय अर्थ ही है ऐसैं व्याख्यान करिये है ॥६॥ उत्तर रूप वार्तिक—इतरयोनिभेदसमुच्चयार्थस्तु ॥७॥ अर्थ—ऐसैं है तो सूत्रमें नहीं कहे जे ये योनिनके भेद तिनका समुच्चयकै अर्थि च शब्द है। प्रश्न, वे भेद कौनसे है? उत्तर, आगानैं कहैंगे ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—एकशो ग्रहणं क्रममिश्रप्रतिपत्त्यर्थम् ॥ ८ ॥ अर्थ—एक एकका होय सो एकशः कहिये है। ऐसैं वीप्सामे शस् प्रत्यय होय है तातैं एकशः पदको ग्रहण क्रम मिश्रकी प्रतीतिकै अर्थ है ऐसैं जानिये है कि सचित्त अर अचित्त तथा शीत अर उष्ण तथा संवृत अर विवृत है। अर ऐसैं मति जानूं कि सचित्त शीत आदि भी मिश्र होय है ॥८॥ वार्त्तिक—तद्ग्रहणं क्रियते प्रकृतापेक्षार्थम् ॥९॥ अर्थ—जिनको जो योनि सो तद्योनि है। प्रश्न, किनको? उत्तर, सम्मूर्च्छनादि किनको;॥ ९ ॥ वार्त्तिक—यूयत इति योनिः ॥ १० ॥ तथा वार्त्तिक—सचित्तादिद्वन्द्वे पुंवद्भावाभावो भिन्नार्थत्वात् ॥ ११ ॥ अर्थ—यूयते कहिये उत्पन्न हूजिये जाकै विषैं सो योनि है अर यो योनि शब्द स्त्रीलिंग है ताकी अपेक्षा सचित्तादिक शब्द भी स्त्रीलिंगः है। तिनको द्वन्द्व समास होत संतैं पुंवद्भाव नहीं प्राप्त होय है कि सचित्ताश्च शीताश्च

संवृताश्च सचित्तशीतसंवृता ऐसैं प्रश्न काहेतैं है ? उत्तर, भिन्नार्थ पणातैं, क्योंकि निश्चयकार
पुंवद्भाव एकाश्रयनैं होतां संतां कह्यौ है ॥११॥ उत्तररूप वार्त्तिक—नवा योनिशब्दस्योभयलिङ्ग-
त्वात् ॥१२॥ अर्थ—यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, उभयलिङ्ग पणातैं इहां योनि
शब्दकै पुंल्लिङ्ग जानवे योग्य है ॥१२॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—योनिजन्मनोरविशेषः इति चेन्ना-
धाराधेयभेदादुविशषोपपत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, योनिकै अर जन्मकै अभेद है, क्योंकि जातैं
आत्मा ही देवादि जन्म पर्यायतैं औपपादिक है ऐसैं कहिये है सो ही योनि है। उत्तर, सो नहीं
है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, आधाराधेय रूप भेदकी उपपत्ति है कि निश्चयकरि आधार
योनि है। अर आधेय जन्म है। यातैं सचित्तादि योनि है अधिष्ठान जाको ऐसो आत्मा संमू-
र्च्छनादि जन्मनिका शरीर, आहार, इन्द्रिय आदि जे हैं तिनकै योग्य पुद्गल जे हैं तिनने ग्रहण
करे है ॥ १३ ॥ वार्त्तिक—सचित्तग्रहणमादौ चेतनात्मकत्वात् ॥ १४ ॥ अर्थ—सचित्तको ग्रहण
आदिकैं विषैं करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, चेतनात्मकपणातैं क्योंकि निश्चिय करि लोककै
विषैं चेतनात्मक अर्थ प्रधान है यातैं ॥ १४ ॥ वार्त्तिक—तदनन्तरं शीताभिधानं तदाप्यायनहेतु-
त्वात् ॥ १५ ॥ अर्थ—ता पीछैं शीत योनिका अभिसन्वन्ध करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर,
जन्मका उत्पत्ति कारणपणातैं क्योंकि निश्चयकरि सचेतन अर्थका उत्पत्तिको कारण शीतस्पर्श
ही है ॥ १५ ॥ वार्त्तिक—अन्ते संवृतग्रहणं गुप्तरूपत्वात् ॥१६॥ अर्थ-अन्तके विषैं संवृत शब्दको
ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, गुप्तरूपपणातैं, क्योंकि लोककै विषैं गुप्तरूप वस्तु कर्मकरि
ग्राह्य है ॥ १६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—एक एव योनिरितिचेन्न प्रत्यात्मं सुखदुःखानुभवनहेतु-
सद्भावात् ॥ १७ ॥ अर्थ—सब जीवनिकै एक ही योनि होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा
कारण ? उत्तर, आत्मा आत्मा प्रति भिन्न भिन्न सुख दुःखका अनुभवनको सद्भाव है यातैं, क्यों-
कि निश्चयकरि आत्मा आत्मा प्रति शुभाशुभ परिणाम भिन्न भिन्न है। अर वा परिणाम जनित

कर्मबन्ध भी विचित्र है। यातैं, विचित्र कर्मबन्ध करि सुख दुःखका अनुभवका कारणरूप योनि भी बहुविधि आरम्भ करिये है ॥ १७ ॥ वार्त्तिक—तत्राचित्तयोनिका देवनारकाः ॥ १८ ॥ अर्थ—तहां देव अर नारकी जे हैं ते अचित्त योनिवान है क्योंकि निश्चयकरि तिनकैं उपपादस्थानके प्रदेश पुद्गल समूह है सो अचित्त योनि है ॥१८॥ वार्त्तिक—गर्भजा मिश्रयोनयः ॥ १६ ॥ अर्थ—जे गर्भज जीव हैं ते मिश्रवान जानवे योग्य है। क्योंकि निश्चयकरि तिनकै माताका गर्भकै विषैं शुक्र अर शोणित जो है सो तो अचित्त है अर तहां ही योनि स्वरूप करि आत्मप्रदेश हैं ते चेतनावान है तातैं मिश्र है ॥ १६ ॥ वार्त्तिक—शेषास्त्रिविकल्पः ॥ २० ॥ अवशेष सम्मूर्छन जे हैं ते तीनूं विकलपरूप है कि कितनेक सचित्त योनि है, अर और अचित्त योनि है अर और मिश्र योनि हैं। अर तिन सम्मूर्छननिमैं जे साधारण शरीरवान हैं ते सचित्त योनि है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, परस्पर आश्रयपणांतैं अर और जे हैं ते अचित्त योनि है तथा मिश्र योनि है ॥ २० ॥ वार्त्तिक—शीतोष्णयोनयो देवनारकाः ॥ २१ ॥ अर्थ—देव अर नारकी जे हैं ते तो शीत योनिवान है तथा उष्णवान योनि है, क्योंकि निश्चयकरि तिनके उपपादस्थान कितनेक उष्ण हैं कितिनेक शीत हैं यातैं ॥ २२ ॥ वार्त्तिक—उष्णयोनिस्तेजस्कायिकः ॥ २२ ॥ अर्थ—अग्निकायके जीव उष्णयोनि जानने योग्य है ॥ २२ ॥ वार्त्तिक—इतरे त्रिप्रकाराः ॥ २३ ॥ अथ—अर और कायके जीव तीन प्रकारके योनिवान हैं। कितनेक शीत योनिवान है। अन्य उष्ण योनिवान है। अर मिश्रयोनिवान है ॥ २३ ॥ वार्त्तिक—देवनारकैकेन्द्रियासंवृतयोनयः ॥ २४ ॥ अर्थ—देवनारकी अर एकेन्द्रिय जे हैं ते संवृत योनिवान है ॥२४॥ वार्त्तिक—विकलेन्द्रिया जीवाः विवृतयोनयो वेदितव्याः ॥ २५ ॥ अर्थ—विकलेन्द्रिय जीव जें हैं ते विकृत योनिवान जानवे योग्य है ॥ २५ ॥ वार्त्तिक—मिश्रयोनयो:गर्भजाः ॥२६॥ अर्थ—गर्भज जीव जे हैं ते मिश्रयोनिवान है कि किंचित् विवृत योनिवान जानवे योग्य है ॥२६॥ वार्त्तिक—तद्भेदाश्च शब्दसमुच्चिता प्रत्यक्षज्ञानिदृष्टाः

इतरेषामागमगम्याश्चतुरशीतिशतसहस्रसंख्याः ॥ २७॥ अर्थ—तिन नव योनिनके भेद कर्म भेद जनित हैं भिन्न भिन्न वृत्ति जिनकी ऐसैं हैं ते प्रत्यक्ष ज्ञानीनिकरि दिव्य नेत्र जो ज्ञाननेत्र ताकरि देखै है। अर छद्मस्थ जे हैं तिनकै श्रुत है नाम जाका ऐसा आगमकरि जानने योग्य चौरासी लाख संख्या प्रमाण जाननें योग्य है सो ऐसैं है कि नित्य निगोदनिके सात लाख भेद हैं अर अनित्य निगोदके सात लाख भेद है। प्रश्न, वे नित्य निगोद तथा अनित्य निगोद कौन है? उत्तर, भूत, भविष्यत्, वर्त्तमानकालमें त्रसभावके योग्य नहीं है ते नित्य निगोद है। अर जे त्रस भावनैं प्राप्त भया अर प्राप्त होवेंगे ते अनित्य निगोद है। अर पृथिवी, अप, तेज, वायु, कायकनिकै सात सात लाख भेद है, अर वनस्पतिकायकनिकै दश लाख भेद है विकलेन्द्रियनिकै छै लाख भेद हैं। देवनिकै नारकीनिकै तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चनिकै प्रत्येक चार चार लाख भेद है अर मनुष्यनिकै चौदा लाख भेद है ये सर्व एकत्र जोड़िरूप किया संतां चौरासी लाख कहिये है। उक्तं च, गाथा—

णिच्चिदरधादुसत्तय तरुदस वियलिंदिएसु छच्चेव।
सुरणिरयतिरियचउरो चोद्दस मणुए सद सहस्सा ॥१॥

संस्कृत—नित्येतरधातु सप्तसप्ततरोः दशविकलेन्द्रियेषु षट् चैव।
सुरनारकतिरश्चां चतुरश्चतुर्दशमनुष्येषु शतसहस्राश्च ॥१॥

अवैं तेतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ऐसैं इनि नव भेद रूप योनि संकटके विषैं तीन प्रकार जन्म सर्व प्राण धारीनिकै अनियम करि प्राप्त होय है। तातैं जिनके जैसैं सम्भवैं तिनके तैसैंके अवधार निमित्त कहै है। सूत्रम्—

जरायुजांडजपोतानां गर्भः ॥३३॥

अर्थ—जरायुज, अंडज अर पोत जे हैं तिनके गर्भ जन्म है। वार्त्तिक—जालवत्प्राणि-

परिवरणं जरायुः ॥ १ ॥ अर्थ—जो जालके समान प्राणीके सर्व तरफतैं आवरण रूप फैल्यौ मांस शोणित होय सो जरायु है ऐसैं कहिये है ॥१॥ वार्त्तिक—शुक्रशोणित परिवरणमुपात्तकाठिन्यं नखत्वक्सदृशं परिमंडलमंडम् ॥२॥ अर्थ—जहां निश्चय करि नखकी त्वचाके समान ग्रहण कियो है कठिनपणौं जानैं ऐसो शुक्र शोणितको आवरण रूप मंडलाकृति है सो अंड है ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—संपूर्णावयवः परिस्पंदादिसामर्थ्योपलक्षितः पोत ॥ ३ ॥ अर्थ—किंचित् भी आवरण विना परिपूर्ण है अवयव जाके अर योनितैं निकसनें मात्रतैं ही परिस्पंदादि सामार्थ्य करि संयुक्त जो है सो पोत है ऐसैं कहिये है। अर इन शब्दनिके निरुक्ततैं अर्थ ऐसैं है कि जरायुके विषैं उत्पन्न होय सो जरायुज कहिये। अर अंडाके विषैं उत्पन्न होय सो अंडज कहिये। अर जरायुज तथा अंडज तथा पोत जे हैं ते जरायुजांडजपोता कहिये ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—पोतजा इत्ययुक्तमर्थभेदाभावात् ॥ ४ ॥ अर्थ—कितनेक पुरुष पोतजा पढ़ै हैं सो अयुक्त है। प्रश्न, कहेतैं, उत्तर, अर्थभेदका अभावतैं कि निश्चय करि पोतके विषैं उत्पन्न होय है ऐसो कोऊ पदार्थ पोत नहीं है ॥ ४ ॥ वार्तिक—आत्मापोतज इतिचेन्नतत्परिणामात् ॥५॥ अर्थ—प्रश्न, पोतके विषैं उत्पन्न भयो आत्मा पोत है ऐसैं अर्थ भेद है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वा पोत रूप परिणामतैं कि आत्मा ही पोत परिणाम करि परिणम्यो पोत है। ऐसैं कहिये है, तातैं आत्मातैं भिन्न पोत नामा कोऊ और जरायुके समान नहीं है। तथा प्रश्न, पोतकैं विषैं उत्पन्न भयो सो पोतज है? उत्तर, पदार्थ भेद नहीं है। अर्थात् पोत रूप परिणम्यूं आत्मा ही पोत नाम पावै है। अन्य कोऊ पदार्थ नहीं है। वार्त्तिक—जरायुजग्रहणमादावभ्यर्हितत्वात् ॥ ६ ॥ अर्थ—जरायुजको ग्रहण आदिमें करिये है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, अभ्यर्हित पणातैं प्रश्न, कैसैं अभ्यर्हित पणौं है? उत्तर रूप वार्त्तिक—क्रियारम्भशक्तियोगात् ॥ ७ ॥ अर्थ—निश्चय करि अंडनितैं देखिये है यातैं। वार्त्तिक—

केषांचित्महाप्रभवत्वात् ॥८॥ अर्थ—अर जरायुजनिमैं ही उत्पन्न भये कितनेक चक्रधर वासुदेव आदि महा प्रभाववान होय है। प्रश्न, इहां तीर्थंकरका नाम क्यूं नहीं कह्या? उत्तर, निश्चय करि तीर्थंकर भी जरायुजनिकी गणनामें ही है, तथापि षट् कुमारका गर्भ सोधन आदि क्रिया करै है। तातैं माताको गर्भ स्फटिक समान दिव्य है। यातैं तीर्थंकर का शरीरके ऊपर रुधिर मांस जालके समान जरायु नहीं है। तातैं नहीं कह्या है। प्रश्न, ऐसैं है तो यो पोत ही क्यों नहीं कह्यो? उत्तर, पोत जो हैं सो गर्भतैं निकसत ही अपनी पर्यायके योग्य चलन बोलन आदि कर्म करै है अर तीर्थंकर सखिलित चरण रूप तो चलन अर गद्गद रूप बोलन आदि कर्म करै है तातैं पोत नहीं है, जरायुज ही है। किंच वार्त्तिक—मार्गफलाभिसम्बन्धात् ॥९॥ अर्थ—और सुनूं कि जरायुजनिके ही सम्यग्दर्शन आदि मार्ग जो है ताका फलरूप मोक्ष सुख करि अभि सम्बन्ध होय है, अर औरनिकै नहीं होय है। यातैं अभ्यर्हितपणौं है ॥९॥ वार्त्तिक—तदनन्तरमंडजग्रहणं पोतेभ्योऽभ्यर्हितत्वात् ॥१०॥ अर्थ—जरायुजके अनन्तर अंडजनिको ग्रहण करिये है। प्रश्न, काहेतैं? उत्तर, पोतनितैं अभ्यर्हितपणौं है यातैं, क्योंकि अंडजनिके विषैं कितनेक सारिकादिक अक्षर उच्चरण आदि क्रियाकै विषैं कुशल है यातैं पोतनितैं अभ्यर्हित है ॥१०॥ वार्त्तिक—उद्देशवान्निर्देश इति चेन्न गौरवप्रसंगात् ॥ ११ ॥ अर्थ-प्रश्न, सम्मूर्छन गर्भोपपादाज्जन्म या सूत्रमें उद्देश है ताकै समान नहीं निर्देशनैं होनैं योग्य है। यातैं सम्मूर्छनजनिको पूर्व ग्रहण कर्त्तव्य है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, गौरवको प्रसंग आवै है यातैं जो निश्चय करि सम्मूर्छनजको निर्देश आदिमें करिये तो शास्त्र गौरव होय है। क्योंकि एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच तथा मनुष्य जे हैं तिनमें कितनेकनिको सम्मूर्छन जन्म है। यातैं गर्भजनिनै तथा औपपादिकनिनैं कहि करि शेषाणां सम्मूर्छनं ऐसैं लघु उपाय करि कहूंगो या अभिप्रायतैं उद्देशको क्रम उल्लंघन कियो ॥११॥

वार्त्तिक—सिद्धेविधिरवधारणार्थः ॥ १२ ॥ अर्थ—जरायु आदिकनिकै गर्भ जन्मका सम्बन्धकी सामान्य करि सिद्ध होत संतैं बहुरि आरम्भ करि विधि नियमकै अर्थ है कि जरायुज अंडज अर पोत जे हैं तिनकै ही गर्भ जन्म है। इनतैं अन्य देवनारकी सम्मूर्च्छन जे हैं तिनकै गर्भ जन्म नहीं है। प्रश्न, नियमके अर्थि आरम्भ करतां संता जरायुज अंडज पोत जे हैं तिनकै गर्भ ही जन्म है ऐसो नियम काहेतैं नहीं है? उत्तर, आगैं शेषाणां एसौ वचन है। भावार्थ—जरायुज, अंडज पोतनिकै गर्भ ही जन्म है, ऐसौ नियम करिये तो औरनिकै गर्भ जन्म भी है। ऐसा अर्थको प्रतिभास होय। अर शेषाणां सम्मूर्छनं या सूत्रतैं अवशेषनिकै सम्मूर्छन जन्म ही इष्ट है। तातैं विरुद्ध होय, यातैं जरायुजादिकनिकै ही गर्भ जन्म है ऐसौ नियम कियो है ॥१२॥ अबै चौतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो ये जरायुज, अंडज, अर पोत हैं जे तिनकै गर्भ जन्म अवधारण करिये है तो निश्चय करि उपपाद जन्म किनकै होय है। ऐसा प्रश्न उपजे है यातैं कहै है। सूत्रम्—

देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥

अर्थ—देव नारकीनिकै उपपाद जन्म है। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—देवादिगत्याद्य एवास्य जन्मेति चेन्न,, शरीरनिर्वर्त्तपुद्गलाभावात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, मनुष्य तथा तिर्यक् योनि छिन्नायु जो है सो कार्मण काय योगस्थ होत संतै देवादिगतिका उदयतैं देवादि नामको भजनेवारो होय है, ऐसैं करि वो ही वाको जन्म है ऐसैं मानै हैं सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर शरीरकी रचना करनवारे पुद्गलनिका अभावतैं, क्योंकि देवादि शरीरकी रचनानैं होतां संतां ही निश्चय करि देवादि जन्म इष्ट है अर वा कार्मण योगस्थ अवस्थाके विषैं अनाहारक पणांतैं देवादि शरीरकी रचना ही है, तातैं उपपाद ही जन्म युक्त है। अर वो उपपाद जन्म देव नारकीनि

के ही है ॥ १ ॥ अबै पैंतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि ऐसैं है तो दिखाये हैं जन्मके भेद जिनके ऐसे जरायुजादिक जे है तिनतैं अन्य जे हैं तिनकै कौनसो जन्म है, ऐसो प्रश्न उपजे है, यातैं कहै है। सूत्रम्—

शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥ ३५ ॥

अर्थ—पूर्वोक्तनितैं अवशेष जे हैं तिनकै सम्मूर्छन जन्म है। वार्त्तिक—उभयत्रनियम. पूर्ववत् ॥ १ ॥ अर्थ—दोऊ ही योगनिमें पूर्ववत् नियम जानने योग्य है कि देव नारकीनिकै ही उपपाद जन्म है अर अवशेषनिकै ही सम्मूर्छन जन्म है अर और कहे जे जरायुज अंडज पोत देव नारकी तिनकै सम्मूर्छन जन्म नहीं है। प्रश्न, ऐसैं कैसैं जानिये है? उत्तर, पूर्वोक्त दोऊ सूत्रनिमें ही जन्मको नियम है। जन्मवान जीवनको नियम नहीं है ऐसैं या सूत्रमें शेषपदका ग्रहण है तातैं जानिये है कि दोऊ पूर्वोक्त सूत्रनिमें जन्मका ही नियम है। तातैं जरायुज,अंडज,पोत जे हैं तिनके ही गर्भ जन्म है। अर देव नारकीनिकै ही उपपाद जन्म है। ऐसा निश्चय रूप अर्थके विषैं गर्भ अर उपपाद ये दोऊ जन्म नियमरूप है अर जरायुजादिक जीव जे हैं ते नियमरूप नहीं है क्योंकि तिनकैं सम्मूर्छनादिक भी प्राप्त होय है। यातैं शेषपद ग्रहण करिये है क्योंकि शेष-निकै ही सम्मूर्छन जन्म है। अर जरायुजादिकनिकै सम्मूर्छन जन्म ही है ऐसो अवधारणको अर्थ है। अर जो निश्चय करि जन्मवाननिको नियम होय तो जरायुज अंडज पोत जे हैं तिनकै गर्भ ही जन्म है अर देव नारकीनिकै उपपाद ही जन्म है ऐसैं गर्भ उपपाद जन्म जे हैं तिनका अनव-धारणतैं जहां सम्मूर्छन जन्म है तहां अन्य जन्म भी प्राप्त होय है अर तहां सम्मूर्छन ही है ऐसा नियमतैं शेष पदको ग्रहण अनर्थक होय तातैं जन्मवान प्रति नियम नहीं है। प्रश्न, यो सूत्र अनर्थक है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, पूर्वोक्त दोऊ सूत्रनिके विषैं दोउ तरह नियमनै होतां संता

जरायुजादिकनिकै गर्भ उपपाद जन्मनिका व्यभिचारनैं नहीं होतां संतां अवशेषनिकै ही सम्मूर्छन जन्म है ऐसो उत्सर्ग कहिये विधान तिष्ठै है। एसैं कहिये कि वो ध्वनितैं प्राप्त भयो जो नियम है ताकै दोय रूप होनौं दुर्लभ है। तातैं जो वो नियम है, ताकै एक पणातैं जन्ममें अथवा जन्मवाननिमैंसूं एक मैं हो नियम आश्रय करिवे योग्य है। अर एकरूप नियमनैं होतां संतां यो सूत्र आरम्भ करने योग्य होय है॥ १॥ अवैं छत्तीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। कि तीन प्रकार है जन्म जिनके अर ग्रहण किये हैं वहुत विकल्प रूप नव योनिके भेद जिननैं ऐसै वे संसारी जे हैं तिनकै शुभाशुभ नाम कर्म करि रचे अर वंधको फल जो है ताका अनुभवन करनेके स्थान ऐसै शरीर जे हैं ते कितने हैं ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥

अर्थ—औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण ये पांच शरीर हैं। प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—शीर्यन्ते इति शरीराणि घटाद्यति प्रसंग इति चेन्न नामकर्मनिमित्तत्वाभावात् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रश्न, जे शीर्यन्ते कहिये विघटन शील होय ते शरीर कहिये है तो घटादिकनिके भी विसरण कहिये विघटनो है। तातैं शरीर पणौं अति प्रसंगरूप होय है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, नाम कर्म निमित्त पणांका अभावतैं कि शरीर नाम कर्मका उदयतैं शरीर पणौं है सो घटादिकनिकै विषैं नहीं है। यातैं अतिप्रसग नहीं है॥१॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—विग्रहाभाव इति चेन्न रूढिशब्देष्वपि व्युत्पत्तौ क्रियाश्रयात् ॥ २ ॥ अर्थ—प्रश्न, जो शरीर नाम कर्मका उदयतैं शरीर नाम है तौ शीर्यंत इति शरीराणि ऐसौ समास नहीं उत्पन्न होय है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, रूढि शब्दनिके विषैं भी व्युत्पत्तिके विषैं क्रियाका आश्रयतैं होय है यातैं सो जैसैं गच्छति इति गौ ऐसौ समास करिये है तैसैं ही शीर्यन्ते इति शरीराणि ऐसौ

समास होय है ॥ २ ॥ तथा प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—शरीरत्वादिति चेन्न तद्भावात् ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, शरीरपणौं ऐसौ नाम समन्यस्वरूप जाति जो है ताको विशेष है ताका योगतैं शरीर है। नाम कर्मका उदयतैं शरीर नाम नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, सामान्य विशेषका अभावतैं शरीरमैं शरीरपणांनैं नहीं होत संतै अग्निकै समान नहीं जाननैंको प्रसंग आवै इत्यादि करि अर्थान्तर भूत जातिका सम्बन्धकी कल्पना खंडित करी है। यातैं शरीरतैं भिन्न शरीरपणौं नहीं है ॥ ३ ॥ वार्तिक—उदरास्थूलवाचिनो भवे प्रयोजने वा ठञ् ॥ ४ ॥ अर्थ-उदार नाम स्थूलका है, तातैं भव अर्थमें तथा प्रयोजन अर्थमें ठञ् प्रत्यय होत संतै औदारिक पद सिद्ध होय है ॥ ४ ॥ वार्तिक—विक्रियाप्रयोजनवैक्रियकम् ॥ ५ ॥ अर्थ—अष्ट गुण रूप ऐश्वर्यका योगतैं एक अनेक अणु महत् शरीर नाना प्रकार करणौं जो है सो विक्रिया है अर वा विक्रिया है प्रयोजन जाकौ सो वैक्रियक शरीर है ॥ ५ ॥ वार्तिक—आह्रियते तदित्याहारकम् ॥ ६ ॥ अर्थ—सूक्ष्म पदार्थका निर्णयके अर्थि तथा असंयमकी परिहारकी वांछा करि प्रमत्त संयतीनि करि आह्रियते कहिये रचिये सो आहारक है ॥ ६ ॥ वार्तिक तेजो निमित्तत्वात्तैजसम् ॥ ७ ॥ अर्थ— जो तेजको निमित्त है सो तैजस है, अथवा तेजके विषैं होय सो तैजस है। ऐसैं कहिये है ॥ ७ ॥ वार्तिक—कर्मणामिदं कर्मणासमूह इति कार्मणम् ॥८॥ अर्थ—कर्मनिको जो यो कार्य सो कार्मण है अथवा कर्मनिको समूह जो है सो कार्मण है सो कथंचित् भेदकी विवक्षाकी उपपत्तितैं कार्मण है ऐसैं कहिये है ॥८॥ प्रश्नोत्तररूप वार्तिक—सर्वेषां कार्मणत्व प्रसंग इति चेन्न प्रतिनियतौदारिकादिनिनिमित्तत्वात् ॥९॥ अर्थ—प्रश्न, कर्मनिको जो यो अथवा कर्मनिको समूह जो है सो कार्मण है ऐसैं कहिये है तो सर्व शरीरनिकै ही कार्मणपणौं तुल्य है। यातैं औदारादिकनिकैं भी कार्मण पणांको प्रसंग आवै। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर भिन्न भिन्न नियम रूप औदारिकादि शरीरनिकै निमित्त पणौं है यातैं कि औदारिक शरीर नामादिक कर्म भिन्न भिन्न नियम

रूप हैं। तिनका जो उदय ताका भेदतैं भेद है ॥ ९ ॥ तथा वार्तिक—तत्कृतत्वेप्यन्यत्वदर्शनात् घादिवत् ॥१०॥ अर्थ—अथवा जैसें मृत्तिकाका पिंडरूप कारण जो है, ताका अवशेषनैं होतां संता भी घट शरावादिकनिके संज्ञा तथा अपना अपना लक्षण भेदतै भेद है तैसें कर्मकृतपणांका अविशेषनैं होतां संतां भी औदारिकादि शरीरनिके संज्ञा अपना अपना लक्षण आदि भेदतैं भेद निश्चय करिये है ॥१०॥ तथा, वार्तिक—तत्प्रणालिकयाचाभिनिष्पत्तेः ॥११॥ अर्थ—अथवा कार्मण शरीरकी प्रणालिका करि औदारिकादि शरीरनिकी उत्पत्ति है यातैं कार्य कारणका भेदतै सर्व शरीरनिके कार्मण पणौं नहीं है ॥१॥ किंच-वर्तिक—विस्रसोपचयेन व्यवस्थानात् क्लिन्न गुडरेणुश्लेषवत् ॥१२॥ अर्थ—जैसें वैस्रसिक परिणामात् कहिये स्वाभाविक परिणामतैं नर्म गुड़में मिली हुई रेणुकाको अवस्थान है, तैसें ही कार्मण शरीरके विषें भी औदारिकादिकनिकौ वैस्रसिक उपचय करि अवस्थान है। ऐसें पाचूं ही शरीरनिके नाना पणौं सिद्ध है। प्रश्नोत्तर रूप वार्तिक—कार्मणमसन्निमित्ताभावदिति चेन्न निमित्तनिमित्तभावात्तस्यैव प्रदीपवत् ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, कार्मण नामा शरीर नहीं है, प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, निमित्तका अभावतैं क्योंकि जाको निमित्त नहीं है सो खरपिपाणके समान नहीं है। उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, कार्मण शरीरके ही प्रदीपक समान है कारण कार्य भाव है। यातैं सो जैसें प्रदीप स्वरूप करि ही अपना प्रकाशनतै प्रकाश अर प्रकाशक है। तैसें ही कार्मण शरीर ही आपको कारण कार्य रूप आप ही है ऐसें सिद्ध है ॥ १३ ॥ तथा वार्तिक—मिथ्यादर्शनादिनिमित्तत्वाच्च ॥१४॥ अर्थ—अथवा कार्मण शरीरको निमित्त नहीं है। ऐसें कहै है सो नहीं है। प्रश्न, तो कहा निमित्त है ? उत्तर, मिथ्या दर्शनादि निमित्त कर्मण शरीर है। तातैं निमित्तका अभावतैं कर्मण शरीरको अभाव है ऐसें कह्यो हुतो सो असिद्ध है ॥ १४ ॥ वार्तिक—इतरथा ह्यनिर्मोक्ष प्रसङ्गः ॥१५॥ अर्थ—जो कार्मण शरीर अनिमित्त है ऐसें ग्रहण करिये तौ अनिर्मोक्ष ठहरै क्योंकि अहेतु-

कके विनाश हेतुपणांको अभाव है यातैं ॥ १५ ॥ तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अशरीरं विशरणाभावादिति चेन्नोपचयापचय धर्मवत्वात् ॥१६॥ अर्थ—प्रश्न, जैसैं औदारिकादि शरीर विघटै है तातैं शरीर है तैसैं कार्मण शरीर नहीं विघटै है, तातैं याकै अशरीरपणौं है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण ? अपचय तो मिलनौ अर अपचय जो विघटनौं इनि दोऊ धर्म संयुक्त पणांतैं निमित्तका वशतैं निश्चय करि कर्मनिको आवनौं जावनौं निरन्तर है यातैं कर्मण शरीरकै भो विशरण है ॥ १६ ॥ वार्त्तिक—तद्ग्रहणमादाविति चेन्न तदनुभेदत्वात्। अर्थ—प्रश्न, कार्मण शरीरको ग्रहण आदिके विषैं करने योग्य है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, और शरीरनिको याकै आधारपणौं है यातैं, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, वाकै अनुमेय पणौं है यातैं सो जैसैं घटादि कार्यकी उपलब्धितैं परमाणूं आदिको अनुमान करिये है, तैसैं औदारिकादि कार्यकी उपलब्धितैं परमाणू आदिको अनुमान करिये है क्योंकि कार्यलिङ्गं हि ऐसो वचन है यातैं ॥ १७॥ वार्त्तिक---तत एव कर्मणो मूर्त्तिमत्वं सिद्धं ॥१८॥ अर्थ--जातैं याको मूर्त्तिमान कार्य है तातैं ही कारणरूप कर्म जो है ताकै मूर्त्तिमान पणौं सिद्ध है क्योंकि अमूर्त्तिक निःक्रिय अदृष्ट आत्मगुण जे हैं तिन करि मूर्त्तिमान क्रियावान द्रव्यको आरम्भ युक्त नहीं है ॥१८॥ वार्त्तिक---औदारिक ग्रहणमादावतिस्थूलत्वात् ॥१६॥ अर्थ—यो औदारिक शरीर इन्द्रिय ग्राह्य पणांतैं अति स्थूल है तातैं याको आदिमें ग्रहण करने योग्य है॥१६॥उत्तरेषां क्रमःसूक्ष्मक्रमप्रतिपत्त्यर्थम् ॥२०॥ अर्थ--औदारिकतैं उत्तर वैक्रियादिक जे हैं तिनका पाठको अनुक्रमकै प्रतीतिकै अर्थ जानवे योग्य है। क्योंकि निश्चय करि परं परं सूक्ष्म ऐसैं कहैंगे यातैं ॥२० ॥ अवै सैंतीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है। कि जैसैं औदारिक शरीरकी उपलब्धि इन्द्रियनि करि है तैसैं और शरीरनिकी उपलब्धि काहेतैं नहीं होय है ऐसा प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है॥

सूत्रम्---

परं परं सूक्ष्मम् ॥ ३७॥

अर्थ—सूत्रोक्त अनुक्रमतैं परैं परैं सूक्ष्म है॥ वार्त्तिक— परशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातो-व्यवस्थार्थगतिः ॥ १ ॥ अर्थ—यो पर शब्द अनेकार्थ वाचो है सो कहूं तो व्यवस्था अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं पूर्वपरः कहिये यो पहिली है यो परै है। अर अन्य अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं पुत्रः पर भर्या कहिये अन्य पुत्र है, अन्य भार्या है ऐसैं जानिये है। अर कहूं प्रधान पणामें प्रवर्त्तै है कि जैसैं परं इयं कन्या कहिये या कुटुम्बके विषैं या कन्या प्रधान है ऐसैं जानिये है। अर कहूं जैसैं परं कहिये इष्ट धाममें प्राप्त भयो इत्यादि अर्थ में सूं इहां वक्ता की इच्छातैं व्यवस्था अर्थ ग्रहण करिये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—पृथग्भूतानां शरीराणां सूक्ष्मगुणेन वीप्सानिर्देशः ॥ २ ॥ अर्थ—संज्ञा लक्षण प्रयोजन आदि करि पृथग्भूत शरीर जे हैं तिनको सूक्ष्म गुणकरि वीप्सा रूप निर्देश करिये हैं कि परैं परैं सूक्ष्म है ॥ २ ॥ अवैं अड़तीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि जो परैं परैं सूक्ष्म है तो प्रदेशसे भी परैं परैं निश्चय करि हीन होयंगे। ऐसी विपरीत प्रतीतिकी निवृत्तिके अर्थि कहै है। सूत्रम्—

प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥ ३८ ॥

अर्थ--तैजसतैं पूर्वके शरीर प्रदेशनितैं असंख्यात गुणवान है। वार्त्तिक---प्रदेशपरिमाणवः ॥१॥ अर्थ—जाकरि प्रमाण करिये ते प्रदेश हैं कि परमाणु है ते ही घटादिकनिके विषैं अवयवपणां करि ग्रहण करिये है, अथवा जिनकरि प्रमाण करिये ते प्रदेश है। तिनकरि ही आकाशादिक-निको क्षेत्र आदिको विभाग दिखाइये है ॥ १ ॥ वार्त्तिक---प्रदेशेभ्यःप्रदेशतः ॥ २ ॥ अर्थ प्रदे-शनितैं होय सो प्रदेश कहिये इहां अपादान अर्थमें ही यरुहोचित या सूत्रतैं तसि प्रत्यय होय है ॥२॥ तथा वार्त्तिक--- प्रदेशैर्वा प्रदेशतः तसिप्रकरणेऽयादिभ्य उपसंख्यानमिति तसिः ॥३॥

अर्थ---प्रदेशनितैं होय सो प्रदेशतः कहिये। इहां तसि प्रकरणे कहिये तसि प्रकरणके विषैं आद्यादिभ्यः या सूत्रतैं तसि प्रत्यय होय करि प्रदेशत. पद सिद्ध होय है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक--संख्यानातीतो संख्येयः ॥ ४ ॥ अर्थ---संख्यान जो गणना ताकरि रहित होय सो असंख्येय है। अर असंख्येय रूप है गुणाकार जाको सो यो असंख्येय गुण है॥ ४ ॥ वार्त्तिक---परं परमित्यनुवृत्तेः प्राक्तैजसादिवचनम् ॥ ५॥ अर्थ---परं परं ऐसैं अनुवर्त्तै है ताकरि कार्माण पर्यन्त असंख्येय गुणपणांकी प्राप्तिनैं होतां संतां मर्यादाकरि निर्णयके अर्थि प्राक्तैजसात् ऐसैं कहिये है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक---प्रदेशतः इति विशेषणमवगाहक्षेत्रनिवृत्यर्थम् ॥६॥ टीकार्थ---प्रदेशनितैं परैं परैं असंख्यात गुणाकार युक्त है अर अवगाहन क्षेत्रतैं असंख्यात गुणाकारवान नहीं है। ऐसा अर्थ की प्रतीतिके अर्थि प्रदेशतः ऐसो विशेषण ग्रहण करिये है। या करि यो कहनौ है कि औदारिकतैं वैक्रियक असंख्यात गुण प्रदेशवान है। अर वैक्रियकतैं आहारक असंख्यात गुणैं प्रदेशवान है। प्रश्न, इहां गुणाकार कौनसो है ? उत्तर, पल्यकी उपमा जाकूं ऐसो असंख्येय गुण भाग होती है। अर्थात् असंख्यातरूप पल्य जो है ता कौ गुणाकार है ॥ ६ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक---उत्तरोत्तरस्य महत्वप्रसङ्गः इति चेन्न प्रचय विशेषाद्यः पिंडतूलनिचयवत् ॥ ७ ॥ अर्थ--प्रश्न, जो उत्तरोत्तर असंख्यात गुणा प्रदेश है तो परमाणुका महत्वपणांनैं होनौं योग्य है? उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, प्रचय विशेष है यातैं सो लोहपिंड अर तूल निचय के समान है सो जैसैं लोहपिंडकै बहु प्रदेशीपणांनैं होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं है तैसैं ही उत्तर शरीर कै असंख्यात गुण प्रदेश पणांतैं होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं है तैसैं ही उत्तर शरीरके असंख्यात गुणप्रदेश पणांतै होतां संता भी अल्प परिमाणपणौं वंध विशेषतैं जानने योग्य है ॥ ८ ॥ अबैं गुणतीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तैजसतैं प्राक् परैं परैं असंख्यात गुण प्रदेश कह्या तो उत्तरके दोऊ शरीरनिकै सम प्रदेश पणौं है या कुछ विशेष है, उत्तर,

कार्मण कै ही अप्रतिघात है। ऐसैं कैसैं कहिये है यातैं, उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण? उत्तर, सर्वत्रको विवक्षित पणौं है यातैं, लोक पर्यन्त सर्वत्र तैजस कार्मणको प्रतिघात नहीं है। ऐसैं भी विशेष विवक्षित है। अर वैक्रियक आहारक कैं तैसैं सर्वत्र अप्रतिघात नहीं है॥ ३॥ अवैं इकतालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तैजस कार्मणकै अर वैक्रियक आहारक आदिनिकै इतनौं ही विशेष है या और भी कोऊ विशेष है। ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। अथवा आत्माकै अनादि पणातैं अर शरीरकै आदिमान पणातैं विकरण कहिये इन्द्रिय रहित आत्मा जो है ताकै प्रथम शरीरको सम्बन्ध कौन कृत हैं ऐसो प्रश्न होत संतैं कहै है। सूत्रम्—

अनादिसम्बन्धे च॥ ४१॥

अर्थ—आत्माके अनादिमान पणातैं अर शरीरके आदिमान पणातैं अतीन्द्रिय, अमूर्त्तिक आत्मा जो है ताकै आदिमान शरीरको सम्बन्ध कहा कृत है यातैं कहै है कि तैजस कार्मण शरीर अनादि सम्बन्ध रूप है। प्रश्न, च शब्दको ग्रहण कहा निमित्त है। उत्तर रूप वार्त्तिक—च शब्दो विकल्पार्थ॥१॥ अर्थ—च शब्द जो है सो विकल्परूप अर्थके निमित्त जाननें योग्य है कि अनादि सम्बन्धरूप भी है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, ऐसैं कहौ हौ तो कहिये है। वार्त्तिक—बंधसंतत्यपेक्षायानादिसम्बन्धः सादिश्च विशेषतो जीववृक्षवत्॥ २॥ अर्थ—जैसैं बीजतैं वृक्ष उत्पन्न होय है। अर वीज वृक्षतैं उत्पन्न होय है, अर वा वीजतैं अन्य वृक्ष उत्पन्न होय है। ऐसैं कार्यकारणरूप सम्बन्ध सामान्य जो है ताकी अपेक्षा करि सम्बन्ध है। अर या वीजतैं यो वृक्ष है, अर, या वृक्षतैं यो वीज है ऐसैं विशेषकी अपेक्षा करि सादि सम्बन्ध है। ऐसैं ही तैजस कार्मणकै भी वारंवार होता निमित्त नैमित्तक संततिकी अपेक्षा करि अनादि सम्बन्ध है। अर विशेषकी

अपेक्षा करि सादि सम्बन्ध है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—एकान्तेनादिमत्वेभिनवशरीरसम्बन्धाभावो निर्निमित्तत्वात् ॥ ३ ॥ अर्थ—जाके मतमें एकान्त करि आदिमान शरीर है ताके मतमें शरीर सम्बन्धके पूर्व आत्यन्तिकी शुद्धिनें धारण करितो जीव जो है ताकै अभिनव शरीरको सम्बन्ध नहीं होय। प्रश्न, काहेतें ? उत्तर, निर्निमित्तपणातें ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—मुक्तात्माभावप्रसङ्गश्च ॥ ४ ॥ अर्थ अर एकान्त करि सादि सम्बन्ध मानिये तो जैसें सादि शरीर अकस्मात् सम्बन्धनैं प्राप्त होय है तैसें ही मुक्तात्माके भी अकस्मात् शरीर सम्बन्ध होय। यातैं मुक्तात्माका अभाव प्रसङ्ग होय। वार्त्तिक—एकान्तनादित्वे चानिर्मोक्ष प्रसङ्गः ॥ ५ ॥ अर्थ—बहुरि एकान्तकरि शरीरनिकै अनादि पणौं कल्पना करिये तो ऐसें भी आकाशके समान जाकै अनादिपणौ है ताको अन्त भी नहीं है यातैं कार्य कारणका सम्बन्धका अभावतैं निर्मोच्च प्रसंग आवै है। प्रश्न, अनादिरूप बीज वृक्षको संतान जो है ताकै भी अग्निका सम्बन्धनैं होतां संतां अन्त देख्यौ है। उत्तर, सो नहीं है क्योंकि ताकै एकान्त करि अनादिपणांका अभावतैं निश्चय करि जीव वृक्ष जे हैं ते दोऊ ही विशेषकी अपेक्षा करि आदि भाव है। तातैं कोऊ प्रकार करि अनादि सम्बन्ध रूप है। अर कोऊ प्रकार करि आदिमान सम्बन्धरूप है। ऐसौ कहनौं उत्तम है ॥ ५ ॥ अबै ब्यालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै हैं कि ये तैजस कार्मण दोउ शरीर कोऊ जीवकै ही है या सर्वकै अविशेष करि है ऐसौ प्रश्न होत संतै कहै है। सूत्रम्—

सर्वस्य ॥ ४२ ॥

अर्थ—सर्व संसारीकै है। वार्त्तिक—सर्वशब्दो निरवशेषवाची ॥ १ ॥ अर्थ—सर्व शब्द निरवशेषवाची है। तातैं निरवशेष संसारी जीव जो हैं तिनकै वे दोऊ ही शरीर हैं ऐसौ अर्थ है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—संसरण धर्म सामान्यादेकवचननिर्देशः अर्थ—संसरण धर्म जो जामनमरण-

धम सामान्य रूप ताका योगतैं एक वचनको निर्देश करिये है। अर जो कोऊ संसारीकै वे दोऊ शरीर नहीं होते तो संसारीपणौं ही याकै नहीं होतो ॥ २ ॥ अवैं तियालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि अविशेषरूप कहनैं तैं तिन औदारिकादिकनिकरि सर्व संसारीनिकैं युगपत् पणांकरि सम्वन्धका प्रसङ्ग हे होतां संतां संभवसे शरीरनिके दिखावनेके अर्थि यो कहै है। सूत्रम्—

तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥

अर्थ—तैजस कार्मणनैं आदि लेय एकैं काल एक जीवके च्यार पर्यन्त शरीर होय है वार्त्तिक—तद्ग्रहणं कृतशरीरद्वयप्रतिनिर्देशार्थम् ॥ १ ॥ अर्थ—प्रकरणमें आये जे तैजस कार्मण दोय शरीर तिनका प्रति निर्देशकै अर्थि तत् ऐसैं कहिये हैं ॥ १ ॥ वार्त्तिक—आदिशब्देन व्यवस्थावाचिनाशरीरविशेषणम् ॥ अर्थ—पूर्वसूत्रमें व्यवस्थित शरीर जे हैं तिनकी आनुपूर्वीका प्रतिपादन करि आदि शब्द करि विशेषण करिये है। अर्थात् वे दोऊ हैं आदि जिनके ते ये तदादि कहिये है ॥ ३ ॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—पृथक्त्वादेव तेषां भाज्यग्रहणमनर्थकमिति चेन्नैकस्यद्वित्रिचतुःशरीरसम्बन्धविभागोपपत्तेः ॥ ३ ॥ अर्थ—प्रश्न, भाज्यानि कहिये पृथक् करने योग्य है, अर वे औदारिकादिक परम्परातैं तथा आत्मातैं लक्षण भेदतैं पृथक् भूत ही है यातैं भाज्य पदको ग्रहण अनर्थक है? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, एक जीवकै दोय तथा तीन तथा चार शरीरका सम्बन्धको जो विभाग ताकी उपपत्ति है यातैं सो ऐसैं है कि दोऊ आत्माकै तैजस कार्मण ये दोय शरीर हैं अर आत्माकै औदारिक, तैजस, कार्मण ये तीन शरीर है। अथवा वैक्रियक, तैजस, कार्मण ये तीन शरीर है, अर अन्यकै औदारिक आहारक, तैजस कार्मण शरीर है। ऐसै विभाग करिये है तातैं भाज्यपद सार्थक है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—युगपदिति कालैकत्वे ॥ ४ ॥ अर्थ—युगपत यो निपात कालका एक पणांमें देखवे योग्य है कि एक कालके

विर्षै चार पर्यन्त ही शरीर ही है। अर काल भेदनैं होतां संतां पांच ही होय है॥ ४॥ वार्त्तिक—आङभिविध्यर्थः ॥ ५ ॥ आर्थ—आङ् यो शब्द अभिविधिके अर्थ देखिवे योग्य है, ता कारण करि च्यार भी कोऊ जीवकै होय है अर मर्यादा अर्थके विषैं आङ् शब्दनैं होतां संतां च्यार शरीर नहीं होय ॥५॥ प्रश्न, पांचू शरीर एकै काल काहेतैं नहीं होय है? उत्तररूप वार्त्तिक—वैक्रियकाहारकयोर्युगपदसम्भवात्पंचाभाव । अर्थ—जा संयतीके आहारक शरीर है ताकै वैक्रियक नहीं है। अर जो देवनारकीके वैक्रियक शरीर है ताकै आहारक नहीं है यातैं युगपत् पंचनिको असम्भव है। ॥६॥ अवै चौवालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि फिर भी तिन शरीरनिका विशेषकी प्रतिपत्तिके अर्थि कहै है। सूत्रम्—

निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

अर्थ—अंतको शरीर कार्मण जो है सो निरुपभोग है। सूत्रकी अनुक्रमकी अपेक्षाके विषैं अन्तमैं होय सो अन्त्य कहिये और ए सो अन्तमैं तिष्ठनैं वारो कार्मण शरीर है सो निरुपभोग है। या वचनतैं अर्थापत्ति प्रमाणनैं या सिद्ध होय है कि और शरीर सोपभोग है। वार्त्तिक—कर्मादाननिर्जरा सुखदुःखानुभवनहेतुत्वात् सोपभोगमितिचेन्न विवक्षितापरिज्ञानात् ॥१॥ प्रश्न, कार्मण जो है सो काय योग करि कर्मतैं ग्रहण करै है, तथा निर्जरा करै है, अर सुख दुःखनैं अनुभव करै है। तातैं सोपभोग ही है निरुपभोग नहीं है। उत्तर सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर विवक्षितका अपरित्यागतैं कि विवक्षित उपयोग जो है तातैं नहीं जानि करि परनैं यो प्रश्न कियो है। प्रश्न, इहां यो कौनसो उपभोग विवक्षित है ॥१॥ उत्तर रूप वार्त्तिक—इन्द्रिय निमित्त शब्दाद्युपलब्धिरुपभोगः ॥ २ ॥ अर्थ—इन्द्रियरूप प्रणाली करि शब्दादिकनिकी उपलब्धि जो है सो उपभोग है सो कार्मणकै नहीं है ऐसैं कहिये है अर विग्रह गतिके विषैं भी भाव इन्द्रियनिकी उपलब्धिनैं

होतां सतां द्रव्येन्द्रियकी निवृत्तिका अभावतैं शब्दादि विषयको जो अनुभव ताका अभावतैं निरुपभोग कार्मण शरीर है। ऐसैं कहिये है। प्रश्न, तैजस भी निरुपभोग तातैं वा सूत्रमें निरुपभोगमन्त्यं ऐसैं कैसें कहिये है, यातैं उत्तर कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—तैजस्य योगनिमित्तत्वाभावादनधिकारः ॥ ३ ॥ तैजस शरीर योग निमित्त भी नहीं है। तातैं याको उपभोग विचारमें अधिकार नहीं है। तातैं योग निमित्त शरीर जे हैं तिनके विषैं अन्त्यको जो है सो निरुपभोग है अर और सोपभोग हैं यो अर्थ इहां विवक्षित है ॥ ३ ॥ अबै पैतालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि तहां आम्नाय रूप किये हैं लक्षण जिनके ऐसे जन्म जे हैं तिनमें ये शरीर प्रगटपणातैं प्राप्त भये संतें अविशेष करि है या कुछ विशेष है, ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है, यातैं कहै हैं। सूत्रम्—

गर्भसम्मूर्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—सूत्र पठित अनुक्रमकी अपेक्षा करि आदिमें होय सो आद्य कहिये सो ऐसो आद्य औदारिक है, यातैं जो गर्भज तथा सम्मूर्छनज है सो सर्व औदारिक देखने योग्य है। अबै छियालीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि औदारिकके अनन्तर जो कह्यो है सो कौनसा जन्मके विषैं है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है। यातैं कहै हैं। सूत्रम्—

औपपादिकं वैक्रियकम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—औपपादिकके विषैं होय सो औपपादिक है। अर व्याकरणके मत है अध्यात्मादित्यादिक या सूत्रतें औपपादिक शब्द सिद्ध होय है सो सर्व औपपादिक जे हैं ते वैक्रियक जानने योग्य है ॥ ४६ ॥ अबै सैतालीसमां सूत्रकी उत्थानिका कहै है। जो औपपादिक वैक्रियक है तो जो औपपादिक नहीं है। ताके वैक्रियक पणांको अभाव है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है। सूत्रम्—

लब्धि प्रत्ययं च ॥४७॥

अर्थ—या सूत्रमें वैक्रियक ऐसो अभि सम्बन्ध प्राप्त होय है यातैं लब्धि है कारण जानैं ऐसो भी वैक्रियक है। वार्त्तिक—प्रत्ययशब्दस्यानेकार्थत्वे विवक्षातः कारणगतिः ॥१॥ अर्थ—यो प्रत्यय शब्द अनेकार्थ रूप है। तातैं कहूं ज्ञान अर्थमें प्रवर्त्तै है कि जैसैं अर्थाभिधान प्रत्यया कहिये अर्थ अभिधान प्रत्यय तीनूं शब्द ज्ञानके वाचक हैं। अर कहूं सत्य पणांकै विषैं प्रवर्त्तैं हैं प्रत्ययकूं 'कहिये सत्य करो अर कहूं कारणमें प्रवर्त्तै है कि मिथ्यादर्शनादिविरतिप्रमादकषाययोगा प्रत्यय कहिये मिथ्यादर्शन, अविरत, प्रमाद, कषाय, योग जे हैं ते बंधके कारण हैं तिनमें सूं इहां वक्ताकी इच्छातैं प्रत्यय शब्द कारण पर्यायवाची जानने योग्य है ॥ १ ॥ वार्त्तिक—तपोविशेषर्द्धि प्राप्तिर्लब्धिः ॥ २ ॥ अर्थ—तप विशेषतैं ऋद्धिकी प्राप्ति जो है सो लब्धि है। ऐसैं कहिये है। अर लब्धि है प्रत्यय कहिये कारण जाको सो लब्धि प्रत्यय है। प्रश्न, लब्धिमें अर उपपादमें कहा विशेष है? उत्तररूप वार्त्तिक—निश्चयकादाचित्कीकृतो विशेषोपलब्ध्युपपादयोः ॥३॥ अर्थ-निश्चय करि उपपाद जो है सो तो नियमकरि है, क्योंकि उपपादके जन्म निमित्तपणौं है यातैं अर लब्धि जो है सो कादाचित्की है कि कोऊके कदाचित् होय है, क्योंकि उत्पन्न भयो अर विद्यमान जो है ताके उत्तर कालमें तप विशेषकी अपेक्षापणातैं होय है यातैं इनि दोऊनिमें यो विशेष है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—सर्व शरीराणां विनाशित्वाद्वैक्रियक विशेषानुपपत्तिरितिचेन्न विवक्षितो परिज्ञानात् ॥ ४ ॥ अर्थ—विक्रिया नाम विनाशका अर वा विनाशरूप विक्रिया सर्व शरीरनिकैं साधारणी है, क्योंकि सर्व शरीरनिके वार वार उपचय अर अपचय धर्मवान् पणौं है यातैं, अथवा सर्व शरीरनिको उच्छेद है यातैं तातैं वैक्रियकके विषैं कोऊ विशेष नहीं है। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न, कहा कारण? उत्तर, विवक्षितका अपरिज्ञानतैं, क्योंकि इहां विक्रिया नाम विनाशको विवक्षित नहीं है। प्रश्न, तो कहा विवक्षित है? उत्तर, विविध करणा जो है सो विक्रिया है। अर

वा विक्रिया दोय प्रकार है। तहां एक एकत्व विक्रिया है। दूसरी पृथक्त्व विक्रिया है, तिनमें एकत्व विक्रिया तो अपना शरीरतैं अपृथग्भूत भाव करि, सिंह, व्याघ्र, कुरर, हंस आदि भाव करि विविध करणा है। अर पृथक् विक्रिया जो है सो अपना शरीरतैं अन्य पणां करि प्रासाद, मंडप आदि विविध करणा सो दोऊ विक्रिया भवनवासी व्यन्तर, ज्योतिषी, कल्पवासीनिकै है अर सोलमा स्वर्गतैं ऊपरिके वैमानिक सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जे है तिनके प्रशस्त रूप एकत्व विक्रिया ही है। अर नारकीनिके त्रिशूल, चक्र, खड्ग, मुद्गर, परशु, भिंडिपाल कीट आदि अनेक आयुधरूप षष्ठम नरक पर्यन्त है अर पृथक्त्व विक्रिया नहीं है। अर सप्तम नरकमें महा गो कीटक प्रमाण लाल वरण कुंथुरूप एकत्व विक्रिया है। अर अनेक आयुधरूप विक्रिया नहीं है। अर पृथक्त्व विक्रिया भी नहीं है। अर तिर्यंचनिमें मयूरादिकनिकै कुमारादि भावरूप प्रतिविशिष्ट कहिये निज जाति प्रमान विक्रिया है अर पृथक्त्व विक्रिया नहीं है, अर मनुष्यनिके तप विद्या आदिकी प्रधानतातैं प्रति विशिष्ट एकत्व तथा पृथक्त्व विक्रिया है ॥ ४ ॥ अबै अड़तालीसमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि यो वैक्रियक शरीर ही लब्धिकी अपेक्षावान है या और भी है ऐसौ प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है ॥ सूत्रम्—

तैजसमपि ॥४८॥

अर्थ- लब्धिप्रत्यय तैजस शरीर भी है। प्रश्न, वैक्रियकके अनन्तर आहारक कहने योग्य है, और अकाल प्राप्त तैजस इहां कहा निमित्त कहिये है? उत्तररूप वार्तिक—लब्धि प्रत्ययापेक्षार्थं तैजसग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्थ—लब्धि है कारण जानैं ऐसौ इहां अनुवर्त्तै है तातैं देखिकरि इहां तैजसको ग्रहण करिये है ॥ १ ॥ अबै गुणचासमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि वैक्रियकके अनन्तर जो उपदेश कियो है ताका स्वरूपका निर्द्धारणके अर्थि अर स्वामीके दिखावने निमित्त कहै है। सूत्रम्—

शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥

अर्थ—शुभ, विशुद्ध, अव्याघाती, आहारक शरीर है सो प्रमत्त संयतीके ही होय है। वार्त्तिक—शुभकारणत्वाच्छुभव्यपदेशोनुप्राणवत् ॥ १ ॥ अर्थ— अन्न है कारण जिनने ऐसें प्राणनिमें होत संतें अन्नको नाम प्राण है कि अन्नं वै प्राणः ऐसें कहिये है, तैसें शुभ है कर्म जाको ऐसो आहारक काय योग जो है ताकूं कारण पणांतें आहारक शरीर शुभ है, ऐसें कहिये है। वार्त्तिक—विशुद्धकार्यत्वात् विशुद्धाभिधानं कार्पासतन्तुवत् ॥२॥ अर्थ—जसैं कार्पासका कार्य तन्तु जे हैं तिनके विषैं कार्पास नाम है कि कार्पासास्तं तव ऐसैं कहिये है। तैसें निर्मल निरवद्य, विशुद्ध पुण्य कर्मका कार्यपणांतैं विशुद्ध ऐसैं कहिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—उभयतो व्याघाताभावादव्याघाती ॥ ३ ॥ अर्थ—नश्चय करि आहारक शरीर करि अन्यको व्याघात नहीं होय है, अर अन्य करि आहारक शरीरको भी व्याघात नहीं होय है। यातैं दोऊ तरैं व्याघातका अभावतें अव्याघाती है ऐसैं कहिये है। वार्त्तिक—च शब्दस्तत्प्रयोजनसमुच्चयार्थः—अर्थ—आहारक शरीरको जो प्रयोजन ताका समुच्चयके अर्थ च शब्द करिये है सो ऐसैं है कि कोउ समय लब्ध विशेषको जो सद्भाव ताका जाननके अर्थ है। अर कोऊ समय सूक्ष्म पदार्थका निर्द्धारके अर्थि अर संयमका परिपालन अर्थ भरतैरावत क्षेत्रके विषैं केवलीका विरहनैं होतां संता उत्पन्न भयो है संशय जाकै ऐसो हुवो संतो वा संशयको निर्णयके अर्थि महाविदेह क्षेत्रके विषैं केवलीका निकटमें जनावनेंको इच्छकतैं जो हूं ताके औदारिक शरीर करि महान् असंयम होय या हेतुतैं ज्ञानवान मुनीश्वर आहारक शरीरतैं रचै है ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—आहारकमिति प्रागुक्तस्य प्रत्याम्नायः ॥ ५ ॥ अर्थ—या प्रकार आहारक है या अर्थको जनावनें निमित्त बहुरि आहारक शब्दको पाठ करिये है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक—प्रमत्तसंयतग्रहणं स्वामिविशेषप्रतिपत्त्यर्थम् ॥ ६ ॥ अर्थ—जो मुनि आहारक शरीरनें

रचनेको आरम्भ करें है ता समय प्रमत्त गुणस्थानी होय है तातैं प्रमत्तसंयतस्य ऐसैं कहिये है ॥ ६ ॥ वार्त्तिक—इष्टतोवधारणार्थमेवकारोपादानम् ॥ ७ ॥ अर्थ—जैसैं या प्रकार जानिये है कि प्रमत्तसंयतकै ही आहारक होय है, अन्यकैं नहीं होय है अर ऐसैं नहीं जानै कि प्रमत्त संयतकै आहारक ही है, ऐसैं औदारिकादिकनिकी निवृत्ति मति होय या अर्थके अवधारणके अर्थ एवकार है ॥ ७ ॥ वार्त्तिक—एषां शरीराणां परस्परतः संज्ञास्वलक्षणस्वकारणास्वमित्वसामर्थ्य—प्रमाणक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरसंख्याप्रदेशभावाल्पबहुत्वादिभिर्विशेषोवसेयः ॥ ८ ॥ अर्थ—उक्त तथा अनुक्त अर्थ जे हैं तिनका संग्रहके अर्थि दो वार्त्तिक कह्यौ है तिनमें संज्ञातै अन्यपणौं ऐसे है कि औदारिक वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण नामके धारक पांच शरीर घट पटके समान भिन्न भिन्न नामके धारक है ॥ १ ॥ बहुरि निज लक्षणतैं नाना पणौं ऐसैं है कि स्थूल पणौं है लक्षण जाको सो औदारिक है अर विविध ऋद्धि गुण युक्त फैलनो है लक्षण जाको सो वैक्रियक है अर कष्ट करि जाननेमें आवै ऐसा सूक्ष्म पदार्थका तत्व निर्णय करनवारो है लक्षण जाको अहारक है। अर संख समान धवल प्रभा है लक्षण जाको सो तैजस है अर सो तैजस दोय प्रकार है। तहां एक निःशरणात्मक है अर दूसरो अनिशरणात्मक है। तिनमें औदारिक वैक्रियक आहारक देहके अभ्यन्तर तिष्ठतो देहकी दीप्तिको कारण जो है सो अनिशरणात्मक है, अर उग्र चारित्रको धारक अति क्रोधित यती जो है ताके जीव प्रदेशनि करि संयुक्त बाहर निकसि दहन करने योग्यनै वेष्टित करि तिष्टतो निःपावक जो धान्यकी राशि अर हरित वस्तुता करि परिपूर्ण स्थानी कहिये हांडी जो है ताहि अग्निके समान पकावे है। अर दाह्यनै पकाय करि निमड़ै है अर यावत् अग्नि रूप दाह्य पदार्थ होय तावत् चिरकाल तिष्टै है सो यो निःसरणात्मक है। बहुरि सर्व कर्म अर सर्व शरीर उत्पन्न कारक है लक्षण जाको सो कार्मण है ॥ २ ॥ बहुरि निज कारणतैं अन्य पणौं ऐसैं है कि औदारिक शरीर नामा नाम कर्म

है कारण जानैं सो औदारिक है अर वैक्रियक शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानैं सो वैक्रियक है। अर आहारक शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानै सो आहारक है, अर तैजस शरीर नामा नाम कर्म है कारण जानैं सो तैजस है। अर कार्मण शरीर नामा नामकर्म है कारण जानैं सो कार्मण है ॥३॥ बहुरि स्वामिभेदतैं अन्यपणौं ऐसौ है कि औदारिक शरीर तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै है अर वैक्रियक शरीर शरीर देवनिकै है तथा नारकीनिकै तथा कोई कोई तेजकायनिकै तथा वायुकायनिकै तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चनिकैं तथा मनुष्यनिकैं होय है। प्रश्न, जीवस्थानमें योगनिका भंग वर्णनमें सप्तविध काय योगका स्वामीनिकी प्ररूपणांके विषैं औदारिक काय योग अर औदारिक मिश्रयोग तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै कहे हैं। अर देव नारकीनिकै वैक्रियक काययोग तथा वैक्रियक मिश्र काययोग कह्यो है अर इहां तिर्यञ्चनिकै तथा मनुष्यनिकै एक हो काययोग कहिये सो यो आर्ष विरोध है? उत्तर, यहां कहिये है कि यो विरोध नहीं है क्योंकि या ग्रन्थमें अन्य स्थलके विषैं उपदेश है यातैं, प्रश्न, व्याख्याप्रज्ञप्तीके दंडकविषैं शरीर भंगका वर्णनमें वायुकायनिकै औदारिक वैक्रियक तैजस कार्मण ये चार शरीर कहें है, अर मनुष्यनिकै भी चार ही कहे हैं अर सूत्र पाठमें वैक्रियक शरीर औपपादिक तथा लब्धि प्रत्यय ही कह्यो अर वायुकायकै नहीं कह्यो है ऐसैं भी तिन दोऊ आर्षनिकै विरोध है? उत्तर, सो विरोध नहीं है, क्योंकि दोऊ आर्षनिकैं अभिप्राय युक्तपणौं है यातैं सो ऐसैं है कि जीवस्थानके विषैं सर्व देव नारकीनिकै सर्व कालमें वैक्रियक शरीरका दर्शनतैं ताका योगकी विधि है। अर तिर्यंचनिकै तथा मनुष्यनिकै लब्धि वैक्रियक है सो समस्तनिकै कादाचित्क पणातैं सर्व काल नहीं है ऐसौ अभिप्राय तौ सूत्रकारकौ है अर व्याख्याप्रज्ञप्तिके विषैं अस्तित्वमात्रतैं अभिप्रायसैं करि कह्यो है। अर आहारक शरीर प्रमत्त संयतीकै है अर तैजस कार्मण शरीर सर्व प्राणनिकै है ॥ ४ ॥ बहुरि सामर्थ्यतैं अन्य पणौं ऐसैं है कि औदारिककी सामर्थ्य भव

प्रत्यय तथा गुण प्रत्ययरूप दोय प्रकार है तिनमैं तिर्यक् मनुष्यनिकै भव प्रत्यय सामर्थ्य है सो सिंह अष्टापद आदिकनिकै अर चक्रवर्त्ती वासुदेव आदिकनिकै प्रकृष्ट अवकृष्ट वीर्यका दर्शनतैं है अर प्रकृष्ट तपो वलवान ऋषीश्वरनिकै जो शरीरकी विवध करण सामर्थ्य है सो गुण प्रत्यय है। प्रश्न, यो सामर्थ्य तपको है, औदारिक शरीरको नहीं हे? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि औदारिक शरीर विना केवल तपकै शरीरका विविधकरणकी सामर्थ्यको अभाव है यातैं, अर वैक्रियककी सामर्थ्य को मेरुको प्रचलन तथा सकल पृथिवी मंडलको उद्वर्त्तन आदि करनैं रूप है, अर आहारको सामर्थ्य अप्रतिहत वीर्य पणौ है। प्रश्न, वैक्रियकके भी अप्रतिहत सामर्थ्य है क्योंकि वज्रपटल आदिके विषैं अप्रतिघातको दर्शन है यातैं? उत्तर, सो नहीं है, क्योंकि इन्द्र-सामानादिकनिकै प्रकर्ष अप्रकर्षरूप सामर्थ्यको दर्शन है यातैं अर अनन्तवीर्य यति करि इन्द्रका वीर्यको प्रतिघात सुनिये हैं यातैं विक्रिया सम्बन्धी सामर्थ्य प्रतिघात रूप है अर आहारक शरीर जे हैं ते तुल्य वीर्य पणांतैं अप्रतिघात वीर्य रूप है। अर तैजसको सामर्थ्य कोप प्रसादकी अपेक्षा सहित दाह अर अनुग्रहरूप है। अर कार्मणकी सामर्थ्य सर्व कर्मनिकूं अवकाशदानरूप है ॥५॥ वहुरि प्रमाणतैं कहिये परिमाणतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि सर्व जघन्य करि अंगुलका असंख्यातमा भाग प्रमाण सूक्ष्म निगोत याको औदारिक शरीर है। अर उत्कर्षकरि किंचित् अधिक एक हजार योजन प्रमाण नंदीश्वर द्वीपकी वावड़ीमैं कमलको औदारिक शरीर है। अर वैक्रियक शरीर मूल शरीरतैं तो जघन्य करि एक हाथ प्रमाण सर्वार्थसिद्ध देव जे हैं तिनके है। अर अनुत्कर्षकरि पांचसौ धनुष प्रमाण तमस्तमः प्रभा नामा सातमी प्रथ्वीमैं नारकीनिको है। अर विक्रियाकरि देव उत्कर्षकरि जम्बूद्वीप प्रमाण शरीर वनावै है। अर आहारक शरीर एक हाथ प्रमाण है अर तैजस कार्मण शरीर जे हैं ते जघन्य करि जा समय ग्रहण किया औदारिक शरीर है ता समय ता प्रमाण है, अर उत्कर्ष केवलि समुद्घातमैं सर्वलोक प्रमाण है ॥६॥ वहुरि क्षेत्रतैं अन्य पणौं एक जीव अपेक्षा

ऐसें हैं कि औदारिक, वैक्रियक, आहाराक शरीर जे हैं ते तो लोकका असंख्यातमा भागका असंख्यतमाभाग मात्र क्षेत्रमे है, अर तैजस कार्माण जे हैं ते एक जीव की अपेक्षा लोकका असंख्यातमा भागका असंख्यातमा भागमें है। अथवा प्रतर तथा लोकपूर्ण समयमें सर्व लोकमें है ॥७॥ बहुरि स्पर्शतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि औदारिकादिकनिको एक जीव प्रति तो आगे कहैंगे। अर सर्व जीवनि प्रति कहिये है कि औदारिक शरीर करि तिर्यञ्चनि करि सर्वलोक स्पृष्ट है अर मनुष्यनि करि लोकको असंख्यातमूं भाग स्पृष्ट है, अर मूल वैक्रियक शरीर करि लोकको असंख्यातमूं भाग स्पृष्ट है, अर उत्तर वैक्रियक करि आठ राजू अर किंचित् घाटि चौदह भाग प्रमाण स्पृष्ट है। प्रश्न, कैसैं ? उत्तर, सौधर्म स्वर्ग निवासी देव आय अन्य देवकी प्रधानतातैं आरण अच्युत स्वर्गमें विहार करवातैं षट् रजू जाय है, अर अपनी प्रधानतातैं वालुका प्रभा नाम तीसरी पृथ्वी पर्य्यन्त दोय रज्जू विहार करै है यातैं अष्ट रज्जू स्पृष्ट है, अर आहारक शरीर लोकका असंख्यातमा भागनैं स्पर्शै है अर तैजस कार्माणनि करि सर्व लोकनै स्पर्शै है ॥८॥ बहुरि कालतैं अन्यपणौं ऐसैं है कि एक जीव प्रति तौ आगानें कहैंगे। अर सर्व जीवनि प्रति कहै है कि, मिश्रनै बर्जि करि औदारिकको तिर्यञ्च मनुष्यनिकै जघन्य करि अन्तमुहूर्त्त काल है, अर उत्कर्ष करि तीन पल्योपम अन्तर्मूहूर्त्त घाटि है सो अन्तर्मूहूर्त्त पर्याप्तिको काल जाननूं क्योंकि अपर्याप्ति अवस्थामें मिश्रपणौं है यातैं अर वैक्रियककै देवनिप्रति मूल वैक्रियक देहकै जघन्य करि दश हजार वर्ष है सो भी पर्याप्तको काल अन्तर्मूहूर्त्त जो है ता करि न्यून है। अर उत्कर्षकरि तेतीस सागरोपम है सो भी अपर्याप्तको काल अन्तमूहूर्त्त जो है ताकरि न्यून है। अर उत्तर वैक्रियकको जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मूहूर्त्त है। ऐसैं ही नारकीनिकूं जाननूं। प्रश्न, तीर्थंकरका जन्ममें तथा नंदीश्वर द्वीप सम्बन्धीअर्हदायन आदिका पूजनकै विषैं विशेष कैसैं है ? उत्तर, पुनः पुनः विक्रियाका करवातैं संततिको व्यवच्छेद है अर आहारकको काल जघन्य तथा उत्कर्ष अन्तर्मूहूर्त्त है, अर तैजस

कार्मण दोऊ जे हैं तिनकौ काल संततिका उपदेशतैं अभव्यनिप्रति अनादि अनन्त है अर जे भव्य अनन्ता काल करि भी नहीं सिद्ध होहिगें तिन कितनेक भव्यनिप्रति अनादि अनन्त काल है अर जे भव्य सिद्ध होहिगें तिन प्रति अनादि सान्त है, अर निषेधनि प्रति एक समय है अर तैजसको छाछठि सागरोपम है, अर कार्मणाका कर्मको स्थिति सत्तर कोटा कोटि सागरोपम है ॥ ९ ॥ बहुरि अन्तरमें अन्यपणौं ऐसैं हैं कि औदारिकादिकनिके एक जीव प्रति आगे कहैंगे। सो ऐसैं है कि मिश्रनैं वर्जिकरि औदारिकके जघन्य तौ अन्तमूहूर्त्तको अन्तर है। प्रश्न, कौनसो अन्तर्मूहूर्त्त है? उत्तर, औदारिक मिश्रको काल है सो अन्तर्मूहूर्त्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, चतुरगतिमें भ्रमण करनवारो जीव तिर्यञ्चनिमें तथा मनुष्यनिमें उत्पन्न भयौ तहां अन्तर्मुहूर्त्त पर्याप्त कह्यौ पर्याप्तक पणानैं पाय अन्तर्मुहूर्त्त जीवित रहिकरि मर्‍यौं। बहुरि तिर्यञ्चनिमेंसूं कोऊ एकके विषैं उत्पन्न भयो तहां अन्तर्मूहूर्त्तकी अपर्याप्तनैं अनुभव करि पर्याप्तक भयो। ऐसैं औदारिकको अन्तर लब्ध भयो। भावार्थ—पर्याप्तक भयौ तहां ही औदारिक नाम पायौ अर उत्कर्ष करि तेतीस सागरोपम किंचित् अधिक है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, जो मनुष्य तेतीस सागरोपम देवायुके विषैं उत्पन्न होय स्थितिनैं होतां संतां चय करि बहुरि मनुष्यनिमें उत्पन्न होय ताके योग्य अपर्याप्तक काल है। ताकरि अधिक तेतीस सागरोपम होय है, अर वैक्रियकके जघन्य अन्तर अन्तर्मूहूर्त्त है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, मनुष्य अथवा तिर्यञ्च मरि करि दश हजार वर्षकी है आयु जिनमैं तिनमैं उत्पन्न होय चयौ अर मनुष्यनिमें तथा तिर्यंचनिमें उत्पन्न होय अपर्याप्तकालनैं अनुभव करि बहुरि देव आयु बांधि देवनिमें उत्पन्न होय ताके अन्तर्मूहूर्त्तको अन्तर लब्ध होय है और वैक्रियकको उत्कर्ष करि अन्तर अनन्तकाल प्रमाण है। प्रश्न, कैसैं? उत्तर, देव होय करि चयो अर तिर्यंच मनुष्यनिमें अनन्त काल परिभ्रमण करि देव उत्पन्न भयो सो अपर्याप्त कालमें अनुभव करि वैक्रियक शरीरनैं प्राप्त होय है। ताके अनन्त कालको

अन्तर लब्ध होय है। अर आहारकको जघन्य अन्तर्मूहूर्त्त प्रमाण है। प्रश्न कैसें? उत्तर, प्रमत्त संयत जो है सो आहारक शरीरनैं रचि अन्तरमूहूर्त्त आहारक शरीर सहित स्थिति रहि करि प्रकरणमें आया आहारक शरीरका कार्यनैं समेट करि लब्धिकी निकटतातैं अन्तर्मूहूर्त्त स्थिति रहि करि बहुरि रचै है ऐसैं अन्तर अन्तर्मुहूर्त्तको लब्ध होय है, अर उत्कर्ष करि अर्द्धपुद्गल परिवर्त्तनके अन्तमूहूर्त्त घाटि अन्तर है। प्रश्न, कैसें? उत्तर, जो अनादि मिथ्यादर्शन मोहनैं उपशमाय उपशम सम्यक्त्वनैं अर संयमनैं युगपत् प्राप्त भयौ बहुरि उपशम सम्यक्त्वतैं च्युत भयो संतो वेदक सम्यक्त्व करि सहित उत्पन्न होय अर्थात् वेदक सम्यक्त्वी होय। अन्तर्मुहूर्त्त स्थिति रहितो होतो संयत अप्रमत्त समत स्थानके विषैं आहारक शरीर सम्बन्धी नो कर्मनैं बांधि ता पीछे प्रमत्त संयत होत संतैं आहारकनै रचि मूलशरीरमें प्रवेश करि मिथ्यात्वनैं प्राप्त होय सो अर्द्ध पुद्गल परिवर्त्तन किंचित् घाटि संसारमें परि भ्रमण करि मनुष्यनिमें उत्पन्न होय। पूर्व विधि सम्यक्त्वनैं उत्पन्न करि असंयत सम्यदृष्टि तथा संयतासंयत सम्यग्दृष्टी गुणस्थान जे हैं तिनमें सूं कोऊ एक कै विषैं दर्शनमोहनैं क्षपाय संयमनै प्राप्त होय। अप्रमत्त आहारकको बंध करने वारो प्रमत्त होत संतैं आहारकनैं रचे है। ऐसैं केई अन्तमुहूर्त्त घाटि अर्द्धपुद्गल परिवर्त्तन प्रमाण अन्तर लब्ध होय है। प्रश्न, इहां जे प्रथमका च्यार अन्तर्मुहूर्त्त कहे ते कोनसे हैं? उत्तर, प्रथम तो दर्शन मोहोपशम सम्यत्क्व समान काल संयम कह्यो सो अन्तर्मुहूर्त्त है। अर दूसरा वेदक सम्यक्त्वको अन्तमुहूर्त्त है, अर तीसरो आहारक बंध कह्यो सो अन्तर्मुहूर्त्त है, अर चोथो आहारकको रचन कह्यौ सो अन्तर मुहूर्त्त है, अर उत्तर कालमें आहारक शरीरका कार्यको अन्तर्मुहूर्त्त पंचम है। अर मूल शरीरमें वेश करि प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थाननि करि अनेक वार उतार चढ़ावनै अनुभव करतां बहुत अन्तर्मुहूर्त्त होय है। यातैं परे अधःप्रवृत्तिकरणकी विशुद्धिकरि विशुद्ध हुवो संतो विश्रामनैं प्राप्त होय है। अर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म साम्पराय-

णीय कषाय, संयोग केवली अयोगकेवली इनिमें एक एक अन्तर्मुहूर्त्त होय है। तातैं इतना काल करि हीन अर्द्ध पुद्गल परिवर्त्तन प्रमाण अन्तर लब्ध है, अर तैजस कार्माण जे हैं तिनमें अन्तर नहीं है क्योंकि सर्व संसारीनिके विषैं सर्व काल निकट रहे है यातैं ॥ १० ॥ बहुरि संख्यातैं अन्यपणौं ऐसें है कि औदारिक शरीर असंख्यात लोक प्रमाण है। अर वैक्रियक असंख्यात श्रेणी प्रमाण है। प्रश्न, असंख्यात श्रेणी किसकूं कहौ हो। उत्तर, लोकप्रतरको असंख्यातमूं भाग है अर आहारक संख्याते हैं। प्रश्न, इहां संख्यात कौनसौ है, उत्तर, चौवन प्रमाण है, अर तैजस, कार्मण अनन्ते हैं। प्रश्न, इहां अन्तर कौनसो है ? उत्तर, अनन्तानन्त लोक प्रमाण है ॥ ११ ॥ बहुरि प्रदेशतैं अन्यपणौं ऐसें है कि औदारिकका अनन्त प्रदेश है। प्रश्न, इहां अनन्त कौनसा है ? उत्तर, अभव्यनितैं अनन्तगुणा तथा सिद्धनिके अनन्तमें भाग है। या ही प्रकार अवशेष चार शरीर जे हैं तिनके उत्तरोत्तर अधिक है क्योंकि अनन्तके अनन्त विकल्प पणौं है यातैं अर अधिकपणांको प्रमाण पूर्वैं कह्यो है ॥ १२ ॥ बहुरि भावतैं अन्यपणौं ऐसो है कि औदारिकादि शरीर नाम कर्मका उदयतैं सर्व ही औदयिक भाव है ॥ १३ ॥ बहुरि अल्प बहुत्वतैं अन्य पणौं ऐसें है कि सर्वतैं स्तोक तो आहारक है अर वैक्रियक असंख्यातगुणे है। प्रश्न, इहां कोनसा असंख्यातको गुणकार है ? उत्तर, असंख्यात श्रेणी जो लोक प्रतरको असंख्यातमूं भाग है सो गुणकार है तातैं औदारिक शरीर जे हैं ते असंख्यात गुणा है। प्रश्न, इहां गुणकार कौनसो है ? उत्तर, असंख्यात लोक प्रमाण है अर तैजस कार्माण जे हैं ते अनन्तगुणे है। प्रश्न, इहां गुणकार कौनसो है ? उत्तर, सिद्धनितैं अनन्त गुण प्रमाण है ॥ १४ ॥ ४६ ॥ अवैं पचासमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि आत्माके आश्रित कार्मण जो है ताका निमित्त करि कैसैं जे शरीर तिननै धारण करने अर इन्द्रियनिका सम्बन्ध प्रति विकल्पकूं भजन वारे चतुर्गतिका विकल्प रूप संसारी जे हैं तिनके प्राणी प्राणो प्रति तीनू

लिंगनिको निकट पणौं है यां कछू लिंगको नियम है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है। यातै उत्तर कहे है। सूत्रम्—

नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥

अर्थ—नारक अर सम्मूर्छन जे हैं ते नपुंसक हैं। वार्त्तिक—धर्मार्थकाममोक्ष कार्यनरणान्नराः ॥ १ ॥ अर्थ—धर्म, अर्थ, काम मोक्ष है जिनके ऐसैं कार्य जे हैं तिननैं नृणन्ति कहिये प्राप्त होय ते नर हैं॥ १॥ वार्त्तिक—नरान् कायंतीति नरकाणि॥२॥ अर्थ—शीत, उष्ण रूप असाता वेदनीय जो है ताका उदय करि ग्रहण करी जो वेदना ताकरि नर जे हैं तिननैं कायंति कहिये शब्द करावै ते नरक हैं। अर्थात् इहां नर नाम मनुष्यको नहीं जानन् ॥ २ ॥ वार्त्तिक—नृणंनीति वा ॥ ३ ॥ अर्थ—अथवा पाप करनेवाले प्राणीनिनैं आत्यन्तिक दुःखनैं प्राप्त करे ते नरक हे। इहां कर्त्ता अर्थमें उणादिक अक् प्रत्यय होय नरक शब्द सिद्ध भयौ ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—नरकेषु भवा नारका ॥ ४ ॥ अर्थ—नरकके विषैं होय ते नारक कहिये ॥ ४ ॥ वार्त्तिक—सम्मूर्छनं सम्मूर्छस्त एषामस्तीति सम्मूर्छिन ॥५॥ अर्थ—सर्व तरफतैं होना जो है सो सम्मूर्छन है अर जाकै सम्मूर्छ है सो संमूर्छिन है अर नारक तथा सम्मूर्छिन जे हैं ते नारकसंमूर्छिन है ॥ ५ ॥ वार्त्तिक—नपुंसकवेदाशुभनामोदयान्नपुंसकानि ॥ ६ ॥ अर्थ—चरित्र मोहको विकल्प जो नो कषाय ताको भेद नपुंसक वेद जो है ताका अर अशुभ नाम कर्मका उदयतैं नहीं स्त्री तथा नहीं पुरुष ऐसैं नपुंसक हैं यातैं नारक अर सम्मूर्छिन जे हे ते नपुंसक ही हैं यो नियम है अर वा नपुंसक भवके विषैं स्त्री पुरुष विषय मनोज्ञ शब्द, गन्ध, रूप, रस, स्पर्श बंध है निमित्त जानैं ऐसी अल्प भी सुख मात्रा नहीं है ॥ ६ ॥ अवैं इक्यावनमा सूत्रकी उत्थानिका कहे है कि जो ऐसैं अवधारण करिये है तो अर्थापत्ति प्रमाणतैं ये कहे जे दोय तिननैं अन्य जे संसारी है तिन तीनके लिंग

पणौं है यातैं जहां नपुंसक लिंगको अत्यन्त अभाव है ताका प्रतिपादनिके अर्थि कहै है। सूत्रम्---

न देवाः ॥ ५१ ॥

अथ---देव जे हैं ते नपुंसक नहीं है। वार्त्तिक---स्त्रीपुरुषविषयनिरतिशयसुखानुभवनाद्देवेषु नपुंसकाभावः ॥ १ ॥ अर्थ---स्त्री सम्बन्धी तथा पुरुष सम्बन्धी जो निरतिशय कहिये व्यवच्छेद रहित शुभ गतिका अर शुभ नाम कर्मका उदय की है अपेक्षा जा विषैं ऐसा सुखनैं अनुभवै है, यातैं तिनके विषैं नपुंसक नहीं है सो आगानैं कहैंगे अवैं बावनमा सूत्रकी उत्थानिका कहै है कि और संसारी कितने लिंगवान हैं ऐसौ प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं कहै है। सूत्रम्---

शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥

अर्थ—नारकी तथा नपुंसक तथा देव जे है तिनतैं अवशेष जे हैं ते तीनूं वेदवान हैं वेद है तीन जिनकै ते त्रिवेदा हैं। प्रश्न, वे तीन वेद कौनसे हैं? उत्तर, स्त्रीपणौं पुरुषपणौं नपुंसकपणौं है। प्रश्न, तिनकी सिद्धि कैसैं है? उत्तर रूप वार्त्तिक—नामकर्मचारित्रमोहनोकषायोदयाद्वेदत्रयसिद्धिः ॥ १ ॥ अर्थ—नाम कर्मका अर चारित्रमोहको विकल्प नो कषाय जो है ताका उदयतैं वेदत्रयकी सिद्धि है अर वेद शब्दकी निरुक्ति ऐसी है कि वेद्यत इति वेद याको अर्थ ऐसौ है कि अनुभव करिये सो वेद है। अर्थात् लिंग है सो लिंग दोय प्रकार है, तहां एक द्रव्य लिंग है। दूसरो भावलिंग है, तिनमैं नामकर्मका उदयतैं योनि, मेहन, आदि जो है सो द्रव्यलिग है। अर नो कषायका उदयतैं भावलिंग है। तहां स्त्री वेदका उदयतैं जाकैं विषै गर्भ तिष्ठै सो स्त्री है, अर पुरुषवेदका उदयतैं सूते कहिये संताननिैं उत्पत्ति करै सो पुरुष है। अर नपुंसक वेदका

उदयतैं दोऊ शक्ति करि विफल नपुंसक है। अथवा ये तीनूं रूढ़ि शब्द है अर रूढ़ि शब्दनिके विषैं क्रिया व्युत्पत्तिके अर्थ ही है सो जैसैं गच्छतीति गौ है अर जो निश्चय करि ऐसैं नहीं मानिये तो गर्भधारण आदि क्रियाकी प्रधानता होत संतैं तिर्यञ्च तथा मनुष्य बालक वृद्ध जे हैं तिनके विषैं तथा देवनिके विषैं तथा कार्मण योगमें तिष्ठते जे हैं तिनकैं विषैं गर्भ धारण आदिका अभावतैं स्त्रीपणां आदि नाम नहीं होय अर निश्चय करि तिन वेदनिमें स्त्री वेद तो अंगाराके समान है। अर पुरुष वेद तृणकी अग्निके समान है। अर नपुंसक वेद ईंटकी अग्निके समान है। अर ये तीनूं ही वेद अवशेष जो गर्भज तिनके हैं ॥१॥५२॥ अबैं त्रेपनमा सूत्रकी उत्थानिका कहे हैं कि जो ये जन्म योनि शरीर लिंगका सम्बन्धकरि ग्रहण कियो है विशेष जिननैं ऐसैं प्राणी देवादिक दिखाये ते विचित्र धर्म अधर्मके वशीकृत हुआ संतां चारूं गतिनिके विषैं शरीरनिनै धारण करते संते यथाकाल उपभुक्त कियो है आयु कर्म जिननैं ऐसे हुये संतैं मूर्त्यन्तरनैं ग्रहण करे हैं, या अथवा काल भी ग्रहण करैं है ऐसो प्रश्न उत्पन्न होय है यातैं उत्तर कहे है। सूत्रम्—

औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

अर्थ—उपपाद जन्म धारे तथा चरमोत्तम देहधारे तथा असंख्यात वर्षकी आयुके धारक अनपवर्त्यायुष हैं कि नहीं है आयुको अपवर्त्तन जिनके ऐसैं हैं। वार्त्तिक—औपपादिका उक्ताः ॥ अर्थ—देव नारकी जे हैं ते औपपादिक हैं ऐसे पूर्वैं कहे हैं ॥ १ ॥ वार्त्तिक—चरमशब्दस्यान्तवाचित्वात्तज्जन्मनि निर्वाणार्हग्रहणम् ॥२॥ अर्थ—चरम शब्द अन्त्यपर्यायवाची है यातैं चरम है देह जिनके ते ये चरम देहा कहिये कि पूर्ण भयो है संसार जिनके ऐसैं वाही जन्ममें निर्वाणके योग्य है जे ते चरम देह शब्द करि ग्रहण करिये है ॥ २ ॥ वार्त्तिक—उत्तमशब्दस्योत्कृष्टवाचित्वा

च्चक्रधरादिग्रहणम् ॥ ३ ॥ अथ--यो उत्तम शब्द उत्कृष्ट वाची है यातैं उत्तम है देह जिनकै ते उत्तम देहा कहिये यातैं चक्रधरादिकको ग्रहण जानने योग्य है ॥ ३ ॥ वार्त्तिक—उपमाप्रमाणगम्यायुषोऽसंख्येयवर्षायुषः ॥ ४ ॥ अर्थ—गई है लौकिक संख्या जा विषैं अर उपमा प्रमाण जो पल्यादिक तिनकरि जानने योग्य ऐसौ आयु जिनके ते ये असंख्येय वर्षायुष तिर्यंच मनुष्यगतिमें उत्तर कुरू आदिमें उत्पन्न भये हैं ते हैं ॥४॥ वार्त्तिक—वाह्यप्रत्ययवशादायुषो ह्रासोऽपवर्त्तः ॥५॥ अर्थ—उपघातका निमित्त विष शस्त्र आदि जे हैं तिनकी निकटतानैं होतां संता ह्रास जो है सो अपवर्त्त है। ऐसैं कहिये है अर अपवर्त्तन करने योग्य है आयु तिनके ते ये अपवर्त्यायुष हैं। अर नहीं जे अपवर्त्यायुष ते अनपवर्त्यायुष है। अर ऐसैं औपपादिक कह्या अनपवर्त्यायुष अर निश्चयकरि तिनका आयुष वाह्य निमित्तका वशतैं अपवर्त्तरूप नहीं है ॥५॥ प्रश्न रूप वार्त्तिक—अन्त्यचक्रधरवासुदेवादीनामायुषोपवर्त्तदर्शनादव्याप्तिः ॥ ६ ॥ अर्थ—प्रश्न, उत्तम देहके धारी चक्र धारादिक जे हैं ते अनपवर्त्यायुष है यो लक्षण अव्याप्ति है। प्रश्न, काहेतैं ? उत्तर, अन्तको चक्रधर ब्रह्मदत्त जो है ताकै तथा अन्तको वासुदेव कृष्ण जो है ताकै तथा इनके समान उत्तम देहने धारी और जे हैं तिनके वाह्य निमित्तका वशतैं आयुको अपवर्त्तन देखिये है ॥ ६ ॥ उत्तररूप वार्त्तिक—न वा चरमशब्दस्योत्तमविशेषणत्वात् ॥ ७ ॥ अर्थ—उत्तर, यो दोष नहीं है, प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, चरम शब्दकै उत्तम विशेषण पणौं है यातैं चरम उत्तम है देह जिनकै ते चरमोत्तम देहके धारी है यातैं ॥७॥ प्रश्नोत्तररूप वार्त्तिक—उत्तमग्रहणमेवेति चेन्न तदनिवृत्ते. ॥ ८ ॥ अर्थ—प्रश्न, सूत्रमें उत्तम पदको ही ग्रहण हो कि उत्तम देहा ऐसैं। उत्तर, सो नहीं है, प्रश्न कहा कारण ? उत्तर, वा पूर्वोक्त दोषकी अनिवृत्ति है यातैं यो कह्यो जो अव्याप्ति दोष सो वैसैं ही तिष्ठै है क्योंकि तिनकै भी उत्तम देहपणां है यातैं। तथा प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—चरमग्रहणमेवेति चेन्न तस्योत्तमत्वप्रतिपादनार्थत्वात् ॥ ९ ॥ अर्थ—प्रश्न,

चरम पदको ही ग्रहण हो कि चरमदेहा ऐसैं ही सूत्र पाठ हो उत्तम पदका ग्रहण करि कहा प्रयोजन है ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहाकारण ? उत्तर, वा चरम देहकै उत्तम पणांको प्रतिपादनार्थ पणौं है यातैं। अर्थात् वो चरम देह ही सब में उत्तम है सो अर्थ कहिये है अर कितनेकनिके चरम देहा ऐसो भी पाठ है, अर एक है जे हैं तिनकै नियम करि आयु अनपवर्त्य है, अर औरनिकै अनियम करि है ॥ ९ ॥ प्रश्नोत्तर रूप वार्त्तिक—अप्राप्तकालस्यमारणानुपलब्धेर-पर्वताभाव इति चेन्न दृष्टत्वादाम्रफलादिवत् ॥ १० ॥ अर्थ—प्रश्न, अप्राप्त काल जो है ताका मरणको अनुपलब्धि है यातैं-अपवर्त्तनके अभाव है ? अर, सो नहीं है क्योंकि आम्रफल आदिके समान दृष्टपणौं है कि जैसैं धारण कियो जो पाकको काल तातैं पहिली उपाय सहित उपक्रमको जो रचना विशेष तानैं होतां संता आम्रफल आदिके पकवो देखिये है तैसैं प्रमाणीक मरण कालतैं पहिली उदीरणा है कारण जानैं ऐसा आयुका अपवर्त्तन है ॥१०॥ वार्त्तिक—आयुर्वेद-सामर्थ्याच्च ॥ ११ ॥ अर्थ—अथवा जैसैं अष्टांग आयुर्वेदकूं जाननेवारो वैद्य प्रयोगमें अति निपुण जो है सो यथाकाल वातादिका उदयतैं पहिली वमन विरेचन आदि करि नहीं उदीरणानैं प्राप्त भयौ श्लेष्मादिकनैं दूर करै है, अर अकालमृत्युका दूर हो वा निमित्त रसायननैं उपदेश करै है, अर जो ऐसैं नहीं है तो रसायनका उपदेशकै व्यर्थपणौं होय सो व्यर्थपणौं नहीं है यातैं आयुर्वेदको सामर्थ्यतैं अकाल मृत्यु है ॥ ११ ॥ वार्त्तिक—दुःखप्रतीकारार्थ इति चेन्नोभयथा दर्शनात ॥ १२ ॥ अर्थ—प्रश्न, दुःखका प्रतीकारके अर्थि अयुर्वेदकै सामर्थ्यक पणौं है, उत्तर, सो नहीं है प्रश्न, कहा कारण ? उत्तर, दोऊ प्रकार देखवातैं निश्चयकरि उत्पन्न भया तथा अनुत्पन्न-भया वेदनानैं होतां संतां भी चिकित्साका दर्शनतैं ॥ १२ ॥ वार्त्तिक—कृतप्रणाशप्रसङ्ग इति चेन्न दत्वैवफलं निवृत्तेः ॥ १३ ॥ अर्थ—प्रश्न, जो आकाल मृत्यु है तो कृत प्रणाश होयगो कि किया कर्मको फल दिया विना ही विनाशको प्रसंग आवेगो ? उत्तर, सो नहीं है। प्रश्न, कहा

कारण ? कियो कर्म फल देयकरि ही निर्जरै है और विना किया कर्मको फल नहीं भोगैं है अर किया कर्मका फलको विनाश भी नहीं है क्योंकि विना किया कर्मको फल भी भोगे तो अनिर्मोक्षको प्रसंग आवै यातैं। अर किया कर्मका फलको विनाश होय तो दान, तप, संयम आदि क्रियाका आरम्भको विनाश होय यातैं। प्रश्न, तो कहा है ? उत्तर, कर्म जो है सो कर्त्ताके अर्थि फल देय करि ही निर्जरै है अर विततार्द्रपटशोषवत् कहिये फैल्यो जो आलो वस्त्र ताका सूकवाकै समान कियो कर्म यथा कालमें फल देय निजरै हैं। या प्रकार यो फल विशेष है ॥१३॥५३॥

इति श्रीमदकलङ्कदेवप्रणीते तत्त्वार्थ वार्त्तिके व्याख्यानालङ्कारे

तदपर नाम राजवार्त्तिक सागरोद्धृत तत्त्वकौस्तुभे

द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

या अध्यायके विषैं सूत्र त्रेपन हैं अर वार्त्तिक ३७० हैं तिनमें प्रथम सूत्र पर वार्त्तिक पच्चीस हैं अर दूसरा सूत्र पर वार्त्तिक तीन हैं अर तीसरा सूत्र पर वार्त्तिक चार हैं अर चौथा सूत्रपर वार्त्तिक सात हैं अर पांचमां सूत्र पर वार्त्तिक आठ हैं, अर छठा सूत्रपर वार्त्तिक ग्यारह हैं अर सातमा सूत्रपर वार्त्तिक गुणतालीस है, अर आठमा सूत्रपर वार्त्तिक चौवीस हैं, अर नवमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन हैं, अर दशमा सूत्रपर वार्त्तिक सात हैं। अर ग्यारमा सूत्रपर वार्त्तिक आठ हैं, और वारमा सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं। अर तेरमा सूत्र पर वार्त्तिक छै हैं, और चौदमा सूत्रपर वार्त्तिक चार हैं। अर परनमा सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं, और सोलमा सूत्रपर वार्त्तिक एक है अर सतरमा सूत्रपर वार्तिक सात हैं। अर अठारमा सूत्रपर वार्तिक चार है। अर उगणीशमा सूत्रपर वार्तिक दश है अर वीसमा सूत्रपर वार्तिक छै हैं। अर इकवीसमा सूत्रपर वार्तिक एक है। अर बाईसमा सूत्रपर वार्तिक पांच है। अर तेईसमा सूत्रपर वार्तिक पांच है। अर

चौबीसमा सूत्रपर वार्त्तिक पांच है। और पचीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै हैं। और छव्वीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। अर सत्ताईसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है और अट्ठाईसमां सूत्रपर वार्त्तिक चार हैं। और गुणतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक दोय है और तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक ८ हैं। और इकतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक ग्यारा है, और बत्तीसमां सूत्रपर सत्ताइस है। और तेतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक बारा है। और चौतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। अर पैंतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और छत्तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक बीस है। और सेतीसमां सूत्रपर वार्त्तिक दोय है। और अड़तीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। अर गुणतालीसमां सूत्रपर वार्त्तिक पांच है अर चालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन है। और इकतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक पांच है। और ब्यालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक दोय है। और तितालीसमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। और चवालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक तीन है और पैंतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक नहीं है। और छियालीसमा सूत्रपर वार्तिक नहीं है। और सैंतालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक चार है। और अड़तालीसमा सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और गुणचास सूत्रपर वार्त्तिक आठ है। और पचासमां सूत्रपर वार्त्तिक छै है। और इक्यावनमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और बावनमां सूत्रपर वार्त्तिक एक है। और तिरेपनमा सूत्रपर वार्त्तिक तेरा हैं। तिनकी भाषामय वचनिका रूप अर्थ पंडित फतेलालजीकी सम्मतितैं श्रीमज्जिनवच प्रकाशक श्रावक संघी पन्नालाल दूनीवाल ज्ञानावरण कर्मका क्षय निमित्त निज बुद्धि प्रमाण लिख्यो है और या अध्याय दूसरीमें संख्या श्लोक ४८०० है।

प्रथम खंड समाप्त।

